# मुद्रा और वित्त की रिपोर्ट
# 2006-08

## खंड II

## भारत में बैंकिंग क्षेत्र :
## उभरते मुद्दे और चुनौतियां

भारतीय रिज़र्व बैंक

# विषयवस्तु

## खंड I

प्राक्कथन


| | | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| **I.** | **मूल विषय** | **1-12** |
| | भारत में बैंकिंग का विकास | 4 |
| | भारत में बैंकिंग की गतिविधि संबंधी मुद्दे | 6 |
| | रिपोर्ट की संरचना | 10 |
| **II.** | **हाल की आर्थिक गतिविधियां** | **13-73** |
| | वास्तविक क्षेत्र | 14 |
| | राजकोषीय स्थिति | 23 |
| | मौद्रिक और ऋण स्थिति | 32 |
| | वित्तीय बाजार | 43 |
| | बैंक और वित्तीय संस्थाएं | 59 |
| | बाह्य क्षेत्र | 62 |
| | समग्र मूल्यांकन | 72 |
| **III.** | **भारत में बैंकिंग का विकास** | **74-141** |
| | भारत में बैंकिंग का प्रारंभिक चरण - 1947 तक | 75 |
| | स्वतंत्र भारत के आरंभिक वर्षों में बैंकिंग - 1947 से 1967 | 84 |
| | बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण - 1967 से 1991 | 96 |
| | वित्तीय क्षेत्र सुधारों का चरण - 1991-92 तथा उसके बाद | 110 |
| | सारांश | 136 |
| | अनुबंध III.1 : भारत में बैंक विफलताएं, उनका परिसमापन और समामेलन : 1913 -2007 | 139 |
| | अनुबंध III.2 : बैंकों की संख्या | 141 |
| **IV.** | **संसाधन संग्रहण का प्रबंधन** | **142-176** |
| | सैद्धांतिक समर्थन | 143 |
| | भारत में बैंकों द्वारा जमा संग्रहण | 145 |
| | विभिन्न देशों के अनुभव | 166 |
| | उभरते मुद्दे तथा भावी दिशा | 172 |
| | सारांश | 176 |
| | प्रदर्श IV.I: घरेलू बचतों को प्रभावित करनेवाले कारक | 145 |
| **V.** | **पूंजी और जोखिम प्रबंधन** | **177-233** |
| | जोखिम और पूँजी | 179 |
| | पूंजी पर्याप्तता संबंधी बासेल मानदंड | 182 |
| | बासेल II के लाभ, सीमाएं, मुद्दे और चुनौतियां | 191 |
| | पूंजी और जोखिम प्रबंधन : भारतीय अनुभव | 199 |
| | भावी दिशा | 226 |
| | सारांश | 230 |
| | अनुबंध V.1: बासेल II का कार्यान्वयन : विभिन्न देशों की स्थिति | 232 |


*(जारी...)*

## खंड II


पृष्ठ सं.

**VI. बैंकों के उधार और निवेश कार्य ........ 235-293**

बैंकों के उधार कार्य - सैद्धांतिक समर्थन ........ 236

भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के उधार कार्य ........ 239

कृषि को उधार ........ 245

उद्योग को ऋण ........ 259

बुनियादी संरचना को उधार ........ 271

खुदरा ऋण ........ 278

बैंकों के निवेश कार्य ........ 282

भावी दिशा ........ 286

सारांश ........ 291

**VII. वित्तीय समावेशन ........ 294-348**

वित्त तक पहुँच : संकल्पनात्मक ढाँचा ........ 295

वित्तीय वंचन का स्वरूप, कारण और परिणाम ........ 299

भारत में वित्तीय समावेशन के लिए पहलें ........ 303

भारत में वित्तीय समावेशन/वंचन का मूल्यांकन ........ 318

वित्तीय समावेशन के लिए परिचालन लागत और प्रौद्योगिकी का उन्नयन ........ 338

भावी दिशा ........ 342

सारांश ........ 345

अनुबंध VII.1 : एनएसएसओ सर्वेक्षण में प्रयुक्त विभिन्न प्रकार के व्यय की परिभाषाएँ ........ 348

**VIII. प्रतियोगिता और समेकन ........ 349-392**

समेकन - सैद्धांतिक समर्थन ........ 350

बैंकिंग उद्योग में विलय और अभिग्रहण में विद्यमान हाल की प्रवृत्तियाँ ........ 352

भारत में समेकन और प्रतियोगिता ........ 353

विलय और अभिग्रहण : भारत में प्रतियोगिता और कार्यकुशलता पर प्रभाव ........ 361

भारत में समेकन और प्रतियोगिता में विद्यमान समस्याएँ ........ 369

भावी दिशा ........ 386

सारांश ........ 390

अनुबंध VIII.1 : भारत में विदेशी बैंकों की उपस्थिति के लिए रूपरेखा ........ 391

अनुबंध VIII.2 : रे माप (रे स्केल) अर्थव्यवस्थाएं ........ 392


*(जारी...)*

| | | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| **IX.** | **बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता, उत्पादकता और सुदृढ़ता** | **393-446** |
| | उत्पादकता और कार्य-कुशलता की माप : कुछ संकल्पनात्मक मुद्दे | 394 |
| | भारत में बैंकिंग क्षेत्र की उत्पादकता और कार्य-कुशलता की माप - लेखांकन माप | 395 |
| | भारत में बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता और उत्पादकता की माप- आर्थिक माप | 421 |
| | भारत में बैंकिंग क्षेत्र की सुदृढ़ता | 433 |
| | कार्य-कुशलता और उत्पादकता में सुधार के पीछे निहित कारक | 439 |
| | भावी दिशा | 441 |
| | सारांश | 443 |
| | परिशिष्ट IX.1 कार्य-कुशलता की लेखांकन बनाम आर्थिक माप | 445 |
| **X.** | **बैंकिंग में विनियामक एवं पर्यवेक्षी चुनौतियां** | **447-503** |
| | बैंकिंग विनियमन का सिद्धांत | 448 |
| | विनियामक और पर्यवेक्षी परंपराएं - हाल की घटनाएं | 451 |
| | भारत में वर्तमान विनियामक एवं पर्यवेक्षी ढांचा | 475 |
| | विनियामक एवं पर्यवेक्षी चुनौतियां | 481 |
| | भावी दिशा | 494 |
| | सारांश | 499 |
| | अनुलग्नक X.1 वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड द्वारा की गई महत्त्वपूर्ण पहलकदमियां | 501 |
| **XI.** | **समग्र मूल्यांकन** | **504-515** |
| | भारत में बैंकिंग का विकास | 504 |
| | संसाधन संग्रहण प्रबंधन | 506 |
| | पूंजी और जोखिम का प्रबंधन | 507 |
| | बैंकों के उधार एवं निवेश संबंधी परिचालन | 508 |
| | वित्तीय समावेशन | 509 |
| | प्रतिस्पर्धा एवं समेकन | 511 |
| | भारत में बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता, उत्पादकता और सुदृढ़ता | 512 |
| | बैंकिंग में विनियामक एवं पर्यवेक्षी चुनौतियां | 513 |
| | कुछ अंतिम अनुचिंतन | 513 |
| | **चुने हुए संदर्भ** | **I से XI** |

# बॉक्स मदों की सूची


| बॉक्स सं. | शीर्षक | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| VI.1 | बैंकों के उधार कार्य : प्रमुख नीतिगत पहलें | 240 |
| VI.2 | कृषि को उधार से संबद्ध जोखिमें | 246 |
| VI.3 | अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के लिए प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के लक्ष्य : संशोधित मार्गदर्शी निदेश | 247 |
| VI.4 | कृषि ऋण में निहित समस्याएँ - विकासशील देशों का परिदृश्य | 256 |
| VI.5 | कृषि ऋण की प्रथाएँ : विभिन्न देशों के अनुभव | 257 |
| VI.6 | कृषि ऋण - सफल अनुभवों का अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य | 258 |
| VI.7 | लघु और मझौले उद्यमों (एसएमई) को ऋण प्रदान करने में बैंकिंग क्षेत्र द्वारा अनुभव की गई कठिनाइयाँ | 265 |
| VI.8 | लघु और मझौले उद्यमों (एसएमई) को ऋण की उपलब्धता को सुधारने के लिए पहलें | 266 |
| VI.9 | लघु और मझौले उद्यमों (एसएमई) को उधार - भारत में बैंकों द्वारा हाल में की गई पहलें - एक संक्षिप्त सर्वेक्षण | 267 |
| VI.10 | बासेल II और एसएमई क्षेत्र को उधार - बैंकों का व्यवहार | 268 |
| VI.11 | लघु और मझौले उद्यमों (एसएमई) का वित्तपोषण : उन्नत और उभरती अर्थव्यवस्थाओं के अनुभव | 269 |
| VI.12 | बुनियादी संरचना के लिए बैंक उधार : जोखिमें और अवसर | 273 |
| VI.13 | बैंकों द्वारा बुनियादी संरचना का वित्तपोषण : विभिन्न देशों के अनुभव | 274 |
| VI.14 | बैंकों द्वारा बुनियादी संरचना के वित्तपोषण पर रिज़र्व बैंक के दिशा-निर्देश : मुख्य-मुख्य बातें | 275 |
| VI.15 | खुदरा उधार की जोखिमें | 281 |
| VII.1 | वित्तीय सेवाओं तक पहुँच को प्रभावित करनेवाले कारक | 301 |
| VII.2 | भारत में वित्तीय समावेशन - प्रमुख तत्व | 304 |
| VII.3 | स्वयं-सहायता समूह - बैंक सहबद्धता कार्यक्रम | 306 |
| VII.4 | वित्तीय समावेशन : वित्तपोषण की नई पद्धति | 309 |
| VII.5 | वित्तीय समावेशन : महिला सशक्तीकरण | 309 |
| VII.6 | बंगला देश का ग्रामीण बैंक | 310 |
| VII.7 | वित्तीय समावेशन का सफल मॉडल : आंध्र प्रदेश का एक वृत्त अध्ययन | 312 |
| VII.8 | व्यावसायिक संपर्कियों के माध्यम से शाखारहित बैंकिंग | 313 |
| VII.9 | शहरी वित्तीय समावेशन - धारावी (मुंबई) मॉडल | 313 |
| VII.10 | आवास और वित्तीय समावेशन | 314 |
| VII.11 | वित्तीय समावेशन संबंधी समिति की रिपोर्ट | 315 |
| VII.12 | चयनित देशों में वित्तीय समावेशन की कार्यनीति | 316 |


*(जारी...)*

| बॉक्स सं. | शीर्षक | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| VII.13 | विभिन्न देशों में वित्तीय समावेशन की पहलें ........ | 317 |
| VII.14 | स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी)-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम - एक मूल्यांकन ........ | 331 |
| VII.15 | वित्तीय समावेशन और विकास के संकेतकों के बीच संबंध ........ | 337 |
| VII.16 | प्रौद्योगिकी और वित्तीय समावेशन ........ | 342 |
| VIII.1 | समेकन एवं वित्तीय स्थिरता और मौद्रिक नीति के लिए उसके निहितार्थ ........ | 352 |
| VIII.2 | बैंकों के विलय और समामेलन संबंधी मार्गदर्शी निदेश ........ | 356 |
| VIII.3 | बाजार चालित बनाम सरकार द्वारा प्रेरित बैंक समेकन : विभिन्न देशों के अनुभव ........ | 359 |
| VIII.4 | प्रतियोगिता पर समेकन का प्रभाव : विभिन्न देशों के साक्ष्य ........ | 362 |
| VIII.5 | संकेंद्रण सूचकांकों की माप ........ | 363 |
| VIII.6 | पांजार -रोस सांख्यिकी : भारतीय स्थिति ........ | 366 |
| VIII.7 | एमएण्डए से कार्यकुशलता के लाभ : चयनित बैंकों का एक वृत्त अध्ययन ........ | 368 |
| VIII.8 | वाणिज्य बैंकों का निजीकरण : विभिन्न देशों के अनुभव ........ | 374 |
| VIII.9 | विदेशी बैंकों की शाखाएँ बनाम सहायक संस्थाएँ ........ | 378 |
| VIII.10 | उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में विदेशी बैंकों का बढ़ता हुआ महत्व ........ | 380 |
| VIII.11 | विदेशी बैंकों के प्रवेश की लागत और लाभ ........ | 381 |
| VIII.12 | विदेशी बैंकों के प्रवेश के लाभ और लागतें : विभिन्न देशों के साक्ष्य ........ | 382 |
| IX.I | उत्पादकता और कार्य-कुशलता - सूक्ष्म भेद ........ | 394 |
| IX.2 | उत्पादकता और कार्य-कुशलता : विविध देशों के अनुभवजन्य साक्ष्य ........ | 396 |
| IX.3 | अनुपात विश्लेषण का विश्लेषणात्मक ढांचा ........ | 397 |
| IX.4 | प्रतिफल वक्र और बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन ........ | 408 |
| IX.5 | भारत में निवल ब्याज मार्जिन के निर्धारक ........ | 409 |
| IX.6 | आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण ........ | 422 |
| IX.7 | विभिन्न बैंकों की कार्य-कुशलता में अंतर के कारण क्या हैं? एक अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य ........ | 428 |
| IX.8 | क्या आकार महत्वपूर्ण होता है ? विभिन्न देशों के अनुभवजन्य साक्ष्य ........ | 430 |
| IX.9 | भारत में बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता के निर्धारक तत्त्व ........ | 432 |
| IX.10 | मामक्विस्ट उत्पादकता सूचकांक ........ | 433 |
| IX.11 | कार्य-कुशलता का महत्व - एक बैंक का वृत्त अध्ययन ........ | 438 |
| IX.12 | भारत में कार्य-कुशलता और अनर्जक आस्तियों के संबंध ........ | 439 |

*(जारी...)*

| बॉक्स सं. | शीर्षक | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| X.1 | बैंकिंग पर्यवेक्षण और केंद्रीय बैंक | 454 |
| X.2 | नॉर्दर्न रॉक चलनिधि संकट | 456 |
| X.3 | अंतिम ऋणदाता | 457 |
| X.4 | वित्तीय संगुट - परिभाषा एवं ढांचा | 459 |
| X.5 | वित्तीय विनियमन के प्रति दृष्टिकोण | 462 |
| X.6 | बाजार अनुशासन के एक साधन के रूप में गौण ऋण | 467 |
| X.7 | निक्षेप बीमा प्रणालियों का विकास | 470 |
| X.8 | निक्षेप बीमा-लाभ और हानियां | 472 |
| X.9 | निक्षेप बीमा की डिज़ाइन | 473 |
| X.10 | वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड और उसकी महत्त्वपूर्ण पहलकदमियां | 479 |
| X.11 | पर्यवेक्षी कार्य-प्रणालियों का एकीकरण | 485 |
| X.12 | बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति के इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग समूह की ''इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग हेतु जोखिम प्रबंधन सिद्धांतों'' पर रिपोर्ट | 490 |

# चार्ट की सूची


| चार्ट सं. | शीर्षक | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| VI.1 | खाद्येतर ऋण और बैंक ऋण | 241 |
| VI.2 | सकल और निवल अनर्जक आस्तियां | 242 |
| VI.3 | खातों के प्रकार के अनुसार अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का बकाया ऋण (मार्च के अंत में) | 243 |
| VI.4 | बैंक ऋण में बैंक समूह-वार वृद्धि दर | 243 |
| VI.5 | भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का ऋण-जीडीपी अनुपात | 243 |
| VI.6 | बैंक समूह-वार ऋण-जमा अनुपात | 244 |
| VI.7 | बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋण और अग्रिम : क्षेत्र-वार अंश | 245 |
| VI.8 | कृषि को प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र अग्रिम (खाद्येतर सकल बैंक ऋण के प्रतिशत के रूप में) | 248 |
| VI.9 | कृषि क्षेत्र को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का बकाया ऋण | 249 |
| VI.10 | कृषि जीडीपी और कुल जीडीपी के प्रतिशत के रूप में कृषि को संस्थागत ऋण (संवितरण) | 249 |
| VI.11 | कृषि को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के बकाया ऋण का बैंक समूह-वार वर्गीकरण | 250 |
| VI.12 | कृषि को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के बकाया ऋण का वर्गीकरण | 250 |
| VI.13 | खातों के प्रकार द्वारा कृषि को अप्रत्यक्ष वित्त | 250 |
| VI.14 | जोत के आकार के अनुसार किसानों को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का प्रत्यक्ष वित्त (संवितरण) : राशि | 251 |
| VI.15 | जोत के आकार के अनुसार किसानों को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का प्रत्यक्ष वित्त (संवितरण) : खातों की संख्या | 251 |
| VI.16 | छोटे ऋण : कृषि उधार खातों की संख्या | 252 |
| VI.17 | छोटे ऋण : बकाया कृषि ऋण | 252 |
| VI.18 | कृषि उधार खातों में कृषि के छोटे उधार खातों का अंश - मुद्रास्फीति के लिए समायोजित | 253 |
| VI.19 | उद्योग की ऋण - प्रधानता | 260 |
| VI.20 | लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण में विद्यमान प्रवृत्तियाँ | 263 |
| VI.21 | लघु उद्योग क्षेत्र की ऋण - प्रधानता | 264 |
| VI.22 | उद्योग को ऋण में एसएमई को ऋण का अंश : बैंक समूह-वार | 264 |
| VI.23 | चयनित क्षेत्रों को ऋण पर भारित औसत ब्याज दरें और बीपीएलआर | 266 |
| VI.24 | वैयक्तिक ऋणों में विद्यमान प्रवृत्तियाँ | 278 |
| VI.25 | आवास ऋणों में विद्यमान प्रवृत्ति | 278 |


*(जारी...)*

| चार्ट सं. | शीर्षक | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| VI.26 | कुल बैंक ऋण में वैयक्तिक ऋणों का अंश - बैंक समूह-वार | 280 |
| VI.27 | अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा निवेशों की वृद्धि दर | 282 |
| VI.28 | अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) निवेश | 283 |
| VI.29 | बैंक ऋण में वृद्धि और अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश | 283 |
| VI.30 | अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की प्रमुख आस्तियां | 283 |
| VI.31 | बैंक समूह-वार निवेश-जमा अनुपात | 284 |
| VI.32 | अग्रिमों पर प्रतिलाभ और निवेशों पर प्रतिलाभ | 284 |
| VII.1 | वित्तीय उत्पाद और सेवाएँ तथा संस्थागत संरचना | 298 |
| VII.2 | पहुँच की समस्याओं के आयाम | 300 |
| VII.3 | डाक घर बचत योजनाएँ - खातों की संख्या में अंश | 334 |
| VII.4 | प्रति 100 व्यक्ति बचत खाते - विभिन्न अनुमान | 336 |
| VIII.1 | भारत में वाणिज्य बैंकों का संकेंद्रण अनुपात | 364 |
| VIII.2 | संकेंद्रण के एचएचआइ और एंट्रोपी सूचकांक माप | 365 |
| VIII.3 | संबंधित बैंक समूह की तुलना में चयनित विलयित बैंकों की आस्तियों पर प्रतिलाभ (आरओए) | 369 |
| IX.1 | कुल आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत 2006-07 | 398 |
| IX.2 | कुल आस्तियों की तुलना में तुलनपत्रेतर एक्सपोज़र | 398 |
| IX.3 | चुनिंदा देशों में बैंकों की औसत आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत अनुपात की भूमिका - 2006 | 399 |
| IX.4 | आय की तुलना में लागत अनुपात - 2006-07 | 400 |
| IX.5 | चुनिंदा देशों में बैंको की आय की तुलना में लागत अनुपात - 2006 | 400 |
| IX.6 | प्रति अर्जक आस्ति श्रम लागत - 2006-07 | 402 |
| IX.7 | चुनिंदा देशों में कुल आस्तियों की तुलना में श्रम लागत का अनुपात - 2006 | 403 |
| IX.8 | प्रति अर्जक आस्ति गैर- श्रम लागत - 2006-07 | 404 |
| IX.9 | चुनिंदा देशों में बैंकों की कुल आस्तियों की तुलना में गैर श्रम लागतों का अनुपात -2006 | 405 |
| IX.10 | मध्यस्थता लागत - 2006-07 | 407 |
| IX.11 | निवल ब्याज मार्जिन - 2006-07 | 408 |
| IX.12 | चुनिंदा देशों में बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन - 2006 | 409 |
| IX.13 | कुल आय की तुलना में अन्य परिचालनगत आय - 2006-07 | 411 |
| IX.14 | चुनिंदा देशों में बैंकों की कुल आय की तुलना में अन्य आय का अनुपात - 2006 | 411 |
| IX.15 | प्रति कर्मचारी कारोबार - 2006-07 | 413 |


*(जारी...)*

| चार्ट सं. | शीर्षक | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| IX.16 | विविध बैंक समूहों का प्रति शाखा कारोबार - 2006-07 | 415 |
| IX.17 | विविध बैंक समूहों की आस्तियों पर प्रतिलाभ - 2006-07 | 416 |
| IX.18 | चुनिंदा देशों में बैंकों की आस्तियों पर प्रतिलाभ - 2006 | 417 |
| IX.19 | विविध बैंक समूहों की इक्विटी पर प्रतिलाभ - 2006-07 | 418 |
| IX.20 | चुनिंदा देशों के बैंकों की इक्विटी पर प्रतिलाभ - 2006 | 419 |
| IX.21 | कार्य-कुशलता में बैंक समूहवार प्रवृतियां (1992-2007) | 424 |
| IX.22 | कार्य -कुशलता और स्वामित्व | 425 |
| IX.23 | कार्य-कुशलता और आकार | 431 |
| IX.24 | कार्य-कुशलता और अन्य आय | 431 |
| IX.25 | कार्य-कुशलता और अनर्जक आस्तियां | 432 |
| IX.26 | उत्पादकता में बैंक-समूहवार प्रवृत्तियां : 1991-92 - 2006-07 | 434 |
| IX.27 | विविध बैंक समूहों की निवल अनर्जक आस्तियां | 437 |
| X.1 | भारत में वाणिज्यिक बैंकों की आस्तियां | 482 |
| X.2 | भारत में वाणिज्य बैंकों के तुलनपत्रेतर एक्सपोज़र | 482 |

# सारणियों की सूची


| सारणी सं. | शीर्षक | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| 6.1 | बैंक ऋण की क्षेत्र-वार वृद्धि दर | 241 |
| 6.2 | बैंकिंग क्षेत्र का ऋण-जीडीपी अनुपात - चयनित देश | 244 |
| 6.3 | अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के बकाया ऋण का वितरण (कुल ऋण में अंश) | 245 |
| 6.4 | विभिन्न स्रोतों से किसान परिवारों का उधार | 248 |
| 6.5 | कृषि को छोटे उधार खाते (मार्च के अंत में) | 253 |
| 6.6 | कृषि क्षेत्र को वाणिज्य बैंक ऋण : चयनित देशों का सर्वेक्षण | 254 |
| 6.7 | कृषि क्षेत्र की वाणिज्य बैंक ऋण प्रधानता : चयनित देशों का सर्वेक्षण | 254 |
| 6.8 | भारतीय कंपनियों की निधियों के स्रोतों का स्वरूप | 260 |
| 6.9 | बैंकों द्वारा उद्योग को ऋण का प्रकार | 260 |
| 6.10 | कुल ऋण में उद्योग को ऋण का अंश - घटक-वार | 261 |
| 6.11 | उद्योग को वाणिज्य बैंक उधार : विभिन्न देशों का सर्वेक्षण (कुल बैंक ऋण में अंश) | 261 |
| 6.12 | औद्योगिक क्षेत्र की वाणिज्य बैंक ऋण प्रधानता : चयनित देशों का सर्वेक्षण | 262 |
| 6.13 | उद्योग और लघु उद्योग क्षेत्र को बैंक ऋण | 263 |
| 6.14 | लघु उद्योग क्षेत्र में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की सकल अनर्जक आस्तियां (एनपीए) | 263 |
| 6.15 | कुल ऋण में छोटे और मझौले उद्यमों (एसएमई) को ऋण का अंश (बैंक समूह-वार) | 264 |
| 6.16 | लघु उद्योगों के स्वामित्व की संरचना | 266 |
| 6.17 | वित्तपोषण संबंधी बाधाएँ (बाधा की 'प्रमुख' अथवा 'मामूली' रेटिंग वाली फर्मों का प्रतिशत) | 270 |
| 6.18 | चयनित देशों में फर्मों के वित्तपोषण का स्वरूप | 271 |
| 6.19 | निजी क्षेत्र की बुनियादी संरचना के लिए वित्तपोषण के स्रोत | 272 |
| 6.20 | बुनियादी संरचना क्षेत्र को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा ऋण | 275 |
| 6.21 | बुनियादी संरचना को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा ऋण : क्षेत्र-वार - बकाया | 276 |
| 6.22 | अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा बुनियादी संरचना क्षेत्र को निवल ऋण की उपलब्धता | 276 |
| 6.23 | बुनियादी संरचना क्षेत्र को विकास वित्त संस्थाओं (डीएफआइ) द्वारा संवितरित ऋण | 277 |
| 6.24 | बुनियादी संरचना क्षेत्र को वाणिज्य बैंक ऋण : चयनित देशों का सर्वेक्षण | 277 |


*(जारी...)*

| सारणी सं. | शीर्षक | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| 6.25 | आवास ऋणों की वृद्धि | 278 |
| 6.26 | बैंक ऋण की संरचना : विभिन्न देशों के बीच तुलना | 280 |
| 6.27 | अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के गैर-सांविधिक चलनिधि अनुपात (नॉन-एसएलआर) निवेश | 284 |
| 6.28 | कुल आस्तियों में निवेश का अंश : चयनित देश | 285 |
| 7.1 | वित्तीय समावेशन/वंचन के परिभाषात्मक पहलू | 297 |
| 7.2 | मूलभूत/'नो फ्रिल्स' खाते - चयनित देशों में प्रमुख विशेषताएँ | 307 |
| 7.3 | भारत का स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी)-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम और बंगला देश का ग्रामीण बैंक मॉडल : प्रमुख विशेषताएँ | 311 |
| 7.4 | ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या | 319 |
| 7.5 | परिवारों का बकाया ऋण | 319 |
| 7.6 | प्रति ऋणग्रस्त परिवार बकाया ऋण | 320 |
| 7.7 | परिवारों की ऋणग्रस्तता - आस्ति धारिता-वार | 320 |
| 7.8 | ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या - संस्थागत बनाम गैर-संस्थागत स्रोत | 321 |
| 7.9 | परिवारों का बकाया ऋण - संस्थागत बनाम गैर-संस्थागत स्रोत | 322 |
| 7.10 | संस्थागत और गैर-संस्थागत ऋण एजेंसियों में ऋणग्रस्त परिवारों का वितरण | 323 |
| 7.11 | आय समूहों द्वारा ऋणों के स्रोत - आइआइएमएस सर्वेक्षण | 324 |
| 7.12 | परिवारों द्वारा लिये गये ऋणों का प्रयोजन - एनएसएसओ सर्वेक्षण | 324 |
| 7.13 | अर्जकों द्वारा लिए गए ऋणों का प्रयोजन - आइआइएमएस सर्वेक्षण 2007 | 325 |
| 7.14 | कृषि में और बैंक ऋण में वार्षिक औसत संवृद्धि दरें | 326 |
| 7.15 | प्रति बैंक शाखा जनसंख्या | 327 |
| 7.16 | अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के पास ऋण खाते | 327 |
| 7.17 | अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के पास ऋण खाते - क्षेत्र-वार | 328 |
| 7.18 | ऋण खातों की संख्या और ऋण सीमा के आकार के अनुसार बकाया ऋण - सभी अनुसूचित वाणिज्य बैंक | 328 |
| 7.19 | सभी अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के ऋण खातों की संख्या - मुद्रास्फीति समायोजित ऋण सीमा | 329 |
| 7.20 | भारत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक - ऋण खाते/राशियाँ | 329 |
| 7.21 | प्राथमिक कृषि ऋण समितियों (पीएसीएस)की प्रगति | 330 |
| 7.22 | स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी)-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम | 330 |


*(जारी...)*

| सारणी सं. | शीर्षक | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| 7.23 | बैंकों के साथ सहबद्ध स्वयं-सहायता समूहों (एसएचजी) का क्षेत्रीय स्वरूप | 330 |
| 7.24 | भारत में कृषि क्षेत्र को संस्थागत ऋण प्रवाह | 331 |
| 7.25 | संस्थाओं के पास ऋण खातों की संख्या | 332 |
| 7.26 | अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के पास बचत खाते | 332 |
| 7.27 | अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के बचत खाते | 333 |
| 7.28 | क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पास बचत खाते | 333 |
| 7.29 | भारत में खोले गये नो फ्रिल्स खातों की संख्या | 334 |
| 7.30 | बैंक खाता रखनेवाले अर्जक - 2007 | 334 |
| 7.31 | संस्थाओं के पास बचत खातों की संख्या | 335 |
| 7.32 | बीमा व्यापन अनुपात - चयनित देश - 2005 | 335 |
| 7.33 | एआइडीआइएस और बीएसआर डेटा की तुलना - वाणिज्य बैंकों के प्रति परिवारों की ऋणग्रस्तता | 336 |
| 7.34 | आस्तियों और  नो-फ्रिल्स खातों पर प्रतिलाभ - चयनित बैंक | 339 |
| 7.35 | भारत में विभिन्न एजेंसियों से ऋण की लागत | 340 |
| 7.36 | व्यष्टि-वित्त संस्थाओं के प्रभार | 340 |
| 7.37 | विभिन्न प्रौद्योगिकियों के गुण और दोष | 341 |
| 8.1 | विभिन्न देशों के बीच बैंक विलय और अभिग्रहण | 353 |
| 8.2 | वाणिज्य बैंकों की संख्या | 354 |
| 8.3 | भारत में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद समामेलित बैंक | 357 |
| 8.4 | भारत में निजी क्षेत्र के नये बैंक और सरकारी क्षेत्र के बैंक तथा बैंक विलय | 360 |
| 8.5 | विश्व के शीर्षस्थ 1000 बैंकों में भारतीय बैंकों का स्थान | 360 |
| 8.6 | चयनित देशों के सबसे बड़े बैंकों की तुलना में भारत के सबसे बड़े बैंक का सापेक्ष आकार | 361 |
| 8.7 | विभिन्न देशों में बैंकिंग संकेंद्रण अनुपात की प्रवृत्ति | 364 |
| 8.8 | हेरफिंडाहल-हिर्शमैन सूचकांक | 365 |
| 8.9 | अर्थव्यवस्था के आकार की तुलना में बैंकिंग प्रणाली का आकार | 371 |
| 8.10 | सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों की आस्तियों की मात्रा और बैंकिंग संकट | 377 |
| 8.11 | विकासशील क्षेत्रों में विदेशी और देशी बैंक कार्यनिष्पादन के संकेतक - 1998-2005 (औसत) | 383 |
| 8.12 | भारत में विदेशी बैंक | 384 |


*(जारी...)*

| सारणी सं. | शीर्षक | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| 9.1 | भारत में वाणिज्य बैंकों की कुल आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत | 397 |
| 9.2 | चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की कुल आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत | 399 |
| 9.3 | भारत में वाणिज्य बैंकों की आय की तुलना में लागत अनुपात | 400 |
| 9.4 | चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की आय की तुलना में लागत अनुपात | 401 |
| 9.5 | भारत में वाणिज्य बैंकों की अर्जक आस्तियों की प्रति इकाई श्रम लागत | 402 |
| 9.6 | चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की अर्जक आस्तियों की तुलना में कार्मिक व्ययों का अनुपात | 403 |
| 9.7 | भारत में वाणिज्य बैंकों की अर्जक आस्तियों की प्रति इकाई गैर-श्रम लागतें | 404 |
| 9.8 | भारत में वाणिज्य बैंकों की गैर-श्रम लागत की तुलना में श्रम लागत का अनुपात | 405 |
| 9.9 | चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की कुल अर्जक आस्तियों की तुलना में गैर श्रम लागतों का अनुपात | 406 |
| 9.10 | भारत में वाणिज्य बैंकों की मध्यस्थता लागतें | 406 |
| 9.11 | भारत में वाणिज्य बैंकों की कुल आस्तियों की तुलना में निवल ब्याज मार्जिन का अनुपात | 407 |
| 9.12 | चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन | 410 |
| 9.13 | भारत में वाणिज्य बैंकों की कुल आय में अन्य आय का अंश | 411 |
| 9.14 | चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की कुल आय की तुलना में अन्य परिचालनगत आय का अनुपात | 412 |
| 9.15 | भारत में वाणिज्य बैंकों का प्रति कर्मचारी कारोबार | 413 |
| 9.16 | भारत में वाणिज्य बैंकों का प्रति इकाई श्रम लागत कारोबार | 414 |
| 9.17 | भारत में वाणिज्य बैंकों का प्रति शाखा कारोबार | 415 |
| 9.18 | भारत में वाणिज्य बैंकों की प्रति शहरी/महानगरीय शाखा कारोबार | 416 |
| 9.19 | भारत में वाणिज्य बैंकों की आस्तियों पर प्रतिलाभ | 416 |
| 9.20 | चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की आस्तियों पर प्रतिलाभ | 417 |
| 9.21 | भारत में वाणिज्य बैंकों की इक्विटी पर प्रतिलाभ | 418 |
| 9.22 | चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों के इक्विटी पर प्रतिलाभ | 419 |
| 9.23 | भारत में वाणिज्य बैंकों के उत्पादकता अनुपात की एक झलक | 420 |
| 9.24 | बैंक समूहवार कार्य-कुशलता के स्तर | 423 |
| 9.25 | कार्य-कुशलता की आवृत्ति का वितरण | 424 |
| 9.26 | बैंकों की कार्य-कुशलता श्रेणी | 426 |


*(जारी...)*

| सारणी सं. | शीर्षक | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| 9.27 | कुल उपादान उत्पादकता परिवर्तन | 434 |
| 9.28 | भारत में वाणिज्य बैंकों का जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूँजी का अनुपात | 435 |
| 9.29 | चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की कुल आस्तियों की तुलना में पूंजी का अनुपात | 436 |
| 9.30 | भारत में वाणिज्य बैंकों के कुल अग्रिमों के प्रतिशत के रूप में निवल अनर्जक आस्तियां | 437 |
| 9.31 | चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों के सकल ऋणों की तुलना में क्षतिग्रस्त ऋणों का अनुपात | 438 |
| 10.1 | सुपर विनियामक ढांचे वाले देश | 463 |
| 10.2 | सिद्धांत आधारित विनियमन के रणनीतिक ध्येय और संकेतक | 468 |
| 10.3 | सुस्पष्ट निक्षेप बीमा प्रणाली के तहत जोखिम आधारित प्रीमियम वाले देश | 475 |

## संक्षेपाक्षर

| | | |
|---|---|---|
| एबीए | - | आस्ट्रेलियाई बैंकर संघ |
| एबीएस | - | आस्ति समर्थित प्रतिभूतियां (एबीएस) |
| एसीएफ | - | स्व-सहसंबंध कार्य |
| एडीबी | - | एशियाई विकास बैंक |
| एडीआइ | - | जमा लेने वाली प्राधिकृत संस्थाएं |
| एडीआर | - | अमरीकी निक्षेपागार रसीद |
| एई | - | आबंटनात्मक दक्षता |
| एएफआइ | - | वार्षिक वित्तीय निरीक्षण |
| एएफएस | - | बिक्री के लिए उपलब्ध |
| एएचसी | - | आस्ति-धारक कंपनियां |
| एआइडीआइएस | - | अखिल भारतीय ऋण और निवेश सर्वेक्षण |
| एआइएफआइ | - | अखिल भारतीय वित्तीय संस्था |
| एआइजी | - | समझौता कार्यान्वयन दल |
| ए-आइआरबी | - | उन्नत आंतरिक रेटिंग आधारित दृष्टिकोण |
| एआइआरसीएस | - | अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण |
| एआइ | - | प्राधिकृत संस्थाएं |
| एएलसीओ | - | आस्ति देयता प्रबंधन समिति |
| एएलएम | - | आस्ति देयता प्रबंधन |
| एएमए | - | उन्नत माप दृष्टिकोण |
| एएनबीसी | - | समायोजित निवल बैंक ऋण |
| एपीएमएएस | - | आंध्र प्रदेश महिला अभिवृद्धि समिति |
| एपीआरए | - | आस्ट्रेलियन प्रूडेन्शियल रेगुलेशन अथॉरिटी |
| एआरसी(कृपुनि) | - | कृषि पुनर्वित्त निगम |
| एआरसी | - | आस्ति पुनर्निर्माण कंपनी |
| एआरडीसी | - | कृषि पुनर्वित्त तथा विकास निगम |
| अरिमा | - | स्वप्रतिगामी समन्वित चल औसत |
| एएसए | - | वैकल्पिक मानकीकृत दृष्टिकोण |
| एएस | - | लेखांकन मानक |
| एटीएफ | - | अविएशन टर्बाइन फ्यूएल |
| एटीएम | - | स्वचालित टेलर मशीन |
| बीएएसी | - | कृषि तथा कृषि सहकारिताओं के लिए बैंक |
| बीएएफआइएन | - | जर्मन फेडरल फाइनेंशियल सुपरवाइजरी अथॉरिटी |
| बीसीबीएस | - | बैंकिंग पर्यवेक्षण संबंधी बासेल समिति |
| बीसीपी(कानियो) | - | कारोबार निरंतरता योजना |
| बीसीपी | - | बासेल मूल सिद्धांत |
| बीसी | - | व्यवसाय संपर्की |
| बीसीएसबीआइ | - | भारतीय बैंकिंग कोड और मानक बोर्ड |
| बअ | - | बजट अनुमान |
| बीईईपीएस | - | कारोबार वातावरण तथा उद्यम कार्यनिष्पादन सर्वेक्षण |
| बीएफ | - | व्यवसाय सुसाध्यकर्ता |
| बीएफएस | - | वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड |
| बीजीएफआरएस | - | फेडरल रिजर्व प्रणाली के लिए गवर्नरों का बोर्ड |
| बीएचसी | - | बैंक धारक कंपनी |
| बीआइए | - | मूल संकेतक दृष्टिकोण |
| बीआइएस | - | अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक |
| बीओई | - | बैंक ऑफ इंग्लैंड |
| बीओजे | - | बैंक ऑफ जापान |
| बीओपी | - | भुगतान संतुलन |
| बीओटी | - | बैंक ऑफ थाईलैंड |
| बीपीएलआर | - | बेंचमार्क मूल उधार दर |
| बीपीओ | - | बिजनेस प्रॉसेस आउटसोर्सिंग |
| बीआर ऐक्ट | - | बैंककारी विनियमन अधिनियम |
| बीआरएसी | - | समुदायों के बीच संसाधन निर्माण |
| बीआरआइ | - | बैंक रकयात इंडोनेशिया |
| बीएसई | - | बम्बई शेयर बाजार |
| बीएसपी | - | बैंग्को सेंट्रल एनजी फिलीपिनास |

बीएसआर - मूलभूत सांख्यिकीय विवरणी

सीएएलसीएस - पूंजी पर्याप्तता, आस्ति गुणवत्ता, चलनिधि, अनुपालन और प्रणाली

सीएएमइएलएस - पूंजी पर्याप्तता, आस्ति गुणवत्ता, प्रबंध, आय, चलनिधि, प्रणाली और नियंत्रण

सीएआर - आस्ति के प्रति पूंजी अनुपात

सीएआरई - ऋण विश्लेषण और अनुसंधान लिमिटेड

सीएएस - ऋण प्राधिकरण योजना

सीबीएफए - कमीशन बेनकैरे, फिनान्सियर एट डेस अश्यूरैंसेज

सीबीएलओ - संपार्श्विकीकृत उधार लेने और ऋण देने का दायित्व

सीबीआरए - कारोबार विनियामक एजेंसी का व्यवहार

सीबीएस - कोर बैंकिंग प्रणाली

सीबीएसआर - बैंकिंग क्षेत्र सुधार पर समिति

सीडीआइसी - केनडा जमा बीमा निगम

सीडीएमए - कोड डिविजन मल्टिपल ऐक्सेस

सीडीओ - संपर्श्विकीकृत ऋण दायित्व

सीडीआर - कपनी ऋण पुनर्विन्यास

सीडी - जमा प्रमाणपत्र

सीडीएस - ऋण चूक स्वैप

सीई - लागत दक्षता

सीईओ - मुख्य कार्यपालक अधिकारी

सीईपीएस - सेंटर फॉर यूरोपियन पॉलिसी स्टडीज

सीएफईएस - केंद्रीकृत निधि जांच प्रणाली

सीएफएल - कॉम्पैक्ट फ्ल्यूरोसेंट लैंप

सीएएफएमएस - केंद्रीकृत निधि प्रबंध प्रणाली

सीएफएस - वित्तीय प्रणाली पर समिति

सीएफएस - समेकित वित्तीय विवरण

सीएफटीएस - केंद्रीकृत निधि अंतरण प्रणाली

सीजी - पूंजीगत माल

सिबिल - ऋण सूचना ब्यूरो (भारत) लिमिटेड

सीएलएन - ऋण संबद्ध नोट

सीएमडी - अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक

सीओआर - पंजीकरण प्रमाणपत्र

सीपी - वाणिज्यिक पत्र

सीपीआइ-एएल - उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (कृषि मज़दूर)

सीपीआइ -आइडब्ल्यू - उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (औद्योगिक कामगार)

सीपीआइ-आरएल - उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (ग्रामीण भूमिका)

सीपीआइ-यूएनएमई - उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (शहरी श्रमेतर कर्मचारी)

सीपीएसबी - कॉर्प प्रगति सेविंग्ज बैंक

सीपीएसएमएस - केंद्रीय योजना स्कीम निगरानी प्रणाली

सीआरए - समुदाय पुनर्निवेश अधिनियम

सीआरएआर - जोखिम भारित आस्तियों के प्रति पूंजी अनुपात

सीआरसीएस - सहकारी समितियों के केंद्रीय पंजीयक

सीआरडी - पूंजी अपेक्षाओं संबंधी निदेश

क्रिसिल - भारतीय साख-निर्धारण सूचना सेवा लिमि.

सीआरएम - ऋण जोखिम शमन

सीआरआर - नकदी आरक्षित अनुपात

सीएसओ - केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन

सिसोसं - सिविल सोसाइटी संगठन

डीसीसी - जिला परामर्शदात्री समिति

डीसीसीबी - जिला मध्यवर्ती सहकारी बैंक

डीईए - डेटा एनवलपमेंट दृष्टिकोण

डीई - पदनामित संस्थाएं

डीएफआइ - विकास वित्त संस्था

डीएफएसए - डेनिश फिनान्शियल सुपरवाइजरी ऑथारिटी

डीजीसीआइ एण्ड एस - वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय

डीआइसीजीसी - निक्षेप बीमा और प्रत्यय गारंटी निगम

| | | |
|---|---|---|
| डीआइएस | - | जमा बीमा प्रणाली |
| डीएमयू | - | निर्णायक यूनिट |
| डीओटी | - | कोषागार विभाग |
| डीआरआइ | - | विभेदक ब्याज दर |
| डीआरटी | - | ऋण वसूली न्यायाधिकरण |
| ईएडी | - | चूक पर एक्सपोजर |
| ईबीजी | - | इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग समूह |
| ईसी | - | आर्थिक पूंजी |
| ईसीए | - | बाह्य क्रेडिट एजेंसी |
| ईसीएए | - | बाह्य क्रेडिट निर्धारण एजेंसी |
| ईसीबी(यूसेंबैं) | - | यूरोपियन सेंट्रल बैंक |
| ईसीबी | - | बाह्य वाणिज्यिक उधार |
| ईईई | - | मुक्त-मुक्त-मुक्त |
| ईईटी | - | मुक्त-मुक्त-करयुक्त |
| ईएफटी | - | इलेक्ट्रॉनिक निधि अंतरण |
| ईएल | - | प्रत्याशित हानि |
| ईएमई | - | ऊभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएं |
| ईएमआइ | - | समीकृत मासिक किस्त |
| ईएमयू | - | यूरोपीय मौद्रिक संघ |
| ईएनएसआर | - | सामाजिक तथा आर्थिक अनुसंधान हेतु यूरोपियन नेटवर्क |
| ईपीओएस | - | बिक्री के लिए इलेक्ट्रॉनिक पॉइंट |
| ईआरएम | - | उद्यमव्यापी जोखिम प्रबंधन |
| ईयू | - | यूरोपीय संघ |
| एग्ज़िम बैंक | - | निर्यात-आयात बैंक |
| एफसीएसी | - | पूर्णतर पूंजी खाता परिवर्तनीयता |
| एफसीएसी | - | फाइनान्शियल कस्टमर एजेन्सी ऑफ केनडा |
| एफसीएनआर (ए) | - | विदेशी मुद्रा अनिवासी (खाता) |
| एफसीएनआर (बैंक) | - | विदेशी मुद्रा अनिवासी खाता (बैंक) |
| एफडीआइ | - | प्रत्यक्ष विदेशी निवेश |
| एफडीआइसी | - | फेडरल जमा बीमा निगम |
| एफएचसी | - | वित्तीय धारक कंपनी |
| एफआइ | - | वित्तीय संस्थाएं |
| एफआइआइ | - | विदेशी संस्थागत निवेशक |
| एफ-आइआरबीए | - | मूल आंतरिक रेटिंग आधारित दृष्टिकोण |
| एफआइ (वि.म.सं.) | - | वित्तीय मध्यवर्ती संस्थाएं |
| एफएमसीजी | - | शीघ्र खपत वाले उपभोक्ता माल |
| एफओएफ | - | निधि प्रवाह |
| एफओएमसी | - | फेडरल ओपेन मार्केट कमिटी |
| एफआरए | - | वायदा दर करार |
| एफआरबी | - | फेडरल रिज़र्व बैंक |
| एफआरबीएम | - | राजकोषीय उत्तरदायित्व तथा बजट प्रबंधन |
| एफआर बीएसएफ | - | फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ सॅन फ्रान्सिस्को |
| एफआरएल | - | राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान |
| एफआरएल | - | पूर्ण जलाशय स्तर |
| एफएसए | - | वित्तीय सेवा प्राधिकारी |
| एफएसएफ | - | वित्तीय स्थिरता मंच |
| एफएसआइ | - | वित्तीय स्थिरता संस्थान |
| जीएटीएस | - | व्यापार एवं सेवा संबंधी सामान्य करार |
| जीबी | - | ग्रामीण बैंक |
| जीसीसी | - | सामान्य क्रेडिट कार्ड |
| जीडीसीएफ | - | सामान्य देशी पूंजी निर्माण |
| जीडीपी | - | सकल देशी उत्पाद |
| जीडीआर | - | वैश्विक निक्षेपागार रसीद |
| जीडीएस | - | सकल देशी बचत |
| जीएफडी | - | सकल राजकोषीय घाटा |
| जीएलबी अधिनियम | - | ग्राम-लीच-ब्लीले अधिनियम |
| जीएनआइई | - | सरकारी जो अन्यत्र वर्गीकृत नहीं |
| जीओआइ | - | भारत सरकार |

जीओएलडी - वैश्विक परिचालनात्मक हानि डेटाबेस
जीपीआरएस - जनरल पैकेट रेडियो सेवा
जीवी - ग्राम विडियाल
एचडीएफसी - आवास विकास वित्त निगम
एचएफसी - आवास वित्त कंपनियां
एचएफटी - ट्रेडिंग के लिए धारित
एचएचआइ - हरफिंडाल-हिरश्चमन सूचकांक
एचकेएमए - हांक-कांग मौद्रिक प्राधिकारी
एचएसबीसी - हांग-कांग एंड शंघाई बैंकिंग कारपोरेशन
एचटीएम - परिपक्वता तक धारित
आइएडीआइ - जमा बीमाकर्ताओं का अंतरराष्ट्रीय संघ
आइएआइएस - बीमा पर्यवेक्षकों का अंतरराष्ट्रीय संघ
आइएवाइ - इंदिरा आवास योजना
आइबीए - भारतीय बैंक संघ
आइबीएल - अंतर बैंक देयताएं
आइसीएएपी - आंतरिक पूंजी पर्याप्तता निर्धारण प्रक्रिया
आइसीएआइ - भारतीय सनदी लेखाकार संस्थान
आइसीआरए - निवेश सूचना तथा साख श्रेणी निर्धारण एजेंसी
आइसीएस - निवेश वातावरण सर्वेक्षण
आइडीए - व्यक्तिगत विकास लेखा
आइडीबीआइ - भारतीय औद्योगिक विकास बैंक लिमिटेड
आइडीआरबीटी - बैंकिंग प्रौद्योगिकी विकास एवं अनुसंधान संस्थान
आइएफसीआइ - भारतीय औद्योगिक वित्त निगम लिमिटेड
आइएफआर - निवेश घट-बढ़ रिजर्व
आइआइबीआइ - भारतीय औद्योगिक निवेश बैंक लिमिटेड
आइआइएमएस - भारतीय निवेश बाजार समाधान
आइआइपी - औद्योगिक उत्पादन सूचकांक
आइएमए - आंतरिक माप दृष्टिकोण
आइएमडी - भारतीय मौसम विभाग
आइएमडी - इंडिया मिलेनियम डिपॉजिट्स
आइएमएफ - अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष
इंफीनेट - भारतीय वित्तीय नेटवर्क
आइओएससीओ - प्रतिभूति आयोगों का अंतरराष्ट्रीय संगठन
आइपीडीआइ - नवोन्मेषी शाश्वत ऋण लिखतें
आइपीओ - प्रारंभिक सार्वजनिक प्रस्ताव
आइआरबीए - आंतरिक रेटिंग आधारित दृष्टिकोण
आइआरडीए - बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण
आइआरआर - ब्याज दर जोखिम
आइआरएस - ब्याज दर स्वैप
आइएसओ - अंतरराष्ट्रीय मानक संगठन
आइटी - सूचना प्रौद्योगिकी
आइटीबी - मध्यवर्ती खजाना बिल
आइटीईएस - सूचना प्रौद्योगिकी समर्थित सेवाएं
आइटीई - अंतः समूह लेनदेन तथा एक्सपोजर
जेएनएनयूआरएम - जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन
केसीसी - किसान क्रेडिट कार्ड
केयूएमक्यूआरपी - कियो यूनिवर्सिटी मार्केट क्वालिटी रिसर्च प्रोजेक्ट
केवाइसी - अपने ग्राहक को जानिए
एलएएफ - चलनिधि समायोजन सुविधा
एलबीएस - अग्रणी बैंक योजना
एलडीए - हानि वितरण दृष्टिकोण
एलडीसी - न्यूनतम विकसित देश
एलजीडी - चूक पर हानि
एलआइसी - भारतीय जीवन बीमा निगम
एलआइएचटीसी - कम-आय आवास-कर ऋण
एलओएलआर - अंतिम उधारदाता
एलपीए - दीर्घावधि औसत
एलपीजी - लिक्विफाइड पेट्रोलियम गैस
एलटीओ - दीर्घावधि परिचालन

| | | |
|---|---|---|
| एम एण्ड ए | - | विलयन और अधिग्रहण |
| एम3 | - | व्यापक मुद्रा |
| एमएएस | - | मॉनिटरी ऑथोरिटी ऑफ सिंगापुर |
| एमबीएस | - | बंधक समर्थित प्रतिभूतियां |
| एम-सीआरआइएल | - | माइक्रो क्रेडिट रेटिंगज इंटरनेशलन लिमिटेड |
| एमएफआइ | - | लघु वित्त संस्थान |
| माइकर | - | चुंबकीय स्याही चिन्ह पहचान |
| एमआइएस | - | प्रबंध सूचना प्रणाली |
| एमएलआर | - | न्यूनतम उधार दर |
| एमओयू | - | सहमति ज्ञापन |
| एमपीबीएफ | - | अधिकतम अनुमेय बैंक वित्त |
| एमपीसी | - | मौद्रिक नीति समिति |
| एमपीआइ | - | मालक्विस्ट उत्पादकता सूचकांक |
| एमएसएमई | - | व्यष्टि ,लघु एवं मझौले उद्यम |
| एमएसएमईडी | - | व्यष्टि ,लघु एवं मझौले उद्यम विकास |
| एमएसएस | - | बाजार स्थिरीकरण योजना |
| नाबार्ड | - | राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक |
| नैसकॉम | - | सॉफ्टवेयर और सेवा कंपनियों का राष्ट्रीय संघ |
| एनबीसी | - | निवल बैंक ऋण |
| एनबीएफसी एनडी-एसआइ | - | प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण जमा न लेने वाली गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनी |
| एनबीएफसी | - | गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियां |
| एनसीएईआर | - | राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त आर्थिक अनुसंधान परिषद |
| एनसीएएफ | - | नया पूंजी पर्याप्तता ढांचा |
| एनसीसी | - | राष्ट्रीय ऋण परिषद |
| एनसीडीसी | - | राष्ट्रीय सहकारिता विकास निगम |
| एनसीडी | - | अपरिवर्तनीय डिबेंचर |
| एनडीएस | - | तयशुदा लेनदेन प्रणाली |
| एनडीएस-ओएम | - | तयशुदा लेनदेन प्रणाली - ऑर्डर मैचिंग |
| एनडीटीएल | - | निवल मांग और मीयादी देयताएं |

| | | |
|---|---|---|
| एनईईआर | - | सांकेतिक प्रभाव विनिमय दर |
| एनईएफटी | - | राष्ट्रीय इलेक्ट्रानिक निधि अंतरण |
| एनएफसी | - | नीयर फील्ड कम्युनिकेशन |
| एनजीओ | - | गैर सरकारी संगठन |
| एनएचबी | - | राष्ट्रीय आवास बैंक |
| एनआइएम | - | निवल ब्याज मार्जिन |
| एनएमएफआइ | - | वित्तीय समावेशन हेतु राष्ट्रीय आयोग |
| एनएनपीए | - | निवल अनर्जक आस्तियां |
| एनपीए | - | अनर्जक आस्तियां |
| एनपीएल | - | अनर्जक ऋण |
| एनआर(ई) आरए | - | अनिवासी (बाह्य) रुपया खाता |
| एनआर (एनआर) आरडी | - | अनिवासी (अप्रत्यावर्तनीय) रुपया जमा |
| एनआरईजीएस | - | राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना |
| एनआरएफ आइपी | - | राष्ट्रीय ग्रामीण वित्तीय समावेशन योजना |
| एनआरआइ | - | अनिवासी भारतीय |
| एनआरओ | - | अनिवासी साधारण |
| एनएससी | - | राष्ट्रीय बचत प्रमाणपत्र |
| एनएसई | - | राष्ट्रीय शेयर बाजार |
| एनएसके एफडीसी | - | राष्ट्रीय सफाई कमचारी वित्त एवं विकास निगम |
| एनएसएसएफ | - | राष्ट्रीय अल्प बचत निधि |
| एनएसएसओ | - | राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन |
| एनटीआर | - | करेतर राजस्व |
| ओबीसी | - | ओरियंटल बैंक ऑफ कॉमर्स |
| ओबीई | - | तुलनपत्र - बाह्य एक्सपोजर |
| ओडी | - | ओवरड्राफ्ट |
| ओईसीडी | - | आर्थिक सहयोग और विकास संगठन |
| ओएफआइ | - | अन्य वित्तीय संस्थाएं |
| ओएफएसए | - | ओरैकल फाइनान्शियल सर्विसेज एप्लीकेशन |

| | | |
|---|---|---|
| ओएमओ | - | खुला बाजार परिचालन |
| ओएमएस | - | खुला बाजार बिक्री |
| ओएनजीसी | - | तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग |
| ओपीईसी | - | पेट्रोलियम निर्यातक देशों का संगठन |
| ऑसमॉस | - | परोक्ष चौकसी और निगरानी प्रणाली |
| ओएसएस | - | परोक्ष चौकसी प्रणाली |
| ओटीएस | - | एकबारगी निपटान |
| ओडब्ल्यूएस | - | अन्य कल्याणकारी योजनाएं |
| पी/ई | - | अर्जन की तुलना में मूल्य |
| पीए | - | पासपोर्ट खाता |
| पीएसीएफ | - | आंशिक स्व-सहसंबंध कार्य |
| पीएसीएस | - | प्राथमिक कृषि ऋण समिति |
| पीएटी | - | करोत्तर लाभ |
| पीबीसी | - | पीपल्स बैंक ऑफ चाइना |
| पीबीटी | - | कर पूर्व लाभ |
| पीसीए | - | त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई |
| पीसीएफसी/ ईबीआर | - | विदेशी मुद्रा में लदानपूर्व ऋण / निर्यात बिलों की पुनर्भुनाई |
| पीसीपीएस | - | शाश्वत संचयी अधिमान शेयर |
| पीडी | - | चूक की संभाव्यता |
| पीडी | - | प्राथमिक व्यापारी |
| पीडीसीएफ | - | प्राथमिक व्यापारी ऋण सुविधा |
| पीडीएस | - | सार्वजनिक वितरण प्रणाली |
| पीएफआरए | - | विवेकसम्मत वित्तीय विनियामक एजेंसी |
| पीएफआरडीए | - | पेंशन निधि विनियामक और विकास प्राधिकरण |
| पीआइएन | - | व्यक्तिगत पहचान संख्या |
| पीआइओ | - | प्रधान निरीक्षक अधिकारी |
| पीएलआर | - | मूल उधार दर |
| पीएनसीपीएस | - | शाश्वत असंचयी अधिमान शेयर |
| पीओएस | - | बिक्री बिंदु |
| पीपीपी | - | सरकारी निजी सहभागिता |
| पी-आर | - | पेन्ज़र-रोस |
| पीएसबी | - | सरकारी क्षेत्र के बैंक |
| पीएसयू | - | सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम |
| क्यूआइएस-5 | - | पांचवां परिणामात्मक प्रभाव अध्ययन |
| आरबीएपी एमएबीएस | - | रूरल बैंकर्स एसोसिएशन ऑफ दि फिलिपीन्स मैक्रोएन्टरप्राइज ऐक्सेस टू बैंकिंग सर्विसेज |
| आरबीआइ | - | भारतीय रिज़र्व बैंक |
| आरबीएस | - | जोखिम-आधारित पर्यवेक्षण |
| आरसीपीएस | - | मोचनीय संचयी अधिमान शेयर |
| आरसी | - | पुनर्निर्माण कंपनी |
| आरसीएस | - | सहकारी समिति के रजिस्ट्रार |
| आरडी | - | राजस्व घाटा |
| आरई | - | संशोधित अनुमान |
| आरईईआर | - | वास्तविक प्रभावी विनिमय दर |
| आरएफआइडी | - | रेडियो फ्रिक्वेन्सी आइडेंटिफिकेशन डिवाइस |
| आरआइबी | - | रीसर्जेंट इंडिया बांड |
| आरआइडीएफ | - | ग्रामीण मूलभूत संरचना विकास निधि |
| आरएनबीसी | - | अविशिष्ट गैर-बैंकिंग कंपनी |
| आरएनसीपीएस | - | मोचनीय असंचयी अधिमान शेयर |
| आरओए | - | आस्तियों पर प्रतिलाभ |
| आरओई | - | इक्विटी पर प्रतिलाभ |
| आरपीओ | - | सुधार बिंदु उद्देश्य |
| आरपीटी | - | जोखिम प्रोफाइल टेंप्लेट |
| आरआरबी | - | क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक |
| आरटीसीपी | - | ग्रामीण रूपांतरण केंद्र कार्यक्रम |
| आरटीजीएस | - | तत्काल सकल निपटान |
| आरटीओ | - | सुधार समय उद्देश्य |
| आरटीपी | - | आरक्षित श्रृंखला स्थिति |
| आरडब्ल्यूए | - | जोखिम-भारित आस्तियां |
| एसए | - | मानकीकृत दृष्टिकोण |
| सरफेसी | - | वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनःसंरचना एवं प्रतिभूति हित का प्रवर्तन |

| | |
|---|---|
| एसबीआइ | भारतीय स्टेट बैंक |
| एसबीआइटीसीए | एसबीआई टाइनी कार्ड खाता |
| एसबीपी | स्टेट बैंक ऑफ पाकिस्तान |
| एससी | अनुसूचित जाति |
| एससीबी | राज्य सहकारी बैंक |
| एससीबी | अनुसूचित वाणिज्य बैंक |
| एससीआइ एलएल | स्टैंडर्ड चार्टर्ड इनवेस्टमेंट एंड लोन्स लिमिटेड |
| एससी(प्रकं) | प्रतिभूतिकरण कंपनी |
| एसडीए | मानकीकृत अवधि दृष्टिकोण |
| एसडीआर | विशेष आहरण अधिकार |
| सेबी | भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड |
| एसईडीएफ | लघु उद्यम विकास निधि |
| एसईयू | सोशल एक्सक्लूजन यूनिट |
| एसएफसी | सिक्यूरिटीज एंड फ्यूचर्स कमीशन |
| एसएचजी | स्वयं-सहायता समूह |
| एसएचपीआइ | स्वयं-सहायता संवर्धन संस्था |
| सिडबी | भारतीय लघु उद्योग विकास संस्था |
| एसआइएफआइ | प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण वित्तीय मध्यवर्ती संस्थाएं |
| एसआइएम | अभिदाता पहचान मोड्यूल |
| एसआइवी | विशेष निवेश |
| एसएलबीसी | राज्य स्तरीय बैंकर समिति |
| एसएलआर | सांविधिक चलनिधि अनुपात |
| एसएमए | मौसमी चल औसत |
| एसएमई | लघु और मझौले उद्यम |
| एसएमईआरए | लघु और मझौले उद्यम दर-निर्धारण एजेंसी |
| एसएमओ | विशेष बाजार परिचालन |
| एसएमएस | लघु संदेश सेवा |
| एसएनबी | स्विस नेशनल बैंक |
| एसएनडी | गौण नोट तथा डिबेंचर |
| एसपीवी | विशेष प्रयोजन माध्यम |
| एसआरईपी | पर्यवेक्षणात्मक समीक्षा और मूल्यांकन प्रक्रिया |
| एसआरपी | पर्यवेक्षणात्मक समीक्षा प्रक्रिया |
| एसएसए | सरलीकृत मानकीकृत दृष्टिकोण |
| एसएसआइ | लघु उद्योग |
| एसएसपी | सामाजिक सुरक्षा पेंशन |
| एसटी | अनुसूचित जनजाति |
| एसटीसीसीएस | अल्पावधि सहकारी ऋण संरचना |
| टीएएफ | मीयादी नीलामी सुविधा |
| टैफकब | शहरी सहकारी बैंकों के संबंध में कार्यबल |
| टीएपी | टेक्स्ट - ए - पेमेंट |
| टीबी | थ्रिफ्ट बैंक |
| टीबीए | संपूर्ण शाखा स्वचालन |
| टीई | तकनीकी कार्यक्षमता |
| टीएफसी | बारहवां वित्त आयोग |
| टीएफसीआइ | भारतीय पर्यटन वित्त निगम लिमिटेड |
| टीएफपी | समग्र कारक उत्पादकता |
| टीपीडीएस | लक्ष्यित सार्वजनिक वितरण प्रणाली |
| टीआरएम | ट्रेडिंग जोखिम प्रबंधन |
| टीआरएस | कुल प्रतिलाभ स्वैप |
| यूएएसएल | एकीकृत अभिगम सेवा लाइसेंस |
| यूसीबी | शहरी सहकारी बैंक |
| यूसीसी | शहरी ऋण सहकारिता |
| यूडी | यूनिट देसाई |
| यूआइ | यूजर इंटरफेस |
| यूके | युनाइटेड किंगडम |
| यूएल | अप्रत्याशित हानि |
| यूएसए | संयुक्त राज्य अमरीका |
| यूटी | संघशासित प्रदेश |
| यूटीआइ | भारतीय यूनिट ट्रस्ट |
| वीएआर | जोखिम पर मूल्य |

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| वीएटी | - | मूल्यवर्धित कर | डब्ल्यूडीआइ | - | विश्व विकास संकेतक |
| वीसीएफ | - | जोखिम पूंजी निधी | डब्ल्यूएमए | - | अर्थोपाय अग्रिम |
| बीआरएस | - | स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना | डब्ल्यूओएस | - | पूर्णतः स्वाधिकृत सहायक संस्था |
| वीएसएटी | - | वेरी स्माल अपर्चर टर्मिनल | डब्ल्यूपीआइ | - | थोक मूल्य सूचकांक |
| डब्ल्यूएडीआर | - | भारित औसत बट्टा दर | डब्ल्यूटीआइ | - | वेस्ट टेक्सास इंटरमीडिएट |
| डब्ल्यूबीईएस | - | विश्व कारोबार वातावरण सर्वेक्षण | डब्ल्यूटीओ | - | विश्व व्यापार संगठन |
| डब्ल्यूसीटीएल | - | कार्यशील पूंजी मीयादी ऋण | वाइओवाइ | - | साल-दर-साल |

**यह रिपोर्ट इंटरनेट के माध्यम से www.rbi.org.in**
**नामक यूआरएल पर भी देखी जा सकती है।**

# VI बैंकों के उधार और निवेश कार्य

6.1 वाणिज्य बैंक व्यापक तौर पर विविध प्रकार के ऐसे कार्यकलाप करते हैं, जो देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं । वे जमाकर्ताओं के लिए जोखिमों को इकट्ठा कर उनका अंतर्लयन करते हैं तथा अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों को निवेश और कार्यशील पूँजीगत निधियों का एक स्थिर स्रोत उपलब्ध कराते हैं । इसके अतिरिक्त, वे सुचारु रूप से कार्यरत एक ऐसी भुगतान प्रणाली उपलब्ध कराते हैं जो वित्तीय और वास्तविक संसाधनों को उनके अधिकतम प्रतिफल देनेवाले उपयोग के लिए अपेक्षाकृत मुक्त रूप से प्रवाहमान होने देती है । वे अस्थायी कठिनाई की स्थिति में अर्थव्यवस्था में किसी भी क्षेत्र के लिए चलनिधि का एक समर्थन (बैकअप) स्रोत भी हैं। बैंक विशेष रूप से छोटे उधारकर्ताओं के लिए निधियों का महत्वपूर्ण स्रोत हैं जो बाह्य वित्त के अन्य स्रोतों तक प्रायः सीमित पहुँच रखते हैं। वाणिज्य बैंकों के तीन प्रमुख परस्पर संबद्ध कार्य हैं जमाराशियां रखना; उधार देने और निवेश करने के कार्यकलापों के द्वारा ऋण का निर्माण; तथा विभिन्न उत्पादक गतिविधियों के लिए निधियों के भुगतान और अंतरण हेतु एक व्यवस्था उपलब्ध कराना। इस प्रकार ऋण प्रदान करना अथवा उधार देना किसी भी वाणिज्य बैंक का प्रधान कार्य है ।

6.2 बैंकिंग सिद्धांत के प्रारंभिक समय से ही, जमाराशियों और उधार देने के बीच के अंतर को अल्पतम के रूप में देखा गया, जो अनिश्चित नकदी प्रवाहों को पूरा करने के लिए आवश्यक नकदी शेषराशियों एवं वैध मुद्रा अथवा केंद्रीय बैंक की शेषराशियों में धारित अपेक्षित प्रारक्षित निधियों के माध्यम से केंद्रीय बैंक द्वारा निक्षेपागार (डिपॉजिटरी) की प्रक्रिया से प्राप्त विनियामक सिक्का-ढलाई मुनाफे (सेन्यरिज) के साथ संबद्ध है (मीड, 1934)। उधार देना न केवल बैंकों की आय का प्राथमिक स्रोत है, बल्कि वह समूची अर्थव्यवस्था के अंतर्गत उत्पादक गतिविधि के लिए वित्तपोषण की व्यवस्था करता है। ऐतिहासिक तौर पर अर्थव्यवस्था में वाणिज्य बैंकों द्वारा अदा की गई भूमिका को समझने की जड़ें समष्टि-आर्थिक सिद्धांत में रही हैं। कीन्स (1930) तथा पेसेक और सेविंग (1967) ने तर्क किया कि वाणिज्य बैंक समष्टि-अर्थव्यवस्था के केंद्र में हैं क्योंकि वे बचतकर्ताओं और निवेशकों के बीच वित्तीय मध्यवर्तियों के रूप में कार्य करते हैं ।

6.3 भारत में बैंक पारंपरिक रूप से अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के लिए ऋण का प्रमुख स्रोत रहे हैं। उन्होंने केंद्र और राज्य सरकारों के उधार की आवश्यकताओं का निधीयन भी उनकी प्रतिभूतियों में निवेश द्वारा किया है। भारत में बैंकों के उधार देने और निवेश के परिचालन अर्थव्यवस्था की बदलती आवश्यकताओं की प्रतिक्रिया के रूप में विकसित हुए हैं। 1990 के दशक के प्रारंभ में वित्तीय क्षेत्र सुधार प्रारंभ करने से पहले बैंकों द्वारा उधार दिये जाने के कार्य को सख्ती से विनियमित किया गया था और बैंकों से यह प्रत्याशित था कि वे अपने उधार कार्यों का पंक्तिबंधन (अलाइनमेंट) प्राथमिकताओं की योजना के लिए करें । बैंक उधार 1967-68 में अपनाये गये ऋण आयोजना दृष्टिकोण के अंतर्गत मौद्रिक नीति का प्रधान केंद्रबिंदु था। फिर भी, बैंकिंग क्षेत्र सुधारों के चलते बैंकों के तुलन-पत्रों के संबंध में विभिन्न प्रतिबंध हटाये गये और प्रत्यक्ष ऋण नियंत्रण बड़े पैमाने पर समाप्त किये गये, यद्यपि यह सब एक चरणबद्ध तरीके से किया गया था। निदेशित निवेश भी एक उल्लेखनीय सीमा तक कम किये गये थे। नियंत्रित उधार दरों की प्रणाली भी समाप्त की गई थी तथा एक लचीले तरीके से परिचालन करने में बैंकों को समर्थ बनाने के लिए बैंकों के उधार पर विभिन्न अन्य प्रतिबंध भी क्रमशः हटाये गये थे । इससे बैंकों के उधार और निवेश कार्यों में संरचनागत रूपांतरण के लिए मार्ग प्रशस्त हुआ। देश के समग्र समष्टि-आर्थिक निष्पादन पर उनके प्रभाव को ध्यान में रखते हुए इस अध्याय में भारत में बैंकों के उधार और निवेश कार्यों का विस्तृत विवरण, विशेष रूप से पिछले डेढ़ दशक में व्याप्त वित्तीय क्षेत्र के उदारीकरण उपायों के आलोक में, प्रस्तुत किया गया है ।

6.4 यह अध्याय दस खंडों में विभाजित है । खंड II बैंकों के उधार कार्यों के सैद्धांतिक समर्थन संबंधी साहित्य की संक्षिप्त समीक्षा के साथ प्रारंभ होता है। इसमें बैंकों के संविभाग व्यवहार एवं ऋणों और निवेशों के रूप में आस्तियों के आबंटन का एक व्यापक विहगावलोकन किया गया है। खंड III भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के समग्र ऋण में विद्यमान प्रवृत्तियों पर संकेंद्रित है। बैंकों के ऋण-जमा अनुपातों में निहित प्रवृत्तियों सहित, बैंकों द्वारा उधार संबंधी व्यवहार के प्रमुख संकेतकों का विश्लेषण किया गया है। कृषि को उधार से संबंधित विभिन्न मुद्दों के साथ, बैंकों द्वारा कृषि उधार में विद्यमान प्रवृत्तियाँ खंड IV में निर्दिष्ट की गई हैं। विभिन्न देशों में कृषि उधार की नीतियाँ कैसे विकसित हुई हैं, इसकी अंतर्दृष्टि के लिए कृषि को दिये जानेवाले अग्रिमों में विभिन्न देशों में विद्यमान ढाँचों की रूपरेखा भी इस खंड में प्रस्तुत की गई है। खंड V में लघु और मझौले उद्यमों (एसएमई) के क्षेत्र को उधार पर विशेष फोकस के साथ उद्योग को दिये जानेवाले उधार की प्रवृत्तियों को सम्मिलित किया गया है । इस खंड के अंतर्गत विभिन्न देशों में एसएमई को दिये जानेवाले उधार का विश्लेषण है और यह स्पष्ट किया गया है कि एसएमई को उधार देते समय कुछ देशों के बैंकों ने अपने सामने आनेवाले अवरोधों को कैसे पार किया है। खंड VI बुनियादी संरचना (इन्फ्रास्ट्रक्चर) क्षेत्र को बैंकों द्वारा दिये गये उधार में विद्यमान प्रवृत्तियों का विश्लेषण करता है। बैंकों द्वारा बुनियादी संरचना का वित्तपोषण करने में विभिन्न देशों में प्राप्त अनुभवों को भी शामिल किया गया है। खंड VII में फुटकर ऋणों में तीव्र वृद्धि और उससे संबंधित विभिन्न विषय सम्मिलित हैं । खंड VIII में बैंकों के निवेश व्यवहार के विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण किया गया है । खंड

IX में एक अग्रवर्ती युक्ति के रूप में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों को पर्याप्त और समय पर ऋण सुनिश्चित करने के लिए कुछ सुझाव दिये गये हैं। खंड X विचार-विमर्श के मुख्य बिंदुओं का समाहार करता है ।

## II. बैंकों के उधार कार्य - सैद्धांतिक समर्थन

6.5 बैंकिंग पर उपलब्ध साहित्य विभिन्न सिद्धांतों की जानकारी देता है जो बैंकों के उधार कार्यों को नियंत्रित करते हैं । ये सिद्धांत वाणिज्य बैंकों के विकास के साथ ही कालक्रम में विकसित हुए हैं । फिर भी, इनमें से ज्यादातर सिद्धांत ऋणयोग्य निधियों के निर्माताओं के रूप में वाणिज्य बैंकों तथा उक्त निधियों के दलालों के रूप में अन्य निजी वित्तीय उद्यमों के बीच रूढ़िगत भिन्नता पर आधारित हैं । वाणिज्य बैंक निम्नतर ब्याज दर पर उधार ले सकते हैं और उच्चतर ब्याज दरों पर उधार दे सकते हैं । वे बाजार को कुछ प्राथमिक प्रतिभूतियों से मुक्त करते हैं तथा दूसरों की अप्रत्यक्ष प्रतिभूतियों या वित्तीय आस्तियों को स्थानापन्न करते हैं जिनकी गुणवत्ता उच्चतर मूल्य रखती है । प्राथमिक और अप्रत्यक्ष प्रतिभूतियों पर आय के बीच का अंतर उन विशेष सेवाओं के लिए मध्यवर्तियों की क्षतिपूर्ति है जो वे उपलब्ध कराते हैं ।

6.6 ऋण का सबसे पहला सिद्धांत ऋण का वाणिज्यिक ऋण सिद्धांत है जिसे 'वास्तविक बिल सिद्धांत' भी कहा जाता है। यह सिद्धांत इंग्लैंड में 18वीं सदी में प्रारंभ हुआ। व्यापारियों को दिये जानेवाले बैंक उधार ने पारंपरिक तौर पर वाणिज्यिक बिलों की भुनाई का रूप ले लिया। इस सिद्धांत के अनुसार वाणिज्य बैंकों की अर्जक आस्तियां अनिवार्यतः अल्पकालीन और स्वयं परिसमापनशील ऋण होनी चाहिए जो व्यवसायों को उनकी स्टॉक संबंधी आवश्यकताओं के वित्तपोषण के लिए दिये गये हों। यह दृढ़तापूर्वक विश्वास किया गया कि इस प्रकार के ऋणों का वित्तपोषण करने के द्वारा बैंक अधिकांश अर्थसुलभ आस्तियां अपने अधिकार में रख सकते हैं जिससे बैंक अपनी माँग जमाराशियों की बाध्यताएँ आसानी से पूरी कर सकेंगे। वास्तव में, 'वाणिज्य बैंक' शब्द अपने उद्भव के लिए वाणिज्यिक ऋण सिद्धांत का ऋणी है क्योंकि बैंकिंग वाणिज्य के वित्तपोषण से संबंधित था (रूसाकिस, 1997)। इस सिद्धांत की कुछ सीमाओं के बावजूद व्यवहार में कई बैंक अभी भी अन्य प्रकार के ऋणों के बजाय अल्पावधि के स्वयं परिसमापनशील ऋणों को वरीयता देते हैं ।

6.7 बैंक उधार का एक और प्रमुख सिद्धांत अंतरणीयता सिद्धांत है जो यह समझता है कि बैंक की आस्तियां अंतरणीय हैं अर्थात् आसानी से विपणनयोग्य हैं और अधिकांश आस्तियों की चलनिधि का अनुरक्षण पर्याप्त रूप से किया जाता है । उदाहरण के लिए जो प्रतिभूतियाँ आसानी से नकदी में परिवर्तित की जा सकती हैं उनके पास अधिक मात्रा में तरलता होती है। सारांश में अंतरणीयता सिद्धांत इस विचार पर आधारित है कि 'कितनी जल्दी' आस्तियां नकदी में परिवर्तित की जा सकती हैं । यह सिद्धांत सबसे पहले एच. जी. मौल्टन द्वारा 1918 में प्रस्तुत किया गया था । विश्व भर में जो वाणिज्य बैंक सरकारी (सॉवरिन) बांडों के स्टॉक रखते हैं जो कि वर्तमान बैंकिंग में एक सामान्य प्रथा है, वे जाने-अनजाने इस सिद्धांत का अनुसरण करते हैं ।

6.8 प्रत्याशित आय सिद्धांत (प्रोक्नोव, 1949) के अनुसार कोई भी बैंक अपनी चलनिधि बनाये रख सकता है यदि ऋण की चुकौतियाँ निधियों के उपयोग अथवा प्रस्तावित समर्थक जमानत (कॉलेटरल) के बजाय उधारकर्ता की प्रत्याशित आय के आधार पर नियत की जाती हैं। इस सिद्धांत का मूलभूत तर्क यह है कि बैंकों को केवल समर्थक जमानत की अपेक्षा उधारकर्ता की आय अर्जन क्षमता अथवा नकदी प्रवाह तथा कर्ज चुकौती की आवश्यकताओं की व्याप्ति पर निर्भर रहना चाहिए। कर्ज चुकौती की व्याप्ति सम्मिलित नकदी प्रवाह के अनुमानों के आधार पर निर्धारित की जाती है जो सामान्यतः वित्तपोषित किये जा रहे ऋण की गुणवत्ता का एक विश्वसनीय संकेत प्रदान करते हैं। यह सिद्धांत आधुनिक युग के बैंकिंग के व्यवहार में पहले के दोनों सिद्धांतों की तुलना में अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।

6.9 देयता प्रबंध सिद्धांत के अनुसार किसी बैंक के लिए परंपरागत चलनिधि मानकों का पालन करने की आवश्यकता नहीं है यदि वह चलनिधि की आवश्यकता होने पर बाजार में जाकर निधियों के लिए बोली लगा सकता है। कोई भी बैंक अपनी चलनिधि की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए अतिरिक्त देयताएँ निर्मित कर सकता है, तथा बैंकों के पास अपनी चलनिधि की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनेक मार्ग हैं जैसे अन्य उपायों के साथ-साथ जमा प्रमाणपत्र (सीडी) जारी करना, केंद्रीय बैंक से उधार लेना और पूँजी बाजार से उधार लेना। उक्त देयता प्रबंध सिद्धांत वाणिज्य बैंकिंग के प्रति आधुनिक दृष्टिकोण में एक प्रमुख उपलब्धि है।

6.10 बैंकों के उधार कार्य व्यष्टि स्तर पर ऊपर की चर्चा में उल्लिखित सिद्धांतों में वर्णित कुछ विचारों के आधार पर निर्धारित किये जाते हैं। फिर भी, उधार की मात्रा और उसके लक्ष्य-समूह का निर्धारण उस वित्तीय प्रणाली द्वारा किया जाता है जिसे कोई देश अपनाता है अर्थात् बाजार आधारित वित्तीय प्रणाली अथवा बैंक आधारित वित्तीय प्रणाली। संवृद्धि (ग्रोथ) की प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण पहलू जिसकी व्यापक चर्चा इस विषय पर उपलब्ध साहित्य में की गई है, वित्तीय प्रणाली का वह प्रकार है जो संवृद्धि के लिए सर्वाधिक सहायक है। इस दृष्टिकोण से ध्यान देने पर औद्योगिक वित्त की अधिकांश प्रणालियों को पूर्वोक्त दोनों स्पष्ट प्रणालियों में समूहीकृत किया जा सकता है। एक ओर 'बाजार-आधारित वित्त' है जहाँ बैंकिंग उद्योग की अपेक्षा वित्तीय बाजार एक अधिक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। परिदृश्य (स्पेक्ट्रम) की दूसरी ओर 'बैंक-आधारित वित्त' का मॉडल है, जिसमें बचत की राशियाँ प्रधानतः बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं जैसे वित्तीय मध्यवर्तियों के माध्यम से अपने उत्पादक प्रयोजनों की दिशा में प्रवाहित होती हैं तथा निधियाँ जुटाने के लिए पूँजी बाजार कम महत्वपूर्ण है । ज्यादातर औद्योगिक वित्तपोषण प्रणालियाँ आर्थिक इतिहास की अपनी स्वयं की विशिष्ट परिस्थितियों से अंतर्जात रूप में विकसित हुई हैं - तथा सफल या विफल होने का उनका अपना वृत्तांत है । बाजार-

आधारित प्रणाली अपेक्षाकृत अवैयक्तिक है क्योंकि निधियों के स्रोत वास्तव में म्युचुअल फंडों, पेंशन निधियों अथवा बीमा निधियों के माध्यम से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अत्यंत लघु घरेलू बचतकर्ता हो सकते हैं। बैंक-आधारित प्रणालियाँ अधिक संबंध-आधारित हैं क्योंकि उधारदाता थोड़े-से हैं और बड़े हैं। बैंक-आधारित प्रणालियाँ उन देशों में अधिक मजबूत होने की प्रवृत्ति दर्शाती हैं जहाँ सरकारों ने औद्योगिक विकास में प्रत्यक्ष भूमिका निभाई है जैसे 19वीं शताब्दी में जर्मनी, तथा 20वीं शताब्दी में जापान, पूर्वी एशिया, दक्षिण-पूर्व एशिया, चीन और भारत (मोहन, 2004)।

6.11 जब से भारत ने अपनी संवृद्धि के लिए विकास योजनाओं का विकल्प चुना, तब से बैंकिंग और अन्य वित्तीय संस्थाओं की भूमिका और महत्व ने उत्कर्ष प्राप्त किया । अनुसंधान ने भी भारत में वित्त और संवृद्धि के बीच अंतर-सहबद्धता की पुष्टि की है। भारतीय संवृद्धि की प्रक्रिया अवश्य 'वित्त द्वारा प्रेरित' रही है जिससे वित्तीय क्षेत्र में विस्तार ने पूँजी-संचयन को बढ़ावा देने में समर्थक भूमिका अदा की, जिसने फिर उच्चतर संवृद्धि को जन्म दिया (रेड्डी, 2006)।

*बैंकों का संविभाग व्यवहार*

6.12 वाणिज्य बैंक आस्तियों का एक संविभाग धारित करते हैं तथा देयताओं की विशिष्टताओं और वितरण के होते हुए वे अपनी आस्तियों के संविभाग की संरचना ऐसे तरीके से करने का प्रयास करते हैं जिससे दबावों के अधीन अधिकतम प्रतिफल प्राप्त किया जा सके। बैंकों के पास चार श्रेणियों की आस्तियां होती हैं, यथा- हाथ में नकदी और केंद्रीय बैंक के पास जमाराशियाँ; बैंकिंग प्रणाली में आस्तियां; सरकारी और अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों में निवेश; तथा ऋण और अग्रिम। मात्रात्मक दृष्टि से उधार और निवेश बैंकों की सर्वाधिक महत्वपूर्ण अर्जक आस्तियां हैं। ऋणों और निवेश की मात्रा और संरचना बैंकों के संविभाग व्यवहार द्वारा निर्धारित की जाती है जो फिर सामान्यतः बाजार की ब्याज दरों के वर्तमान और प्रत्याशित स्तरों, ऋण की माँग और नकदी की माँग तथा केंद्रीय बैंकों की कार्रवाइयों द्वारा निर्धारित होती है। वाणिज्य बैंकों के संविभाग व्यवहार का अध्ययन महत्वपूर्ण है क्योंकि वह अर्थव्यवस्था के विशिष्ट क्षेत्रों को बैंक ऋण एवं ऋण की लागत और उपलब्धता में परिमाणों और परिवर्तनों के लिए एक सार्थक व्याख्यात्मक घटक है ।

*बैंक उधार के निर्धारक तत्व*

6.13 बैंक उधार के निर्धारक तत्वों के संबंध में साहित्य विभिन्न धारणाएँ प्रस्तुत करता है । एक धारणा के अनुसार माँग से संबंधित तत्व बैंक उधार को निर्धारित करते हैं जबकि अन्य दृष्टिकोण आपूर्ति संबंधी तत्वों की प्रधानता को स्वीकार करता है। यह सिद्धांत कि बैंक ऋणों के लिए माँग बैंक संविभाग व्यवहार को निर्धारित करती है, कभी-कभी निभाव सिद्धांत के रूप में संदर्भित किया जाता है। इसी प्रकार यह सिद्धांत कि बाजार की शक्तियों के प्रति वाणिज्य बैंकों की प्रतिक्रियाएँ उनके संविभाग व्यवहार को निर्धारित करती हैं, लाभ अधिकतमकरण सिद्धांत के रूप में निर्दिष्ट किया जाता है। निभाव सिद्धांत के अनुसार बैंक उधार बैंकों के संविभाग व्यवहार का प्रमुख निर्धारक तत्व है। 'निभाव' शब्द के उपयोग का अर्थ यह होता है कि इस प्रकार के ऋणों के लिए माँग मुख्य रूप से केंद्रीय बैंक से उधार, अधिक प्रारक्षित निधियों की धारिताओं, तथा ऋणों और निवेशों के बीच अर्जक आस्तियों के विभाजन के संबंध में बैंक व्यवहार को निर्धारित करती है। इस प्रकार ब्याज दरों और आर्थिक गतिविधि के रूप में ऐसे आर्थिक परिवर्ती कारकों (वेरियबल्स) के प्रति ऋणों के लिए माँग की प्रतिक्रिया उपर्युक्त तुलन-पत्र खातों के संबंध में बैंक व्यवहार को भी निर्धारित करेगी (बायड तथा गेर्टलेर, 1993)। निभाव सिद्धांत के अंतर्गत बैंक व्यवहार मुख्य रूप से ऋणों के लिए ग्राहकों की माँग को प्रतिबिंबित करता है। उदाहरण के लिए, बैंकों से ऋणों के लिए माँग (इस प्रकार की अर्जक आस्ति की आपूर्ति) में वृद्धि, जमाराशियों के दबाव के अधीन, निवेशों और अधिक प्रारक्षित निधियों में कमी करने तथा केंद्रीय बैंक से एवं बैंकों के वित्तीय मध्यस्थता का प्रमुख आधार होते हुए बैंकिंग क्षेत्र से उधार में बढ़ोतरी के द्वारा पूरी की जाएगी ।

6.14 लाभ अधिकतमकरण सिद्धांत का अर्थ यह है कि बाजार की शक्तियों के प्रति वाणिज्य बैंकों की प्रतिक्रियाएँ उनके संविभाग व्यवहार को निर्धारित करती हैं। यदि वाणिज्य बैंक द्वारा धारित आस्तियों का वर्तमान वितरण अपेक्षित वितरण नहीं है, तो बैंक कुछ आस्तियों की अपनी धारिताएं बढ़ाने और अन्य आस्तियों की अपनी धारिताएँ कम करने के द्वारा आस्तियों के अपने संविभाग को समायोजित करने का प्रयास करेगा। अपनी आस्तियों के संविभाग को दो अर्जक आस्तियों अर्थात् ऋणों और निवेश के बीच आबंटित करने का वाणिज्य बैंक का निर्णय सामान्यतः वाणिज्य बैंक की माँग और मीयादी जमाराशियों के आधार पर मौजूदा कानूनी प्रारक्षित निधि संबंधी अपेक्षाओं द्वारा निर्धारित किया जाता है। बैंकों की अधिकतर देयताओं की *विधितः* और *वस्तुतः* स्थिति के होते हुए तथा इस स्थिति के होते हुए कि कोई भी एकल बैंक भावी जमाराशियों की उपलब्धताओं, ऋण की माँगों, ब्याज दरों और मौद्रिक प्राधिकारियों द्वारा कार्रवाइयों की भविष्यवाणी निश्चितता के साथ नहीं कर सकता, वाणिज्य बैंक चलनिधि के स्टॉक के रूप में विद्यमान अपने आस्ति संविभाग के एक अंश को उपर्युक्त कारकों में परिवर्तनों का सामना करने के लिए सुरक्षित भंडार के रूप में कार्य करने के लिए रखना चाहते हैं। व्यवहार में, ऋण के उतार-चढ़ाव के संबंध में माँग अथवा पूर्ति की प्रधानता को सिद्ध करना कठिन है क्योंकि ज्यादातर समय उक्त दोनों ही कारक एक निर्णायक भूमिका अदा करते हैं।

6.15 एक दृष्टिकोण के अनुसार फर्मों और घर-परिवारों की माँग बैंक ऋण का अंतर्निहित निर्धारक तत्व है । इस धारणा के अनुसार संस्थाओं द्वारा प्रदत्त ऋण उस विशिष्ट समय पर प्रचलित माँग की स्थितियों के अनुरूप समायोजन कर लेता है। कोटेंरेली और अन्य, (2003) ने यह विचार प्रस्तुत किया कि केंद्रीय और पूर्वी यूरोप में हाल में उधार में जो तेजी आई, वह अपने उद्गम के लिए समष्टि-आर्थिक अविनियमन के बाद उक्त क्षेत्र में आइएस आपूर्ति वक्र में घटित ऊर्ध्वमुखी अंतरण की ऋणी

है। इसी प्रकार 1997-98 के वित्तीय संकटों के बाद पूर्वी एशिया में बैंक उधार में आई गिरावट ऋण बाजार से बैंकों के हट जाने की अपेक्षा बैंक ऋणों के लिए माँग में गिरावट के कारण थी (घोष और घोष, 1999)।

6.16 वास्तविक व्यवसाय-चक्र साहित्य भी यह दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है कि बैंक ऋण के लिए माँग चक्रीय के अत्यधिक अनुकूल (प्रोसाइक्लिकल) है । औद्योगिक और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में उपभोग में तेजी के अनेक वृत्तांतों के विश्लेषण से यह विदित होता है कि इनके उद्गम का श्रेय व्यापार की शर्तों (टर्म्स ऑफ ट्रेड) में सुधार से उत्पन्न उपभोग में तेजी को दिया जाना चाहिए । अर्थव्यवस्था के अंतर्गत निवेश और ऋण की माँग में परिणामी वृद्धि के साथ एक सकारात्मक प्रौद्योगिकीगत आघात भी एक कारक हो सकता है । मोन्टिएल (2000) ने 1960 और 1995 के बीच औद्योगिक और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में उपभोग में आई तेजी के अनेक वृत्तांतों का परीक्षण करने के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि अधिकांश देशों में व्यापार की शर्तों में सुधार ने उपभोग में तेजी को प्रेरित किया जिसके परिणामस्वरूप बाद में बैंकों द्वारा उधार में तीव्र वृद्धि हुई ।

6.17 एक वैकल्पिक दृष्टिकोण यह है कि बैंक उधार में उतार-चढ़ाव आपूर्ति संबंधी गतिविधियों को प्रतिबिंबित करते हैं जैसे उधार देने में बैंक की क्षमता और इच्छा में परिवर्तन। जिस सीमा तक कुछ फर्में पूँजी बाजार तक पहुँचने में अत्यधिक बाह्य प्रीमियम का सामना करती हैं अथवा ऐसे बाजार सुविकसित नहीं हैं, वे बैंक उधार पर अत्यधिक निर्भर हैं । दूसरों ने यह तर्क दिया है कि बैंक ऋण वास्तव में विशेष है क्योंकि वह नवोन्मेष को प्रेरित कर सकता है, खास तौर से उन उद्योगों में जिनकी पहुँच बाह्य वित्तपोषण तक नहीं है ; (राजन और जिंगालेस, 1998)। इस प्रकार ऐसा कोई भी आघात - पूँजीगत अंतर्वाहों में वृद्धि अथवा अधिक सुगम मौद्रिक नीति - जो बैंक की उधार क्षमता में नरमी लाता है, अर्थव्यवस्था में संवर्धित ऋण आपूर्ति को प्रेरित कर सकता है। इसके अलावा, ऐसे आघात उधार देने के लिए बैंक की क्षमता पर एक अप्रत्यक्ष प्रभाव डालने का प्रयास करते हुए आस्तियों की कीमतों और तुलन-पत्रों को प्रभावित कर सकते हैं (मोहन्ती और अन्य, 2006)।

6.18 अपर्याप्त रूप से विनियमित और पर्यवेक्षित बैंकों के समक्ष वित्तीय उदारीकरण तथा अनुचित प्रोत्साहन संरचनाओं से भी उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं में उछाल एवं गिरावट वाले ऋण-चक्रों में वृद्धि होती है (हेर्नांडेज़ और लैंडरेट्श, 2002; बार्थ और अन्य, 2002)। प्रायः ऋण में तेजी से पहले मजबूत पूँजीगत प्रवाहों और आस्तियों की कीमतों में अत्यधिक वृद्धि (ओवरहीटिंग) को देखा गया है। फिर भी, जब आस्तियों की कीमतें गिर जाती हैं, तब बैंकों की अनर्जक आस्तियों में वृद्धि होती है। बैंक जोखिम से विमुख होते हैं जिसके कारण ऋण की कमी उत्पन्न होती है क्योंकि बैंक अपना उधार देना कम कर देते हैं। बैंक उधार तक पहुँच भी बैंक उधार के संकेंद्रण के स्तर, विद्यमान विनियामक व्यवस्था और विदेशी बैंकों की उपस्थिति से निर्धारित की जाती है। बैंक द्वारा धारित पूंजी का स्तर भी नये ऋण प्रस्तावों को प्रोत्साहित करने के लिए बैंक की इच्छा को निर्धारित करता है (बेर्नांक और लाउन, 1991)।

6.19 हाल के कुछ अध्ययनों के अनुसार उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं में ऋणदाताओं के अधिकार और ऋण सूचना केंद्रों का आविर्भाव भी बैंकों द्वारा दिये जानेवाले उधार में सुधार के लिए समर्थक वातावरण बना सकते हैं। मूलभूत तर्क यह है कि बेहतर निजी संपत्ति अधिकारों और ऋण जोखिम अनुवीक्षण (स्क्रीनिंग) व्यवस्थाओं (विशेषतः सुचारु रूप से कार्यरत ऋण केंद्रों अथवा ऋण रजिस्ट्री प्रणालियों) से युक्त देश इस प्रकार की संस्थाओं से रहित देशों की अपेक्षा जीडीपी की तुलना में ऋण का उच्चतर अनुपात प्राप्त कर सकते हैं (मोहन्ती और अन्य, 2006)।

6.20 सारांश के तौर पर बैंकों के उधार व्यवहार को स्पष्ट करने के लिए समय-समय पर विभिन्न सिद्धांत विकसित हुए हैं। वाणिज्य ऋण सिद्धांत के अनुसार, जो ऋण के संबंध में सबसे पहला सिद्धांत है, बैंकों की अर्जक आस्तियां अल्पकालिक और स्वयं परिसमापनशील ऋणों के रूप में होंगी । अंतरणीयता सिद्धांत के अनुसार, मुख्य विचार यह है कि आस्तियों को नकदी के रूप में कितनी जल्दी परिवर्तित किया जा सकता है। प्रत्याशित आय का सिद्धांत यह मानता है कि बैंक अपनी चलनिधि का अनुरक्षण तब कर सकता है यदि ऋण की चुकौतियों का निर्धारण उधारकर्ता की प्रत्याशित आय के आधार पर किया जाता है। देयता प्रबंध सिद्धांत के अनुसार किसी बैंक के लिए पारंपरिक चलनिधि मानकों का पालन करने की आवश्यकता नहीं है यदि वह चलनिधि की आवश्यकता होने की स्थिति में बाजार में जाकर निधियों के लिए बोली लगा सकता है। बैंकों के उधार कार्य उक्त सिद्धांतों द्वारा सुझाये गये रूप में कुछ विचारों के आधार पर व्यष्टि स्तर पर निर्धारित किये जाते हैं। तथापि, उधार की समग्र मात्रा और लक्ष्य-समूह का निर्धारण उस वित्तीय प्रणाली द्वारा किया जाता है जिसे कोई देश अपनाता है अर्थात् बाजार आधारित वित्तीय प्रणाली अथवा बैंक आधारित वित्तीय प्रणाली।

6.21 बैंक उधार दोनों आपूर्ति संबंधी और माँग संबंधी कारकों द्वारा निर्धारित किया जाता है। आपूर्ति की ओर बैंकों का संविभाग व्यवहार उनके उधार को निर्धारित करता है। वाणिज्य बैंक जोखिम-प्रतिलाभ बोधों और देयताओं के वितरण के आधार पर आस्तियों का संविभाग धारित करते हैं ताकि सर्वाधिक प्रतिफल अर्जित किया जा सके। ऋण और निवेश बैंकों के आस्ति संविभाग में दो सबसे अधिक महत्वपूर्ण अर्जक आस्तियां हैं तथा उनकी संरचना का निर्धारण बैंकों के संविभाग व्यवहार द्वारा किया जाता है जो क्रमशः या तो निभाव सिद्धांत पर आधारित है जहाँ उधार बैंकों के संविभाग का मुख्य निर्धारक तत्व है या लाभ अधिकतमकरण सिद्धांत पर । पूँजीगत अंतर्वाहों में वृद्धि अथवा एक अपेक्षाकृत अधिक सुगम मौद्रिक नीति भी अर्थव्यवस्था में ऋण की आपूर्ति में वृद्धि को प्रेरित कर सकती है। उधार देने के लिए बैंकों की इच्छा भी प्रचलित विनियामक व्यवस्था से प्रभावित हो सकती है तथा इस बात का भी प्रभाव उस पर रह सकता है कि क्या वे सभी नये लाभप्रद ऋण प्रस्तावों को सँभालने के लिए पर्याप्त पूँजी धारित करते हैं ।

## III. भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के उधार कार्य नीतिगत गतिविधियाँ

6.22 भारत में 1990 के दशक के प्रारंभ में वित्तीय क्षेत्र के सुधारों के प्रवर्तन से पहले बैंकिंग क्षेत्र के उधार कार्य अत्यधिक विनियमित थे। ये ब्याज दरों की एक नियंत्रित संरचना, प्रारक्षित निधि की अपेक्षाओं के रूप में पूर्वक्रय (प्री-एम्प्शन्स) के उच्च स्तरों, तथा कुछ क्षेत्रों को ऋण आबंटन से संबंधित थे। संवेदनशील पण्यों और क्षेत्रों के संबंध में अलग-अलग ऋण सीमाएं और मार्जिन की अपेक्षाएँ विद्यमान थीं। एक प्रारंभिक सीमा (थ्रेशोल्ड) से अधिक ऋण की मंजूरी के लिए रिज़र्व बैंक से पूर्व-अनुमोदन प्राप्त करने की अपेक्षाएँ थीं। वाणिज्य बैंकों से यह भी अपेक्षित था कि वे मुख्य रूप से अल्पावधि/कार्यशील पूँजीगत निधियों की अपेक्षाएँ पूरी करें। इस स्थिति के होते हुए विभिन्न आस्ति वर्गों के बीच संसाधनों के आबंटन के लिए बैंकों के पास अधिक विकल्प नहीं होता था ।

6.23 वित्तीय क्षेत्र के सुधारों के प्रारंभ होने से एक वित्तीय रूप से दमित व्यवस्था से एक उदारीकृत व्यवस्था की ओर प्रस्थान करने में सुविधा हुई। बैंकों को अपने कारोबारों में नवीनता लाने और उनका विस्तार करने के लिए स्वतंत्रता दी गई। उधार संबंधी ब्याज दरों को मुक्त किया गया ताकि बैंक अपने उत्पादों का मूल्य-निर्धारण उन्मुक्त रूप से कर सकें। ब्याज दरों के अविनियमन ने संसाधन आबंटन की प्रक्रिया को अधिकाधिक कुशलता प्रदान की (बॉक्स VI.1)। बैंकिंग क्षेत्र के सुधारों का उद्देश्य परिचालनगत लचीलेपन, सुधारित वित्तीय सक्षमता और संस्थागत सुदृढ़ीकरण के माध्यम से संसाधनों के आबंटन संबंधी कौशल में सुधार लाने के अंतिम लक्ष्य के साथ एक विविधीकृत, कुशल और प्रतियोगी वित्तीय प्रणाली को बढ़ावा देना था (मोहन, 2005)। विनियमित व्यवस्था के चरणबद्ध रूप में समाप्त कर दिये जाने के साथ ही, बैंकों ने कारोबारों का विस्तार करने के लिए नये-नये मार्ग तलाशना प्रारंभ किया ।

6.24 बैंकों द्वारा संविभागों का विविधीकरण और आस्ति समायोजन अब अधिकतर जोखिम-प्रतिलाभ के विचारों के आधार पर किए जाते हैं । भारत में बैंकों ने उदारीकरण-पूर्व चरण में निभाव सिद्धांत का अनुसरण किया। तथापि, उदारीकरण के बाद के चरण में बैंकों के संविभाग व्यवहार पर लाभ अधिकतमकरण सिद्धांत हावी रहा है ।

### अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के उधार-कार्यों की प्रवृत्तियाँ

6.25 भारत में कई अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की तरह वाणिज्य बैंक उधार की आपूर्ति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्रोत हैं । अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा प्रदान किया गया कुल ऋण 1980 के दशक में 17.2 प्रतिशत और 1990 के दशक में 16.0 प्रतिशत बढ़ा (सारणी 6.1)।

6.26 1990 के दशक के प्रारंभ से लेकर अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा दिये गये ऋण ने तीन सुस्पष्ट चरण देखे। पहले चरण (1990-91 से 1995-96 तक) में बैंक ऋण में वृद्धि ने 8 प्रतिशत और 29 प्रतिशत के बीच घट-बढ़ के साथ वृद्धि दर का अनियत व्यवहार दिखाया। दूसरे चरण (1996-97 से 2001-02 तक) में बैंक ऋण की वृद्धि में तेजी से गिरावट आई और वह 10 और 18 प्रतिशत के दायरे में रही। तीसरे चरण (2002-03 से 2006-07 तक) में ऋण में वृद्धि सामान्यतः अधिक बनी रही (चार्ट VI.1)।

6.27 दूसरे चरण के दौरान ऋण में अवमंदन माँग और आपूर्ति दोनों की ओर कई कारणों से था। आपूर्ति की ओर, 1990 के दशक के प्रारंभ में आय निर्धारण, आस्ति वर्गीकरण और प्रावधानीकरण से संबंधित विवेकपूर्ण मानदंडों को लागू करने से बैंक सतर्क हो गए थे। मानदंडों को लागू करने से अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के पास बड़े पैमाने पर सकल अनर्जक आस्तियों (एनपीए) (मार्च 1997 की समाप्ति पर उनके सकल अग्रिमों का 15.7 प्रतिशत) की मौजूदगी का पता चला। अतः बैंक अपने ऋण संविभाग का विस्तार करने के बारे में सावधानी बरतने लगे। प्रतिगमन विश्लेषण से यह संकेत मिलता है कि मीयादी जमाराशियों और उधार ब्याज दर के साथ-साथ आस्ति की गुणवत्ता ऋण का एक प्रमुख निर्धारक तत्व है।[1] विशेष रूप से अनर्जक आस्तियों के अपेक्षाकृत उच्च स्तर का तीव्र प्रभाव कमजोर बैंकों पर पड़ा। ऋण प्रदान करने की बैंकों की क्षमता भी पूँजी पर्याप्तता अनुपात (मार्च 1996 की समाप्ति पर 8.7 प्रतिशत) में उपलब्ध कम गुंजाइश (हेडरूम) के कारण क्षीण हो गई थी। बैंकों ने सरकारी प्रतिभूतियों पर जोखिम-समायोजित प्रतिफलों को अधिक आकर्षक पाया। अतः एसएलआर के रूप में सांविधिक पूर्वक्रय अधिकार (प्री-एम्प्शन)

[1] मासिक आंकड़ों के आधार पर अप्रैल 1996 और मार्च 2006 के बीच की अवधि के लिए खाद्येतर ऋण (एनएफसी) और जमाराशियों, विशिष्ट रूप से मीयादी जमाराशियों (टीडी) के स्तर, वाणिज्यिक पत्र (सीपी) दर द्वारा प्राप्त रूप में ब्याज दरों, उत्पादन अंतर (ओजी), बैंकों की अनर्जक आस्तियों (एनपीए) और बीएसई सेन्सेक्स द्वारा प्राप्त रूप में आस्ति कीमतों के बीच संबंध पर एक प्रायोगिक अभ्यास किया गया । उत्पादन अंतर (आउटपुट गैप) की गणना एचपी-फिल्टर का उपयोग करते हुए किया गया तथा समीकरण का अनुमान प्रथम अंतर के रूप में किया गया ।

डीएनएफसी = 20922.50 + 0.71डीटीडी - 891.11सीपी + 0.18ओजी - 0.20जीएनपीए + 2.00डीबीएसई
(9.6)* (-3.5)* (3.4)* (-2.2)* (1.1)

समायोजित आर स्क्वेअर =0.49 डी.डब्ल्यू.=2.12

कोष्ठक में आंकड़े टी-मूल्य हैं तथा * 5 प्रतिशत के स्तर पर महत्व को सूचित करता है ।

परिणाम निर्दिष्ट करते हैं कि मीयादी जमाराशियाँ, उधार संबंधी ब्याज दर और अनर्जक आस्तियां अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के ऋण को निर्धारित करनेवाले महत्वपूर्ण कारक थे । खाद्येतर ऋण के उपयोग (ऑफटेक) के स्वरूप को चक्रीय के अनुकूल (प्रो-साइक्लिकल) के तौर पर देखा गया क्योंकि ऋण अग्रिम सकारात्मक तौर पर उत्पादन अंतर से संबंधित थे ।

## बॉक्स VI.1
## बैंकों के उधार कार्य : प्रमुख नीतिगत पहलें

1990 के दशक के प्रारंभ से ही बैंकों को उनके उधार और निवेश कार्यों में लचीलापन प्रदान करने के लिए कई नीतिगत उपाय शुरू किये गये हैं ।

*उधार संबंधी ब्याज दरें*

वाणिज्य बैंकों की उधार संबंधी ब्याज दरें अक्तूबर 1994 में अविनियमित की गई थीं और बैंकों से अपनी मूल उधार दरें (पीएलआर) घोषित करने की अपेक्षा की गई थी। बैंकों की उधार ब्याज दरों में पारदर्शिता की आवश्यकता पूरी करने एवं ऋणों के कीमत-निर्धारण में निहित जटिलता को कम करने के लिए 29 अप्रैल 2003 को रिजर्व बैंक द्वारा आधार (बेंचमार्क) मूल उधार दर (बीपीएलआर) की संकल्पना लागू की गई थी। बैंक अब संबंधित बीपीएलआर निर्धारित करने के लिए स्वतंत्र हैं। बैंकों को इस बात की भी अनुमति दी गई थी कि वे एक पारदर्शी तरीके से बाजार बेंचमार्क से संबद्ध अस्थिर दर वाले ऋण उत्पाद प्रस्तावित करें।

*बैंकों द्वारा मीयादी उधार*

बैंकों द्वारा दिये जानेवाले मीयादी ऋणों के संबंध में विभिन्न प्रतिबंध 1997 तक क्रमशः समाप्त किये गये थे। 1991 में आर्थिक सुधार प्रारंभ करने से पहले प्रचलित दिशानिर्देशों के अनुसार बैंकों से यह आशा की जाती थी कि वे छोटी परियोजनाओं के लिए मीयादी ऋण राज्य स्तरीय संस्थाओं से सहभागिता के साथ प्रदान करें, यद्यपि यह अनिवार्य नहीं था। तथापि, बड़ी परियोजनाओं के लिए उन्हें अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं (एफआइ) के साथ अनिवार्यतः सहभागिता करने की अनुमति इस शर्त के अधीन थी कि बैंकिंग प्रणाली का अंश बैंकों और वित्तीय संस्थाओं से मीयादी ऋण सहायता के 25 प्रतिशत तक सीमित होगा तथा बैंकिंग प्रणाली से कुल मीयादी वित्त 75 करोड़ रुपये से अधिक नहीं हो सकेगा।

*एक्सपोज़र की सीमाएँ*

ऋण के संकेंद्रण से बचने के लिए भारत में व्यक्ति और समूह उधारकर्ताओं को बैंकों के एक्सपोज़र पर विनियामक सीमाएँ निर्धारित की गई थीं । लागू होनेवाली सीमा एकल उधारकर्ता के मामले में पूँजीगत निधियों का 15 प्रतिशत है और उधारकर्ताओं के समूह के मामले में 40 प्रतिशत । किसी समूह के उधारकर्ताओं को ऋण एक्सपोज़र बैंक की पूँजीगत निधियों के 40 प्रतिशत के निर्धारित एक्सपोज़र मानदंड से अतिरिक्त 10 प्रतिशत (अर्थात् 50 प्रतिशत तक) बढ़ सकता है बशर्ते कि अतिरिक्त ऋण एक्सपोज़र बुनियादी संरचना (इन्फ्रास्ट्रक्चर) की परियोजनाओं को ऋण देने के कारण हो। एकल उधारकर्ता को ऋण एक्सपोज़र बैंक की पूँजीगत निधियों के 15 प्रतिशत के एक्सपोज़र मानदंड से अतिरिक्त 5 प्रतिशत (अर्थात् 20 प्रतिशत तक) बढ़ सकता है । इसके अतिरिक्त, बैंक एक उधारकर्ता को असाधारण परिस्थितियों में अपने बोर्ड के अनुमोदन से अपनी पूँजीगत निधियों के अतिरिक्त 5 प्रतिशत तक बढ़ाने पर विचार कर सकते हैं।

*प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र को उधार*

वर्षों से प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को उधार के लिए शर्त अक्षुण्ण रखी गई है यद्यपि कुछ नई मदें शामिल करते हुए उसकी सीमा और परिभाषा को परिष्कृत किया गया है। रिजर्व बैंक द्वारा गठित कार्यदल की सिफारिशों के आधार पर प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र संबंधी मानदंड अप्रैल 2007 में संशोधित किये गये थे । संशोधित मानदंडों के अनुसार समाज/अर्थव्यवस्था के ऐसे क्षेत्र जो जनसंख्या के बड़े खंडों को प्रभावित करते हैं, कमजोर वर्ग तथा ऐसे क्षेत्र जो गहन रोजगार वाले हैं जैसे कृषि एवं व्यष्टि और छोटे उद्यम, संशोधित दिशानिर्देशों में प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के रूप में रखे गये हैं जो 30 अप्रैल 2007 से लागू हैं। कृषि, लघु उद्यम, व्यष्टि ऋण, फुटकर व्यापार, शैक्षणिक ऋण और 20 लाख रुपये तक के आवास ऋण वे स्थूल श्रेणियाँ हैं जिन्हें प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र में शामिल किया गया है।

*अनर्जक आस्तियों (एनपीए) का प्रबंध*

बैंकों की उच्च स्तर की अनर्जक आस्तियों (एनपीए) ने ऋणदात्री संस्थाओं की अपनी निधियों का पुनर्निवेश (रीसाइक्लिंग) करने की क्षमता को सीमित करने के अलावा, उनकी लाभप्रदता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हुए उन्हें कमजोर कर दिया। अतः रिजर्व बैंक और केंद्र सरकार ने बैंकों और वित्तीय संस्थाओं की पिछली बकाया राशियों की वसूली कर उनकी अनर्जक आस्तियों को कम करने के लिए अनेक संस्थागत उपाय किये। ये थे ऋण वसूली न्यायाधिकरण (डीआरटी), लोक अदालतें, आस्ति पुनर्निर्माण कंपनियाँ और कंपनी ऋण पुनर्व्यवस्था (सीडीआर) तंत्र। वाणिज्य बैंकों के क्षेत्रीय और प्रधान कार्यालय के स्तरों पर निपटान परामर्शदात्री समितियाँ (एसएसी) भी गठित की गईं। इसके अतिरिक्त, न्यायालयों के हस्तक्षेप के बिना प्रतिभूति हित लागू करने के लिए वित्तीय आस्ति प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित प्रवर्तन (सरफेसी) अधिनियम, 2002 के अंतर्गत बैंक नोटिस भी जारी कर सकते हैं। साथ ही, बैंकों (प्रतिभूतिकरण कंपनियों/पुनर्गठन कंपनियों को छोड़कर) को अनर्जक आस्तियों की बिक्री/खरीद करने की अनुमति दी गई है। इस प्रकार बैंकों और अन्य ऋण संस्थाओं को अपनी एनपीए संबंधी समस्याओं का समाधान करने के लिए कई विकल्प उपलब्ध कराये गये हैं।

*प्रतिभूतिकरण बाजार का विकास*

प्रतिभूतिकरण बाजार का स्वस्थ विकास सुनिश्चित करने की दृष्टि से रिजर्व बैंक ने 1 फरवरी 2006 को बैंकों, वित्तीय संस्थाओं और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को मानक आस्तियों के प्रतिभूतिकरण पर दिशानिर्देश जारी किये ।

*ऋण सूचना ब्यूरो*

ऋण बाजार के सुचारु रूप से कार्य संचालन के लिए उधारकर्ता द्वारा पहले से प्राप्त ऋण सुविधाओं से संबंधित ब्योरा और उसकी चुकौती का पिछला रिकार्ड उपलब्ध करानेवाली व्यापक ऋण सूचना अत्यंत महत्वपूर्ण है। ऋण के इतिहास का अभाव अपेक्षाकृत कम ऋण-पात्रता रखनेवाले उधारकर्ताओं के लिए ऋण की उपलब्धता को प्रभावित करनेवाला एक महत्वपूर्ण उपादान है। ऋण के इतिहास के उपलब्ध न होने की स्थिति में ऋण का कीमत-निर्धारण मनमाना हो सकता है, ज्ञात ऋण जोखिम अधिक हो सकता है तथा हानिकर चयन और नैतिक संकट संभव है। तदनुसार बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के चूककर्ता उधारकर्ताओं के संबंध में सूचना के प्रकटीकरण के लिए एक योजना 1994 में लागू की गई। ऋण मामलों के संबंध में सूचना के आदान-प्रदान को सुसाध्य बनाने के लिए एक ऋण सूचना ब्यूरो (भारत) लिमिटेड (सिबिल) 2000 में स्थापित किया गया जिसने चूक करनेवाले उधारकर्ताओं से संबंधित सूचना के प्रसार के कार्य रिजर्व बैंक से अपने अधिकार में लिये। ऋण सूचना कंपनी (विनियमन) अधिनियम 2005 में बनाया गया ताकि ऋण सूचना कंपनियों की स्थापना की जा सके ।

*सांविधिक चलनिधि अनुपात संबंधी उपबंध*

वर्तमान में सभी अनुसूचित वाणिज्य बैंकों से अपेक्षित है कि वे बैंककारी विनियमन अधिनियम की धारा 24 के अंतर्गत दूसरे पूर्ववर्ती पखवाड़े के अंतिम शुक्रवार को यथाविद्यमान निवल माँग और मीयादी देयता के 25 प्रतिशत का एकसमान सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) बनाये रखें। सांविधिक चलनिधि अनुपात की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए पात्र आस्तियों को नकदी, स्वर्ण अथवा भार-रहित अनुमोदित प्रतिभूतियों के रूप में धारित किया जा सकता है। बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 24 में संशोधन किये जाने के परिणामस्वरूप एसएलआर के लिए 25 प्रतिशत की न्यूनतम दर हटाई गई है तथा रिजर्व बैंक को एसएलआर हेतु पात्र आस्तियां निर्धारित करने के लिए भी अधिकार दिया गया है। फिर भी, वर्तमान समष्टि-आर्थिक और मौद्रिक स्थितियों को ध्यान में रखते हुए एसएलआर में अब तक कोई परिवर्तन नहीं किया गया है।

**सारणी 6.1 : बैंक ऋण की क्षेत्र-वार वृद्धि दर**

(प्रतिशत)

| अवधि | कृषि | उद्योग | परिवहन परिचालक | व्यावसायिक सेवाएँ | वैयक्तिक ऋण | व्यापार | वित्त | एसएमई | कुल बैंक ऋण |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1980-81 से 1989-90 | 18.1 | 17.4 | 13.6 | 20.7 | 25.3 | 11.8 | 29.2 | 20.7 | 17.2 |
| 1990-91 से 1999-00 | 10.6 | 15.4 | 9.4 | 16.8 | 22.7 | 17.3 | 25.6 | 8.1 | 16.0 |
| 2000-01 से 2006-07 | 26.0 | 19.5 | 18.2 | 35.3 | 35.5 | 16.2 | 28.1 | 10.7 | 22.9 |
| *ज्ञापन :* अप्रैल-मार्च | | | | | | | | | |
| 2000-01 | 13.3 | 10.6 | 7.7 | 31.3 | 27.7 | 25.0 | 21.0 | 3.3 | 17.0 |
| 2001-02 | 23.7 | 14.9 | 7.1 | 44.0 | 25.1 | 12.7 | 42.2 | -3.6 | 21.8 |
| 2002-03 | 18.6 | 14.1 | 0.9 | 22.4 | 38.1 | 3.2 | 34.6 | 14.9 | 15.2 |
| 2003-04 | 26.7 | 8.1 | 18.7 | 29.5 | 57.2 | -2.5 | 16.4 | 0.4 | 16.4 |
| 2004-05 | 29.2 | 33.5 | 22.8 | 25.8 | 42.9 | 27.8 | 24.3 | 22.8 | 30.9 |
| 2005-06 | 38.8 | 26.7 | 72.9 | 48.1 | 38.0 | 15.9 | 29.8 | 17.3 | 31.4 |
| 2006-07 | 33.3 | 31.0 | 9.9 | 48.4 | 22.7 | 36.4 | 30.3 | 23.0 | 28.6 |

**स्रोत :** अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूल सांख्यिकीय विवरणियाँ, विभिन्न अंक, भारतीय रिजर्व बैंक।

को कम करने के बावजूद बैंकों ने निर्धारित अपेक्षाओं से काफी अधिक मात्रा में सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश करना जारी रखा। मार्च 1996 की समाप्ति पर एसएलआर प्रतिभूतियों में बैंकों के निवेश 31.5 प्रतिशत की निर्धारित अपेक्षा की तुलना में उनकी निवल माँग और मीयादी देयताओं (एनडीटीएल) का 36.9 प्रतिशत थे। एसएलआर प्रतिभूतियों में बैंकों के निवेश मार्च 2002 की समाप्ति तक लगभग उसी स्तर (36.7 प्रतिशत) पर जारी रहे, भले ही एसएलआर को उल्लेखनीय रूप में 25 प्रतिशत तक नीचे लाया गया था (भा.रि.बैं., 2007ए)।

6.28 माँग की ओर भी, कंपनी क्षेत्र द्वारा ऋण की माँग में गिरावट के लिए अनेक कारकों का अंशदान रहा। सुधारों के प्रारंभिक चरण में औद्योगिक क्षेत्र ने कुछ क्षेत्रों, विशेषतः सीमेंट और इस्पात में क्षमता में भारी विस्तार को देखा। फिर भी, चूँकि मात्रात्मक प्रतिबंध हटाए गये थे तथा आयात प्रशुल्क कम किये गये थे, अतः कंपनी क्षेत्र ने 1990 के दशक के उत्तरार्ध में तीव्र प्रतिस्पर्धा का सामना किया। इस प्रकार कंपनी क्षेत्र का फोकस क्षमता के विस्तार से पुनर्संरचना की ओर अंतरित हुआ तथा औद्योगिक क्षेत्र उल्लेखनीय रूप में मंद हो गया । औद्योगिक उत्पादन की औसत वार्षिक वृद्धि दर पिछले तीन वर्षों के 9.4 प्रतिशत की तुलना में 1996-97 से 2001-02 तक की अवधि के दौरान 5.2 प्रतिशत थी। इसने कंपनी क्षेत्र द्वारा ऋण के लिए माँग को प्रभावित किया। बढ़ी हुई प्रतियोगिता ने भी कंपनियों को अपने तुलन-पत्रों की पुनर्रचना करने के लिए विवश कर दिया जिससे उन्होंने प्रतिधारित आमदनी पर अपनी निर्भरता को बढ़ाया और अपने उधार को कम कर दिया । यह ऋण-इक्विटी अनुपात से स्पष्ट था जो 1990-91 से 1994-95 तक के 85.5 प्रतिशत के औसत से घटकर 1995-96 से 1999-2000 तक की अवधि में 65.2 प्रतिशत हो गया (भा.रि.बैं.,2007ए)।

**चार्ट VI.1 : खाद्येतर ऋण और बैंक ऋण**

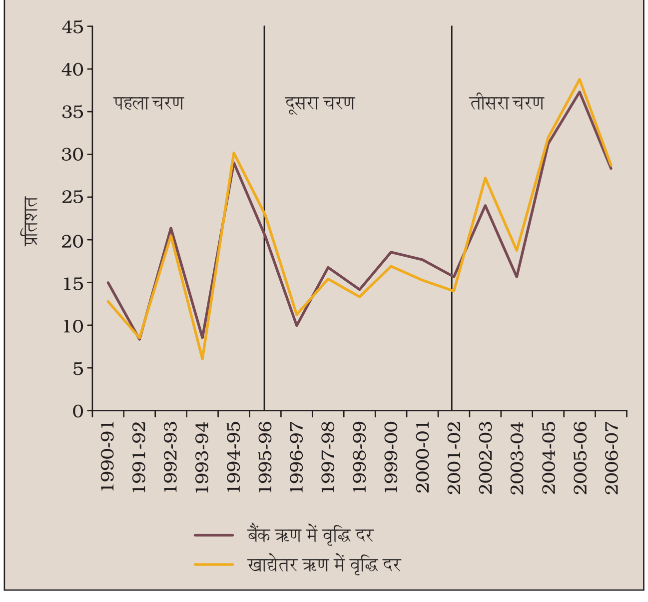


6.29 यद्यपि रिज़र्व बैंक ने इस अवधि (1996-97 से 2001-02 तक) के दौरान आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सीआरआर) और नीतिगत दरों अर्थात् बैंक दर और रिवर्स रिपो दर (तत्कालीन रिपो दर) को कम करने के द्वारा अनुकूल (अकॉमडेटिव) मौद्रिक नीति का अनुसरण किया, तथापि ऋण का उठाव नहीं बढ़ा । एक ओर सांकेतिक ब्याज दरों की अधोमुखी अवरुद्धता और दूसरी ओर गिरती हुई मुद्रास्फीति दर ने वास्तविक ब्याज दरों में उल्लेखनीय वृद्धि को प्रेरित किया। बैंकों की औसत वास्तविक उधार ब्याज दरें 1990-91 से 1995-96 तक की अवधि के 6.5 प्रतिशत की तुलना में 1996-97 से 2001-02 तक की अवधि में बढ़कर 12.5 प्रतिशत हो गईं (मोहन, 2003)। ऐसा प्रतीत होता है कि ऋण के विस्तार में मंदी के लिए इसका भी अंशदान रहा है।

6.30 तीसरे चरण (2002-03 से 2006-07 तक) में ऋण की वृद्धि सामान्यतः उच्च रही । मई 2002 से ऋण की तीव्र वृद्धि का स्वरूप

संरचनात्मक तौर पर ऐतिहासिक प्रवृत्तियों से भिन्न रहा है। विशेष रूप से ऋण का विस्तार 2004-05 से 2006-07 तक लगातार तीन वर्षों के लिए लगभग 30 प्रतिशत की तेज गति से हुआ। उक्त ऋण-विस्तार का स्वरूप भी चक्रीय के अनुकूल (प्रो-साइक्लिकल) था जो इस बात का द्योतक है कि हाल के वर्षों में दर्ज की गई आय की मजबूत वृद्धि का भी ऋण की वृद्धि में उल्लेखनीय रूप में अंशदान रहा (भा.रि.बैं.,2007ए)। आस्ति की गुणवत्ता में सुधार एक प्रमुख अंशदायी कारक था। चूँकि बैंकों की सकल/निवल अनर्जक आस्तियों (एनपीए) में अधिक युक्तियुक्त स्तरों तक कमी आई, अतः ऋण की वृद्धि ने गति पकड़ी (चार्ट VI.2)।

6.31 ऋण की वृद्धि में गति लाने में जिन अन्य प्रमुख तत्वों का अंशदान रहा, वे थे आर्थिक संवृद्धि में बढ़ोतरी, मुद्रास्फीति और मुद्रास्फीति के अनुमानों में संतुलन, वास्तविक ब्याज दरों में गिरावट, घर-परिवारों की बढ़ती हुई आमदनी तथा निजी क्षेत्र के नये बैंकों के प्रवेश से बढ़ी हुई प्रतियोगिता। साथ ही, हाल के वर्षों में बैंक ऋण में तीव्र वृद्धि का श्रेय एक निम्न आधार से हुई वित्तीय वृद्धि, आपूर्ति संबंधी लचीलेपन में संरचनागत अंतरणों, ऋण बाजारों की कार्यकुशलता में बढ़ोतरी तथा कृषि एवं छोटे और मझोले उद्यम जैसे क्षेत्रों को ऋण की उपलब्धता में सुधार लाने के लिए की गई नीतिगत पहलों को दी जा सकती है। इस चरण के दौरान फुटकर ऋण, विशेष रूप से आवास ऋण, ऋण की माँग के प्रमुख स्रोत के रूप में उभरा है जैसा कि खंड VII में स्पष्ट किया गया है। बैंकों ने भी बुनियादी संरचना के क्षेत्र में अपना एक्सपोज़र बढ़ाया जिसका ब्योरा खंड VI में दिया गया है।

**चार्ट VI.2 : सकल और निवल अनर्जक आस्तियां (एनपीए)**

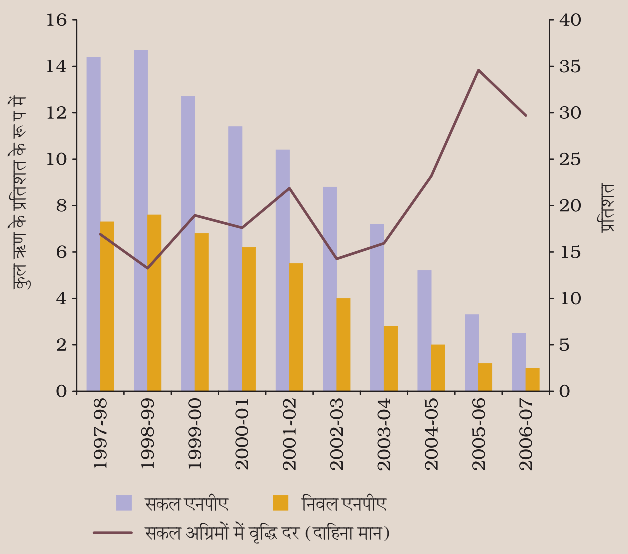


6.32 जीडीपी की तुलना में ऋण के अनुपात में वृद्धि वित्तीय वृद्धि में बढ़ोतरी को निर्दिष्ट करती है। फिर भी, ऋण की तीव्र वृद्धि से कुछ जोखिमें उत्पन्न हो सकती हैं। ऋण के तीव्र विस्तार को देखते हुए रिज़र्व बैंक ने अप्रैल 2006 में निर्दिष्ट किया कि सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों और निजी कंपनी क्षेत्र के बांडों/डिबेंचरों/शेयरों एवं वाणिज्यिक पत्र (सीपी) में निवेशों सहित, खाद्येतर बैंक ऋण की वृद्धि में अनुसंशोधन किया जाएगा ताकि वह 30 प्रतिशत से अधिक वृद्धि से कम होकर 2006-07 के दौरान लगभग 20 प्रतिशत रह जाए। इसे ध्यान में रखते हुए ऋण वृद्धि में संतुलन लाने के लिए मौद्रिक उपाय किये गये। साथ ही, कुछ संवेदनशील क्षेत्रों को ऋण प्रदान करने के लिए बढ़ाई गई जोखिम भार और प्रावधानीकरण की अपेक्षा के रूप में विवेकपूर्ण उपाय भी लागू किये गये। वाणिज्यिक स्थावर संपदा (रियल एस्टेट) से संबंधित एक्सपोज़रों पर जोखिम भार 100 प्रतिशत से बढ़ाकर 125 प्रतिशत तथा इसे आगे और बढ़ाकर 150 प्रतिशत कर दिया गया। उद्यम के लिए पूँजी की निधियों में बैंकों के कुल एक्सपोज़र को उनके पूँजी बाजार एक्सपोज़र के भाग के रूप में शामिल किया गया तथा उनसे यह अपेक्षा की गई कि वे इस प्रकार के एक्सपोज़रों के लिए 150 प्रतिशत का जोखिम भार नियत करें। स्थावर संपदा, बकाया क्रेडिट कार्ड की प्राप्य राशियों, पूँजी बाजार एक्सपोज़र के रूप में अर्हताप्राप्त ऋणों और अग्रिमों तथा आवासीय गृहनिर्माण ऋणों को छोड़कर अन्य वैयक्तिक ऋणों को शामिल करनेवाले क्षेत्रों को मानक अग्रिमों पर सामान्य प्रावधानीकरण की अपेक्षा 31 जनवरी 2007 को बढ़ाकर 2.00 प्रतिशत कर दी गई। आवासीय गृहनिर्माण ऋण के संबंध में प्रावधानीकरण की अपेक्षा 20 लाख रुपये से अधिक के ऋणों के लिए मौजूदा 0.4 प्रतिशत से बढ़ाकर 1.00 प्रतिशत कर दी गई। मौद्रिक उपायों में रिपो दर को सितंबर 2004 के 6.00 प्रतिशत से मार्च 2007 तक चरणों में 150 आधार अंक बढ़ाकर 7.50 प्रतिशत करना शामिल था। इसके अलावा, सीआरआर को मार्च 2004 के 4.50 प्रतिशत से चरणों में 150 आधार अंक बढ़ाकर मार्च 2007 तक 6.00 प्रतिशत किया गया।[2] रिज़र्व बैंक ने प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एनबीएफसी) को मानक परिसंपत्ति श्रेणी में बैंकों के एक्सपोज़र के लिए प्रावधानीकरण की अपेक्षा को पहले के 0.4 प्रतिशत के स्तर से बढ़ाकर 2.00 प्रतिशत कर दिया। इसके अलावा, इस प्रकार की गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एनबीएफसी) को बैंकों के एक्सपोज़र के लिए जोखिम भार पहले के 100 प्रतिशत के स्तर से बढ़ाकर 125 प्रतिशत किया गया। बैंकों को जमाकर्ताओं या अन्य पक्षकारों को एनआर(ई)आरए और एफसीएनआर(बी) जमाराशियों की जमानत पर 20 लाख रुपये से अधिक के नये ऋण प्रदान करने से निषिद्ध किया गया।

6.33 बुनियादी संरचना के वित्तपोषण सहित आवास ऋणों ने कुल ऋण में से मध्यावधि और दीर्घावधि ऋणों के अंश में तीव्र वृद्धि को प्रेरित

[2] रिपो दर को मार्च 2007 के 7.50 प्रतिशत से विभिन्न चरणों में आगे 150 आधार अंक और बढ़ाकर जुलाई 2008 तक 9.00 प्रतिशत किया गया। सीआरआर में मार्च 2007 के 6.00 प्रतिशत से विभिन्न चरणों में 275 आधार अंक की बढ़ोतरी करते हुए जुलाई 2008 में उसे 8.75 प्रतिशत कर दिया गया। सीआरआर में आगे 25 आधार अंक की और वृद्धि करके उसे 30 अगस्त 2008 से 9.00 प्रतिशत किया जाना है।

**चार्ट VI.3 : खातों के प्रकार के अनुसार अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का बकाया ऋण (मार्च के अंत में)**

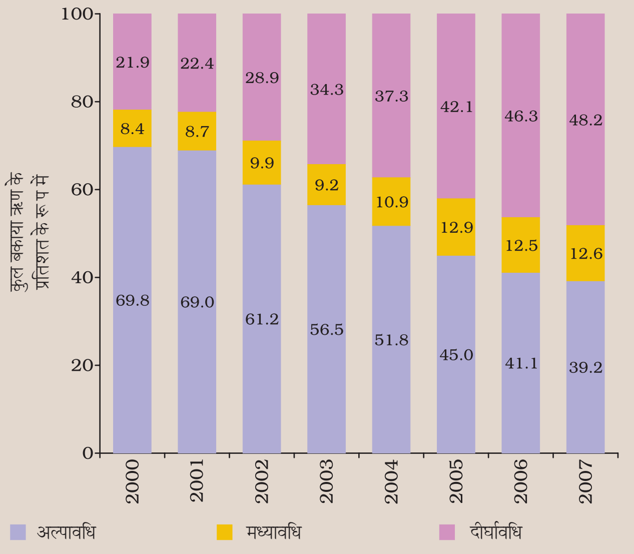


किया (चार्ट VI.3)। अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के बकाया ऋण में दीर्घावधि ऋणों का अंश मार्च 2000 की समाप्ति पर विद्यमान 21.9 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2003 के अंत में 34.3 प्रतिशत तथा मार्च 2007 के अंत में और बढ़कर 48.2 प्रतिशत हो गया। मध्यावधि ऋणों का अंश भी 2000 के 8.4 प्रतिशत की तुलना में बढ़कर 2007 में 12.6 प्रतिशत हो गया।

6.34 बैंक समूह-वार विश्लेषण से विदित होता है कि निजी क्षेत्र के बैंकों की ऋण वृद्धि समग्र ऋण वृद्धि से सुसंगत रूप में अधिक थी। समय-समय पर इसने व्यापक घट-बढ़ भी दिखाई (चार्ट VI.4)।

**चार्ट VI.4 : बैंक ऋण में बैंक समूह-वार वृद्धि दर**

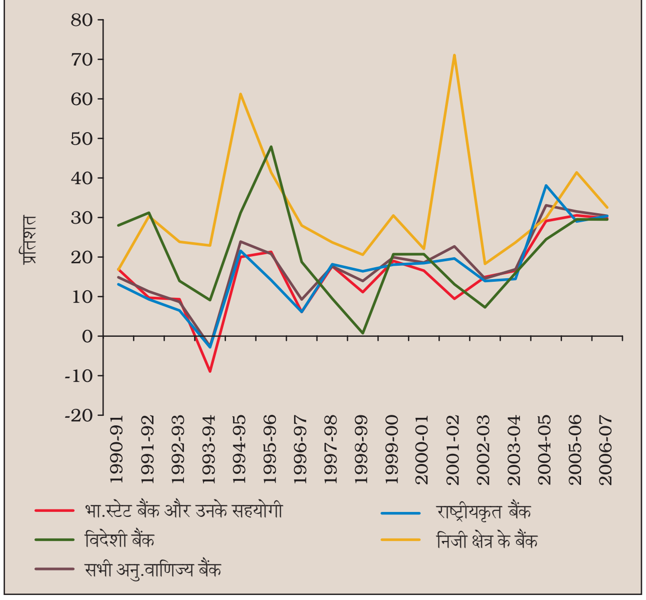


6.35 बैंक ऋण (बकाया) जो मार्च 1991 के अंत में जीडीपी का 20.4 प्रतिशत था, बढ़कर मार्च 2000 के अंत में 22.3 प्रतिशत हुआ तथा मार्च 2007 के अंत में 46.8 प्रतिशत हो गया (चार्ट VI.5)।

6.36 वृद्धि के होने के बावजूद, भारत में जीडीपी की तुलना में ऋण का अनुपात विकसित और कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में कम था (सारणी 6.2)।

*ऋण-जमा अनुपात (सीडीआर)*

6.37 ऋण-जमा अनुपात जुटाई गई जमाराशियों से बैंकों द्वारा निधीकृत ऋण आस्तियों के अनुपात को सूचित करता है। अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के ऋण-जमा अनुपात (सीडीआर) ने 2000-01 से ऊर्ध्वमुखी गतिशीलता की प्रवृत्ति दर्शायी। उक्त अनुपात जो मार्च 1994 के अंत में 48.4 प्रतिशत था, मार्च 2002 के अंत तक बढ़कर 53.2 प्रतिशत हुआ तथा मार्च 2007 के अंत तक और बढ़कर 73.0 प्रतिशत हो गया। हाल के वर्षों में ऋण के उच्चतर अनुपात का वित्तपोषण एक तरह से 1990 के दशक के बीच बैंकों द्वारा निर्मित अधिक एसएलआर प्रतिभूति संविभाग द्वारा संभव हुआ। 1991-2007 की अवधि के दौरान बैंक-समूह वार ऋण-जमा अनुपात के विश्लेषण से यह विदित होता है कि सभी बैंक समूहों के ऋण-जमा अनुपात ने 2001-02 से समग्र ऋण में वृद्धि के अनुरूप ऊर्ध्वमुखी गतिशीलता की प्रवृत्ति दर्शायी। विभिन्न बैंक समूहों का अनुपात मार्च 2007 की समाप्ति पर लगभग 73 प्रतिशत की ओर अभिमुख हुआ, केवल विदेशी बैंक समूह को छोड़कर जिसने अन्य बैंक समूहों की तुलना में 1995-96 से उल्लेखनीय रूप में उच्चतर ऋण-जमा अनुपात बनाये रखा । विदेशी बैंकों के संबंध में उक्त अनुपात मार्च 2007 के अंत में लगभग 84 प्रतिशत था (चार्ट VI.6)।

**चार्ट VI.5 : भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का ऋण-जीडीपी अनुपात**

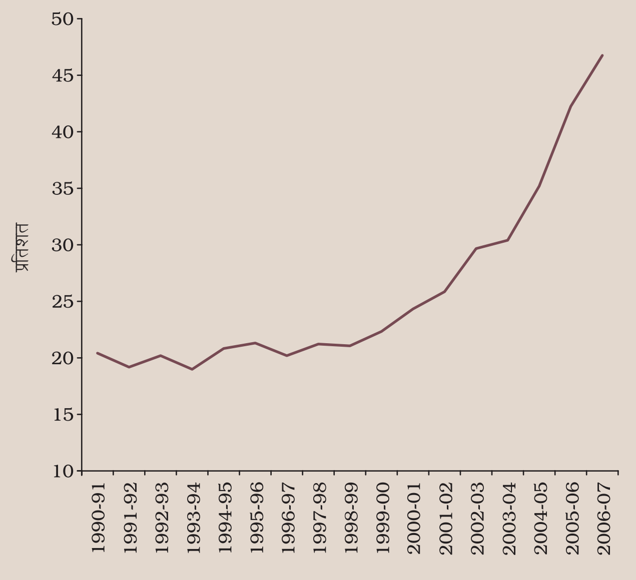

**सारणी 6.2 : बैंकिंग क्षेत्र का ऋण-जीडीपी अनुपात - चयनित देश**

(जीडीपी की तुलना में प्रतिशत)

| देश | 1960 | 1970 | 1980 | 1981-85* | 1986-90* | 1991-95* | 1996-00* | 2001-06* |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| अर्जेन्टीना | 21.7 | 25.2 | 33.0 | 43.0 | 47.1 | 25.1 | 32.2 | 44.1 |
| आस्ट्रेलिया | 41.6 | 39.0 | 39.0 | 39.1 | 56.8 | 73.2 | 84.7 | 103.6 |
| बेल्जियम | 33.0 | 38.4 | 53.6 | 61.6 | 69.0 | 130.8 | 139.1 | 109.9 |
| ब्राजील | 30.8 | 36.8 | 43.0 | 50.7 | 156.5 | 110.2 | 68.1 | 75.0 |
| कनाडा | 28.6 | 47.9 | 84.8 | 92.4 | 97.0 | 115.0 | 119.4 | 205.0 |
| फ्रांस | 58.8 | 79.4 | 112.6 | 110.3 | 94.6 | 101.4 | 102.2 | 107.6 |
| चीन | .. | .. | 53.6 | 60.2 | 81.2 | 92.6 | 109.2 | 138.6 |
| **भारत** | **7.1** | **9.2** | **17.6** | **18.3** | **20.1** | **19.9** | **21.2** | **33.5@** |
| इंडोनेशिया | .. | 10.7 | 8.2 | 13.7 | 31.2 | 48.5 | 59.3 | 48.9 |
| आयरलैंड | 28.9 | 35.2 | 39.3 | 54.5 | 54.8 | 56.5 | 93.9 | 134.9 |
| इटली | .. | 86.3 | 89.0 | 85.7 | 85.6 | 96.8 | 92.1 | 103.7 |
| जापान | 60.3 | 136.3 | 191.3 | 212.8 | 251.6 | 274.7 | 298.6 | 300.1 |
| रूसी महासंघ | .. | .. | .. | .. | .. | 27.7 | 32.1 | 24.6 |
| सिंगापुर | .. | 24.8 | 52.4 | 87.5 | 83.1 | 73.9 | 90.3 | 82.8 |
| दक्षिण अफ्रीका | .. | 88.6 | 76.4 | 88.2 | 94.8 | 118.5 | 144.5 | 157.7 |
| श्रीलंका | 20.1 | 30.2 | 50.0 | 45.2 | 42.4 | 33.4 | 39.0 | 43.7 |
| स्वीडन | 52.7 | 78.8 | 90.6 | 104.0 | 117.9 | 125.8 | 99.0 | 114.4 |
| युनाइटेड किंगडम | 44.7 | 49.5 | 36.6 | 48.4 | 98.8 | 117.2 | 126.4 | 156.5 |
| अमरीका | 105.5 | 118.0 | 120.2 | 126.5 | 150.4 | 163.6 | 195.3 | 216.1 |
| **विश्व** | **75.8** | **88.4** | **95.2** | **108.3** | **132.6** | **142.8** | **155.4** | **163.3** |

.. : उपलब्ध नहीं .    * : औसत.

@ : 2001 से 2007 तक की अवधि के औसत से संबंधित है।

**टिप्पणी :** आंकड़े कैलेंडर वर्ष से संबंधित हैं। भारत के मामले में आंकड़े मार्च के अंत से संबंधित हैं ।

**स्रोत :** 1. विश्व बैंक ऑनलाइन डेटाबेस।

2. भारतीय अर्थव्यवस्था संबंधी सांख्यिकी की पुस्तिका, 2006-07 ।

*ऋण का क्षेत्रीय अभिनियोजन*

6.38 1990 के दशक के दौरान एवं वर्तमान दशक में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों को बैंक उधार पर आर्थिक सुधारों और विकसित हो रही आर्थिक संरचना का गहरा प्रभाव रहा । बैंकों द्वारा कृषि को उधार में वृद्धि 1980 के दशक की तुलना में 1990 के दशक में कम होकर लगभग आधी रह गई। फिर भी, कृषि को ऋण की उपलब्धता को बढ़ाने के लिए रिज़र्व बैंक और सरकार द्वारा किये गये संगठित प्रयासों के परिणामस्वरूप कृषि को ऋण में वृद्धि में 2003-04 से उल्लेखनीय रूप में तेजी आई। औद्योगिक क्षेत्र को बैंक उधार में भी 1990 के दशक में अवमंदन रहा, यद्यपि वह मामूली था। फिर भी उसमें वर्तमान दशक में सुधार आया । घरेलू क्षेत्र को ऋण में वृद्धि ने चालू दशक में तेजी से गति पकड़ी (देखें सारणी 6.1)।

**चार्ट VI.6 : बैंक समूह-वार ऋण-जमा अनुपात (मार्च के अंत में)**

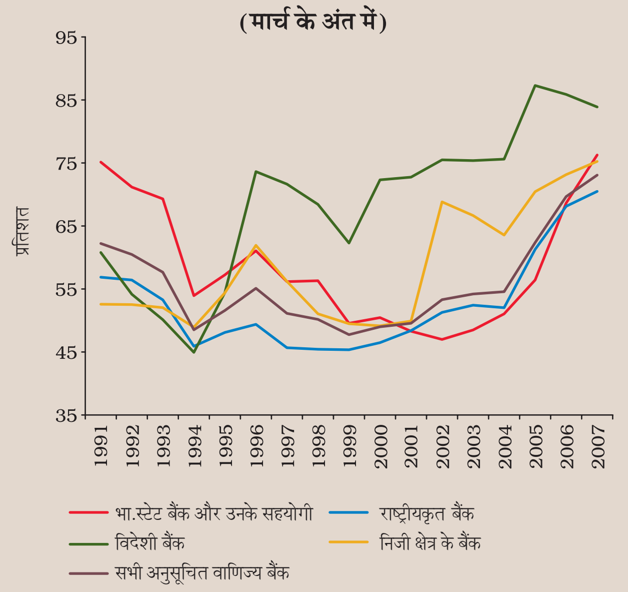


6.39 अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा प्रदान किये गये समग्र ऋण में वैयक्तिक ऋणों का अंश मार्च 1990 के अंत के 6.4 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2007 के अंत में 22.3 प्रतिशत हो गया (चार्ट VI.7 और सारणी 6.3)। परिणामस्वरूप ऋण के अन्य घटकों में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ। बैंक ऋण में कृषि क्षेत्र का अंश 1990 के दशक में घट गया, पर उसमें मार्च 2002 की समाप्ति से सुधार आया। उद्योग एवं छोटे और मझौले उद्यम क्षेत्रों के अंश में भी गिरावट आई। विभिन्न क्षेत्रों को बैंक ऋण का विस्तृत विश्लेषण आगामी खंडों में निर्दिष्ट किया गया है।

**चार्ट VI.7 : बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋण और अग्रिम : क्षेत्र-वार अंश (मार्च के अंत में)**

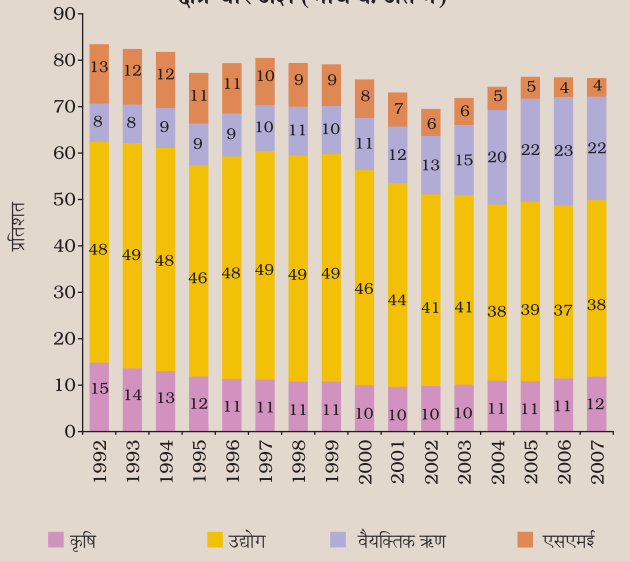


## IV. कृषि को उधार

6.40 किसी भी क्षेत्र की प्रगति के लिए मुख्य प्रेरक पर्याप्त ऋण की उपलब्धता है । कृषि के मामले में यह केवल ऋण की उपलब्धता मात्र नहीं है, बल्कि पर्याप्त संस्थागत ऋण तक पहुँच भी है जो महत्वपूर्ण है, क्योंकि कृषि में संलग्न अधिकांश व्यक्ति सीमांत और छोटे कृषक की श्रेणियों में आते हैं । इसे देखते हुए महाजनों जैसे ऋण के अनौपचारिक स्रोतों को प्रतिस्थापित करने एवं कृषि क्षेत्र को समय पर ऋण को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से कार्यनीति (स्ट्रैटजी) कृषि को ऋण के संस्थागत स्रोतों की भूमिका को मजबूत करने की रही है । इसके अलावा, चूँकि कृषि अभी भी लगातार मानसून पर निर्भर है (जैसा कि कृषि उत्पादन में वर्ष-दर-वर्ष परिवर्तनों से स्पष्ट है), अतः इसे एक अत्यधिक जोखिम वाला क्षेत्र माना जाता है (बॉक्स VI.2)।

6.41 कृषि सहित अत्यधिक जोखिम वाले कार्यकलापों की आवश्यकताएँ पूरी करने के प्रति बैंकों की अनिच्छा देखी गई है । इस प्रकार कृषि क्षेत्र को ऋण निर्दिष्ट करने के लिए कुछ नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता महसूस की गई । कृषि वित्त का नीतिगत ढाँचा कृषि को संसाधनों की सुचारु रूप से उपलब्धता के लिए समर्थक वातावरण निर्मित करने के उद्देश्य से कई वर्षों से विकसित हुआ है । कृषि को पर्याप्त संस्थागत ऋण की आवश्यकता बहुत पहले ही 1936 और 1937 में नीति के दायरे में आ गई थी जब अध्ययनों ने यह दर्शाया था कि कृषि के लिए वित्त पूर्णतः महाजनों पर निर्भर है तथा सहकारी संस्थाओं और अन्य एजेंसियों की भूमिका इसमें नगण्य है । अतः 1935 और 1950 के बीच की अवधि में रिजर्व बैंक का फोकस सहकारी ऋण आंदोलन को पुनः अनुप्राणित करने पर रहा था । राष्ट्रीय नीति में ग्रामीण ऋण के वितरण में वाणिज्य बैंकों की संवर्धित भूमिका जुलाई 1966 में रिजर्व बैंक द्वारा गठित अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण समीक्षा समिति (अध्यक्ष : श्री बी. वेंकटप्पय्या) की सिफारिशों के परिणामस्वरूप प्रारंभ हुई । 1969 में (और 1980 में) प्रमुख वाणिज्य बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद एवं 1969 में प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र अग्रिमों की संकल्पना जिसे 1972 में औपचारिक

**सारणी 6.3 : अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के बकाया ऋण का वितरण (कुल ऋण में अंश)**

(प्रतिशत)

| गतिविधि | मार्च के अंत में | | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1980 | 1990 | 1995 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 | 2007 |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 | 12 |
| **i. कृषि** | 15.7 | 15.9 | 11.8 | 9.9 | 9.6 | 9.8 | 10.0 | 10.9 | 10.8 | 11.4 | 11.8 |
| 1. प्रत्यक्ष वित्त | 12.2 | 13.8 | 10.2 | 8.4 | 8.1 | 7.2 | 7.8 | 8.0 | 8.2 | 8.2 | 8.8 |
| 2. परोक्ष वित्त | 3.5 | 2.1 | 1.7 | 1.5 | 1.5 | 2.5 | 2.2 | 3.0 | 2.6 | 3.2 | 3.0 |
| **ii. उद्योग** | 48.8 | 48.7 | 45.6 | 46.5 | 43.9 | 41.4 | 41.0 | 38.0 | 38.8 | 37.4 | 38.1 |
| **iii. परिवहन परिचालक** | 4.6 | 3.2 | 1.9 | 1.8 | 1.6 | 1.4 | 1.2 | 1.3 | 1.2 | 1.6 | 1.3 |
| **iv. व्यावसायिक और अन्य सेवाएँ** | 2.2 | 3.0 | 2.3 | 3.2 | 3.6 | 4.2 | 4.5 | 5.0 | 4.8 | 5.4 | 6.2 |
| **v. वैयक्तिक ऋण** | 3.4 | 6.4 | 9.0 | 11.2 | 12.2 | 12.6 | 15.1 | 20.3 | 22.2 | 23.3 | 22.3 |
| 1. टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं की खरीद के लिए ऋण | 0.1 | 0.4 | 0.3 | 0.6 | 0.6 | 0.5 | 0.4 | 0.5 | 0.6 | 0.4 | 0.5 |
| 2. आवास के लिए ऋण | 1.1 | 2.4 | 2.8 | 4.0 | 4.7 | 5.0 | 6.5 | 9.7 | 11.0 | 12.0 | 11.8 |
| **vi. व्यापार** | 19.7 | 13.9 | 17.1 | 15.6 | 16.6 | 15.4 | 13.8 | 11.5 | 11.2 | 9.9 | 10.5 |
| **vii. वित्त** | 1.0 | 2.1 | 3.8 | 4.8 | 4.9 | 5.7 | 6.7 | 6.7 | 6.4 | 6.3 | 6.4 |
| **viii. अन्य सभी** | 8.1 | 6.8 | 8.5 | 7.1 | 7.5 | 9.5 | 7.7 | 6.2 | 4.6 | 4.7 | 3.3 |
| **कुल बैंक ऋण** | 100 | 100 | 100 | 100 | 100 | 100 | 100 | 100 | 100 | 100 | 100 |
| *ज्ञापन :* | | | | | | | | | | | |
| **छोटे और मझौले उद्यम** | **12.0** | **12.4** | **10.8** | **8.2** | **7.2** | **5.7** | **5.7** | **4.9** | **4.6** | **4.1** | **3.9** |

**स्रोत:** भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूल सांख्यिकीय विवरणियाँ, विभिन्न अंक, भारतीय रिजर्व बैंक ।

## बॉक्स VI.2
## कृषि को उधार से संबद्ध जोखिमें

किसानों और ग्रामीण उद्यमियों द्वारा सम्मुखीकृत जोखिम का स्वरूप और उसकी सघनता कृषि की प्रणाली के प्रकार, कृषि उत्पादन, मौसम की स्थितियों एवं प्रचलित आर्थिक और कृषि संबंधी नीतियों के अनुसार भिन्न-भिन्न हैं। कृषि को उधार देते समय वित्तीय संस्थाएँ जिन जोखिमों का सामना करती हैं वे मुख्य रूप से अत्यधिक ब्याज और चलनिधि जोखिम, पुनर्वित्त जोखिम और ऋण जोखिम से संबंधित हैं।

ऋण जोखिम दीर्घावधि कृषि उधार में बढ़ जाती है क्योंकि दीर्घकालिक समय सीमाओं में कीमतों, लागतों, बाजार की माँग और तकनीकी प्रगति का अनुमान अधिक कठिन हो जाता है तथा प्रणालीगत जोखिम की संभावना बढ़ जाती है। तदनुसार, ऋण के मूल्यांकन में निहित त्रुटि का मार्जिन ऋण की परिपक्वता अवधि के प्रति आनुपातिक तौर पर बढ़ जाता है। अधिक राशियों और अधिक अवधियों की स्थिति के परिणामस्वरूप भी नैतिक संकट की जोखिमें बढ़ जाती हैं।

मीयादी ऋणों के संबंध में कोई भी चूक ऋणदाता के संविभाग की गुणवत्ता पर अधिकाधिक प्रभाव डालती है। इसके कारण ऋण हानि प्रावधानीकरण के लिए लागतें अपेक्षाकृत अधिक हो सकती हैं तथा पूँजी बाजार में बैंक का रेटिंग प्रभावित हो सकता है जिससे निधियों की लागतें बढ़ सकती हैं । संविभाग जोखिमों को नियंत्रित करने के लिए ऋणदाता अपने संविभाग में कृषि मीयादी ऋणों के अंश को सीमित करने के लिए बाध्य हो जाते हैं । इस जोखिम की तीव्रता अधिक हो जाती है यदि प्रणालीगत जोखिमों का प्रबंध करने के लिए साधन, जैसे फसल बीमा, सिंचाई या कीमत जोखिम प्रबंध उपकरण उपलब्ध नहीं हैं।

एक परंपरागत बैंक प्रथा जो ऋणदाता को उधारकर्ता की संभावित चूक से सुरक्षा देती है, स्थावर संपदा (रियल एस्टेट) या बंधक जैसी ऋण की समर्थक जमानत (कॉलेटरल) की अपेक्षा है। ऋण की समर्थक जमानत का उपयोग बैंक संभावित ग्राहकों का अनुवीक्षण (स्क्रीनिंग) करने (ग्राहक संबंधी जानकारी के अभाव में प्रतिस्थापन के रूप में) तथा ऋण की चूक होने की स्थिति में ऋण की संविदाओं को प्रवर्तित और प्रतिबंधित करने के लिए करते हैं। बैंकों के लिए पारंपरिक समर्थक ऋणाधार (कॉलेटरल) का वरीयताप्राप्त रूप स्थावर संपत्ति (रियल प्रॉपर्टी) पर बंधक है जिसके लिए भूमि संबंधी स्पष्ट स्वत्वाधिकार और बंधक पंजीकरण की आवश्यकता होती है। चूँकि सामान्यतः स्पष्ट और सुरक्षित भू-स्वत्वाधिकार का अभाव रहता है, अतः बैंक कृषि को उधार देने में अतिरिक्त जोखिम का सामना करते हैं।

किसी भी निश्चित शाखा में संविभागों की विपुलता के 2-3 कृषि उत्पादों तक सीमित रहते हुए, कृषि को दिए गए उधार में उप-क्षेत्रों के बहुत संकीर्ण दायरे पर अत्यधिक निर्भर होने की प्रवृत्ति दिखती है। थोड़े-से कृषि उत्पादों के बीच संविभाग जितना अधिक संकेंद्रित होता है, बाजार जोखिम और उद्योग में परिवर्तनों के प्रति समूचा संविभाग उतना ही अधिक संवेदनशील हो जाता है। इसके अलावा, चूँकि ग्रामीण जमाकर्ताओं के आर्थिक कार्यकलाप एक जैसे अथवा परस्पर संबद्ध होते हैं, अतः 'उत्पादन जोखिमें' किसी निश्चित समुदाय में सहपरिवर्ती होने की प्रवृत्ति दर्शाती हैं तथा जमा स्वीकार करनेवाली संस्था को अंतरित हो सकती हैं। उदाहरण के लिए अन्य बातों के बीच भारी मात्रा में फसलों के नष्ट होने और पशुओं के बीमार होने की स्थिति में ऋणदात्री संस्था एक ही समय ऋण की अधिकतर माँग के साथ ही, बड़े पैमाने पर जमाराशियों के आहरणों की अत्यधिक जोखिमों से घिर जाती है।

विकासशील देशों में कृषि क्षेत्र द्वारा अनुभव की जा रही एक सर्वाधिक सामान्य जोखिम, शहरी उद्यमों की वस्तुओं और सेवाओं, जिनमें स्थानीय बाजार रखने की प्रवृत्ति होती है, जो कमजोर होने के बावजूद कम अस्थिर होते हैं, की अपेक्षा, शेष विश्व में समष्टि-आर्थिक कारकों के प्रति अंतिम उत्पादों की कीमतों की अतिसंवेदनशीलता है ।

कृषि को उधार में उच्चतर जोखिमों की उपस्थिति संकटकारक होती है। यह समझा जाता है कि अधिकांश विकासशील देशों में अब तक फसल अथवा ऋण बीमा के साथ प्रयोग बहुत संतोषजनक नहीं रहे हैं। वास्तव में कई किसान यह महसूस करते हैं कि जहाँ अनिवार्य बीमा का सहारा लिया गया है, वहाँ इससे संस्थागत स्रोतों से उधार का बोझ बढ़ ही गया है तथा एक बार लेनदेन लागतों को जोड़ने पर समग्र लागतों में उल्लेखनीय रूप से वृद्धि होती है। संभवतः यह स्वीकार करने की आवश्यकता है कि यदि बीमा के कुछ तत्व प्रारंभ से सक्षम नहीं हैं, तो ऋण प्रदान करना अधिक जोखिमपूर्ण हो जाता है और इसलिए निरुद्ध हो जाता है (रेड्डी, 2005)।

**संदर्भ :**

कोफ़ी एलिजाबेथ, 1998 । ''एग्रिकल्चरल फाइनैंस : गेटिंग द पॉलिसीज़ राइट''। *एग्रिकल्चरल फाइनैंस रीविज़िटेड नं. 2,* एफएक्यू, जून ।

गिचलर, थॉर्सटन, 1999 । ''सोर्सेस ऑफ फंड्स फॉर एग्रिकल्चरल लेंडिंग''। *एग्रिकल्चरल फाइनैंस रीविज़िटेड नं. 4,* एफएक्यू, दिसंबर ।

रेड्डी, वाइ.वी., 2005 । ''बैंकिंग सेक्टर रिफार्म्स इन इंडिया : एन ओवरव्यू''। भा.रि.बैं. बुलेटिन, जून ।

रूप दिया गया, को लागू करने के साथ वाणिज्य बैंकों की भूमिका और व्यापक हो गई (बॉक्स VI.3)। ग्रामीण बैंकों संबंधी कार्यदल (अध्यक्ष : श्री एम. नरसिंहम) की सिफारिशों के अनुसार ''बहु एजेंसी दृष्टिकोण'' में तीसरा संस्थागत स्तर (टीयर) गठित करते हुए क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (आरआरबी) स्थापित किये गये । कृषि और ग्रामीण विकास के लिए संस्थागत वित्त की व्यवस्थाओं की समीक्षा के लिए गठित समिति की सिफारिशों के अनुसरण में एक विशेषीकृत संस्था 'राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक' (नाबार्ड) 1982 में स्थापित की गई । इसने कृषि पुनर्वित्त और विकास निगम (एआरडीसी) के समूचे कार्य तथा राज्य सहकारी संस्थाओं और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों (आरआरबी) से संबंधित रिज़र्व बैंक के पुनर्वित्त कार्यों को अपने अधिकार में लिया ।

6.42 1960 के दशक के मध्य से किसानों के परिवारों को संस्थागत वित्त ने काफी प्रगति की है । राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ) द्वारा कराये गये अखित भारतीय ऋण और निवेश सर्वेक्षणों (एआइडीआइएस) के आधार पर संस्थागत स्रोतों से किसान परिवारों के उधार का अंश 1951 के 7.3 प्रतिशत से बढ़कर 1991 में 66.3 प्रतिशत हो गया, परंतु 2002 में घटकर 61.1 प्रतिशत रह गया। 1991 और 2002 के बीच किसान परिवारों द्वारा विशेष रूप से गैर-संस्थागत स्रोतों से प्राप्त उधारों में तेजी से वृद्धि हुई । घरेलू ऋणग्रस्तता में वृद्धि काफी हद तक उपभोग और इसी प्रकार के अन्य व्ययों के कारण थी। अतः यह संभव है कि गैर-संस्थागत स्रोतों के प्रति किसान परिवारों की ऋणग्रस्तता में वृद्धि अंशतः उपभोग व्ययों के कारण भी थी, जिसका

## बॉक्स VI.3
## अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के लिए प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के लक्ष्य : संशोधित मार्गदर्शी निदेश

भारत में बैंकों के लिए प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के निर्धारणों का आरंभ 1967-68 की ऋण नीति में देखा जा सकता है जिसमें इस बात पर जोर दिया गया था कि वाणिज्य बैंकों को प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्रों अर्थात् कृषि, निर्यातों और लघु उद्योगों के वित्तपोषण में अपनी संबद्धता को अत्यावश्यकता के तौर पर बढ़ाना चाहिए। तथापि, प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र की संकल्पना को मई 1971 में रिजर्व बैंक द्वारा गठित प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्रों को अग्रिमों से संबंधित सांख्यिकी पर अनौपचारिक अध्ययन दल द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर 1972 में औपचारिक रूप दिया गया था। इस रिपोर्ट के आधार पर रिजर्व बैंक ने प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र अग्रिमों की सूचना देने के लिए एक संशोधित विवरणी निर्धारित की तथा फरवरी 1972 में इस संबंध में कुछ मार्गदर्शी निदेश जारी किये गये थे जिनके द्वारा प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र की विभिन्न श्रेणियों के अंतर्गत शामिल की जानेवाली मदों के दायरे को निर्दिष्ट किया गया था। इनमें से अधिकांश मामलों में मार्गदर्शी निदेशों ने केवल शामिल किये जानेवाले अग्रिमों का सामान्य ब्योरा निर्दिष्ट किया तथा केवल लघु उद्योग एवं सड़क और जल परिवहन परिचालकों के मामले को छोड़कर जहाँ मूल निवेशों के मूल्य पर उच्चतम सीमाएँ निर्धारित की गई थीं, कोई उच्चतम सीमा निर्धारित नहीं की गई थी। तब से लेकर प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के विस्तार और सीमा में अनेक परिवर्तन किये गये हैं तथा इस क्षेत्र के दायरे में कई नये क्षेत्र और सेक्टर लाये गये हैं।

प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के अप्रैल 2007 में संशोधित मानदंडों के अनुसार प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र की परिभाषा को युक्तसंगत बनाते हुए उसमें केवल जनसंख्या के बड़े वर्गों को प्रभावित करनेवाले क्षेत्रों, कमजोर वर्गों तथा कृषि जैसे रोजगार-प्रधान क्षेत्रों और अत्यंत लघु व लघु उद्यमों को शामिल किया गया। संशोधित मानदंडों के अंतर्गत स्थूल क्षेत्रों में कृषि (प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों), लघु उद्यम (प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष), आवश्यक पण्यों में फुटकर व्यापार और उपभोक्ता सहकारी भंडार, व्यष्टि ऋण, शैक्षणिक ऋण एवं आवास ऋण शामिल हैं।

संशोधित मानदंडों के अंतर्गत, देशी और विदेशी बैंकों के लिए क्रमशः 40 प्रतिशत और 32 प्रतिशत पर निर्धारित समग्र प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र उधार के लक्ष्यों एवं अन्य उप-लक्ष्यों को अपरिवर्तित रखा गया है। फिर भी अब इनकी गणना निवल बैंक ऋण (एनबीसी) के स्थान पर समायोजित निवल बैंक ऋण (एएनबीसी) अथवा तुलन-पत्र में शामिल न किये गये एक्सपोज़रों की राशि के समकक्ष ऋण, जो भी अधिक हो, के प्रतिशत के रूप में की जाती है। एएनबीसी में एनबीसी और एचटीएम श्रेणी में धारित गैर-एसएलआर बांडों में बैंकों द्वारा किये गये निवेश शामिल हैं।

कृषक व्यक्तिगत रूप से प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र अग्रिमों के अंतर्गत इस बात पर विचार किये बिना कि उन्होंने उत्पाद निर्मित करने के लिए फसल ऋण लिये अथवा नहीं, 12 महीने से अनधिक अवधि के लिए कृषि उत्पाद (गोदाम रसीदों सहित) की गिरवी/दृष्टिबंधक के आधार पर 10 लाख रुपये तक के अग्रिम प्राप्त कर सकते हैं। देशी बैंकों के लिए निर्धारित 40 प्रतिशत के समग्र लक्ष्य में से, समायोजित निवल बैंक ऋण अथवा तुलन-पत्र में शामिल न किये गये निवेश की राशि के समकक्ष ऋण, जो भी अधिक हो, के 18 प्रतिशत का उप-लक्ष्य कृषि क्षेत्र को उधार देने के लिए नियत किया गया है। कृषि को उधार देने के 18 प्रतिशत के लक्ष्य में बैंकों द्वारा किसानों को अप्रत्यक्ष रूप से अर्थात् अन्य एजेंसियों के माध्यम से या अप्रत्यक्ष वित्त द्वारा प्रदान किया गया वित्त शामिल है। तथापि, कृषि को दिया जानेवाला अप्रत्यक्ष ऋण, समायोजित निवल बैंक ऋण के 4.5 प्रतिशत अथवा कृषि को समग्र ऋण के 25 प्रतिशत (जो 18 प्रतिशत के उप-लक्ष्य के अंतर्गत बैंकों द्वारा किये गये निष्पादन की गणना के लिए प्रयुक्त है) से अधिक नहीं होना चाहिए। प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के मानदंडों के अंतर्गत कृषि क्षेत्र को प्रत्यक्ष संस्थागत ऋण में कृषि के प्रयोजनों के लिए भूमि की खरीद हेतु लघु और सीमांत कृषकों के लिए मंजूर किये गये ऋण शामिल हैं। गैर-संस्थागत ऋणदाताओं के प्रति ऋणग्रस्त व्यथित किसान उचित संपार्श्विक और सामूहिक जमानत पर ऋण प्राप्त कर सकते हैं।

संशोधित मार्गदर्शी निदेशों के अंतर्गत विशेष रूप से कृषि को दिये जानेवाले छोटे ऋणों के प्रति 'क्राउडिंग आउट' के प्रभाव को दूर करने के उद्देश्य से कीमती (बिग टिकट) ऋणों/अग्रिमों की राशि के केवल एक-तिहाई भाग को ही प्रत्यक्ष कृषि के रूप में वर्गीकृत करने की अनुमति है। जहाँ बैंक अधिकांशतः गैर-निधीकृत व्यवसाय (डेरिवेटिव्ज़) में अपनी संलग्नता के कारण 'शून्य' अथवा नगण्य निवल बैंक ऋण (एनबीसी) की सूचना देते हैं, वहाँ उन स्थितियों का समाधान करने के लिए प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र उधार के लक्ष्यों को उनके तुलन-पत्र में शामिल न किये गये व्यवसाय के समकक्ष ऋण के साथ संबद्ध किया गया है।

यदि देशी अनुसूचित वाणिज्य बैंक प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र उधार के लक्ष्य (एएनबीसी का 40 प्रतिशत अथवा तुलन-पत्र में शामिल न किये गये एक्सपोजर की राशि का समकक्ष ऋण, इनमें से जो भी अधिक हो) और/या कृषि लक्ष्य (एएनबीसी का 18 प्रतिशत अथवा तुलन-पत्र में शामिल न किये गये एक्सपोजर की समकक्ष राशि का ऋण, इनमें से जो भी अधिक हो) प्राप्त नहीं कर पाते हैं तो उन्हें रिजर्व बैंक द्वारा विनिर्दिष्ट रूप में नाबार्ड के पास स्थापित ग्रामीण मूलभूत सुविधा विकास निधि (आरआइडीएफ) या अन्य वित्तीय संस्थाओं के पास स्थित निधियों में अंशदान के लिए राशियों का आबंटन किया जाएगा। निर्धारित लक्ष्य/उप-लक्ष्यों के अनुसार प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र उधार में कमी रखनेवाले विदेशी बैंकों से अपेक्षित है कि वे लघु उद्यम विकास निधि (एसईडीएफ) में अंशदान करें, जिसके संबंध में आवश्यक संभार-तंत्र (लॉजिस्टिक्स) भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (सिडबी) द्वारा व्यवस्थित है।

वित्तपोषण संस्थागत स्रोतों से आसानी से नहीं किया जा सकता था। इसके परिणामस्वरूप, किसान परिवारों की ऋणग्रस्तता में गैर-संस्थागत स्रोतों का अंश 1991 और 2002 के बीच बढ़ गया, भले ही संस्थागत स्रोतों के प्रति किसान परिवारों की ऋणग्रस्तता में 1981-91 की तुलना में 1991-2002 के बीच उच्चतर दर से वृद्धि हुई (सारणी 6.4)।

6.43 बैंकों द्वारा प्रस्तुत[3] कृषि ऋण के प्रत्यक्ष[4] संस्थागत स्रोतों की सांख्यिकीय विवरणियों के अनुसार सहकारी संस्थाओं का अंश जो 1980-81 में बकाया प्रत्यक्ष संस्थागत कृषि ऋण के 57 प्रतिशत का सबसे अधिक अंश था, घटकर 2001-02 में 32 प्रतिशत रह गया। दूसरी ओर, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का अंश (क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों सहित) जो

[3] भारतीय अर्थव्यवस्था पर सांख्यिकी की पुस्तिका, 2006-07 में दिये गये आंकड़ों के आधार पर।

[4] सहकारी संस्थाओं, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों (क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों सहित) जैसी संस्थाओं और राज्य सरकारों द्वारा हिताधिकारी/उधारकर्ता को सीधे दिया गया कृषि ऋण।

### सारणी 6.4 : विभिन्न स्रोतों से किसान परिवारों का उधार#

(प्रतिशत)

| श्रेणी | 1951 | 1961 | 1971 | 1981 | 1991 | 2002 |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| **1. गैर-संस्थागत** | **92.7** | **81.3** | **68.3** | **36.8** | **30.6** *(10.0)* | **38.9** *(19.4)* |
| *जिसमें से:* साहूकार | 69.7 | 49.2 | 36.1 | 16.1 | 17.5 *(13.0)* | 26.8 *(21.6)* |
| **2. संस्थागत** | **7.3** | **18.7** | **31.7** | **63.2** | **66.3** *(12.6)* | **61.1** *(15.6)* |
| *जिसमें से:* वाणिज्य बैंक | 0.9 | 0.6 | 2.4 | 28.8 | 35.2 *(14.4)* | 26.3 *(13.2)* |
| **3. अविनिर्दिष्ट** | – | – | – | – | 3.1 | – |
| **कुल (1+2+3)** | **100** | **100** | **100** | **100** | **100** *(12.1)* | **100** *(16.5)* |

# : उधार से आशय बकाया नकदी ऋणों से है ।

**टिप्पणी :** कोष्ठक में आंकड़े चक्रवृद्धि वार्षिक संवृद्धि दरों (सीएजीआर) को सूचित करते हैं। स्तंभ 6 1981-1991 की अवधि के लिए सीएजीआर को सूचित करता है, जबकि स्तंभ 7 1991-2002 की अवधि के लिए सीएजीआर को सूचित करता है ।

**स्रोत :** 1. मोहन (2006)।
2. अखिल भारतीय ऋण और निवेश सर्वेक्षण, विभिन्न अंक, राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ)।

1980-81 में कृषि को दिये गये बकाया प्रत्यक्ष संस्थागत ऋण का 43 प्रतिशत था, बढ़कर 2001-02 में 68 प्रतिशत हो गया और इस प्रकार वह प्रत्यक्ष संस्थागत कृषि ऋण के सबसे बड़े स्रोत के रूप में उभरा। फिर भी, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा प्रदत्त कुल बकाया ऋण में कृषि ऋण के अंश ने 1990 के दशक में और वर्तमान दशक के प्रारंभ में तीव्र गिरावट दर्शायी। सकल खाद्येतर ऋण में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा कृषि क्षेत्र को दिये गये प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के अग्रिमों का अंश मार्च 1987 के अंत में विद्यमान 18.4 प्रतिशत के चरम स्तर से गिरकर मार्च 1991 के अंत में 14.8 प्रतिशत रहा तथा आगे और घटकर मार्च 2001 के अंत में 12.1 प्रतिशत हो गया (चार्ट VI.8)।

6.44 हाल के वर्षों में कृषि को दिये जानेवाले ऋण में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों (एससीबी) के अंश में उल्लेखनीय सुधार रहा है । अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के कुल बकाया ऋण में कृषि ऋण का अंश मार्च 2002 के अंत में विद्यमान 9.8 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2007 के अंत में 11.8 प्रतिशत हो गया, यद्यपि वह 1990 के दशक के प्रारंभ में प्राप्त स्तर से अभी भी नीचे था। इस उन्नति का श्रेय कृषि को ऋण की उपलब्धता में सुधार लाने के लिए किये गये नीतिगत उपायों को दिया जा सकता है। इनमें अन्य बातों के साथ-साथ, देश के कई भागों में कृषि संबंधी संकट के

### चार्ट VI.8 : कृषि को प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र अग्रिम (खाद्येतर सकल बैंक ऋण के प्रतिशत के रू प में) (मार्च के अंत में)

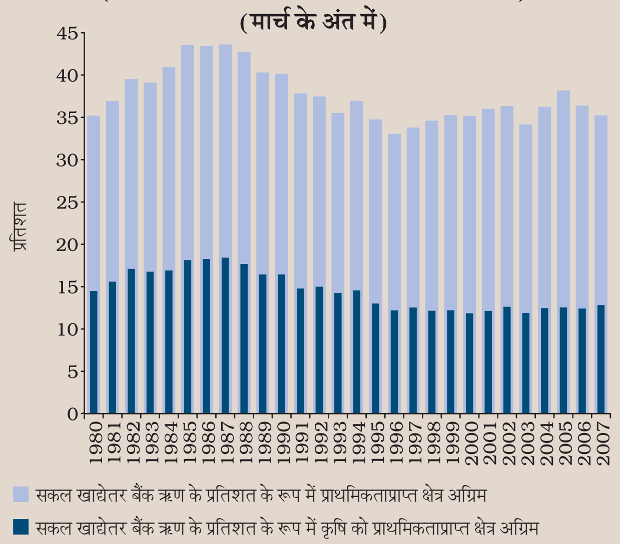


चलते अल्पावधि ऋणों की मध्यावधि और दीर्घावधि ऋणों के रूप में पुनर्व्यवस्था, सरकारी और निजी क्षेत्र के बैंकों के लिए विशेष कृषि ऋण योजनाओं के अंतर्गत अपेक्षाकृत अधिक लक्ष्य, तथा 2004-05 से प्रारंभ करके तीन वर्ष के अंदर ऋण की उपलब्धता को दुगुनी करने के लिए बैंकों को निदेश शामिल थे (भा.रि.बैं.,2007ए)। 18 जून 2004 को भारत सरकार द्वारा घोषित कृषि के लिए व्यापक ऋण नीति के भाग के रूप में प्रति वर्ष 30 प्रतिशत की दर से ऋण को बढ़ाते हुए तीन वर्ष के अंदर कृषि ऋण को दुगुना करना अपेक्षित था । वित्तीय समावेशन के अनुसार 100 किसान/शाखा की दर से वित्त प्रदान करते हुए तथा वर्ष में 50 लाख नये किसानों को वित्त उपलब्ध कराते हुए वाणिज्य बैंकों द्वारा किसानों की व्याप्ति (कवरेज) को बढ़ाने की ओर नीतिगत प्रयास किये गये । इसके परिणामस्वरूप, कृषि को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के ऋण में वृद्धि जो 1990 के दशक में 10.6 प्रतिशत के निम्न स्तर पर थी, त्वरित गति से बढ़कर 2000-01 से 2006-07 तक की अवधि के दौरान 26.0 प्रतिशत हो गई। कृषि को बैंक ऋण की वृद्धि में 2003-04 से उल्लेखनीय रूप से गति आई तथा वह 2001-02 के 23.7 प्रतिशत से बढ़कर 2004-05 के दौरान 29.2 प्रतिशत हुई तथा आगे और बढ़कर 2005-06 के दौरान 38.8 प्रतिशत हो गई, परंतु 2006-07 में इसमें 33.3 प्रतिशत तक नरमी आई (देखें सारणी 6.1)। इस बढ़ोतरी की एक मुख्य विशेषता कृषि क्षेत्र को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा प्रदत्त कुल ऋण में अप्रत्यक्ष वित्त के अंश में तीव्र वृद्धि[5] थी जो मार्च 2001 के अंत में स्थित 16.1 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2007 के अंत में 25.5 प्रतिशत हो गई थी

[5] अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा कृषि के लिए प्रदत्त अप्रत्यक्ष वित्त में भंडारण और बाजार प्रांगणों (मार्केट यार्डों) के लिए तथा अन्य कृषि से संबद्ध कार्यकलापों को स्थापित करने के लिए प्रदान किये गये ऋण शामिल हैं । प्रत्यक्ष वित्त जो उधारकर्ता को सीधे जारी किया जाता है, के असमान अप्रत्यक्ष वित्त के मामले में यह सामान्यतः किसी अन्य एजेंसी/माध्यम/स्तर द्वारा दिया जाता है ।

**चार्ट VI.9 : कृषि क्षेत्र को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का बकाया ऋण (मार्च के अंत में)**

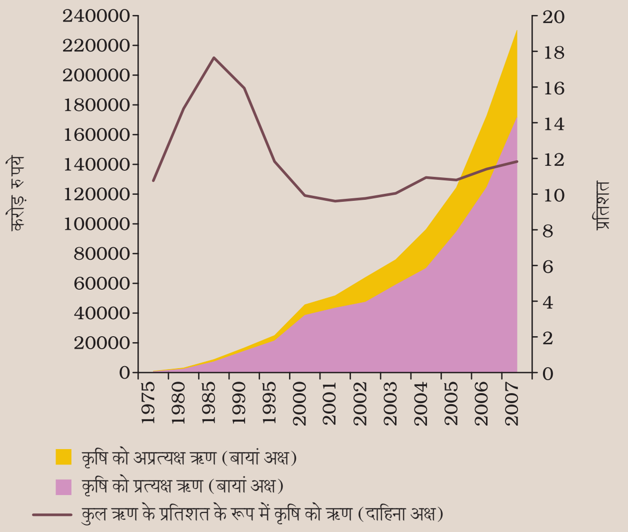


(चार्ट VI.9)। अप्रत्यक्ष वित्त में वृद्धि संभवतः कृषि क्षेत्र को अप्रत्यक्ष बैंक वित्त के अंतर्गत सम्मिलित की गई मदों के दायरे को बढ़ाने के कारण थी ।

6.45 कृषि को ऋण की उपलब्धता में सुधार लाने के लिए की गई विभिन्न नीतिगत पहलों के परिणामस्वरूप कृषि जीडीपी के प्रतिशत के रूप में संस्थागत स्रोतों से कृषि को ऋण (ऋण गहनता) 2000-01 में विद्यमान 11.3 प्रतिशत से तेजी से बढ़कर 2006-07 में 31 प्रतिशत हो गया। कुल जीडीपी में संस्थागत स्रोतों से कृषि ऋण का अंश (चालू बाजार कीमतों पर उपादान लागत पर) भी 2000-01 में विद्यमान 2.8 प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 में 5.4 प्रतिशत हो गया (चार्ट VI.10)। कृषि क्षेत्र की ऋण गहनता में इस वृद्धि का एक उल्लेखनीय पहलू यह था कि यह ऐसे समय घटित हो रहा था जब जीडीपी के अनुपात के रूप में कृषि द्वारा संवर्धित मूल्य में गिरावट आ रही थी (मोहन, 2006)।

**चार्ट VI.10 : कृषि जीडीपी और कुल जीडीपी के प्रतिशत के रूप में कृषि को संस्थागत ऋण (संवितरण)**

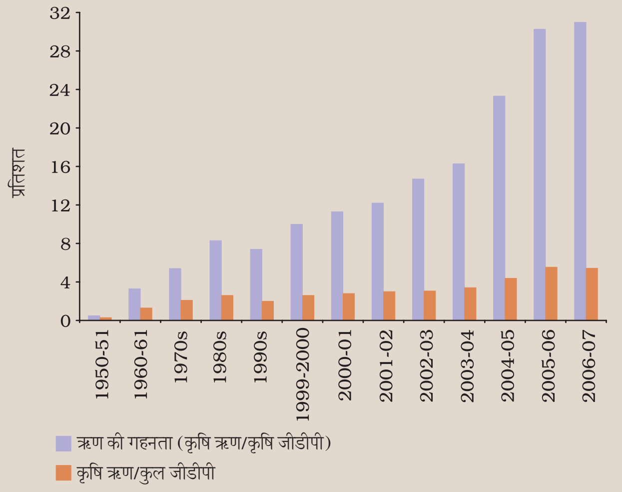


**टिप्पणी** : कृषि को संस्थागत ऋण में सहकारी बैंकों और अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा प्रदत्त कृषि ऋण सम्मिलित है ।

*अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा कृषि ऋण : बैंक समूह-वार*

6.46 अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के ऋण का बैंक समूह-वार वितरण यह संकेत करता है कि मार्च 2007 की समाप्ति पर कृषि को दिये गये बकाया बैंक ऋण के आधे से अधिक (52.9 प्रतिशत) का अंशदान राष्ट्रीयकृत बैंक समूह का था और लगभग एक चौथाई अंश (24.4 प्रतिशत) स्टेट बैंक समूह का था । इस प्रकार अनुसूचित वाणिज्य बैंकों में से सरकारी क्षेत्र के बैंकों ने मिलकर कृषि क्षेत्र को प्रदत्त ऋण के तीन-चौथाई हिस्से से अधिक (77.3 प्रतिशत) का अंशदान किया । वर्षों से जबकि भारतीय स्टेट बैंक और उसके सहयोगी बैंकों के अंश में गिरावट रही, वहीं दूसरी ओर राष्ट्रीयकृत बैंकों और निजी क्षेत्र के बैंकों के अंश में वृद्धि हुई । क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, जिनकी स्थापना प्राथमिक रूप से विशेष रूप से कृषि के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में समय पर संस्थागत ऋण उपलब्ध कराने के लिए की गई थी, का अंश मार्च 2000 के अंत में विद्यमान लगभग 13.8 प्रतिशत से घटकर मार्च 2007 की समाप्ति पर 11.4 प्रतिशत हो गया । निजी क्षेत्र के बैंकों के अंश में 2000-2007 की अवधि के दौरान मामूली वृद्धि देखी गई (चार्ट VI.11)।

*अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा कृषि ऋण : ऋणों के प्रकार के अनुसार*

6.47 खाते के प्रकार के आधार पर अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा कृषि को दिये गये ऋण की प्रवृत्ति यह प्रकट करती है कि कृषि को प्रदत्त कुल बकाया ऋण में दीर्घावधि ऋणों के अंश[6] में 1990 के दशक के प्रारंभ से तेजी से गिरावट हुई। यह समग्र बैंक ऋण में विद्यमान ढाँचे के विपरीत है जिसमें कुल बैंक ऋण में दीर्घावधि ऋणों के अंश में तेजी से वृद्धि हुई। कृषि को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा प्रदत्त बकाया ऋण में कृषि को दीर्घावधि ऋणों के अंश में मार्च 1991 के अंत में विद्यमान 76.3 प्रतिशत से तेजी से गिरावट हुई और वह मार्च 1996 के अंत में 59.3 प्रतिशत और मार्च 2005 के अंत में 40.7 प्रतिशत तथा आगे और घटकर मार्च 2006 की समाप्ति पर 34.7 प्रतिशत रहा तथा इसके पश्चात् इसमें सुधार हुआ और मार्च 2007 के अंत में बढ़कर यह 39.8 प्रतिशत रहा ।

6 भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूलभूत सांख्यिकीय विवरणियों में मीयादी ऋणों को मध्यावधि और दीर्घावधि ऋणों के रूप में विभाजित किया गया है । जबकि मध्यावधि ऋण 1 वर्ष से अधिक और 3 वर्ष तक की अवधि के लिए स्वीकृत ऋण हैं, दीर्घावधि ऋण 3 वर्ष से अधिक अवधि के लिए स्वीकृत ऋण होते हैं ।

**चार्ट VI.11 : कृषि को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के बकाया ऋण का बैंक समूह-वार वर्गीकरण (मार्च के अंत में)**

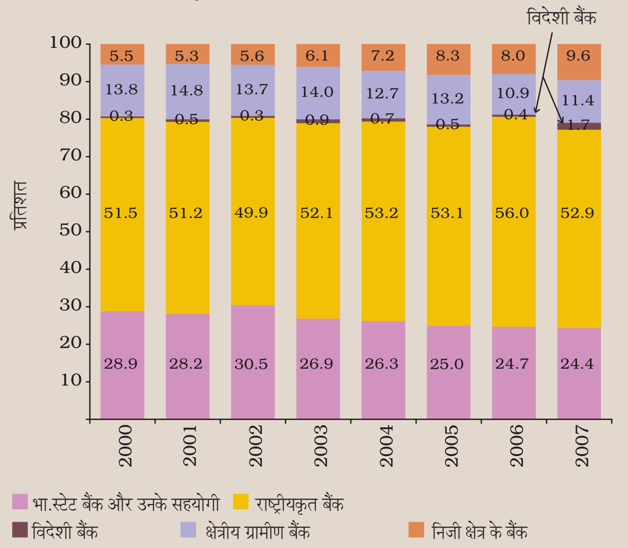


6.48 दूसरी ओर अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा दिये गये कुल कृषि ऋण में अल्पावधि ऋण का अंश[7] मार्च 2002 के अंत से उल्लेखनीय रूप में बढ़ा जबकि मध्यावधि और दीर्घावधि ऋणों के अंश में गिरावट हुई (चार्ट VI.12)। अल्पावधि ऋण के अंश में 2002 से वृद्धि का कारण बहुत हद तक अल्पावधि अप्रत्यक्ष वित्त में तीव्र वृद्धि है। कृषि को अल्पावधि अप्रत्यक्ष वित्त मार्च 1991 की समाप्ति पर विद्यमान 165 करोड़ रुपये से बढ़कर मार्च 2006 की समाप्ति पर 23,829 करोड़ रुपये हो गया तथा इसके बाद यह घटकर मार्च 2007 के अंत में 18,714 करोड़ रुपये रहा (चार्ट VI.13)। इसके परिणामस्वरूप, कृषि को प्रदत्त अल्पावधि ऋण में कृषि को दिये गये अल्पावधि अप्रत्यक्ष ऋण का अंश मार्च 2001 की समाप्ति पर विद्यमान 16.2 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2006 की समाप्ति पर 58.4 प्रतिशत रहा तथा इसके बाद यह घटकर मार्च 2007 के अंत में 45.9 प्रतिशत हो गया। मीयादी ऋणों के अंश में गिरावट का कारण आपूर्ति और माँग दोनों से संबंधित दबाव हो सकते हैं। माँग की ओर, निवेश हेतु ऋण के लिए माँग संभवतः जोतों (लैंड होल्डिंग्ज़) के औसत आकार में कमी के कारण प्रतिकूल रूप में प्रभावित हुई है। 1991-92 और 2003 के बीच परिचालनगत जोतों की संख्या लगभग 93 मिलियन से बढ़कर 101 मिलियन हो गई, जबकि परिचालित क्षेत्र लगभग 125 मिलियन हेक्टेअर से घटकर लगभग 108 मिलियन हेक्टेअर रह गया जिसके परिणामस्वरूप औसत परिचालित क्षेत्र 1991-92 के 1.34 हेक्टेअर से घटकर 2003 में 1.06 हेक्टेअर हो गया[8]। आपूर्ति की ओर, बैंकों की रुचि भी अल्पावधि ऋण में अधिक हो सकती है क्योंकि इसमें ऋण जोखिम कम है, इसके लिए कम पर्यवेक्षण और कम निगरानी लागतों की आवश्यकता होती है तथा इससे एक बेहतर आस्ति-देयता प्रबंध सुसाध्य होता है (गोलेइट, 2007)।

**चार्ट VI.12 : कृषि को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के बकाया ऋण का वर्गीकरण (मार्च के अंत में)**

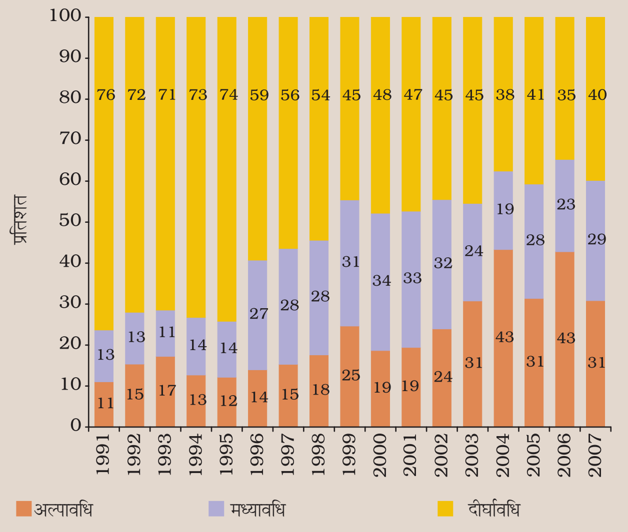


**चार्ट VI.13 : खातों के प्रकार द्वारा कृषि को अप्रत्यक्ष वित्त (मार्च के अंत में)**

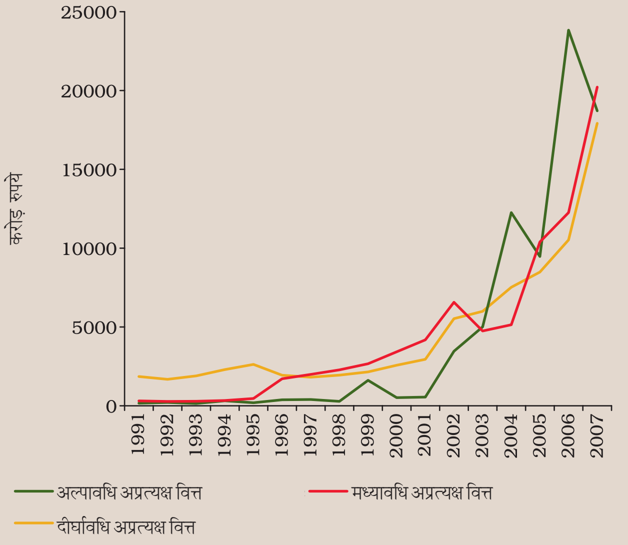


7 अल्पावधि ऋण में नकदी ऋण, ओवरड्राफ्ट, माँग ऋण, पैकिंग ऋण, खरीदे और भुनाये गये निर्यात व्यापार बिल, जमानत पर प्रदत्त निर्यात व्यापार बिल, निर्यात नकदी प्रोत्साहनों और शुल्क वापसी दावों की जमानत पर अग्रिम, खरीदे और भुनाये गये देशी बिल (व्यापार और अन्य), आयात बिलों की जमानत पर अग्रिम तथा खरीदे गये विदेशी मुद्रा चेक/यात्री चेक/माँग ड्राफ्ट/तार अंतरण/डाक अंतरण शामिल हैं।

8 कृषि ऋणग्रस्तता पर विशेषज्ञ दल की रिपोर्ट, 2007।

*अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा कृषि ऋण : जोत के आकार के अनुसार*

6.49 कृषि को प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र की स्थिति प्रदान करने में अंतर्निहित उद्देश्य यह सुनिश्चित करना था कि ऋण विशिष्ट रूप से छोटे और सीमांत कृषकों को उपलब्ध हो जिनसे कृषि की श्रम-शक्ति का बड़ा भाग बनता है। जोत के आकार के अनुसार कृषि को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा संवितरित ऋणों से संबंधित आंकड़ों से यह विदित हुआ कि कुल कृषि ऋणों में सीमांत कृषकों (2.5 एकड़ तक जोत रखनेवाले) का अंश 1980-81 और 2004-05 के बीच मोटे तौर पर एक ही स्तर पर रहा। छोटे किसानों (2.5 एकड़ से अधिक और 5 एकड़ तक जोत रखनेवाले) का अंश 1980-81 के 16.6 प्रतिशत से बढ़कर 1985-86 तक 26.2 प्रतिशत हो गया तथा उसके बाद मोटे तौर पर उसी स्तर पर बना रहा जबकि बड़े किसानों (5 एकड़ से अधिक जोत रखनेवाले) का अंश 1980-81 के 58.5 प्रतिशत से घटकर 1985-86 में 46.2 प्रतिशत हो गया और उसके बाद मोटे तौर पर उसी स्तर पर बना रहा (चार्ट VI.14)। इस प्रकार उस स्थिति में भी जब छोटे और सीमांत किसानों को ऋण की समग्र राशि 1990 और 2005 के बीच दस गुनी से भी अधिक बढ़ गई, कुल कृषि ऋणों में उनके अंश ने कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं दर्शाया।

6.50 ऋण खातों की संख्या के तौर पर कृषि ऋण खातों की कुल संख्या में सीमांत कृषकों का अंश 1980-81 के 51.7 प्रतिशत से घटकर 1995-96 में 37.4 प्रतिशत हुआ, परंतु उसके बाद 2004-05 में 44 प्रतिशत तक उसमें सुधार आया (चार्ट VI.15)।

*अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा कृषि ऋण : कृषि को छोटे ऋण*

6.51 कृषि के लिए छोटे ऋण (मार्च 1999 से लागू छोटे ऋणों के लिए संशोधित अधिकतम सीमा के अनुसार 2 लाख रुपये तक के उधार खातों को शामिल करते हुए), जो मार्च 2000 की समाप्ति पर कृषि उधार खातों की कुल संख्या का लगभग 99 प्रतिशत थे, मामूली तौर पर घटकर मार्च 2007 के अंत में 95.1 प्रतिशत हुए। छोटे ऋणों की श्रेणी का आगे और विश्लेषण करने पर यह विदित होता है कि कृषि उधार खातों की कुल संख्या में 25,000 रुपये से कम की ऋण सीमा वाले छोटे उधार खातों का अंश मार्च 2000 की समाप्ति पर विद्यमान 85.4 प्रतिशत से घटकर मार्च 2007 की समाप्ति पर 55.9 प्रतिशत रह गया। फिर भी, कृषि खातों की कुल संख्या में 25,000 रुपये से अधिक और 2 लाख रुपये तक की ऋण सीमा से युक्त छोटे उधार खातों का अंश मार्च 2000 के अंत में विद्यमान 13.6 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2007 के अंत में 39.1 प्रतिशत हो गया (चार्ट VI.16)।

6.52 कुल कृषि ऋण में 2 लाख रुपये तक के छोटे उधार खातों के संबंध में बकाया कृषि ऋण का अंश मार्च 1992 के अंत में स्थित 80.9 प्रतिशत से घटकर मार्च 2000 के अंत में 67.6 प्रतिशत हुआ तथा इसमें आगे और कमी आई और यह मार्च 2007 के अंत में 42.6 प्रतिशत रह गया। यह प्राथमिक तौर पर 25,000 रुपये और उससे कम राशि के ऋण सीमा आकार वर्ग के छोटे उधार खातों के संबंध में बकाया कृषि ऋण के अंश में उल्लेखनीय गिरावट के कारण था (चार्ट VI.17)।

**चार्ट VI.14 : जोत के आकार के अनुसार किसानों को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का प्रत्यक्ष वित्त (संवितरण) : राशि**

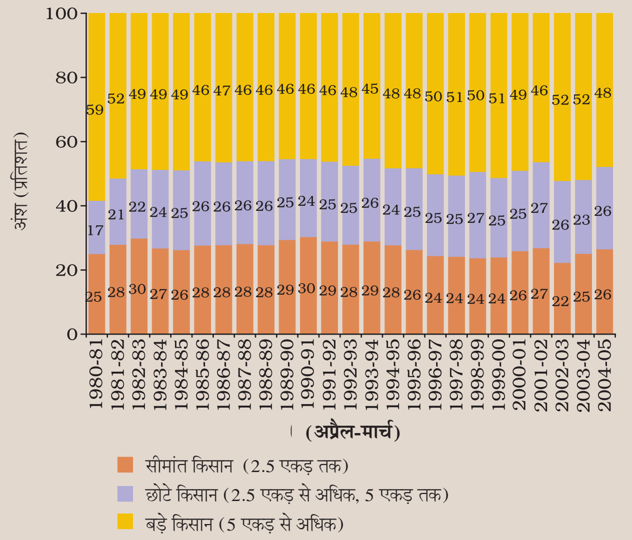


**चार्ट VI.15 : जोत के आकार के अनुसार किसानों को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का प्रत्यक्ष वित्त (संवितरण) : खातों की संख्या**

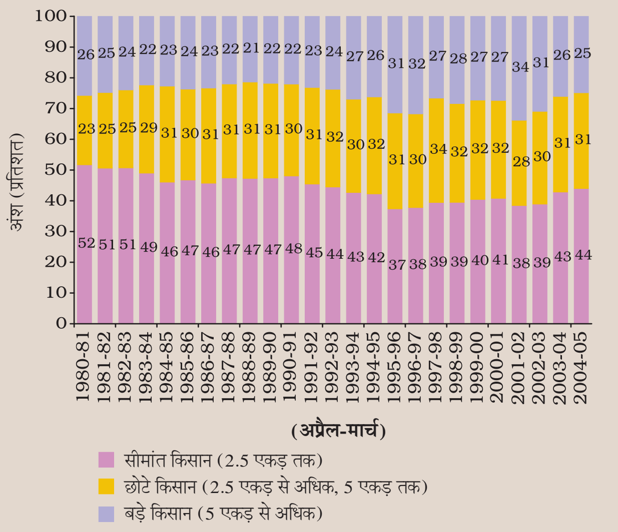

**चार्ट VI.16 : छोटे ऋण : कृषि उधार खातों की संख्या (मार्च के अंत में)**

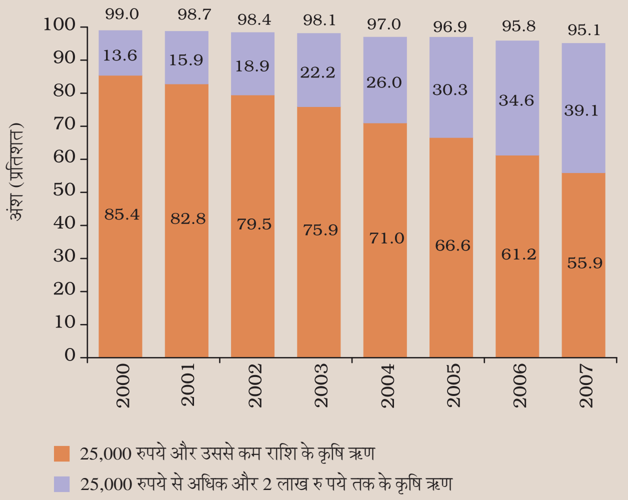


**स्रोत :** मूल सांख्यिकीय विवरणियाँ, विभिन्न अंक ।

**चार्ट VI.17 : छोटे ऋण : बकाया कृषि ऋण (मार्च के अंत में)**

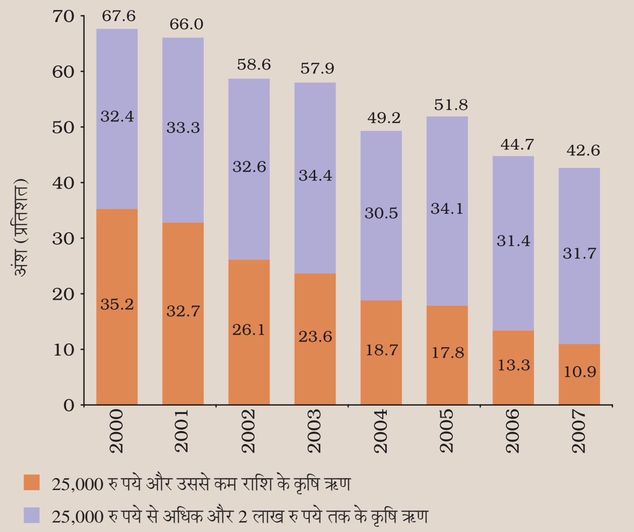


**स्रोत :** मूल सांख्यिकीय विवरणियाँ, विभिन्न अंक ।

6.53 खातों की संख्या और बकाया राशि के तौर पर कृषि संबंधी छोटे उधार खातों (जिनमें 2 लाख रुपये के ऋण सीमा आकार तक के खाते शामिल हैं) के अंश में गिरावट आंशिक तौर पर मुद्रास्फीति के प्रभावों के कारण थी । ऋण सीमा आकार के वर्ग सांकेतिक (नॉमिनल) तौर पर व्यक्त किये गये हैं तथा कालांतर में मुद्रास्फीति के कारण इस बात की संभावना है कि ऋण सीमा आकार के इन वर्गों के मूल्य में वास्तविक तौर पर गिरावट आ जाए। 'छोटे उधार खातों के सर्वेक्षण' के आधार पर 2001-2006 की अवधि के लिए मुद्रास्फीति के लिए छोटे उधार खातों के अंतर्गत ऋण सीमा आकार के वर्गों को[9] समायोजित करने के बाद कृषि उधार खातों की कुल संख्या में कृषि संबंधी छोटे उधार खातों की संख्या के अंश में गिरावट बनी रही, यद्यपि इस गिरावट की सीमा कुछ-कुछ निम्नतर थी । 25,000 रुपये और उससे कम (जो कृषि संबंधी अधिकांश छोटे उधार खातों के विषय में ऋण सीमा का आकार है) की ऋण सीमा से युक्त छोटे उधार खातों की संख्या का अंश मुद्रास्फीति के लिए समायोजन करने के बाद घट गया । फिर भी, उक्त गिरावट मुद्रास्फीति के प्रभावों के लिए समायोजन करने पर कम ही पायी गई। कृषि के प्रति कुल बकाया ऋण में कृषि संबंधी छोटे उधार खातों के अंतर्गत बकाया राशि के अंश में भी मुद्रास्फीति के प्रभावों के लिए समायोजित करने के बाद गिरावट देखी गई यद्यपि वह मुद्रास्फीति के लिए समायोजित न करने की स्थिति की तुलना में कम ही थी (सारणी 6.5 और चार्ट VI.18)।

*कृषि को उधार देने में विभिन्न देशों केअनुभव*

6.54 2007 में किये गये नमूना अध्ययन में न्यूजीलैंड एकमात्र देश पाया गया जिसमें वाणिज्य बैंकों के कुल ऋण में कृषि ऋण का अंश भारत की तुलना में अधिक था (सारणी 6.6)। जिन देशों की समीक्षा की गई थी उनमें से भारत में कृषि क्षेत्र में वाणिज्य बैंक ऋण की गहनता (अर्थात् कृषिगत जीडीपी के प्रतिशत के रूप में वाणिज्य बैंकों का कृषि ऋण) पूर्वी एशिया की अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं में विद्यमान उक्त ऋण की मात्रा के समान थी । तथापि, कृषि संबंधी ऋण की गहनता न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, यूके और अमरीका जैसे देशों में उल्लेखनीय रूप में अधिक थी (सारणी 6.7)। यह मुख्य रूप से इन देशों में कृषि के वाणिज्यीकरण के उच्चतर स्तर के कारण संभव था जिसके अंतर्गत प्रौद्योगिकीय कोटि-उन्नयन के लिए, खाद्य प्रसंस्करण के कार्यकलापों के लिए तथा कृषि उत्पादों के लिए विपणन प्रणालियों के लिए भी संवर्धित ऋण की आवश्यकता थी ।

6.55 सारांश रूप में, भारत में कुल कृषि ऋण में संस्थागत वित्त का अंश 1960 के दशक के मध्य से उल्लेखनीय रूप में बढ़ गया है (भारत सरकार, 2007बी)। 1970 के दशक में और 1980 के दशक के प्रारंभ में संस्थागत कृषि ऋण के लिए सहकारी बैंक प्रधान स्रोत थे, जबकि 1980 के दशक के मध्य से अनुसूचित वाणिज्य बैंक इसके लिए

[9] 1. छोटे ऋण संबंधी ऋण सीमा आकार वर्गों को 1999-2000 को आधार वर्ष के रूप मे लेकर जीडीपी अपस्फीतिकारक (डिफ्लेटर) का उपयोग करते हुए बढ़ाया गया । उदाहरण के लिए, 25,000 रुपये के ऋण सीमा आकार वर्ग के मामले में संशोधित आंकड़े 2001 के लिए 25,880 रुपये, 2004 के लिए 28,780 रुपये तथा 2006 के लिए 31,374 रुपये थे ।

2. मुद्रास्फीति समायोजित छोटे ऋण संबंधी ऋण सीमा आकार वर्गों के अनुरूप ऋण खातों की संख्या और बकाया ऋण की स्थिति प्राप्त करने के लिए उपलब्ध आंकड़ों पर आनुक्रमिक अंतर्वेशन (लिनियर इंटरपोलेशन) लागू किया गया ।

### सारणी 6.5 : कृषि को छोटे उधार खाते (मार्च के अंत में)

| ऋण सीमा का आकार | छोटे उधार खाते : खातों की संख्या (कृषि उधार खातों की कुल संख्या में अंश) (प्रतिशत) | | | छोटे उधार खाते : बकाया राशि (कृषि उधार खातों में बकाया कुल राशि में अंश) (प्रतिशत) | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | 2001 | 2004 | 2006 | 2001 | 2004 | 2006 |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| **रु. 25,000 से कम** | **82.8 (83.2)** | **70.0 (72.3)** | **61.2 (66.4)** | **32.7 (33.1)** | **17.1 (18.8)** | **13.3 (16.1)** |
| रु. 25,000-50,000 | 9.8 (9.6) | 15.3 (14.1) | 20.1 (17.4) | 11.4 (11.3) | 10.8 (10.5) | 11.0 (10.4) |
| रु. 50,000-75,000 | 2.0 (1.9) | 3.8 (4.2) | 4.8 (5.8) | 4.0 (3.9) | 4.3 (5.5) | 4.3 (6.5) |
| रु.75,000-1,00,000 | 0.8 (0.8) | 3.4 (2.4) | 4.5 (2.4) | 2.4 (2.4) | 5.5 (4.3) | 5.7 (3.8) |
| रु. 1,00,000-1,50,000 | 1.3 (1.4) | 1.9 (2.5) | 2.7 (3.3) | 4.5 (5.3) | 4.1 (6.2) | 4.7 (6.6) |
| रु. 1,50,000-2,00,000 | 2.2 (2.0) | 2.6 (1.7) | 2.6 (1.2) | 11.0 (10.1) | 7.3 (5.6) | 5.6 (4.2) |
| **रु. 2 लाख से कम** | **98.8 (98.8)** | **97.1 (97.3)** | **95.9 (96.5)** | **66.0 (66.3)** | **49.2 (50.8)** | **44.8 (47.7)** |

**टिप्पणी** : कोष्ठक में आंकड़े मुद्रास्फीति के लिए समायोजित हैं ।
**स्रोत** : छोटे उधार खातों का सर्वेक्षण, भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन, विभिन्न अंक ।

प्रमुख स्रोत के रूप में उभरे । किसान परिवारों की ऋणग्रस्तता में संस्थागत ऋण का अंश 1991 और 2002 के बीच घट गया। यह मुख्य रूप से गैर-संस्थागत स्रोतों से उधार में तीव्र वृद्धि के कारण था। 1990 के दशक में संस्थागत स्रोतों से किसान परिवारों द्वारा उधार लगभग उसी दर से जारी रहा जैसा कि वह 1980 के दशक में

**चार्ट VI.18 : कृषि उधार खातों में कृषि के छोटे उधार खातों का अंश - मुद्रास्फीति के लिए समायोजित (मार्च के अंत में)**

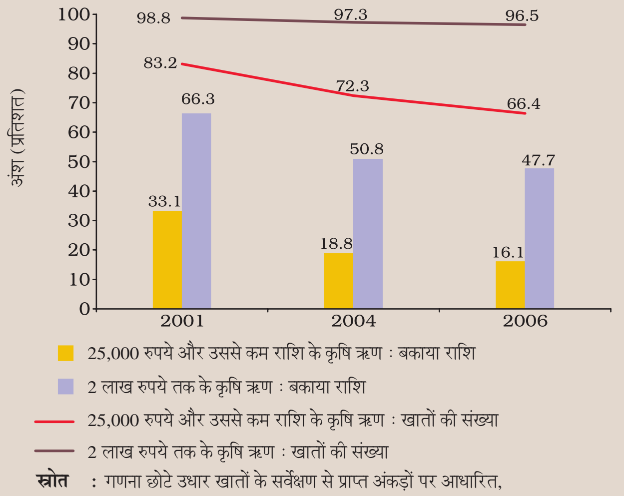


**स्रोत** : गणना छोटे उधार खातों के सर्वेक्षण से प्राप्त अंकड़ों पर आधारित, भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन, विभिन्न अंक ।

था। फिर भी, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा कृषि को ऋण में वृद्धि में 2003-04 से उल्लेखनीय रूप में सुधार हुआ। परिणामस्वरूप, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा कुल ऋण में कृषि को दिये गये ऋण का अंश हाल के वर्षों में बढ़ा । खाद्येतर बैंक ऋण के प्रतिशत के रूप में कृषि को दिये गये प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र अग्रिमों में भी बढ़ोतरी हुई। इसके परिणामस्वरूप, कृषि क्षेत्र के ऋण की प्रधानता में सुधार हुआ। तथापि, कुछ अशांत करनेवाले लक्षण भी देखे गये । पहला, कृषि को प्रदत्त कुल ऋण में दीर्घावधि ऋणों का अंश 1991 और 2006 के बीच प्रायः संगत रूप में कम हो गया; 2006 में उक्त अंश 1991 में उक्त अंश के आधे से कम था । दूसरा, किसानों को प्रत्यक्ष वित्त में तथा उनके द्वारा धारित कुल ऋण खातों में सीमांत किसानों के अंश ने अल्प गोचर सुधार दर्शाया । तीसरा, 2 लाख रुपये तक के ऋणों, जिन पर ब्याज दरें लगातार अंशतः विनियमित हैं, के अंश ने ऋण खातों और बकाया राशि दोनों में गिरावट देखी । तथापि, यह गिरावट मुद्रास्फीति के लिए समायोजन करने के बाद भी बनी हुई है हालांकि उक्त गिरावट मुद्रास्फीति के लिए समायोजन करने के बाद निम्नतर क्रम में है ।

*कृषि को बैंक ऋण में निहित प्रश्न*

6.56 कुल बैंक ऋण के प्रतिशत के रूप में कृषि ऋण ने 1990 के दशक के प्रारंभ से लेकर 2000-01 तक निरंतर गिरावट दर्शायी। इस अवधि की एक विशेषता जीडीपी में कृषि के अंश में गिरावट भी थी । अतः कृषि ऋण निष्पादन का मूल्यांकन करने के लिए एक अधिक

**सारणी 6.6 : कृषि क्षेत्र को वाणिज्य बैंक ऋण : चयनित देशों का सर्वेक्षण**

(कुल ऋण का प्रतिशत)

| देश | 1991 | 1995 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 | 2007 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 |
| आस्ट्रेलिया | .. | 9.6 | 8.8 | 8.9 | 9.2 | 9.9 | 10.1 | 9.7 | 9.0 | 8.1 |
| जर्मनी | 0.7 | 0.7 | 0.6 | 0.6 | 0.6 | 0.7 | 0.7 | 0.7 | 0.8 | 0.8 |
| **भारत** | **15.0** | **11.8** | **9.9** | **9.6** | **9.8** | **10.0** | **10.9** | **10.8** | **11.4** | **11.8** |
| इंडोनेशिया | 7.5 | 6.6 | 7.3 | 6.8 | 6.1 | 5.6 | 5.8 | 5.3 | 5.7 | 5.6 |
| मलेशिया | .. | .. | 3.1 | 3.2 | 3.0 | 2.6 | 2.2 | 2.0 | 2.0 | .. |
| न्यूजीलैंड | 8.4 | 10.0 | 9.1 | 9.8 | 10.8 | 11.8 | 11.5 | 12.1 | 12.4 | 12.6 |
| थाईलैंड | 7.0 | 4.0 | 2.7 | 2.5 | 2.3 | 2.1 | 2.1 | 2.0 | 1.9 | 1.6 |
| युनाइटेड किंगडम | 1.5 | 1.2 | 0.8 | 0.7 | 0.7 | 0.6 | 0.6 | 0.6 | 0.6 | 0.5 |
| अमरीका* | 1.6 | 1.5 | 1.2 | 1.2 | 1.1 | 1.0 | 1.0 | 0.9 | 0.9 | 0.8 |

* : कुल ऋणों और पट्टों के प्रतिशत के रू प में बकाया गैर-स्थावर संपदा कृषि ऋण ।

.. : उपलब्ध नहीं ।

**स्रोत :** 1. संबंधित देशों की केंद्रीय बैंक वेबसाइटें।

2. भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूल सांख्यिकीय विवरणियाँ, विभिन्न अंक, भारतीय रिज़र्व बैंक ।

संगत उपाय ऋण की प्रधानता अर्थात् कृषिगत जीडीपी के प्रतिशत के रूप में कृषि ऋण होगा। कृषि की ऋण-प्रधानता, जो 1950 के दशक के प्रारंभ और 1980 के दशक के बीच निरंतर बढ़ी, 1990 के दशक में कम हुई । तथापि, कृषि को बैंक ऋण में वृद्धि भारत सरकार और रिज़र्व बैंक द्वारा की गई विभिन्न नीतिगत पहलों के कारण 2003-04 से उल्लेखनीय रूप में तेज हुई। परिणामस्वरूप, ऋण की मात्रा 2003-04 से लेकर तेजी से बढ़ने लगी। फिर भी, जहाँ तक कृषि के लिए प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र ऋण के मानदंडों का संबंध है, कृषि को ऋण की उपलब्धता 1990 के दशक के प्रारंभ से कृषि के लिए नियत 18 प्रतिशत के प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र लक्ष्य से नीचे रही है। सरकारी क्षेत्र के 28 बैंकों में से केवल आठ और निजी क्षेत्र के 26 बैंकों में से तीन ने ही मार्च 2007 की समाप्ति पर कृषि को बकाया निवल ऋण का 18 प्रतिशत प्रदान करने का लक्ष्य पूरा किया (भा.रि.बैं.,2007बी)। वाणिज्य बैंकों द्वारा प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र उधार के लक्ष्यों में विद्यमान कमियों की राशि नाबार्ड के पास रखी हुई ग्रामीण मूलभूत सुविधा विकास निधि (आरआइडीएफ) में जमा करना अपेक्षित है । आरआइडीएफ की तरह

**सारणी 6.7 : कृषि क्षेत्र की वाणिज्य बैंक ऋण प्रधानता* : चयनित देशों का सर्वेक्षण**

(प्रतिशत)

| देश | 1991 | 1995 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| आस्ट्रेलिया | 0.0 | 85.6 | 94.4 | 83.7 | 116.3 | 119.2 | 131.6 | 143.8 | .. |
| जर्मनी | 14.2 | 15.8 | 16.0 | 14.1 | 17.3 | 18.4 | 17.3 | 21.8 | 22.9 |
| **भारत** | **12.3** | **9.5** | **10.2** | **11.5** | **13.1** | **16.1** | **18.0** | **23.2** | **29.0** |
| इंडोनेशिया | 18.5 | 19.9 | 9.0 | 7.9 | 7.6 | 7.9 | 9.8 | 10.1 | 10.5 |
| मलेशिया | .. | .. | 31.9 | 37.3 | 30.9 | 24.5 | 22.6 | 24.2 | .. |
| न्यूजीलैंड | 101.2 | 145.5 | 136.7 | 143.6 | 206.0 | .. | .. | .. | .. |
| थाईलैंड | 39.9 | 39.7 | 27.1 | 22.4 | 20.9 | 16.5 | 16.5 | 15.6 | 13.3 |
| युनाइटेड किंगडम | 75.3 | 51.4 | 92.9 | 93.1 | 89.9 | 84.8 | 84.0 | 94.6 | 94.5 |
| अमरीका^ | 33.2 | 36.3 | 41.8 | 42.2 | 46.2 | 36.8 | 32.4 | 36.4 | |

* : ऋण की प्रधानता कृषि जीडीपी के प्रतिशत के रू प में वाणिज्य बैंकों द्वारा कृषि को उधार के रू प में परिभाषित है ।

^ : कृषि जीडीपी के प्रतिशत के रू प में बकाया वाणिज्य बैंकों के गैर-स्थावर संपदा कृषि ऋण ।

.. : उपलब्ध नहीं ।

**स्रोत :** 1. विश्व विकास संकेतक डाटाबेस ।

2. संबंधित देशों की केंद्रीय बैंक वेबसाइटें ।

3. भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूल सांख्यिकीय विवरणियाँ, विभिन्न अंक, भारतीय रिज़र्व बैंक ।

4. भारतीय अर्थव्यवस्था संबंधी सांख्यिकी की पुस्तिका, 2006-07 ।

वार्षिक श्रृंखलाओं ने अब तक 72,000 करोड़ रुपये तक राशि जमा की है (नाबार्ड, 2007)। 2008-09 के लिए केंद्र बजट में आरआइडीएफ की चौदहवीं श्रृंखला की मूल निधि (कॉर्पस) अर्थात् 14,000 करोड़ रुपये पर 2008-09 के लिए आरआइडीएफ-XIV की बजट-व्यवस्था की गई है ।

6.57 यद्यपि हाल के वर्षों में संस्थागत ऋण की समग्र उपलब्धता बढ़ गई है, तथापि कृषि ऋण के वितरण में अभी भी ऐसे अनेक मुद्दे हैं जो कृषि क्षेत्र में हो रहे संरचनात्मक रूप-परिवर्तन के कारण उत्पन्न हो रहे हैं। पहला, कृषि के लिए माँग के स्वरूप में परिवर्तन उभर रहा है क्योंकि कृषि क्षेत्र में अधिकाधिक विविधीकरण हो रहा है तथा वित्त का अपेक्षित मान बढ़ रहा है। दूसरा, यद्यपि भारतीय कृषि का भारी अनुपात एक 'छोटे खेत' पर आधारित आर्थिक गतिविधि के रूप में जारी है, तथापि वह अधिकाधिक किसानों के स्वयं के संसाधनों पर आधारित जीवन-निर्वाह की खेती की प्रणाली से निविष्टि-आधारित सघन वाणिज्यिक खेती की ओर अंतरित हो रहा है। तथापि, वर्तमान में भारत में बैंकिंग प्रणाली अनाज जैसी पारंपरिक फसलों का वित्तपोषण करने की दिशा में अधिक गतिशील है। उसे विषम उत्पादन चक्रों के साथ कृषि के वाणिज्यीकरण की बदलती अपेक्षाएँ पूरी करने के लिए अपने आपको नये स्वरूप में ढालने की आवश्यकता है । छँटाई, श्रेणीकरण, प्रसंस्करण, पैकेजिंग और अंतिम गंतव्य स्थानों और बाजारों तक परिवहन की व्यवस्था जैसे सहायक कार्यकलापों के साथ-साथ डेरी, मत्स्य-ग्रहण और पशुधन, नकदी फसलें जैसी संबद्ध गतिविधियों के लिए माँग बढ़ गई है । मुख्य कार्यकलापों को नया रूप देनेवाले सेवा क्षेत्र के अन्य कार्यकलाप भी बढ़ रहे हैं । बैंकों का यह कर्तव्य बनता है कि यह सब देखते हुए वे कृषि-व्यवसाय के अलग स्वरूप और विभिन्न उत्पादों के लिए आपूर्ति की श्रृंखलाओं को स्वीकार करनेवाली नवोन्मेष योजनाएँ और उत्पाद बनाएँ । यह अधिक महत्वपूर्ण है कि कृषि के वाणिज्यीकरण में बढ़ोतरी के चलते कार्यकुशलताओं का स्तर बढ़ाने तथा प्रवृत्तियों और मन:स्थितियों में परिवर्तन लाने के साथ ही, ऋण-निर्धारण और जोखिम प्रबंध प्रणालियों के नये-नये रूपों को लागू करने की आवश्यकता है । बैंकिंग प्रणाली को ग्रामीण वित्तीय बाजारों की तुलना में शहरी वित्तीय बाजारों के अधिक तेजी से हो रहे आधुनिकीकरण की विशेषता के रूप में उपस्थित ''वित्तीय द्विविधता'' एवं आधुनिक कंप्यूटरों और संचार प्रौद्योगिकियों का उपयोग करनेवालों को इनका प्रयोग न करनेवालों से अलग करनेवाले ''डिजिटल विभाजक'' की समस्या का समाधान भी करना होगा। वित्तीय द्विविधता के परिणामस्वरूप संभव है कि बड़े किसान, कृषि-व्यवसाय और ग्रामीण उद्योग आधुनिक शहरी वित्तीय संस्थाओं से वित्तीय सेवाएँ प्राप्त करें जबकि छोटे और सीमांत किसानों तथा भूमिहीन श्रमिकों को व्यष्टि-वित्त और वैयक्तिक बचत पर निर्भर रहना पड़ सकता है (मोहन, 2006)। कृषि क्षेत्र को प्रभावी ऋण-वितरण में लगभग ऐसे ही मुद्दों का सामना कई अन्य विकासशील देशों और विकसित देशों द्वारा भी किया जा रहा है (बॉक्स VI.4)।

*कृषि क्षेत्र को ऋण में अंतरराष्ट्रीय अनुभव*

6.58 मोटे तौर पर विभिन्न देशों में विद्यमान कृषि वित्त प्रणालियों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है अर्थात् विकासात्मक मॉडल, मिश्रित बाजार मॉडल और बाजार उदार मॉडल (कोलमैन और ग्रान्ट, 1998)। विकासात्मक मॉडल के अंतर्गत कृषि वित्त की गतिविधियों में राज्य एक सक्रिय और प्रधान भूमिका अदा करता है । यह अन्य बातों के बीच दीर्घावधि ऋण प्रदान करने का रूप लेता है जहाँ वाणिज्य बैंक सहभागिता करने के प्रति अनिच्छुक रहते हैं। इस प्रयोजन के लिए विशेषीकृत निगमों की स्थापना की जाती है, ब्याज दरें कम प्रभारित की जाती हैं और कृषि को वित्तीय सहायता प्राप्त (सब्सिडाइज्ड) ऋण मुहैया कराये जाते हैं । मिश्रित बाजार मॉडल में कृषि के लिए मूलभूत संरचना के बाजार-आधारित प्रावधान के प्रति अभिमुखता रहती है, जबकि उसी समय राज्य के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप के लिए एक विशेष भूमिका रखी जाती है। इस प्रकार के मॉडल में, यद्यपि राज्य-समर्थित एजेंसियाँ विद्यमान रहती हैं, तथापि वे कृषि उत्पादकों की अपेक्षा अधिक व्यापक कृषि-खाद्य क्षेत्र की आवश्यकताएँ पूरी करती हैं तथा वे वाणिज्य बैंकों के साथ सीधी प्रतिस्पर्धा में कार्य करती हैं । अंततः एक बाजार उदार मॉडल में कृषि कार्य में रत किसानों और सीमांत उत्पादकों के लिए कोई विशिष्ट सहायता नहीं रहती तथा कृषि की ऋण आवश्यकताएँ अन्य क्षेत्रों की तरह बैंकिंग प्रणाली द्वारा पूरी की जाती हैं । अधिकांश देश उक्त तीनों मॉडलों में से किसी एक मॉडल का अथवा तीनों के मिश्रित रूप का अनुसरण करते हैं। तथापि, उधार की विशिष्ट प्रथाएं विशिष्ट देश की आवश्यकताओं और विशेषताओं के अनुसार विकसित हुई हैं (बॉक्स VI.5)।

6.59 अधिकांश विकासशील देशों ने 1980 के दशक तक ज्यादातर 'आपूर्ति की ओर' अभिमुख निर्दिष्ट ऋण कार्यक्रम का अनुसरण किया। विकासशील देशों में कृषि ऋण वितरण व्यवस्थाओं की समीक्षा से यह विदित हुआ कि कृषि ऋण के प्रति आपूर्ति द्वारा प्रेरित दबाव के परिणाम अनेक कारणों से निराशाजनक थे। पहला, कृषि के लिए चलनिधि से भी अधिक तत्काल आवश्यकता लचीली सेवाओं की है, जो सामान्यतः अनौपचारिक उधारदाताओं द्वारा प्रदान की जाती हैं। दूसरा, छोटे किसानों की बचत की उल्लेखनीय संभाव्यता के अनुभवजन्य साक्ष्य के बावजूद कृषि ऋण बाजार विफल रहे जिसके लिए कानूनी और भौतिक बुनियादी संरचना में अपर्याप्त सार्वजनिक निवेश, प्रवर्तन की व्यवस्थाएं और पण्य जोखिम न्यूनीकरण व्यवस्थाएँ कारण हैं। तीसरा, ऋण के रूप में प्रदत्त धन के प्रतिमोच्य स्वरूप के परिणामस्वरूप प्रायः निधियों का उपयोग निवेश को छोड़कर अन्य प्रयोजनों के लिए किया गया जिससे उत्पादकता को बढ़ाने में ऋण की प्रभावात्मकता कम हुई। सफल ऋण कार्यक्रमों के कुछ उदाहरण थे जो प्राथमिक तौर पर संस्था निर्माण तथा कानूनी और भौतिक बुनियादी संरचना के विकास के साथ ही, मजबूत ग्राम सहकारी प्रणालियों और सामाजिक संबद्धशीलता के कारण थे (यारोन, 1992; एफएओ, 1998; मेयेर और नागराजन, 2000)।

**बॉक्स VI.4**
**कृषि ऋण में निहित समस्याएँ - विकासशील देशों का परिदृश्य**

कृषि विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, विशेष रूप से इस कारण से कि जनसंख्या का बड़ा अनुपात विकासशील देशों में कृषि में लिप्त है तथा इसके पीछे खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने का कार्यनीतिगत कारण भी है। कृषि कार्यों और कृषि प्रबंध में विभिन्नता कृषिगत और ग्रामीण ऋणदाताओं के सामने चुनौतियाँ और अवसर प्रस्तुत करती है। यह सामान्य बात है कि खास तौर से विकासशील देशों में नीतिनिर्धारक कृषि-उधार में निहित अनेक समस्याओं का समाधान करने के लिए जूझते रहे हैं।

जिस मूलभूत चुनौती का सामना किया गया है वह यह है कि कृषि और ग्रामीण विकास के लिए प्रदत्त वित्त को बैंकों द्वारा एक वाणिज्यिक और व्यावसायिक अवसर के रूप में नहीं देखा गया है अथवा यहाँ तक कि इस विषय को औपचारिक वित्तीय प्रणालियों द्वारा भी इस रूप में नहीं लिया गया है। अतीत के असमान, वर्तमान में कृषि अधिकाधिक पूँजीप्रधान बन गई है जिसके लिए खेती पर निवेशों हेतु मध्यावधि और दीर्घावधि ऋण के साथ कार्यशील पूँजी और मौसमी ऋणों तक पहुँच की आवश्यकता है तथा इसका आधुनिकीकरण एक मजबूत वित्तीय प्रणाली की सहायता के बिना नहीं हो सकता। यह उल्लेखनीय है कि औपचारिक ऋण तक सामान्यतः छोटे किसानों की भी पहुँच नहीं होती क्योंकि लेनदेन लागतों को कम करने के लिए तथा वहन करने योग्य लागत पर छोटे ग्राहकों को 'आवश्यकता-आधारित' (टेलर-मेड) उत्पाद उपलब्ध कराने के लिए वित्तीय प्रणाली नवोन्मेषयुक्त अथवा पर्याप्त रूप से कुशल नहीं है।

कृषि को ऋण की सुचारु उपलब्धता को बाधित करनेवाले दो प्रमुख कारक हैं प्रभावी ऋण वितरण प्रणालियों का अभाव और ग्रामीण जनता के पास पर्याप्त ऋण अवशोषण-क्षमता की कमी।

कृषि उधार में ऋण के वितरण और निगरानी के लिए लागत अत्यधिक पायी गई है तथा बैंकों ने अब तक तुलन-पत्र के आंकड़ों के दायरे के भीतर कृषि क्षेत्र में ऋण के वितरण और पर्यवेक्षण की लागत का प्रबंध करने के लिए कोई आसान समाधान नहीं पाया है। ग्राहकों और वित्तीय मध्यस्थों के बीच की दूरियाँ, परिवहन और संचार की कठिनाइयाँ, तथा कृषि का जोखिमपूर्ण स्वरूप जो प्राकृतिक विपदाओं के प्रति असुरक्षित है, इन लागतों को बढ़ाते हैं। चुनौती अभी भी किसान समुदाय के लिए बेहतर ढंग से उपयुक्त ऋण उत्पादों की व्यवस्था बनाने और वितरित करने की है। भूमि के स्वामित्व का अदृढ़ अंकन तथा न्यायालय की दुष्कर और महँगी प्रक्रियाएँ भी ग्रामीण क्षेत्रों में ऋणों के लिए पारंपरिक समर्थक जमानत उपलब्ध कराने की समस्याओं में वृद्धि करती हैं और इस प्रकार ग्रामीण ऋण की जोखिमों को और बढ़ाती हैं। एक और प्रमुख समस्या जिसका सामना कृषि और ग्रामीण ऋण कर रहा है, यह है कि मानक ऋण कार्यक्रम छोटे किसानों की विविध आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त नहीं हैं। वित्तीय सहायता प्राप्त (सब्सिडाइज्ड) ब्याज दरों ने सशक्त और प्रतिस्पर्धी ग्रामीण वित्तीय बाजारों के आविर्भाव को अवरुद्ध किया, ऋण की चुकौती में अनुशासनहीनता को प्रोत्साहित किया, लागतों की पूर्ति करने से बैंकों को रोक दिया, तथा स्थानीय बचत संग्रहण को निरुत्साहित कर दिया। विभिन्न पुरानी कार्यविधियों की जटिलता और ऋण की व्यवस्था में आवश्यक संबंधित कागजी-कार्रवाई कृषि-उधार में विद्यमान एक और समस्या है।

ग्रामीण वित्तीय बाजार सफल होकर नहीं बढ़ सकते यदि उनके ग्राहकों के पास ऋण-पात्रता न हो। किसानों की कम अवशोषण क्षमता, ऋणों की चुकौती करने में असमर्थता, तथा बचत करने में असमर्थता क्योंकि उनकी आय निम्नस्तरीय है, इन सबके परिणामस्वरूप उनकी ऋण-पात्रता कम है। सूचना प्रौद्योगिकी में सुधारों के बावजूद बैंकों के पास संभावित ग्राहकों के ऋण-इतिहास, खेती पर निवेशों की व्यवहार्यता, किसानों की स्व-वित्तपोषण क्षमता और उनकी चुकौती क्षमता के संबंध में आवश्यक सूचना का अभाव है। सूचना के इन अत्यावश्यक खंडों का अभाव कृषि और ग्रामीण विकास के लिए समय पर ऋण की पहुँच को बाधित करता है।

चूँकि विकासशील देशों में अधिकांश किसान या तो छोटे हैं या सीमांत, इसलिए उनके पास दोनों ऋणों और अग्रिमों की लागत और आकार के तौर पर अवशोषण क्षमता की कमी होती है जिनके संबंध में किफायती आकार में बैंकों द्वारा कार्रवाई की जानी है। चूँकि ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक वित्तीय लेनदेन - दोनों ऋणों और जमाराशियों के लिए - छोटे होते हैं, अतः संबद्ध धनराशि के प्रत्येक यूनिट की लेनदेन लागत आवश्यक रूप से बड़े लेनदेनों की तुलना में अधिक होती है। अधिकांश बैंकों के पास या तो जोखिम प्रबंध प्रणाली नहीं होती या उन्हें यह महसूस होता है कि विशेष रूप से कृषि के वित्तपोषण के मामले में ऐसी जोखिम प्रबंध प्रणाली की कोई आवश्यकता नहीं है।

**संदर्भ :**

कीलेन ब्रिगेट, मेयेर रिचर्ड, हैनिंग आल्फ्रेड, बर्नेट जिल और फिकबिग माइकेल, 1999। ''बेटर प्रैक्टिसेज इन एग्रिकल्चर लेंडिंग'' *एग्रिकल्चरल फाइनैंस रीविजिटेड* सं. 3, एफएओ, दिसंबर।

भा.रि.बैं., 2004। ''बैंकिंग प्रणाली से कृषि को ऋण की उपलब्धता और संबंधित कार्यकलापों पर परामर्शदात्री समिति की रिपोर्ट'', जून।

तथापि, कई विकासशील देशों में निर्दिष्ट ऋण की अधारणीयता (नॉन-सस्टेनबिलिटी) के चलते 'माँग-केंद्रित दृष्टिकोण' - जहाँ विशिष्ट उत्पादों के माध्यम से किसानों, विशेष रूप से छोटे और सीमांत कृषकों की विशिष्ट ऋण आवश्यकताएँ पूरी करने पर अधिक बल दिया जाता है - को बैंकिंग की सक्षमता पर फोकस के साथ अपनाया गया है। उनमें से उल्लेखनीय हैं बैंक राक्यात इंडोनेशिया (बीआरआइ) और इंडोनेशिया में उसकी बीआरआइ-यूडी (यूनिट देसाई) प्रणाली तथा थाईलैंड के बैंक फॉर एग्रीकल्चर एण्ड एग्रिकल्चरल को-ऑपरेटिव्ज (बीएएसी) की सफलता के वृत्तांत (बॉक्स VI.6)।

6.60 सारांश के रूप में, कृषि को संस्थागत ऋण ने 1960 के दशक के मध्य से काफी प्रगति की है। कृषि को कुल ऋण में संस्थागत कृषि ऋण का अंश 1961 के 18.7 प्रतिशत से बढ़कर 1991 में 66.3 प्रतिशत हो गया। विशेष रूप से कृषि को वाणिज्य बैंकों के ऋण में 1970 के दशक के प्रारंभ में और 1980 के दशक में तेजी से विस्तार हुआ। कृषि को वाणिज्य

## बॉक्स VI.5
## कृषि ऋण की प्रथाएँ : विभिन्न देशों के अनुभव

पिछले कुछ वर्षों के दौरान कृषि ऋण बाजारों ने संरचनात्मक परिवर्तन का साक्षात्कार किया है। परंपरागत कृषि ऋण नीतियों के परिणाम से असंतोष और इन नीतियों में निहित असंगतियों तथा प्रभावी विकास प्रतिमान में केंद्रीय आयोजना से बाजार की शक्तियों पर निर्भर आयोजना की ओर परिवर्तन ने कई देशों में कृषि नीति के पुनर्निर्धारण को प्रेरित किया। अनेक विकासशील देशों में निदेशित ऋण कार्यक्रम अपनी सीमित पहुँच और धारणीयता के कारण चरणबद्ध रूप में बंद किये गये हैं और कई कृषि विकास बैंक समाप्त किये गये हैं । इसके अलावा, कृषि और ग्रामीण वित्त से राज्य तथा दाता और विकास एजेंसियों के हट जाने के साथ ही छोटे किसानों की कार्यशील पूँजीगत आवश्यकताओं के लिए मीयादी वित्त वितरित करने और बाजार के लिए अपने कृषि उत्पादों को बेहतर ढंग से अनुकूल बनाने के लिए छोटे किसानों को परस्पर संबद्ध ऋण व्यवस्थाएँ उपलब्ध कराने हेतु सहायता प्रदान करनेवाले तंत्र अभिकल्पित करने की अत्यंत आवश्यकता उत्पन्न हुई ।

ब्राजील, इंडोनेशिया, मेक्सिको और श्रीलंका जैसे कई देशों में 1990 के दशक से पहले के तीन दशकों के दौरान आपूर्ति-प्रेरित और निदेशित ऋण कार्यक्रम कृषि के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए प्रयुक्त प्रभावी उपकरण थे । केन्द्रीकृत रूप में आयोजित देशों में निदेशित ऋण इसी प्रकार कृषि उत्पादन कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए एक प्रमुख उपकरण था । इन प्रयासों के पीछे निहित धारणा यही थी कि अनेक किसानों ने चलनिधि संबंधी ऐसे दबावों का सामना किया जिन्होंने खेती के लिए निवेश करने और अतिरिक्त आधुनिक निविष्टियों का प्रयोग करने की उनकी क्षमता को सीमित कर दिया । अतः यह सोचा गया कि उन्हें ऋण प्रदान करने के द्वारा इन दबावों को शिथिल करना कृषि निवेश को प्रोत्साहित करने, आधुनिक निविष्टियों का प्रयोग बढ़ाने तथा कृषि उत्पादन का संवर्धन करने का एक सरल तरीका होगा । सब्सिडियाँ निदेशित ऋण में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं तथा संभवतः वे उसका विशिष्ट लक्षण हैं । ये सब्सिडियाँ रियायती ऋण का रूप ले सकती हैं । विश्व-भर में निदेशित ऋण से वित्तीय बाजार विकास की ओर अंतरण केवल आंशिक है ।

कई देशों में सरकारों ने शहर-आधारित वाणिज्य बैंकों को प्रभावित करनेवाले विनियम लागू करते हुए कृषि में निवेश के लिए उपलब्ध धन की मात्रा को बढ़ाने का प्रयास किया है । इन मामलों में कृषि ऋण में सामान्यतः संबद्ध न होनेवाले बैंकों से कानूनन यह अपेक्षित है कि वे अपने कुल ऋणों का एक नियत कोटा कृषि क्षेत्र को उधार दें । या तो उन्हें अपने संविभाग का यह नियत अंश सीधे उक्त क्षेत्र को आबंटित करना होगा या अप्रत्यक्ष रूप से विशेषीकृत बैंकों द्वारा उपलब्ध कराना होगा जो इन निधियों को आगे अंतिम उधारकर्ता को उधार देंगे। कुछ मामलों में वाणिज्य बैंकों की कमियाँ, जो अंतिम उधारकर्ता को सीधे अपेक्षित राशि उधार न दे सके हों, कृषि विकास बैंकों (उदा. अतीत में दि एग्रिकल्चरल बैंक ऑफ ईरान एवं थाईलैंड में दि बैंक ऑफ एग्रिकल्चर एण्ड एग्रिकल्चरल को-ऑपरेटिव्ज़, बीएएसी)) के संसाधनों का काफी भाग हैं। कई एशियाई देशों ने वाणिज्य बैंकों के लिए संविभाग आबंटन लक्ष्य स्थापित किये हैं। ईरान और फिलीपीन्स में कृषि क्षेत्र में ऋण आबंटनों का लक्ष्य 25 प्रतिशत और थाईलैंड में 20 प्रतिशत निर्धारित किया गया।

कुछ विकासशील देशों, जैसे फिलीपीन्स, में निदेशित कृषि ऋण कार्यक्रम निरंतर एक सुदृढ़ भूमिका निभा रहे हैं । तथापि, चिली, एल सैल्वाडोर, इंडोनेशिया, पेरू और यूगांडा जैसे देशों में पुराने निदेशित ऋण दृष्टिकोण के थोड़े-से अवशेष बचे हैं। कई अन्य देशों में नये दृष्टिकोण की ओर परिवर्तन कम पूर्ण रहे हैं। विशिष्ट रूपसे आंशिक परिवर्तनों में ब्याज-दर अविनियमन और सब्सिडियों में कमी तथा उधारदाताओं को रियायती निधियाँ उपलब्ध करानेवाले केंद्रीय बैंकों में अपेक्षाकृत कम सुविधाएँ निहित हैं ।

1980 के दशक के उत्तरार्ध से दीर्घावधि में जारी रह सकनेवाली ग्रामीण वित्तीय प्रणालियों का विकास करने के उद्देश्य के साथ अधिक बाजार-उन्मुख पद्धति की दिशा में प्रधान रूप से आपूर्ति-निदेशित कार्यनीति के दृष्टिकोण से कृषि और ग्रामीण विकास के प्रति दृष्टिकोण में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है। तथापि, अक्सर विकास-अवधि के वर्षों में इसके कार्यान्वयन के परिणामस्वरू प कृषि को संस्थागत ऋण में गिरावट आई क्योंकि छोटे किसान ग्राहकों की सेवा करने के लिए अधिकांश बैंकों के पास न तो ग्रामीण शाखा नेटवर्क था और न ही कृषि उधार की विशेषज्ञता। फलस्वरू प कृषि ऋण अभी भी अनौपचारिक, गैर-संस्थागत स्रोतों पर अत्यधिक निर्भर है।

**संदर्भ :**

कोलमैन, डब्ल्यूडी और विन पी. ग्रान्ट , 1998। ''पॉलिसी कन्वर्जन्स एण्ड पॉलिसी फीडबैक : एग्रिकल्चरल फाइनैंस पॉलिसीज़ इन ए ग्लोबलाइजिंग इरा''- यूरोपियन जर्नल ऑफ पोलिटिकल रिसर्च, खंड 34, सं. 2, पृष्ठ 225-47।

किलेन ब्रिगेट, मेयर रिचर्ड, हैनिंग आलफ्रेड, बर्नेट जिल और फिकबिग माइकेल, 1999। ''बेटर प्रैक्टिसेज़ इन एग्रिकल्चर लेंडिंग'', एग्रिकल्चरल फाइनैंस रीविजिटेड नं. 3, एफएक्यू, दिसंबर।

बैंकों के ऋण ने 1990 के दशक में मंद वृद्धि दर्शायी। फिर भी, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के कुल बकाया ऋण में कृषि ऋण के अंश ने मार्च 2002 की समाप्ति से प्रारंभ करके सुधार दर्शाया तथा वह 2002 के 9.8 प्रतिशत से बढ़कर 2004 में 10.9 प्रतिशत, 2006 में 11.4 प्रतिशत और 2007 में 11.8 प्रतिशत हो गया। कृषि ऋण को दुगुना करने की सरकार की नीति के कार्यान्वयन और रिज़र्व बैंक द्वारा की गई अनेक अन्य पहलुओं के कारण कृषि को बैंक ऋण में 2003-04 से तेजी से बढ़ोतरी हुई। इसके परिणामस्वरूप, संस्थागत स्रोतों से कृषि की ऋण - प्रधानता 2000-01 के 11.3 प्रतिशत से उल्लेखनीय रूप में बढ़कर 2003-04 में 16.3 प्रतिशत तथा 2006-07 में आगे और बढ़कर 31.0 प्रतिशत हो गई ।

## बॉक्स VI.6
## कृषि ऋण - सफल अनुभवों का अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य

बैंक राक्यात इंडोनेशिया (बीआरआइ) इंडोनेशिया में कृषि क्षेत्र के विकास के उद्देश्य से स्थापित राज्य के स्वामित्व वाला विदेशी विनिमय वाणिज्य बैंक है। बीआरआइ की व्याप्ति देश में लगभग सर्वतोमुखी थी और उसकी व्याप्ति की गहराई बीआरआइ-यूनिट देसाई (यूडी) की स्थापना के साथ बढ़ गई जो 1984 में तथा चावल की खेती के लिए निदेशित ऋण की आपूर्ति करने के बिमास (लोक मार्गदर्शन) कार्यक्रम के उत्तराधिकारी के रूप में अस्तित्व में आया। सरकार के सक्रिय समर्थन के साथ उक्त बिमास कार्यक्रम शाखा यूनिटों की पुनर्संरचना बीआरआइ की यूनिट देसाई प्रणाली के रूप में की गई। प्रत्येक बीआरआइ-यूडी को स्व-निर्वाह के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों को ऋण उपलब्ध कराने के लिए अधिदेश (मैन्डेट) दिया गया। बीआरआइ-यूडी ने सरकार से आर्थिक सहायता (सब्सिडी) के रूप में किसी समर्थन के बिना वाणिज्यिक रू प से अर्थक्षम आधार पर इसे चलाने के उद्देश्य से ग्रामीण क्षेत्रों में केवल व्यष्टि और छोटे ग्राहकों की आवश्यकताएँ पूरी कीं। बीआरआइ-यूडी अपनी स्थापना के कुछ ही वर्षों के अंदर लाभप्रद बन गया और इस कारण से ग्रामीण वित्तीय मध्यस्थता में वैश्विक तौर पर अग्रणी बन गया (यारोन और अन्य, 1997)। बिमास व्यवस्था की यूनिट देसाई प्रणाली जिसका फोकस आवश्यक रू प से निदेशित कृषि ऋण पर रहा, को बीआरआइ के अंतर्गत एक व्यापक आधार वाली ग्रामीण ऋण संस्था के रू प में परिवर्तित किया गया जो परिचालनगत लागतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त धनात्मक उधार ब्याज-दरों के साथ तथा ग्रामीण निर्धन जनता को व्यापक दायरे में वित्तीय सेवाएं प्रदान करते हुए परिचालन करती थी (यारोन और अन्य, 1997)। बीआरआइ-यूडी का संगठन अपनी मूल संस्था बीआरआइ से काफी हद तक स्वायत्तता रखता है तथा वह अपने परिचालनों में बहुत अधिक विकेंद्रीकृत है। 1997 तक स्थिर समष्टि-आर्थिक वातावरण बीआरआइ-यूडी की तीव्र वृद्धि के लिए एक प्रमुख कारक है (मेयेर और नागराजन, 2000)। उच्च ब्याज-दर की नीति तथा जमाराशियों और ऋणों के बीच अत्यधिक स्प्रेड बीआरआइ-यूडी की सफलता में अन्य प्रमुख कारक हैं। इसने छोटे ऋणों और जमाराशियों संबंधी सेवा के प्रबंध की लागतें पूरी करने में बैंक की सहायता की और बाद में दैनिक परिचालनों के लिए सब्सिडी पर कम निर्भर होने के लिए बैंक को समर्थ बनाया। अतः यद्यपि बहुत छोटी जमाराशियाँ कोई ब्याज अर्जित नहीं कर सकतीं, तथापि अच्छी तरह अभिकल्पित और आकर्षक बचत उत्पादों की उपलब्धता बीआरआइ-यूडी द्वारा ग्रामीण निर्धन जनता के उच्चस्तरीय समावेशन में सहायक थे (यारोन और अन्य, 1997)।

थाईलैंड में दि बैंक फॉर एग्रिकल्चर एण्ड एग्रिकल्चरल को-ऑपरेटिव्ज़ (बीएएसी), एक सरकारी स्वामित्व वाली संस्था ग्रामीण कृषि वित्त संस्थाओं के बीच एक अग्रणी उदाहरण है। बीएएसी की स्थापना केवल कृषि क्षेत्र को ऋण उपलब्ध कराने के लिए की गई थी तथा इसने बैंक ऑफ को-ऑपरेटिव्ज़ का स्थान ले लिया। बीएएसी दोनों प्रकार से प्रत्यक्षतः तथा कृषि सहकारी संस्थाओं और कृषक संघों के माध्यम से बाजार दरों से कम ब्याज दरों पर ऋण उपलब्ध कराता है। फिर भी, 1999 से बैंक की ब्याज दर नीति को सुधारने के लिए प्रयासों के एक भाग के रूप में बीएएसी ने ऋण के आकार का विचार किये बिना एक न्यूनतम उधार ब्याज दर लगाने की नीति का अनुसरण करना प्रारंभ किया तथा अच्छे कार्यनिष्पादन और पिछले रिकार्ड वाले उधारकर्ताओं को अधिमानी ब्याज दरें दी गईं (बीएएसी, 2004)। जो वाणिज्य बैंक कृषि को अपनी निधियों के सांविधिक न्यूनतम 20 प्रतिशत उधार का लक्ष्य पूरा नहीं कर सकते, उनसे अपेक्षित है कि वे अपनी निधियाँ बीएएसी के पास रखें और इन निधियों के अनुरक्षण की प्राबंधिक लागत वाणिज्य बैंकों द्वारा वहन की जाती है।

1998 से बीएएसी बैंकिंग परिचालनों के विकेंद्रीकरण की नीति का अनुसरण करता रहा है जिसके परिणामस्वरू प क्षेत्र कार्यालयों और शाखाओं की संख्या में भारी वृद्धि हुई है। 1994 से प्रत्येक बीएएसी शाखा को एक लाभ-केंद्र के रूप में व्यवस्थित किया गया है तथा शाखा के कार्यनिष्पादन के लिए अब आस्तियों पर प्रतिलाभ (आरओए) को प्रमुख मापदंड के रूप में लिया जाता है। उल्लेखनीय रूप में बीएएसी के ऋणों का संविभाग प्रधानतः दीर्घावधि स्वरूप का है और बीएएसी की निरुपम व्याप्ति थाईलैंड में कुल किसान परिवारों के लगभग 92 प्रतिशत की है (बीएएसी, 2004)। हाल में बीएएसी एक कृषि ऋणदात्री बैंक की अपनी पारंपरिक भूमिका से अनेक सेवाएँ प्रदान करनेवाला ग्रामीण बैंक बनने के लिए अपने परिचालनों का विविधीकरण करता रहा है। बीएएसी की सफलता के लिए वित्तीय धारणीयता पर बल और सशक्त प्रबंध सूचना प्रणाली के साथ ही सफल मानव संसाधन प्रबंध को भी एक कुंजी के रूप में पहचाना गया है (मुरकाई और अन्य, 1998)।

**संदर्भ :**

बीएएसी, 2004। ''हाउ केन पब्लिक बैंक कांट्रिब्यूट टू आउटरीच इन रूरल एरियास?'' श्री सुपाचाई सथाकर्न, बीएएसी के वरिष्ठ उपाध्यक्ष द्वारा 48वीं एशिया-पैसिफिक ग्रामीण और कृषि ऋण संघ (एपीआरएसीए) एक्स-कॉम की बैठक, 10 अक्तूबर 2004, तेहरान, ईरान की क्षेत्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत आलेख।

मेयेर रिचर्ड एल. और गीता नागराजन, 2000। ''स्टडी ऑफ रूरल एशिया : वाल्यूम 3 : रूरल फाइनैंशियल मार्केट्स इन एशिया : पॉलिसीज, पैरडाइम्स एण्ड पेरफार्मेंस'', एशियाई विकास बैंक, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस द्वारा एडीबी के लिए प्रकाशित।

मुराकी, तेत्सुतारो ईटी एएल., 1998। ''दी थाई बैंक फर एग्रीकल्चर एण्ड एग्रीकल्चरल को-ऑपरेटिव्ज़'', केस स्टडीस इन माइक्रोफाइनैंस, सस्टैनबल बैंकिंग विथ द पूर, विश्व बैंक, एशिया सीरीज़।

यारोन, जाकोब ईटी एएल., 1997। ''रूरल फाइनैंस:इश्यूज़,डिज़ाइन एण्ड बेस्ट प्रैक्टिसेज़''। एन्विरॉनमेंटली एण्ड सोशली सस्टेनबल डेवलपमेंट स्टडीज़ एण्ड मोनोग्राफ्स सीरीज़, नं. 14, ग्रामीण विकास, विश्व बैंक।

6.61 कृषि को ऋण प्रदान करने में हाल में हुए सुधार के बावजूद कुछ व्याकुल करनेवाले लक्षण भी देखे गए। पहला, कुल कृषि ऋण में दीर्घावधि ऋणों का अंश 1990 के दशक में और वर्तमान दशक में घट गया। इस गिरावट के लिए कारण दोनों माँग संबंधी और आपूर्ति संबंधी घटक थे। दूसरा, संवितरित ऋणों और ऋण खातों की संख्या के तौर पर कृषकों को दिये गये प्रत्यक्ष वित्त में सीमांत किसानों के अंश ने अत्यल्प गोचर सुधार दर्शाया। तीसरा, मुद्रास्फीति के लिए समायोजन करने के बाद भी चालू दशक में छोटे उधार खातों (2 लाख रु पये तक) के अंश में भी गिरावट हुई।

6.62 एक अप्रचलित कानूनी ढाँचे और काश्तकारी के पुराने कानूनों ने ऋण की उपलब्धता एवं मजबूत और कुशल कृषि ऋण संस्थाओं के विकास को बाधित किया है। बैंकों के लिए यह आवश्यक है कि वे अपनी ओर से इस बात का एक बेहतर विश्लेषण करें कि कृषि ऋण प्रदान करने में जोखिमें कहाँ हैं और तब ऐसी जोखिमों को कम करने के लिए बाजार-उन्मुख समाधानों का पता लगाएँ। इस बात की आवश्यकता है कि बैंक भिन्न-भिन्न आधार पर कृषि ऋण की आवश्यकताओं और जोखिमों की एक बेहतर समझ हासिल करने के लिए अलग-अलग कृषि सेक्टरों और क्षेत्रों के बीच एक अधिक विशेषीकृत दृष्टिकोण अपनाएँ। भारत में कृषि को वाणिज्य बैंक ऋण की अन्य देशों के साथ तुलना से विदित होता है कि भारत में कुल बैंक ऋण के प्रतिशत के रू प में कृषि को बैंक ऋण अधिक था।तथापि, अन्यों के बीच न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया और यूके जैसी अत्यधिक वाणिज्यिकीकृत प्रणालियों में कृषि ऋण की प्रधानता भारत की तुलना में उल्लेखनीय रू प में अधिक थी। विदेशी अनुभवों की समीक्षा से यह संकेत मिलता है कि प्रभावी ऋण वितरण प्रणालियों का अभाव और ग्रामीण जनता की अपर्याप्त ऋण अवशोषण क्षमता ऐसे दो प्रमुख कारक हैं जो कृषि को ऋण की सुचारु उपलब्धता में बाधा पहुँचाते हैं। 1980 के दशक तक अनेक विकासशील देशों ने ज्यादातर 'आपूर्ति की ओर' अभिमुख निदेशित ऋण कार्यक्रमों का अनुसरण किया। फिर भी, आपूर्ति-प्रेरित दृष्टिकोण के निराशाजनक परिणामों के कारण इंडोनेशिया और थाईलैंड जैसे कुछ देशों में कृषि और ग्रामीण बैंकिंग संस्थाएँ माँग-केंद्रित दृष्टिकोण की ओर अग्रसर हुईं जिसके अंतर्गत कुशल जोखिम प्रबंध प्रथाओं सहित ग्रामीण निर्धन जनता की विशिष्ट आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए उपयुक्त आकर्षक बचत और ऋण उत्पादों के सम्मिश्रण पर बल दिया जाता है। यह अवधारणा बैंकिंग संस्थाओं की अर्थक्षमता पर भी जोर देती है।

## V. उद्योग को ऋण

6.63 भारत में बैंकिंग प्रणाली अर्थव्यवस्था के विभिन्न खंडों का वित्तपोषण करने में सक्रिय रूप से लगी हुई है जिनमें से सामान्य रूप से उद्योग और विशेष रूप से लघु और मझौले उद्यमों (एसएमई) का वित्तपोषण अत्यंत महत्व का रहा है । ऐतिहासिक रूप से बैंकों ने उद्योग की अल्पावधि कार्यशील पूँजीगत आवश्यकताओं के लिए वित्त प्रदान किया, जबकि दीर्घावधि निधीयन की आवश्यकताएँ विकास वित्त संस्थाओं (डीएफआइ) द्वारा पूरी की गईं जिनका प्रारंभ बहुत पहले ही 1947 में हुआ जब केवल उद्योग को मीयादी ऋण उपलब्ध कराने के लिए भारतीय औद्योगिक वित्त निगम की स्थापना की गई थी। इसके बाद दोनों सरकारी और निजी क्षेत्रों में कई विकास वित्त संस्थाएँ स्थापित की गईं । फिर भी, संसाधनों के आबंटन संबंधी कौशल के संवर्धन हेतु वित्तीय क्षेत्र में एक प्रतिस्पर्धी परिवेश को बढ़ावा देने के लिए 1990 के दशक के प्रारंभ में वित्तीय क्षेत्र सुधारों के लागू किये जाने के साथ ही बैंकों के रूप में दो प्रमुख विकास वित्त संस्थाओं (डीएफआइ) के परिवर्तन के चलते औद्योगिक वित्त की संरचना में बदलाव आया है ।

6.64 उद्योग को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा ऋण की यौगिक (कंपाउंड) वार्षिक वृद्धि जिसमें 1980 के दशक में 17.4 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई, 1990 के दशक में कम होकर लगभग 15.4 प्रतिशत रह गई। चालू दशक में उद्योग को ऋण 2003-04 तक मामूली गति से बढ़ा, परंतु 2004-05 में तेजी से बढ़कर 33.5 प्रतिशत हो गया और 2006-07 में 31.0 प्रतिशत के उच्च स्तर पर रहा (देखें सारणी 6.1)।

6.65 1990 के दशक में उद्योग को बैंक ऋण में समग्र कमी 1990 के दशक के पूर्वार्ध में निधीयन के अन्य स्रोतों, विशेष रूप से शेयर बाजार पर बढ़ी हुई निर्भरता के कारण थी। तथापि, उद्योग को बैंक ऋण चालू दशक (2000-01 से 2005-06 तक) में तेजी से बढ़ा, भले ही कारपोरेट क्षेत्र ने बाह्य स्रोतों पर अपनी निर्भरता कम कर दी। आंतरिक स्रोतों का अंश जो 1985-86 से 1990-91 तक औसतन 34.1 था, 2001-02 से 2005-06 तक बढ़कर 56.1 प्रतिशत हो गया। बाह्य स्रोतों के अंतर्गत बैंक ऋण का अंश तेजी से बढ़ गया। अर्थव्यवस्था में विकास के चलते बड़ी कंपनियाँ देशी और अंतरराष्ट्रीय पूँजी बाजारों से संसाधन जुटाने की स्थिति में हैं। अतः यह स्वाभाविक है कि कंपनियाँ बैंकिंग क्षेत्र पर अपनी निर्भरता को कम करें। 1990 के दशक में देखी गई यह प्रवृत्ति चालू दशक में उलट गई (सारणी 6.8)।

6.66 कुल बैंक ऋण में उद्योग को ऋण का अंश कुछ वर्षों में कम हुआ। कुछ वर्षों में कुल जीडीपी में उद्योग के अंश में भी कमी आई। परिणामस्वरूप, उद्योग के ऋण की प्रधानता हाल के वर्षों में बढ़ी। ऋण की प्रधानता में बढ़ोतरी का एक कारण अपनी मध्यावधि से दीर्घावधि तक की आवश्यकताओं के निधीयन के लिए बैंकों पर कंपनियों की बढ़ी हुई निर्भरता थी । जीडीपी में औद्योगिक क्षेत्र के 22.0 प्रतिशत के अंश की तुलना में 1990-91 में कुल बैंक ऋण में औद्योगिक क्षेत्र का अंश 53.0 प्रतिशत रहा । फिर भी, मार्च 2007 की समाप्ति तक उद्योग को बैंक ऋण का अंश तेजी से घटकर 36.2 प्रतिशत हो गया जबकि जीडीपी में उसका अंश मामूली तौर पर घटकर 20 प्रतिशत रहा। फलस्वरूप, उद्योग की ऋण - प्रधानता (क्षेत्रीय जीडीपी के प्रतिशत के रूप में उद्योग को ऋण) 1990-91 के 55.7 प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 में 90.0 प्रतिशत हो गई (चार्ट VI.19)।

6.67 2000 के दशक के पूर्वार्ध में बैंकों के रूप में दो प्रमुख विकास वित्त संस्थाओं (डीएफआइ) के परिवर्तन के साथ ही बैंकों ने उद्योग (मूलभूत संरचना सहित) की मध्यावधि से दीर्घावधि की आवश्यकताओं के निधीयन को अधिकाधिक बढ़ाया (भा.रि.बैं.,2007ए)। तदनुसार, हाल के वर्षों में उद्योग को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा प्रदान किये गये दीर्घावधि ऋण का अनुपात मार्च 1995 के अंत में विद्यमान 11.6 प्रतिशत से तेजी से बढ़कर मार्च

**सारणी 6.8 : भारतीय कंपनियों की निधियों के स्रोतों का स्वरूप**

(प्रतिशत)

| मद | 1985-86 से 1990-91 | 1991-92 से 2000-01 | 1992-93 से 1996-97 | 1997-98 से 2000-01 | 2001-02 से 2005-06 |
|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 |
| **1. आंतरिक स्रोत** | **34.1** | **35.7** | **31.3** | **43.1** | **56.1** |
| **2. बाह्य स्रोत (क+ख +ग)** | **65.9** | **64.3** | **68.7** | **56.9** | **43.9** |
| क) इक्विटी पूँजी | 7.1 | 16.2 | 20.6 | 12.9 | 10.9 |
| ख) उधार | 36.2 | 32.2 | 33.3 | 28.6 | 13.8 |
| i) डिबेंचर | 10.3 | 6.2 | 5.2 | 6.1 | -2.9 |
| ii) बैंकों से | 12.7 | 10.0 | 10.7 | 9.4 | 21.5 |
| iii) वित्तीय संस्थाओं से | 8.4 | 9.5 | 8.3 | 9.8 | -5.1 |
| iv) अन्यों से* | 4.8 | 6.5 | 9.1 | 3.3 | 0.3 |
| ग) व्यापार देनदारियाँ एवं अन्य चालू देयताएँ | 22.6 | 15.9 | 14.8 | 15.4 | 19.2 |
| **कुल (1+2)** | **100** | **100** | **100** | **100** | **100** |

* : अन्यों में विदेशी संस्थागत एजेंसियों, सरकारी और अर्ध-सरकारी निकायों, कंपनियों से उधार, आस्थगित भुगतान और जनता की जमाराशियाँ शामिल हैं।

**टिप्पणी** : आंकड़े गैर-सरकारी वित्तेतर सार्वजनिक लिमिटेड कंपनियों से संबंधित हैं।

**स्रोत** : 1997-98 तक के आंकड़ों के लिए मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट 1998-99, भा.रि.बैं. तथा बाद के वर्षों के लिए 'सार्वजनिक लिमिटेड कंपनियों के वित्त' पर लेख, भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन (विभिन्न अंक)।

**चार्ट VI.19 : उद्योग की ऋण-प्रधानता**

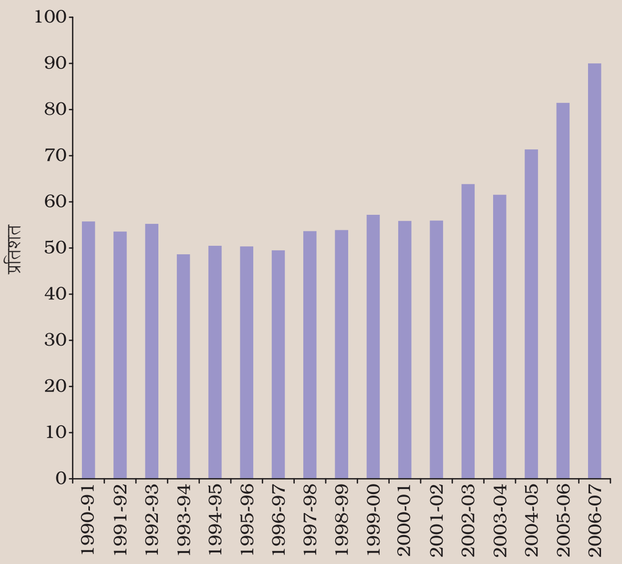


2007 के अंत तक 44.1 प्रतिशत हो गया (सारणी 6.9)। इसके परिणामस्वरूप, बैंकों द्वारा प्रदत्त कुल अल्पावधि ऋणों में से उद्योग को प्रदत्त अल्पावधि ऋणों का अंश 1995 और 2007 के बीच घट गया, जबकि मध्यावधि और दीर्घावधि ऋणों के अंश में बढ़ोतरी हुई (सारणी 6.10)।

6.68 निधीयन के वैकल्पिक स्रोतों के विकास के साथ ही, अपनी ऋण आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए वाणिज्य बैंकों पर उद्योग की निर्भरता कम हो गई है, जैसा कि पहले संकेत किया गया है । चयनित देशों का सर्वेक्षण यह दर्शाता है कि अध्ययन किये गये नमूने के अंतर्गत सभी देशों में 1991 से उद्योग को बैंक ऋण के अंश में कमी आई है,

**सारणी 6.9 : बैंकों द्वारा उद्योग को ऋण का प्रकार**

(राशि करोड़ रुपये में)

| मार्च के अंत में | अल्पावधि* | | मध्यावधि | | दीर्घावधि | | उद्योग को कुल ऋण |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | राशि | उद्योग को कुल ऋण में अंश का प्रतिशत | राशि | उद्योग को कुल ऋण में अंश का प्रतिशत | राशि | उद्योग को कुल ऋण में अंश का प्रतिशत | राशि |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 |
| 1995 | 77,134 | 82.5 | 5,438 | 5.8 | 10,874 | 11.6 | 93,446 |
| 1996 | 97,809 | 81.7 | 6,620 | 5.5 | 15,273 | 12.8 | 1,19,702 |
| 1997 | 1,09,666 | 79.6 | 8,136 | 5.9 | 19,988 | 14.5 | 1,37,790 |
| 1998 | 1,23,408 | 78.0 | 10,579 | 6.7 | 24,261 | 15.3 | 1,58,248 |
| 1999 | 1,36,487 | 76.1 | 10,660 | 5.9 | 32,151 | 17.9 | 1,79,298 |
| 2000 | 1,52,997 | 74.6 | 13,299 | 6.5 | 38,778 | 18.9 | 2,05,074 |
| 2001 | 1,70,114 | 74.8 | 16,067 | 7.1 | 41,341 | 18.2 | 2,27,522 |
| 2002 | 1,65,828 | 63.0 | 22,314 | 8.5 | 74,910 | 28.5 | 2,63,052 |
| 2003 | 1,79,687 | 59.5 | 22,366 | 7.4 | 99,853 | 33.1 | 3,01,907 |
| 2004 | 1,89,917 | 57.9 | 32,188 | 9.8 | 1,06,084 | 32.3 | 3,28,189 |
| 2005 | 2,29,672 | 52.4 | 46,535 | 10.6 | 1,62,296 | 37.0 | 4,38,503 |
| 2006 | 2,68,138 | 48.2 | 58,018 | 10.4 | 2,30,202 | 41.4 | 5,56,357 |
| 2007 | 3,36,958 | 46.1 | 71,865 | 9.8 | 3,22,335 | 44.1 | 7,31,157 |

***** : अल्पावधि ऋण में नकदी ऋण, ओवरड्राफ्ट, माँग ऋण, पैकिंग ऋण, खरीदे और भुनाये गये निर्यात व्यापार बिल, निर्यात नकद प्रोत्साहनों और शुल्क-वापसी दावों के आधार पर दिये गये निर्यात व्यापार बिल और अग्रिम, खरीदे और भुनाये गये देशी बिल (व्यापार और अन्य), आयात बिलों की जमानत पर अग्रिम तथा खरीदे गये विदेशी मुद्रा चेक/यात्री चेक (टीसी)/माँग ड्राफ्ट (डीडी)/तार अंतरण (टीटी)/डाक अंतरण (एमटी) शामिल हैं।

**स्रोत:** भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूल सांख्यिकीय विवरणियाँ, विभिन्न अंक, भारतीय रिज़र्व बैंक।

**सारणी 6.10 : कुल ऋण में उद्योग को ऋण का अंश - घटक-वार**

(राशि करोड़ रुपये में)

| मार्च के अंत में | उद्योग को अल्पावधि ऋण | | उद्योग को मध्यावधि ऋण | | उद्योग को दीर्घावधि ऋण | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | राशि | कुल अल्पावधि ऋणों में अंश (प्रतिशत) | राशि | कुल मध्यावधि ऋणों में अंश (प्रतिशत) | राशि | कुल दीर्घावधि ऋणों में अंश (प्रतिशत) |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| 1997 | 1,09,666 | 64.6 | 8,136 | 32.4 | 19,988 | 38.5 |
| 1998 | 1,23,408 | 63.3 | 10,578 | 32.8 | 24,261 | 39.3 |
| 1999 | 1,36,487 | 66.0 | 10,660 | 40.1 | 32,151 | 52.8 |
| 2000 | 1,52,997 | 61.4 | 13,299 | 44.5 | 38,778 | 49.6 |
| 2001 | 1,70,114 | 57.1 | 16,067 | 42.9 | 41,341 | 42.8 |
| 2002 | 1,65,828 | 51.1 | 22,314 | 42.5 | 74,910 | 48.9 |
| 2003 | 1,79,687 | 52.0 | 22,366 | 39.7 | 99,853 | 47.7 |
| 2004 | 1,89,917 | 51.1 | 32,188 | 41.0 | 1,06,084 | 39.7 |
| 2005 | 2,29,672 | 53.6 | 46,535 | 37.8 | 1,62,296 | 40.5 |
| 2006 | 2,68,138 | 51.5 | 58,018 | 36.6 | 2,30,202 | 39.3 |
| 2007 | 3,36,958 | 51.5 | 71,865 | 34.1 | 3,22,335 | 40.1 |

**स्रोत :** भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूल सांख्यिकीय विवरणियाँ, विभिन्न अंक, भारतीय रिज़र्व बैंक

केवल थाईलैंड को छोड़कर जिसमें यह मामूली रूप से बढ़ गया है । यह उल्लेखनीय है कि 2007 में भारत में उद्योग को ऋण का अंश सभी देशों के बीच सबसे अधिक था (सारणी 6.11)। यह इस तथ्य के बावजूद था कि इन देशों में जीडीपी में औद्योगिक क्षेत्र का अंश उल्लेखनीय तौर पर भारत से अधिक था । यह इस बात का संकेत देता है कि कंपनियाँ अन्य देशों की तुलना में भारत में अभी भी बैंकिंग क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भर हैं। यदि गैर-पारंपरिक निवेशों (शेयरों/डिबेंचरों में निवेश) के रूप में उद्योग को बैंकों के समर्थन को भी हिसाब में लिया जाता है तो यह निर्भरता और बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए 1990 के दशक के उत्तरार्ध में वाणिज्यिक पत्रों, कारपोरेट बांडों, शेयरों की लिखतों में बैंकों का निवेश बढ़ा, यद्यपि ऐसे निवेशों में 2000-01 से आगे कुछ गिरावट आई।

6.69 विभिन्न देशों में किये गये एक सर्वेक्षण से यह विदित हुआ कि भारत में उद्योग की ऋण - प्रधानता (औद्योगिक जीडीपी की तुलना में औद्योगिक ऋण का अनुपात) अध्ययन किये गये चयनित देशों के बीच सबसे अधिक थी। अन्य अधिकांश देशों के साथ तुलना में भी भारत में उद्योग की ऋण - प्रधानता हाल के वर्षों में उल्लेखनीय रूप में बढ़ी (सारणी 6.12)।

## लघु और मझौले उद्यमों (एसएमई) को बैंक उधार

6.70 एसएमई अपनी वृद्धि संभावना, रोजगार उत्पादन क्षमता, निर्यात उत्पादन तथा नई उद्यमवृत्ति के लिए बीजभूमि के रूप में अपनी भूमिका के कारण भारत में औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों का एक महत्वपूर्ण खंड बनते हैं। भारतीय आर्थिक विकास में एसएमई का अंशदान अपरिमित रहा है। अर्थव्यवस्था में उनका अंश कुल योजित मूल्य (वैल्यू ऐडेड) के 40 प्रतिशत से भी अधिक था। यह ध्यान देने योग्य है कि कुल निर्यातों का लगभग 33 प्रतिशत लघु उद्योगों (एसएसआइ) द्वारा उत्पन्न होता है।

6.71 लघु उद्योग क्षेत्र का विकास भारत की औद्योगिक नीति का एक महत्वपूर्ण आधार-स्तंभ रहा है । भारत में लघु उद्योगों को एक सुस्पष्ट पहचान प्रदान की गई है तथा संतुलित और धारणीय आर्थिक वृद्धि में इसकी अत्यावश्यक भूमिका के कारण इस क्षेत्र को सरकार ने उच्च प्राथमिकता दी है । बड़े निगमों की अपेक्षा एसएमई विशिष्ट रूप से सूचनात्मक तौर पर काफी अधिक अपारदर्शी हैं क्योंकि नियमित रूप से विश्वसनीय वित्तीय सूचना प्राप्त करने के लिए उनके पास प्रायः प्रमाणित लेखा-परीक्षित वित्तीय विवरण नहीं होते। इसके अलावा, इन फर्मों के पास सामान्यतः सार्वजनिक तौर पर व्यापारित शेयर अथवा ऋण नहीं होते जिससे उनकी गुणवत्ता का

**सारणी 6.11 : उद्योग को वाणिज्य बैंक उधार : विभिन्न देशों का सर्वेक्षण (कुल बैंक ऋण में अंश)**

(प्रतिशत)

| देश | 1991 | 1995 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 | 2007 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 |
| आस्ट्रेलिया | .. | 20.0 | 18.5 | 17.5 | 17.3 | 16.4 | 15.4 | 15.2 | 14.7 | 13.1 |
| ब्राजील | 20.9 | 23.8 | 26.2 | 29.4 | 30.2 | 27.9 | 25.0 | 22.9 | 22.5 | 22.4 |
| जर्मनी | .. | 34.0 | 15.5 | 13.9 | 11.5 | 10.3 | 8.8 | 7.7 | 7.2 | 6.9 |
| **भारत** | **47.6** | **45.6** | **46.5** | **43.9** | **41.4** | **41.0** | **38.0** | **38.8** | **37.4** | **38.1** |
| इंडोनेशिया | 36.5 | 38.6 | 44.7 | 42.9 | 37.4 | 32.1 | 30.9 | 29.6 | 29.1 | 27.4 |
| मलेशिया | .. | 31.4 | 29.8 | 28.9 | 26.9 | 25.6 | 23.4 | 19.8 | 16.9 | .. |
| न्यूज़ीलैंड | 7.1 | 6.7 | 5.7 | 5.9 | 4.7 | 4.3 | 3.7 | 4.2 | 4.2 | 4.1 |
| थाईलैंड | 29.8 | 29.5 | 32.3 | 30.3 | 29.7 | 30.5 | 33.0 | 32.1 | 32.2 | 31.1 |
| युनाइटेड किंगडम | 13.1 | 10.3 | 7.1 | 6.6 | 5.6 | 4.5 | 4.1 | 4.3 | 4.0 | 3.9 |
| अमरीका | 27.1 | 25.3 | 27.6 | 25.2 | 21.9 | 19.6 | 18.5 | 18.9 | 19.0 | 20.7 |

.. : उपलब्ध नहीं ।

**स्रोत :** 1. संबंधित देशों की केंद्रीय बैंक वेबसाइटें ।

2. भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूल सांख्यिकीय विवरणियाँ, विभिन्न अंक, भारतीय रिज़र्व बैंक ।

**सारणी 6.12 : औद्योगिक क्षेत्र की वाणिज्य बैंक ऋण प्रधानता* : चयनित देशों का सर्वेक्षण**

(प्रतिशत)

| देश | 1991 | 1995 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| आस्ट्रेलिया | .. | 23.9 | 30.2 | 28.2 | 27.0 | 26.2 | 24.9 | 25.0 | .. |
| ब्राजील | .. | 35.4 | 34.9 | 38.5 | 33.9 | 30.5 | 27.7 | 29.3 | 31.9 |
| जर्मनी | 23.4 | 16.1 | 15.2 | 14.8 | 13.5 | 12.5 | 11.0 | 9.9 | 9.7 |
| **भारत** | **55.7** | **50.4** | **57.1** | **55.8** | **55.9** | **63.8** | **61.5** | **70.7** | **81.4** |
| इंडोनेशिया | 40.8 | 47.6 | 18.8 | 16.7 | 16.4 | 16.0 | 16.7 | 15.7 | 14.6 |
| मलेशिया | .. | 65.5 | 50.8 | 56.8 | 51.7 | 45.2 | 36.8 | 35.1 | 32.9 |
| न्यूजीलैंड | 25.1 | 27.1 | 29.9 | 32.4 | 26.2 | .. | .. | .. | .. |
| थाईलैंड | 55.4 | 68.8 | 70.7 | 59.8 | 59.0 | 56.8 | 61.2 | 58.4 | 54.4 |
| युनाइटेड किंगडम | 35.9 | 26.4 | 31.2 | 31.0 | 28.7 | 25.0 | 24.1 | 26.8 | 26.2 |
| अमरीका | 38.0 | 36.9 | 47.9 | 45.4 | 42.0 | 38.9 | 37.8 | 38.7 | .. |

* : ऋण की प्रधानता औद्योगिक जीडीपी के प्रतिशत के रू प में उद्योग को ऋण के रू प में परिभाषित है । .. : उपलब्ध नहीं।

**स्रोत:** 1. विश्व विकास संकेतक ऑनलाइन डाटाबेस ।

2. भारतीय अर्थव्यवस्था संबंधी सांख्यिकी की पुस्तिका, 2006-07 ।

संकेत करनेवाली बाजार की कीमतें अथवा सार्वजनिक रेटिंग उपलब्ध नहीं हो सकते (बर्जर और फ्रेम, 2005)। आधुनिक विकास के सिद्धांत वित्त के पास अपर्याप्त पहुँच की मुख्य भूमिका पर अधिकाधिक जोर देते हैं जो इन फर्मों की धीमी वृद्धि का प्रेरक है (विश्व बैंक, 2008)। लघु उद्योग क्षेत्र जिन प्रमुख समस्याओं का सामना कर रहा है, वे अन्य बातों के साथ-साथ, समर्थक जमानत के बिना ऋणों की अनुपलब्धता, ऋण प्राप्त करने में विलंब, निधियों की उच्च लागत, विलंबित भुगतान, विपणन की समस्याओं और रुग्णता से संबंधित हैं । अतः एसएमई क्षेत्र को उधार के लिए कई देशों में कुछ विशिष्ट प्रकार की संस्थाओं की आवश्यकता हुई ।

6.72 भारत में अर्थव्यवस्था के व्यापक हित में कुछ क्षेत्रों को ऋण के प्रवाह को सरणीबद्ध करने की आवश्यकता का निरूपण बहुत पहले ही वर्ष 1967-68 के लिए रिजर्व बैंक की ऋण नीति में देखा जा सकता है । उसके बाद 1969 में प्रमुख बैंकों के राष्ट्रीयकरण ने उधार की प्राथमिकताओं को पुनः परिभाषित करने की आवश्यकता का संकेत किया था। इस प्रकार, अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण क्षेत्रों को परिवर्धित परिमाण में तथा राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुसार बैंकिंग प्रणाली से सहायता सुनिश्चित करने के लिए प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र को उधार की संकल्पना का विकास हुआ (भा.रि.बैं.,2007बी)। 'प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र' हेतु बैंकों के लिए निर्धारित 40 प्रतिशत के अधिदेशात्मक लक्ष्य में लघु उद्योग (एसएसआइ) क्षेत्र को भी शामिल किया गया ।

6.73 हाल के वर्षों में लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण के प्रवाह के संबंध में कई व्याकुल कर देनेवाले लक्षण रहे हैं जैसा कि विभिन्न संकेतकों से स्पष्ट है। पहला, लघु उद्योग क्षेत्र को अग्रिमों की औसत वार्षिक वृद्धि 1990 के दशक के 13.1 प्रतिशत से घटकर 2000-2005 के दौरान 7.2 प्रतिशत रह गई। उक्त वृद्धि दर बढ़कर 2005-06 में 22.3 प्रतिशत और 2006-07 में 29.2 प्रतिशत हो गई। उद्योग को ऋण के अंतर्गत लघु उद्योग क्षेत्र के अंश में उल्लेखनीय रूप में कमी आई, जो स्वयं भी घट गया। इसके परिणामस्वरूप, कुल ऋण में लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण का अंश तेजी से कम हो गया (सारणी 6.13)। दूसरा, कुल प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र अग्रिमों में लघु उद्योग क्षेत्र का अंश मार्च 1998 की समाप्ति पर स्थित 43.7 प्रतिशत से लगातार कम हुआ तथा वह मार्च 2006 के अंत में 17.9 प्रतिशत रह गया। मार्च 2007 के अंत तक यह मामूली रूप में सुधारकर 18.6 प्रतिशत हो गया। यद्यपि कुल प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र अग्रिमों में लघु उद्योग क्षेत्र के अंश में गिरावट सभी बैंक समूहों में थी, तथापि वह निजी क्षेत्र के बैंकों के मामले में अधिक तेज थी; जो मार्च 1996 के अंत के 55.4 प्रतिशत से मार्च 2000 के अंत में 43.6 प्रतिशत और मार्च 2007 के अंत में 9.1 प्रतिशत रह गया। इसी अवधि के दौरान उक्त अंश सरकारी क्षेत्र के बैंकों के लिए क्रमशः 42.4 प्रतिशत, 36.1 प्रतिशत और 20.1 प्रतिशत था। प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के दायरे (डोमेन) में नये क्षेत्रों का समावेश कुल प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र उधार में लघु उद्योग क्षेत्र के अंश में तीव्र पतन का एक कारण हो सकता है। तीसरा, खाद्येतर बैंक ऋण में लघु उद्योग क्षेत्र को दिये गये ऋण का अंश 1990-91 में विद्यमान 15.1 प्रतिशत से घटकर 2006-07 में 6.5 प्रतिशत रह गया । निवल बैंक ऋण के प्रतिशत के रूप में सरकारी क्षेत्र के बैंकों द्वारा दिये गये एसएसआइ अग्रिम मार्च 2006 की समाप्ति पर स्थित 8.1 प्रतिशत और मार्च 2005 की समाप्ति पर स्थित 9.5 प्रतिशत की तुलना में घटकर मार्च 2007 के अंत में 8.0 प्रतिशत रहे। निजी क्षेत्र के बैंकों के मामले में इसी अवधि के दौरान इनका प्रतिशत क्रमशः 4.2 प्रतिशत और 5.4 प्रतिशत से घटकर 3.9 प्रतिशत रह गया। चौथा, हालांकि लघु उद्योग क्षेत्र में ऋण की वृद्धि में 2004-05 से 2006-07 तक गति आई, फिर भी कुल खाद्येतर सकल बैंक ऋण में तथा औद्योगिक क्षेत्र को कुल ऋण में एसएसआइ ऋण का अंश लगभग स्थिर रहा (चार्ट VI.20)। पाँचवाँ, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के पास लघु उद्योग क्षेत्र के ऋण खातों की संख्या मार्च 1992 के अंत के 5.8 मिलियन से घटकर मार्च 2006 के अंत में 2.2 मिलियन तथा आगे और घटकर मार्च 2007 के अंत में 1.9 मिलियन हो गई।

**सारणी 6.13 : उद्योग और लघु उद्योग क्षेत्र को बैंक ऋण***

| वर्ष | वृद्धि दर (प्रतिशत) | | | कुल खाद्येतर बैंक ऋण में अंश | | उद्योग को कुल ऋण में लघु उद्योगों को ऋण का अंश (प्रतिशत) |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | कुल खाद्येतर बैंक ऋण | उद्योग को ऋण | लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण | उद्योग को ऋण | लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| 1991 | 12.8 | 14.7 | 10.5 | 54.3 | 15.1 | 27.9 |
| 1992 | 6.9 | 5.8 | 5.6 | 53.8 | 15.0 | 27.8 |
| 1993 | 15.7 | 20.6 | 10.3 | 56.0 | 14.3 | 25.5 |
| 1994 | 4.0 | 2.3 | 12.9 | 55.1 | 15.5 | 28.1 |
| 1995 | 26.6 | 27.1 | 22.2 | 55.4 | 15.0 | 27.0 |
| 1996 | 20.2 | 22.1 | 15.4 | 56.3 | 14.4 | 25.5 |
| 1997 | 13.2 | 10.9 | 12.7 | 55.1 | 14.3 | 25.9 |
| 1998 | 14.5 | 16.2 | 21.0 | 56.0 | 15.1 | 27.0 |
| 1999 | 13.0 | 11.2 | 11.4 | 55.0 | 14.9 | 27.1 |
| 2000 | 15.4 | 11.8 | 8.9 | 53.4 | 14.1 | 26.4 |
| 2001 | 14.4 | 9.3 | 6.0 | 51.0 | 13.0 | 25.6 |
| 2002 | 12.5 | 4.9 | 2.1 | 47.5 | 11.8 | 24.9 |
| 2003 | 28.4 | 28.8 | 5.6 | 47.7 | 9.7 | 20.4 |
| 2004 | 17.5 | 5.9 | 9.0 | 43.0 | 9.0 | 21.0 |
| 2005 | 37.3 | 36.4 | 13.3 | 42.7 | 7.5 | 17.5 |
| 2006 | 40.5 | 28.9 | 22.3 | 39.2 | 6.5 | 16.6 |
| 2007 | 28.2 | 26.7 | 29.2 | 38.7 | 6.5 | 16.9 |

* : संबंधित वर्षों में मार्च के अंत में यथाविद्यमान आंकड़ों के आधार पर।
**स्रोत :** भारतीय अर्थव्यवस्था संबंधी सांख्यिकी की पुस्तिका, 2006-07।

6.74 लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण के अवमंदन का मुख्य कारण उसका खराब कार्यनिष्पादन और परिणामस्वरूप बैंकों द्वारा जोखिम से विमुखता थी। उत्पादन के मूल्य में 1980 के दशक के 11.1 प्रतिशत की तुलना में 7.7 प्रतिशत की औसत वार्षिक दर से वृद्धि के चलते 1997-98 और 2002-03 के बीच लघु उद्योग क्षेत्र की गतिविधि में उल्लेखनीय रूप में मंदी आई। लघु उद्योग क्षेत्र का खराब कार्यनिष्पादन इस क्षेत्र में अनर्जक आस्तियों (एनपीए) के उल्लेखनीय रूप में उच्चतर स्तर में भी प्रतिबिंबित हुआ (सारणी 6.14)। अतः बैंक जोखिम के प्रति कुछ विमुख हो गये और उन्होंने लघु उद्योग क्षेत्र को अपना एक्सपोजर कम कर दिया (भा.रि.बैं.,2007ए)।

**चार्ट VI.20 : लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण में विद्यमान प्रवृत्तियाँ**

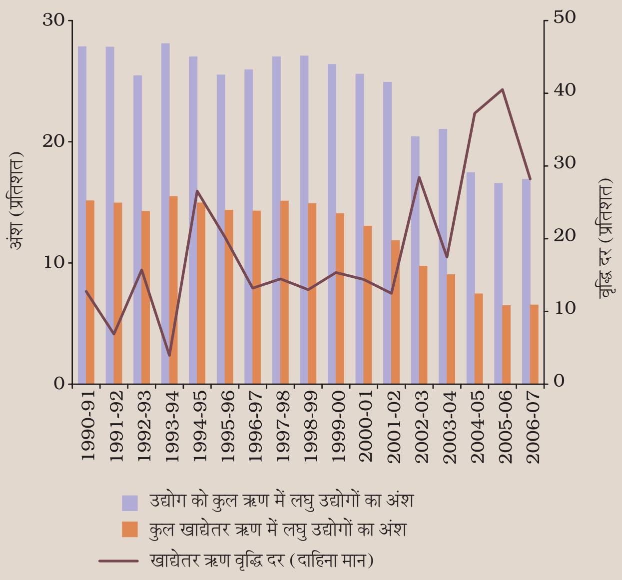


6.75 हाल के वर्षों में (2003-04 से 2006-07 तक) लघु उद्योग क्षेत्र के कार्यनिष्पादन में सुधार आया है। तदनुसार, लघु उद्योग क्षेत्र में अनर्जक आस्तियों (एनपीए) में भी उल्लेखनीय रूप में कमी आई । यह 2004-07 की अवधि के दौरान लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण के सुधारित प्रवाह में प्रतिबिंबित हुई। इसके परिणामस्वरूप, लघु उद्योग क्षेत्र की ऋण - प्रधानता में 1997-98 और 2004-05 के बीच प्रायः बराबर गिरावट होने के बाद 2005-06 और 2006-07 में कुछ सुधार आया (चार्ट VI.21)। लघु उद्योग क्षेत्र को उधार कुछ सीमा तक सही चित्र प्रस्तुत नहीं करता,

**सारणी 6.14 : लघु उद्योग क्षेत्र में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की सकल अनर्जक आस्तियां (एनपीए)***

(प्रतिशत)

| मार्च के अंत में | लघु उद्योग क्षेत्र* | सभी क्षेत्र** |
|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 |
| 2002 | 21.1 | 10.4 |
| 2003 | 18.9 | 8.8 |
| 2004 | 15.3 | 7.2 |
| 2005 | 11.8 | 5.2 |
| 2006 | 8.5 | 3.3 |
| 2007 | 5.5 | 2.5 |

* : लघु उद्योग क्षेत्र को सकल अग्रिमों के प्रतिशत के रूप में लघु उद्योग क्षेत्र में सकल एनपीए ।
**: सभी क्षेत्रों को सकल अग्रिमों के प्रतिशत के रूप में सकल एनपीए ।
**स्रोत :** अप्रत्यक्ष (ऑफ-साइट) विवरणियाँ, भारतीय रिज़र्व बैंक ।

**चार्ट VI.21 : लघु उद्योग क्षेत्र की ऋण-प्रधानता**

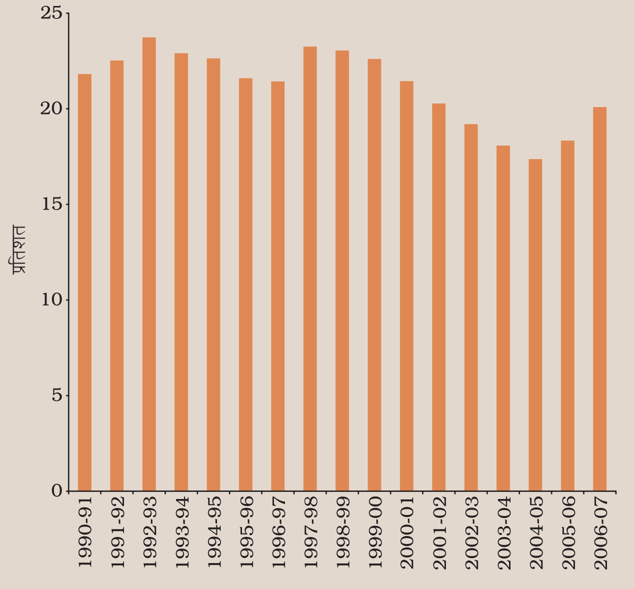


**चार्ट VI.22 : उद्योग को ऋण में एसएमई को ऋण का अंश : बैंक समूह-वार (मार्च के अंत में)**

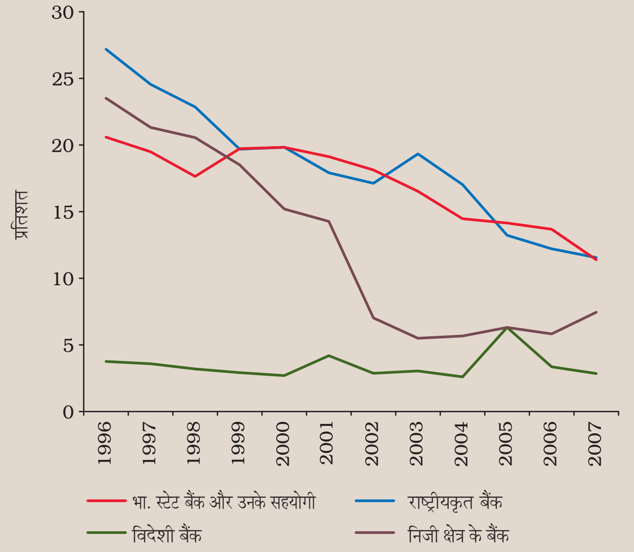


क्योंकि ऐसा प्रतीत होता है कि अलग-अलग बैंकों ने लघु उद्योग क्षेत्र की अलग-अलग परिभाषाओं का अनुसरण किया है। लघु और मझौले उद्यमों की परिभाषा अब सुस्पष्ट रूप से व्यष्टि, लघु और मझौले उद्यम विकास अधिनियम, 2006 में निर्धारित की गई है । अतः यह प्रत्याशित है कि लघु और मझौले उद्यम (एसएमई) क्षेत्र को ऋण के संबंध में आंकड़ों की सूचना देने में और ऋण के उचित निर्धारण में सुधार होगा ।

6.76 एसएमई को बैंक समूह-वार ऋण के विश्लेषण से यह विदित हुआ कि सभी बैंक-समूहों से ऋण के संवितरण ने उद्योग को ऋण के प्रतिशत और कुल ऋण में प्रतिशत दोनों ही रूप में 1996-2007 की अवधि के दौरान तीव्र गिरावट महसूस की (सारणी 6.15 और चार्ट VI.22)। उद्योग

**सारणी 6.15 : कुल ऋण में छोटे और मझौले उद्यमों (एसएमई) को ऋण का अंश (बैंक समूह-वार)**

(प्रतिशत)

| मार्च के अंत में | भारतीय स्टेट बैंक और उसके सहयोगी बैंक | राष्ट्रीयकृत बैंक | विदेशी बैंक | निजी बैंक |
|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 |
| 1996 | 10.5 | 12.6 | 2.4 | 9.8 |
| 1997 | 10.4 | 11.6 | 2.4 | 9.5 |
| 1998 | 9.7 | 10.4 | 2.0 | 9.7 |
| 1999 | 10.6 | 9.1 | 1.9 | 9.2 |
| 2000 | 10.0 | 8.6 | 1.6 | 7.6 |
| 2001 | 9.1 | 7.4 | 2.4 | 6.5 |
| 2002 | 7.1 | 6.3 | 1.5 | 4.1 |
| 2003 | 6.3 | 7.1 | 1.4 | 3.3 |
| 2004 | 5.6 | 6.3 | 1.1 | 2.4 |
| 2005 | 5.8 | 5.4 | 2.8 | 2.2 |
| 2006 | 5.5 | 4.8 | 1.4 | 1.8 |
| 2007 | 5.0 | 4.6 | 1.2 | 2.3 |

**स्रोत :** भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूल सांख्यिकीय विवरणियाँ, विभिन्न अंक, भारतीय रिज़र्व बैंक ।

को ऋण में एसएमई क्षेत्र का अंश, जो मार्च 1997 के अंत में 25.9 प्रतिशत था, घटकर मार्च 2007 के अंत में 16.9 प्रतिशत रह गया। यह गिरावट कुल बैंक ऋण में एसएमई के अंश में अधिक तीव्र थी । यद्यपि इस गिरावट को सभी बैंक समूहों में देखा गया, तथापि यह निजी क्षेत्र के बैंकों के मामले में अधिक सुस्पष्ट थी । सभी बैंक समूहों में उद्योग को ऋण में एसएमई क्षेत्र का अंश विदेशी बैंक समूह के मामले में सबसे कम था (चार्ट VI.22)।

6.77 उद्योग को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋण में वृद्धि, जो 1980 के दशक की तुलना में 1990 के दशक में कम हुई थी, ने चालू दशक में गति पकड़ी। यह कुछ सीमा तक मध्यावधि और दीर्घावधि ऋणों के अंश में बढ़ोतरी के कारण थी। परिणामस्वरूप, उद्योग की ऋण - प्रधानता हाल के वर्षों में उल्लेखनीय रूप में बढ़ी। समग्र बैंक ऋण में उद्योग के अंश में गिरावट के बावजूद उसने बैंकिंग क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भर रहना जारी रखा, जोकि अध्ययन किये गये चयनित देशों में पाई गई सर्वोच्च स्थितियों में से एक था। लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण में 1990 के दशक के उत्तरार्ध में और चालू दशक के प्रारंभिक वर्षों में तेजी से गिरावट हुई। लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण में वृद्धि विशेष रूप से 1999-2000 और 2003-04 के बीच कम थी। तथापि, रिज़र्व बैंक और सरकार के प्रयासों के फलस्वरूप लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण की वृद्धि 2004-05 से सुधरने लगी और 2006-07 के दौरान एक प्रबल गति से बढ़ी ।

### लघु और मझौले उद्यम (एसएमई) क्षेत्र को उधार संबंधी समस्याएँ और किये गये उपाय

6.78 उद्योग और अन्य क्षेत्रों को ऋण की तुलना में लघु और मझौले उद्यमों (एसएमई) को प्रदान किये गये संस्थागत ऋण में गिरावट हुई जैसा कि इस खंड में इसके पहले दर्शाये गये विश्लेषण द्वारा सिद्ध किया गया है।

आपूर्ति की ओर समस्या बैंकों की ओर से एसएमई को उधार देने के प्रति अनिच्छा रही है, केवल उन मामलों में प्रतिभूतियों की जमानत अथवा संयंत्र और मशीनरी के दृष्टिबंधक के आधार पर ऋण दिया गया जो ऋण के मूल्य की तुलना में बेमेल थे। फिक्की (एफआइसीसीआइ) के एक सर्वेक्षण (2004) के अनुसार अन्य अवरोधों में शामिल हैं, ऋण के अनुमोदन, स्वीकृति और संवितरण में विलंब, सूचना और पारदर्शिता का अभाव, बैंक के मुख्यालय में प्राधिकार का केंद्रीकरण तथा अपर्याप्त संपार्श्विक जमानत के मानदंड। ये समस्याएँ खाद्येतर बैंक ऋण में एसएमई के अंश में प्रतिबिंबित हुईं जिसमें मार्च 1991 के अंत में स्थित 15.1 प्रतिशत की तुलना में गिरावट हुई और वह मार्च 2007 की समाप्ति पर 6.5 प्रतिशत रहा। एसएमई ने ऐतिहासिक रूप से ऋण-योग्य परियोजनाओं के निधीयन तक पहुँचने में उल्लेखनीय कठिनाइयों का सामना किया। संभावित ऋणदाताओं द्वारा की गई एक सामान्य शिकायत थी उनके बारे में विश्वसनीय सूचना का अभाव (बॉक्स VI.7)।

6.79 लघु और मझौले उद्यम (एसएमई) सामान्यतः स्वामित्व प्रतिष्ठान हैं और संभवतः इस कारण से भी एसएमई को संस्थागत ऋण की सुचारु उपलब्धता में बाधा पहुँची है । 2001-02 में आयोजित लघु उद्योगों की तृतीय अखिल भारतीय गणना के अनुसार एसएमई के स्वामित्व में स्वामित्व प्रतिष्ठानों का अंश 1972-73 के लगभग 61.0 प्रतिशत से तेजी से बढ़कर 2001-02 में लगभग 95.8 हो गया । दूसरी ओर, भागीदारी प्रतिष्ठानों का अंश 1972-73 के 35.0 प्रतिशत से घटकर 2001-02 में लगभग 1.9 प्रतिशत रह गया (सारणी 6.16)। स्वामित्व प्रतिष्ठानों के पास सीमित ऋण इतिहास अथवा केवल अपने मालिकों का ऋण इतिहास रहता है जिसके आधार पर बैंक उधार देने के संबंध में अपने निर्णय तय करते हैं। अतः यह प्रतीत होता है कि स्वामित्व के स्वरूप में परिवर्तन ने एसएमई द्वारा ऋण तक पहुँच को भी प्रभावित किया है।

6.80 सुधारों के बाद की अवधि के दौरान अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के लिए ब्याज-दरों में हुई सामान्य कमी के अनुरूप एसएमई क्षेत्र के लिए निधियों की लागत भी नीचे आई। आधारभूत (बेंचमार्क) मूल उधार दर और विभिन्न क्षेत्रों के लिए लागू की गई ब्याज-दरों ने वर्षों से एकस्थ (कन्वर्ज) होने की प्रवृत्ति दर्शाई (चार्ट VI.23)। तथापि, बड़ी कंपनियाँ बैंकों के साथ अनुकूलतम (फाइन) ब्याज-दरों के लिए सौदा कर सकती हैं और अपनी समग्र ब्याज लागतों को नीचे ला सकती हैं । इसके अलावा, बड़ी कंपनियों के पास निधियों के लिए देशी और अंतरराष्ट्रीय पूँजी बाजारों के पास पहुँचने का विकल्प है। अतः समायोजन का भार एसएमई के पास आ गया है जिनके पास निधियों तक सीमित पहुँच है। यह आवश्यक नहीं कि एसएमई द्वारा अदा की गई उच्च ब्याज दरें सदैव उनकी जोखिम पृष्ठभूमि के अनुसार हों (मोहन, 2004)। यह ध्यान देने योग्य है कि हाल के वर्षों में एसएमई क्षेत्र को लागू ब्याज दरों में गिरावट रही है। यह संभवतः इस क्षेत्र में बैंकों द्वारा की गई नीतिगत पहलों के और बेहतर मूल्यांकन के कारण है ।

6.81 एसएमई क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता में सुधार लाने में प्रमुख समस्या लघु उद्यमों के संबंध में अपनी ऋण निर्धारण क्षमताओं को सुधारने

**बॉक्स VI.7**
**लघु और मझौले उद्यमों (एसएमई) को ऋण प्रदान करने में बैंकिंग क्षेत्र द्वारा अनुभव की गई कठिनाइयाँ**

एसएमई को ऋण प्रदान करने में बैंकों द्वारा अनुभव की गई कठिनाइयाँ मुख्य रूप से सूचनात्मक अपारदर्शिता और ऋण के इतिहास के अभाव से उत्पन्न होती हैं। बड़े निगमों के असमान, छोटे कारोबार विशिष्ट रूप से सूचनात्मक तौर पर अधिक अपारदर्शी होते हैं क्योंकि प्रायः उनके पास एक नियमित आधार पर विश्वसनीय वित्तीय सूचना प्राप्त करने के लिए प्रमाणित लेखा-परीक्षित वित्तीय विवरण नहीं होते। इन फर्मों के पास सामान्यतः सार्वजनिक तौर पर व्यापारित शेयर या ऋण भी नहीं होते ताकि बाजार की कीमतें अथवा सार्वजनिक रेटिंग प्राप्त किये जा सकें जिनसे उनकी गुणवत्ता का संकेत मिल सके।

लघु क्षेत्र से संबद्ध उच्च जोखिम-बोध कई तत्वों, जैसे कमजोर वित्तीय सुदृढ़ता, पर्याप्त संपार्श्विक (कॉलेटरल) प्रस्तुत करने में असमर्थता और अन्य कारकों से उत्पन्न होता है । बैंकरों द्वारा नई परियोजनाओं, नई फर्मों और नई गतिविधियों का उचित रूप से मूल्यांकन करने में असमर्थता के परिणामस्वरूप प्रायः बैंक छोटे उधारकर्ता से बचते हैं । काफी हद तक, चूँकि बैंक एसएमई क्षेत्र के उधारकर्ता के बारे में वास्तविक या संभावित जोखिमों का निर्धारण करने में असमर्थ हैं, अतः इस बात की संभावना है कि बैंक उधारकर्ता के बारे में गलत धारणा बनाते हैं।

छोटी परियोजनाओं की व्यावसायिक संभावनाओं एवं छोटे उधारकर्ताओं की वित्तीय स्थिति के बारे में विषम सूचना इसलिए उत्पन्न होती है क्योंकि छोटे उधारकर्ताओं के पास सामान्यतः सुप्रलेखित ऋण इतिहास नहीं होता। विषम सूचना और उच्च जोखिम-बोध के परिणामस्वरूप, बैंक लघु क्षेत्र के उधारकर्ताओं के साथ कार्य करते समय नकदी प्रवाह के विश्लेषण की अपेक्षा संपार्श्विक (कॉलेटरल)-आधारित उधार पर अत्यधिक निर्भर होते हैं । यद्यपि एक अवसीमा है जहाँ तक बैंकरों को कॉलेटरल पर जोर नहीं देना चाहिए, वे कॉलेटरल-रहित उधार से संबद्ध जोखिम को बहुत कम स्वीकार करते हैं । रिजर्व बैंक द्वारा किये गये सर्वेक्षणों से यह विदित हुआ है कि कई बैंक शाखाओं ने 5 लाख रुपये तक के ऋणों के लिए भी कॉलेटरल पर जोर दिया है।

नैतिक संकट की समस्याएँ इस संभावना से जुड़ी हुई हैं कि लघु क्षेत्र में निधियों का विपथन वैकल्पिक परियोजनाओं में किया जाता है अथवा वे अत्यधिक जोखिम उठाने की प्रवृत्ति विकसित करते हैं । साथ ही, प्रत्येक ऋण की अल्प राशियों के कारण सूचना संग्रहण, उचित सावधानी, ऋण प्रसंस्करण और निगरानी की कुल लागतें बड़े कारपोरेट उधारकर्ताओं को दिये जानेवाले ऋणों की कुल लागतों से बहुत अधिक हैं। अतः वित्तीय संस्थाएँ सूचना संग्रहण, बाह्य वित्तीयन की अल्पतर मात्रा और अनुभूत बृहत्तर ऋण जोखिम की उच्चतर लागतों की क्षतिपूर्ति करने के लिए बड़ी कंपनियों के लिए लागू ब्यज-दरों की तुलना में लघु क्षेत्र को अपेक्षाकृत उच्चतर ब्याज-दरें लगाती हैं ।

एसएमई ऋण की कमजोर वृद्धि के लिए बैंकों द्वारा अक्सर बताये जानेवाले अन्य कारण हैं (i) अपंजीकृत उद्यमों की बड़ी संख्या जिनके लिए विभिन्न उधार और जोखिम प्रबंध तकनीकें, प्रक्रियाएँ और कुशलताएँ अपेक्षित हैं; (ii) चल संपत्ति के समनुदेशन और पंजीयन को विनियमित करने के लिए एक सुरक्षित लेनदेन कानून का अभाव; तथा (iii) संपत्ति के पंजीयन और प्रवर्तन संविदाओं के संबंध में कठिनाई और उच्च लागत ।

**सारणी 6.16 : लघु उद्योगों के स्वामित्व की संरचना**

(प्रतिशत)

| स्वामित्व की संरचना | लघु उद्योगों की प्रथम अखिल भारतीय गणना 1972-73 | लघु उद्योगों की द्वितीय अखिल भारतीय गणना 1987-88 | विनिर्माण उद्यम सर्वेक्षण 1994-95 | लघु उद्योगों की तृतीय अखिल भारतीय गणना 2001-02 |
|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 |
| स्वामित्व | 61.0 | 80.5 | 97.7 | 95.8 |
| भागीदारी | 35.0 | 16.8 | 1.9 | 1.9 |
| सहकारी | 0.7 | 0.3 | – | 0.1 |
| सीमित कंपनियाँ | 3.0 | 2.1 | – | 0.7 |
| अन्य | 0.3 | 0.3 | – | 1.4 |
| सूचना प्राप्त नहीं | – | – | 0.4 | 0.1 |
| **कुल** | **100** | **100** | **100** | **100** |

– : शून्य अथवा नगण्य ।

के लिए बैंकिंग संस्थाओं को समर्थ बनाने की है ताकि वे अच्छे और बुरे ऋण के बीच पर्याप्त रूप से अंतर कर सकें । लघु क्षेत्र को अवश्य उच्च जोखिम के समान नहीं मानना चाहिए । अतः इस क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता को सुगम बनाने के लिए उपाय करना आवश्यक माना गया । तदनुसार एसएमई को ऋण की कमी की समस्या का समाधान करने के लिए विभिन्न नीतिगत पहलें की गईं (बॉक्स VI.8)।

**चार्ट VI.23 : चयनित क्षेत्रों को ऋण पर भारित औसत ब्याज दरें और बीपीएलआर**

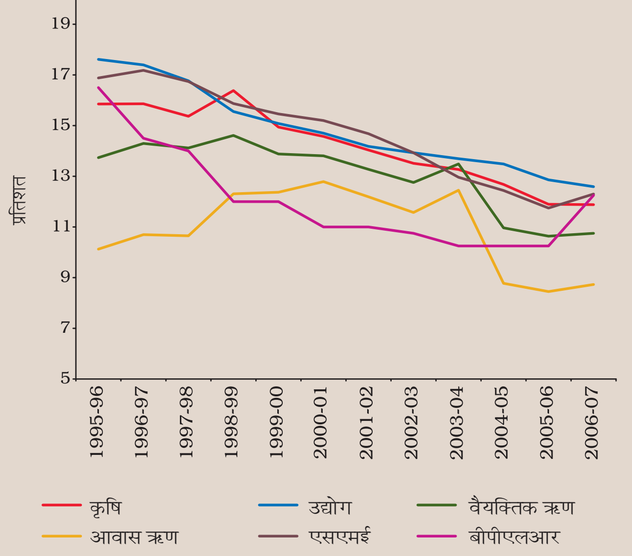


6.82 हाल की अवधि में एसएमई क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता में सुधार लाने के लिए भारत में बैंकों द्वारा कई पहलें की गई हैं (बॉक्स VI.9)

**बॉक्स VI.8**
**लघु और मझौले उद्यमों (एसएमई) को ऋण की उपलब्धता को सुधारने के लिए पहलें**

एसएमई क्षेत्र के महत्व को पहचानते हुए भारत सरकार और रिजर्व बैंक ने विभिन्न समितियों और कार्यदलों का गठन किया था यथा- नायक समिति (1992), कपूर समिति (1992), एस. पी. गुप्ता कार्यदल (2000), गांगुली समिति (2004) तथा मूर्ति कार्यदल (2005)। इन समितियों/कार्यदलों ने एसएमई क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता में सुधार लाने के लिए अनेक सिफारिशें की हैं । इन कार्यदलों की सिफारिशों के आधार पर कई नीतिगत कार्रवाइयाँ की गईं ।

2006 में संसद ने व्यष्टि, लघु और मझौले उद्यम विकास (एमएसएमईडी) अधिनियम, 2006 बनाया । यह अधिनियम भारत में एसएमई के लिए परिभाषा और ढांचा निर्धारित करता है । इस अधिनियम ने उन विकृतियों को दूर किया है जो छोटे व्यवसाय हेतु छोटा ही रहने तथा मापक्रम की अर्थव्यवस्थाओं का लाभ उठाते हुए एवं वृद्धि और रोजगार में अंशदान करते हुए मझौले आकार वाली फर्मों के रूप में अग्रसर न होने और क्रमिक विकास न करने के लिए तर्कविरुद्ध प्रोत्साहन निर्मित करती हैं ।

लघु उद्योगों के प्रति अधिमानी व्यवहार एवं सब्सिडीकृत ब्याज दरों पर लक्षित ऋण पर आधारित पिछले दृष्टिकोण को बदला जा रहा है । प्रवेश के लिए कृत्रिम अवरोध और विनियमित ऋण बाजार लघु उद्योगों के इष्टतम आकार और कौशल के लिए उपयुक्त नहीं हैं । प्रतियोगिता की भावना लाने तथा छोटी फर्मों को सुव्यवस्थित रूप में विकसित होने और मापक्रम के लाभ पाने के लिए प्रोत्साहन उपलब्ध कराने हेतु सरकार ने लघु उद्योगों के लिए आरक्षित उत्पादों की सूची में से अनेक मदों की छँटाई की है ।

ऋण संबंधी चूकों की समस्या को सुलझाने और संविदागत प्रवर्तन हेतु प्रचलित ढाँचे को मजबूत करने के लिए संसद ने वित्तीय आस्ति प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित प्रवर्तन (सरफेसी) अधिनियम, 2002 बनाया ।

चूंकि सूचना की विषमता से उत्पन्न होनेवाली लागत और जोखिम को कम करते हुए बेहतर सूचना एसएमई के लिए वित्तपोषण को सीधे बढ़ा सकती है, अतः संसद ने ऋण सूचना कंपनी (विनियमन) अधिनियम, 2005 भी बनाया । इस अधिनियम ने कानूनी तंत्र को मजबूत बनाया है। उक्त ऋण सूचना कंपनियाँ भी बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के उधारकर्ताओं के संबंध में ऋण सूचना का संग्रहण, प्रसंस्करण और विनिमय करने के लिए स्थापित की जा सकती हैं ।

एसएमई क्षेत्र में बीमार इकाइयों के पोषण के लिए एक ऋण पुनर्निर्धारण व्यवस्था तथा बैंकों की बहियों में 31 मार्च 2004 को यथाविद्यमान एसएमई खातों के लिए एक एकमुश्त निपटान (ओटीएस) योजना बनाई गई तथा इस संबंध में कार्यान्वयन के लिए क्रमशः सभी वाणिज्य बैंकों और सरकारी क्षेत्र के बैंकों को सूचित किया गया ।

रिजर्व बैंक ने एसएमई के वित्तपोषण तथा बीमार लघु उद्योग और एमएसई इकाइयों के पुनर्वास में प्रगति की समीक्षा करने एवं इस क्षेत्र को ऋण की सुचारु उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए यदि कोई अवरोध हों तो उन्हें दूर करने में अन्य बैंकों/ वित्तीय संस्थाओं और राज्य सरकारों के साथ समन्वय करने के लिए क्षेत्रीय कार्यालयों के स्तर पर अधिकार-प्राप्त समितियों का गठन किया है। ये क्षेत्रीय स्तर की समितियाँ समूह (क्लस्टर)/जिला स्तरों पर इसी प्रकार की समितियों के गठन की आवश्यकता तय कर सकती हैं ।

**बॉक्स VI.9**
**लघु और मझौले उद्यमों (एसएमई) को उधार - भारत में बैंकों द्वारा हाल में की गई पहलें - एक संक्षिप्त सर्वेक्षण**

भारतीय स्टेट बैंक ने अपनी परियोजना अपटेक के माध्यम से समूह वित्तपोषण का दृष्टिकोण अपनाया है जहाँ प्रक्रिया में सुधार के लिए एक ही प्रकार के उद्योग की इकाइयों की पहचान की जाती है । इसका अर्थ यह है कि नवोन्मेषों को अपनाने के लिए जो इकाइयाँ आगे आती हैं, वे ग्रेड बढ़ाने की लागतों के लिए वित्तीय सहायता प्राप्त करती हैं । आइसीआइसीआइ बैंक ने एसएमई क्षेत्र के लिए एक सरलीकृत ऋण उत्पाद, 25 लाख रुपये तक गैर-जमानती ऋण, प्रारंभ किया है । यह ऊँचे विचार और कम समर्थक जमानत रखनेवाले प्रवर्तकों के लिए एक आदर्श है । एसएमई अब बैंक की वेबसाइट के माध्यम से भी ऋण के लिए आवेदन कर सकते हैं । प्रक्रियाधीन एक और सेवा माध्यम सहभागियों के रूप में कानूनी और कराधान विशेषज्ञों को संबद्ध करना है जिनकी सेवाओं का उपयोग एसएमई कर सकते हैं ।

ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स (ओबीसी) एसएमई क्षेत्र के लिए एक विशेषीकृत कक्ष गठित करने की प्रक्रिया में है । इस क्षेत्र के लिए प्रसंस्करण करने और ऋण प्रदान करने के अलावा, उक्त कक्ष विपणन का कार्य और एसएमई के ग्राहकों के लिए ऋण मामलों का अनुवर्तन करेगा । ये कक्ष देश भर में सभी 29 ओबीसी क्षेत्रीय केंद्रों में स्थापित किये जाएँगे । स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक के पास स्टैंडर्ड चार्टर्ड इन्वेस्टमेंट एण्ड लोन्स लिमिटेड (एससीआइएलएल) नाम की एक अलग व्यावसायिक इकाई है जिसका परिचालन वर्तमान में 16 नगरों में किया जा रहा है । उक्त बैंक ने एससीआइएलएल के नेटवर्क को 60 नगरों में विस्तारित करने की रूपरेखा बनाई है । एचएसबीसी सारे देश में 16 नगरों में अपनी 21 शाखाओं द्वारा जन-बैंकिंग सेवा प्रदान कर रहा है । एचएसबीसी से ऋण प्राप्त करने के लिए अपेक्षित न्यूनतम आय का स्तर वेतनभोगी कर्मचारियों के लिए 3,500 रुपये प्रति माह और स्व-नियोजित व्यक्तियों के लिए 10,000 रुपये प्रति वर्ष मात्र है । यह समझा जा सकता है कि इस क्षेत्र के लिए जोखिम प्रबंध बैंकों के पास एक बड़ा मुद्दा है । क्रेडिट रेटिंग इन्फर्मेशन सर्विसेज़ ऑफ इंडिया लि. (क्रिसिल) ने एसएमई क्षेत्र के लिए रेटिंग सेवा उपलब्ध कराना प्रारंभ किया है । इस रेटिंग कार्यक्रम के अनुसार एसएमई को एक से आठ तक के मान पर रेटिंग निर्धारित किया जाएगा जिसमें मान एक उच्चतम साख की गुणवत्ता निर्दिष्ट करता है तथा मान आठ चूक की संभावनाएँ सूचित करता है । एसएमई को दिये गये रेटिंग उनके लिए स्वयं-सुधार के साधन के रूप में भी काम आएँगे । भारतीय स्टेट बैंक (एसबीआइ), आइसीआइसीआइ बैंक और स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक ने भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (सिडबी) के साथ मिलकर एसएमई खंड के लिए एक रेटिंग एजेंसी प्रारंभ की है । (उक्त रेटिंग एजेंसी नामक)भारतीय लघु और मझौले उद्यम रेटिंग एजेंसी (एसएमईआरए) अधिकांश रेटिंग एजेंसियों के असमान, जिनका मुख्य कार्य ऋण लिखतों का रेटिंग करना है, कंपनी की समग्र सुदृढ़ता का रेटिंग निर्धारित करेगी ।

**स्रोत :** एसएमई रेटिंग एजेंसी ऑफ इंडिया लि. एचटीटीपीः// डब्ल्यूडब्ल्यूडब्ल्यू. एसएमईआरए.आइन (http://www.smera.in) पर ।

6.83 बासेल II पूँजीगत मानदंडों को लागू करने के साथ ही, यह प्रश्न उठता है कि क्या बैंक अतीत से भिन्न रूप में व्यवहार करने की प्रवृत्ति दर्शाएँगे । साहित्य पर्याप्त रूप में यह संकेत करता है कि अंतरराष्ट्रीय तौर पर बैंकों ने पूँजीगत अनुपातों में परिवर्तन (बासेल I) के प्रति आस्तियों की कुल वृद्धि को कम करने के रूप में केवल छवि चमकानेवाले परिवर्तन करते हुए अथवा विनियामक प्रयोजनों के लिए मापी गई पूँजी और बैंक की वास्तविक आर्थिक पूँजी के बीच विद्यमान अंतरों से लाभ उठाते हुए प्रतिक्रिया दर्शाई । अनुभवसिद्ध अध्ययन भी इस तथ्य को रेखांकित करते हैं कि बैंकों ने विनियमों में परिवर्तन के प्रति अपनी प्रतिक्रिया अपने जोखिम एक्सपोज़र को कम करते हुए दर्शाई है। संभवतः यह अपने ऋणों की चुकौती करने की अनुमति देने के साथ ही, नए ऋण देने से इनकार करते हुए किया गया (नचाने और अन्य, 2001)। 1980 के दशक के अंतिम वर्षों में और 1990 के दशक में किये गये कुछ अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकलता है कि एसएमई क्षेत्र को ऋणों की आपूर्ति में विनियामक पूँजीगत अपेक्षाओं के कारण कमी आई (नचाने और अन्य, 2001)। बर्जर और उडेल (1994) तथा वाल और पीटरसन (1995) ने यह पाया कि 1990 के दशक के प्रारंभ में अमरीका में बैंकों ने अपने पूँजी अनुपात बढ़ाने के लिए औपचारिक विनियामक अधिदेश के अधीन अपने ऋण संविभागों को उल्लेखनीय रूप में कम कर दिया । तथापि, एसएमई क्षेत्र को उधार देने के संबंध में बासेल II मानदंडों का संभावित प्रभाव इस स्तर पर स्पष्ट नहीं है (बॉक्स VI.10)।

*एसएमई का वित्तपोषण - विभिन्न देशों के अनुभव*

6.84 विश्व भर में विभिन्न देशों में वित्तपोषण के प्रकारों और स्रोतों एवं उनके द्वारा अनुसरण किये जानेवाले नीतिगत दृष्टिकोणों के विश्लेषण से यह संकेत मिलता है कि एसएमई अपने परिचालनों का वित्तपोषण बड़े निगमों से बिलकुल अलग एक विशिष्ट प्रकार से करते हैं । अधिकांश उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में संगठित क्षेत्र से वित्तीय सहायता प्राप्त करने में एसएमई कठिन समस्याओं का सामना करते हैं । तथापि, विकसित और विकासशील दोनों प्रकार के देशों में एसएमई अभी तक अपने वित्तीयन की आवश्यकताओं के लिए बहुत हद तक बैंकिंग प्रणाली पर निर्भर होते हैं (बॉक्स VI.11)।

6.85 जबकि कई देश-स्तरीय और व्यष्टि-आर्थिक अध्ययनों ने आर्थिक विकास और औद्योगीकरण की प्रक्रिया में एसएमई के महत्व का मूल्यांकन किया है, विश्वसनीय विदेशी आंकड़ों के अभाव ने अब तक एक परिशुद्ध विदेशी विश्लेषण को अवरुद्ध किया है । फिर भी, फर्मों के विभिन्न सर्वेक्षणों ने अर्थात् 1990 के दशक में उप-सहारा अफ्रीका के लिए उद्यम विकास संबंधी क्षेत्रीय कार्यक्रम (आरपीईडी) के अध्ययन, संक्रमणशील अर्थव्यवस्थाओं के लिए व्यावसायिक परिवेश और उद्यम निष्पादन सर्वेक्षणों (बीईईपीएस), विश्व व्यापार परिवेश सर्वेक्षण (डब्ल्यूबीईएस 1999-2000) एवं विगत 10 वर्षों से निवेश वातावरण सर्वेक्षण (आइसीएस 2002) ने विभिन्न देशों में छोटी फर्मों और व्यष्टि-उद्यमों के संबंध में वित्तपोषण के ढाँचों और उनकी पहुँच में विद्यमान बाधाओं के बारे में

## बॉक्स VI.10
## बासेल II और एसएमई क्षेत्र को उधार - बैंकों का व्यवहार

चूँकि लघु उद्योग क्षेत्र की अधिकांश फर्में स्वामित्व वाली फर्में हैं और परिवार-आधारित प्रबंध द्वारा चलाई जाती हैं, अतः एसएमई के पास सामान्यतः कोई ऋण इतिहास नहीं होता या बहुत कम ऋण इतिहास होता है जिससे बैंकों के लिए सही तौर पर ऋण जोखिम का निर्धारण और रेटिंग करना कठिन हो जाता है । जिन बैंकों के पास अपने ग्राहकों के बारे में उत्तम सूचना रहती है वे उनके जोखिमों का अधिक सही तौर पर आकलन कर सकेंगे और तदनुसार पूँजी उपलब्ध करा सकेंगे । फिर भी, मूलभूत नियम वही रहेगा कि यदि बैंक जोखिम के प्रति विमुख हैं तो जोखिम जितनी अधिक होगी, उतनी ही कम उक्त क्षेत्र को उधार देने के लिए बैंकों की वरीयता होगी ।

बासेल II के अंतर्गत बैंकों के पास यह विकल्प होगा कि वे अपनी ऋण जोखिम (और इस प्रकार न्यूनतम पूँजीगत आवश्यकताओं) की गणना या तो एक मानकीकृत दृष्टिकोण अपनाकर या आंतरिक रेटिंग-आधारित (आइआरबी) दृष्टिकोण अपनाकर करें । विशेष रूप से एसएमई ऋणों के संबंध में बैंकों के पास यह विकल्प भी होगा कि वे अपने एसएमई एक्सपोजरों को फुटकर संविभाग के भाग के रूप में (कुछ शर्तों के अधीन) शामिल करें अथवा एक वाणिज्यिक संविभाग के अंतर्गत शामिल करें । इस बात के आधार पर कि किस विकल्प का चयन किया गया है, एसएमई एक्सपोज़रों से संबद्ध जोखिम भारिता भिन्न होगी तथा निहितार्थ द्वारा पूँजी की राशि जो बैंक के पास होनी चाहिए वह भी भिन्न होगी ।

एक सर्वेक्षण द्वारा यह सूचना मिली कि अपेक्षाकृत बड़े बैंक जो परिष्कृत जोखिम मापन की तकनीकें अपने पास रखने में समर्थ हैं, उनके पास न्यूनतम पूँजीगत अपेक्षाएँ कम होती हैं। इसके अलावा उक्त सर्वेक्षण में यह बताया गया कि एसएमई को उधार की आपूर्ति बढ़ाने और/या मार्जिनों में कमी करने (क्योंकि बैंक अधिक ध्यानपूर्वक ब्याज दरों को आर्थिक लागत के साथ पंक्तिबद्ध करते हैं) की गुंजाइश की संभावना हो सकती है । वे बैंक जो सफलतापूर्वक आइआरबी दृष्टिकोण को प्रयोग में लाते हैं, उन्हें अच्छी जोखिमों के अधिमूल्यन (ओवर-प्राइसिंग) और खराब जोखिमों के न्यूनमूल्यन (अंडर-प्राइसिंग) से बचने के लिए सैद्धांतिक रूप से बेहतर स्थिति में रखा जाना चाहिए । इसका परिणाम यह है कि इस कारण से उच्चतर जोखिम वाले एसएमई ऋणों का कुछ अंतरण उन बैंकों को हो सकता है जो आइआरबी दृष्टिकोण को नहीं अपनाते और जो निहितार्थ से जोखिम के कम परिष्कृत और अधिक मानकीकृत उपायों पर निर्भर होते हैं ।

फिर भी, जब तक बैंकों के उधार पर बासेल II के संभावित प्रभाव को समझने के लिए एक विस्तृत अध्ययन नहीं किया जाता, तब तक यह बताना कठिन होगा कि एसएमई क्षेत्र को उधार पर बासेल II मानदंडों का प्रभाव क्या होगा । यह आवश्यक है कि चूक की संभावना और पूँजी की राशि, जो आइआरबी दृष्टिकोण के अंतर्गत किसी बैंक को अवश्य धारण करनी चाहिए, के बीच संबंध स्थापित करने के लिए कार्य किया जाए । एक और संभावना यह है कि प्रमुख बैंक यह विचार करें कि वे एक्सपोज़र की सही जोखिम के अनुसार ऋणों का कीमत-निर्धारण कर रहे हैं । अतः जोखिम के प्रति विनियामक पूँजीगत अपेक्षाओं की कोई भी बढ़ाई गई संवेदनशीलता संभवतः चालू प्रक्रिया के साथ विनियामक परिवेश को पंक्तिबद्ध करने से अधिक कुछ नहीं करती ।

बासेल II के प्रारंभ को बैंकों द्वारा एसएमई (अथवा अन्य ग्राहक समूहों) को उधार देने के विषय में अड़चन के रूप में नहीं देखा जा रहा है और वास्तव में संभवतः चालू प्रक्रिया के अनुसमर्थन के रूप में देखा जा रहा है । एसएमई के छोटे आकार का अर्थ यह है कि सूचना की विषमता की समस्या संभवतः बाजार के इस खंड के लिए अधिक तीव्र हो सकती है । एसएमई बाजार में समर्थक जमानत (कॉलेटरल) का प्रयोग विशेष रूप से एक महत्वपूर्ण लक्षण है और इसलिए बड़े पैमाने पर एसएमई को ऋण की उपलब्धता में गिरावट की संभावना कभी नहीं होगी ।

भारतीय संदर्भ में अनेक समितियों की रिपोर्टों और अध्ययनों ने यह बताया है कि एसएमई बाजार के कुछ विशिष्ट खंड हैं जहाँ ऋण उपलब्ध कराने के लिए बैंक अनिच्छुक हैं । यह इसलिए है क्योंकि बैंक उन्हें अत्यधिक जोखिम वाले क्षेत्रों के रूप में देखते हैं । यह अवबोधन वास्तविक परिदृश्य में सही भी हो सकता है और गलत भी । नये बासेल II करार की पृष्ठभूमि में यह बताया गया है कि बैंक अपना व्यवहार बदल रहे हैं तथा अपने ग्राहकों की सापेक्ष जोखिमपूर्णता निर्धारित करने की ओर ध्यान अधिक केंद्रित कर रहे हैं । अपनी ग्राहक फर्मों की जोखिम का अनुमान लगाने के लिए बैंकों को पहले से अधिक सूचना की आवश्यकता है । जो एसएमई यह साबित कर सकते हैं कि वे स्थिर हैं, वे कम ब्याज दरों और ऋणों तक बेहतर पहुँच के साथ लाभान्वित हो सकते हैं ।

**संदर्भ :**

घोष, सैबल, डी. एम. नाचाने, पार्थ राय, 2004 । ''बिहेवियर ऑफ बैंक कैपिटल : इश्यूस एण्ड एविडेंस फ्रॉम इंडिया'', ईपीडब्ल्यू, मार्च ।

सेन, सुनंदा, सौम्य कांति घोष, 2005 । ''बासेल नार्म्स, इंडियन बैंकिंग सेक्टर एण्ड इंपैक्ट ऑन क्रेडिट टू एसएमईज़ एण्ड द पूअर''। ईपीडब्ल्यू, मार्च ।

उपलब्ध सूचना का विस्तार किया है । इन सर्वेक्षणों ने यह दर्शाया कि केवल 20 प्रतिशत से थोड़ी अधिक छोटी फर्मों की तुलना में 40 प्रतिशत से भी अधिक बड़ी फर्में बाह्य वित्त का उपयोग करती हैं । नये निवेशों के वित्तपोषण के लिए भी छोटी फर्में बाह्य स्रोतों से केवल 15 प्रतिशत का ही उपयोग करती हैं, जबकि बड़ी फर्में बाह्य वित्त से 30 प्रतिशत का वित्तीयन करती हैं । बेक-टी और एसली डेमिरगुक-कुंट (2005) ने टिप्पणी की कि फर्मों का आकार, स्वामित्व और कार्यकाल फर्मों के वित्तपोषण के लिए सर्वाधिक विश्वसनीय भविष्यसूचक हैं । उन्होंने पाया कि अधिक कार्यकाल वाली, अधिक बड़ी और विदेशी स्वामित्व वाली फर्मों ने वित्तीयन के संबंध में कम बाधाओं की सूचना दी है । इससे यह परिणाम निकलता है कि लघुतर और अपेक्षाकृत नई फर्में वित्तीयन के संबंध में काफी अधिक बाधाओं का सामना करती हैं । आंकड़े भी यह दर्शाते हैं कि छोटी फर्में अपने निवेश के एक छोटे अंश का वित्तीयन बाह्य वित्त के औपचारिक स्रोतों से करती हैं (बेक और अन्य, 2003)। वैश्विक तौर पर जहाँ एक ओर एसएमई द्वारा वित्त की पहचान एक दूसरी अग्रणी बाधा के रूप में की गई है, वहीं दूसरी ओर अपेक्षाकृत बड़े उद्यमों के लिए इसका स्थान चौथा है (बत्रा और अन्य, 2002)। विभिन्न देशों में एसएमई के लिए आंतरिक निधियाँ वित्तीयन का मुख्य स्रोत थीं ।

6.86 डब्ल्यूबीईएस सर्वेक्षण के अनुसार फर्मों के प्रतिशत द्वारा अनुभव की गई वित्तपोषण संबंधी बाधाएँ अन्य क्षेत्रों की तुलना में ओईसीडी देशों तथा पूर्वी अफ्रीका और चीन में कम थीं । जबकि लातीन अमरीका, दक्षिण एशिया और अफ्रीका में फर्मों के अधिकतम प्रतिशत ने उच्च ब्याज-दरों

## बॉक्स VI.11
## लघु और मझौले उद्यमों (एसएमई) का वित्तपोषण : उन्नत और उभरती अर्थव्यवस्थाओं के अनुभव

विकसित देशों में कुल रोजगार और जीडीपी में अपने अंशदान के तौर पर विनिर्माण में एसएमई क्षेत्र अपेक्षाकृत बड़े हैं (विश्व बैंक, 2005)। अध्ययनों से भी पता चलता है कि विकासशीाल देशों की तुलना में विकसित देशों में संस्थागत वित्त तक एसएमई की बेहतर पहुँच है । उनके विकास के प्रारंभिक चरणों में भी विकसित देशों में एसएमई के लिए संस्थागत वित्त की सहायता मजबूत रही । कल, और अन्य (2005) ने19वीं और 20वीं शताब्दी के प्रारंभ के दौरान मुख्य उत्तरी अटलांटिक अर्थव्यवस्थाओं में एसएमई के वित्तीयन के स्वरूपों का पता लगाया और उन्होंने पाया कि आधुनिक वित्त के साथ संबद्ध मुख्य संस्थाएँ । बैंक और प्रतिभूति बाजार - एसएमई के लिए सीमांत महत्व की थी, परंतु उनके वित्तीयन की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए प्रभावी रूप में विभिन्न प्रकार की स्थानीय सस्थाएं उभरी थीं । इन मध्यवर्ती संस्थाओं ने विभिन्न रू प लिये थे । उदाहरण के लिए उन्होंने फ्रांस में नोटरियों के रू प में और जर्मनी में सहकारी संस्थाओं के रू प में कार्य किया था । उल्लेखनीय रू प में इनमें से अधिकांश संस्थाएं माँग द्वारा संचालित थीं तथा निजी पहलों के द्वारा इनकी स्थापना की गई थी । जबकि सरकारों ने इन संस्थाओं के निर्माण में बहुत कम भूमिका निभाई थी, उन्होंने उनके आविर्भाव को एक सामान्यतः अनुमतियोग्य विनियामक वातावरण में अनुमति दी थी ।

अमरीका में निक्षेपागार (डिपॉजिटरी) संस्थाएँ - वाणिज्य बैंक, किफायती संस्थाएँ (बचत बैंक और बचत संघ) और ऋण संघ - तथा गैर-निक्षेपागार (नॉन-डिपॉजिटरी) संस्थाएँ * एसएमई के लिए वित्तीय सेवाओं के आपूर्तिकर्ता हैं । 2003 में डिपॉजिटरी संस्थाओं का उपयोग सर्वेक्षण की गई सभी फर्मों में से 96 प्रतिशत फर्मों द्वारा किया गया - जो कि 1998 में विद्यमान स्थिति के ही समान था (फेड सर्वेक्षण, 2006)। डिपॉजिटरी संस्थाओं में वाणिज्य बैंकों का उपयोग सबसे अधिक अर्थात् 87 प्रतिशत था । जितना ही फर्म का आकार बढ़ता है, उतना ही वाणिज्य बैंकों का उपयोग करनेवाली फर्मों का प्रतिशत बढ़ जाता है ।

सामाजिक और आर्थिक अनुसंधान के लिए यूरोपीय नेटवर्क (ईएनएसआर) के उद्यम सर्वेक्षण 2003 और वित्त के प्रति एसएमई की पहुँच के सर्वेक्षण 2005 ने यूरोपीय संघ में एसएमई की वित्तीय पहुँच और उनके द्वारा सामना किये जा रहे दबावों का विश्लेषण किया । सर्वेक्षण 2003 के अनुसार एसएमई के 13 प्रतिशत ने वित्त के प्रति पहुँच को प्रमुख अवरोध माना, यद्यपि उनके बहुमत ने कुशल श्रमिकों के अभाव को प्रमुख अड़चन के रूप में स्वीकार किया । तथापि, यूरोपीय एसएमई का बहुमत बैंक वित्तीयन पर निर्भर है और ऐसा प्रतीत होता है कि उनके लिए किसी वैकल्पिक वित्तीय स्रोत का अभाव है । अधिकांश सदस्य राज्यों में ये उद्यम बैंक वित्त, अर्थात् ओवरड्राफ्टों और बैंक ऋणों का उपयोग करते हैं । लेकिन पट्टेदारी (लीजिंग) भी वित्त का एक प्रमुख स्रोत है । स्पेन, फ्रांस, लग्जमबर्ग, नीदरलैंड्स और पुर्तगाल में ओवरड्राफ्टों की तुलना में लीजिंग का उपयोग अक्सर ज्यादातर किया जाता है । फैक्टरिंग भी फ्रांस में एक महत्वपूर्ण स्रोत है ।

एसएमई के निधीयन के अनेक विशिष्ट लक्षण हैं । फ्रांस में एसएमई सामान्यतः बैंक वित्तीयन पर अत्यधिक निर्भर होते हैं, जबकि बड़ी फर्में सीधे पूंजी बाजारों तक पहुँच सकती हैं । ईएनएसआर उद्यम सर्वेक्षण 2003 के अनुसार बड़े उद्यमों की तुलना में छोटी फर्में बैंक वित्तीयन का अपेक्षाकृत अधिक उपयोग करती हैं । सभी उद्यमों के लगभग 80 प्रतिशत के पास कम से कम एक ऋण-व्यवस्था (क्रेडिट लाइन) है । विभिन्न देशों में बैंक ऋण के उपयोग में उल्लेखनीय अंतर बने हुए हैं । आयरलैंड और आइसलैंड जैसे कुछ देशों में लगभग प्रत्येक एसएमई (95 प्रतिशत या उससे अधिक) के पास एक या उससे अधिक ऋण-व्यवस्था (क्रेडिट लाइन) है, जबकि फिनलैंड जैसे अन्य देशों में यह लगभग 70 प्रतिशत एसएमई पर लागू है ।

विकसित देशों में भी, प्रायः अपर्याप्त सूचना की समस्या का उल्लेख एसएमई को बैंक वित्त में बाधा पहुँचानेवाले एक पहलू के रू प में किया जाता है । तुलन-पत्र और लाभ-हानि लेखा (60 प्रतिशत) बहुत आम तौर पर बैंकों द्वारा अपेक्षित दस्तावेज हैं ।

कुल मिलाकर बड़े उद्यमों की अपेक्षा एसएमई उधार समर्थक जमानत (कॉलेटरल) पर आधारित हैं । विकसित देशों में भी बैंक वित्तपोषण के लिए सर्वाधिक सामान्य अपेक्षा कॉलेटरल की ही है । स्थावर संपदा (रियल एस्टेट) सबसे अधिक आम कॉलेटरल है और उसके बाद वैयक्तिक/निजी बचत पुस्तिका (सेविंग्ज़ बुक) का स्थान है । स्टॉक (इन्वेंटरी) को सामान्यतः कॉलेटरल के रू प में स्वीकार नहीं किया जाता । हाल के वर्षों में बैंक वित्तीयन तक एसएमई की पहुँच काफी आसान हो गई है ।

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में एसएमई के संवर्धन और विकास में मलेशिया एक अग्रणी अर्थव्यवस्था है । मलेशिया में अधिकांश एसएमई अपनी स्वयं की आंतरिक रू प से उत्पन्न निधियों तथा उनके व्यावसायिक परिचालनों के वित्तपोषण के लिए मित्रों और पारिवारिक सदस्यों से जुटाई गई निधियों का उपयोग करते हैं । 50 प्रतिशत बड़ी कंपनियों के विपरीत, केवल 16 प्रतिशत एसएमई ने वित्तीय संस्थाओं (वाणिज्य बैंकों और विकास वित्त संस्थाओं) से वित्तपोषण पर अपनी निर्भरता व्यक्त की । वास्तव में 10 प्रतिशत व्यष्टि उद्यम ही वित्त के बाह्य स्रोत पर निर्भर हैं । स्थापना और उद्यमों की गणना 2005 के अनुसार, कॉलेटरल की कमी बैंकिंग संस्थाओं से वित्तीयन की माँग करते समय एसएमई द्वारा अनुभव की गई सर्वाधिक महत्वपूर्ण अड़चन थी । इसके बाद अपर्याप्त ऋण प्रलेखन, पिछले वित्तीय रिकार्ड का अभाव एवं वित्तीय सक्षमता अन्य बाधाएँ थीं । एसएमई द्वारा उपयोग में लाई गई ऋण सुविधाओं के मुख्य प्रकार हैं अल्पावधि और दीर्घावधि ऋण एवं पट्टेदारी । मलेशिया ने सरकार द्वारा पहचाने गए अनुकूल क्षेत्रों की वृद्धि में गति लाने के लिए समर्पित विकास वित्त संस्थाओं की स्थापना की, यथा एसएमई बैंक, एग्जिम बैंक, मलेशियन इंडस्ट्रियल डेवलपमेंट फाइनैंस (एमआइडीएफ), बैंक पेर्टेनियन मलेशिया तथा उच्च प्रौद्योगिकी और सूचना संचार प्रौद्योगिकी (आइसीटी) कंपनियों के लिए बैंक पेंबाबगुनन मलेशिया बेरहाद । साथ ही, बैंकिंग संस्थाओं से ऋण प्राप्त करने के लिए अपर्याप्त कॉलेटरल वाले एसएमई को मलेशिया के प्राथमिक गारंटी प्रदाता के रू प में क्रेडिट गारंटी कार्पोरेशन मलेशिया बेरहाद (सीजीसी) है ।

इंडोनेशिया में 70 प्रतिशत से भी अधिक व्यष्टि, लघु और मझौले उद्यम (एसएमई) माता-पिताओं से विरासत में मिले हैं । व्यष्टि-उद्यमों की 70 प्रतिशत से भी अधिक व्यावसायिक पूँजी और लघु व्यवसायों के लिए 65 प्रतिशत पूँजी स्व-वित्तीयन द्वारा जुटाई जाती है । यद्यपि यह दावा किया जाता है कि वित्त की आवश्यकता है, परंतु सभी एमएसएमई ऋण आवेदनों के लिए प्रस्तुति नहीं करते हैं । जो कारण बताये जाते हैं उनमें शामिल हैं, कॉलेटरल का अभाव (व्यष्टि-उद्यमों के लिए) और उच्च ब्याज-दर (लघु और मझौले उद्यमों के लिए ) ।

**संदर्भ :**

बत्रा, गीता, डेनियल कौफ़मैन, ऐंड्र एच. डब्ल्यू. स्टोन, 2002 । ''वाइसेज़ ऑफ दी फर्म्स 2000 : इन्वेस्टमेंट क्लाइमेट एण्ड दि गवर्नेंस फाइंडिंग्स ऑफ दि वर्ल्ड बिजनेस एन्विरानमेंट सर्वे''। विश्व बैंक समूह ।

बेक थार्स्टन, ऐस्ली डेमिर्गुक-कुंट, 2005 । ''स्माल एण्ड मीडियम-साइज एन्टरप्राइजेस : ओवरकमिंग ग्रोथ कन्स्ट्रैन्ट्स''। विश्व बैंक समूह, फरवरी ।

कल रॉबर्ट, लैंस ई. डेविस, नओमी आर. लमोरो, ज्याँ-लोराँ रोसेन्थाल, 2005, ''हिस्टॉरिकल फाइनैंसिंग ऑफ स्माल एण्ड मीडियम-साइज्ड एन्टरप्राइजेस'', एनबीईआर वर्किंग पेपर सीरीज़, अक्तूबर ।

* गैर-निक्षेपागारों (नॉन-डिपॉजिटरीज़) में अन्य के साथ शामिल हैं, वित्त कंपनियाँ तथा फैक्टर, दलाली और पेंशन फर्में, पट्टादायी (लीजिंग) कंपनियाँ एवं बीमा और बंधक कंपनियाँ, क्रेडिट कार्ड और चेक प्रसंस्करण कंपनियाँ, सरकारी स्रोत, परिवार और व्यक्ति, व्यावसायिक फर्में, आपूर्तिकर्ता और उद्यम के लिए पूँजी निधियाँ ।

को प्रमुख बाधा के रूप में रेटिंग दिया, वहीं पूर्वी अफ्रीका और चीन में स्थित फर्मों ने इसका सामना एक प्रमुख बाधा के रूप में नहीं किया । ओईसीडी देशों तथा पूर्वी अफ्रीका और चीन को छोड़कर सभी क्षेत्रों में सर्वेक्षण की गई 50 प्रतिशत से अधिक फर्मों द्वारा बताई गई एक और प्रमुख वित्तपोषण संबंधी बाधा दीर्घावधि ऋणों तक पहुँच का अभाव थी । लगभग सभी क्षेत्रों में कॉलेटरल की अपेक्षा ने भी वित्तपोषण संबंधी एक प्रमुख बाधा के रूप में कार्य किया (सारणी 6.17)।

6.87 2000 में किये गये विभिन्न देशों में एसएमई के निवेश वित्तपोषण ढाँचे के विश्लेषण से यह विदित होता है कि लातीन अमरीकी देशों की फर्मों ने अर्जेन्टीना के 43 प्रतिशत से चिली के 57 प्रतिशत तक के बीच वाले दायरे में बाह्य वित्तों का उपयोग किया । वित्तपोषण के बाह्य स्रोतों में चीन को छोड़कर अधिकांश उभरती अर्थव्यवस्थाओं में वाणिज्य बैंकों का अंश प्रधान रहा । विकसित देशों के मामले में इक्विटी वित्त भी बाह्य वित्त का एक महत्वपूर्ण स्रोत था (सारणी 6.18)। पोलैंड और जर्मनी में इक्विटी वित्त क्रमशः 27.6 प्रतिशत और 23.1 प्रतिशत पर काफी अधिक था । वित्तपोषण में अनौपचारिक क्षेत्र (महाजनों) का अंश चीन के 5.9 प्रतिशत से इंडोनेशिया के शून्य प्रतिशत तक भिन्न-भिन्न रहा ।

6.88 सारांश के रूप में, विभिन्न संकेतक, जैसे उद्योग को ऋण और कुल ऋण में लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण का अंश, लघु उद्योग क्षेत्र को ऋण की मात्रा में गिरावट, प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र उधार में लघु उद्योगों के अंश में गिरावट यह दर्शाते हैं कि उक्त क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता में सुधार लाने के लिए की गई नीतिगत पहलें अधिक सफल नहीं रही हैं। एसएमई को ऋण की धीमी वृद्धि के लिए अनेक रू ढ़ स्पष्टीकरण हैं, यथा- पर्याप्त कॉलेटरल की कमी, परिचालनों में अपारदर्शिता, स्वामित्व के मालिकाना स्वरूप की प्रधानता एवं ऋण इतिहास का अभाव क्योंकि अधिकांश फर्में अनुभवहीन हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि एसएमई के पास उचित समर्थक जमानत (कॉलेटरल) का अभाव एसएमई क्षेत्र को ऋण में धीमी वृद्धि के लिए एक प्रमुख कारण है । हाल के वर्षों में बैंकों ने बुनियादी संरचना (इन्फ्रास्ट्रक्चर) और फुटकर क्षेत्रों के लिए अपने एक्सपोजर को बढ़ाया है । बैंकों के उधार देने के स्वरूप में इस परिवर्तन के लिए एक संभावित स्पष्टीकरण उद्योग, व्यक्तियों और फुटकर क्षेत्र के पास उत्तम गुणवत्ता वाले कॉलेटरल की उपलब्धता हो सकता है । तथापि, यह ऋण मूल्यांकन प्रणाली की एक अपेक्षाकृत बड़ी और अधिक महत्वपूर्ण समस्या अर्थात् पर्याप्त ऋण मूल्यांकन तकनीकों के अभाव की ओर भी संकेत करता है । वित्त प्रदान करने के लिए नये उद्यमियों, नये विचारों, नये उत्पादों और नई सेवाओं का पता लगाने में अधिकाधिक प्रयास और अधिक परिष्कृत जोखिम प्रबंध प्रणाली की आवश्यकता होती है । लघु और मझौले उद्यमों के लिए केंद्रीकृत सूचना और अभिलेख प्रबंध प्रणाली के अभाव के कारण भारतीय बैंक अक्षम हैं (मोहन, 2008)। चूँकि ऋण सूचना कंपनी अधिनियम बनाया जा चुका है तथा रिजर्व बैंक द्वारा इस संबंध में आवश्यक मार्गदर्शी निदेश भी जारी किये जा चुके हैं, अतः यह प्रत्याशित है कि ऋण सूचना कंपनियों की स्थापना से इस समस्या को कम करने में सहायता मिलेगी।

6.89 विकासशील और विकसित दोनों प्रकार की अर्थव्यवस्थाओं में एसएमई अपने वित्तीयन की आवश्यकताओं के लिए बैंकिंग क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भर हैं । विकास का स्तर चाहे कुछ भी हो, एसएमई द्वारा जिस प्रमुख अवरोध का सामना किया जा रहा है वह कॉलेटरल का अभाव और अपर्याप्त

**सारणी 6.17 : वित्तपोषण संबंधी बाधाएँ**
**(बाधा की 'प्रमुख' अथवा 'मामूली' रेटिंग वाली फर्मों का प्रतिशत)***

| वित्तपोषण की बाधा | अफ्रीका | एमईएनए | पूर्वी अफ्रीका एनआईसी/ चीन | पूर्वी एशिया विकासशील | दक्षिणी एशिया | लातीन अमरीका | ओईसीडी | सीआइएस | सीईई |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| उच्च ब्याज दरें | 83.5 | 67.4 | 40.3 | 72.5 | 83.9 | 87.6 | 47.8 | 80.6 | 79.5 |
| दीर्घावधि ऋण तक पहुँच का अभाव | .. | .. | 31.2 | 52.0 | 65.1 | 63.1 | 20.0 | 58.7 | 67.0 |
| कॉलेटरल अपेक्षाएँ | 51.9 | 45.2 | 30.1 | 43.6 | 58.5 | 65.1 | 35.7 | 49.7 | 52.2 |
| बैंक की कागजी कार्रवाई | 47.1 | 51.6 | 29.9 | 34.6 | 56.6 | 63.0 | 38.9 | 52.9 | 48.3 |
| ग्राहकों संबंधी अपर्याप्त ऋण सूचना | 51.7 | 46.3 | 27.0 | 48.4 | 46.7 | 46.1 | 23.5 | 40.1 | 41.6 |
| विशेष संबंध | 38.2 | 33.3 | 26.3 | 39.6 | 44.5 | 46.5 | 26.5 | 35.1 | 43.1 |
| उधार देने के लिए बैंकों के पास मुद्रा की कमी | 28.4 | 33.0 | 20.6 | 52.2 | 35.1 | 39.1 | 14.3 | 37.4 | 46.8 |
| विशेषीकृत निर्यात वित्त तक पहुँच | 44.9 | 39.8 | 15.1 | 33.7 | 36.4 | 34.7 | 16.5 | 35.5 | 38.8 |
| बैंकेतर इक्विटी तक पहुँच | 43.1 | 36.2 | 13.0 | 32.6 | 34.9 | 35.6 | 18.1 | 38.3 | 42.0 |
| पट्टा वित्त तक पहुँच | 38.2 | 29.3 | 13.1 | 34.9 | 32.9 | 34.1 | 19.3 | 32.7 | 48.9 |
| विदेशी बैंकों तक पहुँच | 43.6 | 29.3 | 11.7 | 41.5 | 33.9 | 35.0 | 11.1 | 35.3 | 40.4 |

.. : उपलब्ध नहीं ।
* : आंकड़े वर्ष 2000 में किये गये विश्व बैंक सर्वेक्षण से संबंधित हैं ।
एमईएनए : मध्य पूर्व और उत्तरी अफ्रीका ।
एनआइसी : नया औद्योगीकृत पूर्वी एशिया ।
ओईसीडी : आर्थिक सहयोग और विकास संगठन ।
सीआइएस : स्वतंत्र राज्यों का राष्ट्रमंडल ।
सीईई : केंद्रीय और पूर्वी यूरोप ।
**स्रोत** : विश्व बैंक, 2002, बत्रा और अन्य, 2002 से लिया गया ।

**सारणी 6.18 : चयनित देशों में फर्मों के वित्तपोषण का स्वरूप***

| देश | बाह्य वित्त | बैंक | इक्विटी | पट्टे पर देना | आपूर्तिकर्ता ऋण | विकास बैंक | अनौपचारिक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 |
| अर्जेन्टीना | 43.5 | 30.0 | 2.8 | 0.8 | 7.5 | 1.6 | 0.8 |
| ब्राजील | 51.8 | 23.1 | 6.9 | 4.7 | 11.4 | 4.2 | 0.4 |
| चिली | 57.3 | 41.3 | 0.3 | 2.6 | 7.7 | 0.5 | 1.0 |
| चीन | 29.9 | 10.2 | 2.4 | 1.6 | 2.4 | 4.6 | 5.9 |
| कोलंबिया | 55.2 | 29.2 | 0.4 | 2.0 | 12.5 | 4.8 | 0.0 |
| फ्रांस | 30.9 | 6.8 | 5.8 | 4.3 | 7.4 | 1.4 | 1.7 |
| जर्मनी | 54.3 | 16.8 | 23.1 | 0.7 | 0.9 | 8.5 | 4.1 |
| **भारत** | **20.1** | **14.3** | **0.0** | **..** | **0.0** | **..** | **..** |
| इंडोनेशिया | 21.8 | 17.2 | 0.0 | 1.7 | 0.7 | 1.7 | 0.0 |
| पाकिस्तान | 43.1 | 30.0 | 5.6 | 1.5 | 2.9 | 1.0 | 2.1 |
| फिलीपीन्स | 36.6 | 17.5 | 2.0 | 1.4 | 10.8 | 4.5 | 0.4 |
| पोलैंड | 58.6 | 15.4 | 27.6 | 4.5 | 4.6 | 4.3 | 1.7 |
| युनाइटेड किंगडम | 36.1 | 13.1 | 11.6 | 2.9 | 7.5 | 0.6 | 0.5 |
| अमरीका | 47.1 | 21.5 | 3.2 | 6.1 | 6.6 | 6.8 | 2.9 |

* : आंकड़े वर्ष 2000 में विश्व बैंक द्वारा किये गये सर्वेक्षण से संबंधित हैं ।

.. : उपलब्ध नहीं ।

**स्रोत :** विश्व बैंक की (2004) और तृतीय अखिल भारतीय लघु उद्योग गणना, 2001 (थार्सटन बेक, ऐस्ली देमिग्यूस- कुंत और वोजिस्लाव मक्सीमोविक, अगस्त 2004 से लेकर अनुकूल रूप में उपयोग किया गया)।

सूचना है । विभिन्न विदेशी सर्वेक्षण यह संकेत करते हैं कि उच्च ब्याज-दरें, दीर्घावधि वित्त तक पहुँच का अभाव एसएमई द्वारा अनुभव की गई दो प्रमुख बाधाएँ थीं । बेहतर वित्तीय प्रणालियों से युक्त विकसित अर्थव्यवस्थाओं में वित्त तक पहुँच काफी अधिक है । इसके साथ ही, उन्होंने इस क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता में सुधार लाने के लिए विभिन्न कार्यक्रम बनाये हैं, यथा- अन्य बातों के बीच जोखिम पूँजी, ऋण का पंजीयन, एसएमई को वित्त प्रदान करने के लिए विशेषीकृत संस्थाएँ, समूह-आधारित वित्तपोषण तथा एसएमई का वित्तीय ज्ञान बढ़ाना । अपनी अर्थव्यवस्थाओं में एसएमई की महत्वपूर्ण स्थिति के कारण उभरती अर्थव्यवस्थाओं ने भी एसएमई क्षेत्र की ऋण आवश्यकताओं पर विशेष बल दिया है । चूँकि इन अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय बाजार विकसित अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय बाजारों के समान अधिक विकसित नहीं हुए हैं, अतः इस प्रयोजन के लिए उन्होंने विशेषीकृत संस्थाएँ स्थापित की हैं । सूचना की विषमता से बचने के लिए अधिकांश देशों ने ऋण गारंटी संस्थाएँ स्थापित की हैं ।

## VI. बुनियादी संरचना को उधार

6.90 बुनियादी संरचना की परिभाषा मोटे तौर पर सुविधाओं के भौतिक ढांचे के रूप में दी जाती है जिसके माध्यम से माल और सेवाएँ जनसाधारण को उपलब्ध कराई जाती हैं तथा जिसमें विविध प्रकार की सेवाएँ शामिल हैं जैसे परिवहन, बिजली का उत्पादन, प्रेषण और वितरण, दूरसंचार, पत्तन लदाई-उतराई सुविधाएँ, जल आपूर्ति और जल-मल निस्तारण, शहरी जन परिवहन प्रणालियाँ और अन्य शहरी मूलभूत सुविधाएँ, सिंचाई, चिकित्सा, शिक्षा तथा अन्य प्राथमिक सेवाएँ । एक ओर जहाँ कुछ बुनियादी सेवाओं की व्यवस्था का किसी देश में व्यापार और वाणिज्य की गतिविधि के स्तर से प्रत्यक्ष संबंध रहता है, वहीं दूसरी ओर अन्य सेवाएँ उसकी सामाजिक संरचना को मजबूत करने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं (मोहन, 1996)।

6.91 बुनियादी संरचना में पर्याप्त निवेशों की कमी जिससे संवृद्धि में बाधा उत्पन्न हुई, को भारत बुनियादी संरचना रिपोर्ट 2001 में रेखांकित किया गया जिसमें यह तर्क दिया गया कि अपर्याप्त मूलभूत संरचना से उत्पन्न होनेवाली आपूर्ति एवं माँग संबंधी बाधाओं के परिणामस्वरू प 1990 के दशक में वृद्धि की दरें उस स्तर से कम रहीं जिस स्तर को पर्याप्त बुनियादी संरचना के होने की स्थिति में संभवतः प्राप्त किया जा सकता था । राज्य स्तर पर बुनियादी संरचनागत कमियाँ तथा भौतिक, सामाजिक और आर्थिक संरचना की सुविधाओं में अंतर-राज्य असमानताएँ बढ़ती हुई क्षेत्रीय आय की असमानताओं के लिए कारणभूत रूप में पहचानी गई थीं (घोष और डे, 2004)। ग्यारहवीं योजना के अनुसार, वृद्धि के 9 प्रतिशत प्रति वर्ष के मध्यावधि लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, जो ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना की लक्षित वृद्धि दर है, लगभग 12,00,000 करोड़ रुपये से 14,00,000 करोड़ रुपये (2005-06 के मूल्यों पर) की सीमा तक बुनियादी संरचना में अतिरिक्त निवेश करने की आवश्यकता होगी । बुनियादी संरचना के वित्तीयन संबंधी समिति (अध्यक्ष : श्री दीपक पारेख) के अनुसार उपर्युक्त अनुमान वित्तीयन की आवश्यकताओं का कम अनुमान हो सकता है । उक्त समिति ने यह मानते हुए कि वास्तविक जीडीपी की वृद्धि 9 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से होगी तथा वार्षिक मुद्रास्फीति 5 प्रतिशत रहेगी, 2005-06 के मूल्यों पर ग्यारहवीं योजना के दौरान बुनियादी संरचना क्षेत्र के लिए अपेक्षित निवेश को 15,00,000 करोड़ रु पये से 17,00,000 करोड़ रुपये पर रखा है । इसके अलावा, इस महत्वाकांक्षी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 15-20 प्रतिशत के वर्तमान स्तर से वृद्धिशील घरेलू बचत के आधे भाग को बुनियादी संरचना के क्षेत्र की दिशा में निर्दिष्ट करना होगा (भारत सरकार, 2007ए)।

*बुनियादी संरचना के वित्तपोषण में वाणिज्य बैंकों की भूमिका*

6.92 बुनियादी संरचना संबंधी परियोजनाओं की विशेषता सामान्यतः बड़े और एकमुश्त निवेश हैं। बुनियादी संरचना की अधिकांश परियोजनाएँ जनसाधारण के कल्याण से संबंधित हैं। बुनियादी संरचना की परियोजनाओं का लाभ दीर्घ अवधि के बाद मिलता है तथा उनके विशेष लक्षणों के कारण उनका वित्तीयन अधिक कठिन हो जाता है। अतः यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि स्वामित्व और वित्तीयन का प्रकार क्या हो। विकल्प हैं सरकारी स्वामित्व अथवा बुनियादी संरचना में निजी सहभागिता। सरकार द्वारा वित्तपोषण बुनियादी संरचना की उन परियोजनाओं के लिए वरीयता देने योग्य है जो कुल मिलाकर समाज को लाभ पहुँचाने के लक्ष्य से बनाई जाती हैं, जबकि बुनियादी संरचना की वे परियोजनाएँ निजी क्षेत्र की सहभागिता के लिए अधिक उपयुक्त हैं जिनमें उसकी सेवाओं के वितरण में मजबूत वाणिज्यिक घटक विद्यमान है। निजी क्षेत्र की सहभागिता और सरकारी-निजी साझेदारी (पीपीपी) रियायतों (जिनमें शामिल हैं पट्टे, आफरमेजेस, निर्माण-परिचालन-अंतरण संविदाएँ (बीओटी) और विकल्पी लाइसेंसों से युक्त डाइवेस्टिचर), हरित क्षेत्र परियोजनाओं के माध्यम से एवं प्रबंध और पट्टा संविदा माध्यमों द्वारा भी हो सकती हैं।

6.93 आम तौर पर सरकार द्वारा वित्तपोषण की वकालत उन सेवाओं की व्यवस्था के लिए की जाती है जो जनसाधारण के कल्याण के स्वरूप की हैं और जिनकी व्यवस्था अपरिहार्य है। निजी क्षेत्र की सहभागिता द्वारा विकसित की गई बुनियादी संरचना की परियोजनाओं में वित्तपोषण के उपलब्ध तरीके या तो शेयर या ऋण हैं तथा सैद्धांतिक रूप में प्रत्येक का इष्टतम तब प्राप्त किया जाता है जब निवेश परियोजना की पूँजीगत संरचना ऋण के अंतर्गत संभव कर-बचत के साथ दिवालियेपन की जोखिम को संतुलित कर सकती है (सारणी 6.19)। व्यवहार में बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के वित्तपोषण का प्रकार अन्य बातों के साथ-साथ वित्तीय बाजारों तक पहुँच एवं बुनियादी संरचना की परियोजना के विकास के चरण पर आधारित होगा (गॉलिक, 2007)। पारंपरिक तौर पर बुनियादी संरचना के वित्तपोषण में बैंकों की भूमिका प्रधानतः ऋण वित्त के माध्यम से थी।

6.94 बुनियादी संरचना की परियोजनाओं का ऋण के रूप में वित्तपोषण प्राथमिक तौर पर वाणिज्यिक ऋणों और बांडों के द्वारा किया जाता है। वाणिज्यिक ऋण वाणिज्य बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं द्वारा उधार दी गई निधियाँ हैं और सामान्यतः इन निधियों को परियोजना की अंतर्निहित परिसंपत्ति द्वारा प्रतिभूतिकृत किया जाता है। ऐसी निधियों की व्यवस्था आम तौर पर उधारकर्ता की वित्तीय क्षमता पर आधारित है, परंतु हाल में वाणिज्यिक ऋण उपलब्ध कराने के लिए बुनियादी संरचना की परियोजना से प्रत्याशित नकदी प्रवाह पर भी अधिकाधिक विचार किया जाता है। बुनियादी संरचना की बड़ी परियोजनाओं के निधीयन के लिए वाणिज्य बैंक सामूहिक ऋण भी दे सकते हैं - जिसमें एक बड़े ऋण को विभिन्न बैंकों के बीच बांट लिया जाता है। सामूहिक तौर पर उधार देने से बैंक अपने संविभाग का विविधीकरण कर सकते हैं तथा इससे पूँजी पर्याप्तता की अपेक्षा का पालन करने में बैंकों को सहायता मिलती है। बांड दीर्घावधि तक ब्याज देनेवाले ऋण लिखत हैं जिनमें निवेश बैंकों, पेंशन निधियों, बीमा कंपनियों तथा निधि प्रबंधकों द्वारा सरकारी अथवा निजी स्थापन के माध्यम से किया जाता है। बांडों की साख की गुणवत्ता स्वतंत्र साख-श्रेणी-निर्धारण (क्रेडिट रेटिंग) एजेंसियों द्वारा परियोजना के लिए दिये गये साख रेटिंगों से निर्दिष्ट की जाएगी (गॉलिक, 2007)।

6.95 बुनियादी संरचना की परियोजनाओं को बैंकों द्वारा उधार दिये जाने से उन्हें अनेक जोखिमों का सामना करना पड़ता है। तथापि, इसके साथ ही उन्हें इससे अच्छे व्यावसायिक अवसर प्राप्त होते हैं (बॉक्स VI.12)।

**सारणी 6.19 : निजी क्षेत्र की बुनियादी संरचना के लिए वित्तपोषण के स्रोत**

| देशी स्रोत | बाह्य स्रोत |
|---|---|
| **इक्विटी** | |
| • देशी विकासकर्ता *(स्वतंत्र रूप से या अंतरराष्ट्रीय विकासकर्ताओं के साथ सहयोग सहित)*<br>• जनोपयोगी सेवाएँ *(अल्पमत वाली धारिताओं को लेते हुए)*<br>• अन्य संस्थागत निवेशक (बहुत सीमित होने की संभावना है) | • अंतरराष्ट्रीय विकासकर्ता *(स्वतंत्र रू प से या देशी विकासकर्ताओं के साथ सहयोग सहित)*<br>• उपस्कर आपूर्तिकर्ता *(देशी या अंतरराष्ट्रीय विकासकर्ताओं के साथ सहयोग सहित)*<br>• समर्पित बुनियादी संरचना निधियाँ<br>• अन्य अंतरराष्ट्रीय इक्विटी निवेशक<br>• बहुपक्षीय एजेंसियाँ *(अंतरराष्ट्रीय वित्त निगम, एशियाई विकास बैंक)* |
| **ऋण** | |
| • देशी वाणिज्य बैंक (3 - 5 वर्ष)<br>• देशी मीयादी ऋणदात्री संस्थाएँ (7 - 10 वर्ष)<br>• देशी बांड बाजार (7 - 10 वर्ष)<br>• विशेषीकृत बुनियादी संरचना वित्तपोषण संस्थाएँ | • अंतरराष्ट्रीय वाणिज्य बैंक (7 - 10 वर्ष)<br>• निर्यात ऋण एजेंसियाँ (7 - 10 वर्ष)<br>• अंतरराष्ट्रीय बांड बाजार (10 - 30 वर्ष)<br>• बहुपक्षीय एजेंसियाँ (15 - 20 वर्ष)<br>• द्विपक्षीय सहायता एजेंसियाँ |

**स्रोत:** 'फाइनैंसिंग प्राइवेट इन्फ्रास्ट्रक्चर : लेसन्स फ्राम इंडिया' (अहलूवालिया, 1997) से लिया गया।

## बॉक्स VI.12
## बुनियादी संरचना के लिए बैंक उधार : जोखिमें और अवसर

वाणिज्य बैंक अपने स्वरूप से ही, जिसमें वे अपना कारोबार चलाते हैं - जहाँ वे प्राथमिक तौर पर अल्पावधि उधारों (देयताएँ) और दीर्घावधि निवेशों (आस्तियों) के साथ कार्य करते हैं - बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के वित्तपोषण में गंभीर मीयादी असंतुलन का सामना करते हैं जिसमें 10-12 वर्षों और कभी-कभी 15 वर्षों का निधीयन संबद्ध है। अतः अपेक्षित मान पर बुनियादी संरचना की परियोजनाओं को वाणिज्य बैंकों द्वारा ऋण, प्रतिकूल समष्टि-आर्थिक परिदृश्य के कारण अथवा बैंक जमाराशियों की अत्यधिक अवसर लागतों के कारण उधार देने के लिए बैंकों की अनिच्छा सहित कुछ सीमाओं के अधीन हो सकता है ।

बैंक अपनी ओर से बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के बांड वित्तपोषण को वरीयता दे सकते हैं क्योंकि इससे बांडों के बाह्य रेटिंगों के कारण ऋण जोखिम का बेहतर अवबोधन हो सकेगा। इसके अलावा, ऋण बाजार में बांडों का व्यापार करने की क्षमता उन्हें एक निर्गम का भी विकल्प प्रदान करेगी । इस संदर्भ में हाल में परियोजना वित्त और परियोजना बांडों के आविर्भाव से बैंकों के पास उच्च जोखिम से युक्त, पूँजीप्रधान, लंबी अवधि वाली और एक पारदर्शी नकदी-प्रवाह से समन्वित बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के वित्तीयन में प्रवेश करने का विकल्प है। इसके अतिरिक्त, बुनियादी संरचना को बैंक द्वारा संवितरित ऋणों के मामले में उसे बढ़ाई गई अवधि के लिए अपने तुलन-पत्र में उक्त ऋणों को एक आस्ति के रू प में रखने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वह बुनियादी संरचना की परियोजनाओं को प्रदान किये गये अग्रिमों के प्रतिभूतिकरण का सहारा ले सकता है। एक अन्य तरीका जिसके द्वारा बैंक बुनियादी संरचना के क्षेत्र को अपना एक्सपोजर बढ़ा रहे हैं, बुनियादी संरचना निधियों की स्थापना के माध्यम से रहा है।

अधिक महत्वपूर्ण तौर पर निजी बुनियादी संरचना वित्तीयन में बैंकों की भूमिका के अंतर्गत शामिल हैं, परियोजना मूल्यांकन और अभिकल्पन, निधियों और ऋण वित्त की व्यवस्था और स्थापन, अधिक निधियाँ उपलब्ध कराते हुए और संगठनात्मक नवोन्मेष को प्रकट करते हुए कार्यकुशलता को सुधारने में नई परियोजनाओं के विकास को सुगम बनाने के लिए बैंक के विशेषज्ञों के कौशल का प्रयोग (लिंच, 1996)। अतः बैंकों द्वारा सफल बुनियादी संरचना वित्तीयन अथवा परियोजना वित्तीयन के साथ न केवल ऋण की व्यवस्था, बल्कि अधिक महत्वपूर्ण तौर पर परियोजना वित्त के लिए सलाहकारों के रू प में उनकी भूमिका भी संबद्ध है क्योंकि उनके पास कानून, लेखांकन, कर और बैंकिंग का कौशल रहता है ।

प्रवर्तन, हामीदारी और जोखिम वितरण के माध्यम से बैंक बुनियादी संरचना के वित्तपोषण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं । बुनियादी संरचना की परियोजनाएँ सामान्यतः अपने निर्माण के कार्यकलापों के वित्तपोषण के लिए तथा परियोजना के समापन पर अपने स्थायी दीर्घावधि वित्तपोषण के लिए बैंकों की ओर अभिमुख होती हैं। निर्माण वित्त की अपेक्षाएँ 2 से 3 वर्ष की अवधि के लिए होती हैं जिनके लिए बैंक एक अस्थिर दर पर ब्याज लगा सकते हैं। स्थायी वित्त की आवश्यकताएं 10 से 15 वर्ष की अवधि के लिए होती हैं जो नियत ब्याज-दर पर हो सकती हैं।

निर्माण के स्तर पर वित्तपोषण करते समय बैंकों के सामने विशेष रू प से बिजली और सड़कों से संबंधित परियोजनाओं में निर्माण जोखिम उपस्थित होती है । यहाँ निर्माण जोखिम से आशय समय और लागत के अत्यधिक बढ़ जाने से है जो निर्माण के चरण में अप्रत्याशित स्थितियों के कारण घटित हो सकता है । एक और जोखिम जिसका परीक्षण बैंकों को निर्माण के स्तर पर करना होगा, ब्याज दर जोखिम है जो अस्थिर दरों पर ब्याज लगाने के कारण उत्पन्न हो सकती है । ब्याज दर जोखिम खास तौर से बुनियादी संरचना की उन परियोजनाओं के साथ संबद्ध है जिनकी पूँजी की मात्रा अत्यधिक है और चुकौती की अवधि लंबी है । ऐसे परिदृश्य में ब्याज लागतों के अंतर्गत एक लंबी अवधि के लिए कुल लागतों का एक भारी अंश शामिल है तथा ब्याज दरों में भारी अंतरों के परिणामस्वरू प अपेक्षित स्तरों की तुलना में उल्लेखनीय रू प में लागत की मात्रा अत्यधिक बढ़ सकती है ।

परिचालन के स्तर पर बुनियादी संरचना की परियोजनाओं को स्थायी बैंक उधार के संबंध में अनेक जोखिमों को ध्यान में रखने की आवश्यकता है । इस चरण पर जोखिमें प्राथमिक तौर पर अन्य जोखिमों के बीच बाजार जोखिम, परिचालन जोखिम और विदेशी मुद्रा जोखिम का रूप लेती हैं । बुनियादी संरचना की परियोजनाओं में बाजार जोखिमें तब उत्पन्न होती हैं जब परियोजना की सक्षमता निर्धारित करने में मानी गई बाजार की स्थितियाँ प्राप्त नहीं की जातीं । उन मामलों में जहाँ निजी इन्फ्रास्ट्रक्चर प्रदाता सीधे उपयोगकर्ताओं के साथ लेनदेन करता है, बाजार जोखिम निवेशक/बैंक द्वारा वहन की जाती है । बुनियादी संरचना की परियोजनाओं में परिचालन जोखिमों से आशय परियोजना की वितरण निष्पादन के स्तरों की जोखिमों से है जो पहले किये गये व्यवहार्यता के अध्ययन द्वारा प्रत्याशित स्तरों से कम हैं। ऐसी जोखिमें दूरसंचार में अधिक संकेंद्रित हैं जहाँ प्रौद्योगिकी में तेजी से परिवर्तन हो रहा है । अंततः विदेश में बुनियादी संरचना की परियोजनाओं में उधार देनेवाले बैंकों के मामले में विदेशी मुद्रा जोखिमें विद्यमान हैं जो विभिन्न कारणों से उत्पन्न हो सकती हैं । जिस देश में बुनियादी संरचना की परियोजना का वित्तपोषण किया जाता है तथा जिस मुद्रा में परियोजना के राजस्वों का मूल्यवर्गीकरण किया जाता है, उस देश में मुद्रा का मूल्य-हास होने की स्थिति में यदि परियोजना के नकदी प्रवाह में पर्याप्त वृद्धि प्राप्त नहीं की जाती, तो उसके कारण अंतरराष्ट्रीय उधारदाताओं को उक्त परियोजना के लिए भुगतानों की देशी मुद्रा लागत में भारी वृद्धि हो सकती है ।

इन जोखिमों के बावजूद बुनियादी संरचना आनेवाले वर्षों में वित्त के लिए, विशेष रू प से दीर्घावधि वित्त के लिए दोनों विकसित एवं उभरते बाजारों में माँग के एक बृहत्तम स्रोत के रूप में उभरेगी । यदि सही तौर पर कार्य किया जाए, तो बुनियादी संरचना का वित्तपोषण विशेष रू प से परियोजना वित्त में सहभागिता के माध्यम से बैंकों के लिए अपने परिचालनों के दायरे को बढ़ाने के लिए जबरदस्त अवसर प्रदान करता है । बुनियादी संरचना के वित्तपोषण में बैंकों की संबद्धता को इस तथ्य से सहायता मिलती है कि मिश्रित परियोजना वित्तीयन संबंधी लेनदेनों का मूल्यांकन करने और बुनियादी संरचना की परियोजना के अलग-अलग चरणों में विभिन्न जोखिमों की पहचान करने में अधिकांश अन्य बाजार सहभागियों की तुलना में उनका स्थान बेहतर है ।

सर्वप्रथम, बुनियादी संरचना में संवर्धित वित्त की आवश्यकता को देखते हुए एक विचारणीय विषय वह प्रकार है जिसमें बैंकों को बुनियादी संरचना वित्त में संबद्ध दीर्घ अवधि और उच्च जोखिमों का ध्यान रखते हुए सामान्यतः बैंकिंग क्षेत्र की कार्यकुशलता के साथ समझौता किये बिना बुनियादी संरचना के वित्तपोषण में सहभागिता करनी चाहिए। प्रायः बुनियादी संरचना के वित्त में बैंकों की संबद्धता बुनियादी संरचना के वित्त से जुड़ी हुई विभिन्न प्रकार की जोखिमों का उचित विचार किये बिना रही है। अतः ऋण जोखिम के अतिरिक्त, वाणिज्य बैंकों के लिए बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के वित्तपोषण में संबद्ध बाजार जोखिमों से भी अवगत होने की आवश्यकता है । राजस्व की कमी होने की स्थिति में यह आवश्यक होगा कि राजस्व उत्पादन व्यवस्था, विवाद निपटान व्यवस्थाओं तथा सहायता व्यवस्था की स्पष्ट समझ और उचित परिकल्पना हो। दूसरे, बुनियादी संरचना की कई परियोजनाओं से प्राप्त सामाजिक हित और उनके सार्वजनिक हित के स्वरूप को ध्यान में रखते हुए यह तथ्य भी सामने आएगा कि निजी क्षेत्र की सहभागिता और विशेष रूप से अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा बुनियादी संरचना का वित्तपोषण केवल ऐसे ही परिदृश्य में व्यवहार्य होगा जहाँ निरंतर बने रहनेवाले पारदर्शी नकदी प्रवाह की गारंटी दी जा सकती है। गारंटीकृत नकदी प्रवाहों के अभाव में इस क्षेत्र में निजी सहभागिता को व्यवहार्य बनाने के लिए लक्षित सब्सिडियों अथवा पूरक राजस्व व्यवस्थाओं के रूप में सरकार के हस्तक्षेप को प्राप्त करने की आवश्यकता है ।

**संदर्भ :**

अहलूवालिया, एम. एस. 1997 । 'फाइनैंसिंग प्राइवेट इन्फ्रास्ट्रक्चर : लेसन्स फ्रॉम इंडिया'। इन चॉयसेज़ फ़र एफ़ीशिएन्ट प्राइवेट प्रॉविजन ऑफ इन्फ्रास्ट्रक्चर इन ईस्ट एशिया, (संपादक) हरिंदर कोहली, अशोका मोदी और माइकेल वाल्टन; विश्व बैंक ।

गालिक, सोनिया. 2007 । 'पब्लिक-प्राइवेट पार्टनरशिप्स : ए फाइनैंशियर्स पर्स्पेक्टिव'। एशिया और दी पैसिफिक के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ का आर्थिक और सामाजिक आयोग (यूएनईएससीएपी), संयुक्त राष्ट्र संघ ।

लिंच, डेविड. 1996। 'फाइनैंसिंग इन्फ्रास्ट्रक्चर प्रॉजेक्ट्स- ऑस्ट्रेलियन इन्वेस्टमेंट बैंक्स एक्सपीरिएन्स', एपीईसी वित्तदाताओं की बैठक के लिए तैयार किया गया आलेख, तोक्यो, जापान, फरवरी 1996 ।

**बॉक्स VI.13**
**बैंकों द्वारा बुनियादी संरचना का वित्तपोषण : विभिन्न देशों के अनुभव**

आस्ट्रेलिया में बुनियादी संरचना (इन्फ्रास्ट्रक्चर) के वित्तपोषण में निजी क्षेत्र की सहभागिता बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के प्रायः समूचे दायरे को सम्मिलित करती है जिसमें सामाजिक बुनियादी संरचना - अस्पताल, जेल एवं परिवहन, बिजली और संचार में वाणिज्यिक उद्यम शामिल हैं। आस्ट्रेलिया सफल रियायत आधारित बुनियादी संरचना के वित्तपोषण के मॉडलों की रूप रेखा बनाने में पथप्रदर्शक के रूप में उभरा है। आस्ट्रेलिया में स्थित बैंकों ने पहले बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के लिए वित्त के स्रोत के रूप में कार्य करते हुए तथा दूसरे परियोजना का मूल्यांकन उपलब्ध कराते हुए, बुनियादी संरचना की परियोजनाओं में निजी क्षेत्र की अधिकाधिक संबद्धता को सुनिश्चित करने में दुहरी भूमिका निभाई। आस्ट्रेलिया में बैंकों द्वारा बुनियादी संरचना का वित्तपोषण इक्विटी की हामीदारी का रूप लेता है, जहाँ आस्ट्रेलिया के बैंक विश्व में पहले बैंक हैं जिन्होंने किसी सड़क परियोजना (रोड प्रॉजेक्ट) के लिए इक्विटी की सफल हामीदारी और स्थापन किया है एवं बांड बाजार के माध्यम से ऋण जुटाया है (लिंच, 1996)।

हाल के समय में बुनियादी संरचना के विकास में आश्चर्यजनक सफल वृत्तांतों में से एक चीन का है। चीन में बुनियादी संरचना के वित्त के विभिन्न स्रोत हैं प्रांतीय और स्थानीय सरकारें, राज्य विकास बैंक, चीनी अंतरराष्ट्रीय निगम और बहुपक्षीय एजेंसियाँ। प्राथमिक रूप से बुनियादी संरचना के भारी वित्तपोषण में देशी ऋणों और स्व-निर्मित निधियों का अंशदान है। बुनियादी संरचना के वित्तपोषण में प्रधान भूमिका चाइना डेवलपमेंट बैंक द्वारा अदा की जाती है जो राज्य द्वारा परिकल्पित बुनियादी संरचना की प्रमुख परियोजनाओं को उधार देने के प्रयोजन के लिए 1994 में स्थापित तीन विकास बैंकों में से एक है। चाइना डेवलपमेंट बैंक के लिए वित्तपोषण के प्रमुख स्रोत सर्वप्रथम विशिष्ट बुनियादी संरचना की परियोजनाओं का कार्य करने के लिए वित्त मंत्रालय से प्राप्त बजट संबंधी विनियोजन हैं। वित्त का दूसरा स्रोत बांड हैं, जिन्हें विशेषीकृत और प्रांतीय वाणिज्य बैंकों के पास उनके पास स्थित अधिक आरक्षित निधियों के आधार पर रखा जाता है जिससे डेवलपमेंट बैंक बुनियादी संरचना के वित्त के लिए वाणिज्य बैंकों की जमाराशियों का उपयोग कर सकता है। वह बांडों के द्वारा अंतरराष्ट्रीय बाजार में एवं सामूहिक ऋणों द्वारा भी निधियाँ जुटाता है (स्पियर, ऐण्डू और अन्य, 1997)। 1994 से 2005 के अंत तक की अवधि के दौरान चाइना डेवलपमेंट बैंक द्वारा दिये गये उधार के 88.9 प्रतिशत को आठ मुख्य औद्योगिक क्षेत्रों, अर्थात् बिजली, सड़क निर्माण, रेलवे, पेट्रो-रसायन, कोयला खनन, दूरसंचार, सार्वजनिक सुविधाएँ तथा कृषि और संबंधित उद्योगों की दिशा में निर्दिष्ट किया गया।

**संदर्भ :**

लिंच, डेविड, 1998. ''फाइनैंसिंग इन्फ्रास्ट्रक्चर प्रॉजेक्ट्स - आस्ट्रेलियन इन्वेस्टमेंट बैंक्स एक्सपीरिएन्स'', एपीईसी वित्तदाताओं की बैठक, तोक्यो, जापान के लिए तैयार किया गया आलेख, फरवरी 1996।

स्पियर, ऐण्डू और अन्य 1997 ''चाइना इन्फ्रास्ट्रक्चर : सेक्टोरल प्लान्स, रिफार्म्स एण्ड फाइनैंसिंग'', ईस्ट एशिया एनलिटिकल यूनिट, डिपार्टमेंट ऑफ फारिन एफेयर्स एण्ड ट्रेड, कॉमनवेल्थ ऑफ आस्ट्रेलिया।

6.96 चूँकि बैंकों द्वारा बुनियादी संरचना की परियोजनाओं को वित्तपोषण से कुछ गंभीर जोखिमें उत्पन्न होती हैं, अतः बैंकों ने संबद्ध जोखिमों के प्रति अपने आपको अधिक अरक्षित रखे बिना बुनियादी संरचना की परियोजनाओं को वित्त प्रदान करने के लिए उपयुक्त व्यवस्थाएँ की हैं। आस्ट्रेलिया और चीन के विदेशी अनुभव यह दर्शाते हैं कि बैंक बुनियादी संरचना की परियोजनाओं को आगे उधार देने के लिए दीर्घावधि निधियाँ जुटाने के लिए बांडों का प्रयोग करते हैं (बॉक्स VI.13)।

*भारत में बैंकों द्वारा बुनियादी संरचना क्षेत्र का वित्तपोषण*

6.97 1990 के दशक के प्रारंभ में बुनियादी संरचना का क्षेत्र निजी क्षेत्र के लिए खोल दिया गया था। अतः बैंकों को बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के लिए कार्यशील पूँजीगत अपेक्षाओं के अतिरिक्त मीयादी ऋण और गारंटियाँ देने के लिए अनुमति दी गई थी। बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के वित्तपोषण को सुसाध्य बनाने के लिए बैंकों को एक्सपोजर के मानदंडों का अतिक्रमण 10 प्रतिशत तक करने की अनुमति दी गई (बॉक्स VI.14)। एक सुविकसित निजी कंपनी ऋण बाजार के अभाव में बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के लिए बैंक निधियों के एक प्रमुख स्रोत के रूप में उभरे हैं।

6.98 बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के लिए अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा दिया गया बकाया सकल ऋण मार्च 1998 के अंत के 3,163 करोड़ रुपये से तेजी से बढ़कर मार्च 2001 के अंत में 11,349 करोड़ रुपये तथा आगे और बढ़कर मार्च 2007 के अंत तक 1,42,975 करोड़ रुपये हो गया अर्थात् वह 1998-2007 के दौरान 52.7 प्रतिशत की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर पर बढ़ गया। कुल बैंक ऋण में बुनियादी संरचना के वित्तपोषण का अंश मार्च 1998 के अंत के 1.0 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2007 के अंत में 7.4 प्रतिशत हो गया (सारणी 6.20)।

6.99 1998 और 1999 में बैंक वित्त में सबसे बड़ा अंश दूरसंचार क्षेत्र का रहा। फिर भी, मार्च 2000 के अंत में बिजली क्षेत्र का अंश सबसे अधिक रहा और यह स्थिति बाद के वर्षों में जारी रही। वास्तव में, 2002 से आगे बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के लिए बैंक ऋण में बिजली क्षेत्र का अंश लगभग 50 प्रतिशत रहा (सारणी 6.21)।

6.100 बुनियादी संरचना को बैंकों द्वारा निवल ऋण (चुकौतियों को घटाकर), जो 2002-03 में (मुख्य रूप से आइसीआइसीआइ बैंक के साथ आइसीआइसीआइ के प्रति विलय के कारण) और पुनः 2004-

## बॉक्स VI.14
## बैंकों द्वारा बुनियादी संरचना के वित्तपोषण पर रिज़र्व बैंक के दिशा-निर्देश : मुख्य-मुख्य बातें

रिज़र्व बैंक द्वारा फरवरी 2003 में जारी किये गये दिशा-निर्देशों के अनुसार बैंकों/वित्तीय संस्थाओं को इस बात की स्वतंत्रता दी गई थी कि वे निम्नलिखित शर्तों पर दोनों सरकारी क्षेत्र और निजी क्षेत्र द्वारा प्रारंभ की गई तकनीकी दृष्टि से संभाव्य, वित्तीय दृष्टि से व्यवहार्य और बैंकयोग्य परियोजनाओं को वित्त प्रदान करें :

i) मंजूर की गई राशि बुनियादी संरचना के वित्तपोषण के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा निर्धारित विवेकपूर्ण एक्सपोज़र मानदंडों की समग्र उच्चतम सीमा के भीतर होनी चाहिए ।

ii) परियोजनाओं की तकनीकी संभाव्यता, वित्तीय व्यवहार्यता और बैंकयोग्यता का जोखिम और संवेदनशीलता के विशिष्ट संदर्भ में निर्धारण करने के लिए बैंकों/वित्तीय संस्थाओं के पास अपेक्षित विशेषज्ञता होनी चाहिए ।

iii) सरकारी क्षेत्र की इकाइयों द्वारा प्रारंभ की गई परियोजनाओं के संबंध में मीयादी ऋण केवल कारपोरेट संस्थाओं (अर्थात् कंपनी अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों अथवा संबंधित संविधि के अंतर्गत स्थापित निगम) के लिए ही मंजूर किया जा सकता है। इसके अलावा, ऐसे मीयादी ऋण परियोजना के लिए परिकल्पित बजट संसाधनों के बदले या उन्हें स्थानापन्न करने के लिए नहीं होने चाहिए ।

iv) बैंक बुनियादी संरचना की ऐसी परियोजनाओं को सीधे प्रारंभ करने के लिए कंपनी अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत, निजी क्षेत्र के विशेष प्रयोजन माध्यमों (एसपीवी) को भी उधार दे सकते हैं जो वित्तीय दृष्टि से व्यवहार्य हों और केवल वित्तीय मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए न हों । बैंकों से यह सुनिश्चित करने की अपेक्षा है कि मूल/प्रवर्तक संस्था का दिवालियापन अथवा वित्तीय कठिनाइयाँ एसपीवी की वित्तीय स्थिति को प्रभावित न करें ।

बुनियादी संरचना की परियोजनाओं की वित्तीय आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए बैंक ऋण सुविधा कार्यशील पूँजीगत वित्त, मीयादी ऋण, परियोजना ऋण, परियोजना वित्त के पैकेज के भाग के रूप में उपार्जित बांडों और डिबेंचरों/अधिमान शेयरों/इक्विटी शेयरों में अभिदान के रूप में प्रदान कर सकते हैं जिसे 'माना गया अग्रिम' (डीम्ड एडवांस) समझा जाएगा तथा निधिक या गैर-निधिक सुविधा के किसी अन्य रूप में उपलब्ध करा सकते हैं ।

बैंक आइडीएफसी/अन्य वित्तीय संस्थाओं के साथ अंतरण (टेक आउट) वित्तपोषण की व्यवस्था कर सकते हैं अथवा आइडीएफसी/अन्य वित्तीय संस्थाओं से चलनिधि सहायता प्राप्त कर सकते हैं ।

बैंकों को बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के संबंध में अन्य ऋणदात्री संस्थाओं के नाम गारंटियाँ जारी करने की अनुमति दी गई है बशर्ते कि गारंटी जारी करनेवाला बैंक में निधिक अंश परियोजना लागत के कम से कम 5 प्रतिशत की सीमा तक लेता है तथा परियोजना का सामान्य ऋण मूल्यांकन, निगरानी और अनुवर्तन करता है ।

रिज़र्व बैंक द्वारा जारी किये गये दिशा-निर्देशों के अनुसार बैंकों को सूचित किया गया कि किसी कंपनी की ईक्विटी पूँजी के लिए प्रवर्तक का अंशदान उनके अपने स्वयं के संसाधनों से होना चाहिए तथा कुछ परिस्थितियों के अंतर्गत बुनियादी संरचना के क्षेत्र को दिये गये महत्व को देखते हुए अन्य कंपनियों के शेयर लेने के लिए बैंक सामान्यतः अग्रिम प्रदान न करें, इस नीति के अंतर्गत अपवाद केवल भारत में बुनियादी संरचना की किसी परियोजना को कार्यान्वित या परिचालित करने में लिप्त किसी मौजूदा कंपनी में प्रवर्तक के शेयरों के अभिग्रहण के वित्तपोषण के लिए हो सकता है ।

एक समूह के उधारकर्ताओं को ऋण एक्सपोज़र के संबंध में बैंक की पूँजीगत निधियों के 40 प्रतिशत के एक्सपोज़र मानदंड को, अतिरिक्त 10 प्रतिशत तक अतिक्रमित करने (अर्थात् 50 प्रतिशत तक) की अनुमति दी गई है, बशर्ते कि अतिरिक्त ऋण एक्सपोज़र बुनियादी संरचना की परियोजनाओं को ऋण प्रदान करने के कारण हो। एकल उधारकर्ता को ऋण एक्सपोज़र के संबंध में बैंक की पूँजीगत निधियों के 15 प्रतिशत के एक्सपोज़र मानदंड को अतिरिक्त 5 प्रतिशत तक अतिक्रमित करने (अर्थात् 20 प्रतिशत तक) की अनुमति दी गई है बशर्ते कि अतिरिक्त ऋण एक्सपोज़र बुनियादी संरचना के कारण हो ।

बैंकों को इस बात की अनुमति दी गई है कि वे बुनियादी संरचना सुविधा से संबंधित प्रतिभूतिकृत पेपर में निवेश पर पूँजी पर्याप्तता के प्रयोजनों के लिए 50 प्रतिशत का एक रियायती जोखिम भार अन्य मानदंडों के अनुपालन के अधीन समनुदेशित करें । उक्त बुनियादी संरचना सुविधा आय/नकदी प्रवाह उत्पन्न करनेवाली हो जिससे प्रतिभूतिकृत पेपर की चुकौती/वापसी सुनिश्चित की जा सके ।

बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के दीर्घकालिक वित्तपोषण के कारण आस्ति-देयता असंतुलन उत्पन्न हो सकते हैं, विशेष रूप से तब, जब ऐसा वित्तपोषण बैंक की देयताओं के परिपक्वता अवधि विन्यास के अनुरूप न हो । अतः बैंकों से अपेक्षित है कि वे यह सुनिश्चित करने के लिए अपनी परिसंपत्ति-देयता की स्थिति के संबंध में उचित सतर्कता बरतें कि ऐसी परियोजनाओं को उधार देने के कारण उन्हें चलनिधि के असंतुलनों का सामना न करना पड़े ।

05 में (मुख्य रूप से एक बैंक के रूप में आइडीबीआइ के परिवर्तन के कारण) तेजी से बढ़ा, ने मुख्य रूप से उच्च आधार के कारण 2005-06 में ऋणात्मक वृद्धि दर्ज की । तथापि, 2006-07 के दौरान भी, बुनियादी संरचना क्षेत्र को निवल ऋण में वृद्धि ऋणात्मक थी (सारणी 6.22)।

### सारणी 6.20 : बुनियादी संरचना क्षेत्र को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा ऋण

(राशि करोड़ रुपये में)

| मद | मार्च के अंत में | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1998 | 1999 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 | 2007 |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 |
| **बुनियादी संरचना** | **3,163** | **5,941** | **7,243** | **11,349** | **14,809** | **26,297** | **37,224** | **78,999** | **1,12,853** | **1,42,975** |
| ***वार्षिक वृद्धि दर*** | .. | 87.8 | 21.9 | 56.7 | 30.5 | 77.6 | 41.6 | 112.2 | 42.9 | 26.7 |
| ***निम्नलिखित के प्रतिशत के रूप में :*** | | | | | | | | | | |
| सकल बैंक ऋण | 1.0 | 1.6 | 1.7 | 2.2 | 2.5 | 3.6 | 4.4 | 7.2 | 7.5 | 7.4 |
| सकल देशी पूँजी निर्माण | 0.8 | 1.5 | 1.4 | 2.2 | 2.8 | 4.2 | 4.8 | 8.0 | 9.4 | .. |

..: उपलब्ध नहीं ।
**टिप्पणी** : मार्च के अंतिम रिपोर्टिंग शुक्रवार को बकाया ।
**स्रोत** : भारतीय अर्थव्यवस्था संबंधी सांख्यिकी की पुस्तिका, 2006-07 ।

## सारणी 6.21 : बुनियादी संरचना को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा ऋण : क्षेत्र-वार - बकाया

(राशि करोड़ रुपये)

| क्षेत्र | मार्च के अंत में | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1998 | 1999 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 | 2007 |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 |
| **बिजली** | **697** | **2,109** | **3,289** | **5,246** | **7,373** | **15,042** | **19,655** | **38,235** | **60,157** | **72,816** |
| | (22.0) | (35.5) | (45.4) | (46.2) | (49.8) | (57.2) | (52.8) | (48.4) | (53.3) | (50.9) |
| **दूरसंचार** | **2,045** | **2,273** | **1,992** | **3,644** | **3,972** | **5,779** | **8,408** | **15,705** | **18,455** | **19,446** |
| | (64.7) | (38.3) | (27.5) | (32.1) | (26.8) | (22.0) | (22.6) | (19.9) | (16.4) | (13.6) |
| **सड़कें और पत्तन** | **421** | **1,559** | **1,962** | **2,459** | **3,464** | **5,476** | **9,161** | **14,500** | **19,695** | **24,941** |
| | (13.3) | (26.2) | (27.1) | (21.7) | (23.4) | (20.8) | (24.6) | (18.4) | (17.5) | (17.4) |
| **अन्य बुनियादी संरचना*** | .. | .. | .. | .. | .. | .. | .. | **10,559** | **14,546** | **25,772** |
| | | | | | | | | (13.4) | (12.9) | (18.0) |
| **कुल बुनियादी संरचना** | **3,163** | **5,941** | **7,243** | **11,349** | **14,809** | **26,297** | **37,224** | **78,999** | **1,12,853** | **1,42,975** |

.. : उपलब्ध नहीं

* : अन्य बुनियादी संरचना में अन्यों के साथ-साथ शहरी बुनियादी संरचना को अग्रिम शामिल हैं ।

**टिप्पणी :** 1. मार्च के अंतिम रिपोर्टिंग शुक्रवार को बकाया ।
2. कोष्ठक में आंकड़े कुल में से प्रतिशत हैं ।

**स्रोत :** भारतीय अर्थव्यवस्था संबंधी सांख्यिकी की पुस्तिका, 2006-07 ।

6.101 विकास वित्त संस्थाओं (डीएफआइ) ने मध्यावधि और दीर्घावधि परियोजनाओं का वित्तपोषण करने में ऐतिहासिक रूप से एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है । बुनियादी संरचना क्षेत्र को निजी क्षेत्र को लिए खोलने के बाद यह प्रत्याशा की गई कि विकास वित्त संस्थाएँ अपने परियोजना वित्त कौशल के कारण बुनियादी संरचना की परियोजनाओं का वित्तपोषण करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँगी। 1997 में आइडीएफसी की स्थापना से यह भी आशा की गई कि वह बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के वित्तपोषण को प्रोत्साहित करेगी। तथापि, बैंकों के रूप में दो प्रमुख डीएफआइ के परिवर्तन तथा आइएफसीआइ और आइआइबीआइ की भूमिका में उनकी कमजोर स्थिति

## सारणी 6.22 : अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा बुनियादी संरचना क्षेत्र को निवल ऋण की उपलब्धता*

(राशि करोड़ रुपये)

| क्षेत्र | 1998-99 | 1999-2000 | 2000-01 | 2001-02 | 2002-03 | 2003-04 | 2004-05 | 2005-06 | 2006-07 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| **बुनियादी संरचना** | **2,778** | **1,302** | **4,106** | **3,460** | **11,488** | **10,927** | **41,775** | **33,854** | **30,122** |
| *वार्षिक वृद्धि दर* | .. | -53.1 | 215.4 | -15.7 | 232.0 | -4.9 | 282.3 | -19.0 | -11.0 |
| *जिसमें से :* | | | | | | | | | |
| **बिजली** | **1,412** | **1,180** | **1,957** | **2,127** | **7,669** | **4,613** | **18,580** | **21,922** | **12,659** |
| | (50.8) | (90.6) | (47.7) | (61.5) | (66.8) | (42.2) | (44.5) | (64.8) | (42.0) |
| **दूरसंचार** | **228** | **-281** | **1,652** | **328** | **1,807** | **2,629** | **7,297** | **2,750** | **991** |
| | (8.2) | (-21.6) | (40.2) | (9.5) | (15.7) | (24.1) | (17.5) | (8.1) | (3.3) |
| **सड़कें और पत्तन** | **1,138** | **403** | **497** | **1,005** | **2,012** | **3,685** | **5,339** | **5,195** | **5,246** |
| | (41.0) | (31.0) | (12.1) | (29.0) | (17.5) | (33.7) | (12.8) | (15.3) | (17.4) |
| **अन्य बुनियादी संरचना**** | .. | .. | .. | .. | .. | .. | **10,559** | **3,987** | **11,226** |
| | | | | | | | (25.3) | (11.8) | (37.3) |

.. : उपलब्ध नहीं ।

* : निवल ऋण चुकौतियों को घटाकर है ।

** : अन्य बुनियादी संरचना में अन्यों के साथ-साथ शहरी बुनियादी संरचना को अग्रिम शामिल हैं ।

**टिप्पणी :** कोष्ठक में आंकड़े कुल में से प्रतिशत हैं ।

**स्रोत :** भारतीय अर्थव्यवस्था संबंधी सांख्यिकी की पुस्तिका, 2006-07 ।

**सारणी 6.23 : बुनियादी संरचना क्षेत्र को विकास वित्त संस्थाओं (डीएफआइ) द्वारा संवितरित ऋण**

(राशि करोड़ रुपये)

| क्षेत्र | 1998-99 | 1999-2000 | 2000-01 | 2001-02 | 2002-03 | 2003-04 | मार्च 2004 के अंत तक संचयी |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 |
| **बुनियादी संरचना** | **6,421** | **7,513** | **9,649** | **7,990** | **2,901** | **5,882** | **64,227** |
| *वार्षिक वृद्धि दर* | – | 17.0 | 28.4 | -17.2 | -63.7 | 102.7 | |
| **बिजली उत्पादन** | **3,843** | **5,403** | **5,532** | **4,121** | **1,264** | **2,183** | **41,416** |
| | (59.8) | (71.9) | (57.3) | (51.6) | (43.6) | (37.1) | (64.5) |
| **दूरसंचार** | **1,201** | **1,635** | **3,266** | **2,444** | **563** | **2,166** | **13,837** |
| | (18.7) | (21.8) | (33.8) | (30.6) | (19.4) | (36.8) | (21.5) |
| **सड़कें और पत्तन** | **1,350** | **450** | **726** | **385** | **670** | **655** | **5,946** |
| | (21.0) | (6.0) | (7.5) | (4.8) | (23.1) | (11.1) | (9.3) |
| **शहरी बुनियादी संरचना** | **28** | **26** | **126** | **1,039** | **405** | **879** | **3,027** |
| | (0.4) | (0.3) | (1.3) | (13.0) | (13.9) | (14.9) | (4.7) |

**टिप्पणी** : 1. कोष्ठक में आंकड़े कुल में से प्रतिशत हैं ।
2. सम्मिलित विकास वित्त संस्थाओं (डीएफआइ) में आइडीबीआइ, आइएफसीआइ, आइसीआइसीआइ (2001-02 तक), आइआइबीआइ, आइडीएफसी और सिडबी शामिल हैं ।
**स्रोत** : भारत में विकास बैंकिंग संबंधी रिपोर्ट, विभिन्न अंक, आइडीबीआइ ।

के कारण आई तीव्र गिरावट ने बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के वित्तपोषण में वित्तीय संस्थाओं की भूमिका को उल्लेखनीय रूप में कम कर दिया । विकास वित्त संस्थाओं के कुल ऋण संवितरण 2003-04 के दौरान 5,882 करोड़ रुपये के थे । डीएफआइ के मामले में भी बिजली क्षेत्र का अंश सबसे अधिक रहा (सारणी 6.23)।

6.102 अनुसूचित वाणिज्य बैंकों और विकास वित्त संस्थाओं द्वारा बुनियादी संरचना के ऋण में उनके अग्रिमों के तौर पर बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के निधीयन की तुलना से यह विदित होता है कि 2001-02 तक विकास वित्त संस्थाएँ (डीएफआइ) बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के लिए निधियों का मुख्य स्रोत थीं । फिर भी, 2002-03 से लेकर आगे बैंक बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के लिए निधियों के प्रमुख स्रोत के रूप में उभरे । यह अंशतः दो प्रमुख डीएफआइ (आइसीआइसीआइ लिमिटेड और आइडीबीआइ) के बैंकों के रूप में परिवर्तन के कारण था ।

6.103 चयनित देशों में बुनियादी संरचना को बैंक ऋण का विदेशी सर्वेक्षण यह दर्शाता है कि बुनियादी संरचना के वित्तपोषण में वाणिज्य बैंकों की भूमिका हाल के वर्षों में उल्लेखनीय रूप में कम हो गई है । तथापि, भारत में बुनियादी संरचना की परियोजनाओं को वाणिज्य बैंकों के ऋण में हाल के वर्षों में वृद्धि हुई (सारणी 6.24)।

6.104 सारांश के रूप में, बुनियादी संरचना में निजी सहभागिता के बढ़ने के साथ ही, बुनियादी संरचना की परियोजनाओं के वित्तपोषण में बैंकों की भूमिका उल्लेखनीय रूप में बढ़ गई है । यद्यपि बैंक बुनियादी संरचना की सभी प्रकार की परियोजनाओं का वित्तपोषण करते रहे हैं, तथापि बिजली और दूरसंचार क्षेत्रों ने बैंकों के निधीयन में सबसे बड़ा अंश प्राप्त किया है ।

**सारणी 6.24 : बुनियादी संरचना क्षेत्र को वाणिज्य बैंक ऋण : चयनित देशों का सर्वेक्षण**

(कुल ऋण का प्रतिशत)

| देश | 1991 | 1995 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 | 2007 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 |
| जर्मनी | 5.3 | 4.0 | 4.2 | 4.0 | 4.1 | 4.1 | 4.2 | 4.1 | 4.1 | 4.4 |
| **भारत** | .. | .. | **1.7** | **2.2** | **2.5** | **3.6** | **4.4** | **7.2** | **7.5** | **7.4** |
| मलेशिया | .. | .. | 5.0 | 3.8 | 4.0 | 3.6 | 2.9 | 2.8 | 2.6 | .. |
| न्यूजीलैंड | .. | .. | 3.9 | 3.8 | 3.7 | 3.2 | 3.3 | 2.9 | 3.3 | 3.4 |
| युनाइटेड किंगडम | 3.1 | 4.6 | 1.3 | 0.8 | 0.7 | 0.5 | 0.4 | 0.4 | 0.6 | 0.4 |

.. : उपलब्ध नहीं ।
**स्रोत :** 1. संबंधित देशों की केंद्रीय बैंक वेबसाइटें ।
2. भारतीय अर्थव्यवस्था संबंधी सांख्यिकी की पुस्तिका, 2006-07 ।

## VII. खुदरा ऋण

6.105 खुदरा या घरेलू ऋण जिसमें मुख्य रूप से आवास ऋण, मीयादी जमाराशियों की जमानत पर व्यक्तियों को अग्रिम, क्रेडिट कार्ड, शैक्षणिक ऋण और टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं की खरीद के लिए ऋण शामिल हैं, अनेक देशों में बैंकों के ऋण संविभाग का एक महत्वपूर्ण घटक बन गया है। भारत में वित्तीय क्षेत्र के सुधार प्रारंभ करने तक खुदरा ऋण के संबंध में अन्य बातों के साथ-साथ आवास ऋण की कुल राशि, व्यक्तियों को ऋणों ब्याज दर, मार्जिन की अपेक्षा और अधिकतम चुकौती अवधि के निर्धारण के संबंध में सीमाओं के रूप में बहुत सारे प्रतिबंध थे। फिर भी, 1990 के दशक में बैंकों को खुदरा ऋणों की मात्रा, ब्याज दर, मार्जिन की अपेक्षा, चुकौती अवधि और अन्य संबंधित शर्तें तय करने के लिए स्वतंत्रता दी गई थी। 1990 के दशक के उत्तरार्ध से लेकर इन छूटों का वैयक्तिक ऋणों की वृद्धि पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा।

6.106 वैयक्तिक ऋणों ने 1990 के दशक में विद्यमान 25.2 प्रतिशत की तुलना में 1992-93 से 2006-07 तक की अवधि के दौरान 28.1 प्रतिशत की औसत वार्षिक वृद्धि दर्ज की; इस अवधि में समग्र बैंक ऋण 19.5 प्रतिशत की औसत वार्षिक वृद्धि दर से बढ़ा। 1992-93 से वैयक्तिक ऋणों की वृद्धि 1998-99 और 2006-07 को छोड़कर सदैव समग्र ऋण की वृद्धि से अधिक रही है। इसके परिणामस्वरूप, कुल बैंक ऋण में वैयक्तिक ऋणों का अंश मार्च 1993 के अंत में विद्यमान 8.3 प्रतिशत से लगातार बढ़ते हुए मार्च 2007 के अंत में 22.3 प्रतिशत हो गया (चार्ट VI.24)।

6.107 कुल बैंक ऋण में आवास ऋणों का अंश 1998-99 के 3.2 प्रतिशत से तेजी से बढ़कर 2006-07 में 11.8 प्रतिशत हो गया (चार्ट VI.25)। वैयक्तिक ऋणों के अंतर्गत आवास ऋणों का अंश मार्च 1993 के अंत के 37.3 प्रतिशत से घटकर मार्च1998 के अंत में 27.7 प्रतिशत रहा, परंतु उसके बाद तेजी से बढ़कर मार्च 2007 के अंत में 52.8 प्रतिशत हो गया (सारणी 6.25)।

चार्ट VI.24 : वैयक्तिक ऋणों में विद्यमान प्रवृत्तियाँ

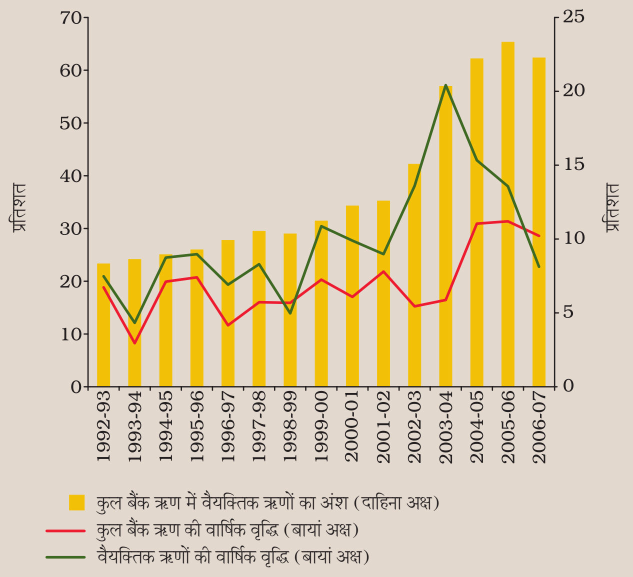


चार्ट VI.25 : आवास ऋणों में विद्यमान प्रवृत्ति

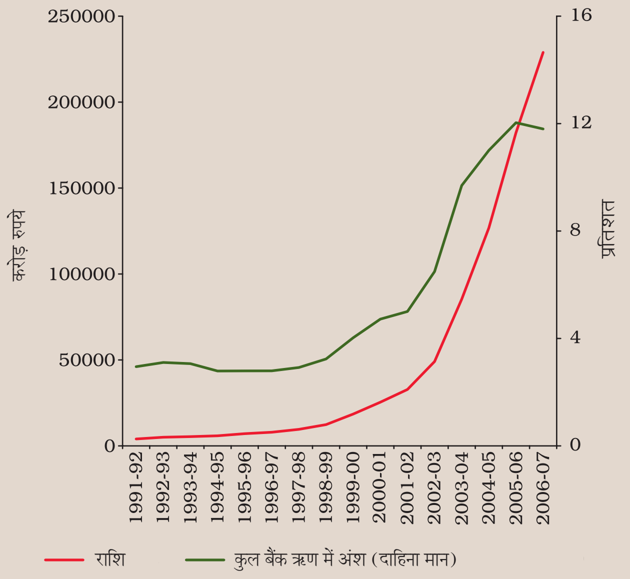


**सारणी 6.25 : आवास ऋणों की वृद्धि**

(प्रतिशत)

| वर्ष (अप्रैल-मार्च) | कुल बैंक ऋण | आवास ऋण | कुल वैयक्तिक ऋणों में आवास ऋणों का अंश |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| 1992-93 | 18.8 | 25.2 | 37.3 |
| 1993-94 | 8.3 | 6.7 | 35.5 |
| 1994-95 | 19.9 | 9.2 | 31.1 |
| 1995-96 | 20.7 | 20.9 | 30.1 |
| 1996-97 | 11.7 | 11.7 | 28.2 |
| 1997-98 | 16.0 | 21.2 | 27.7 |
| 1998-99 | 15.9 | 28.5 | 31.3 |
| 1999-00 | 20.3 | 49.7 | 35.9 |
| 2000-01 | 17.0 | 37.2 | 38.5 |
| 2001-02 | 21.8 | 29.2 | 39.8 |
| 2002-03 | 15.2 | 49.5 | 43.1 |
| 2003-04 | 16.4 | 73.9 | 47.7 |
| 2004-05 | 30.9 | 48.6 | 49.5 |
| 2005-06 | 31.4 | 43.7 | 51.6 |
| 2006-07 | 28.6 | 25.7 | 52.8 |

**स्रोत** : भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूल सांख्यिकीय विवरणियाँ, विभिन्न अंक, भारतीय रिज़र्व बैंक।

6.108 घरेलू क्षेत्र को बैंक ऋण में तीव्र वृद्धि कई तत्वों के कारण थी। हाल के वर्षों में उच्च आर्थिक वृद्धि के चलते शहरी क्षेत्रों में काम के अवसरों का विस्तार हुआ और आय के स्तरों में तेजी से उन्नति हुई। विशेष रूप से युवा आयु में आय के बढ़ते हुए स्तरों ने खर्च वहन करने की क्षमता को बढ़ा दिया। इसके साथ ही, स्थावर संपदा (रियल एस्टेट) में आई तेजी ने ग्राहकों के लिए आवास ऋण प्राप्त करके आवास का स्वामित्व हासिल करने के लिए अवसर प्रदान किये। आवास के बाजार में तीव्र वृद्धि को सक्रिय समर्थन अन्य बातों के साथ-साथ वर्धमान व्यावसायिक केंद्रों के रूप में अनेक द्वितीय स्तर के शहरों के आविर्भाव से मिला। मुद्रास्फीति और मुद्रास्फीतिगत अनुमानों के सुनियंत्रित होने के साथ ही, मुद्रास्फीति जोखिम प्रीमियम कम हुआ जिसके परिणामस्वरूप दोनों सांकेतिक और वास्तविक ब्याज दरों में गिरावट आई। सूचना प्रौद्योगिकी (आइटी) और आइटी से संबंधित कार्यकलापों में वृद्धि का आवास के लिए माँग पर सकारात्मक प्रभाव रहा। इसके अलावा, वेतन अर्जकों के लिए प्रदत्त कर प्रोत्साहनों ने प्रभावी ब्याज दर को नीचे लाते हुए आवास ऋणों को अधिक आकर्षक बनाया। इन सभी कारकों ने आवास ऋणों के लिए माँग की वृद्धि में अंशदान किया। खुदरा बैंक ऋण में तीव्र वृद्धि बदलती हुई उपभोक्ता जनसांख्यिकी (डेमोग्राफिक्स) द्वारा भी सुसाध्य हुई जो दोनों मात्रात्मक रूप से और गुणात्मक रूप से उपभोग में वृद्धि की विपुल संभावना को सूचित करती है। भारत युवा आबादी (35 वर्ष से कम आयु की) के अधिकतम अनुपात (70 प्रतिशत) वाले देशों में से एक है। क्रेडिट/डेबिट कार्ड, इंटरनेट और फोन-बैंकिंग, कहीं भी और कभी भी (एनीव्हेयर एण्ड एनीटाइम) बैंकिंग के रूप में सुविधापरक बैंकिंग ने अनेक नये ग्राहकों को बैंकिंग के दायरे में आकर्षित किया। एटीएम जैसे प्रौद्योगिकीगत नवोन्मेषों ने भी भारत में खुदरा बैंकिंग की वृद्धि में अंशदान किया।

6.109 क्रेडिट कार्डों ने विभिन्न व्यापारी प्रतिष्ठानों में विक्रय स्थलों (पीओएस) के माध्यम से लेनदेन के प्रयोग के माध्यम के रूप में बड़े पैमाने पर स्वीकृति प्राप्त की है। इसने देश के प्रमुख नगरों में, विशेष रूप से चार महानगरों में जहाँ बड़ी मात्रा में लेनदेन होते हैं, प्रयोग के तौर पर अधिक स्वीकृति पायी है। कुल ऋणों और अग्रिमों एवं कुल खुदरा ऋण में क्रेडिट कार्ड की प्राप्य राशियों का अंश मार्च 2004 के अंत में स्थित क्रमशः 0.7 प्रतिशत और 3.3 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2007 की समाप्ति पर क्रमशः 1.0 प्रतिशत और 3.8 प्रतिशत हो गया। क्रेडिट कार्ड के लेनदेनों में वृद्धि सूचना प्रौद्योगिकी में तीव्र उन्नति, विकासशील समष्टि-आर्थिक परिवेश और अनेक व्यष्टि-स्तरीय माँग और पूर्ति संबंधी तत्वों के कारण है। प्रौद्योगिकी ने उधारकर्ताओं के लिए बाह्य वित्त की लागत में उल्लेखनीय कमी को संभव बनाया, जबकि बैंक उत्पाद नवोन्मेषों एवं वसूली, प्रसंस्करण और सूचना के प्रयोग से संबद्ध लेनदेन की निम्नतर लागत से लाभान्वित हुए हैं। प्रौद्योगिकी ने बैंकों को जोखिम प्रबंध और उत्पादों के कीमत-निर्धारण के लिए बेहतर तकनीकें प्रदान की हैं।

6.110 आपूर्ति की ओर, औद्योगिक क्षेत्र द्वारा ऋण के लिए माँग में विशेष रूप से 1996-97 और 2001-02 के बीच मंदी आई जिसके परिणामस्वरूप बैंकों ने उधार देने के वैकल्पिक मार्गों के लिए तलाश करना शुरू किया। बैंकों ने अपने ऋण संविभाग के विविधीकरण की दृष्टि से भी खुदरा ऋणों को देखा, विशेष रूप से इसलिए कि सुधारों की प्रक्रिया के प्रारंभ होने से पहले कंपनी क्षेत्र को उधार के कारण बैंकों के तुलन-पत्र गंभीर रूप से क्षत हुए थे। इसके अलावा, बैंकों की राजकोषीय आय, जिसने 2002-03 और 2004-05 के बीच उनकी लाभप्रदता को मजबूत करने में सहायता की, हाल के वर्षों में कम हो गई। खुदरा और वैयक्तिक ऋणों के मामले में औसत आकार बहुत छोटा है तथा ऋण बड़ी संख्या में उधारकर्ताओं को व्यापक तौर पर वितरित किये गये हैं। तदनुसार खुदरा ऋणों के साथ संबद्ध औसत जोखिम भी काफी कम है। बंधक ऋणों के मामले में खास तौर से आवास और ऑटो ऋणों के लिए पर्याप्त समर्थक (कॉलेटरल) संरचना है। स्टॉक एवं संयंत्र और उपकरणों की अपेक्षा आवास ऋणों के यथार्थपरक विक्रय-मूल्य का निर्धारण करना भी ज्यादा आसान है। साथ ही, खुदरा ऋणों पर जोखिम समायोजित प्रतिफल सामान्यतः कंपनी ऋणों से उल्लेखनीय रूप में अधिक है। अतः बैंकों ने अपने खुदरा ऋण संविभाग का बड़े पैमाने पर विस्तार किया है। उपर्युक्त के अलावा, बैंकों के पास सुविधाजनक चलनिधि की स्थिति, जिसने आसान ऋण स्थितियों का निर्माण किया, ने उन्हें नये ग्राहकों की ओर अभिमुख होने के लिए प्रोत्साहित किया।

6.111 खुदरा ऋण में उच्च वृद्धि का परिदृश्य सभी बैंक समूहों में देखा गया। फिर भी, चूँकि विदेशी बैंकों की बैंक शाखाएँ सीमित हैं और अधिकांशतः शहरों और महानगरों में स्थित हैं, अतः वे विशेष रूप से शहरी वेतनभोगी वर्ग के उधारकर्ताओं के बीच वैयक्तिक ऋणों के संवर्धन में अधिक आक्रामक रहीं। तदनुसार कुल ऋण में वैयक्तिक ऋणों का अंश मार्च 2000 की समाप्ति पर विदेशी बैंकों के मामले में सबसे अधिक था। फिर भी, हाल के वर्षों में भारतीय निजी क्षेत्र के बैंक भी खुदरा ऋण खंड को बढ़ावा देने में अधिक आक्रामक बने। इसके परिणामस्वरूप, मार्च 2007 के अंत में निजी क्षेत्र के बैंकों द्वारा दिये गये कुल ऋण में वैयक्तिक ऋणों का अंश सभी बैंक समूहों के बीच सबसे अधिक रहा (चार्ट VI.26)।

6.112 हाल के वर्षों में केंद्रीय यूरोप, रूस, दक्षिणी अफ्रीका और सऊदी अरब जैसे देशों ने भी खुदरा ऋण में तीव्र वृद्धि देखी। उल्लेखनीय रूप में कोरिया, मलेशिया, चीन और इंडोनेशिया जैसे अन्य एशियाई देशों में भी इसी प्रकार की बढ़ोतरी की प्रवृत्ति देखी गई। विदेशी अनुभवों से यह विदित हुआ कि घरेलू ऋण में तेजी से वृद्धि दोनों माँग और आपूर्ति संबंधी तत्वों के कारण थी। इसके साथ ही, इनमें से अधिकांश देशों में उपभोग के स्वरूप में परिवर्तन तथा आवास और उपभोक्ता क्षेत्रों के लिए बैंक उधार को प्रतिबंधित करनेवाले विनियामक उपायों में छूट ने भी इस प्रवृत्ति के प्रति अनुकूल रूप में अंशदान किया। इन गतिविधियों के साथ अंतर्निहित माँग ने मूर्त रूप धारण किया (बैचेटा और गेरलैच, 1997)। कई देशों में प्राधिकारियों ने आवासीय निवेश को प्रोत्साहित करने के लिए स्वयं अनेक प्रोत्साहक उपाय किये जिन्होंने घरेलू माँग का पुनरुत्थान

**चार्ट VI.26 : कुल बैंक ऋण में वैयक्तिक ऋणों का अंश - बैंक समूह-वार (मार्च के अंत में)**

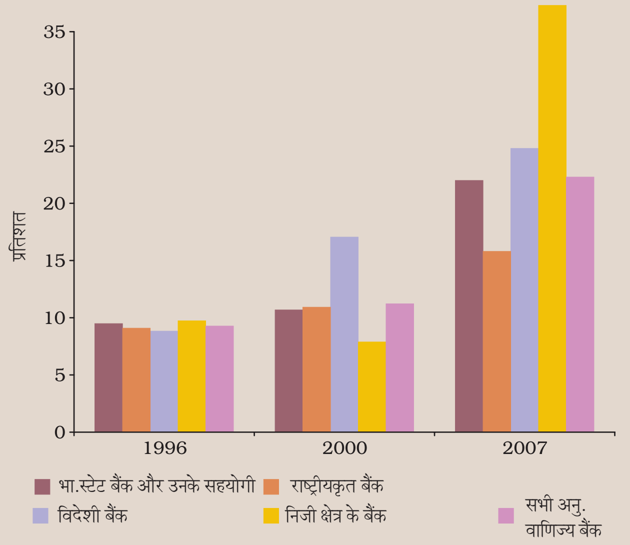


करने के लिए कार्यनीति के भाग के रूप में उधार-प्रेरित घरेलू उपभोग को आकर्षित किया । आपूर्ति संबंधी कारकों के विषय में बैंकिंग क्षेत्र द्वारा कई नवोन्मेष उत्पाद/उपाय और साधन लागू किये गये जो घर-परिवारों हेतु पर्याप्त लचीलेपन और सुविधा के साथ अधिकांश उपभोक्ताओं के लिए उपयुक्त रहे जिन्होंने संवर्धित बैंक ऋण प्रवाहों को आकर्षित किया । उदाहरण के लिए, अन्य बातों के साथ-साथ विभिन्न ब्याज दर वाले बंधकों एवं लचीले भुगतान के विकल्पों से युक्त क्रेडिट कार्ड ने भारत सहित अधिकांश देशों में उपभोक्ता अथवा खुदरा ऋण में तेजी का संवर्धन करने में वास्तव में सहायता प्रदान की । निम्नतर और स्थिर मुद्रास्फीति के साथ ब्याज दरों में सामान्य गिरावट ने भी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में क्रय-शक्ति को बढ़ा दिया । उपर्युक्त कारकों की वजह से कई देशों में घरेलू क्षेत्रों में ऋण की वृद्धि के लिए एक असाधारण मजबूत माँग थी (मोहंती और अन्य, 2006)(सारणी 6.26)।

6.113 खुदरा ऋण अमरीका के बैंकिंग उद्योग में भी कार्यनीति के तौर पर बल दिया जानेवाला एक मुख्य क्षेत्र बन गया । बैंक स्तर पर अमरीका में किये गये एक अध्ययन में यह बताया गया है कि खुदरा बैंकिंग का प्रधान आकर्षण यह विश्वास है कि इसका राजस्व स्थिर है और इस प्रकार खुदरा से इतर व्यवसायों में अस्थिरता को वह प्रतिसंतुलित कर सकता है । बैंकिंग उद्योग के कुछ विश्लेषकों ने यह तर्क दिया कि खुदरा बैंकिंग ने कम जोखिम के साथ अधिक प्रतिलाभ दिये हैं । साहित्य यह संकेत करता है कि जैसे ही बैंक खुदरा बैंकिंग कार्यकलापों पर अधिक ध्यान केंद्रित करते हैं, वैसे ही दोनों जोखिम और प्रतिलाभ कम हो जाते हैं जोकि उस पारंपरिक वित्त सिद्धांत के अनुरूप है जो यह विचार करते समय कि व्यावसायिक कार्यनीति में व्यापक परिवर्तनों द्वारा जोखिम और

**सारणी 6.26 : बैंक ऋण की संरचना : विभिन्न देशों के बीच तुलना@**

(प्रतिशत)

| देश | आवास ऋण | | | उपभोक्ता ऋण | | | व्यावसायिक ऋण | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1994 | 1999 | 2004 | 1994 | 1999 | 2004 | 1994 | 1999 | 2004 |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| **लातीन अमरीका** | | | | | | | | | |
| अर्जेन्टीना | .. | 18 | 7 | .. | 15 | 7 | .. | 38 | 17 |
| चिली | 13 | 17 | 21 | 8 | 9 | 12 | 79 | 74 | 67 |
| कोलंबिया | .. | 7 | 11 | .. | 15 | 14 | .. | 56 | 39 |
| मेक्सिको | 17 | 16 | 9 | 7 | 4 | 13 | 62 | 36 | 28 |
| वेनेजुला | .. | 4 | 1 | .. | 18 | 7 | 44 | 55 | 47 |
| **एशिया** | | | | | | | | | |
| हांगकांग एसएआर | 7 | 15 | 15 | 2 | 3 | 3 | 86 | 76 | 73 |
| **भारत** | **3** | **3** | **10** | **9** | **10** | **20** | **48** | **49** | **38** |
| इंडोनेशिया | .. | 5 | 6 | .. | 7 | 18 | .. | 60 | 37 |
| इज़राइल | .. | .. | 8 | 15 | 10 | 9 | .. | .. | .. |
| कोरिया | .. | 9 | 33 | .. | 18 | 17 | .. | 69 | 47 |
| मलेशिया | 10 | 18 | 28 | .. | 8 | 16 | .. | 64 | 45 |
| थाईलैंड | 9 | 7 | 10 | 4 | 3 | 6 | 64 | 71 | 68 |
| तुर्की | .. | .. | 2 | 2 | 3 | 6 | 76 | 58 | 39 |
| सिंगापुर | 14 | 20 | 26 | 13 | 12 | 15 | 60 | 51 | 39 |
| **केंद्रीय यूरोप** | | | | | | | | | |
| चेक गणराज्य* | .. | 10 | 16 | .. | 4 | 5 | .. | 41 | 37 |
| हंगरी | .. | 3 | 17 | .. | 6 | 8 | .. | 62 | 46 |
| पोलैंड | .. | 2 | 10 | .. | 21 | 23 | .. | 44 | 35 |

.. : उपलब्ध नहीं ।
@ : वाणिज्य बैंकों के कुल देशी ऋण में अंशों को दर्शाता है ।
* : स्तंभ 3, 6 और 9 में दिये गये आंकड़े 2002 से संबंधित हैं ।
**स्रोत :** एम.एस.मोहंती और अन्य (2006) से गृहीत । भारत के लिए आंकड़े मूल सांख्यिकीय विवरणियाँ, विभिन्न अंक, भारतीय रिज़र्व बैंक से लिये गये हैं ।

प्रतिलाभ कैसे प्रभावित होते हैं, एक अपेक्षाकृत दीर्घावधि के परिप्रेक्ष्य को ग्रहण करने के महत्व को रेखांकित करता है (क्लार्क और अन्य, 2007)। अमरीका में कई बड़ी बैंक होल्डिंग कंपनियों में 50 से 75 प्रतिशत तक का राजस्व खुदरा बैंकिंग के कारण है । उससे भी अधिक दिलचस्प बात यह है कि संगठनात्मक तौर पर अमरीका में कई बड़ी बैंकिंग कंपनियों के पास उनके अपने प्रबंध और वित्तीय रिपोर्टिंग संरचना के साथ केवल खुदरा बैंकिंग की इकाइयाँ हैं ।

6.114 अमरीका में कई बड़े बैंकिंग संगठनों के लिए खुदरा बैंकिंग राजस्व और लाभ का एक महत्वपूर्ण स्रोत है । बड़े बैंकों की वार्षिक रिपोर्टों और सार्वजनिक वित्तीय विवरणों के नमूने से प्राप्त आंकड़े यह संकेत करते हैं कि इनमें से अधिकांश संस्थाओं में निवल परिचालन राजस्व (निवल ब्याज आय में ब्याजेतर आय को जोड़कर) के 50 और 75 प्रतिशत के बीच खुदरा बैंकिंग कार्यकलापों से प्राप्त किया जाता है । बैंकिंग उद्योग के विश्लेषक और स्वयं बैंक एकमत से खुदरा बैंकिंग के सर्वाधिक महत्वपूर्ण लक्षण और आधुनिक हित के लिए एक मुख्य प्रेरक के रूप में राजस्व और लाभ की स्थिरता की ओर निर्दिष्ट करते हैं । बड़ी संख्या में छोटे, प्रायः अधिकतर संपार्श्विकीकृत ऋणों से युक्त खुदरा उधार संविभाग का अर्थ यह है कि ग्राहकों के बीच विविधीकरण के कारण समय के चलते उधार से प्राप्त होनेवाली आय कम अस्थिर हो सकती है । क्लार्क और अन्य 2007 ने यह टिप्पणी की कि '.. ..यह प्रतीत होता है कि उद्योग के पर्यवेक्षकों के बीच सैद्धांतिक साक्ष्य द्वारा समर्थित मतैक्य है कि खुदरा कार्यकलाप अन्य बैंकिंग गतिविधियों की तुलना में अधिक स्थिर होने की प्रवृत्ति दर्शाते हैं.. ..'। तथापि एक धारणा इसके विपरीत भी रही है । हर्टल और स्टिरोह (2007) ने टिप्पणी की कि जबकि खुदरा बैंकिंग अपेक्षाकृत एक स्थिर गतिविधि हो सकती है, वह अपेक्षाकृत कम प्रतिलाभ देनेवाला भी है। खुदरा ऋणों के कारण बैंकिंग प्रणाली को कुछ जोखिमों का सामना भी करना पड़ता है (बॉक्स VI.15)।

6.115 सारांश के रूप में बैंक ऋण के स्वरूप में एक उल्लेखनीय और पहचानने योग्य परिवर्तन खुदरा या घरेलू ऋण के अंश में तीव्र वृद्धि थी जिसमें मुख्य रूप से आवास ऋण, मीयादी जमाराशियों की जमानत पर व्यक्तियों को अग्रिम, क्रेडिट कार्ड, शैक्षणिक ऋण, उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं की खरीद के लिए ऋण और संबंधित मदें शामिल हैं । भारत में वित्तीय क्षेत्र सुधार प्रारंभ करने के परिणामस्वरूप बैंकों को खुदरा ऋणों के संबंध में मात्रा, ब्याज दर, मार्जिन की अपेक्षा, चुकौती अवधि और अन्य संबंधित शर्तें निर्धारित करने की स्वतंत्रता दी गई थी । समग्र खुदरा ऋण की वृद्धि के पीछे ये छूटें एक प्रेरक शक्ति थीं । दोनों माँग और पूर्ति संबंधी कारकों ने आवास को ऋण में तीव्र वृद्धि में अंशदान किया जो खुदरा बैंक ऋण का मुख्य आधार बन चुका है । माँग की ओर, दोनों समष्टि और व्यष्टि स्तरीय कारकों, विशेष रूप से जीडीपी में तीव्र वृद्धि ने ऋण के लिए बढ़ी हुई माँग में अंशदान किया । मध्यवर्गीय जनता के आकार में वृद्धि के साथ ही, उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं के लिए माँग भी बढ़ी जिससे बैंक वित्तीयन के लिए नई माँग

**बॉक्स VI.15**
**खुदरा उधार की जोखिमें**

उपभोक्ता क्षेत्र का आघात खुदरा फ्रैन्चाइज़ को दोनों आस्ति और देयता की ओर हानि पहुँचा सकता है । बैंकिंग प्रणाली स्वयं इस प्रकार उपभोक्ता क्षेत्र में एक समष्टि-आर्थिक गिरावट के सामने अधिक (एक्सपोज्ड) हो सकती है, और संभवतः इसके निहितार्थ अर्थव्यवस्था-व्यापी होंगे । उदाहरण के लिए बेर्नानके (1983) यह चेतावनी देते हैं कि बैंक सूचनात्मक तौर पर अपारदर्शी छोटे व्यवसायों, जिनमें खुदरा बैंकिंग भी शामिल है, को ऋण उपलब्ध कराने की अपनी क्षमता के चलते अर्थव्यवस्था में एक विशेष भूमिका निभाते हैं । तथापि, उपभोक्ता क्षेत्र में गिरावट की स्थिति में यह क्षेत्र सर्वाधिक प्रभावित है जो क्रमशः एक मौद्रिक नीति की प्रतिक्रिया की सीमा को प्रभावित कर सकता है।

जहाँ तक उपभोक्ता क्षेत्र का संबंध है, एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि यह क्षेत्र अपने आप में कई समष्टि-आर्थिक कारकों के प्रति अतिसंवेदनशील है, जैसे तेल की कीमतों में वृद्धि, स्थावर संपदा (रियल एस्टेट) की कीमतों में वृद्धि, रोजगार में कमी जिससे उपभोक्ता क्षेत्र की व्यय-शक्ति घट जाती है, मुद्रास्फीति में सामान्य वृद्धि आदि । यही एक ऐसा क्षेत्र है जो अर्थव्यवस्था में किसी भी अन्य क्षेत्र से अधिक प्रभावित हो जाता है । अतः इस क्षेत्र को बड़े पैमाने पर एक्सपोज़र के प्रणालीगत निहितार्थ हैं ।

एक अति तीव्र संपत्ति बाजार जोखिम का एक और स्रोत हो सकता है । उदाहरण के लिए आवास ऋणों की दोनों माँग और पूर्ति अति-आशावादी अनुमानों और संपत्ति की कीमतों, आवास की संपार्श्विक जमानत के उदार मूल्यांकन और मूल्य की तुलना में ऋण के उच्च अनुपातों, संपत्ति की कीमतों में गिरावट के प्रति एक्सपोज होनेवाले घर-परिवारों और बैंकों द्वारा कायम रखी जा सकती हैं ।

एक और संभाव्य असुरक्षिता घर-परिवारों को उधार देते समय बैंकों द्वारा जोखिमों के संभावित कम आकलन से उत्पन्न हो सकती है । हाल में कई देशों में यह देखा गया कि अत्यधिक चलनिधि, खुदरा ऋण बाजारों में प्रतियोगिता और मजबूत आय वृद्धि प्रचक्रीय उधार व्यवहार को प्रेरित कर सकती हैं जिसके द्वारा बैंक ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए या तो अत्यधिक मात्रा में कम ब्याज दरें लगाकर या समर्थक जमानत (कॉलेटरल) की अपेक्षाएँ कम करके उधार के मानकों को आसान कर देते हैं (मोहंती और अन्य 2006)। ऐसी कम ब्याज दरें सभी संभव जोखिमों की सही तौर पर क्षतिपूर्ति नहीं कर सकती हैं ।

कुछ देशों में प्रणालीगत रूप में बहुत बड़े बैंक बड़े पैमाने पर खुदरा बैंकिंग में लिप्त हैं । यह संभव है कि गिरावट की स्थिति में अंततः यह समग्र रूप में प्रणाली को प्रभावित कर सकता है जिससे ऐसी गिरावटों के प्रति प्रणाली को असुरक्षित स्थिति में रहना पड़ सकता है ।

**संदर्भ :**

मोहंती, एम. एस., गेर्ट स्क्नैबेल और पाब्लो गार्सिया-लूना, 2006 । ''बैंक्स एण्ड एग्रिगेट क्रेडिट : व्हाट इज़ न्यू?'' *बीआइएस पेपर्स सं. 28* ।

निर्मित हुई । आपूर्ति की ओर, अनुभव किये गये उच्चतर प्रतिलाभों, कम और विविधीकृत जोखिम (लेनदेनों के छोटे आकार के कारण) और प्रायः संपार्श्विकीकृत उधार ऐसे कुछ मुख्य तत्व थे जिन्होंने समूचे बैंकिंग स्पेक्ट्रम में घरेलू क्षेत्र के लिए ऋण की वृद्धि को प्रेरित किया । भारतीय संदर्भ में हाल के वर्षों में खुदरा उधार बैंकों के लिए एक मुख्य लाभ-प्रेरक के रूप में उभरा है । निजी क्षेत्र के नये बैंकों के प्रवेश से भी खुदरा ऋणों को लाभ हुआ जिन्होंने अपने संविभागों में खुदरा ऋण पर अधिक ध्यान केंद्रित किया। प्रसंगवश, कई अन्य देशों में भी, विशेष रूप से उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में बैंकों के ऋण संविभाग में तेजी से वृद्धि हुई ।

## VIII. बैंकों के निवेश कार्य

6.116 वाणिज्य बैंकों के निवेश तीन प्रकार के हैं, अर्थात् सरकारी प्रतिभूतियाँ, अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियाँ और गैर-अनुमोदित प्रतिभूतियाँ । इन तीनों को मोटे तौर पर एसएलआर निवेशों (सरकारी और अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियाँ) और गैर-एसएलआर निवेशों (जिनमें कंपनी क्षेत्र द्वारा जारी किये गये वाणिज्यिक पत्र, शेयर, बांड और डिबेंचर शामिल हैं) के रूप में श्रेणीबद्ध किया गया है । बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 के अंतर्गत बैंकों से अपेक्षित है कि वे अपनी निवल माँग और मीयादी देयताओं के निर्धारित न्यूनतम प्रतिशत का निवेश सरकारी और अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों में करें ।

6.117 वित्तीय क्षेत्र सुधारों से पहले, बैंकों के परिचालनगत लचीलेपन को संकुचित करनेवाला और बैंकों की आय अर्जन क्षमता को मंद करनेवाला एक प्रमुख तत्व न्यूनतम सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) के रूप में निदेशित निवेश का तंत्र था जिसे 22 सितंबर 1990 तक 38.5 प्रतिशत के उच्च स्तर तक बढ़ाया गया था । फिर भी, एसएलआर को क्रमशः 25 अक्तूबर 1997 तक कम करके25 प्रतिशत के तत्कालीन सांविधिक न्यूनतम स्तर तक ला दिया गया था । इसने बैंकों को अपने निवेश संविभाग का चयन करने के लिए अधिकाधिक लचीलापन उपलब्ध कराया।

6.118 एक लंबे समय तक भारत में वाणिज्य बैंकों को मिश्रित पूँजी कंपनियों के शेयरों और डिबेंचरों में निवेश करने से निरुत्साहित किया गया था । तथापि, इस संबंध में नीति को 1985 से उदार बनाया गया था। पात्र निवेशों की सीमा को बढ़ाया गया था ताकि उसमें वाणिज्यिक पत्रों (सीपी), म्यूच्युअल फंडों की यूनिटों, सरकारी क्षेत्र उपक्रमों (पीसीयू) के शेयरों और डिबेंचरों को सम्मिलित किया जा सके जो सबके सब गैर-एसएलआर निवेशों के रूप में जाने जाते हैं । इसी प्रकार, पूँजी बाजार में निवेशों संबंधी सीमा को भी समय-समय पर संशोधित किया गया। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष एक्सपोजरों के अंतर्गत सभी रूपों में पूँजी बाजार में बैंकों का कुल एक्सपोजर (निधि आधारित और गैर-निधि आधारित दोनों) 15 दिसंबर 2006 को जारी और 1 अप्रैल 2007 से प्रभावी दिशानिर्देशों के अनुसार निवल मालियत (नेट वर्थ) के 40 प्रतिशत पर निर्धारित किया गया ।

*बैंकों के निवेश कार्यों की प्रवृत्तियाँ*

6.119 अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा निवेश 1970 के दशक में 22.3 प्रतिशत, 1980 के दशक में 19.9 प्रतिशत और 1990 के दशक में17.0 प्रतिशत बढ़े । तथापि, निवेश 2000-07 की अवधि के दौरान मंद होकर 14.8 प्रतिशत रह गए (चार्ट VI.27)।

6.120 सांविधिक चलनिधि अनुपात को चरणबद्ध रूप में फरवरी 1992 के 38.5 प्रतिशत से घटाकर अक्तूबर 1997 में 25 प्रतिशत कर दिया गया । फिर भी, बैंकों ने अपने जोखिम निवारक व्यवहार और औद्योगिक क्षेत्र की मंदी के कारण सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश करना जारी रखा (चार्ट VI.28)।

6.121 प्रसंगवश, ऋण के प्रति कम माँग की अवधि उस अवधि के साथ मेल खाती है जब बैंक अपनी पूँजी के स्तरों को बढ़ाने और अनर्जक आस्तियों(एनपीए) को कम करने के लिए प्रयास कर रहे थे । पूँजी पर्याप्तता मानदंडों के कार्यान्वयन, जिसके अनुसार बैंकों से अपेक्षा की गई कि वे 31 मार्च 1996 से पूँजी के रूप में अपनी जोखिम-भारित अस्तियों का 8 प्रतिशत बनाये रखें, तथा अपने एनपीए स्तरों को नीचे लाने के लिए बैंकों पर दबाव ने बैंकों को जोखिम के प्रति कुछ विमुख बनाया । यह वह समय भी था जब उद्योगों के कुछ खंडों, जैसे मूलभूत धातु और मिश्र धातु उद्योग, रसायन, सीमेंट, लोहा और इस्पात, और वस्त्रों ने विफलता का सामना किया जिससे बड़े पैमाने पर एनपीए बन गए। इस स्थिति के होते हुए सरकारी और अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों

चार्ट VI.27 : अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा निवेशों की वृद्धि दर

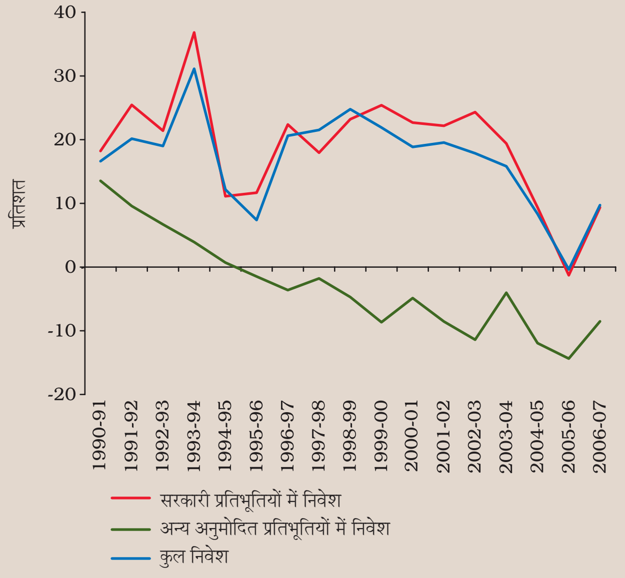

**चार्ट VI.28 : अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) निवेश (मार्च के अंत में)**

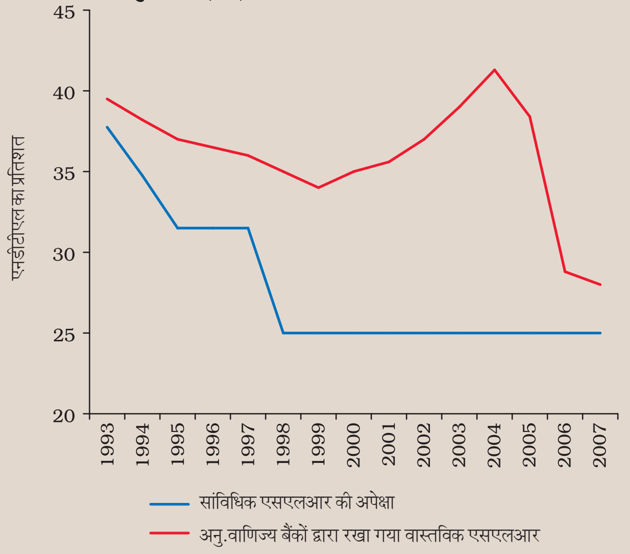


**चार्ट VI.29 : बैंक ऋण में वृद्धि और अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश**

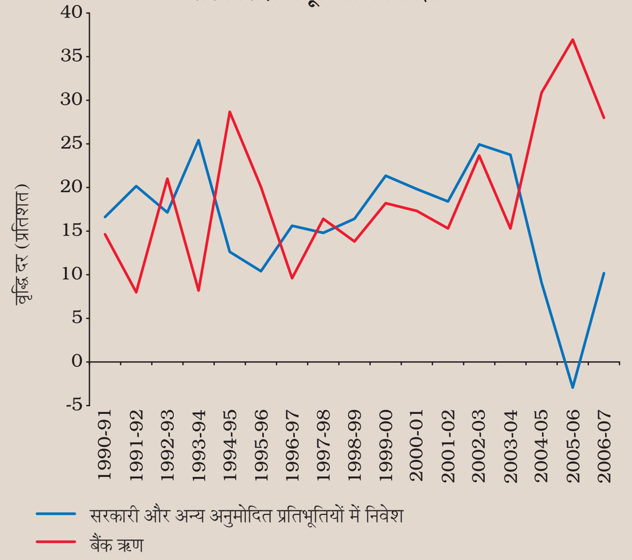


में निवेश, जिन पर शून्य-जोखिम भार लागू हुए, बैंकों द्वारा निवेशों का वरीयता-प्राप्त रूप बन गए। यह भी संभव है कि एक विकासशील ऋण बाजार की उपस्थिति में गिरती हुई ब्याज दर के परिदृश्य में यह एक युक्तिसंगत, लाभ को अधिकतम करनेवाली कार्यनीति थी (मोहन,2004)। यह गतिविधि इस सहजानुभूत तर्क के अनुसार थी कि जोखिम-आधारित पूँजी की अपेक्षा में वृद्धि, बैंक को ऋणों से प्रतिभूतियों में निवेश में अंतरण के लिए प्रेरित कर सकती है। जब भी विनियामक आरक्षित निधि की अपेक्षा में वृद्धि हुई तब अन्य देशों में भी इसी प्रकार का बैंक व्यवहार पाया गया। बैंक व्यवहार के संबंध में ठाकोर (1996) एवं पैसमोर और शैर्प (1994) द्वारा किये गये अनुभवमूलक शोध से भी ऐसे ही निष्कर्ष निकले।

6.122 कुल जमाराशियों की वृद्धि 2003-04 के 16.4 प्रतिशत से घटकर 2004-05 में 15.4 प्रतिशत रह गई क्योंकि बैंकों ने अन्य बचत लिखतों से बढ़ी हुई प्रतियोगिता का सामना किया। फिर भी, ऋण की माँग पहले घरेलू क्षेत्र से और उसके बाद अन्य क्षेत्रों से तेजी से बढ़ी। इन कारकों के समुच्चय ने बैंकों के निवेश संविभाग में उल्लेखनीय समायोजन को प्रेरित किया। बैंकों ने 2004-05 में सरकारी प्रतिभूतियों में नये निवेशों को सीमित करते हुए तथा उसके बाद 2005-06 में सरकारी प्रतिभूतियों का परिसमापन करते हुए बढ़ी हुई ऋण की माँग पूरी करने का प्रयास किया। सरकारी प्रतिभूतियों में बैंकों के निवेश में पुनः वर्ष 2006-07 में बढ़ोतरी हुई (चार्ट VI.29 और चार्ट VI.30)।

6.123 गैर-एसएलआर प्रतिभूतियों में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के निवेशों में वृद्धि में 1997-98 और 2001-02 के बीच कमी आई, परंतु उसके बाद उसका एक अनियमित स्वरूप देखा गया जो मुख्य रूप से बैंकों के ऋणों और अग्रिमों एवं एसएलआर निवेशों के मुख्य संविभाग की प्रतिक्रिया में समायोजन के कारण था। 2006-07 के दौरान कारपोरेट क्षेत्र द्वारा जारी की गई गैर-एसएलआर प्रतिभूतियों (अर्थात् बांड/डिबेंचर/शेयर और वाणिज्यिक पत्र) में बैंकों के निवेशों में पिछले वर्ष के 15.2 प्रतिशत की गिरावट की तुलना में 5.0 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो जमाराशियों में तीव्र वृद्धि और ऋण में मंदी को सूचित करता है। जबकि बांडों/डिबेंचरों में निवेश तेजी से घटे, वहीं शेयरों और वाणिज्यिक पत्र में निवेश बढ़ गए।

**चार्ट VI.30 : अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की प्रमुख आस्तियां (मार्च के अंत में)**

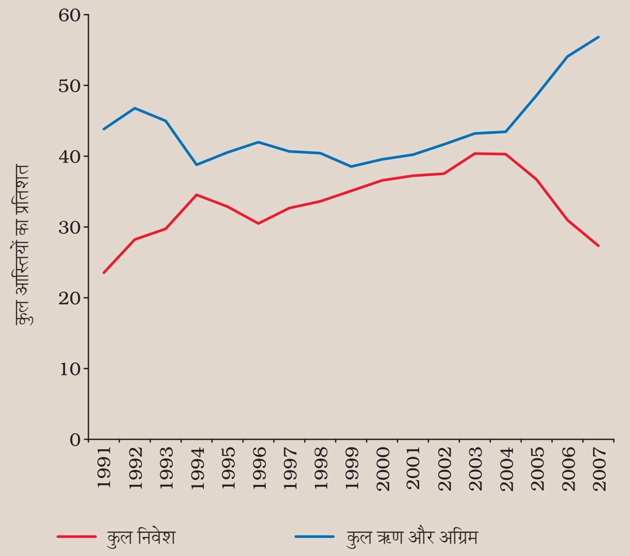

6.124 बैंकों की कुल आस्तियों में गैर-एसएलआर निवेशों का अंश 1998 के 5.4 प्रतिशत से लगातार बढ़कर 2001 में 7.6 प्रतिशत हो गया, परंतु उसके बाद मार्च 2007 के अंत तक वह कम होकर 2.9 प्रतिशत रह गया (सारणी 6.27)।

6.125 लिखतों के तौर पर बांड/डिबेंचर गैर-एसएलआर निवेशों का सबसे बड़ा घटक रहे, यद्यपि कुल गैर-एसएलआर निवेशों में उनका अंश 1998 के 85.4 प्रतिशत की तुलना में घटकर मार्च 2007 के अंत में 67 प्रतिशत रह गया। दूसरी ओर इक्विटियों का अंश विशेष रूप से 2004-05 से लगातार बढ़ा। कुल गैर-एसएलआर निवेशों में वाणिज्यिक पत्रों (सीपी) का अंश वर्षों से घटता-बढ़ता रहा।

6.126 बैंक-समूहवार निवेश-जमा अनुपात के विश्लेषण से कुछ दिलचस्प विशेषताओं का पता चलता है। 1992 से 2007 तक अधिकांश वर्षों में सभी बैंक-समूहों के बीच विदेशी बैंकों का जमाराशियों की तुलना में निवेशों का (आइडी) अनुपात सबसे अधिक था (चार्ट VI.31)।

6.127 पारंपरिक रूप से अग्रिमों पर अर्जित ब्याज के रूप में नापा गया अग्रिमों पर प्रतिलाभ निवेशों पर प्रतिलाभ की तुलना में अधिक था। फिर भी, दोनों के बीच का अंतर 1990 के दशक के प्रारंभ में क्षीण होने लगा, जब सरकारी प्रतिभूतियों पर ब्याज दरों को मुक्त किया गया। निवेशों पर प्रतिलाभ की दर अब अग्रिमों पर प्रतिलाभ की दर से भिन्न हो गई है (चार्ट VI.32)।

**सारणी 6.27 : अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के गैर-सांविधिक चलनिधि अनुपात (नॉन-एसएलआर) निवेश**

| मार्च के अंत में | कुल गैर-एसएलआर निवेशों में अंश (प्रतिशत) | | | कुल गैर-एसएलआर निवेश | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | वाणिज्यिक पत्र | शेयर | बांड/डिबेंचर | राशि (करोड़ रुपये) | वार्षिक वृद्धि (प्रतिशत) | बैंकों की कुल आस्तियों में अंश (प्रतिशत) |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| 1998 | 7.5 | 7.1 | 85.4 | 32,461 | 74.8 | 5.4 |
| 1999 | 8.3 | 8.1 | 83.7 | 48,376 | 49.0 | 6.9 |
| 2000 | 8.2 | 7.8 | 84.0 | 61,408 | 26.9 | 7.3 |
| 2001 | 10.6 | 7.5 | 81.9 | 75,844 | 22.9 | 7.6 |
| 2002 | 10.5 | 7.3 | 82.2 | 80,999 | 6.8 | 7.1 |
| 2003 | 4.3 | 9.7 | 86.0 | 92,854 | 14.6 | 6.6 |
| 2004 | 4.2 | 9.7 | 86.0 | 88,985 | -4.2 | 5.4 |
| 2005 | 4.2 | 12.7 | 83.1 | 93,664 | 5.3 | 4.7 |
| 2006 | 6.1 | 16.1 | 77.9 | 79,464 | -15.2 | 3.4 |
| 2007 | 11.0 | 22.0 | 67.0 | 83,466 | 5.0 | 2.9 |

**टिप्पणी** : आंकड़े वित्तीय वर्ष के अंतिम रिपोर्टिंग शुक्रवार पर आधारित हैं। आंकड़ों में वित्तीय संस्थाओं और म्युच्युअल फंडों निधियों की लिखतों में बैंकों के निवेश शामिल नहीं हैं।
**स्रोत** : भारतीय रिजर्व बैंक।

**चार्ट VI.31 : बैंक समूह-वार निवेश-जमा अनुपात (मार्च के अंत में)**

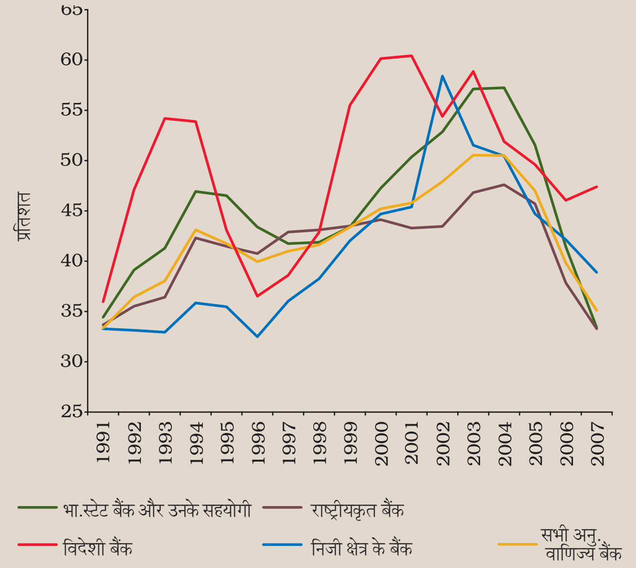


6.128 भारत में बैंकों ने एसएलआर के निर्धारण के कारण निवेशों के एक उल्लेखनीय अंश को ऐतिहासिक रूप से बनाये रखा है। उनके गैर-एसएलआर निवेश उनकी कुल आस्तियों का एक छोटा प्रतिशत (मार्च 2007 के अंत में 2.9 प्रतिशत) रहे हैं। तथापि, यह पाया गया है कि अन्य देशों में भी बैंक अपनी आस्तियों के काफी बड़े अंश को निवेशों के रूप में बनाये रखते हैं। इटली, मेक्सिको, चिली, दक्षिण कोरिया, इंडोनेशिया, थाईलैंड, मलेशिया और रूसी महासंघ की तुलना में भारत में निवेशों का अनुपात अपेक्षाकृत अधिक रहा है, परंतु कई अन्य देशों की तुलना में यह कम है (सारणी 6.28)।

**चार्ट VI.32 : अग्रिमों पर प्रतिलाभ और निवेशों पर प्रतिलाभ**

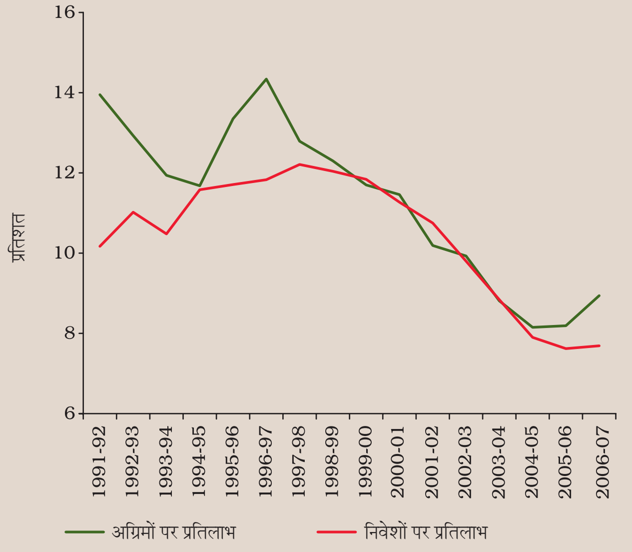

### सारणी 6.28 : कुल आस्तियों में निवेश का अंश : चयनित देश

(प्रतिशत)

| देश | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ** | | | | | | | |
| कनाडा | 31.8 | 30.6 | 32.9 | 33.2 | 34.6 | 36.9 | 36.4 |
| फ्रांस | 17.1 | 16.7 | 22.1 | 24.4 | 47.7 | 48.5 | 47.3 |
| जर्मनी | 31.1 | 33.1 | 36.7 | 39.5 | 40.7 | 41.9 | 39.3 |
| इटली | 12.1 | 9.6 | 8.8 | 10.5 | 18.6 | 24.1 | 22.0 |
| जापान | 26.7 | 25.8 | 28.9 | 32.1 | 33.7 | 33.5 | 33.3 |
| युनाइटेड किंगडम | 38.3 | 36.2 | 29.6 | 45.3 | 28.6 | 31.9 | 31.5 |
| अमरीका | 25.5 | 28.4 | 30.5 | 31.0 | 30.7 | 29.1 | 29.2 |
| **उभरती अर्थव्यवस्थाएँ** | | | | | | | |
| ब्राजील | 40.1 | 40.2 | 37.2 | 35.6 | 35.9 | 34.8 | 36.0 |
| चीन | 13.2 | 15.8 | 21.1 | 22.7 | 25.2 | 30.6 | 31.2 |
| चिली | 19.9 | 21.4 | 23.0 | 21.7 | 19.9 | 18.0 | 14.7 |
| **भारत** | **38.6** | **39.0** | **41.4** | **41.1** | **37.3** | **31.3** | **27.6** |
| इंडोनेशिया | 57.0 | 48.8 | 45.0 | 37.6 | 30.6 | 27.3 | 24.3 |
| मलेशिया | 17.5 | 17.7 | 17.5 | 17.8 | 17.9 | 17.5 | 18.8 |
| मेक्सिको | 13.8 | 18.5 | 16.7 | 21.7 | 23.5 | 22.3 | 20.7 |
| फिलिपीन्स | 13.9 | 24.1 | 10.9 | 10.5 | 36.4 | 35.4 | 32.2 |
| रूसी महासंघ | 14.5 | 13.4 | 18.9 | 19.2 | 16.8 | 15.8 | 13.4 |
| दक्षिण कोरिया | 26.5 | 26.0 | 21.4 | 19.5 | 19.7 | 20.4 | 18.6 |
| थाईलैंड | 19.7 | 23.2 | 25.8 | 26.3 | 19.8 | 16.6 | 15.2 |

**स्रोत :** बैंकस्कोप । भारत के लिए आंकड़े भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियाँ, विभिन्न अंक, भारतीय रिज़र्व बैंक से लिये गये हैं।

6.129 सारांश के रूप में, 1990 के दशक के मध्य से बैंकों के लिए उनके निवेश संविभाग में अधिकाधिक लचीलापन प्रदान किया गया है। बैंकों ने इस लचीलेपन का उपयोग प्रतिलाभों को अधिकतम बनाने के लिए किया है । बैंकों ने सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश करना उस समय भी जारी रखा जब 1990 के दशक के मध्य में एसएलआर को उल्लेखनीय रूप में नीचे लाया गया । यह मुख्य रूप से इसलिए था कि ऋण की माँग मंद हो गई थी और बैंकों ने भी सरकारी प्रतिभूतियों पर जोखिम-समायोजित प्रतिलाभ को अधिक आकर्षक पाया था । तथापि, बैंकों ने सरकारी प्रतिभूतियों के अधिक स्टॉक की तब बिक्री (ऑफलोड) कर दी जब ब्याज दरें नरम हुईं (और प्रक्रिया में बड़े व्यापारिक लाभ अर्जित किये) तथा ऋण की माँग में वृद्धि हुई । बैंकों की एसएलआर संविभाग की अपेक्षा और ऋण की माँग की प्रतिक्रिया में बैंकों द्वारा गैर-एसएलआर निवेशों का तेजी से समायोजन किया गया । बैंकों द्वारा धारित निवेशों पर प्रतिलाभ अब उनके ऋणों और अग्रिमों पर प्रतिलाभों के साथ समरूप हो गये ।

6.130 अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के उधार और निवेश कार्यों के समग्र विश्लेषण से विदित होता है कि 1990 के दशक के प्रारंभ से अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा ऋण के तीन सुस्पष्ट चरण देखे गये हैं । पहले चरण (1990-91 से 1995-96) में बैंक ऋण की वृद्धि ने अनियमित व्यवहार दर्शाया । दूसरे चरण (1996-97 से 2001-02) में बैंक ऋण की वृद्धि में तेजी से गिरावट हुई और वह दायरा-बद्ध रह गई । तीसरे चरण (2002-03 से 2006-07) में ऋण की वृद्धि उच्च रही है । बैंकों के ऋण संविभाग ने मुख्य रूप से वास्तविक अर्थव्यवस्था में गतिविधियों तथा उनकी अपनी स्थिति के प्रति प्रतिक्रिया दर्शाई । बैंक ऋण की वृद्धि में 1996-97 से 2001-02 तक कमी रही जब औद्योगिक क्षेत्र में मंदी आई और बैंकों की स्थिति कमजोर हो गई थी । तथापि, ऋण की वृद्धि ने 2002-03 से आगे गति पकड़ी जब ऋण की माँग बढ़ गई और बैंकों की स्थिति में सुधार आया । भारत में जीडीपी की तुलना में ऋण के अनुपात में भी वर्तमान दशक में उल्लेखनीय रूप में वृद्धि हुई । फिर भी, भारत में जीडीपी की तुलना में ऋण का अनुपात उन्नत अर्थव्यवस्थाओं और कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उल्लेखनीय रूप में कम था जैसा कि भारत की प्रति व्यक्ति आय को देखते हुए प्रत्याशित है।

6.131 बैंक ऋण 2002 से आगे एक प्रमुख संरचनात्मक परिवर्तन से गुजरा । कृषि को ऋण में वृद्धि ने 2003-04 से आगे उल्लेखनीय रूप में गति पकड़ी । यद्यपि कुल बैंक ऋण में कृषि ऋण के अंश में वर्षों से कमी रही है, तथापि यह आवश्यक है कि इसे जीडीपी में कृषि के अंश में गिरावट के संदर्भ में देखा जाना चाहिए । ऋण-प्रधानता (क्षेत्रीय जीडीपी के प्रतिशत के रूप में कृषि ऋण) उल्लेखनीय रूप में बढ़ी । वास्तव में, 2006-07 में कृषि की ऋण प्रधानता अब तक के सर्वोच्च स्तर पर थी। विभिन्न देशों के बीच तुलना करने से यह संकेत मिलता है कि भारत में स्थित बैंकों के मामले में कुल बैंक ऋण में कृषि क्षेत्र को बैंक ऋण का अंश अन्य

देशों की तुलना में अधिक था । हाल के वर्षों में भारत में कृषि क्षेत्र को वाणिज्य बैंकों के ऋण की प्रधानता जर्मनी, थाईलैंड और इंडोनेशिया जैसे कुछ देशों से अधिक थी, परंतु यूके, आस्ट्रेलिया और अमरीका से कम ।

6.132 उद्योग को बैंक ऋण में 2000-01 और 2005-06 के बीच तेजी रही । भारतीय कंपनियों के वित्तीयन के स्वरूप ने भी कंपनियों की निधियों के कुल स्रोतों में बैंक उधारों के अंश में तीव्र वृद्धि का संकेत किया है । परिणामस्वरूप, उद्योग के ऋण की प्रधानता 2001-02 के बाद उल्लेखनीय रूप मे बढ़ गई । फिर भी, इस वृद्धि का एक अंश बुनियादी संरचना क्षेत्र को बैंकों के एक्सपोजरों और कंपनियों के लिए परियोजना ऋणों में तीव्र वृद्धि के कारण था जैसा कि कुल ऋण में मध्यावधि और दीर्घावधि ऋणों के अंश में वृद्धि में प्रतिबिंबित हुआ है । यद्यपि कुल ऋण में उद्योग को बैंक ऋण के अंश में वर्षों से कमी रही है, तथापि भारत में बैंकिंग क्षेत्र पर उद्योग की निर्भरता आस्ट्रेलिया, ब्राजील, यूके, न्यूजीलैंड, दक्षिण कोरिया और अमरीका जैसे कई अन्य देशों की तुलना में उल्लेखनीय रूप में अधिक थी । भारत में औद्योगिक क्षेत्र के ऋण की प्रधानता भी कई अन्य देशों की तुलना में काफी अधिक थी । फिर भी, बुनियादी संरचना क्षेत्र के लिए संवर्धित एक्सपोजर को इसके लिए पूर्णतः कारण नहीं माना जा सकता । यह इसलिए क्योंकि यद्यपि भारत में कुल बैंक ऋण में बुनियादी संरचना क्षेत्र को ऋण का अंश अन्य देशों की तुलना में अधिक था, तथापि अंतर इतना ज्यादा नहीं था कि कुल बैंक ऋण में उद्योग के उच्चतर अंश को स्पष्ट किया जा सके । उद्योग के ऋण की उच्च प्रधानता कुछ आश्चर्यजनक थी, इस बात के होते हुए कि उद्योग को कुल ऋण में लघु उद्योग क्षेत्र का अंश वर्षों से बराबर कम रहा । यह स्पष्ट रूप से संकेत करता है कि भारत में बड़ी कंपनियों ने बैंकिंग क्षेत्र पर अपनी निर्भरता बढ़ाई है और यह कई अन्य देशों में विद्यमान प्रवृत्ति के विपरीत है । लघु उद्योगों के वित्तीयन के स्वरूप के संबंध में चयनित देशों के सर्वेक्षण से भी यह विदित हुआ कि भारत में बैंकिंग क्षेत्र पर लघु उद्योग क्षेत्र की निर्भरता अर्जेन्टीना, ब्राजील, चिली, कोलंबिया, इंडोनेशिया, पाकिस्तान, फिलीपींस, और अमरीका जैसे अनेक अन्य देशों से काफी कम है । बैंकिंग क्षेत्र पर लघु उद्योग क्षेत्र की निर्भरता केवल चीन, फ्रांस और युनाइटेड किंगडम में ही भारत की तुलना में कम है ।

6.133 हाल के वर्षों में बैंक ऋण की एक महत्वपूर्ण विशेषता वैयक्तिक ऋणों के रूप में ऋण में तीव्र वृद्धि थी जो मार्च 2007 के अंत में कुल बैंक ऋण का लगभग एक चौथाई भाग था । इस वृद्धि का अधिकांश भाग आवास ऋणों में वृद्धि से संबंधित है । विदेशी साक्ष्य से सूचना मिलती है कि भारत के मामले में कुल बैंक ऋण में आवास ऋण का अंश अर्जेंटीना, इंडोनेशिया, इजराइल, मेक्सिको, और तुर्की से अधिक था, परंतु चिली, कोलंबिया, चेक गणतंत्र, हंगरी, कोरिया, मलेशिया और सिंगापुर से कम था।

6.134 इस प्रकार, हाल के वर्षों में बैंक ऋण में तीव्र वृद्धि से कृषि, बुनियादी संरचना, बड़ी कंपनियाँ और घर-परिवार लाभान्वित हुए । छोटे और मझौले उद्यम (एसएमई) क्षेत्र की ओर बैंकिंग क्षेत्र ने उचित से कम ध्यान दिया । बैंकों ने अपने ऋण संविभाग की अपेक्षाओं के अनुरूप एसएलआर (न्यूनतम सांविधिक अपेक्षा को छोड़कर) और गैर-एसएलआर प्रतिभूतियों में अपने निवेशों को समायोजित किया ।

## IX. भावी दिशा

6.135 यह स्वीकार करते हुए कि अर्थव्यवस्था की वृद्धि को बढ़ाने में ऋण एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है, रिज़र्व बैंक ने सदैव यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया है कि अर्थव्यवस्था के सभी उत्पादक क्षेत्रों को पर्याप्त ऋण उपलब्ध हो । बुनियादी संरचना के क्षेत्र द्वारा अपेक्षित विपुल मात्रा में निधीयन, सेवा क्षेत्र के बढ़ते आकार, छोटे और मझौले उद्यमों (एसएमई) और ग्रामीण उद्यमों द्वारा संवर्धित निधीयन तथा घर-परिवारों की बढ़ती हुई आय और अर्थव्यवस्था के अधिकाधिक मुद्रीकरण को देखते हुए बैंक ऋण के लिए माँग के मजबूत रहने की संभावना है । वित्तीय समावेशन पर बल देने से भी ऋण के लिए माँग में वृद्धि को प्रेरणा मिलेगी । बैंकिंग प्रणाली को इन नये अवसरों के प्रति पर्याप्त रूप में प्रतिक्रिया व्यक्त करनी होगी । भंडारण, मालगोदाम, प्रसंस्करण और खेत से बाजार तक परिवहन को शामिल करते हुए, संपूर्ण आपूर्ति श्रृंखला वित्तीयन को सम्मिलित करते हुए, इन नई ग्रामीण ऋण आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए ऋण वितरण हेतु नवोन्मेष माध्यमों का पता लगाना होगा । बुनियादी संरचना, उद्योग और सेवाओं में निवेश में आरंभिक तेजी से सर्वोत्तम परिणाम केवल तभी प्राप्त होंगे जब कम लागत पर बहुत बड़े संसाधन प्रवाहों की मध्यस्थता सफलतापूर्वक की जाएगी । यह सूचना का समुचित रूप में और कुशल तरीके से प्रसंस्करण करने की वित्तीय क्षेत्र की क्षमता पर निर्भर होगी ।

6.136 एक ओर जहाँ समय-समय पर किये गये विभिन्न उपायों का अनुकूल प्रभाव रहा है, वहीं दूसरी ओर यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि ऋण सभी क्षेत्रों, विशेष रूप से कृषि एवं छोटे और मझौले उद्यमों (एसएमई) के लिए सुचारु रूप से उपलब्ध हो । अर्थव्यवस्था की समग्र वृद्धि को बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है ।

6.137 हाल में बैंक अधिक परिष्कृत जोखिम प्रबंध तकनीकों का प्रयोग करने की दिशा में अग्रसर हैं । वर्तमान में बैंक कुल मिलाकर नये एक्सपोजरों को सीमित करने, मौजूदा निधि-आधारित एक्सपोजर की एकमुश्त बिक्री करने, ऋण गारंटी सुरक्षा प्राप्त करने, और अभी हाल ही में प्रतिभूतिकरण करने का सहारा लेते हुए ऋण जोखिमों के बचाव (हेजिंग) की पारंपरिक विधि पर अधिक आधारित हैं । भारत में भविष्य में ऋण डेरिवेटिव जैसे कुछ और उत्पादों का आविर्भाव हो सकता है । भारतीय रिज़र्व बैंक ने 16 मई 2007 को भारत में ऋण डेरिवेटिव के प्रारंभ के लिए संशोधित मार्गदर्शी सिद्धांतों का प्रारूप जारी किया था । तथापि, विभिन्न अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों, खास तौर से ऋण बाजारों में देखी गई कुछ प्रतिकूल गतिविधियों को ध्यान में रखते हुए यह निर्णय किया

गया है कि भारत में ऋण डेरिवेटिव प्रारंभ करने के संबंध में अंतिम मार्गदर्शी सिद्धांतों के निर्गम को स्थगित किया जाए ।

## कृषि वित्त

6.138 कृषि ऋण में जिन प्रमुख चुनौतियों का सामना किया गया है वे न केवल छोटे और सीमांत कृषकों को ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित करने से, बल्कि कृषि उत्पादों के लिए उत्पादन और माँग के रूप में वर्तमान परिदृश्य के लिए संगत नीतियों और ऋण वितरण प्रणालियों को तैयार करने से भी संबद्ध हैं । देश में कृषि ऋण की भावी दिशा से संबंधित किसी भी नीति के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में फसल के विविधीकरण की आवश्यकता को ध्यान में रखने की जरूरत है (मोहन, 2006)। कृषि विस्तार सेवाओं के वित्त की सख्त जरूरत को पूरा करने के लिए वर्तमान 'बहु एजेंसी' दृष्टिकोण अपर्याप्त साबित हो रहा है । व्यापक दायरे में संबद्ध गतिविधियों के विकास को निधि प्रदान करने के लिए प्रश्न यह है कि वाणिज्य बैंकों, विशेष रूप से सरकारी क्षेत्र के बैंकों (पीएसबी) के संसाधनों को एक धारणीय और व्यवहार्य ढंग से कैसे सरणीबद्ध किया जाए ।

6.139 भारत में कृषि ऋण के निष्पादन की समीक्षा से विदित होता है कि यद्यपि वर्षों से संस्थागत वित्त की समग्र उपलब्धता बढ़ गई है, तथापि ग्रामीण वित्तीय बाजारों में भारी अंतर अभी भी बने हुए हैं । ये अंतर छोटे किसानों को औपचारिक कृषि ऋण की दुर्लभ व्यवस्था और संभवतः अपर्याप्त मध्यावधि और दीर्घावधि उधार से संबंधित हैं । इसके अलावा, वर्तमान कानूनी ढाँचे और काश्तकारी (टिनैंसी) कानूनों से संबंधित कुछ मुद्दों ने भी ऋण की उपलब्धता एवं मजबूत और कुशल कृषि ऋण संस्थाओं के विकास को बाधित किया है । वित्तीय सेवाओं के लिए कृषि क्षेत्र की विशिष्ट आवश्यकताओं के संबंध में एक अधिक व्यापक प्रणालीगत दृष्टिकोण की आवश्यकता है । ऋण आवश्यकताओं का आकलन करने के लिए अन्य बातों के साथ-साथ उत्पादक संसाधनों के वितरण, उनके उपयोग को नियंत्रित करनेवाली कानूनी और सामाजिक संरचनाओं, फसल के प्रतिमानों, ग्रामीण बाजारों की मौजूदा और उभरती हुई तकनीकों और गति सिद्धांत सहित, उत्पादक संसाधनों की उपलब्धता और वितरण की सीमा को समझने की जरूरत है । इससे कृषि को, विशेष रूप से छोटे किसानों को ऋण की उपलब्धता में सुधार होगा । फिर भी, यह भी ध्यान रखने की आवश्यकता है कि कृषि ऋण की सही आवश्यकताओं का अनुमान लगाना कठिन है, यद्यपि अध्ययनों की प्रवृत्ति सामान्यतः ग्रामीण वित्तीय बाजार के विकास और अधिक कृषि वृद्धि के बीच एक मजबूत परस्पर संबंध दर्शाने की रहती है । कृषि ऋण का एक महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व जीवन-निर्वाह के लिए खेती करनेवाले कृषकों का वाणिज्यीकरण है। कुशल बाजार व्यवस्था के विकास के परिणामस्वरूप अन्य बातों के साथ-साथ उत्पादन में वृद्धि के लिए बिक्री केंद्र (आउटलेट) और प्रोत्साहन उपलब्ध कराने के द्वारा जीवन-निर्वाह के लिए खेती करनेवाले कृषकों का वाणिज्यीकरण होगा (मोहन, 2006)। अतः कृषि ऋण एक मददगार के रूप में कार्य कर सकता है, परंतु वह स्वयं कृषि की वृद्धि पर तब तक उल्लेखनीय प्रभाव नहीं डाल सकता, जब तक ग्रामीण कृषि की बुनियादी संरचना और संबद्ध संस्थाओं से संबंधित महत्वपूर्ण समस्याओं का समाधान नहीं किया जाता ।

*समर्थकारी स्थितियाँ बनाते हुए कृषि को ऋण की धारणीयता में सुधार लाना*

6.140 कृषि कार्य में ऋण एक महत्वपूर्ण निविष्टि है । फिर भी, जब तक कृषि को अर्थक्षम नहीं बनाया जाता, तब तक वह इस उद्देश्य को पूरा नहीं कर सकता । इसके लिए सिंचाई की सुविधाएं, ग्रामीण सड़कें और अन्य बुनियादी संरचना अपेक्षित है । इस संदर्भ में एक प्रमुख समस्या बिजली, पानी और ऋण जैसी निविष्टियों के गलत कीमत-निर्धारण के कारण संसाधन के उपयोग में अकुशलता की भी है । इस क्षेत्र को अधिकाधिक बाजार-उन्मुख बनाने की भी आवश्यकता है । किसानों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किये जाने की आवश्यकता है कि वे निविष्टियाँ प्राप्त करने एवं स्वायत्त सहकारी संस्थाओं और अन्य प्रकार के संगठनों के माध्यम से उत्पादन के विपणन के लिए बाजार आधारित समाधान अपनाएँ । इसके अलावा, यदि निवेश और उत्पादन ऋण को एकीकृत किया जाता है और जिला स्तर पर प्रयुक्त मानों की समीक्षा करके उन्हें अपेक्षाकृत नई प्रौद्योगिकियों और बेहतर निविष्टियों का प्रयोग करते हुए आधुनिक, बाजार-उन्मुख पूँजीगत प्रोत्साहन प्राप्त कृषि की अपेक्षाओं के अनुरूप पुनः समायोजित किया जाता है तो ऋण अवशोषण में काफी वृद्धि की जा सकती है। इस प्रकार आवश्यकता इस बात की है कि एक ऐसा अनुकूल वातावरण बनाया जाए जिसमें कृषि एक व्यवसाय के रूप में बनी रह सके तथा दोनों सरकारी और निजी संस्थाएं एक धारणीय आधार पर कृषि को वित्तीय सेवाओं की व्यवस्था करने में स्वेच्छा से सहभागिता कर सकें ।

*बैंकों को सक्रिय भूमिका निभाने की आवश्यकता है*

6.141 कुल कृषि ऋण में कृषि को मीयादी ऋणों ने 1990 के दशक के प्रारंभ से उल्लेखनीय रूप में गिरावट दर्ज की है । यह चिंता की बात है क्योंकि यह तब घटित हुआ जब कुल ऋण में कृषि ऋण के अंश में भी कमी आई (पिछले कुछ वर्षों तक)। यह गिरावट इसलिए भी चिंताजनक है क्योंकि बैंकों के संविभाग में समग्र मध्यावधि और दीर्घावधि ऋणों का अंश हाल के वर्षों में तेजी से बढ़ गया है । दीर्घावधि ऋणों की वृद्धि में कमी कृषि उधारकर्ताओं की ऋण अवशोषण क्षमता को बाधित करती है, जो अंततः फसल ऋणों की वृद्धि को भी प्रभावित करती है । कृषि को निवेश ऋण की उपलब्धता अन्य बातों के साथ-साथ उच्च लेनदेन लागतों, ग्रामीण ऋण वितरण प्रणाली में विद्यमान संरचनात्मक कमियों, ऋण-पात्रता से संबंधित समस्याओं, किसानों के निम्न आस्ति आधार को देखते हुए समर्थक जमानतों (कॉलेटरल्स) के अभाव, संबद्ध उच्चतर जोखिमों से युक्त ऋणों की कम प्रमात्रा और अधिक श्रम-शक्ति की अपेक्षाओं द्वारा बाधित है । बैंक भी अल्पावधि ऋण प्रदान करने में अधिक उत्सुक हो सकते हैं क्योंकि इसमें कम ऋण जोखिम है, पर्यवेक्षण और निगरानी की

अपेक्षाकृत कम लागतें हैं, तथा इससे आस्ति-देयता प्रबंध में सुविधा होती है । चूँकि कृषि को दीर्घावधि ऋण के अंश में गिरावट से कृषि में निवेश के लिए गंभीर निहितार्थ हो सकते हैं, अतः यह आवश्यक है कि बैंक कृषि को मध्यावधि और दीर्घावधि निधीयन के अंश को क्रमिक रूप से बढ़ाएं । उल्लेखनीय रूप में 2007 में कृषि के लिए मीयादी ऋण तेजी से बढ़े हैं तथा आवश्यकता इस वृद्धि को बनाये रखने की है ।

*छोटे और सीमांत कृषकों के लिए सहायता बढ़ाने की आवश्यकता*

6.142 छोटे और सीमांत किसान कृषक समुदाय का सबसे बड़ा खंड बनाते हैं । उनके पास प्राकृतिक आपदाओं से बचने के लिए कोई सुरक्षा नहीं है और वे आसानी से इनके शिकार हो जाते हैं। फिर भी कुल कृषि ऋण में छोटे और सीमांत कृषकों के अंश में कमी आई है यद्यपि वह मामूली है । छोटे और सीमांत किसानों के साथ संबंध रखनेवाली कृषि ऋणों की एक श्रेणी छोटे ऋणों (2 लाख रुपये तक के ऋण सीमा आकार वाले ऋण) की है। ब्याज दर जोखिम का प्रबंध करने के लिए छोटे उधारकर्ताओं की सीमित क्षमता के कारण तथा छोटे उधारकर्ताओं को उचित दरों पर ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए 2 लाख रुपये तक के छोटे ऋणों पर ब्याज दर की उच्चतम सीमा को बेंचमार्क मूल उधार दर (बीपीएलआर) के साथ संबद्ध किया गया है । सामान्यतः बैंक बीपीएलआर से कम दरों पर उधार देते रहे हैं तथा मार्च 2007 के अंत में बीपीएलआर से कम दरों पर (सब-बीपीएलआर) उधार का अंश कुल उधार का लगभग चार बटा पाँच रहा (भा.रि.बैं., 2007बी)। जब कि इस प्रकार का उधार ऋण-पात्रता रखनेवाली बड़ी कंपनियों तक सीमित है, सामान्य तौर पर कृषि क्षेत्र के लिए बीपीएलआर अथवा कुछ मामलों में उच्चतर ब्याज दरें प्रभारित की गई हैं ((भा.रि.बैं., 2007ए)। ऐसे परिदृश्य में जहाँ बैंकों का उधार अधिकाधिक बीपीएलआर से कम दरों पर है, कृषि को कुल ऋणों में छोटे ऋणों के अंश में गिरावट चिंता का कारण है ।

*कृषि में जोखिम प्रबंध पर व्यापक सरकारी नीति*

6.143 2008-09 के लिए बजट में केंद्र के वित्त मंत्री ने अनुसूचित वाणिज्य बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, सहकारी ऋण संस्थाओं और स्थानीय क्षेत्र बैंकों द्वारा 31 मार्च 2007 तक संवितरित किये गये और 31 दिसंबर 2007 को अतिदेय प्रत्यक्ष कृषि ऋणों की माफी की घोषणा की । इस योजना के अंतर्गत सीमांत कृषकों (अर्थात् 1 हेक्टेअर तक की धारिता वाले) अथवा छोटे कृषकों (1-2 हेक्टेअर) के लिए उन सभी पात्र ऋण राशियों की संपूर्ण माफी की घोषणा की गई जो 31 दिसंबर 2007 को अतिदेय थे और जो 29 फरवरी 2008 तक अदत्त रहे थे । अन्य किसानों (2 हेक्टेअर से अधिक) के संबंध में उन सभी ऋणों के लिए एकमुश्त निपटान (ओटीएस) की योजना भी घोषित की गई जो 31 दिसंबर 2007 को अतिदेय थे और जो 29 फरवरी 2008 तक अदत्त रहे थे । चूँकि किसानों को दिये गये ऋणों को बट्टे खाते डाला जाएगा, अतः बैंकों से यह अपेक्षा होगी कि वे प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र को उधार का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए कृषि को और अधिक ऋण प्रदान करें । बैंक भी प्रभावित नहीं होंगे क्योंकि सरकार उन्हें क्षतिपूर्ति प्रदान करेगी । तथापि, वर्तमान ऋण माफी योजना के लिए संस्थागत ऋण के एक वास्तविक पुनरुद्धार तक पहुँचने के लिए पर्याप्त निगरानी, उचित प्रबंध सूचना प्रणालियों की स्थापना और अच्छी तरह अभिकल्पित उत्पादों के साथ इसका अनुवर्तन किया जाना चाहिए ताकि बैंक एक व्यवहार्य तरीके से कृषि क्षेत्र को पर्याप्त रूप से ऋण संवितरित कर सकें । अंततोगत्वा, संभवतः यह वांछनीय होगा कि कृषि में जोखिम प्रबंध के संबंध में एक व्यापक सरकारी नीति लागू की जाए । ऐसी नीति में अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित तीन तत्व शामिल किये जा सकते हैं । पहला, प्रतिकूल मानसून स्थितियों के प्रभाव का एक सुस्पष्ट, वस्तुपरक और स्वतंत्र मूल्यांकन एवं एक सुनिश्चित आधार पर किसानों के लिए उचित राहत की व्यवस्था। दूसरा, बीज, कीटनाशक दवाओं, बिजली और पानी जैसी महत्वपूर्ण निविष्टियों में गुणवत्ता या आश्वस्त आपूर्ति में किसी भी कमी के लिए आपूर्तिकर्ताओं के दायित्व की स्थापना और कार्यान्वयन । तीसरा, कीमत-सब्सिडियों को क्रमशः हटाना और उनके स्थान पर व्यापकतम अर्थ में किसानों के लिए जोखिम न्यूनीकरण संबंधी परिव्ययों की स्थापना करना ।

*माँग से संचालित ऋण के माध्यम से कृषि और ग्रामीण संस्थाओं की व्यवहार्यता सुनिश्चित करना*

6.144 कुछ अन्य देशों में राज्य के स्वामित्व वाले बैंकों, जैसे सामान्य रूप से ग्रामीण ऋण उपलब्ध कराने में बीआरआइ-यूडी (इंडोनेशिया) और कृषि ऋण उपलब्ध कराने में बीएएसी (थाईलैंड) की सफलता का अनुभव यह दर्शाता है कि यद्यपि कृषि संस्थाओं की विशिष्ट योजनाओं में विभिन्नता हो सकती है, तथापि विकेंद्रीकृत निर्णयन, परिचालनों में कुशलता, कम लागत वाले परिचालनों पर बल और मजबूत संस्थागत समर्थन के संयोजन का परिणाम वाणिज्यिक रूप से लाभप्रद परिचालनों में हो सकता है, जबकि इसके साथ ही छोटे और सीमांत किसानों को लक्षित करने में भी यह सफल हो सकता है । दोनों ही स्थितियों में बल आपूर्ति द्वारा निर्दिष्ट दृष्टिकोण की अपेक्षा माँग द्वारा निर्दिष्ट दृष्टिकोण पर दिया गया था । माँग-केंद्रित मॉडल में नीतियों की दिशा आकर्षक वित्तीय उत्पाद निर्मित करने की ओर निर्दिष्ट होगी और इसके साथ ही, विशेष रू प से किफायती सही प्रबंध सूचना प्रणालियों को बनाये रखने में नई वित्तीय तकनीकों के प्रयोग और अंगीकरण को प्रोत्साहित करने की ओर भी निर्दिष्ट होगी । भारत में आपूर्ति द्वारा संचालित ऋण, कृषि और ग्रामीण क्षेत्रों में जरूरतमंद व्यक्तियों तक पहुँचने में कम असरदार रहा है । अतः भारत में कृषि क्षेत्र में माँग द्वारा संचालित फोकस का अन्वेषण किया जाना चाहिए । ऋण, जमाराशियों और अन्य वित्तीय उत्पादों के लिए एक माँग-केंद्रित दृष्टिकोण के अंतर्गत प्राथमिक केंद्रबिंदु प्रधानतः अनुकूल समष्टि-आर्थिक, कृषि और ऋण क्षेत्र की नीतियों के समुच्चय द्वारा उनके कार्यान्वयन के लिए मजबूत संस्थागत रूपरेखा सहित, ग्रामीण क्षेत्रों में समर्थकारी वित्तीय

परिवेश निर्मित करने पर होगा । इस प्रकार के दृष्टिकोण के अंतर्गत छोटे और सीमांत कृषकों का प्रभावी समावेश करने के लिए विकेंद्रीकृत शाखाओं का एक नेटवर्क अस्तित्व में होना चाहिए जो लाभकारी केंद्रों के रूप में कार्य करे । विशेष रूप से ऋण की चुकौती के तौर पर किसानों की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप उत्पादों का आविष्कार करना महत्वपूर्ण है । किसानों के लिए समयबद्धता और ऋण की आश्वस्त उपलब्धता ब्याज की सब्सिडी से अधिक महत्वपूर्ण है । वास्तव में, अनेक व्यष्टि-ऋण प्रणालियों के अनुभव प्रायः चिंतन की इसी दिशा में हैं ।

*नवोन्मेष लिखतों के साथ वित्तपोषण*

6.145 नवोन्मेष वित्तीय तकनीकों को अपनाने से किसानों के लिए ऋण तक पहुँच में सुधार हो सकता है । परंपरागत ऋण वित्त को छोड़कर जो वित्तीय प्रौद्योगिकियाँ कृषि संबंधी गतिविधियों के वित्तपोषण में सहायता प्रदान कर सकती हैं, उनमें खेती की मशीनरी और उपकरणों को पट्टे पर देना/लेना (लीजिंग) शामिल है । किसी परिसंपत्ति के प्रयोक्ता अधिकारों से स्वामित्व के अधिकारों को अलग करने के सिद्धांत के मुख्य रूप से दो संभावित लाभ हैं । पहला, वह अतिरिक्त समर्थक जमानत (कॉलेटरल) के लिए स्थानापन्न हो सकता है और दूसरा, वह कर लाभ उपलब्ध करा सकता है । इसके अलावा, नकदी या वस्तु रूप में ऋण के संवितरण की उत्पादन के विपणन के साथ अंतर-संबद्धता का भी प्रयास किया जा सकता है । इससे परंपरागत ऋण कॉलेटरल की आवश्यकता कम होगी और विशेषतः बहुत कम आबादी वाले क्षेत्रों में ऋण वसूली से संबंधित लेनदेन की लागतें भी घट जाएँगी । इसका व्यापक उपयोग व्यापारियों, विपणन बोर्डों, सहकारी संस्थाओं और संविदागत कृषि योजनाओं जैसी गैर-वित्तीय संस्थाओं द्वारा उत्पाद से कटौतियों के माध्यम से वसूल की जानेवाली ऋण संबंधी मौसमी निविष्टियाँ उपलब्ध कराने के लिए किया गया है ।

*ऋण मूल्यांकन के लिए स्कोर-कार्डिंग का प्रयोग*

6.146 बैंक और अन्य ग्रामीण वित्तीय संस्थाएँ ऋण आवेदन-पत्रों से प्राप्त सीमित सूचना का उपयोग करते हुए स्कोर-कार्डिंग पर विचार कर सकती हैं । इसके माध्यम से वित्तीय संस्था पिछले अनुभव से कृषि ऋणों के संबंध में सफल निष्पादन/चुकौती के निर्धारक तत्वों का अनुमान लगाने तथा ऋण आवेदनपत्रों का तीन श्रेणियों : (1) स्वीकार करें, (2) अस्वीकार करें, और (3) एक ऋण अधिकारी द्वारा और विश्लेषण कराए जाने की आवश्यकता है, में वर्गीकरण करने के लिए उन निर्धारक तत्वों का उपयोग (एक मशीनी, प्रयोग के लिए सुलभ स्कोरिंग कार्यविधि में) करने का प्रयास कर सकती है। इस प्रक्रिया का उपयोग ऋण संबंधी निर्णयों की गति बढ़ाने और उनकी लागत को कम करने दोनों के प्रयोजनों के लिए एवं जिन ऋणों के लिए और अधिक विश्लेषण की आवश्यकता है उनकी ओर ऋण अधिकारी के समय और ऊर्जा को निर्दिष्ट करने के लिए किया जा सकता है ।

*कंप्यूटरीकृत भू-अभिलेख*

6.147 कृषि को ऋण की उपलब्धता को बढ़ाने में एक प्रमुख बाधा उपयुक्त समर्थक जमानत (कॉलेटरल) का अभाव है । बहुधा भूमि ही किसानों के पास उपलब्ध एकमात्र परिसंपत्ति होती है । तथापि, भूमि पर कमजोर स्वत्वाधिकार और उचित भू-अभिलेखों का अभाव भूमि को कॉलेटरल के रूप में प्रयुक्त करने में एक प्रमुख अवरोध के रूप में साबित हो रहे हैं । कंप्यूटरीकृत भू-अभिलेखों की उपलब्धता कृषि के लिए ऋण की उपलब्धता को सुगम बनाने में दूरगामी तौर पर सहायक सिद्ध होगी ।

*कृषि को औपचारिक और अनौपचारिक वित्त के बीच समन्वय*

6.148 दोनों औपचारिक और अनौपचारिक संस्थागत व्यवस्थाओं के एकस्थ होने की आवश्यकता है । चुनौती विभिन्न वर्तमान सक्षम वित्तीय संस्थाओं के बीच समन्वय करने की है जो ग्राहक उन्मुख हैं, जो कुशलतापूर्वक जमासंग्रहण करती हैं और एक व्यापक दायरे में किसानों, कृषि-व्यवसाय उद्यमियों और अन्य ग्रामीण ग्राहकों को कृषि ऋण की माँग के विशिष्ट स्वरूप के कारण ऋणों तक पहुँच उपलब्ध कराती हैं । कृषि उधार की एक खास मीयादी संरचना (मौसमी और दीर्घावधि) है । तदनुसार दोनों अनौपचारिक और औपचारिक ऋण क्षेत्रों से ऋण की उपलब्धता का समन्वय करने से कृषि की वृद्धि को बढ़ावा मिलेगा।

## छोटे और मझौले उद्यम (एसएमई) वित्त

6.149 छोटे और मझौले उद्यम (एसएमई) रोजगार उत्पादन और निर्यातों में उनके उल्लेखनीय अंशदान को देखते हुए भारत में औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों का एक महत्वपूर्ण खंड बनते हैं । एसएमई को उत्पादनोत्तर और उत्पादन पूर्व सुविधाओं के साथ ग्रामीण खंड में कृषि-क्लिनिकों, संविदा खेती और ग्रामीण आवास जैसी नई गतिविधियों के आविर्भाव के साथ ही, एसएमई को उधार देना बैंकों के लिए एक लाभप्रद राजस्व साध्य है । फिर भी, इस संभाव्यता को साकार करने के लिए एक उचित लागत पर इस क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता बढ़ाने की आवश्यकता है । तथापि, जैसा कि पिछले खंड में रेखांकित किया गया है, एसएमई संस्थागत व्यवस्था से पर्याप्त ऋण प्राप्त नहीं कर रहे हैं । इसे बदलने की जरूरत है । निम्नलिखित विशिष्ट सुझावों से एसएमई क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता में सुधार लाने में दीर्घकालिक सहायता मिल सकती है ।

*वृद्धि समूह*

6.150 एसएमई को उधार देने के लिए समूह (क्लस्टर) दृष्टिकोण का प्रयोग अनेक देशों में उपयोगी पाया गया है तथा भारत में भी यही देखा गया है जैसा कि कई अनुभवसिद्ध अध्ययनों से विदित हुआ है । ऐसा प्रतीत होता है कि यह पद्धति भारत में बड़े पैमाने पर अनुसरण करने योग्य है । खादी और ग्रामोद्योग आयोग (केवीआइसी), लुधियाना और

तिरुपुर जैसे अनेक मौजूदा एसएमई समूह काफी सफलता प्राप्त कर चुके हैं। व्यापार का रिकार्ड, प्रतिस्पर्धात्मकता अथवा वृद्धि की संभावनाओं के आधार पर मान्यताप्राप्त एसएमई समूहों को उधार को प्रोत्साहित किया जा सकता है। इस प्रकार के समेकन को प्रोत्साहित करने और इस संरचना के माध्यम से वितरण करने से एसएमई की सौदा-शक्ति बढ़ सकेगी एवं उधारदाताओं के लिए बेहतर जोखिम निर्धारण के लिए सूचना तक पहुँचने और निगरानी प्रणालियाँ स्थापित करने के लिए लेनदेन लागतें कम करने में सहायता मिलेगी। क्रिसिल और आइबीए जैसी संस्थाएँ औद्योगिक समूहों के लिए एक श्रेणी-निर्धारण (रेटिंग) तंत्र विकसित कर सकती हैं जो एसएमई को अधिक प्रभावी व्यावसायिक प्रथाओं और श्रेष्ठ गुणवत्ता नियंत्रण को अपनाने के लिए प्रेरित कर सकता है तथा उधारदाताओं को भी अधिक प्रभावात्मक रूप में बाजार में पैठ करने में समर्थ बना सकता है।

*ऋण सूचना ब्यूरो की भूमिका*

6.151 अनुभवजन्य साक्ष्य यह दर्शाता है कि व्यापक तौर पर ऋण इतिहासों की उपलब्धता ऋण के प्रवाह को अधिकाधिक विस्तृत कर देती है क्योंकि संभावित उधारकर्ता अपने स्थानीय ऋणदाताओं के साथ अब और बंधे नहीं रहेंगे (मोहन, 2005)। ऋणदाताओं और उधारकर्ताओं के बीच तथा निवेशकों और निर्गमकर्ताओं के बीच परस्पर पारदर्शिता उधारकर्ता के वास्तविक जोखिम निर्धारण के लिए एक मुख्य अपेक्षा है। दरअसल, पारदर्शिता मुख्य रूप से वित्तीय और लेखांकन के प्रकटीकरण के माध्यम से प्राप्त की जाती है। एसएमई से उत्पन्न होनेवाली सूचना की गुणवत्ता में अवश्य सुधार लाना चाहिए तथा उसकी प्रस्तुति को और अधिक सुसंगत बनाया जाना चाहिए। बासेल II मानदंडों के संदर्भ में सूचना और पारदर्शिता को बनाये रखना पूर्णतः अनिवार्य हो जाता है। ऋण सूचना ब्यूरो को विकसित करने के लक्ष्य से नया कानून बनाने जैसी सरकार और रिज़र्व बैंक द्वारा हाल में की गई पहलों से सूचना और लेनदेन लागतें कम करने में मदद मिलनी चाहिए और उससे फिर एसएमई क्षेत्र को ऋण की लागत कम करने के लिए मार्ग प्रशस्त होना चाहिए। विधि-निर्माण किया जा चुका है। आवश्यकता तो सूचना केंद्रों/कंपनियों के निर्माण को प्रोत्साहित करने की है।

*लघु व्यवसाय साख-गणना (एसबीसीएस)*

6.152 विदेशों में साख-गणना (क्रेडिट स्कोर्स) का व्यापक तौर पर उपयोग उपभोक्ता ऋण बाजारों (उदाहरण के लिए बंधक, क्रेडिट कार्ड, और ऑटोमोबाइल ऋण) में कई वर्षों से किया गया है जिसके परिणामस्वरूप कम लागत, एवं प्रायः गौण बाजारों में बेचे गए पण्यीकृत ऋण द्वारा उपभोक्ता ऋण की उपलब्धता में उल्लेखनीय वृद्धि प्राप्त की गई है। अमरीका जैसे विकसित देशों में बैंक एसएमई की ऋण-पात्रता का निर्धारण करने के लिए लघु व्यवसाय साख-गणना (एसबीसीएस) तकनीक का अधिकाधिक प्रयोग कर रहे हैं। विकसित देशों में ''व्यष्टि ऋणों'' हेतु आवेदकों का मूल्यांकन करने के लिए कई वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्रयुक्त एसबीसीएस को भारत में भी आजमाया जा सकता है। ऋण सूचना कंपनियों/केंद्रों से भी यह आशा की जा सकती है कि वे उक्त साख-गणना प्रणाली को विकसित करने के द्वारा एक उपयोगी भूमिका अदा करेंगे।

*आस्ति आधारित उधार*

6.153 एसएमई को आस्ति आधारित ऋण उपलब्ध कराना अमरीका में वाणिज्य बैंकों के बीच आम बात है। आस्तियों में शामिल हैं, वाणिज्यिक लेखे के संबंध में प्राप्य राशियाँ, स्टॉक (इन्वेंटरी), व्यावसायिक उपकरण और मशीनरी, आवर्ती राजस्व संविदाएँ, तथा वाणिज्यिक स्थावर संपदा (रियल एस्टेट)। आस्ति आधारित उधार में बैंक एसएमई को अर्हताप्राप्त आस्ति वर्गों में से प्रत्येक वर्ग के प्रतिशत पर आधारित एक परिक्रामी (रिवाल्विंग) ऋण व्यवस्था उपलब्ध कराते हैं। वृद्धिशील छोटे व्यवसाय, मझौले व्यवसाय और बड़ी कंपनियाँ मौसमी और चक्रीय अवधियों अथवा टर्नअराउंड की परिस्थितियों में वृद्धि और सहायता निधि को अवलंब देने के लिए कार्यशील पूँजी हेतु अपनी आस्तियों को काम में ला सकती हैं। आस्ति आधारित वित्त से प्राप्त निधियों का उपयोग एसएमई द्वारा दैनंदिन परिचालनों के लिए अथवा पुनर्संरचना/टर्नअराउंड के लिए पूँजी के रूप में किया जाता है। आस्ति आधारित ऋण सामान्यतः अन्य वित्तीय विकल्पों की अपेक्षा किफायती और प्रतिस्पर्धात्मक हैं। एसएमई जब भी आवश्यकता हो तब 'ऋण व्यवस्था' से आहरण कर सकते हैं और भावी उपयोग हेतु उपलब्धता को बढ़ाने के लिए वापसी अदायगी कर सकते हैं। चूँकि ब्याज केवल आहरित की गई निधियों पर ही लगाया जाता है, अतः समग्र रूप में यह मीयादी ऋण की तुलना में कम खर्चीला है। एसएमई अपनी प्राप्य राशियों और स्टॉक की जमानत पर उधार ले सकते हैं तथा संपूर्ण ऋण और वसूली प्रक्रियाओं के साथ अपनी आस्तियों पर नियंत्रण और स्वामित्व रख सकते हैं।

*एसएमई पर केंद्रीकृत सूचना*

6.154 जोखिम निर्धारण अनिवार्य है तथा बैंक के जोखिम-मान पर एक्सपोज़र के उचित स्थापन को सुनिश्चित करने के लिए कंपनी का सहयोग अपेक्षित है। सूचनात्मक अपारदर्शिता की समस्या, जो बैंक वित्त तक एसएमई की पहुँच में एक प्रमुख बाधा है, को दूर करने के लिए 'बांक द फ्रांस' बैंकिंग व्यवसाय के उपयोग के लिए ऑन-लाइन सूचना सेवाओं का एक सेट प्रस्तुत करता है। ये ''कंपनी ऋण रेटिंग'' एक तीन वर्षीय सीमा पर अपने वित्तीय दायित्वों को पूरा करने के लिए कंपनियों की क्षमता के निर्धारण हैं। संपूर्ण लेखांकन के प्रलेखन के आधार पर कंपनियों का श्रेणी-निर्धारण (रेटिंग) किया जाता है। एसएमई के बारे में विभिन्न नीतियों और जागरूकता के बारे में सूचना के प्रसार के लिए, 'बैंक नेगारा मलेशिया' ने एक विशिष्ट वेबसाइट शुरू कर दी है। भारत में एसएमई की संख्या को देखते हुए भारत में यह कार्य करना रिजर्व बैंक के लिए शायद संभव नहीं होगा। फिर भी, यह आशा की जाती है कि सिबिल

अथवा भविष्य में स्थापित की जानेवाली ऋण सूचना कंपनियाँ उधारकर्ताओं के संबंध में इस प्रकार का मूल्यांकन करेंगी और बैंकों को सूचना उपलब्ध कराएँगी ।

*एसएमई शेयर बाजार की स्थापना द्वारा पूँजी बाजारों में प्रवेश*

6.155 एसएमई द्वारा पूँजी बाजारों में प्रवेश को सुसाध्य बनाने के लिए फ्रांस में एसएमई के लिए उनकी आवश्यकता पर आधारित एक खंड के निर्माण के साथ, शेयर बाजार के वास्तविक सूचीबद्धता ढाँचे का यथेष्ट रूप में पुनर्कल्पन (ओवरहालिंग) किया गया । व्यक्तिगत और संस्थागत निवेशकों के बीच मध्यवर्ती पूँजी वाली (मिड कैप) कंपनियों की दर्शनीयता और आकर्षण को बढ़ाने के लिए विशिष्ट सूचकांकों का एक नया दायरा निर्मित किया गया तथा ''छोटी और मध्यवर्ती पूँजी के (मिड कैप) विशेषज्ञ'' की विशेष स्थिति स्थापित की गई । मध्यवर्ती पूँजी (मिड कैप) कंपनियों की आवश्यकताओं के लिए सर्वोत्तम रूप में उपयुक्त समाधान उपलब्ध कराने के लिए यूरोनेक्स्ट 1 ने अपने सभी बाजारों के संबंध में सूचीकरण की संरचनाओं का पुनर्कल्पन किया । भारत में भी, हाल में एसएमई के लिए वैकल्पिक शेयर बाजार के यूरोपीय मॉडल के ही तरीके से पहलें की गई हैं । भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (सेबी) ने पहले ही एक एक्सचेंज का अनुमोदन किया है ताकि इक्विटी बाजार से पूँजी जुटाने में एसएमई को समर्थ बनाया जा सके । सेबी कैलेंडर वर्ष 2008 में एसएमई के लिए एक एक्सचेंज को सुसाध्य बनानेवाले समर्थक प्रावधान करने की व्यवस्था की प्रक्रिया में है । यह प्रतीत हुआ कि अनेक क्षेत्रीय शेयर बाजारों ने भी इस प्रकार के प्रयास में रुचि व्यक्त की है । अतः आवश्यकता एक एसएमई एक्सचेंज की स्थापना में शीघ्रता करने की है । यह सूचना मिली है कि परिचालन के लिए बाजार विनियामक द्वारा प्रारंभ में एक एसएमई एक्सचेंज की अनुमति दी जाने की संभावना है । वैश्विक प्रवृत्ति प्रतियोगिता का निर्माण करने के लिए अनेक एक्सचेंजों को कार्यरत रखने की है । अतः कुछ अनुभव प्राप्त करने के बाद अधिक एसएमई एक्सचेंजों का निर्माण करने की संभावना का पता लगाया जा सकता है ।

*जोखिम पूँजी का वित्तपोषण*

6.156 एसएमई के वित्तपोषण में जोखिम पूँजी की भी एक भूमिका है (मोहन, 2008)। जोखिम पूँजी के वित्तपोषण ने विशेष रूप से उच्च प्रौद्योगिकी क्षेत्रों अर्थात् सॉफ्टवेयर और संचार फर्मों के वित्तपोषण में अमरीका की सिलिकॉन वैली, और कनाडा में एक महती भूमिका अदा की है । खुदरा उपभोक्ता, जैव-चिकित्सा, सेमी-कंडक्टर, व्यावसायिक सेवाएं जोखिम पूँजी निधियों से लाभान्वित होनेवाले अन्य क्षेत्र हैं । यद्यपि जोखिम पूँजी के वित्तपोषण की लागत अपेक्षाकृत अधिक है, तथापि वह नवोन्मेष उच्च प्रौद्योगिकी आधारित फर्मों को अत्यावश्यक पूँजी उपलब्ध करा सकती है ।

**बुनियादी संरचना का वित्तपोषण**

*आस्ति देयता असंतुलन से सुरक्षा की आवश्यकता*

6.157 बैंकों के कुल ऋण में मध्यावधि और दीर्घावधि ऋणों का अंश हाल के वर्षों में तेजी से बढ़ा है । अध्याय IV में यथा उल्लिखित जमाराशियों के परिपक्वता अवधि विन्यास संबंधी अंकड़ों से भी यह संकेत मिलता है कि मीयादी जमाराशियों का परिपक्वता अवधि विन्यास विशेष रूप से एक वर्ष तक की अल्पावधि जमाराशियों के पक्ष में उल्लेखनीय रूप में परिवर्तित हुआ है । बैंकों द्वारा दीर्घावधि आस्तियों के एक भाग का निधीयन बुनियादी संरचना के बांडों से किया गया है । फिर भी, अब भी आस्ति-देयता प्रबंध के लिए ऋणों और जमाराशियों की बदलती रूपरेखा के गंभीर निहितार्थ हैं तथा बैंकों के लिए किसी भी आस्ति-देयता असंतुलन से सुरक्षित रहने की आवश्यकता है । एक विकल्प तो बैंकों के तुलन-पत्र से जोखिम का अंतरण वित्तीय प्रणाली के अन्य खिलाड़ियों को करने का है । बुनियादी संरचना क्षेत्र को ऋणों के प्रतिभूतिकरण के कारण जिसके द्वारा उक्त ऋणों को व्यापारयोग्य ऋण प्रतिभूतियों के रूप में परिवर्तित किया जाता है, बैंक एक्सपोजर मानदंडों एवं बुनियादी संरचना के वित्तपोषण से संबद्ध जोखिमों के फैलने से संबंधित चिंताओं के साथ प्रभावी रूप में निपट सकते हैं । यद्यपि भारत में प्रतिभूतिकरण की अनुमति दी गई है, तथापि वह लोकप्रिय नहीं हुआ है । अतः ऐसे उत्पादों को लोकप्रिय बनाने के लिए प्रयास करने की आवश्यकता है । फिर भी, अमरीका में बंधक द्वारा समर्थित प्रतिभूति (एमबीएस) बाजार के विफल हो जाने तथा विशेष रूप से वित्तीय प्रणाली की स्थिति पर उसके प्रभाव और इस बात की बढ़ती हुई समझ कि जोखिमें अक्सर उनको अंतरित की गईं जो उन्हें बिलकुल नहीं समझ पाते थे, को देखते हुए यह सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त पूर्व-सावधानियाँ बरतने की आवश्यकता है कि भारत में इस प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न न हों ।

*उद्योग की बैंकिंग क्षेत्र पर निर्भरता को कम करने की आवश्यकता*

6.158 औद्योगिक क्षेत्र का बैंकिंग क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भर रहना जारी है । यद्यपि कुल बैंक ऋण में उद्योग का अंश घट गया है, तथापि उद्योग की ऋण - प्रधानता बढ़ गई है । साक्ष्य यह संकेत भी करता है कि अन्य देशों की तुलना में भारत में औद्योगिक क्षेत्र बैंकिंग क्षेत्र पर बहुत अधिक निर्भर है । अतः इस बात की आवश्यकता है कि उद्योग बैंकिंग क्षेत्र पर अपनी निर्भरता को क्रमशः कम करे ताकि कृषि और एसएमई क्षेत्र, जो अन्य स्रोतों से निधियाँ प्राप्त करने में असमर्थ हैं, की आवश्यकताएँ बैंकिंग क्षेत्र द्वारा पूरी की जा सकें ।

## X. सारांश

6.159 अर्थव्यवस्था के सभी प्रमुख क्षेत्रों के लिए बैंक वित्त लगातार ऋण का एक प्रधान स्रोत है। भारत में ऋण उपलब्ध कराने में बैंकिंग क्षेत्र की भूमिका दो विकास वित्त संस्थाओं (डीएफआइ) के बैंकों के रूप में

परिवर्तन के कारण बढ़ गई है । बैंक ऋण के लिए माँग भी अर्थव्यवस्था के कुछ क्षेत्रों की वृद्धि की लगातार बनी हुई उच्च दरों एवं माँग के नये स्रोतों के आविर्भाव के कारण बढ़ी है । बैंकों के उधार और निवेश कार्यों का स्वरूप अर्थव्यवस्था की बदलती हुई संरचना के प्रतिक्रियास्वरूप विकसित हुआ है ।

6.160 1990 के दशक के प्रारंभ से बैंक ऋण के व्यवहार को मोटे तौर पर तीन चरणों में श्रेणीबद्ध किया जा सकता है । पहले चरण (1990-91 से 1995-96) में बैंक ऋण की वृद्धि ने एक अनिश्चय का व्यवहार दर्शाया । दूसरे चरण (1996-97 से 2001-02) में बैंक ऋण में तेजी से गिरावट हुई और वह 10 से 18 प्रतिशत के बीच के दायरे में बद्ध रह गया । इस चरण में बैंकों ने सरकारी प्रतिभूतियों में अपना निवेश बढ़ाया, हालांकि ऐसी अपेक्षाओं को क्रमशः नीचे लाया गया था । इस प्रतिमान ने मुख्य रूप से विवेकपूर्ण मानदंडों के अनुप्रयोग और औद्योगिक क्षेत्र में मंदी के कारण जोखिम के प्रति बैंकों की विमुखता को प्रतिबिंबित किया । तीसरे चरण (2002-03 से 2006-07) में ऋण में वृद्धि सामान्यतः प्रबल रही । इस चरण के प्रारंभिक भाग में ऋण के लिए माँग, जो मुख्य रू प से खुदरा ऋणों के रूप में सामने आई, शीघ्र ही कृषि, उद्योग और बुनियादी संरचना क्षेत्र को सम्मिलित करते हुए व्यापक आधार वाली बन गई । यह आंशिक रू प से अर्थव्यवस्था में तेज वृद्धि के कारण तथा अंशतः कृषि और एसएमई क्षेत्र को औपचारिक ऋण बढ़ाने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा किये गये प्रयासों के कारण था । इस चरण के कई विशिष्ट लक्षण हैं । एक, घरेलू क्षेत्र बैंक ऋण के महत्वपूर्ण घटक के रू प में उभरा । दो, कुल ऋण में मध्यावधि और दीर्घावधि ऋण का अंश तेजी से बढ़ा जो मुख्य रूप से बुनियादी संरचना की परियोजनाओं और आवास परियोजनाओं के लिए ऋण के कारण था । तीन, जीडीपी की तुलना में ऋण का अनुपात उल्लेखनीय रूप में बढ़ गया ।

6.161 कुल उधार में संस्थागत स्रोतों से किसान परिवारों द्वारा उधार का अंश 1991 और 2002 के बीच घट गया । तथापि, यह संभवतः गैर-उत्पादक व्यय के लिए बढ़े हुए उधार के कारण था । 1991 और 2002 के बीच इसी अवधि के दौरान संस्थागत स्रोतों से किसान परिवारों द्वारा उधार उच्चतर दर से बढ़ा । अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा कृषि को ऋण जो 1990 के दशक में कम हो गया था, ने 2003-04 से आगे उल्लेखनीय वृद्धि दर्शायी । कुल बैंक ऋण में कृषि को ऋण का अंश भी तेजी से बढ़ा । खाद्येतर बैंक ऋण के प्रतिशत के रूप में कृषि को प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र अग्रिमों में भी वृद्धि हुई । इसके परिणामस्वरूप, कृषि क्षेत्र को ऋण की प्रधानता में उल्लेखनीय रूप में सुधार आया । फिर भी, कई चिंतित करनेवाले लक्षण भी देखे गये । एक, कृषि को कुल ऋण में दीर्घावधि ऋणों का अंश 1991 और 2006 के बीच लगभग लगातार घट गया; 2006 में उक्त अंश 1991 में विद्यमान अंश के आधे से भी कम था । फिर भी, कृषि को बकाया मीयादी ऋणों ने 2007 में एक उल्लेखनीय सुधार दर्शाया । दो, दोनों खातों की संख्या और कृषि को संवितरित ऋणों के तौर पर किसानों को प्रत्यक्ष वित्त में छोटे और सीमांत किसानों के अंश में थोड़ा अवगम्य सुधार दिखाई दिया ।

6.162 भारत में छोटे और मझौले उद्यमों (एसएमई) को बैंक ऋण, जो 1994-95 से 2002-03 तक की अवधि के दौरान घटा, में उसके बाद सुधार आया । तथापि विभिन्न नीतिगत पहलों के बावजूद एसएमई को बैंक ऋण इस क्षेत्र के महत्व और इसकी आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं रहा है । विश्व भर में बैंक ऋण एसएमई के लिए वित्त का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्रोत रहा है । एसएमई सूचनात्मक तौर पर अपारदर्शी हैं और इस तत्व ने बैंक ऋण तक उनकी सुगमतापूर्वक पहुँच को बाधित किया है। अर्थव्यवस्था में ऋण की वृद्धि को धारणीय बनाने के लिए यह आवश्यक है कि कृषि और एसएमई को ऋण की उपलब्धता में विद्यमान विभिन्न बाधाओं को दूर किया जाए ।

6.163 कृषि को ऋण की उपलब्धता में वृद्धि करने के लिए यह आवश्यक है कि समर्थक स्थितियाँ निर्मित की जाएँ ताकि कृषि एक धारणीय व्यवसाय बन सके तथा सरकारी और निजी संस्थाएँ कृषि को उधार में स्वेच्छा से सहभागिता करें । कृषि में जोखिम प्रबंध के संबंध में एक व्यापक सरकारी नीति की भी आवश्यकता है । आपूर्ति द्वारा संचालित ऋण, जिसका अनुसरण वर्तमान में भारत और कई अन्य देशों में किया जा रहा है, उतना प्रभावी नहीं रहा है । अतः कुछ देशों ने माँग-केंद्रित दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित किया है । इस मॉडल के अंतर्गत फोकस उधारकर्ताओं की आवश्यकताओं के लिए योग्य नवोन्मेष वित्तीय उत्पाद निर्मित करने पर है। भारत में कृषि क्षेत्र में माँग-केंद्रित दृष्टिकोण का भी पता लगाया जा सकता है । चूँकि भूमि ही किसानों के पास उपलब्ध एकमात्र आस्ति है, अतः भू-अभिलेखों का कंप्यूटरीकरण करने की आवश्यकता है ताकि एक संपार्श्विक जमानत (कॉलेटरल) के रूप में भूमि का उपयोग किया जा सके । एसएमई क्षेत्र के लिए समूहों (क्लस्टर्स) को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है जो एसएमई की सौदा-शक्ति को बढ़ाएगा और साथ ही, सूचना तक पहुँचने के लिए लेनदेन लागतों को कम करने में ऋणदाताओं की भी सहायता करेगा । भारत में एसएमई क्षेत्र के लिए आस्ति पर आधारित वित्तपोषण का पता लगाने की भी आवश्यकता है । यह मीयादी ऋणों की तुलना में अधिक किफायती वित्तपोषण का विकल्प है ।

6.164 भारत में उद्योग लगातार बैंकिंग क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भर है । उद्योग के लिए बैंकिंग क्षेत्र पर अपनी निर्भरता को क्रमशः कम करने की जरूरत है ताकि बैंक कृषि और एसएमई की बढ़ती हुई आवश्यकताएं पूरी कर सकें जो अपनी आवश्यकताओं के लिए अन्य स्रोतों से निधियाँ प्राप्त नहीं कर सकते ।

6.165 यह स्पष्ट है कि भारत में बैंकों ने देश की विकास-प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है । तथापि, अभी कुछ अंतर विद्यमान हैं जिन्हें वृद्धि की प्रक्रिया को अधिक धारणीय और न्यायसंगत बनाने के लिए पाटने की आवश्यकता है । नवोन्मेष और वृद्धि को प्रोत्साहित

करने के लिए बैंकिंग प्रणाली के लिए अपनी जोखिम निर्धारण प्रथाओं में सुधार लाने और साथ ही लेनदेन लागतों को कम करने की आवश्यकता है। इस संबंध में ऋण इतिहासों और ऋण सूचना की अधिकाधिक उपलब्धता से सहायता मिलनी चाहिए । ये सब, ऋण के संबंध में प्रामाणिक निर्णय लेने के लिए वित्तीय प्रणाली में बेहतर क्षमता हेतु मार्ग प्रशस्त करेंगे । प्रश्न मूल रूप से कम जोखिमपूर्ण ऋणों से अधिक जोखिमपूर्ण ऋणों को अलग करने एवं उनका वित्तपोषण करने के उपयुक्त मार्ग तलाशने के तौर पर प्रामाणिक जोखिम प्रबंध करने का है (मोहन,2008)।

# VII वित्तीय समावेशन

7.1 संवृद्धि की गति बढ़ाने तथा आय की असमानताओं और गरीबी को कम करने के लिए निर्धन और असुरक्षित वर्गों, सुविधा-रहित अंचलों और पिछड़े क्षेत्रों द्वारा सुरक्षित, सुलभ और वहनीय ऋण एवं अन्य वित्तीय सेवाओं तक पहुँच को एक पूर्व शर्त के रूप में स्वीकार किया गया है। समान अवसर निर्मित करने के माध्यम से एक सुसंचालित वित्तीय प्रणाली तक पहुँच आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से बहिष्कृत लोगों को अर्थव्यवस्था में बेहतर ढंग से एकीकृत होने और विकास में सक्रिय रूप से अंशदान करने तथा आर्थिक आघातों से स्वयं की रक्षा करने में समर्थ बनाती है। गरीबी हटाने के लिए एक अत्यावश्यक साधन के रूप में वित्त तक पहुँच के महत्व के संबंध में व्यापक अंतरराष्ट्रीय सहमति के बावजूद[1] यह अनुमान है कि वैश्विक तौर पर दो बिलियन से भी अधिक लोग वर्तमान में वित्तीय सेवाओं तक पहुँच से वंचित हैं (संयुक्त राष्ट्र, 2006ए)। अधिकांश विकासशील देशों में समाज के एक बड़े वर्ग, विशेष रूप से कम आय वाले लोगों की, औपचारिक और अर्ध-औपचारिक दोनों वित्तीय सेवाओं तक पहुँच बहुत कम है। इसके परिणामस्वरूप, उनमें से कई लोगों को आवश्यक रूप से वित्त के अपने स्वयं के अथवा अनौपचारिक स्रोतों पर सामान्यतः अनुचित रूप से अत्यधिक लागत पर निर्भर होना पड़ता है। अधिकांश न्यूनतम विकसित देशों (एलडीसी) में स्थिति बदतर है जहाँ 90 प्रतिशत से अधिक आबादी औपचारिक वित्तीय प्रणाली तक पहुँच से अपवर्जित है (संयुक्त राष्ट्र, 2006ए)।

7.2 विकास के सिद्धांत यह कहते हैं कि वित्तीय विकास एक 'आपूर्ति-प्रेरित' (वित्तीय विकास वृद्धि को प्रेरित करता है) अथवा एक 'माँग-अनुगामी' (वृद्धि वित्तीय उत्पादों के लिए माँग उत्पन्न करती है) माध्यम से वृद्धि के लिए समर्थक स्थितियाँ निर्मित करता है। पूर्व में विकास के सिद्धांतों ने परिकल्पना की कि विकास के प्रारंभिक चरणों में असमानता की वृद्धि अपरिहार्य है। इस विषय पर प्रारंभिक साहित्य ने एक ऐसी व्यापक वित्तीय प्रणाली को विकसित करने की आवश्यकता पर ध्यान केंद्रित किया जो बचत से धनसंग्रह करे तथा इस प्रकार जुटाई गई निधियों को व्यापक वैविध्यपूर्ण गतिविधियों की दिशा में सरणीबद्ध करे । विकास का आधुनिक सिद्धांत वित्त तक पहुँच के अभाव को निरंतर बनी हुई आय की असमानता एवं अपेक्षाकृत मंद वृद्धि के लिए जिम्मेदार एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में देखता है। अनुभवजन्य साहित्य का एक बड़ा भाग यह संकेत करता है कि वित्तीय क्षेत्र को विकसित करने और वित्त तक पहुँच में सुधार लाने से आय की असमानता और गरीबी में कमी के साथ ही आर्थिक वृद्धि में गति आ सकती है। सम्मिलित करनेवाली वित्तीय प्रणाली के बिना, निर्धन व्यक्तियों और छोटे उद्यमों को वृद्धि के अवसरों का लाभ उठाने के लिए अपनी शिक्षा और उद्यमवृत्ति में निवेश करने के लिए अपनी स्वयं की सीमित बचत और आमदनी पर निर्भर रहना होगा (विश्व बैंक, 2008)।

7.3 एक अल्पविकसित वित्तीय प्रणाली में आबादी के कुछ खंड वित्तीय सेवाओं तक उचित प्रवेश प्राप्त करने में कठिनाई अनुभव करते हैं। इसके परिणामस्वरूप, उन्हें साहूकारों जैसे उच्च लागत वाले अनौपचारिक स्रोतों का सहारा लेना पड़ता है। यह अनुत्पादक उपभोग प्रयोजनों और चिकित्सा-व्यय जैसी अन्य आपाती आवश्यकताओं के लिए निम्न आय वाले परिवारों की छिट-पुट वित्तीय अपेक्षाओं के संबंध में विशेष रूप से सही है। अतः वृद्धि के लाभ उन्हीं के हाथों में केंद्रीकृत होने की प्रवृत्ति दर्शाते हैं जो औपचारिक वित्तीय प्रणाली द्वारा पहले ही लाभान्वित हो चुके हैं। दूसरी ओर, परिपक्व वित्तीय प्रणालियों में वित्तीय संस्थाएँ मूल्यांकन की तकनीकें एवं सूचना संग्रहण और आदान-प्रदान के तंत्र विकसित करती हैं जो उन्हें उन गतिविधियों या फर्मों अथवा व्यक्तियों को भी वित्त प्रदान करने में समर्थ बनाते हैं जो सीमांत में हैं तथा इसके द्वारा की वृद्धि को प्रेरित करनेवाले उनके उत्पादक कार्यकलापों को बढ़ावा दिया जाता है। तथापि, विकसित वित्तीय प्रणालियाँ भी निम्न आय वाले समूहों के उपभोग और अन्य आवश्यकताओं का वित्तपोषण करने में कठिनाइयों का सामना करती हैं। संभावित उद्यमियों और छोटे फर्मों को बाह्य वित्त की उपलब्धता नये प्रवेशकों को समर्थ बनाती है जिससे पदधारियों के लिए प्रतियोगिता बढ़ जाती है। इससे फिर उद्यमवृत्ति और उत्पादकता को प्रोत्साहन मिलता है।

7.4 सुरक्षित बचत, निर्धन और निम्न आय वाले परिवारों तथा व्यष्टि, छोटे और मध्यम-आकार वाले उद्यमों के लिए उपयुक्त रूप में अभिकल्पित ऋणों एवं उचित बीमा और भुगतान सेवाओं सहित समावेशक वित्त जनता को अपनी आय बढ़ाने, पूँजी अर्जित करने, जोखिम प्रबंध करने तथा गरीबी से बाहर निकल आने के लिए सहायता पहुँचा सकता है (संयुक्त राष्ट्र, 2006बी)। यह भलीभाँति स्वीकार

[1] सहस्राब्दी विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने में व्यष्टि-वित्त के अत्यावश्यक महत्व को विश्व के शीर्ष-सम्मेलन, 2005 में एवं विकास के लिए वित्तपोषण संबंधी अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन की मोन्टेरी सर्वसम्मति हेतु शीर्ष-सम्मेलन द्वारा समर्थन में रेखांकित किया गया । मोन्टेरी सर्वसम्मति के अंतिम घोषणापत्र में ग्रामीण क्षेत्रों और महिलाओं जैसे कम सेवा-प्राप्त खंडों को शामिल करने के लिए घरेलू वित्तीय क्षेत्रों को मजबूत करने पर विशेष रूप से जोर दिया गया ।

किया गया है कि वित्तीय सेवाओं तक पहुँच वित्तीय भुगतान करना और प्राप्त करना सुगम कर देती है तथा लेनदेन लागतों को घटाती है। इसके अलावा, वित्तीय सेवाओं तक पहुँच उच्चतर उत्पादन और सामाजिक सुरक्षा में अंशदान करती है क्योंकि वित्तीय क्षेत्र - संचित बचत, ऋण और बीमा के माध्यम से - संकट को कम करने के एक उपाय के रूप में काम आता है। फिर भी, वित्तीय सेवाओं तक अधिक व्यापक पहुँच ने कम ध्यान आकर्षित किया है यद्यपि सिद्धांत में इस पर बल दिया गया है।

7.5 भारत में आयोजना की प्रक्रिया के प्रारंभ से ही इक्विटी के साथ वृद्धि केंद्रीय लक्ष्य रहा है। तदनुसार, वर्षों से समावेशक वृद्धि की समस्या का समाधान करने के लिए सरकार और रिज़र्व बैंक द्वारा लगातार पहलें की गई हैं। हाल के वर्षों में समग्र जीडीपी और प्रति व्यक्ति आय में तीव्र वृद्धि के होते हुए भी, ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में जनसंख्या का एक महत्वपूर्ण अनुपात अभी भी औपचारिक वित्तीय प्रणाली में प्रवेश करने में कठिनाई महसूस करता है। उच्चतर आर्थिक वृद्धि के बावजूद, गरीबी के स्तरों में अपर्याप्त कमी, वृद्धि और रोजगार के अवसरों में क्षेत्रीय भिन्नताओं तथा अन्य सामाजिक संकेतकों में मंद गति से सुधार से हाल में चिंताएं उत्पन्न हुई हैं। अतः ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में यह सुनिश्चित करने के लिए कि प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि अधिक व्यापक हो, एक अधिक समावेशक वृद्धि की आवश्यकता पर पुनः बल दिया गया है। तीव्रतर और अधिक समावेशक वृद्धि का लक्ष्य प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने के लिए कृषि, व्यष्टि, छोटे और मझौले उद्यमों के पास असीम संभावना है क्योंकि ये क्षेत्र प्रांतीय तौर पर विविधीकृत उत्पादन का विस्तार करने तथा व्यापक रूप से फैले हुए कृषीतर रोजगार को पैदा करने की क्षमता के साथ उल्लेखनीय रूप में उत्पादन और रोजगार निर्माण में अंशदान करते हैं।

7.6 बृहत्तर आबादी को सुनियोजित और सुसंगठित वित्तीय प्रणाली के अंतर्गत लाना सुस्पष्ट रूप से 2005 से रिज़र्व बैंक की कार्यसूची में रहा है (मोहन, 2006)। जबकि अनेक केंद्रीय बैंक एकमात्र मुद्रास्फीति पर ध्यान केंद्रित करते हैं, भारत सहित, कई विकसित और उभरती अर्थव्यवस्थाओं में समान रूप से वृद्धि पर भी ध्यान केंद्रित किया जाता है। वर्तमान में एक अवबोधन है कि बड़ी संख्या में ऐसे लोग, संभावित उद्यमी, छोटे उद्यम और अन्य हैं जिनका वित्तीय क्षेत्र में पर्याप्त प्रवेश नहीं है जिसके कारण वे हाशिये में चले जाते हैं तथा वृद्धि और समृद्धि के अवसर से वंचित रह जाते हैं। अतः रिज़र्व बैंक ने देश में वित्तीय व्याप्ति के विस्तार को प्रोत्साहित करने के लिए विभिन्न नये उपाय लागू किये हैं। वित्तीय समावेशन एक अधिक सम्मिलनकारी ढंग से आर्थिक वृद्धि को प्रोत्साहित करने के लिए अनिवार्य माना जाता है।

7.7 एक तीव्र वृद्धिशील अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि वृद्धि को कैसे बनाए रखा जाए और उसका विविधीकरण कैसे किया जाए ताकि वृद्धि की प्रक्रिया के लिए जोखिम को विभिन्न क्षेत्रों के बीच विविधीकृत किया जा सके। इस संदर्भ में बढ़ती हुई वृद्धि के संभावित स्रोतों अर्थात् वित्तीय सेवाओं तक पहुँचने में कठिनाई अनुभव करनेवाले क्षेत्रों की तलाश महत्वपूर्ण हो जाती है। अतः एक ओर इन खंडों या क्षेत्रों को शामिल करने से उनकी उत्पादक क्षमताएँ खुल जाती हैं तथा दूसरी ओर ऐसे क्षेत्रों से आय और उपभोग की वृद्धि द्वारा संचालित रूप में एक धारणीय आधार पर घरेलू माँग में भी वृद्धि होगी। इससे मजबूत अंतर-क्षेत्रीय सहबद्धताएं भी विकसित होंगी।

7.8 उपर्युक्त पृष्ठभूमि के साथ इस अध्याय में सैद्धांतिक गतिविधियों, विभिन्न देशों के अनुभवों और अनुभवजन्य निष्कर्षों को लेते हुए भारत में वित्तीय समावेशन/वंचन के संबंध में महत्वपूर्ण मुद्दों के परीक्षण का प्रयास किया गया है। खंड II में संकल्पनात्मक ढाँचे और माप संबंधी मुद्दों की चर्चा की गई है। खंड III में वित्तीय वंचन के स्वरूप, कारणों और परिणामों की चर्चा है। खंड IV में भारत में वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए की गई नीतिगत पहलुओं का विवरण है। खंड V भारत में वित्तीय समावेशन/वंचन के स्वरूप और सीमा का विश्लेषण किया गया है। वित्तीय समावेशन की परिचालन लागत और वित्तीय समावेशन में प्रौद्योगिकी की भूमिका पर खंड VI में चर्चा की गई है । विभिन्न देशों के अनुभवों का अवलोकन और भारतीय संदर्भ में अनुभवजन्य विश्लेषण करते हुए खंड VII में भावी दिशा के रूप में भारत में वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए कुछ सुझाव दिये गये हैं । खंड VIII में इस अध्याय का समाहार किया गया है ।

## II. वित्त तक पहुँच : संकल्पनात्मक ढाँचा

*संकल्पना और परिभाषा*

7.9 वित्तीय समावेशन की परिभाषा देना एक संकल्पनात्मक ढाँचे को विकसित करने तथा वित्तीय प्रणाली तक निम्नस्तरीय प्रवेश को प्रेरित करनेवाले अंतर्निहित कारकों की पहचान करने के दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण माना जाता है। साहित्य की समीक्षा से संकेत मिलता है कि वित्तीय समावेशन की कोई सर्वतः स्वीकृत परिभाषा नहीं है। चूँकि समावेशन को मापना कठिन पाया गया है, अतः वित्तीय समावेशन की परिभाषा सामान्यतः वित्तीय प्रणाली से वंचन के तौर पर दी जाती है। वित्तीय वंचन की प्रारंभिक चर्चा से पूर्व सामाजिक बहिष्कार पर चर्चा की गई थी तथा वित्तीय सेवाओं, खास तौर से बैंकिंग आउटलेटों तक भौगोलिक पहुँच के मुद्दे पर प्रधानतः ध्यान केंद्रित किया गया था (लेशोन और थ्रिफ्ट, 1993)। तथापि, वित्तीय वंचन केवल वित्तीय सेवाओं की बदलती स्थलाकृति (टोपोग्राफी) द्वारा प्रेरित भौतिक प्रवेश के बारे में नहीं है । अतः बहस को अब विस्तृत किया गया है ताकि इसके अंतर्गत सभी प्रकार के लोगों को, जो वित्तीय सेवाओं का बहुत कम उपयोग करते हों या कोई उपयोग नहीं करते हों, एवं वित्तीय वंचन की प्रक्रियाओं को शामिल किया जा सके (फोर्ड और रौलिंगसन, 1996, केम्पसन और वाइली, 1998)।

7.10 सामाजिक, आर्थिक और वित्तीय विकास; वित्तीय क्षेत्र में हितधारिता की संरचना; वित्तीय रूप से बहिष्कृत खंडों की सामाजिक-

आर्थिक विशेषताओं; और प्राधिकारियों या सरकारों द्वारा समस्या की पहचान की सीमा के भी आधार पर वित्तीय समावेशन की परिभाषा के संबंध में बल विभिन्न देशों और भौगोलिक क्षेत्रों के बीच भिन्न-भिन्न है । मोटे तौर पर वित्तीय वंचन को व्यक्तियों/संस्थाओं के निरुत्साहजनक अनुभवों अथवा अवबोधनों के प्रतिक्रियास्वरूप पहुँच, स्थितियों, कीमतों, विपणन या स्व-बहिष्करण के साथ संबद्ध समस्याओं के कारण एक उपयुक्त रूप में आवश्यक वित्तीय सेवाओं तक पहुँचने में असमर्थता के रूप में माना जाता है।

7.11 साहित्य में वित्तीय वंचन की परिभाषाएँ वंचन के 'विस्तार', 'केंद्रबिंदु' (फोकस) और 'मात्रा' जैसे आयामों के आधार पर भिन्न-भिन्न हैं । 'विस्तार' का आयाम सभी परिभाषाओं में सबसे विस्तृत है जो वित्तीय वंचन को सामाजिक वंचन के साथ संबद्ध करता है तथा वित्तीय वंचन की परिभाषा निर्धन और वंचित सामाजिक वर्गों को वित्तीय प्रणाली में प्रवेश पाने से रोकनेवाली प्रक्रियाओं के रूप में देता है (लेशोन और थ्रिफ्ट, 1995)। 'केंद्रबिंदु' (फोकस) का आयाम उस समुच्चय के मध्य में है जो वित्तीय वंचन को वंचन के अन्य आयामों के साथ संबद्ध करता है। वह वित्तीय वंचन की परिभाषा बैंक खातों/गृह बीमा जैसी मुख्य धारा की वित्तीय सेवाओं में आबादी के कुछ खंडों द्वारा अनुभव की जा रही संभावित कठिनाइयों के रूप में देता है (मेडोस और अन्य, 2004)। 'केंद्रबिंदु' (फोकस) पर बल देनेवाली परिभाषाएं भी व्यक्तियों, परिवारों, समुदायों और व्यवसायों जैसे विभिन्न खंडों को सम्मिलित करते हुए उल्लेखनीय रूप में भिन्नता रखती हैं । 'मात्रा' का आयाम जो वित्तीय वंचन की सभी परिभाषाओं में संकीर्णतम है, वित्तीय वंचन की परिभाषा बीमा, बिल-भुगतान सेवाओं तथा सुलभ और उचित जमा खातों सहित ऋण और अन्य वित्तीय सेवाओं के विशिष्ट स्रोतों से वंचन के रूप में देता है (रोगैली, 1999)। अंतिम रूप से, वित्तीय वंचन की परिभाषाएं बहुत कुछ सापेक्षता की संकल्पना जैसे आयामों के अनुसार भिन्न-भिन्न हैं अर्थात् वित्तीय वंचन को कुछ मानक (अर्थात् समावेशन) के सापेक्ष रूप में परिभाषित किया गया है। यह चिंतन पद्धति वित्तीय वंचन की समस्या को व्यक्तियों और परिवारों के एक अल्पमत को पीछे छोड़ते हुए, बढ़े हुए समावेशन से उत्पन्न समस्या के रूप में परिभाषित करती है (केम्प्सन और अन्य, 2000)। इस प्रकार अति समावेशन की द्विविधता विद्यमान है जिसमें वित्तीय उत्पादों के एक दायरे में कुछ के लिए प्रवेश है तथा उसी समय एक अल्पमत के लिए मूलभूत बैंकिंग सेवाओं का भी अभाव है। यह परिदृश्य अधिकांशतः विकसित देशों में पाया जाता है जहाँ वित्तीय विकास की मात्रा अत्यधिक है।

7.12 वर्षों से वित्तीय समावेशन/वंचन की अनेक परिभाषाएँ विकसित हुई हैं (सारणी 7.1)। वित्तीय वंचन की कार्यकारी अथवा परिचालनात्मक परिभाषाएँ सामान्यतः विशिष्ट वित्तीय उत्पादों और सेवाओं के स्वामित्व अथवा उन तक पहुंच पर ध्यान केंद्रित करती हैं। यह फोकस मुख्य रूप से मुख्य धारा के वित्तीय सेवाप्रदाताओं द्वारा प्रदत्त उत्पादों और सेवाओं तक सीमित हो जाता है (मेडोस और अन्य, 2004)। ऐसे वित्तीय उत्पादों में धन-प्रेषण, गृह बीमा, अल्पावधि और दीर्घावधि ऋण तथा बचत शामिल हो सकते हैं (ब्रिजमैन, 1999)। इसके अलावा, परिचालनात्मक परिभाषाएं भी अंतर्निहित सरकारी नीति के सरोकारों से विकसित हुई हैं कि कई लोग, विशेष रूप से निम्न आय पर जीवन-यापन करनेवाले लोग बैंक खातों और निम्न लागत वाले ऋणों जैसे मुख्य धारा के वित्तीय उत्पादों तक नहीं पहुँच सकते, जो फिर उनके संबंध में जो प्रायः सर्वाधिक असुरक्षित लोग हैं, वास्तविक लागतें लागू करती है (एच. एम. ट्रेज़री, 2004)।

7.13 साहित्य की समीक्षा से संकेत मिलता है कि सर्वाधिक परिचालनात्मक परिभाषाएँ संदर्भ-विशिष्ट हैं, जो वित्तीय वंचन और सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों की देश-विशिष्ट समस्याओं से उत्पन्न हुई हैं । इस प्रकार, वित्तीय वंचन के संदर्भ-विशिष्ट आयाम सार्वजनिक नीति के परिप्रेक्ष्य से महत्व प्राप्त करते हैं। इसके अलावा, उक्त परिभाषाओं ने पूर्व की परिभाषाओं से बल में एक परिवर्तन देखा है। पूर्व की परिभाषाओं में वित्तीय समावेशन और वंचन की परिभाषा अधिकांशतः शारीरिक रूप से पहुँच के रूप में दी गई है जबकि परिवर्तित बल वाली अधिक व्यापक परिभाषा में उत्पादों और सेवाओं तक पहुंच, उनके प्रयोग और उनकी समझ को शामिल किया गया है।

7.14 वित्तीय उत्पादों और सेवाओं तक पहुँच पर आधारित वित्तीय समावेशन की परिचालनात्मक परिभाषा भी इस प्रक्रिया में संबद्ध वित्तीय संस्थाओं अथवा सेवाप्रदाताओं की भूमिका को रेखांकित करती है । विभिन्न वित्तीय उत्पादों या सेवाओं एवं संस्थागत संरचना का विश्लेषण संक्षिप्त रूप में चार्ट VII.1 में प्रस्तुत किया गया है ।

*वित्तीय समावेशन/वंचन की माप*

7.15 जबकि वित्तीय समावेशन का महत्व व्यापक तौर पर स्वीकार किया गया है, इस बारे में यह काफी कम ज्ञात है कि वित्तीय प्रणालियाँ कितनी समावेशक हैं तथा किसको किस वित्तीय सेवा में प्रवेश है। वित्तीय समावेशन संबंधी साहित्य के पास ऐसे व्यापक माप का अभाव है जिसका प्रयोग विभिन्न देशों में वित्तीय समावेशन की सीमा को निर्दिष्ट करने के लिए किया जा सके। यद्यपि बैंकिंग प्रणाली, पूँजी बाजारों और बीमा क्षेत्र की गहराई के संकेतक व्यापक तौर पर उपलब्ध हैं, तथापि वित्तीय समावेशता की मात्रा के बारे में कम जानकारी उपलब्ध है। विकासशील देशों में सूचना का अभाव अधिक सुस्पष्ट है जहाँ इस संबंध में सुव्यवस्थित सूचना कम है कि औपचारिक वित्तीय क्षेत्र द्वारा किसकी सेवा की जा रही है, निर्धन परिवारों और छोटे उद्यमों के लिए समर्थनकारी प्रवेश सहित कौन-सी वित्तीय संस्थाएँ अथवा सेवाएँ सबसे अधिक कारगर हैं, अथवा कौन-से व्यावहारिक और नीतिगत अवरोध उक्त अभिगम्यता में बाधा डाल रहे हैं। अलग-अलग संकेतक अर्थात् बैंक खातों की संख्या और बैंक शाखाओं की संख्या, जिनका सामान्यतः उपयोग वित्तीय समावेशन की माप के रूप में किया जाता है, किसी अर्थव्यवस्था में वित्तीय समावेशन के स्तर के संबंध में केवल

### सारणी 7.1 : वित्तीय समावेशन/वंचन के परिभाषात्मक पहलू

| संस्था/लेखक | परिभाषा | संकेतक |
|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 |
| एशियाई विकास बैंक (2000) | निर्धन और निम्न आय वाले परिवारों और उनके व्यष्टि-उद्यमों को जमाराशियों, ऋणों, भुगतान सेवाओं, धन अंतरणों और बीमा जैसी वित्तीय सेवाओं के विस्तृत दायरे की व्यवस्था । | जमाराशियाँ, ऋण, भुगतान सेवाएँ, धन अंतरण और बीमा। |
| स्टीफन पी. सिनक्लेअर (2001) | वित्तीय वंचन का अर्थ है, उचित रूप में आवश्यक वित्तीय सेवाओं तक पहुँचने में असमर्थता। वंचन नकारात्मक अनुभवों या अवबोधनों के प्रतिक्रियास्वरूप पहुँच, स्थितियों, कीमतों, विपणन या स्व-वर्जन संबंधी समस्याओं के परिणामस्वरूप उत्पन्न हो सकता है । | धनप्रेषण, ऋण, बीमा, कर्ज और कर्ज सहायता, दीर्घकालिक बचत और वित्तीय साक्षरता के लिए मूलभूत बैंकिंग सेवाएँ। |
| चान्ट लिंक एण्ड एसोसिएट्स, आस्ट्रेलिया (2004) | वित्तीय वंचन मुख्य धारा के प्रदाताओं से उपयुक्त कम लागत वाले, उचित और सुरक्षित वित्तीय उत्पादों तथा सेवाओं के संबंध में कुछ उपभोक्ताओं के लिए पहुँच का अभाव है। वित्तीय वंचन तब चिंता बन जाता है जब वह निम्न आय वाले और/या वित्तीय संकट से ग्रस्त उपभोक्ताओं पर लागू होता है । | जमा खाते, प्रत्यक्ष निवेश, आवास ऋण, क्रेडिट कार्ड, वैयक्तिक ऋण, भवन बीमा और गृह बीमा । |
| राजकोष समिति, हाउस ऑफ कॉमन्स, यूके (2004) | उपयुक्त वित्तीय उत्पादों और सेवाओं तक पहुँचने के लिए व्यक्तियों की क्षमता । | सभी के लिए वहनीय ऋण और बचत एवं वित्तीय परामर्श तक पहुँच । |
| स्कॉटिश सरकार (2005) | उपयुक्त वित्तीय उत्पादों और सेवाओं तक व्यक्तियों के लिए प्रवेश। इसमें उन उत्पादों और सेवाओं का सर्वोत्तम उपयोग करने के लिए क्षमता, कौशल, ज्ञान और समझ का होना शामिल है। तुलना में वित्तीय वंचन इसके विपरीत है । | उत्पादों और सेवाओं तक पहुँच और/या क्षमता, कौशल, ज्ञान और समझ । |
| संयुक्त राष्ट्र (2006 बी) | एक वित्तीय क्षेत्र जो सभी 'बैंक सहायता योग्य' लोगों और फर्मों को ऋण तक, सभी बीमा योग्य लोगों ओर फर्मों को बीमा तक तथा प्रत्येक व्यक्ति को बचत और भुगतान सेवाओं तक 'प्रवेश' देता है। समावेशक वित्त यह अपेक्षा नहीं करता कि प्रत्येक पात्र व्यक्ति प्रत्येक सेवा का उपयोग करे, परंतु यदि वांछित हो तो उन्हें उपयोग हेतु चुनने में समर्थ होना चाहिए । | ऋण, बीमा, बचत, भुगतान सेवाओं हेतु प्रवेश । |
| भारत में वित्तीय समावेशन संबंधी समिति (अध्यक्ष : सी. रंगराजन) की रिपोर्ट (2008) | एक वहनीय लागत पर कमजोर वर्गों और निम्न आय वाले समूहों जैसे दुर्बल वर्गों द्वारा जहाँ अपेक्षित हो वहाँ वित्तीय सेवाओं एवं समय पर और पर्याप्त ऋण के लिए प्रवेश सुनिश्चित करने की प्रक्रिया । | वित्तीय सेवाओं तथा समय पर और पर्याप्त ऋण के लिए प्रवेश । |
| विश्व बैंक (2008) | वित्तीय सेवाओं के लिए व्यापक प्रवेश के अंतर्गत वित्तीय सेवाओं के उपयोग में कीमत संबंधी और कीमत से इतर अवरोधों का अभाव निहित है। इसे परिभाषित करना और मापना कठिन है क्योंकि प्रवेश (एक्सेस) के कई आयाम हैं । | जमा, ऋण, भुगतान, बीमा जैसी वित्तीय सेवाओं के लिए प्रवेश । |

आंशिक सूचना ही उपलब्ध करा सकते हैं। बैंकों, डाक बचत बैंकों, ऋण संघों, वित्त कंपनियों, व्यष्टि-वित्त संस्थाओं (एमएफआइ), तथा अन्य औपचारिक और अर्ध-औपचारिक बैंकेतर संस्थाओं द्वारा प्रदत्त वित्तीय सेवाएं अथवा उत्पाद सामान्यतः वित्तीय समावेशन को मापने के लिए आधार बनते हैं ।

7.16 अक्सर यह पाया गया है कि लोगों की वित्तीय सेवाओं तक पहुँच हो सकती है, परंतु यह संभव है कि वे उनका उपयोग नहीं करना चाहते हों। यह तर्क दिया जाता है कि इस प्रकार के स्वैच्छिक रूप से वर्जित व्यक्तियों को पहुँच की मापों में शामिल किया जाना चाहिए भले ही वे वित्तीय सेवाओं का उपयोग नहीं करते हों। तथापि, 'स्वैच्छिक रूप से वर्जित' व्यक्तियों में भी यह वास्तव में इस कारण से हो सकता है कि ऐसी सेवाएँ वहनीय नहीं हैं, उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं हैं, अथवा संभावित प्रयोगकर्ता आशंकित हैं कि अनुरोध करने पर भी उनके लिए ये सेवाएँ अस्वीकार की जाएँगी । ऋण जैसी सेवाओं से 'अनैच्छिक रूप से वर्जित' लोगों के बीच कुछ उस उच्च ऋण जोखिम का द्योतन करते हैं जिससे ऋणदाता उन्हें विवेकपूर्ण ढंग से सेवा प्रदान करने से कतराते हैं ।

7.17 वित्त के लिए पहुँच की विभिन्न मापें हैं । उदाहरण के लिए, वित्त के लिए पहुँच को कुछ संस्थाओं (जैसे बैंक, बीमा कंपनियों तथा व्यष्टि-वित्त संस्थाओं) में प्रवेश अथवा ऐसी संस्थाओं द्वारा किये जानेवाले कार्यों अथवा उनके द्वारा उपलब्ध कराई जानेवाली सेवाओं (जैसे भुगतान सेवाओं, बचत अथवा ऋण और जमा) तक पहुँच के रूप में मापा जा सकता है । तथापि एक और दृष्टिकोण विशिष्ट वित्तीय उत्पादों, जैसे अन्यों के साथ-साथ डेबिट कार्ड, क्रेडिट कार्ड, जीवन

**चार्ट VII.1 : वित्तीय उत्पाद और सेवाएँ तथा संस्थागत संरचना**

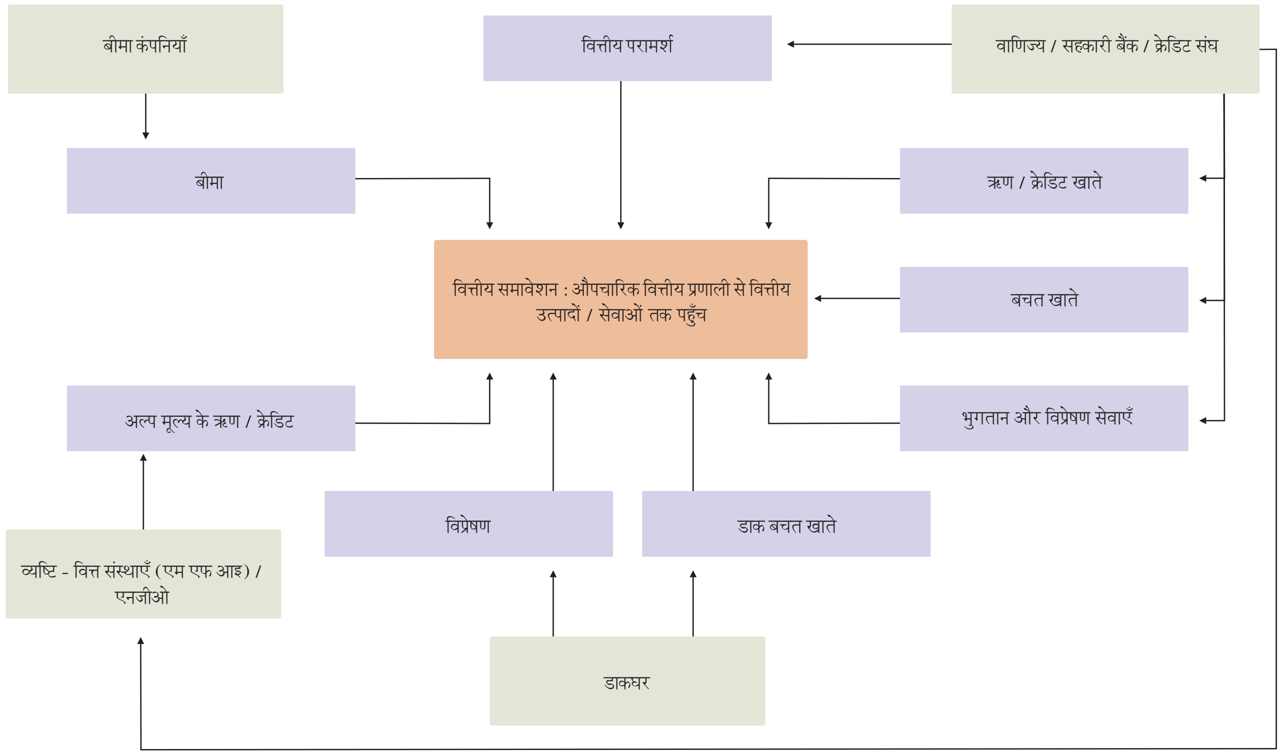


बीमा और गृह बंधक के प्रयोग संबंधी ब्योरे का अवलोकन करना है। फिर भी, ये तो बहुत हद तक देश-विशेष से संबंधित हैं। प्रायः उपयोग किये जानेवाले पहुँच के मुख्य संकेतक सामान्यतः विशेष रूप से वित्तीय संस्थाओं की औपचारिकता की मात्रा से संबंधित संस्थागत विशिष्टताओं पर आधारित हैं (विश्व बैंक, 2008)।

7.18 पहुँच के अंतर्गत अधिक औपचारिक से लेकर कम औपचारिक तक संस्थाओं का एक दायरा सम्मिलित है। समुच्चय (स्पेक्ट्रम) के एक छोर पर बैंक अथवा बैंक जैसी संस्थाएं हैं जिन्हें प्रायः औपचारिक वित्तीय संस्थाओं के रूप में परिभाषित किया जाता है जो जमा, भुगतान और ऋण सेवाओं सहित बहुविध वित्तीय सेवाएं अपने ग्राहकों को उपलब्ध करा सकती हैं। बैंकों और बैंकों जैसी संस्थाओं की विशेषताएँ मोटे तौर पर विभिन्न देशों में तुलनीय हैं। अन्य औपचारिक वित्तीय सेवा प्रदाता वे सभी अन्य वैध संस्थाएँ हैं जो वित्तीय सेवाएँ प्रदान करने के लिए लाइसेंसप्राप्त हैं। वे पंजीकृत हैं तथा सूचना देने की कुछ अपेक्षाओं के अधीन हैं। इस प्रकार, ऋण के मामले में इसके अंतर्गत उपभोक्ता वित्त कंपनियाँ, क्रेडिट कार्ड कंपनियाँ अथवा ऋण संघ सम्मिलित हो सकते हैं। वित्तीय सेवाओं के अनौपचारिक प्रदाता वित्तीय सेवाओं के अन्य संगठित प्रदाता हैं जो वित्तीय मध्यस्थों के रूप में पंजीकृत नहीं हैं तथा किसी पर्यवेक्षण के अधीन नहीं हैं। साहूकार और चेक नकदीकरण करनेवाले केंद्र (आउटलेट), जो विनियमित वित्तीय संस्थाएँ नहीं हैं, इस श्रेणी में आते हैं। वित्तीय सेवा प्रदाताओं की उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर किसी देश में वित्तीय वंचन की सीमा/परिमाण को मापने के लिए मूलभूत संकेतकों के रूप में निम्नलिखित मापों/संकेतकों को सार रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है ।

7.19 मुख्य और हेडलाइन संकेतक एक निश्चित आबादी को उसके द्वारा औपचारिक, अर्ध-औपचारिक और अनौपचारिक वित्तीय सेवाओं के प्रयोग एवं वित्तीय सेवाओं के प्रयोग से वर्जित लोगों के आधार पर पहुँच की निरंतरता के साथ-साथ रखते हैं । वित्त तक पहुँच को चार खंडों में विभाजित किया जा सकता है - (i) जनसंख्या का वह अनुपात जो किसी बैंक अथवा बैंक जैसी संस्था का उपयोग करता है; (ii) जनसंख्या जो बैंकेतर 'अन्य औपचारिक' वित्तीय संस्थाओं से सेवा का उपयोग करती है, परंतु बैंक सेवाओं का उपयोग नहीं करती; (iii) जनसंख्या जो केवल अनौपचारिक वित्तीय सेवा प्रदाताओं से ही सेवाओं का उपयोग करती है; (iv) जनसंख्या का प्रतिशत जो औपचारिक वित्तीय लिखतों के माध्यम से नियमित रूप से लेनदेन करता है; तथा (v) आबादी जो किसी वित्तीय सेवा का उपयोग नहीं करती ।

7.20 मुख्य संकेतकों का दूसरा समूह, प्रदत्त वित्तीय सेवाओं के प्रकारों का अवलोकन अधिक विस्तृत रूप में करता है। यह कार्यात्मक परिदृश्य कम विकसित से अधिक विकसित वित्तीय परिवेश तक

प्राथमिकता के आधार पर सेवा की विशिष्ट आवश्यकताओं और उनके श्रेणीकरण पर फोकस को संभव बनाता है। ये अतिरिक्त मुख्य संकेतक वित्तीय सेवाओं के स्वरूप और गहराई की संवर्धित समझ प्रदान करते हैं। संकेतकों के लिए आधार के रूप में प्रयुक्त किये जाने के लिए अभिनिर्धारित वित्तीय सेवा कार्य हैं : (i) लेनदेन अथवा भुगतान सेवाएँ; (ii) बचत (जमाराशि) और निवेश सेवाएँ; तथा (iii) ऋण अथवा क्रेडिट सेवाएं। बीमा जैसी जोखिम रूपांतरण सेवाओं को तार्किक तौर पर सम्मिलित किया जा सकता है। तथापि, यह संकल्पनात्मक रूप से एक परिष्कृत बचत और ऋण उत्पाद के समान है।

7.21 सारांश के तौर पर वित्तीय समावेशन की सर्वव्यापी रूप में स्वीकृत कोई परिभाषा उपलब्ध नहीं है। चूँकि समावेशन की माप करना कठिन पाया गया है, अतः वित्तीय समावेशन की परिभाषा सामान्यतः वित्तीय प्रणाली से वंचन के रूप में दी गई है। वित्तीय वंचन की कार्यात्मक अथवा परिचालनात्मक परिभाषाएं सामान्यतः विशिष्ट वित्तीय उत्पादों और सेवाओं के स्वामित्व अथवा उन तक पहुँच पर फोकस करती हैं।

7.22 ऐसा कोई एकल व्यापक मानदंड नहीं है जिसका प्रयोग अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय समावेशन की सीमा को निर्दिष्ट करने के लिए किया जा सकता है। विशिष्ट संकेतक जैसे बैंक खातों की संख्या, बैंक शाखाओं की संख्या, जिनका प्रयोग वित्तीय समावेशन के मानदंडों के रूप में सामान्यतः किया जाता है, किसी अर्थव्यवस्था में वित्तीय समावेशन के स्तर के संबंध में केवल आंशिक सूचना ही उपलब्ध करा सकते हैं। एक और दृष्टिकोण विशिष्ट वित्तीय उत्पादों, जैसे डेबिट कार्ड, क्रेडिट कार्ड, जीवन बीमा, और गृह बंधक, के प्रयोगों संबंधी विवरण का अवलोकन करना है, परंतु ये बहुत हद तक देश-विशेष से संबंधित हैं।

## III. वित्तीय वंचन का स्वरूप, कारण और परिणाम

### स्वरूप और कारण

7.23 वंचन का स्वरूप और उसके रूप एवं उसके लिए उत्तरदायी कारक भिन्न-भिन्न हैं तथा इस प्रकार कोई भी एक कारक परिदृश्य को स्पष्ट नहीं कर सकता। वित्तीय सेवाओं के विस्तार में प्रमुख अवरोध प्रायः भौतिक रूप में प्रवेश, उच्च प्रभार और अर्थदंड, उत्पादों के साथ संबद्ध शर्तों के रूप में पहचाने गये हैं जो उन्हें अनुपयुक्त अथवा जटिल बना देती हैं एवं वित्तीय सेवा संस्थाओं के अवबोधनों के रूप में अभिनिर्धारित की गई हैं जिन्हें निम्न आय वाले लोगों के लिए अवांछनीय माना जाता है (सिन्क्लेअर, 2001)। समावेशन के संबंध में ये अवरोध जानबूझकर निर्मित नहीं किये गये हैं; वे तो वित्तीय सेवा उद्योग के संरचनात्मक परिचालन के परिणाम हैं। केम्पसन और अन्य (2000) वित्तीय समावेशन के लिए भौतिक और भौगोलिक अवरोधों तथा एक विस्तृत दायरे में अन्य कारकों का विश्लेषण करते हैं जो कुछ परिस्थितियों के अंतर्गत विभिन्न उत्पादों और व्यक्तियों के लिए वित्तीय वंचन में अंशदान कर सकते हैं। वित्तीय वंचन के अनेक 'आयाम' अथवा 'रूप' अभिनिर्धारित किये गये हैं। वित्तीय वंचन के महत्वपूर्ण आयामों में शामिल हैं : (i) प्रवेश का वंचन - जोखिम प्रबंध की प्रक्रिया के माध्यम से प्रवेश का प्रतिबंध (वित्तीय सेवाओं के प्रदाताओं द्वारा); (ii) शर्तों संबंधी वंचन - वित्तीय उत्पादों के साथ संबद्ध शर्तें, जो आबादी के कुछ खंडों की आवश्यकताओं के लिए उन्हें अनुपयुक्त बना देती हैं ; (iii) मूल्य संबंधी वंचन - केवल कुछ ही लोग ऐसी कीमतों पर वित्तीय उत्पादों तक पहुँच सकते हैं जो वे वहन नहीं कर सकते ; (iv) विपणन संबंधी वंचन - लक्ष्यीकृत विपणन और बिक्री द्वारा कुछ लोग प्रभावी रूप में वर्जित किये जाते हैं; तथा (v) स्व-वंचन - सेवाप्रदाताओं द्वारा प्रवेश अस्वीकार किये जाने की आशंका के कारण लोग किसी वित्तीय उत्पाद के लिए विकल्प न देने का निर्णय करते हैं (केम्पसन और वाइली, 1999; केम्पसन और अन्य, 2000; कॉनोली और हजाज, 2001)।

7.24 किसी व्यक्ति अथवा परिवार द्वारा एक निश्चित समय पर एक विशिष्ट वित्तीय उत्पाद के उपयोग का माप यह प्रकट नहीं कर सकता कि क्या वंचन अल्पकालिक है या किसी दीर्घकालिक प्रक्रिया का परिणाम, अथवा क्या पहुँच घट रही है या सुधर रही है (चान्ट लिंक और सहयोगी, 2004)। इस प्रकार वित्तीय वंचन को केवल कुछ वित्तीय सेवाओं तक पहुँच है या नहीं, इसके बजाय वंचन के प्रति असुरक्षितता के रूप में एक निरंतर प्रक्रिया की तरह देखा गया है । विशेष रूप से, वित्तीय वंचन अनेक उपभोक्ताओं के लिए एक दीर्घकालिक घटना अथवा एक जीवनकाल की प्रक्रिया भी हो सकता है (कॉनोली और हजाज, 2001)। सामाजिक-आर्थिक विशेषताओं से युक्त विशिष्ट समूहों के परिवारों के लिए वह एक परिवार के सदस्य व्यक्ति के जीवनकाल से भी अधिक विस्तृत हो सकता है तथा अंतर-पीढ़ीगत हो सकता है। सामान्यतः यह पहचान की गई है कि आबादी के अपेक्षाकृत अधिक निर्धन वर्गों की वित्तीय सेवाओं तक - चाहे वे औपचारिक हों या अनौपचारिक-पहुँच नहीं होती । तथापि, अनेक देशों में कई गैर-निर्धन व्यक्ति, व्यष्टि, छोटे और मझौले उद्यमी भी वित्तीय सेवाओं तक पहुँचने में कठिनाई अनुभव करते हैं। सर्वाधिक सुस्पष्ट आयाम यह है कि आबादी के कई निम्न आय वाले खंडों की पहुँच अत्यंत मूलभूत वित्तीय सेवाओं तक भी नहीं है। जिन लोगों के लिए वित्त तक पहुँच है उनमें से भी अधिकांश लोगों को उत्पादों और सेवाओं की गुणवत्ता और मात्रा की दृष्टि से कम सेवाएँ प्राप्त हैं एवं निम्न आय वाले परिवारों का एक बड़ा भाग अधारणीय, सब्सिडी पर आधारित और खराब कार्यनिष्पादन वाली संस्थाओं पर निर्भर है (चार्ट VII.2)।

7.25 वंचन उनकी आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त उत्पादों की अनुपलब्धता, कठोर प्रलेखन और समर्थक आवश्यकताओं एवं वित्तीय सेवाओं में बढ़ी हुई प्रतियोगिता जैसे विभिन्न संरचनात्मक कारकों का भी परिणाम हो सकता है। सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों पर भी विशेष रूप से बल दिया गया है जो वित्तीय सेवाओं तक किसी व्यक्ति की पहुँच

**चार्ट VII.2 : पहुँच की समस्याओं के आयाम**

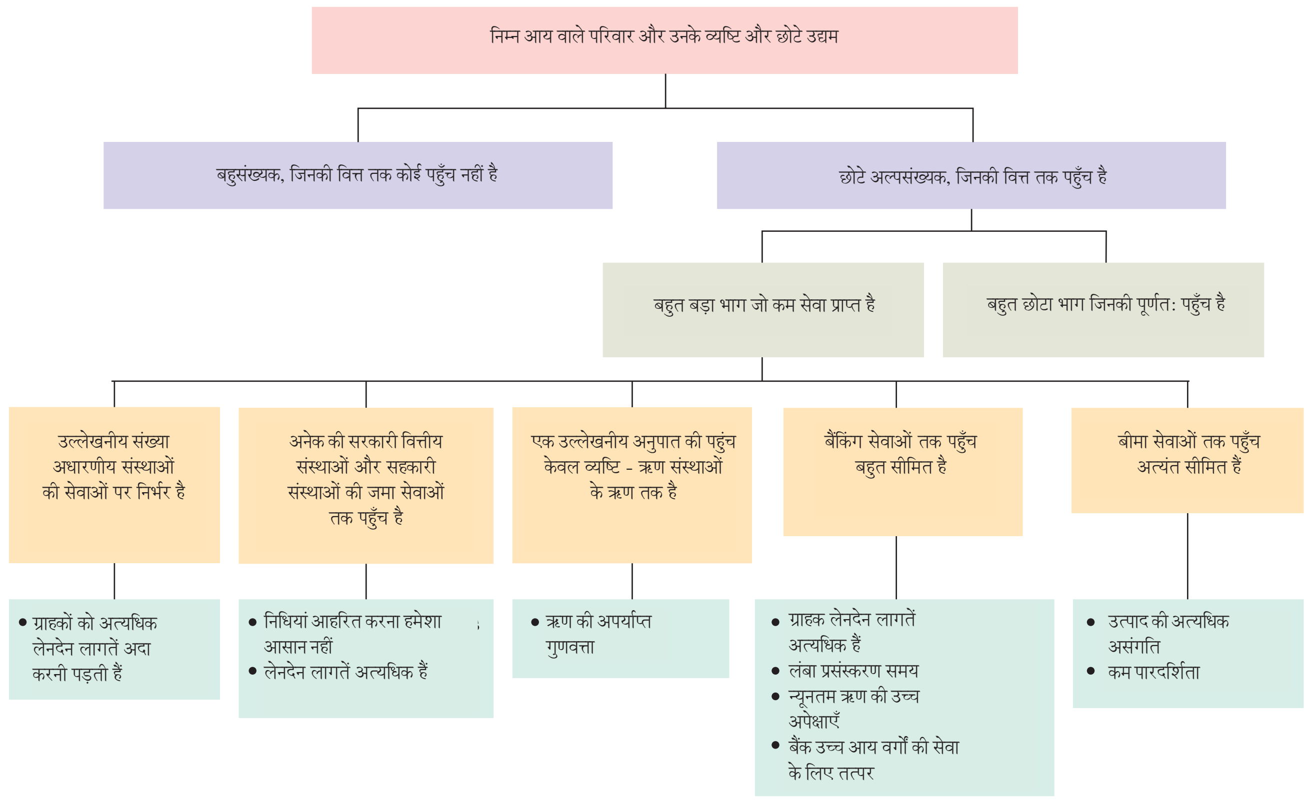


**स्रोत :** एशियाई विकास बैंक, 2007

के लिए महत्वपूर्ण हैं (संयुक्त राष्ट्र, 2006बी)। परिवारों का बहुत बड़ा भाग, जो विशेष रूप से कम आय वाला है तथा ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में रहता है, वर्तमान में कई देशों में औपचारिक वित्तीय प्रणाली की परिधि से बाहर है। वित्तीय समावेशन/वंचन संबंधी साहित्य ने अनेक ऐसे कारकों का अभिनिर्धारण किया है जो वित्तीय सेवाओं तक पहुँच को विस्तृत करने के प्रयासों को प्रभावित करते हैं (बॉक्स VII.1)।

7.26 आपूर्ति की ओर स्थित कारकों के अलावा माँग की ओर स्थित कारकों का भी वित्तीय समावेशन की सीमा के साथ महत्वपूर्ण संबंध है । गरीबी की रेखा से नीचे रहनेवाली आबादी का एक उच्चतर अंश वित्तीय सेवाओं के लिए निम्नतर माँग का कारण बनता है क्योंकि निर्धन लोगों के पास बचत बैंकों में जमाराशि के रूप में रखने के लिए कोई बचत नहीं होती । इस प्रकार, निम्न आय वित्तीय सेवाओं, विशेष रूप से बचत के उत्पादों के लिए कम माँग उत्पन्न करती है। इसी तरह विकास के निम्न स्तरों पर निवेश की गतिविधि निम्न हो सकती है तथा इस कारण से बैंकों और अन्य औपचारिक वित्तीय संस्थाओं से ऋण के लिए कम माँग पैदा हो सकती है। तथापि, जैसे - जैसे गरीबी के स्तर नीचे आते हैं तथा परिवार उच्चतर आय के वर्गों में पहुँचते हैं, बचत करने की उनकी प्रवृत्ति बढ़ जाती है जो फिर दोनों बचत और निवेश के प्रयोजनों हेतु वित्तीय सेवाओं के लिए उच्चतर माँग को प्रेरित करती है ।

7.27 वित्तीय समावेशन समाज के विभिन्न खंडों की विशिष्ट ऋण आवश्यकताओं से भी प्रभावित होता है । जनता द्वारा ऋण की माँग अनेक गतिविधियों के लिए उत्पन्न होती है, जैसे आवास, व्यष्टि-उद्यम, कृषि कार्य और उपभोग की आवश्यकताएं। ऋण के औपचारिक स्रोतों तक पहुँचने में कठिनाइयों के कारण निर्धन व्यक्ति तथा छोटे और व्यष्टि-उद्यम सामान्यतः वृद्धि के अवसरों का उपयोग करने के लिए आवास, स्वास्थ्य और शिक्षा एवं उद्यमवृत्ति की गतिविधियों में निवेश करने के लिए अपनी व्यक्तिगत बचत अथवा आंतरिक संसाधनों पर निर्भर रहते हैं (विश्व बैंक, 2008)।

7.28 भारत में, वित्तीय रूप से वंचित वर्गों में अधिकांशतः सीमांत कृषक, भूमिहीन श्रमिक, मौखिक पट्टेदार, स्व-नियोजित व्यक्ति और असंगठित क्षेत्र के उद्यम, शहरी झुग्गी निवासी, प्रवासी, मानवजातीय (एथ्निक) अल्पसंख्यक और सामाजिक तौर पर बहिष्कृत समूह, वरिष्ठ नागरिक और महिलाएँ शामिल हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में संस्थागत ऋण के अपेक्षाकृत कम विस्तार के कुछ महत्वपूर्ण कारण हैं - जोखिम अवबोधन, उसके निर्धारण और प्रबंध की लागत, ग्रामीण बुनियादी संरचना का अभाव, तथा आधे मिलियन से अधिक गाँवों के साथ, जिनमें से कुछ छुटपुट आबादी वाले हैं, ग्रामीण क्षेत्रों की विशाल भौगोलिक व्याप्ति (मोहन, 2006)।

### बॉक्स VII.1
### वित्तीय सेवाओं तक पहुँच को प्रभावित करनेवाले कारक

वित्तीय सेवाओं तक पहुँच को प्रभावित करनेवाले कई कारकों की पहचान अनेक देशों में की गई है । ये हैं :

- ***लिंग संबंधी मुद्दे :*** ऋण तक पहुँच प्रायः महिलाओं के लिए सीमित है जिनके पास भूमि और संपत्ति जैसी आस्तियों के लिए स्वत्वाधिकार नहीं होता या धारण नहीं कर सकतीं अथवा उन्हें उधार लेने के लिए अनिवार्यतः पुरुषों की गारंटी की माँग करनी पड़ती है।
- ***आयु कारक :*** वित्तीय सेवा प्रदाता सामान्यतः आर्थिक दृष्टि से सक्रिय जनता के मध्यम वर्ग को लक्ष्यीकृत करते हैं तथा अकसर अधिक आयुवाले अथवा युवा वर्ग के संभावित ग्राहकों के लिए उपयुक्त उत्पादों के अभिकल्प को नजरअंदाज करते हैं।
- ***कानूनी पहचान :*** पहचान पत्रों, जन्मतिथि प्रमाणपत्रों अथवा लिखित अभिलेखों जैसे कानूनी पहचान के अभाव के कारण वित्तीय सेवाओं तक पहुँच से महिलाओं, मानवजातीय अल्पसंख्यकों, आर्थिक और राजनैतिक शरणार्थियों और आप्रवासी श्रमिकों को बहिष्कृत किया जाता है ।
- ***सीमित साक्षरता :*** सीमित साक्षरता, विशेष रूप से वित्तीय साक्षरता अर्थात् आधारभूत गणित, व्यवसाय वित्त कौशल एवं समझ के अभाव से अकसर वित्तीय सेवाओं के लिए माँग में बाधा पहुँचती है ।
- ***निवास का स्थान :*** यद्यपि प्रभावी दूरी परिवहन की बुनियादी संरचना के उतनी ही निकट है जितनी कि भौतिक दूरी, तथापि जनसंख्या की सघनता, ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्र, आबादी की गतिशीलता (अर्थात् किसी नियत और औपचारिक पते से रहित अत्यधिक चलंत लोग), किसी स्थान पर सरकार-विरोधी वातावरण (इन्सर्जेन्सी) आदि तत्व भी वित्तीय सेवाओं तक पहुँच को प्रभावित करते हैं ।
- ***मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक अवरोध :*** कई निम्न आय वर्गों की यह भावना कि उनकी उन्नति की ओर ध्यान देने में बैंकों को रुचि नहीं है, ने उन्हें स्व-वंचन के लिए प्रेरित किया है । तथापि, कुछ देशों में सांस्कृतिक और धार्मिक अवरोध भी देखे गये हैं ।
- ***सामाजिक सुरक्षा भुगतान :*** उन देशों में जहाँ सामाजिक सुरक्षा भुगतान प्रणाली को बैंकिंग प्रणाली के साथ संबद्ध नहीं किया गया है, बैंकिंग वंचन अत्यधिक रहा है।
- ***बैंक प्रभार :*** अधिकांश देशों में जब तक किये गये लेनदेनों की लागत पूरी करने के लिए खाते में पर्याप्त निधियाँ हैं, तब तक लेनदेन निःशुल्क हैं । फिर भी, अन्य प्रभारों का एक दायरा है जिसका निम्न आय वाले लोगों पर अनुपातहीन प्रभाव है।
- ***नियम और शर्तें :*** उत्पादों के साथ संबद्ध नियम और शर्तें जैसे न्यूनतम शेष राशि की अपेक्षाएँ और खातों के उपयोग से संबंधित शर्तें अकसर ऐसे उत्पादों/सेवाओं का उपयोग करने से लोगों को विमुख कर देती हैं ।
- ***आय का स्तर :*** वित्तीय सेवाओं तक पहुँचने के लिए लोगों की वित्तीय स्थिति सदैव महत्वपूर्ण है। अत्यधिक निर्धन व्यक्ति वित्तीय सेवाओं तक पहुँचने में कठिनाई महसूस करते हैं भले ही उक्त सेवाएँ उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप बनाई गई हों। सामूहिक उधार कार्यक्रमों में संभावित सदस्यों के बीच अवबोधन के अवरोध और आय संबंधी भेदभाव समुदाय के गरीब सदस्यों को बहिष्कृत कर सकते हैं।
- ***व्यवसाय का प्रकार :*** कई बैंकों ने छोटे उधारकर्ताओं और असंगठित उद्यमों के ऋण आवेदनपत्रों का मूल्यांकन करने की क्षमता विकसित नहीं की है और इस कारण से वे ऋण के लिए इस प्रकार के अनुरोधों को अस्वीकार करते हैं।
- ***उत्पाद की आकर्षणीयता :*** वित्तीय सेवाएँ/उत्पाद (बचत खाते, ऋण उत्पाद, भुगतान सेवाएँ और बीमा) तथा उनकी उपलब्धता का विपणन कैसे किया जाता है, ये दोनों ही बातें वित्तीय समावेशन में महत्वपूर्ण हैं ।

**संदर्भ :**

विश्व बैंक, 2008; एशियाई विकास बैंक, 2007; तथा केम्पसन और अन्य, 2004 ।

## वित्तीय वंचन की लागतें और परिणाम

7.29 मोटे तौर पर, वित्तीय वंचन की लागत के मुद्दे को दो दृष्टिकोणों से समझा जा सकता है जो परस्पर संबद्ध हैं। पहला, उक्त वंचन की लागत व्यक्तियों/संस्थाओं के लिए वित्त या ऋण तक पहुँच के अभाव में वृद्धि के लिए अवसरों की हानि के रूप में हो सकती है। दूसरा, सामाजिक अथवा राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में वंचन के कारण उत्पादन अथवा कल्याण की कुल हानि हो सकती है तथा देश अपनी संवृद्धि की संभावना को प्राप्त नहीं कर सकता। वित्तीय वंचन के अधिक गोचर परिणामों में शामिल हैं - नकदी प्रवाह और भुगतानों के प्रबंध में लागत और सुरक्षा के मुद्दे, अल्पावधि ऋण तक पहुँच के अभाव के परिणामस्वरूप समझौते से युक्त जीवन-स्तर, अनौपचारिक ऋण के प्रयोग से संबद्ध उच्चतर लागतें, अनैतिक, लुंठक और अविनियमित प्रदाताओं के प्रति बढ़ा हुआ एक्सपोज़र, अबीमाकृत जोखिमों के प्रति असुरक्षितता, एवं कल्याण पर दीर्घकालिक अथवा विस्तारित निर्भरता जो बचत के विपरीत है (चान्ट लिंक और सहयोगी, 2004)।

7.30 बैंक खाते, ऋण और बीमा के प्रति पहुँच को अब व्यापक तौर पर व्यक्तिगत वित्तीय प्रबंध के लिए और आधुनिक समाजों में लेनदेन करने के लिए भी अनिवार्य सहायक व्यवस्थाओं के रूप में माना जाता है (स्पीक और ग्राहम, 1999)। राजकोष समिति, यूके (2006) के अनुसार वित्तीय वंचन व्यक्तियों, परिवारों और समग्र रूप में समाज पर उल्लेखनीय लागतें लाद देता है। इनमें शामिल हैं, (i) रोजगार के लिए अवरोध क्योंकि मजदूरी का भुगतान करने के लिए नियोक्ताओं को बैंक खाते की आवश्यकता हो सकती है ; (ii) बचत करने और उधार लेने के लिए अवसरों तक पहुँचना कठिन हो सकता है; (iii) आस्तियों का स्वामित्व रखना या उन्हें प्राप्त करना कठिन हो सकता है; (iv) आघातों को सहने के लिए आय को समकारी बनाने में कठिनाई; तथा (v) समाज की मुख्यधारा से बहिष्कार ।

7.31 व्यक्तियों के लिए लागत के रूप में वित्तीय वंचन आजीविका के अर्जन एवं दैनंदिन जीवन-यापन से संबद्ध मूलभूत/न्यूनतम लेनदेनों में समग्र रूप में उपस्थित बाधाओं के साथ ही, धन अंतरण और महँगे

ऋण जैसे मूलभूत वित्तीय लेनदेनों के लिए उच्चतर प्रभारों को प्रेरित करता है। वह ऐसे बेहतर उत्पादों और सेवाओं तक पहुँच के अस्वीकरण को भी प्रेरित कर सकता है जिनके लिए एक बैंक खाते की आवश्यकता होती है। वह व्यक्ति को धन को धारण करने और संचित रखने में अंतर्निहित जोखिम के प्रति असुरक्षित कर देता है। केवल नकदी आधार पर ही परिचालन से हानि अथवा चोरी के प्रति असुरक्षितता बढ़ जाती है । व्यक्ति/परिवार गरीबी और वर्जन के एक शोषण-चक्र में फँस जाते हैं और साहूकारों से अधिक लागत पर ऋण लेने के लिए विवश होते हैं जिसके परिणामस्वरूप अधिकाधिक वित्तीय दबाव और अनियंत्रणीय ऋण के शिकार हो जाते हैं। समाज और राष्ट्र के अधिक व्यापक स्तर पर वित्तीय वंचन सामाजिक बहिष्कार, गरीबी एवं अन्य सभी संबद्ध आर्थिक और सामाजिक समस्याओं को प्रेरित करता है। इस प्रकार, वित्तीय वंचन प्रायः गरीबी का एक लक्षण एवं एक कारण है। वित्तीय वंचन सारे समाज में समान रूप से वितरित नहीं होता; वह सर्वाधिक वंचित समूहों और समुदायों के बीच केंद्रीकृत होता है और इसके परिणामस्वरूप सामाजिक बहिष्कार की एक काफी अधिक व्यापक समस्या में अंशदान करता है।

7.32 ग्रामीण परिवारों द्वारा ऋण की माँग का एक उल्लेखनीय अंश फसल के खराब होने, बीमारी अथवा मृत्यु, तथा स्वास्थ्य-रक्षा के वित्तीय भार को आसान करने के लिए उत्पन्न होता है। व्यष्टि-उद्यमों के मामले में ऋण की आवश्यकता गतिविधियों के एक उचित और अर्थक्षम मान को प्राप्त करने के लिए हो सकती है। ग्रामीण, अर्धशहरी और शहरी क्षेत्रों, विशेष रूप से असंगठित और अनौपचारिक क्षेत्रों को शामिल करनेवाली उदीयमान उद्यम-वृत्ति ऋण की बड़ी संभावित माँग को उत्पन्न कर सकती है। भारत में ऋण के लिए माँग संबंधी साक्ष्य यह संकेत करता है कि चिकित्सा-संबंधी और वित्तीय आपात स्थितियाँ परिवारों के उधार के लिए प्रमुख कारण हैं । निम्नतम आय वाले चतुर्थक (क्वार्टाइल) के लिए चिकित्सा संबंधी आपात स्थितियाँ विशेष रूप से अत्यधिक हैं (आइआइएमएस, 2007)।[2] इस प्रकार, औपचारिक स्रोतों से वित्त प्राप्त करने में कठिनाई के बड़े सामाजिक निहितार्थ हैं।

7.33 वित्तीय वंचन की एक और लागत बैंकों के लिए विशेष रूप से मध्यावधि में व्यावसायिक अवसर की हानि है। बैंक प्रायः अपनी सेवाएँ निम्नतर आय वर्गों को प्रदान करने से बचते हैं जोकि इन सेवाओं का विस्तार करने में प्रारंभिक लागत के कारण है जो कभी-कभी ऐसे परिचालनों से प्राप्त राजस्व से अधिक हो जाती है। तथापि, बैंकों के व्यवसाय संबंधी ये सरोकार सार्थक थे जब प्रौद्योगिकीय विकास नवजात स्तर पर था तथा वित्तीय सेवाओं की व्याप्ति का विस्तार करने के लिए बहुत प्रारंभिक निवेश की आवश्यकता थी। प्रौद्योगिकी में हुई प्रगति ने अपेक्षित प्रारंभिक निवेश को उल्लेखनीय ढंग से कम कर दिया है। अपेक्षा यह है कि उपयुक्त प्रौद्योगिकी का पता लगाया जाए जो विचाराधीन क्षेत्र की सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के लिए उपयुक्त हो। इसके अलावा, वित्तीय सेवाओं की उपलब्धता और अन्यथा वंचित आबादी के समूहों द्वारा उनके उपयोग से उनकी आय के स्तरों और बचत में वृद्धि होगी। इससे फिर बचत जमाराशियों एवं ऋण की माँग में वृद्धि की संभावना होगी जिसके अंतर्गत मध्यावधि में बैंकों के लिए लाभप्रद व्यवसाय का निहितार्थ होगा।

7.34 दो अन्य कारकों को प्रायः वित्तीय वंचन के परिणामों के रूप में बताया जाता है। पहला, यह दैनंदिन नकदी प्रवाह के प्रबंध को जटिल बना देता है - वित्तीय रूप से वंचित परिवार, तथा व्यष्टि और छोटे उद्यमों द्वारा लेनदेन पूर्णतः नकदी तौर पर किया जाता है एवं अनियमित नकदी प्रवाहों से सुप्रभाव्य होते हैं। दूसरा, असंगठित क्षेत्र के लोगों के लिए बैंक खातों और अन्य बचत के अवसरों तक पहुँच के अभाव में वित्तीय आयोजना और सुरक्षा की कमी उनकी वृद्धावस्था के लिए व्यवस्था करने में उनके विकल्पों को सीमित कर देती है। समष्टि-आर्थिक दृष्टिकोण से औपचारिक बचत के बिना रहना दो प्रकार से समस्यामूलक हो सकता है। पहला, जो लोग अनौपचारिक आय द्वारा बचत करते हैं शायद ही वे उस ब्याज-दर और कर-लाभों से लाभान्वित होते हैं जिन्हें बचत की औपचारिक पद्धतियों का प्रयोग करनेवाले लोग प्राप्त करते हैं। दूसरा, अनौपचारिक बचत के माध्यम औपचारिक बचत सुविधाओं की तुलना में बहुत कम सुरक्षित हैं। कम से कम जो इन्हें वहन कर सकते हैं, वे अधिकतम जोखिम उठाते हैं। परिणामी बचत और बचत के मार्गों के अभाव का अर्थ है -साहूकारों जैसे अनौपचारिक ऋणदाताओं का सहारा लेना। इससे फिर दो प्रतिकूल परिणाम निकल सकते हैं- (क) अनौपचारिक ऋणदाताओं द्वारा लगाई गई उच्चतर ब्याज-दरों के प्रति एक्सपोज़र; और (ख) ऋणों का शोधन या उनकी चुकौती करने में ग्राहकों की असमर्थता । चूँकि अनौपचारिक ऋणदाताओं से प्राप्त ऋण प्रायः उधारकर्ता की संपत्ति की जमानत द्वारा सुरक्षित होते हैं, अतः इससे स्पष्ट रूप से दो अलग-अलग बाजारों के बीच अंतरसंबद्धता की समस्या उत्पन्न होती है । इस विशिष्ट संदर्भ में आकलन करने पर वित्तीय वंचन मुख्य रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित निम्न आय वाले परिवारों के लिए एक गंभीर चिंता का विषय है (मोहन, 2006)।

7.35 सारांश के तौर पर वंचन का स्वरूप और उसके रूप एवं उसके लिए जिम्मेदार कारक भिन्न-भिन्न हैं और इस प्रकार कोई भी एक कारक इस परिदृश्य को स्पष्ट नहीं कर सकता। वित्तीय सेवाओं के विस्तार में प्रमुख अवरोधों को प्रायः शारीरिक रूप से पहुँच, अत्यधिक प्रभारों और अर्थदंडों, उत्पादों से संबद्ध उन स्थितियों जो उन्हें अनुचित और जटिल बना देती हैं एवं वित्तीय सेवा संस्थाओं के अवबोधनों जो निम्न आय वाले लोगों के लिए अनुचित माने जाते हैं, के रूप में अभिनिर्धारित किया जाता है। सामाजिक-सांस्कृतिक तत्वों पर भी बल दिया जाता रहा है जो किसी व्यक्ति के लिए वित्तीय सेवा तक पहुँच के लिए महत्वपूर्ण हैं। वंचन का सर्वाधिक सुस्पष्ट आयाम यह है कि निम्न

2 इन्वेस्ट इंडिया मार्केट सोल्यूशन्स (आइआइएमएस) द्वारा किया गया इन्वेस्ट इंडिया आय और बचत सर्वेक्षण ।

आय वाली जनसंख्या की बहुतायत के लिए अत्यंत मूलभूत वित्तीय सेवाओं तक पहुँच नहीं है । उन लोगों के अंतर्गत भी जिन्हें वित्त तक पहुँच है, अधिकांश के लिए उत्पादों और सेवाओं की गुणवत्ता और मात्रा के तौर पर कम सेवाएँ प्राप्त हैं । वित्तीय वंचन के महत्वपूर्ण आयामों में शामिल हैं, प्रवेश का वंचन, शर्तों (वित्तीय उत्पादों से संबद्ध शर्तों) का वंचन, कीमत का वंचन, तथा स्व-वंचन जो सेवाप्रदाताओं द्वारा प्रवेश से अस्वीकरण की आशंका के कारण है । वित्तीय वंचन की प्रक्रिया खास तौर से ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष रूप से वित्तीय उत्पादों तक सीमित पहुँच से युक्त समुदायों के लिए स्व-सुदृढ़ीकरणकारी बन जाती है तथा प्रायः सामाजिक वंचन में एक महत्वपूर्ण कारक हो सकती है । आपूर्ति संबंधी उपर्युक्त कारकों के अलावा, माँग संबंधी कारक भी वित्तीय समावेशन की सीमा को उल्लेखनीय रूप में प्रभावित कर सकते हैं । उदाहरण के लिए निम्न स्तरीय आय और इस कारण से कम बचत के परिणामस्वरूप जमाराशियाँ निम्नतर हो जाती हैं। इसी प्रकार निम्न स्तर की आय पर चुकौती की कम क्षमता और समर्थक जमानत (कॉलेटरल) प्रस्तुत करने में असमर्थता के कारण उधार लेने की क्षमता प्रभावित होती है । भारतीय संदर्भ में माँग और आपूर्ति दोनों कारकों का वित्तीय/बैंकिंग सेवाओं के उपयोग पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है।

7.36 लागत के मुद्दे पर दो दृष्टिकोणों से विचार किया गया है, जो परस्पर संबद्ध हैं। पहला, वंचन वित्त या ऋण तक पहुँच के अभाव में वृद्धि करने के अवसरों की हानि के रूप में व्यक्तियों / संस्थाओं के लिए खर्चीला हो सकता है। दूसरा, सामाजिक अथवा राष्ट्रीय परिदृश्य से, वंचन के कारण उत्पादन अथवा कल्याण की समग्र हानि हो सकती है तथा संभव है कि देश अपनी संवृद्धि की संभावना को प्राप्त न कर सके। विश्व भर में वित्तीय वंचन की अंतर्निहित और सुस्पष्ट लागत को स्वीकार करते हुए इस संबंध में कार्रवाई करने के लिए अनेक देशों ने उपाय शुरू किये हैं ।

## IV. भारत में वित्तीय समावेशन के लिए पहलें

7.37 जैसी कि अध्याय III में चर्चा की गई है, भारत में बैंकिंग के विकास का एक लंबा इतिहास है। स्वतंत्रता के बाद सरकार और रिज़र्व बैंक का प्रमुख फोकस एक सुदृढ़ बैंकिंग प्रणाली को विकसित करने पर रहा जो संसाधन/जमाराशियाँ जुटाने और उन्हें उत्पादक क्षेत्रों में उपलब्ध कराने के द्वारा सुनियोजित आर्थिक विकास को समर्थन प्रदान कर सके। तदनुसार, परिवर्तन के एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में बैंकिंग प्रणाली का उपयोग करने की सरकार की इच्छा स्वतंत्रता के बाद बनाई गई अधिकांश नीतियों के केंद्रबिंदु में रही। आयोजना की रणनीति ने आर्थिक वृद्धि के लाभों का वितरण एक लोकतांत्रिक तरीके से करने के साथ ही देश के समग्र विकास में व्यापक तौर पर जनसाधारण को ऋण और वित्तीय सेवाओं की उपलब्धता की महत्वपूर्ण भूमिका को पहचाना। इस भूमिका को स्वीकार करते हुए, यह सुनिश्चित करने के लिए कि समाज के विभिन्न खंडों की वित्तीय सेवाओं की आवश्यकताएं संतोषजनक ढंग से पूरी की जाएँ, प्राधिकारियों ने नीतिगत ढाँचे को समय-समय पर संशोधित किया।

7.38 आबादी के व्यापकतर वर्गों को ऋण और वित्तीय सेवाओं का विस्तार करने के लिए वर्षों से वित्तीय संस्थाओं का एक व्यापक नेटवर्क स्थापित किया गया है। संगठित वित्तीय प्रणाली; जिसमें वाणिज्य बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (आरआरबी), शहरी सहकारी बैंक (यूसीबी), प्राथमिक कृषि ऋण समितियाँ (पीएसीएस) और डाक घर शामिल हैं; जनता की वित्तीय सेवाओं की आवश्यकताएं पूरी करती है। साथ ही, एमएफआइ, स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी) भी अधिक निर्धन वर्गों की वित्तीय सेवा आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। इसके अलावा, हाल के वर्षों में संस्थागत ढाँचे के विकास ने व्यावसायिक सहायकों/प्रतिनिधियों के रूप में नागरिक सामाजिक संगठनों (सीएसओ), गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ), डाक घरों, किसान क्लबों और पंचायतों जैसे बहुविध माध्यमों का उपयोग करते हुए ऋण-वितरण से संबद्ध वित्तीय सेवाओं का विस्तार करने के नये मॉडलों पर ध्यान केंद्रित किया है । वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए विशिष्ट वित्तीय लिखतें/ उत्पाद भी विकसित किये गये हैं ।

### समग्र दृष्टिकोण

7.39 भारतीय संदर्भ में वित्तीय समावेशन से, वंचन किये जाने की प्रवृत्ति वाले लोगों को औपचारिक वित्तीय प्रणाली द्वारा वहनीय वित्तीय सेवाओं अर्थात् भुगतान और विप्रेषण सुविधाओं, बचत, ऋणों और बीमा सेवाओं तक पहुँच की व्यवस्था अभिप्रेत है। पहुँच या प्रवेश के साथ ही, जनता के अल्पसुविधाप्राप्त वर्गों के लिए बचत, ऋण और विप्रेषण जैसी वित्तीय सेवाओं की वहनीयता (कम लागत) पर भी जोर दिया गया है। यद्यपि भारत में तब 'वित्तीय समावेशन' शब्द प्रचलन में नहीं था, तथापि 1960 के दशक के उत्तरार्ध से सरकार और रिज़र्व बैंक दोनों समाज के अल्पसुविधाप्राप्त और कमजोर वर्गों को बैंकिंग सुविधाओं की अनुपलब्धता के बारे में चिंतित रहे हैं । तदनुसार, कुछ समय से अनेक पहलें की गई हैं जैसे बैंकों का राष्ट्रीयकरण, प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के लक्ष्यों का निर्धारण, रियायती ब्याज-दरों पर कमजोर वर्गों को ऋण तथा अग्रणी बैंक योजना का प्रारंभ । वंचित लोगों तक बैंकिंग सुविधाओं के विस्तार और ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण की उपलब्धता में वृद्धि करने के लिए समय-समय पर ये पहलें की गई थीं । तथापि, 1970 और 1980 के दशकों में भारत में अनुसरण किया गया वित्तीय समावेशन के प्रति व्यापक दृष्टिकोण विशिष्ट क्षेत्रों/खंडों की ऋण आवश्यकताओं की ओर अधिक उन्मुख था तथा व्यक्तिगत/परिवार के स्तर पर समावेशन के संबंध में अपेक्षाकृत कम बल दिया गया था । भारतीय वित्तीय प्रणाली ने आवश्यक रूप से एक मिश्रित अर्थव्यवस्था के ढाँचे में सुनियोजित विकास की आवश्यकताएं पूरी कीं, जहाँ आर्थिक कार्यकलाप में सरकारी क्षेत्र की प्रधान भूमिका रही । 1990 के दशक के दौरान और 2000 के दशक के प्रारंभिक वर्षों तक बैंकिंग नीति का फोकस एक मजबूत और कुशल बैंकिंग प्रणाली का निर्माण करने पर अधिक था । तथापि, एक बार बैंकिंग प्रणाली की वित्तीय स्थिति

द्वारा पूर्व स्थिति प्राप्त करने पर वित्तीय समावेशन के संवर्धन पर पुनः ध्यान केंद्रित किया गया ।

7.40 हाल का दृष्टिकोण व्यक्तिगत और परिवार के स्तर पर वित्तीय समावेशन पर ध्यान केंद्रित करता है (बॉक्स VII.2)। वित्तीय समावेशन के संबंध में हाल के फोकस में महत्वपूर्ण अंतर बाजार-उन्मुख दृष्टिकोण का स्वीकरण है जो प्रक्रिया की दीर्घकालिक धारणीयता के लिए बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं के व्यावसायिक चिंतन के महत्व को स्वीकार करता है । रिज़र्व बैंक के वर्ष 2005-06 के वार्षिक नीति वक्तव्य में यह कहा गया है कि यद्यपि संवर्धित कौशल और प्रणालीगत आघात - सहनीयता दोनों को प्रेरित करनेवाला कारक बैंकों का विस्तार, अधिकाधिक प्रतियोगिता और स्वामित्व का विविधीकरण रहा है, तथापि ऐसी बैंकिंग प्रथाओं के संबंध में वैध चिंताएँ रही हैं जो आबादी के बड़े वर्गों, विशेष रूप से पेंशनभोगियों, स्व-नियोजित व्यक्तियों और असंगठित क्षेत्र में नियोजित व्यक्तियों का वंचन करने में प्रवृत्त हैं । उक्त वक्तव्य में आगे और कहा गया कि जबकि व्यावसायिक चिंतन महत्वपूर्ण है, बैंकों को अनेक विशेषाधिकार, विशेष रूप से अत्यंत लीवरेज्ड आधार पर जनता की जमाराशियों की माँग करने के संबंध में, प्रदत्त हैं और इसलिए उन्हें बाध्य होना चाहिए कि वे एक न्यायसंगत आधार पर आबादी के सभी खंडों को बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराएँ ।

7.41 हाल के वर्षों में भारत में वित्तीय समावेशन के लिए व्यापक कार्यनीति के अंतर्गत निम्नलिखित तत्व हैं : (i) बैंक-सुविधारहित और पिछड़े क्षेत्रों में प्रवेश को प्रोत्साहित करना तथा एनजीओ, एमएफआइ, सीएसओ और व्यावसायिक प्रतिनिधियों (बीसी) जैसे एजेंटों और मध्यवर्तियों को प्रोत्साहित करना; (ii) राज्य-स्तरीय बैंकर समिति (एसएलबीसी) और जिला परामर्शदात्री समिति (डीसीसी) जैसी मौजूदा व्यवस्थाओं का उपयोग करते हुए एक विकेंद्रीकृत कार्यनीति पर ध्यान केंद्रित करना तथा सहकारी संस्थाओं और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों जैसी स्थानीय संस्थाओं को मजबूत करना; (iii) वित्तीय समावेशन में और वृद्धि करने के लिए प्रौद्योगिकी का प्रयोग करना; (iv) बैंकों को एक मूलभूत बैंकिंग 'नो-फ्रिल' खाता खोलने के लिए सूचित करना ; (vi) वित्तीय साक्षरता और ऋण संबंधी परामर्श पर बल देना; तथा (vii) औपचारिक और अनौपचारिक खंडों के बीच सहक्रियाएँ निर्मित करना (थोरात, 2008)।

7.42 लिए गए विभिन्न पहलों को मोटे तौर पर तीन चरणों में विभाजित किया जा सकता है । 1960 के दशक के उत्तरार्ध से लेकर 1980 के दशक तक के पहले चरण तक फोकस अर्थव्यवस्था के उपेक्षित क्षेत्रों को ऋण उपलब्ध कराने पर था । समाज के कमजोर वर्गों पर भी विशेष जोर दिया गया था। 1990 के दशक के शुरुआती वर्षों से लेकर मार्च 2005 तक के दूसरे चरण में फोकस मुख्य रूप से वित्तीय क्षेत्र सुधारों के भाग के रूप में वित्तीय संस्थाओं को मजबूत करने पर था । इस चरण में वित्तीय समावेशन मुख्य रूप से 1990 के दशक के प्रारंभ में स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी)-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम तथा किसानों को ऋण उपलब्ध कराने के लिए किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी) प्रारंभ करने के द्वारा प्रोत्साहित था । तीसरे चरण में जो अप्रैल 2005 में शुरू हुआ, 'वित्तीय समावेशन' को स्पष्ट रूप से एक प्रमुख नीतिगत लक्ष्य बनाया गया तथा नो फ्रिल्स खातों के माध्यम से बचत जमाराशियों की सुरक्षित सुविधा उपलब्ध कराने पर बल दिया गया।

### 1990 तक प्रगति

7.43 1990 से पहले धारणीय और न्यायसंगत वृद्धि के लिए बैंकिंग प्रणाली के उपयोग में वृद्धि के लिए विभिन्न पहलें की गई थीं । इनमें

### बॉक्स VII.2
### भारत में वित्तीय समावेशन - प्रमुख तत्व

(i) वित्तीय समावेशन वंचित और निम्न आय वाले समूहों के सुविस्तृत वर्गों को एक वहनीय लागत पर बैंकिंग सेवाओं का वितरण है । सार्वजनिक वस्तुओं और सेवाओं तक अबाधित पहुँच एक खुले और कुशल समाज की अनिवार्य शर्त है । चूँकि बैंकिंग सेवाएँ सार्वजनिक हित के स्वरूप की हैं, अतः यह अनिवार्य है कि किसी भेदभाव के बिना समस्त जनसमुदाय के लिए बैंकिंग और भुगतान की सेवाओं की उपलब्धता सरकारी नीति का प्रधान लक्ष्य हो (लीलाधर, 2006)।

(ii) वित्तीय वंचन का अर्थ मुख्य धारा के प्रदाताओं से उपयुक्त, कम कीमत पर, उचित और सुरक्षित वित्तीय उत्पादों और सेवाओं तक समाज के कुछ खंडों द्वारा पहुँच की कमी है । इस प्रकार वित्तीय वंचन एक मुख्य नीतिगत चिंता है क्योंकि मुख्य धारा की वित्तीय सेवाओं के बिना किसी परिवार के बजट, अथवा किसी व्यष्टि/छोटे उद्यम का परिचालन करने के लिए विकल्प प्रायः खर्चीले हो सकते हैं । यह प्रक्रिया विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में खास तौर से वित्तीय उत्पादों तक सीमित पहुँच वाले समुदायों के लिए स्व-सुदृढ़कारी बन जाती है तथा प्रायः सामाजिक वंचन में एक महत्वपूर्ण तत्व हो सकती है (मोहन, 2006) ।

(iii) वित्तीय समावेशन से आशय औपचारिक वित्तीय प्रणाली द्वारा उन लोगों के लिए, जो वंचित होने की प्रवृत्ति दर्शाते हैं, वहनीय वित्तीय सेवाओं, अर्थात् भुगतान और विप्रेषण सुविधाओं, बचत, ऋणों और बीमा सेवाओं तक पहुँच की व्यवस्था है (थोरात, 2006)।

(iv) वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया में प्रत्येक परिवार की खोज करना और बैंकिंग प्रणाली में उनका समावेशन प्रदान करना शामिल है (रेड्डी, 2007)।

(v) कमजोर वर्गों और निम्न आय समूहों जैसे असुरक्षित वर्गों के लिए जहाँ आवश्यक हो वहाँ एक वहनीय लागत पर वित्तीय सेवाओं एवं समय पर और पर्याप्त ऋण तक पहुँच को सुनिश्चित करने की प्रक्रिया (वित्तीय समावेशन संबंधी समिति, अध्यक्ष : डॉ. सी. रंगराजन, 2008)।

शामिल थे - निजी क्षेत्र के बैंकों का राष्ट्रीयकरण, प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र उधार के मानदंड लागू करना, अग्रणी बैंक योजना, ग्रामीण/अर्ध-शहरी शाखाओं पर बल सहित शाखा लाइसेंसीकरण मानदंड, कमजोर वर्गों को ऋण के लिए ब्याज-दर की उच्चतम सीमाएँ तथा निर्धन जनता की बहुतायत से युक्त कृषि और ग्रामीण क्षेत्रों की आवश्यकता पूरी करने के लिए विशेषीकृत वित्तीय संस्थाओं का निर्माण। आर्थिक नीति की आवश्यकताओं के साथ बैंकिंग प्रणाली के बेहतर सुयोजन को प्राप्त करने के उद्देश्य से बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण की नीति की घोषणा दिसंबर 1967 में की गई थी। मुख्य रूप से अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों से बैंक ऋण के लिए माँग का आवधिक रूप से निर्धारण करने एवं ऋण और अग्रिम प्रदान करने हेतु प्राथमिकताएँ निर्धारित करने के लिए फरवरी 1968 में राष्ट्रीय ऋण परिषद की स्थापना की गई थी। बैंकिंग के सामाजिक नियंत्रण की नीति के अनुसरण में शीघ्र ही 1969 में प्रमुख भारतीय बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया था। राष्ट्रीयकृत बैंकों के लिए निर्धारित तत्काल अपेक्षित कार्य थे - भारी मात्रा में जमाराशियों का संग्रहण और सभी उत्पादक कार्यकलापों के लिए निधियाँ उधार देना। अर्थव्यवस्था के कमजोर वर्गों को ऋण सुविधाएँ प्रदान करने पर विशेष रूप से जोर दिया गया।

7.44 भारत में ग्रामीण उधार के लिए प्रशासनिक ढाँचा 1969 में लागू की गई अग्रणी बैंक योजना द्वारा उपलब्ध कराया गया जो विस्तृत पैमाने पर जमा संग्रहण और अर्थव्यवस्था के कमजोर वर्गों को उधार को बढ़ाने के दुहरे लक्ष्यों के कार्यान्वयन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था। यह स्वीकार करते हुए कि रोजगार-उन्मुख क्षेत्रों के लिए ऋण की उपलब्धता अपर्याप्त थी, कृषि, लघु उद्योग, स्व-नियोजित व्यक्ति, छोटे कारोबार और इन क्षेत्रों के कमजोर वर्गों को बैंक ऋण की उपलब्धता में वृद्धि करने के लिए 1960 के दशक के उत्तरार्ध में रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों को प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र संबंधी मार्गदर्शी निदेश जारी किये गये थे। विनिर्दिष्ट प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्रों के लिए प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र उधार के लिए लक्ष्य क्रमशः बढ़ाकर देशी बैंकों के मामले में अग्रिमों का 40 प्रतिशत (विदेशी बैंकों के मामले में निर्यात ऋण सहित 32 प्रतिशत) कर दिया गया। सरकार द्वारा प्रायोजित कार्यक्रमों से संबंधित दिशानिर्देशों सहित अन्य मार्गदर्शी सिद्धांतों के साथ प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के अंतर्गत निर्धारित उप-लक्ष्यों का उपयोग अनुसूचित जातियों, धार्मिक अल्पसंख्यकों और अनुसूचित जनजातियों जैसे जनता के अभिनिर्धारित असुरक्षित वर्गों के लिए ऋण की उपलब्धता को प्रोत्साहित करने के लिए किया गया। देश में निम्न आय वाले समूहों को रियायती दर पर ऋण प्रदान करने के लिए 1972 में विभेदक ब्याज-दर (डीआरआइ) योजना प्रारंभ की गई थी (विवरण के लिए अध्याय III देखें)।

7.45 1970 के दशक से बैंकिंग नीति के संवर्धक पहलुओं ने अधिकाधिक प्रमुखता प्राप्त की है। 1970 और 1980 के दशकों के दौरान शाखा लाइसेंसिंग नीति का प्रमुख बल ग्रामीण क्षेत्रों में वाणिज्य बैंक शाखाओं के विस्तार पर था जिसके परिणामस्वरूप बैंक शाखाओं में उल्लेखनीय विस्तार हुआ और प्रति शाखा जनसंख्या में कमी आई। शाखा विस्तार योजना अन्य बातों के साथ-साथ बैंकिंग के विकास, ऋण के अभिनियोजन और ऋण वितरण में शहरी-ग्रामीण स्वरूप में अंतर-क्षेत्रीय असमानताओं को कम करने के लिए एक साधन के रूप में बनाई गई। वाणिज्य बैंकों और अन्य संस्थाओं को विभिन्न श्रेणियों के छोटे उधारकर्ताओं को ऋण प्रदान करने हेतु प्रोत्साहित करने के लिए रिज़र्व बैंक ने चुकौती में चूक की जोखिम के विरुद्ध गारंटियाँ देने के लिए 1971 में भारतीय ऋण गारंटी निगम की स्थापना का प्रवर्तन किया। तथापि, यह योजना बाद में समाप्त कर दी गई।

7.46 1982 में राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की स्थापना मुख्य रूप से कृषि को ऋण देनेवाले बैंकों को पुनर्वित्त प्रदान करने के लिए की गई थी। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना 1975 में अन्य बातों के साथ-साथ ग्रामीण निर्धन जनता की ऋण आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए की गई थी जिनकी हाल ही में पुनःसंरचना की गई है।

### हाल में की गई पहलें

7.47 1990 के दशक के प्रारंभ में आर्थिक सुधारों के प्रचलन के साथ ही देश में वृद्धि की गति बढ़ाने के लिए तथा एक धारणीय तरीके से वित्तीय सेवाओं की व्याप्ति को विस्तृत करने के लिए भी एक मजबूत और समुत्थानशील वित्तीय क्षेत्र को आवश्यक समझा गया। तदनुसार, वित्तीय क्षेत्र सुधारों की प्रक्रिया ने एक मजबूत, स्फूर्त और प्रतियोगी बैंकिंग प्रणाली के निर्माण पर अधिक बल दिया। वित्तीय रूप से वंचित लोगों को औपचारिक वित्तीय क्षेत्र के दायरे में लाने के लिए एक महत्वपूर्ण कदम भारत में व्यष्टि-वित्त का संवर्धन था। निर्धन व्यक्तियों द्वारा सामूहिक निर्णयन को सुसाध्य बनाने तथा 'दरवाजे पर' (डोर स्टेप) बैंकिंग उपलब्ध कराने के लिए रिज़र्व बैंक से नीतिगत समर्थन के साथ 1992 में नाबार्ड द्वारा स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी)-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम शुरू किया गया था। ऋण के थोक विक्रेताओं के रूप में बैंकों को संसाधन उपलब्ध कराने चाहिए थे जबकि गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) को गरीब लोगों को संगठित करने, उनकी क्षमताओं का निर्माण करने और उन्हें सशक्त बनाने की प्रक्रिया को सुगम बनाने के लिए एजेंसियों के रूप में कार्य करना चाहिए था (बॉक्स VII.3)।

7.48 देश में स्वयं-सहायता समूह-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम का और संवर्धन करने के लिए 1998 में बैंकों को सूचित किया गया कि एसएचजी जो अपने सदस्यों के बीच बचत की आदतें बढ़ाने में लिप्त हैं, बचत बैंक खाते खोलने के लिए पात्र होंगे तथा ऐसे एसएचजी के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि वे बचत बैंक खाते खोलने से पहले बैंकों से ऋण सुविधाएँ प्राप्त करें। वर्ष 1999-2000 के लिए मौद्रिक और ऋण नीति की घोषणा के बाद बैंकों को सूचित किया गया कि उनके द्वारा व्यष्टि-ऋण संगठनों को अथवा व्यष्टि-ऋण संगठनों द्वारा एसएचजी/सदस्य लाभार्थियों को दिये गये ऋणों पर लागू ब्याज-दरें उनके विवेक पर छोड़ दी जाएँ। उसके बाद बैंकों को सूचित किया गया कि उन्हें चाहिए कि वे एसएचजी का वित्तपोषण करने के लिए अपनी शाखाओं को पर्याप्त प्रोत्साहन उपलब्ध

## बॉक्स VII.3
## स्वयं-सहायता समूह - बैंक सहबद्धता कार्यक्रम

एक स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी) समरूप श्रेणी के लगभग 15 से 20 व्यक्तियों का समूह है जो सामूहिक समस्याओं का समाधान करने के लिए एकसाथ जुड़ते हैं । वे नियमित आधार पर स्वैच्छिक रूप से बचत की गतिविधियों में संबद्ध होते हैं तथा संचित संसाधन का उपयोग समूह के सदस्यों को ब्याज युक्त ऋणों के रूप में देने के लिए करते हैं । इस प्रक्रिया के दौरान वे वित्तीय मध्यस्थता के अनिवार्य तत्वों और लेखा रखने से संबंधित मूलभूत आवश्यकताओं को भी आत्मसात करते हैं । सदस्य अपनी व्यक्तिगत क्षमताओं से काफी अधिक आकार के संसाधनों का संचालन करना भी सीख लेते हैं । वे इस तथ्य को समझने लगते हैं कि संसाधन सीमित हैं और उनकी एक लागत है । एक बार जब समूह स्थिर हो जाता है और परिपक्व वित्तीय व्यवहार दर्शाता है जिसके लिए सामान्यतः छह महीने लगते हैं, तब बैंकों के साथ उसे सहबद्ध करने पर विचार किया जाता है । बैंकों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाता है कि वे स्वयं-सहायता समूहों को उनकी संचित बचत के कुछ गुणजों में ऋण प्रदान करें । ऋण किसी समर्थक जमानत (कॉलेटरल) के बिना और बैंकों द्वारा निर्णीत ब्याज-दरों पर दिये जाते हैं । बैंक इन समूहों को ऋण उधार देने को सुविधाजनक पाते हैं क्योंकि सदस्य अपनी बचत और आंतरिक उधार के कार्यकलापों द्वारा कुछ वित्तीय अनुशासन प्राप्त कर चुके होते हैं । उक्त समूह अपने सदस्यों को ऋण देने के संबंध में नियम और शर्तें निर्धारित करते हैं । समूह में समकक्ष व्यक्तियों का दबाव समय पर चुकौती को सुनिश्चित करता है और बैंक ऋणों के लिए सामाजिक समर्थक जमानत बन जाता है ।

सामान्यतः उक्त स्वयं-सहायता समूहों (एसएचजी) के लिए स्वयं-सहायता संवर्धक संस्थाओं (एसएचपीआइ) की आवश्यकता है जो उनका प्रवर्तन करें और उन्हें प्रशिक्षित करें । इन स्वयं-सहायता संवर्धक संस्थाओं में शामिल हैं विभिन्न गैर-सरकारी संस्थाएं (एनजीओ), बैंक, किसान क्लब, सरकारी एजेंसियाँ, स्व-नियोजित व्यक्ति तथा स्वयं-सहायता समूहों के महासंघ । तथापि, कुछ स्वयं-सहायता समूह इस प्रकार की एसएचपीआइ से किसी सहायता के बिना ही बनाये गये हैं ।

उक्त सहबद्धता कार्यक्रम के अंतर्गत तीन भिन्न-भिन्न मॉडल उभरे हैं :

- मॉडल I : इसमें किसी एनजीओ द्वारा हस्तक्षेप/सरलीकरण के बिना स्वयं-सहायता समूहों को बैंकों द्वारा सीधे ही उधार देना शामिल है ।
- मॉडल II : इसमें एनजीओ और अन्य एजेंसियों द्वारा सुसाध्य किए जाने पर स्वयं-सहायता समूहों को सीधे बैंकों द्वारा उधार देना परिकल्पित है ।
- मॉडल III : इसमें सुसाध्यकर्ता और वित्तीय एजेंसी के रूप में कार्यरत किसी एनजीओ सहित उधार देना शामिल है ।

मार्च 2007 के अंत में मॉडल II कुल सहबद्धता का लगभग 74 प्रतिशत था, जबकि मॉडल I और III क्रमशः लगभग 20 प्रतिशत और 6 प्रतिशत थे।

कराएँ तथा स्वयं-सहायता समूहों (एसएचजी) की कार्यपद्धति की सामूहिक गतिशीलता उन्हीं पर छोड़ दी जाए ।

7.49 वित्तीय रूप से वंचित लोगों को बैंकिंग क्षेत्र के दायरे के अंदर लाने के लक्ष्य पर 2005-06 में नये सिरे से जोर दिया गया क्योंकि 'वित्तीय समावेशन' शब्द का प्रयोग स्पष्ट रूप से पहली बार 2005-06 के लिए वार्षिक नीतिगत वक्तव्य में किया गया। उसमें यह कहा गया कि बैंकिंग प्रथाओं के संबंध में वैध चिंताएं हैं जो आबादी के व्यापक वर्गों, विशेष रूप से पेंशनभोगियों, स्व-नियोजित व्यक्तियों और असंगठित क्षेत्र में नियुक्त व्यक्तियों को आकर्षित करने के बजाय उन्हें वंचित करने की प्रवृत्ति से संबंधित हैं । उसमें यह भी निर्दिष्ट किया गया कि रिज़र्व बैंक (i) व्यापक तौर पर सेवाएँ प्रदान करनेवाले बैंकों को प्रोत्साहित करने की नीतियाँ कार्यान्वित करेगा, जबकि अल्पसुविधाप्राप्त लोगों सहित समुदाय की बैंकिंग आवश्यकताओं के प्रति अनुकूल रूप में प्रतिक्रियाशील न रहनेवाले बैंकों को निरुत्साहित किया जाएगा; (ii) क्या आम व्यक्ति के लिए मूलभूत बैंकिंग सेवाओं का अस्पष्ट अथवा सुस्पष्ट रूप में कोई अस्वीकरण है, यह निर्धारित करने के लिए सेवाओं के स्वरूप, व्याप्ति और लागत की निगरानी की जाएगी; तथा (iii) बैंकों से अनुरोध किया गया कि वे वित्तीय समावेशन के लक्ष्य के अनुरूप अपनी वर्तमान प्रथाओं को सुयोजित करने के लिए उनकी समीक्षा करें ।

7.50 वित्तीय समेकन की प्रक्रिया को आगे और प्रोत्साहन नवंबर 2005 में मिला जब बैंकों को सूचित किया गया कि वे निम्न अथवा शून्य न्यूनतम शेषराशियों एवं प्रभारों के साथ एक मूलभूत बैंकिंग 'नो फ्रिल्स' खाता उपलब्ध कराएँ ताकि जनता के व्यापक वर्गों तक ऐसे खातों का विस्तार किया जा सके । विशेष रूप से निम्न आय वाले समूहों के लिए बैंकिंग सेवाओं में प्रवेश का विस्तार करने में कम लागत अथवा निःशुल्क खाते को अंतरराष्ट्रीय तौर पर सहायक माना गया है । कई अन्य देशों में भी बैंकों ने अपने स्वयं के आदेश अथवा संबंधित सरकारों के आदेश से वित्तीय सेवाओं को आम आदमी के लिए सुलभ बनाने के उद्देश्य से इसी प्रकार के खाते, हालांकि विभिन्न अन्य नामों से, उपलब्ध कराये हैं (सारणी 7.2)।

7.51 यह सुनिश्चित करने के लिए कि दोनों शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में निम्न आय वर्गों के व्यक्तियों को बैंक खाते खोलने में कठिनाई न हो, खाते खोलने के लिए अपेक्षित अपने ग्राहक को जानिये (केवाइसी) प्रक्रियाओं को उन खातों के लिए सरल कर दिया गया जिनकी एक वर्ष में शेषराशियाँ 50,000 रुपये से अधिक नहीं हैं तथा ऋण सीमाएँ 100,000 रुपये से अधिक नहीं हैं । सरलीकृत प्रक्रिया में किसी ऐसे ग्राहक द्वारा परिचय की अनुमति दी गई जिसके संबंध में केवाइसी की पूर्ण पद्धति पहले ही पूरी की जा चुकी है ।

7.52 किसान क्रेडिट कार्डों (केसीसी) के साथ ही, जो 1998 में प्रारंभ किये गये थे, बैंकों को 2005 में सूचित किया गया कि वे अपनी ग्रामीण और अर्ध-शहरी शाखाओं में 25,000 रुपये तक एक सामान्य क्रेडिट कार्ड (जीसीसी) की सुविधा शुरू करने पर विचार करें । जीसीसी के अंतर्गत परिवार के नकदी प्रवाहों के मूल्यांकन के आधार पर जमानत अथवा प्रयोजन का आग्रह किये बिना ऋण-सीमाएँ स्वीकृत की जाती हैं ।

## सारणी 7.2 : मूलभूत/'नो फ्रिल्स' खाते - चयनित देशों में प्रमुख विशेषताएँ

| देश | खाते का नाम और प्रारंभ करने का वर्ष | प्रमुख विशेषताएँ |
|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 |
| भारत | नो-फ्रिल्स खाता, 2005 | 1. बहुत कम या शून्य न्यूनतम शेष<br>2. प्रति माह 5-10 निःशुल्क लेनदेन<br>3. एटीएम सुविधा |
| युनाइटेड किंगडम | मूलभूत बैंक खाता | 1. वहनीय<br>2. निःशुल्क प्रत्यक्ष धन सूचना |
| | पासपोर्ट खाता (पीए) | 1. अंतरराष्ट्रीय डेबिट-व-एटीएम कार्ड<br>2. ऑनलाइन, यूके और विदेश में फोन पर शॉपिंग<br>3. लचीले बचत खाते की लिखत<br>4. कम लागत का अंतरराष्ट्रीय मुद्रा अंतरण<br>5. बहुभाषी पुनःस्थान-निर्धारण सूचना<br>6. एसआइएम (अभिदाता पहचान मॉड्यूल) कार्ड |
| संयुक्त राज्य अमरीका | पहला खाता, 2002 | 1. बहुत कम या न्यूनतम शेष<br>2. कम शुल्क<br>3. जमा खातों से रहित लोगों के लिए |
| | वैयक्तिक विकास खाता (आइडीए), 1991 | 1. सर्वव्यापी बचत खाता<br>2. गरीबों द्वारा बचत, सरकार द्वारा समान राशि योजित<br>3. बचत का उपयोग आवास में निवेश, शिक्षा, व्यवसाय पूँजीकरण या विकास के अन्य प्रयोजनों के लिए सीमित<br>4. 44 से अधिक राज्यों ने इसे अपनाया |
| | इलेक्ट्रॉनिक अंतरण खाता, 1999 | 1. न्यूनतम शेष की अपेक्षा नहीं<br>2. एटीएम की सुविधा उपलब्ध<br>3. बाध्यताधारी बैंक को उसके द्वारा खोले जानेवाले प्रत्येक खाते के लिए सरकार 12.60 डॉलर सब्सिडी की एकबारगी अदायगी करती है<br>4. कोई चेकबुक या प्रत्यक्ष नामे भुगतान नहीं |
| बेल्जियम | मूलभूत बैंक खाता | 1. प्रभारों पर 12 यूरो प्रति वर्ष की उच्चतम सीमा<br>2. डेबिट कार्ड से 36 निःशुल्क प्रत्यक्ष लेनदेन<br>3. अधिक खाते खोलनेवाले बैंकों के लिए क्षतिपूर्ति<br>4. विवाद की स्थिति में स्वतंत्र समर्पित न्यायेतर मुकदमा सेवा<br>5. अस्वीकृति के लिए कारण बैंक लिखित में देंगे |
| दक्षिण अफ्रीका | म्जान्सी खाता, 2004 | 1. कोई प्रबंध शुल्क नहीं<br>2. प्रति माह एक निःशुल्क नकदी जमा<br>3. परिचय के साक्ष्य के रू प में केवल वैध आइडी<br>4. जमा, आहरण, अंतरण (देश में कहीं भी) तक सीमित<br>5. डेबिट कार्ड भुगतान |
| आस्ट्रेलिया | सामान्य खाता, 2002 | 1. रखने का कोई शुल्क नहीं<br>2. कोई न्यूनतम शेष नहीं<br>3. निःशुल्क असीमित जमा<br>4. प्रति माह जमा से इतर छह निःशुल्क लेनदेन (काउंटर पर तीन नकदी आहरणों सहित) |
| फ्रांस | ला पोस्त खाता | 1. बचत बैंक खाते और बैंकिंग सेवाएं<br>2. कम आय वाले लोगों द्वारा व्यापक तौर पर प्रयुक्त<br>3. संपूर्ण डाक बैंक/ऋण संस्था के निर्माण का प्रस्ताव संसद के पास था |
| | लिवरेत ए खाता | 1. काउंटर पर आहरणों की कोई सीमा नहीं<br>2. कर-मुक्त |
| ब्राजील | काइक्सा एक्वी खाता | 1. कार्ड आधारित<br>2. आवेदन की सरलीकृत प्रक्रियाएँ<br>3. प्रतिनिधियों के पास बिक्री केंद्र टर्मिनलों से प्रवेश सुलभ<br>4. सामाजिक लाभों और नकदी जमाराशियों के नियमित भुगतान स्वीकार्य<br>5. पारंपरिक माध्यमों द्वारा प्रभारित 8-15 प्रतिशत की तुलना में केवल 2.5 प्रतिशत पर विप्रेषणों हेतु विदेश स्थित ब्राजीलियनों के लिए इलेक्ट्रॉनिक वर्शन ई-खाता काइक्सा |

यह ऋण-सुविधा परिक्रामी (रिवाल्विंग) ऋण के स्वरूप की है जिसके अंतर्गत धारक के लिए स्वीकृत सीमा तक आहरण करने की पात्रता रहती है। परिवार के नकदी प्रवाहों के मूल्यांकन के आधार पर उक्त सीमाएँ स्वीकृत की जाती हैं । इस सुविधा पर ब्याज-दर पूर्णतः अविनियमित है । जीसीसी ऋणों में से पचास प्रतिशत ऋणों को प्राथमिकताप्राप्त उधार के रूप में माना जाता है ।

7.53 राज्य-स्तरीय बैंकर समिति (एसएलबीसी) एक या अधिक जिलों को 100 प्रतिशत वित्तीय समावेशन के लिए अभिनिर्धारित करती है ।[3] विभिन्न बैंकों को गाँवों का आबंटन करते हुए यह सुनिश्चित करने का दायित्व उस क्षेत्र के बैंकों को दिया जाता है कि जो बैंक खाता रखना चाहते हैं उन सभी को एक-एक खाता प्रदान किया जाए । अप्रैल 2008 में राज्य-स्तरीय बैंकर समितियों ने सूचित किया कि देश के 18 राज्यों और 6 संघ राज्यक्षेत्रों (यूटी) के 134 जिलों में 100 प्रतिशत वित्तीय समावेशन प्राप्त कर लिया गया है । रिजर्व बैंक स्वतंत्र बाहरी एजेंसियों द्वारा इन जिलों में की गई प्रगति का मूल्यांकन करवा रहा है ताकि इस संबंध में आगे की कार्रवाई की जा सके ।

7.54 जनवरी 2006 में रिजर्व बैंक ने बैंकों को इस बात की अनुमति दी कि वे व्यावसायिक सुसाध्यकर्ता (बीएफ) और व्यावसायिक संपर्की (बीसी) के मॉडलों का प्रयोग करते हुए वित्तीय और बैंकिंग सेवाएँ उपलब्ध कराने के लिए मध्यवर्तियों के रूप में गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ)/ स्वयं-सहायता समूहों (एसएचजी), एमएफआइ (एनबीएफसी को छोड़कर) तथा अन्य नागरिक सामाजिक संगठनों की सेवाओं का उपयोग कर सकते हैं । अप्रैल 2008 में बैंकों को अनुमति दी गई कि वे उपयुक्त समुचित सावधानी (ड्यू डिलिजन्स) के अधीन बीसी के रूप में सेवानिवृत्त बैंक कर्मचारियों, भूतपूर्व सैनिकों और सरकारी कर्मचारियों को लगाएँ । उक्त बीसी मॉडल में बैंकों को अनुमति है कि वे ग्रामीण जनता के काफी निकट स्थल पर 'धन-प्राप्ति - धन-अदायगी' (कैश इन - कैश आउट) लेनदेन करें और इस प्रकार अंतिम संपर्क (लास्ट माइल) की समस्या का समाधान किया जाए । बैंक भारतीय डाक प्राधिकारियों के साथ भी बीसी के रूप में डाक घरों के उनके विशाल नेटवर्क का उपयोग करने के लिए करार कर रहे हैं तथा इसके द्वारा अपनी पहुँच में वृद्धि कर रहे हैं । दुर्बल वर्गों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए कुछ मामलों में बैंकों ने बीमा कंपनियों के सहयोग के साथ वहनीय लागत पर नवोन्मेष बीमा उत्पाद उपलब्ध कराये हैं जिससे उन्हें जीवन की अशक्तता और स्वास्थ्य की सुरक्षा प्रदान की गई है । ऋण के संबंध में स्वयं-सहायता समूहों (एसएचजी) और सूक्ष्म वित्त संस्थाओं (एमएफआइ) का भी उपयोग वित्तीय समावेशन के लिए व्यापक तौर पर किया जा रहा है।

7.55 सुधारों के बाद की अवधि में 'प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र' के रूप में माने जाने के लिए पात्र क्षेत्रों की सूची में विस्तार कर इसमें विनिर्दिष्ट बांडों और जोखिम पूँजी जैसी गतिविधियों को भी शामिल किया गया । इसके परिणामस्वरूप कृषि और लघु उद्योग जैसे प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के पारंपरिक रूप से अधिमानप्राप्त उप-क्षेत्रों को ऋण की अपर्याप्त उपलब्धता का अवबोधन बढ़ रहा था । इन चिंताओं को दूर करने के लिए अप्रैल 2007 में संशोधित मार्गदर्शी निदेश जारी किये गये । फलस्वरूप, प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र को अब कृषि, लघु उद्यम, फुटकर व्यापार, शैक्षणिक ऋण, व्यष्टि वित्त और कम लागत वाले आवास जैसे अत्यधिक सघन रोजगार क्षेत्रों को दिए गए अग्रिमों तक सीमित किया गया है ।

7.56 कुछ राज्यों में कम ऋण-जमा अनुपातों के होते हुए बैंकिंग सुविधाओं में विस्तार करने और त्वरित वित्तीय सघनता हेतु क्षेत्र-विशिष्ट कार्य योजनाएँ बनाने के लिए ऐसे पिछड़े राज्यों में विद्यमान विलक्षण समस्याओं को पहचानना आवश्यक हो गया। इस प्रकार की योजनाएँ राज्य सरकारों, बैंकों और अन्य स्थानीय विकास एजेंसियों की संपूर्ण सहभागिता के साथ उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, बिहार, अंदमान और निकोबार द्वीपसमूह एवं पूर्वोत्तर राज्यों जैसे राज्यों में बनाई गईं ।

7.57 समावेशक बैंकिंग का एक वृद्धिशील घटक ब्यष्टि वित्त संस्थाओं (एमएफआइ) द्वारा उधार है जिनमें सोसाइटियाँ, न्यास, सहकारी संस्थाएँ अथवा कंपनियाँ जो 'लाभार्थ नहीं हैं' अथवा रिजर्व बैंक के पास पंजीकृत गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ (एनबीएफसी) शामिल हैं । उक्त ब्यष्टि वित्त संस्थाएँ (एमएफआइ) वर्तमान में 8.3 मिलियन उधारकर्ताओं को सम्मिलित करती हैं । इस क्षेत्र के अंतर्गत एनबीएफसी खंड उधारकर्ताओं के 42.8 प्रतिशत को शामिल करता है तथा यह खंड सबसे तेज गति से बढ़ रहा है । एमएफआइ /एनबीएफसी को दिये जानेवाले उधार पर ब्याज दरें पूर्णतः अविनियमित कर दी गई हैं। व्यष्टि-वित्त के लिए ऐसी संस्थाओं को बैंक उधार प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र उधार के रूप में माना जाता है । यह देखा गया है कि निजी क्षेत्र के और विदेशी बैंक भी इस क्षेत्र का सक्रिय रूप से समर्थन कर रहे हैं तथा यह क्षेत्र निजी इक्विटी निधीयन और देश के बाहर से लोकोपकारी (फिलॉन्थ्रपी) निधीयन को आकर्षित कर रहा है (थोरात, 2008)।

7.58 भारत में अत्यधिक स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए व्यष्टि-वित्त के विभिन्न परिवर्तों (वेरियन्ट्स) के साथ अनेक नवोन्मेष प्रयोग किये गये हैं । इस संबंध में एक रोचक उदाहरण आर्यावर्त ग्रामीण बैंक द्वारा किये गये प्रयास हैं जिसने उत्तर प्रदेश के दूरस्थ गाँवों और पल्लियों में वित्तीय समावेशन के एक नये विचार का कार्यान्वयन प्रारंभ किया (बॉक्स VII.4)।

7.59 व्यष्टि-वित्त का एक और नवोन्मेष प्रयोग महाराष्ट्र के सातारा जिले में मान देशी महिला बैंक द्वारा किया गया जो कारोबारी स्वामित्व

[3] बैंक खाते से रहित परिवारों की पहचान करने के लिए मतदाता सूचियों, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, अथवा परिवार संबंधी अन्य आंकड़ों जैसे विभिन्न आधारभूत डेटाबेस का उपयोग करते हुए सर्वेक्षण कराये जाते हैं ।

**बॉक्स VII.4**
**वित्तीय समावेशन : वित्तपोषण की नई पद्धति**

*दि आर्यावर्त ग्रामीण बैंक* ने उत्तर प्रदेश के दूरस्थ गाँवों और पल्लियों में वित्तीय समावेशन के एक नये विचार का प्रवर्तन किया जहाँ बिजली की आपूर्ति उपलब्ध नहीं थी अथवा यदि उपलब्ध थी तो अनियमित थी । ग्रामवासी अपनी प्रकाश-व्यवस्था की आवश्यकताओं के लिए केवल मिट्टी के तेल के दीपों पर निर्भर थे तथा प्रायः उन्हें मिट्टी का तेल चोर बाजारों से खरीदना पड़ता था जिससे उनकी आमदनी प्रभावित होती थी । उक्त बैंक ने इन गाँवों में सौर ऊर्जा के दीप उपलब्ध कराने के नवीन विचार को प्रवर्तित किया और ग्रामीण घरों के लिए 'सौर घरेलू प्रकाश व्यवस्था' (सोलार होम लाइटिंग सिस्टम) उपलब्ध कराने के लिए भारत में एक सौर कंपनी टाटा बीपी सोलार को अभिनिर्धारित किया । उक्त कंपनी और व्यापारी अपने मार्जिनों का परित्याग करने के लिए तैयार थे क्योंकि बैंक बड़े पैमाने पर इस व्यवस्था का वित्तपोषण करने के लिए सहमत था । इस व्यवस्था की लागत 13,000 रुपये थी तथा इसके अंतर्गत उपयोग के लिए तैयार किट था जिसमें एक 35 वॉट वाला सौर पैनल, कम रखरखाव वाली बैटरी, एमसीआर चार्ज नियंत्रक और दो प्रकाश-दीप (ल्यूमिनरी) थे । इस व्यवस्था में 7 घंटों से अधिक समय के लिए 14 वॉट के दो सीएफएल को प्रकाशित किया जा सकता था तथा इसके द्वारा एक मोबाइल चार्जर, एक टेबल पंखे और एक टेलिविज़न को भी समर्थन दिया जा सकता था । उक्त बैंक ने लगभग 10,000 रुपये का वित्त प्रदान किया तथा 3,000 रुपये का मार्जिन राशि के रूप में हिताधिकारी द्वारा अंशदान किया जाना अपेक्षित था । इस राशि की चुकौती ब्याज सहित लगभग 222 रुपये प्रति माह की 60 समान मासिक किस्तों में की जानी थी । यह उस राशि से बहुत कम थी जो गाँववालों को प्रति माह घासलेट की आवश्यकताओं के लिए खर्च करनी पड़ती थी ।

उक्त बैंक ने पढ़े-लिखे ग्रामीण युवाओं को व्यावसायिक सुसाध्यकर्ताओं के रूप में अभिनिर्धारित किया था जिन्हें व्यवस्थाओं के रखरखाव के लिए कंपनी ने प्रशिक्षित किया । उक्त बैंक इस प्रकार की 100 व्यवस्थाओं का रखरखाव करने के लिए उक्त व्यावसायिक सुसाध्यकर्ताओं को 10,000 रुपये प्रति वर्ष का मानदेय अदा कर रहा है । दिसंबर 2007 के अंत में उक्त बैंक द्वारा उन्नाव जिले के 1,300 से भी अधिक घरों और बाराबंकी जिले के लगभग 500 घरों में सौर गृह प्रकाश व्यवस्था उपलब्ध कराई गई थी । उक्त बैंक का लक्ष्य अक्तूबर 2008 तक 25,000 घरों को शामिल करने का है ।

**स्रोत :** *आर्यावर्त ग्रामीण* बैंक की वेबसाइट; http://aryavart-rrb.com.

वाली महिलाओं और बैंक ग्राहकों के रूप में महिला उद्यमियों के समग्र विकास की दिशा में कार्य करता है (बॉक्स VII.5)।

7.60 व्यष्टि-वित्त अनेक देशों में औपचारिक वित्तीय क्षेत्र की विस्तृत व्याप्ति की एक प्रमुख विधि के रूप में उभरा है । इन देशों के अनुभव

**बॉक्स VII.5**
**वित्तीय समावेशन : महिला सशक्तीकरण**

महाराष्ट्र के सातारा जिले के म्हासवाड में स्थित *मान देशी महिला बैंक* एक ऐसा संगठन है जो महिला व्यावसायिक स्वामियों और बैंक ग्राहकों के रूप में महिला उद्यमियों के समग्र विकास की दिशा में कार्य करता है । चेतना विजय सिन्हा द्वारा 1997 में स्थापित *मान देशी महिला* बैंक ने 17,000 महिला उद्यमियों को निर्मित किया है। यह विनियमित सहकारी संस्था, जिसने 2000 में जिला सहकारिता विभाग से 'ए' ग्रेड प्राप्त किया, अपने ग्राहकों को चल परिसंपत्ति से संपन्न करती है जिससे वित्तीय सशक्तीकरण में सहायता पहुँचती है जो फिर महिलाओं को उद्यमी बनने और अपने परिवारों के लिए एक सुस्थिर भविष्य की योजना बनाने में समर्थ बनाती है। बैंक द्वारा प्रदत्त सेवाओं में शामिल हैं, बचत, ऋण, बीमा और पेंशन । यूटीआइ म्यूच्युअल फंड के साथ साझेदारी ने उक्त बैंक को महाराष्ट्र में अपने ग्राहकों को पेंशन योजनाएँ प्रदान करने में प्रथम होने में समर्थ बनाया था।

उक्त बैंक की सफलता ने अनेक उप संगठनों के निर्माण को प्रेरित किया जिनमें से एक ग्रामीण महिलाओं के लिए *मान देशी* व्यवसाय विद्यालय है । एचएसबीसी बैंक के साथ साझेदारी में स्थापित उक्त विद्यालय प्राथमिक तौर पर ऐसी महिलाओं के लिए प्रवेश करने योग्य पाठ्यक्रमों का अपना दायरा बनाने का लक्ष्य रखता है जो वित्तीय और सांस्कृतिक कठिनाइयों के कारण अपने निकटवर्ती शहरी केंद्रों में इस प्रकार के प्रशिक्षण में प्रवेश नहीं ले पातीं । पारंपरिक व्यावसायिक विद्यालयों से भिन्न, जो व्यष्टि-अर्थशास्त्र के सिद्धांत, लेखांकन, संगठनात्मक व्यवहार इत्यादि का गहन ज्ञान देते हैं, यह व्यावसायिक विद्यालय सरल व्यावसायिक कौशल प्रदान करने पर फोकस करता है । इस विद्यालय के पाठ्यक्रमों का श्रेणीकरण मूलभूत व्यवसाय-उन्मुख पाठ्यक्रमों, जैसे वित्तीय साक्षरता, विपणन और उत्पाद विकास तथा उद्यम-संबंधी अथवा कौशल-आधारित पाठ्यक्रमों के रूप में किया जा सकता है । वदुज, म्हासवाड में स्थित उक्त व्यावसायिक विद्यालय आसपास के गाँवों और बड़े शहरों से महिलाओं को आकर्षित करता है । चूँकि इस विद्यालय में आनेवाली अधिकांश महिलाएँ बड़े संयुक्त परिवारों का हिस्सा हैं, अतः उक्त विद्यालय के पाठ्यक्रम इस प्रकार बनाये गये हैं जिससे वे अपने परिवार के कामकाज निपटाकर विद्यालय में आ सकें और अपनी आमदनी से अपने परिवार की आय में वृद्धि कर सकें ।

भारत में नवोन्मेषण और उद्यमी वृत्ति को सहायता प्रदान करनेवाले देशपाण्डे फाउण्डेशन के साथ साझेदारी सहित 2007 में *मान देशी* और *मान विकास* (उक्त बैंक के गैर-सरकारी संगठन स्कंध) ने ग्रामीण महिलाओं के लिए चलते-फिरते व्यावसायिक विद्यालय की स्थापना की । यह वर्तमान में पड़ोसी राज्य कर्नाटक के हुबली-धारवाड़ जिले में परिचालित है । एक विशेष रूप से बनाई गई बस जिले में चलती है तथा उक्त व्यावसायिक विद्यालय के समान ही पाठ्यक्रम प्रदान करती है । उक्त *मान देशी* व्यावसायिक विद्यालय एवं चलते-फिरते व्यावसायिक विद्यालय की उल्लेखनीय बात यह है कि उनके सभी पाठ्यक्रम केवल कौशल का शिक्षण देने के लिए ही नहीं, बल्कि एक अपेक्षाकृत बड़े स्तर पर समाज की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए भी तैयार किये गये हैं । एक पूर्णतया किसी शैक्षणिक योग्यता से रहित और आयु-सीमा से रहित नीति को लागू करते हुए तथा शुल्क 180 रुपये से 1,800 रुपये तक के दायरे में रखते हुए यह विद्यालय पिछले वर्ष सभी प्रकार की सामाजिक पृष्ठभूमियों और क्षमताओं की 650 महिलाओं को आकर्षित कर उन्हें ऐसी कुशलताएं प्रदान कर सका है जो वे अन्य प्रकार से कभी प्राप्त नहीं कर सकती थीं ।

**संदर्भ :**

क्रिएडो, जे. और आर. कोशी, 2008। क्रिएटिंग लीडर्स एट दी बॉटम ऑफ दी पिरामिड, माइक्रोफाइनैंस इनसाइट, मार्च ।

वित्त की पद्धति और मॉडल के संबंध में उपयोगी निविष्टियाँ उपलब्ध कराते हैं जो अन्य देशों के लिए अनुकरणीय है (बॉक्स VII.6)।

7.61 भारत की कुछ संस्थाओं सहित कई अन्य देशों में व्यष्टि-वित्त संगठनों द्वारा उक्त *ग्रामीण* प्रणाली का व्यापक तौर पर अनुकरण किया गया है । उदाहरण के लिए एक्टिविस्ट्स फॉर सोशल आल्टरनेटिव्स (एएसए), तिरु चिरापल्ली (तमिलनाडु) अपने *ग्राम विडियल* (जीवी) कार्यक्रम के माध्यम से समन्वित वित्तीय और गैर-वित्तीय सेवाओं का एक दायरा उपलब्ध कराता है । उक्त जीवी में *ग्रामीण* पद्धति के छोटे समूहों से बनाई गई एक संघबद्ध संरचना है जिसके माध्यम से एएसए, जो एक गैर-सरकारी संगठन व्यष्टि वित्त संस्था है, द्वारा वित्तीय और वित्तेतर सेवाएँ उपलब्ध कराई जाती हैं (तनखा, 2002)।

7.62 यद्यपि भारत में विभिन्न व्यष्टि-वित्त मॉडलों का अनुसरण किया जाता है, तथापि स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी)-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम सबसे प्रमुख है । मोटे तौर पर इस मॉडल की *ग्रामीण* बैंक मॉडल के साथ समानताएँ हैं जैसे समूह बनाना, निर्धन लोगों को ऋण उपलब्ध कराना, तथा क्षमता के निर्माण पर फोकस । फिर भी, भारत में एसएचजी-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम द्वारा अपनाई गई पद्धति और बंगला देश के *ग्रामीण* बैंक द्वारा अनुसरण किये जानेवाले ऐसे कार्यक्रम की पद्धति में कुछ अंतर हैं (सारणी 7.3)।

7.63 बैंकों द्वारा अपने बीसी की सहायता से अथवा अन्य प्रकार से अपनी पहुँच के विस्तार में वृद्धि करने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी (आइटी) समाधानों के प्रयोग को रिज़र्व बैंक प्रोत्साहित करता रहा है । कुछ

## बॉक्स VII.6
## बंगला देश का ग्रामीण बैंक

दि *ग्रामीण* बैंक (जीबी) 1976 में बंगला देश के एक गाँव में एक परियोजना के रूप में निर्धन परिवारों को ऋण प्रदान करते हुए गरीबी से उबरने में उनकी सहायता करने के लिए प्रारंभ किया गया था । 1983 में उसे एक औपचारिक बैंक के रूप में 'उसके निर्माण के लिए पारित एक विशेष कानून के अंतर्गत' परिवर्तित किया गया था । वह बैंक के निर्धन उधारकर्ताओं द्वारा स्वाधिकृत है जिनमें से अधिकांश महिलाएँ हैं । समर्थक जमानत (कॉलेटरल) की आवश्यकता को हटाकर जीबी ने रूढ़िगत बैंकिंग प्रथा को उलट दिया है । उसने एक ऐसी बैंकिंग प्रणाली का निर्माण किया है जो पारस्परिक विश्वास, उत्तरदायित्व, सहभागिता और रचनात्मकता पर आधारित है । जीबी बंगला देश में सबसे निर्धन लोगों को किसी समर्थक जमानत (कॉलेटरल) के बिना ऋण उपलब्ध कराता है ।

चूँकि जीबी का प्रारंभ रूढ़िगत बैंकिंग के लिए चुनौती के रूप में किया गया था, अतः उसने रूढ़िगत बैंकिंग की मूल कार्यपद्धति को अस्वीकार किया और अपनी स्वयं की कार्यपद्धति का निर्माण कर लिया । *ग्रामीण* ऋण की सर्वाधिक विशिष्ट बात यह है कि वह किसी कॉलेटरल या कानूनी तौर पर प्रवर्तनीय संविदा पर आधारित नहीं है । वह 'विश्वास' पर आधारित है, न कि कानूनी प्रक्रियाओं और प्रणाली पर । वह स्व-रोजगार निर्मित करने, आय उत्पादन के कार्यकलापों और गरीबों के लिए आवास के लिए ऋण उपलब्ध कराता है जो कि उपभोग के विरुद्ध है । वह इस सिद्धांत पर आधारित होकर गरीबों को उनके दरवाजे पर सेवा प्रदान करता है कि जनता को बैंक के पास नहीं, बल्कि बैंक को जनता के पास जाना चाहिए। ऋण प्राप्त करने के लिए किसी उधारकर्ता को अनिवार्यतः उधारकर्ताओं के समूह में शामिल होना चाहिए । यद्यपि प्रत्येक उधारकर्ता से अपेक्षित है कि वह अवश्य ही किसी पाँच सदस्यीय समूह से संबद्ध हो, तथापि समूह से यह अपेक्षित नहीं होगा कि वह उसके सदस्य को दिये गये ऋण के लिए कोई गारंटी दे । चुकौती का दायित्व पूर्णतः उधारकर्ता पर रहता है जबकि समूह एवं केंद्र/शाखा यह निगरानी करते हैं कि प्रत्येक सदस्य एक जिम्मेदार तरीके से व्यवहार करे और कोई भी चुकौती की समस्या से ग्रस्त न हो । संयुक्त दायित्व का रूप नहीं है अर्थात् किसी चूककर्ता सदस्य की ओर से भुगतान करने के लिए समूह के सदस्य जिम्मेदार नहीं हैं । ऋण एक निरंतर क्रम से प्राप्त किये जा सकते हैं । किसी उधारकर्ता के लिए नया ऋण तब उपलब्ध हो सकता है जब उसके पहले के ऋण की चुकौती की जा चुकी हो । सभी ऋण किस्तों में (साप्ताहिक अथवा द्वि-साप्ताहिक तौर पर) वापस अदा करने होंगे ।

जीबी ने प्रारंभ में ऋण सुविधाएँ उपलब्ध कराने पर ध्यान केंद्रित किया और स्वैच्छिक जमा संग्रहण पर कम ध्यान दिया । 2000 में यह नीति बदली गई और जमा संग्रहण पर अधिक जोर दिया गया । जीबी वर्तमान में चार प्रकार की बचत की सुविधा प्रदान करता है अर्थात् वैयक्तिक बचत खाता, विशेष बचत खाता, *ग्रामीण* पेंशन बचत तथा ऋण-जीवन बीमा बचत निधि । 25 वर्ष तक समूह उधार का परिचालन करने के बाद यह स्वीकार करते हुए कि दुहराये जानेवाले ऋण चक्रों और अधिकाधिक ऋण एक्सपोज़र के साथ समूह की एकरू पता कमजोर होगी क्योंकि प्राप्त किये गये उत्थान के स्तरों में अंतर के साथ ऋण आवश्यकताओं में भिन्नता होती है, जीबी ने वैयक्तिक उधार की ओर परिवर्तन कर लिया । इस प्रकार अधिक लचीला *ग्रामीण* II निर्धन जनता तक पहुँचने के लिए अधिक उपयुक्त है क्योंकि उसके उत्पादों का उपयोग दैनंदिन धन प्रबंध एवं व्यष्टि-उद्यमों के लिए सुविधापूर्वक किया जा सकता है । जीबी II ने सामान्य ऋणों, मौसमी ऋणों, पारिवारिक ऋणों और अन्य प्रकार के एक दर्जन से भी अधिक ऋणों को समाप्त किया । उसने समूह निधि, शाखा-वार और अंचल-वार ऋण की उच्चतम सीमा, नियत आकार की साप्ताहिक किस्त, पूरे वर्ष भर उधार लेने का नियम भले ही उधारकर्ता के लिए केवल तीन महीने के लिए ही ऋण की आवश्यकता थी, को भी छोड़ दिया ।

बंगला देश की सरकार ने सरकार द्वारा संचालित कार्यक्रमों के लिए 11 प्रतिशत की सपाट दर पर ब्याज-दर नियत कर दी जो घटते आधार पर लगभग 22 प्रतिशत होती है । *ग्रामीण* बैंक द्वारा प्रभारित ब्याज-दर बंगला देश सरकार द्वारा नियत दर से कम है । *ग्रामीण* बैंक से प्राप्त किये जानेवाले ऋणों के लिए चार ब्याज-दरें हैं : आय उत्पादन करनेवाले ऋणों के लिए 20 प्रतिशत (घटते आधार पर), आवास ऋणों के लिए 8 प्रतिशत, छात्र ऋणों के लिए 5 प्रतिशत, तथा संघर्षरत सदस्यों (भिखारियों) के लिए ऋणों पर 0 प्रतिशत (ब्याज रहित)। सभी प्रकर के ब्याज साधारण ब्याज हैं जो घटते हुए शेष की पद्धति पर परिकलित किये जाते हैं । इसमें आय का उत्पादन करनेवाले ऋण के लिए 10 प्रतिशत की वार्षिक ब्याज-दर अंतर्निहित है जो बंगला देश की सरकार द्वारा नियत ब्याज-दर (11 प्रतिशत) से कम है । जमाराशियों के लिए जीबी 8.5 प्रतिशत से 12 प्रतिशत तक के दायरे में आकर्षक ब्याज-दरें प्रस्तावित करता है ।

मार्च 2008 की स्थिति के अनुसार उसके 7.46 मिलियन उधारकर्ता थे जिनमें से 97 प्रतिशत महिलाएं थीं । 2,504 शाखाओं के साथ जीबी 81,574 गाँवों में सेवाएं उपलब्ध कराता है जिनमें बंगला देश के कुल गाँवों में से 97 प्रतिशत से अधिक गाँव शामिल हैं ।

**स्रोत :** *ग्रामीण* बैंक की वेबसाइट; www.grameen-info.org ।

**सारणी 7.3 : भारत का स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी)-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम और बंगला देश का *ग्रामीण* बैंक मॉडल : प्रमुख विशेषताएँ**

| एसएचजी-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम - भारत | *ग्रामीण* बैंक (जीबी) - बंगला देश |
|---|---|
| 1 | 2 |
| 1. समूह बैंक से स्वतंत्र है। | 1. समूह के सदस्य बैंक के मालिक भी हैं। |
| 2. समूह में सामान्यतः लगभग 15 सदस्य होते हैं। | 2. समूह में सामान्यतः 5 सदस्य होते हैं। |
| 3. ऋण की चुकौती के लिए समूह संयुक्त रूप से बाध्य है। | 3. ऋण की चुकौती का दायित्व व्यक्ति का है, यद्यपि ऋण लेने के लिए उसे समूह का सदस्य होना चाहिए। |
| 4. बैंक से ऋण लेने के लिए समूह के सदस्यों या समूह के प्रमुख द्वारा एक करार पर हस्ताक्षर किये जाने चाहिए। | 4. कोई करार या प्रलेख अपेक्षित नहीं, ऋण विश्वास के आधार पर दिया जाता है। |
| 5. बैंक और एसएचजी के बीच सामान्यतः एनजीओ अथवा एमएफआइ का एक अतिरिक्त स्तर रहता है । | 5. जीबी सदस्यों को सीधे उधार देता है। |
| 6. पुरुषों और महिलाओं दोनों को शामिल किया जाता है । | 6. प्रमुख फोकस महिला उधारकर्ताओं पर है । |
| 7. ब्याज-दर की कोई उच्चतम सीमा नहीं । | 7. बंगला देश की सरकार ने 11 प्रतिशत की एक उच्चतम सीमा निर्धारित की। |

बैंकों ने प्रौद्योगिकीगत समाधान को अपनाया है (बॉक्स VII.7)। कुछ राज्यों में प्रायोगिक अध्ययन भी किये गये हैं। एक प्रयुक्त प्रौद्योगिकीगत समाधान हस्त-धारित साधन हैं जो अनिवार्य रूप से स्मार्ट कार्ड रीडर हैं। इन साधनों का उपयोग ग्रामीण ग्राहकों को भुगतान करने और उनके दरवाजे पर उनसे नकदी प्राप्त करने के लिए किया जाता है । कार्ड रीडरों के रूप में कार्य करने के लिए मोबाइल फोन भी विकसित किये गये हैं । खाताधारकों को स्मार्ट कार्ड जारी किये जाते हैं जो उनके फोटो और उंगलियों के निशानों से युक्त होते हैं ।

7.64 उभरते हुए व्यावसायिक अवसरों की संभावना को पहचानते हुए कुछ बैंकों ने वित्तीय रूप से वंचित लोगों को प्रक्रियागत समस्याओं और भौतिक रूप से पहुँच में कठिनाइयों जैसे अवरोधों से उबरने में उन्हें समर्थ बनाकर बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए नवोन्मेष पद्धतियों और उपयुक्त प्रौद्योगिकी को भी अपनाया है। उदाहरण के लिए कारपोरेशन बैंक ने शाखारहित बैंकिंग मॉडल को गोवा, कर्नाटक, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश के राज्यों में लागू कर दिया है (बॉकस VII.8)।

7.65 विस्तृत रूप से शहरी क्षेत्रों में व्याप्त वित्तीय वंचन से उबरने के लिए इंडियन बैंक ने मुंबई में झुग्गी-झोपड़ी वासियों को प्रवेश उपलब्ध कराने के एक नवोन्मेष मॉडल का सफलतापूर्वक प्रयोग किया है (बॉक्स VII.9)।

7.66 वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए सामान्य आय स्तरों के लोगों के लिए आवास के संबंध में अंतरराष्ट्रीय तौर पर विचार किया गया है (बॉक्स VII.10)। भारत में गरीबों के लिए आवास *भारत निर्माण* कार्यक्रम (केंद्र बजट 2005-06 में घोषित) के छह तत्वों में से एक है तथा उसका कार्यान्वयन *इंदिरा आवास* योजना (आइएवाइ) के माध्यम से किया जाता है । 6.0 मिलियन घरों के लक्ष्य की तुलना में दिसंबर 2007 तक 4.11 मिलियन घर बनाये गये तथा मार्च 2008 के अंत तक संचित संख्या के बढ़कर 5.18 मिलियन घरों तक हो जाने का अनुमान किया गया ।[4] निर्माण की उच्च लागत को स्वीकार करते हुए केंद्रीय बजट 2008-09 में प्रस्ताव किया गया कि 1 अप्रैल 2008 के बाद स्वीकृत नये घरों के संबंध में प्रति यूनिट की सब्सिडी मैदानी इलाकों में 25,000 रुपये से बढ़ाकर 35,000 रुपये तथा पहाड़ी/कठिनाई से युक्त क्षेत्रों में 27,500 रुपये से बढ़ाकर 38,500 रुपये कर दी जाए । घरों के श्रेणी-सुधार के लिए सब्सिडी प्रति यूनिट 12,500 रुपये से बढ़ाकर 15,000 रुपये कर दी जाएगी । केंद्रीय बजट 2008-09 में यह भी निर्दिष्ट किया गया कि अन्य बातों के साथ-साथ राष्ट्रीय आवास बैंक (एनएचबी) की पहुँच में विस्तार करते हुए वित्तीय समावेशन को आगे बढ़ाया जा सकता है । राष्ट्रीय आवास बैंक के संसाधनगत आधार में वृद्धि करने के लिए यह प्रस्ताव किया गया कि उस सीमा तक अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के संसाधनों का दोहन किया जाए जिस सीमा तक प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र को उधार देने के उनके दायित्व में कमी रहती है । यह भी प्रस्ताव किया गया कि राष्ट्रीय आवास बैंक के पास 1,200 करोड़ रुपये की एक निधि बनाई जाए ताकि ग्रामीण आवास क्षेत्र में उसके पुनर्वित्त परिचालनों में वृद्धि की जा सके । इस निधि का नियंत्रण कुछ संशोधनों सहित उन सामान्य मार्गदर्शी निदेशों द्वारा किया जाएगा जो अब ग्रामीण मूलभूत सुविधा विकास निधि (आरआइडीएफ) के लिए लागू हैं । रिज़र्व बैंक ने फरवरी 2008 में बैंकों को सूचित किया कि समुदाय के कमजोर वर्गों के लिए डीआरआइ

[4] जीडीपी के प्रतिशत के रूप में बकाया आवास ऋण 2001 के 3.4 प्रतिशत से बढ़कर 2006 में 8.5 प्रतिशत हो गये । राष्ट्रीय आवास बैंक ने अनुमान किया कि जीडीपी की तुलना में बकाया आवास ऋणों का अनुपात 2007 के अंत तक लगभग 9 प्रतिशत होगा । इन गतिविधियों को प्रतिबिंबित करते हुए देश में आवास संख्या भी 1991 की 148 मिलियन इकाइयों से बढ़कर 2001 में 187 मिलियन इकाइयाँ हो गई और यह 2007 में 218 मिलियन इकाइयाँ होने का अनुमान किया गया (एनएचबी, 2006)।

**बॉक्स VII.7**

**वित्तीय समावेशन का सफल मॉडल : आंध्र प्रदेश का एक वृत्त अध्ययन**

आंध्र प्रदेश सरकार के ग्रामीण विकास विभाग ने सामाजिक सुरक्षा पेंशनों (एसएसपी) और राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (एनआरईजीएस) के लाभ हिताधिकारियों को अदा करने के लिए वरंगल जिले के छह *मंडलों* में एक प्रायोगिक परियोजना प्रवर्तित की । इस प्रायोगिक कार्यक्रम में छह बैंकों अर्थात् भारतीय स्टेट बैंक, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद, आंध्रा बैंक, आंध्र प्रदेश *ग्रामीण विकास* बैंक और ऐक्सिस बैंक को संबद्ध किया गया । गाँवों में निवास-स्थान के स्तर पर बैंकों के व्यावसायिक संपर्कियों द्वारा ग्रामीणों को उक्त लाभ अदा किये जाते हैं । ग्रामीण विकास विभाग, आंध्र प्रदेश सरकार ने उक्त परियोजना में एक बहुत सक्रिय भूमिका निभाई है तथा कार्डों और साधनों की लागत के एक बड़े हिस्से का वित्तपोषण किया है । उक्त परियोजना का समन्वयन रिज़र्व बैंक द्वारा परियोजना के संचालन समूह के संयोजक के रूप में क्षेत्रीय निदेशक, हैदराबाद के साथ किया गया । बैंकिंग प्रौद्योगिकी में विकास और अनुसंधान संस्थान (आइडीआरबीटी) को अपेक्षित फार्मेट में सरकार को प्रबंध सूचना प्रणालियाँ (एमआइएस) उपलब्ध कराने का कार्य सौंपा गया । दूसरे चरण में, परियोजना का पैमाना 50,000 ग्रामीणों तक बढ़ाया जाएगा । राज्य सरकार का प्रस्ताव है कि यथासमय समूचे राज्य में इन प्रयासों का विस्तार किया जाए । आंध्र प्रदेश सरकार का यह भी प्रस्ताव है कि राज्य में स्वयं-सहायता समूहों (एसएचजी) के सभी सदस्यों को स्मार्ट कार्ड जारी किये जाएँ ।

उक्त परियोजना स्मार्ट कार्ड और मोबाइल तकनीक का प्रयोग करते हुए बीसी के माध्यम से एसएसपी और एनआरईजीएस लाभों के भुगतान के साथ संबद्ध है । बीसी भुगतानों का प्रसंस्करण करने के लिए एक उंगली-निशान की स्कैनर व पहचान मशीन, एक मोबाइल और एक प्रिंटर का उपयोग करता है । लाभार्थी अपने प्रवेश के समय अंकित किये गये अपने फोटो और उंगली के निशान की प्रतिकृति से युक्त स्मार्ट कार्ड अपने पास रखते हैं । उक्त फोटोग्राफ और उंगली के निशान का उपयोग लाभार्थी की पहचान और प्रमाणीकरण के लिए किया जाता है । एक बार प्रमाणीकृत होने के बाद कार्ड में अंतःस्थापित रेडियो बारंबारता पहचान डिवाइस (आरएफआइडी) का चिप चार्ज हो जाता है । चार्ज हुए चिप सहित जब कार्ड मोबाइल फोन के पास लाया जाता है, तब जमा, आहरण और शेषराशि की जाँच के लिए संदेश के टेंप्लेट मोबाइल में उत्पन्न होते हैं । बीसी के लिए आवश्यक होगा कि वह संबंधित विकल्प का चयन कर मोबाइल कीपैडों के माध्यम से लेनदेन की राशि फीड करे तथा संदेश बैक-एंड सर्वर को भेज दे । सर्वर उक्त संदेश को प्रमाणीकृत करता है, लेनदेन का प्रसंस्करण करता है तथा एक अद्यतन सूचना वापस मोबाइल को भेज देता है जो फिर कार्ड को वापस लिख भेजता है । जब कार्ड को प्रिंटर के नजदीक लाया जाता है, तब लेनदेन की रिपोर्ट की तीन प्रतियाँ मुद्रित की जाती हैं । लाभार्थी को भुगतान करने के लिए बीसी नकदी स्वयं ले जाता है । इस प्रकार वास्तव में प्रत्येक बीसी अपने साथ एक जेबी एटीएम उस गाँव में ले जाता है जहाँ उसे परिचालन करना है । इस प्रौद्योगिकी में उन गतिविधियों के समूचे दायरे के लिए संभावना निहित है जो बीसी के माध्यम से बैंक संचालित कर सकते हैं तथा इसमें अन्यों के साथ मीयादी जमाराशियों, विभिन्न ऋणों, बीमा जैसे अन्य उत्पाद शामिल हैं । उक्त मोबाइलें बैंकों के केंद्रीय डाटाबेस सर्वर के साथ जुड़ी होती हैं । इस अनुप्रयोग का एक ऑफ-लाइन मॉडल भी है जो दूरस्थ क्षेत्रों में उसके परिचालन को संभव बनाता है जहाँ कोई संबद्धता नहीं है । वर्तमान में एसएसपी और एनआरईजीएस लाभ डाक घरों के माध्यम से अदा किये जा रहे हैं जिन्हें 2 प्रतिशत का कमीशन दिया जाता है ।

छह *मंडलों* को शामिल करनेवाली उक्त प्रारंभिक परियोजना के लिए राज्य सरकार ने 90 रुपये प्रति स्मार्ट कार्ड, 10,000 रुपये प्रति हस्तधारित डिवाइस तथा लेनदेनों पर 2 प्रतिशत कमीशन अदा करने के लिए सहमति दी । परियोजना को प्रारंभ करने के लिए सरकार ने मूलभूत संरचना की लागतों के एक भाग को वहन करना स्वीकार किया । परियोजना के पैमाने को बढ़ाने के बाद उसके लिए यह अनुमान किया गया कि टर्नओवर पर 2 प्रतिशत का कमीशन बनाये रखा जाएगा और बैंक मूलभूत संरचना का निधीयन करेंगे । फिर भी, उक्त मॉडल उन राज्यों में भिन्न हो सकता है जहाँ टर्नओवर कम है जबकि प्रत्येक गाँव के लिए नियत लागत लगभग वही होगी । बैंक गाँव में ग्राम संगठन सदस्य को 1,000 रुपये अदा करते हैं जो बैंक के बीसी का प्रतिनिधि है । कार्डों की लागत एक ही बार वहन करनी पड़ती है तथा लाभार्थियों के नाम दर्ज करने में भी कार्ड की लागत के अतिरिक्त 50 रुपये प्रति व्यक्ति का व्यय निहित है ।

बैंक के लिए लाभ ये हैं कि लेनदेनों की लागत कम हो जाती है तथा अन्य बातों के साथ-साथ फसल ऋणों, गाँवों में अल्प बचत और व्यष्टि-बीमा तक पहुँच जैसी अन्य सेवाओं के लिए गुंजाइश है । राज्य सरकार अपनी सभी अदायगियाँ इस व्यवस्था के माध्यम से कर सकती है । इसमें वेतन, पेंशन और ठेकेदारों को भुगतान शामिल हैं । यह मॉडल भुगतान वितरण तंत्र में लागत में बचत को सुनिश्चित करता है तथा भुगतान जिले या राज्य के मुख्यालय से केंद्रीय तौर पर किये जा सकते हैं । एक अतिरिक्त लाभ यह है कि जैव-मितीय (बायोमेट्रिक) पहचान के कारण कई बोगस लाभार्थियों की छँटाई की गई है और राज्य सरकार का अनुमान है कि इस कारण से भारी रकम की बचत हो सकती है ।

उक्त परियोजना के लिए अपनाये गये मॉडल के अंतर्गत बैंक द्वारा प्रौद्योगिकी और प्रौद्योगिकी के विक्रेता का चयन; एक बीसी की नियुक्ति; बैंक और बीसी के बीच किये गये लेनदेनों जैसे नकदी के संचलन, लाभार्थियों के खातों में जमा, शुल्क/कमीशन के भुगतान और नियंत्रण तंत्र - के संबंध में परिचालन प्रक्रियाओं को अंतिम रूप देना शामिल है। उक्त मॉडल के अन्य पहलू हैं - लाभार्थियों के नाम दर्ज करना और उनके बारे में महत्वपूर्ण सूचना का संग्रहण तथा उन्हें कार्ड जारी करना, लाभार्थियों को प्रशिक्षित करना और उन्हें सुग्राही बनाना, लिखतों की सर्विसिंग में निरंतर सहायता के द्वारा परिचालनगत आवश्यकताएँ पूरी करना, परियोजना की निरंतर निगरानी और उसमें सुधार के लिए आवधिक तौर पर मूल्यांकन करना ।

स्कीम के आय संबंधी मानदंड पूरे करनेवाले अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजातियों के सदस्य भी 4 प्रतिशत की रियायती ब्याज-दर पर 20,000 रुपये प्रति हिताधिकारी तक आवास ऋण प्राप्त कर सकते हैं।[5] केंद्रीय बजट 2008-09 में की गई घोषणा के अनुसरण में रिज़र्व बैंक ने जुलाई 2008 में सरकारी क्षेत्र के बैंकों को सूचित किया कि 7 प्रतिशत वार्षिक की दर पर किसानों को प्रदत्त 3 लाख रुपये तक अल्पावधि उत्पादन ऋण के संबंध में सरकारी क्षेत्र के बैंकों को सरकार 2 प्रतिशत का ब्याज परिदान (इंटरेस्ट सबवेंशन) प्रदान करेगी ।

5 यह उत्पादक और लाभकारी कार्यकलाप करने के लिए 4 प्रतिशत की रियायती ब्याज-दर पर डीआरआइ स्कीम के अंतर्गत उपलब्ध 15,000 रुपये के वैयक्तिक ऋण के अतिरिक्त है ।

## बॉक्स VII.8
## व्यावसायिक संपर्कियों के माध्यम से शाखारहित बैंकिंग

कारपोरेशन बैंक ने ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धन और वंचित लोगों को बहुत सरल और मूलभूत वित्तीय सेवाएँ उपलब्ध कराने के लिए प्रौद्योगिकी के उपयोग के द्वारा एक व्यापक पहुँच (आउटरीच) का कार्यक्रम प्रारंभ किया है । यह कार्य करने के लिए उक्त बैंक ने गाँव की संरचना और आकार, परिवार/घर के विवरण जैसे व्यवसाय, आस्ति के स्वामित्व और वित्तीय सेवाओं के उपयोग के संबंध में सूचना प्राप्त करने के लिए अभिनिर्धारित गाँवों में एक सर्वेक्षण संचालित किया । इस सर्वेक्षण के स्वचालन ने उन पारिवारिक सदस्यों के लिए, जिन्होंने उक्त बैंक के पास खाता खोलने की अपनी इच्छा प्रकट की, स्थल पर प्रयोगकर्ता के फोटो सहित कॉर्प प्रगति बचत बैंक (सीपीएसबी) खाता खोलने के फार्मों के निर्माण को सुसाध्य बनाया ।

उक्त सर्वेक्षण से अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रकट हुआ कि ग्रामीण लोग सामान्यतः बैंक के पास जाने के लिए विमुख थे क्योंकि शाखाएं उनके निवास अथवा कार्यस्थल से काफी दूर थीं और इस कारण से उन्हें आने-जाने के लिए धन और सामान्य बैंकिंग कार्य करने के लिए समय व्यतीत करना पड़ता था । इसके अलावा, अर्ध-साक्षर या साक्षर होने के कारण उन्हें प्रक्रियाओं को समझने और उनका अनुसरण करने में कठिनाई महसूस हुई । वे इस बारे में भी निश्चित नहीं थे कि अल्प धनराशियाँ विप्रेषित करने अथवा आहरित करने के लिए बैंक में पहुँचने पर उनके प्रति कैसा व्यवहार किया जाएगा । ग्रामीणों द्वारा अनुभव की जा रही इन कठिनाइयों को कम करने के लिए कारपोरेशन बैंक ने अगस्त 2007 में एक शाखारहित बैंकिंग मॉडल को अपनाया । पाम-टॉपों, सिंप्यूटरों, हस्तधारित भंडारण साधनों और विविध संचार माध्यमों के दायरे में विभिन्न प्रौद्योगिकियों का मूल्यांकन करने के बाद उक्त बैंक ने व्यावसायिक संपर्कियों (बीसी) और एक छोटे हस्तधारित साधन के प्रयोग के आधार पर एक शाखारहित बैंकिंग मॉडल का विकल्प चुना । यह मॉडल आंध्र प्रदेश में प्रायोगिक परियोजना में अनुसरण किये गये मॉडल के लगभग समान है (देखें बॉक्स VII.7)। उक्त शाखारहित बैंकिंग मॉडल ने ग्रामवासियों के लिए बचत और ऋण उत्पाद उनके दरवाजे पर उपलब्ध कराने के द्वारा उन तक पहुँचने में बैंक को समर्थ बनाया । सर्वेक्षण के माध्यम से संगृहीत सूचना ने केवाइसी की अपेक्षाओं की पूर्ति को भी सुगम कर दिया ।

ग्राहकों के लिए उक्त मॉडल से प्राप्त होनेवाले लाभों में शामिल हैं - शाखा तक जाने में उनके समय और व्यय की बचत, बीसी के साथ व्यवहार करने में सहूलियत क्योंकि वह परिचित व्यक्ति है, तथा दिन में किसी भी समय व्यावहारिक तौर पर कारोबार संबंधी लेनदेन करने की सुविधा । बीसी के लिए लाभ यह है कि यह आय का एक वैकल्पिक स्रोत है । बैंक के लिए लाभ ये हैं कि वे उन खंडों तक पहुँचने में समर्थ हैं जिन तक वे अभी तक नहीं पहुँच पाये हैं तथा निम्नतर लेनदेन लागतों पर ग्रामीण बचत संपन्न कर सकते हैं ।

**संदर्भ :**

कामत, राघव, 2007 । शाखारहित बैंकिंग : वित्तीय समावेशन के लिए कार्प बैंक का उत्तर; सीएबी कालिंग जुलाई-सितंबर; खंड 31, सं. 3 ।

7.67 ग्रामीण ऋण वितरण प्रणाली को मजबूत बनाने के लिए हाल ही में अल्पावधि ग्रामीण सहकारी ऋण संरचना के लिए एक पुनरुत्थान पैकेज की घोषणा की गई । ग्रामीण सहकारी ऋण संस्थाओं के पुनरुत्थान संबंधी कार्यदल (अध्यक्ष : ए. वैद्यनाथन) की सिफारिशों के आधार पर तथा राज्य सरकारों के साथ परामर्श करने के उपरांत भारत सरकार ने अल्पावधि ग्रामीण सहकारी ऋण संरचना के पुनरुत्थान के लिए एक पैकेज का अनुमोदन किया । इस पैकेज में परिकल्पित किये गये रूप में अब तक 20 राज्यों ने भारत सरकार और नाबार्ड के साथ सहमति ज्ञापन (एमओयू) निष्पादित किये हैं । सात राज्यों ने अपने सहकारी समिति अधिनियमों में आवश्यक संशोधन कर लिये हैं । दीर्घावधि ग्रामीण सहकारी ऋण संरचना के लिए

## बॉक्स VII.9
## शहरी वित्तीय समावेशन - धारावी (मुंबई) मॉडल

सामान्यतः यह महसूस किया जाता है कि वित्तीय वंचन एक ऐसी समस्या है जो केवल ग्रामीण क्षेत्रों में ही है । तथापि, वास्तव में शहरी केंद्रों में भी बड़ी संख्या में लोग बैंकिंग सुविधाओं तक आसानी से नहीं पहुँच सकते तथा वित्तीय वंचन शहरी क्षेत्रों में भी विशेष रूप से अनौपचारिक क्षेत्र के कामगारों के मामले में बहुत आम है जिनके पास नियमित रूप से काम नहीं होता । इसके अतिरिक्त, कई प्रवासी जिनका कोई बैंक खाता नहीं होता और जो बैंकिंग सुविधाओं के बारे में नहीं जानते, अपने पारिवारिक सदस्यों को धनराशि मित्रों, रिश्तेदारों जैसे अनौपचारिक स्रोतों के माध्यम से भेजते हैं अथवा जब कभी अपने मूल निवास स्थान (नेटिव प्लेस) जाते हैं तब अपने साथ नकदी ले जाते हैं ।

देश की वाणिज्यिक राजधानी मुंबई में एशिया की सबसे बड़ी झोपड़पट्टी (स्लम) धारावी में स्थिति ज्यादा भिन्न नहीं है । धारावी में लगभग 300,000 से 350,000 तक कामगार निवास करते हैं जिनमें से अनेक व्यक्तियों का कोई बैंक खाता नहीं है। नो फ्रिल्स खाते खोलने के कार्य को सुसाध्य बनाने के लिए केवाइसी मानदंडों को युक्तसंगत बनाने के बाद इंडियन बैंक ने फरवरी 2007 में धारावी में एक कोर बैंकिंग शाखा और एक एटीएम सुविधा प्रारंभ की । उक्त बैंक ने स्मार्ट कार्ड आधारित बैंकिंग शुरू किया जिसने झुग्गी-झोपड़ी निवासियों के लिए दरवाजे पर (डोरस्टेप) बैंकिंग लेनदेनों को सुसाध्य बनाया है। इस सुविधा ने कामगारों को बचत करने में समर्थ बनाया है तथा प्रवासी अपने मूल निवास स्थानों में रहनेवाले अपने पारिवारिक सदस्यों को धनराशि के आसान और विश्वसनीय विप्रेषण की सेवाओं का उपयोग कर सकते हैं । उक्त निवासियों को जीवन और स्वास्थ्य बीमा उत्पाद भी उपलब्ध कराये जाते हैं ।

इस प्रकार शहरी क्षेत्रों में कुछ वित्तीय रूप से वंचित लोगों को बैंकिंग सुविधाओं में प्रवेश उपलब्ध कराया गया है । इंडियन बैंक ने अब धारावी मॉडल का विस्तार आंध्र प्रदेश के गुंटूर शहर और तारामणि, चेन्नै में भी किया है जहाँ शहरी निर्धन लोगों के बैंक खाते नहीं हैं ।

**संदर्भ :**

1. राजन, एम.एस.एस. 2007 । वित्तीय समावेशन का प्रत्युत्तर : अवसर और चुनौतियाँ - इंडियन बैंक का अनुभव; सीएबी कालिंग जुलाई-सितंबर, खंड 31, सं.3 ।
2. इंडियन बैंक वेबसाइट, www.indianbank.in

## बॉक्स VII.10
## आवास और वित्तीय समावेशन

विकसित देशों में देश के वंचित भागों में रहनेवाले लोगों के लिए बंधक ऋण को वित्तीय समावेशन के एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में पहचाना गया है तथा यह स्वीकार किया गया है कि यह आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए एक उत्प्रेरक के रूप में कार्य करता है । ऐसा प्रतीत होता है कि बंधक कंपनियों, गैर-बैंक वित्त कंपनियों और बैंकों द्वारा कम आय वाले समूहों तक बंधक वित्त के विस्तार ने विकसित देशों में औपचारिक वित्तीय प्रणाली के दायरे के अंतर्गत वित्तीय रूप से वंचित जनता के एक बड़े भाग को लाने में सहायता की है । विकसित देशों में आवास संघों ने अपने किरायेदारों और निवासियों के बीच वित्तीय वंचन का सामना करने में अग्रणी भूमिका निभाई एवं ऋण संस्थाओं जैसी सहायक सामुदायिक वित्तीय संस्थाओं ने भी साझेदारी और निवेश के माध्यम से इस दिशा में योगदान किया । आवास वित्त सामान्यतः नये मकानों में निवेश के लिए अथवा घरेलू सुधारों के लिए प्राप्त किया जाता है । फुटकर जमाराशियों, बंधक समर्थित प्रतिभूतियों और सुरक्षित बांडों सहित, बंधक निधीयन के स्रोतों में भी अत्यंत विविधता है । यूके जैसे कुछ देशों में प्रतियोगी मुख्य धारा के बंधक उधार के साथ ही, निम्न आवास इक्विटी अथवा अनिश्चित आय वाले खरीदारों की बंधक ऋण तक पहुँच है (एचएम ट्रेज़री, 2007)। विशेष रूप से पहली बार घर खरीदनेवालों को आवास वित्त प्राप्त करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है । यूके और स्कॉटलैंड में वहनीय आवास उपलब्ध कराने के लिए बंधक उधारदाता सरकार की खुले बाजार की गृह क्रय योजना (ओपन मार्केट होम बाइ स्कीम) पर कार्य कर रहे हैं जो पहली बार खरीदनेवालों, कामगारों और सामाजिक किरायेदारों को वित्त प्रदान करने के लिए बनाई गई है । इसके अलावा ग्राहक, जो अंशधारित मालिक हैं, की पहुँच वित्तीय संस्था द्वारा प्रस्तावित अन्य वित्तीय उत्पादों और सेवाओं तक भी होती है। इस योजना के अंतर्गत आवास बाजार में प्रवेश हेतु लोगों को अनुमति देने के लिए संपत्तियों में इक्विटी की साझेदारी हेतु सरकार और उधारदाता दोनों जिम्मेदारी लेते हैं । वितरण और प्रयुक्त व्यापक पहुँच (आउटरीच) के कार्य की पद्धतियों में नवोन्मेष भी रहे हैं, उदाहरण के लिए स्थानीय आवास संघों के साथ साझेदारी करते हुए । यूके में सरकार का लक्ष्य 2010-11 तक प्रति वर्ष 70,000 से भी अधिक नये वहनीय घरों का वितरण करना है । उन किरायेदारों को ऋण सुविधा उपलब्ध कराने के लिए, जो अन्यथा मुख्य वित्तीय संस्थाओं से ऋण प्राप्त नहीं कर सकते, रायल बैंक ऑफ स्कॉटलैंड ने एक नई बचत और ऋण योजना तैयार करने के लिए दी ग्रैंपियन हाउसिंग एसोसिएशन के साथ एक करार किया है ।

अमेरिका में संघीय सरकार ने 1997 में सामुदायिक पुनर्निवेश अधिनियम लागू किया, जिसके अंतर्गत फेडरल बैंक विनियामक एजेंसियाँ बैंकों की रेटिंग निम्न आय वाले समुदायों की सेवा करने मे किये गये उनके प्रयासों और प्रभावात्मकता पर निर्धारित करती हैं । मुख्य मानदंड बंधक ऋण है, परंतु विनियामक इस बात पर भी विचार करते हैं कि निम्न और साधारण आय वाले समुदायों को बैंक किस सीमा तक फुटकर बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराते हैं । यह बात भी पहचानी गई है कि सब-प्राइम बंधक अथवा पुनर्वित्त ऋणों ने काले और हिस्पैनिक समुदायों में ऋण की व्याप्ति को प्रेरित किया जिनके लिए आम तौर पर ऋण तक आसानी से पहुँच नहीं है । निम्न अथवा साधारण आय वाले परिवारों के लिए निर्धारित यूनिटों के साथ निम्न आय आवास कर ऋण (एलआइएचटीसी) कार्यक्रम ने भी वित्त के कार्यकलापों को सहायता प्रदान की । इस कार्यक्रम का उद्देश्य निम्न अथवा साधारण आय वाले परिवारों द्वारा अधिभोग के लिए विकसित किये गये चयनित किराया आवास के मालिकों को कर जमा प्रदान करके निम्न आय वाले आवास की पर्याप्त आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए काफी प्रोत्साहन उपलब्ध कराना था । यद्यपि सब्सिडी पूर्णतः संघीय कर कूट (फेडरल टैक्स कोड) के माध्यम से प्रदान की जाती है, तथापि इसका प्रबंध राज्य सरकार की एजेंसियों, सामान्यतः राज्य आवास वित्त एजेंसी के माध्यम से किया जाता है । उक्त एलआइएचटीसी कार्यक्रम निम्न अथवा साधारण आय वाले परिवारों द्वारा अधिभोग हेतु आवास के उत्पादन को प्रोत्साहित करने के लिए एक प्राथमिक व्यवस्था के रूप में उभरा है (वैलेस 1995)।

विकसित देशों के मामले में यह तर्क दिया जाता है कि बंधक वित्त के लिए पहुँच को बढ़ाया जा सकता है यदि उधारदाता लक्ष्यीकृत बाजार की आवश्यकताओं और विशेषताओं के साथ अधिक घनिष्ठतापूर्वक सुयोजित करने के लिए वर्तमान बंधक उत्पादों के साथ संबद्ध संरचना और प्रक्रियाओं को पुनर्व्यवस्थापित और इष्टतम करें । उपाय जैसे सुधारित ऋण चुकौती (लोन सर्विसिंग) की प्रक्रियाएँ, पुनः परिभाषित उधारकर्ता, संपत्ति अथवा क्षेत्र का मानदंड, ऋण स्तरीय उत्पाद की विशेषताएँ जैसे बीमा अथवा समर्थक जमानत (कॉलेटरल) की अपेक्षाएँ एवं संविभाग संबंधी मध्यस्थताएं जैसे गारंटी, ये सब ऐसी व्यवस्थाएं हैं जिन पर विचार किया जा सकता है । तथापि, यह तर्क भी दिया जाता है कि उस विस्तार की एक सीमा है जहाँ तक बंधक उत्पाद समूचे लक्ष्य बाजार में आवास वित्त के लिए पहुँच को सुसाध्य बना सकते हैं । आवास की आवश्यकताओं के स्वरूप तथा लक्ष्य बाजार में परिवारों की वित्तीय और जोखिम पृष्ठभूमि विविधीकृत आवास वित्त उत्पादों की आवश्यकता को रेखांकित करती है ।

**संदर्भ :**


1. बैंक ऑफ स्कॉटलैंड. 2007 । डेलिवरिंग अवर फाइनैंशियल इन्क्लूज़न एजेंडा इन स्कॉटलैंड, मार्च ।
2. एच. एम. ट्रेज़री. 2007 । फाइनैंशियल इंक्लूज़न : द वे फार्वर्ड, एचएम ट्रेज़री, यूके, मार्च ।
3. केंप्सन, ई. 2006 । पॉलिसी लेवल रेस्पांस टू फाइनैंशियल एक्सक्लूज़न इन डेवलप्ड इकनॉमीज़, लेसन्स फॉर डेवलपिंग कंट्रीज़, पेपर फॉर ऐक्सेस टू फाइनैंस : बिल्डिंग इंक्लूजिव फाइनैंशियल सिस्टम्स, विश्व बैंक, वाशिंगटन, मई ।
4. वैलेस, जेम्स, ई. 1995। फाइनैंसिंग एफ़र्डबल हाउसिंग इन द युनाइटेड स्टेट्स, हाउसिंग पॉलिसी डिबेट 6(4)।


पुनरुत्थान पैकेज भी तैयार किया जा रहा है । केंद्रीय बजट 2008-09 में घोषित किया गया कि दीर्घावधि सहकारी ऋण संरचना के पुनरुत्थान के पैकेज की विषय-वस्तु के संबंध में केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के बीच एक सहमति हुई है । जैसी कि वित्तीय समावेशन संबंधी समिति द्वारा अपनी अंतरिम रिपोर्ट में सिफारिश की गई है, सरकार ने केंद्रीय बजट 2007-08 में नाबार्ड के पास प्रत्येक 500 करोड़ रुपये की समग्र मूल निधि (कॉर्पस) के साथ दो निधियों - वित्तीय समावेशन निधि और वित्तीय समावेशन प्रौद्योगिकी निधि के निर्माण की घोषणा की जिससे विकास की और संस्तुत रूप में संवर्धनात्मक और प्रौद्योगिकीगत मध्यस्थताओं की लागतों को वहन किया जा सके । सरकार ने निर्दिष्ट किया कि 2007-08 के लिए उक्त दोनों निधियों में से प्रत्येक में केंद्र सरकार, रिज़र्व बैंक और नाबार्ड द्वारा 25 करोड़ रुपये का प्रारंभिक अंशदान 40:40:20 के अनुपात

में किया जाएगा । उक्त निधियों में से प्रत्येक के लिए रिज़र्व बैंक का प्रारंभिक अंशदान 10 करोड़ रुपये होगा । उक्त समिति ने अपनी अंतिम रिपोर्ट जनवरी 2008 में प्रस्तुत की (बॉक्स VII.11)। वित्तीय समावेशन संबंधी समिति ने भी सिफारिश की कि राज्य सरकारें राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के अंतर्गत भुगतान एवं सामाजिक सुरक्षा भुगतान इस प्रकार के प्रौद्योगिकी आधारित समाधानों के माध्यम से करें । रिज़र्व बैंक ने पहले ही राज्य सरकारों से अनुरोध किया है कि वे सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आइसीटी) की सहायता से सरकारी अदायगियाँ बैंकों के माध्यम से करने की संभावना का पता लगाएँ (भारत सरकार, 2008ए और 2008बी)।

7.68 केंद्रीय बजट 2008-09 में घोषणा की गई कि बैंकों को संपूर्ण वित्तीय समावेशन की संकल्पना को अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। उसके बाद रिज़र्व बैंक ने अप्रैल 2008 में सभी अनुसूचित वाणिज्य बैंकों को स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी) के सदस्यों की समूची ऋण आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए सूचित किया, अर्थात् (क) आय उत्पादन की गतिविधियाँ; (ख) सामाजिक आवश्यकताएँ जैसे आवास, शिक्षा, विवाह; तथा (ग) ऋण की अदला-बदली (स्वैपिंग)। सरकार ने मार्च 2009 तक शेष सभी सफाई कर्मचारियों (स्कैवेंजर्स) और उनके आश्रितों के पुनर्वास के लिए एक नई स्व-रोजगार योजना लागू की । उनकी आय का विचार किये बिना सफाई कर्मचारी और उनके आश्रित, जिन्हें भारत सरकार/राज्य सरकारों की किसी भी योजना के अंतर्गत पुनर्वास के लिए अभी सहायता प्रदान करना बाकी है, सहायता के लिए पात्र हैं । अभिनिर्धारित सफाई कर्मचारियों को प्रशिक्षण, ऋण और सब्सिडी उपलब्ध कराई जाएगी। तदनुसार, रिज़र्व बैंक ने अप्रैल 2008 में उक्त योजना को कार्यान्वित करने में बैंकों द्वारा अनुसरण किये जाने हेतु अपेक्षित विस्तृत दिशानिर्देश जारी किये । बैंक केवल राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी वित्त और विकास निगम (एनएसकेएफडीसी) की राज्य वितरण-माध्यम (चैनलाइजिंग) एजेंसियों द्वारा प्रायोजित उम्मीदवारों को ऋण उपलब्ध कराएँगे तथा हिताधिकारी को संवितरण के लिए उनसे पात्र

## बॉक्स VII.11
## वित्तीय समावेशन संबंधी समिति की रिपोर्ट

वित्तीय समावेशन की एक कार्यनीति तैयार करने के लिए भारत सरकार द्वारा 26 जून 2006 को वित्तीय समावेशन संबंधी समिति (अध्यक्ष : डॉ. सी. रंगराजन) का गठन किया गया । उक्त समिति ने अपनी अंतिम रिपोर्ट 4 जनवरी 2008 को प्रस्तुत की । इस रिपोर्ट में वित्तीय समावेशन को एक वहनीय लागत पर विशेष रू प से कमजोर वर्गों और निम्न आय वाले समूहों जैसे दुर्बल वर्गों द्वारा वित्तीय सेवाओं तथा समय पर और पर्याप्त ऋण तक पहुँच को सुनिश्चित करने की एक व्यापक और समग्र प्रक्रिया के रू प में देखा गया । अतः उक्त समिति के अनुसार वित्तीय समावेशन के अंतर्गत बैंक खातों, ऋण, विप्रेषणों और भुगतान सेवाओं, वित्तीय सलाहकार सेवाओं और बीमा सुविधाओं जैसे मुख्य धारा के वित्तीय उत्पादों तक पहुँच को शामिल किया जाना चाहिए ।

उक्त रिपोर्ट में यह पाया गया कि भारत में किसान परिवारों का 51.4 प्रतिशत औपचारिक/अनौपचारिक दोनों स्रोतों से वित्तीय रू प से वंचित है तथा किसान परिवारों के 73 प्रतिशत की पहुँच ऋण के औपचारिक स्रोतों तक नहीं है । वित्तीय रू प से वंचित सभी किसान परिवारों के 64 प्रतिशत के साथ मध्य, पूर्वी और पूर्वोत्तर क्षेत्रों में वंचन सबसे अधिक तीव्र है । उक्त रिपोर्ट के अनुसार एक समावेशक वित्तीय क्षेत्र के निर्माण के लिए समग्र कार्यनीति निम्नलिखित पर आधारित होनी चाहिए- (i) वर्तमान औपचारिक ऋण वितरण व्यवस्था के भीतर सुधार लाना; (ii) विशेष रूप से सीमांत और उप-सीमांत किसानों तथा निर्धन गैर-खेतिहर परिवारों में ऋण अवशोषण क्षमता में सुधार लाने के लिए उपाय सुझाना; (iii) प्रभावी व्यापक पहुँच के लिए नये मॉडल विकसित करना; तथा (iv) प्रौद्योगिकी आधारित समाधानों के संबंध में उन्नयन ।

संबद्ध कार्य की विशालता को ध्यान में रखते हुए उक्त समिति ने वंचित ग्रामीण परिवारों के कम से कम 50 प्रतिशत (55.77 मिलियन) की 2012 तक तथा शेष की 2015 तक व्यापक वित्तीय सेवाओं तक पहुँच उपलब्ध कराने के लक्ष्य के साथ एक मिशन के प्रकार की राष्ट्रीय ग्रामीण वित्तीय समावेशन योजना (एनआरएफआइपी) प्रारंभ करने की सिफारिश की । इसके लिए यह आवश्यक होगा कि वाणिज्य बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की अर्ध-शहरी और ग्रामीण शाखाएं प्रति वर्ष प्रति शाखा कम से कम 250 नये खेतिहर और गैर-खेतिहर परिवारों को शामिल करें । समिति ने यह भी सिफारिश की है कि सरकार वित्तीय समावेशन संबंधी एक राष्ट्रीय मिशन (एनएएमएफआइ) गठित करे जिसमें सभी पणधारकों (स्टेकहोल्डरों) के प्रतिनिधि हों, जो अपेक्षित समग्र नीतिगत परिवर्तन सुझाए तथा संवर्धनात्मक पहलें करने में सार्वजनिक निजी और गैर-सरकारी संगठन (एनजीओ) क्षेत्रों में पणधारकों (स्टेकहोल्डरों) की सहायता करे ।

वाणिज्य बैंकों से संबंधित प्रमुख सिफारिशों में शामिल हैं -प्रत्येक ग्रामीण/अर्ध-शहरी शाखा में प्रति वर्ष कम से कम 250 वंचित ग्रामीण परिवारों के लिए ऋण तक पहुँच उपलब्ध कराने के लिए लक्ष्य; अगले तीन वर्षों में अभिनिर्धारित जिलों में लक्ष्यीकृत शाखा विस्तार; ग्राहकों की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाये गये (कस्टमाइज्ड) बचत, ऋण और बीमा उत्पादों की व्यवस्था; समावेशक वित्तीय सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए मानव संसाधनों का प्रोत्साहितीकरण तथा कृषि ऋणों के लिए प्रक्रियाओं का सरलीकरण ।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों से संबंधित प्रमुख सिफारिशें हैं - बैंक सुविधारहित क्षेत्रों में उनकी सेवाएँ उपलब्ध कराना और उनके ऋण-जमा अनुपातों में वृद्धि करना; क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का आगे और कोई विलय नहीं करना; एक समयबद्ध तरीके से नेटवर्क को व्यापक बनाना और व्याप्ति में विस्तार करना; क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा वंचित क्षेत्रों के लिए अलग ऋण योजनाएं बनाना और उनके बोर्डों को मजबूत करना ।

सहकारी बैंकों के मामले में प्रमुख सिफारिशें थीं - वैद्यनाथन समिति के पुनरुत्थान पैकेज का शीघ्र कार्यान्वयन; बीसी के रू प में पीएसीएस और अन्य प्राथमिक सहकारी संस्थाओं का उपयोग तथा सहकारी संस्थाओं द्वारा वंचित समूहों के वित्तपोषण के लिए सामूहिक दृष्टिकोण अपनाना ।

उक्त समिति की अन्य महत्वपूर्ण सिफारिशें हैं - वंचित क्षेत्रों में स्वयं-सहायता समूहों (एसएचजी) को प्रोत्साहित करना; स्वयं-सहायता समूहों (एसएचजी) के लिए कानूनी हैसियत; शहरी व्यष्टि-वित्त और एमएफआइ की अलग श्रेणी के लिए उपाय ।

**संदर्भ :**

भारत सरकार. 2008 । *भारत में वित्तीय समावेशन संबंधी समिति की रिपोर्ट (अध्यक्ष : डॉ. सी. रंगराजन)* । जनवरी ।

पूँजी सब्सिडी का दावा करेंगे । हिताधिकारियों को ऋण का संवितरण करने के बाद बैंक की संबंधित शाखा तिमाही आधार पर राज्य वितरण-माध्यम एजेंसियों से ब्याज की सब्सिडी का दावा करेगी ।

7.69 यह स्वीकार करते हुए कि वित्तीय वंचन के लिए जानकारी का अभाव एक प्रमुख कारक है, रिज़र्व बैंक वित्तीय साक्षरता और ऋण संबंधी परामर्श की दिशा में अनेक उपाय कर रहा है । रिज़र्व बैंक ने ''परियोजना वित्तीय साक्षरता'' नामक एक परियोजना प्रारंभ की है । इस परियोजना का उद्देश्य केंद्रीय बैंक और सामान्य बैंक अवधारणाओं के संबंध में स्कूल और कालेज जानेवाले बच्चों, महिलाओं, ग्रामीण और शहरी निर्धनों, रक्षा कार्मिकों, और वरिष्ठ नागरिकों सहित विभिन्न लक्ष्य समूहों को सूचना का प्रसार करना है । इसका प्रसार लक्ष्यीकृत श्रोताओं तक अन्यों के साथ-साथ बैंकों, स्थानीय सरकारी तंत्र, स्कूलों और कालेजों की सहायता से प्रस्तुतियों, पैम्फलेटों, विवरणिकाओं, फिल्मों के माध्यम से एवं रिज़र्व बैंक की वेबसाइट द्वारा किया जाएगा ।

7.70 इसके अलावा, वित्तीय साक्षरता को बढ़ावा देने के लिए 18 जून 2007 को रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकिंग और आम आदमी से संबंधित सभी विषयों पर 13 भारतीय भाषाओं में एक बहुभाषी वेबसाइट शुरू की गई। स्कूली बच्चों को बैंकिंग से परिचित करानेवाली कॉमिक स्वरूप की पुस्तकें भी 14 नवंबर 2007 को रिज़र्व बैंक की वेबसाइट पर रखी गईं । इसी प्रकार की पुस्तकें ग्रामीण परिवारों, शहरी निर्धनों, रक्षा कार्मिकों, महिलाओं और छोटे उद्यमियों जैसे विभिन्न लक्ष्य समूहों के लिए तैयार की जाएँगी। वित्तीय साक्षरता कार्यक्रम राज्य सरकारों और राज्य-स्तरीय बैंकर समिति (एसएलबीसी) की सक्रिय संबद्धता के साथ प्रत्येक राज्य में प्रारंभ किये जा रहे हैं । रिज़र्व बैंक भी ऋण संबंधी परामर्श देने के लिए उपाय शुरू करता रहा है । प्रत्येक एसएलबीसी के संयोजक से कहा गया है कि वे प्रायोगिक तौर पर एक जिले में एक ऋण-परामर्श केंद्र स्थापित करें और यथासमय अन्य सभी जिलों में इसका विस्तार करें । वित्तीय साक्षरता और ऋण परामर्श संबंधी एक संकल्पना-पत्र (कान्सेप्ट पेपर) तैयार किया गया है और जनता के अभिमतों के लिए रिज़र्व बैंक की वेबसाइट पर रखा गया है तथा इस संबंध में प्राप्त प्रतिक्रियाओं की जाँच की जा रही है ।

7.71 भारत ने वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए एक बहु-आयामी कार्यनीति का अनुसरण किया है । वैश्विक अनुभव से भी यह संकेत मिलता है कि जो देश दृष्टिकोणों में विविधता की अनुमति देते हैं उनके लिए बेहतर परिणाम उपलब्ध होने की संभावना रहती है । दृष्टिकोणों में विविधता न सिर्फ वित्तीय सेवाओं के लिए वैविध्यपूर्ण माँग की बेहतर पूर्ति करती है, बल्कि वह प्रणालीगत जोखिमों को कम करती है, प्रतियोगिता बढ़ाती है तथा कार्यकुशलता में भी सुधार लाती है । कई अन्य देशों ने भी लगभग इसी प्रकार का दृष्टिकोण अपनाया है (बॉक्स VII.12)।

7.72 वित्तीय वंचन की समस्या अनेक उन्नत देशों में भी पाई गई है । इन देशों ने भी वित्तीय रूप से वंचित लोगों को बैंकिंग प्रणाली के दायरे में लाने के लिए विशिष्ट उपाय प्रारंभ किये हैं । शुरू किये गये उपायों में अन्य बातों के साथ-साथ शामिल हैं - प्रथाओं की स्वैच्छिक संहिता, विधि-निर्माण द्वारा समर्थित मानदंड, मूलभूत बैंक खाते और वित्तीय सहायता प्राप्त (सब्सिडाइज्ड) खाते (बॉक्स VII.13)।

### बॉक्स VII.12
### चयनित देशों में वित्तीय समावेशन की कार्यनीति

ऐतिहासिक रूप से अनेक देशों में सरकारों ने वित्तीय सेवाओं तक पहुँच की समस्या का समाधान करने के लिए विभिन्न प्रकार से आपूर्ति के संबंध में मध्यस्थता की । निर्धन और निम्न आय वाले लोगों की औपचारिक वित्तीय सेवाओं तक पहुँच को व्यापक बनाने के लिए धार्मिक और अन्य नागरिक सामाजिक संगठनों ने भी माँग की है । इन उपायों में शामिल हैं (i) निजी बैंकों का राष्ट्रीयकरण; (ii) शाखा विनियमावली; (iii) राष्ट्रीय बचत बैंकों सहित विशेषीकृत बैंकों को बढ़ावा देना: (iv) संविभाग संरचना संबंधी निदेश ; (v) निम्न आय वाले परिवारों को ऋण के संबंध में ब्याज-दर की उच्चतम सीमाएँ तथा प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्रों को सब्सिडीकृत दरों पर ऋण की व्यवस्था; (vi) बैंकों द्वारा स्वयं ही विकसित किया गया स्वैच्छिक संहिता-पत्र (चार्टर ऑफ कोड्स); (vii) औपचारिक बैंकिंग सेवाओं तक पहुँच के अधिकार को परिभाषित करते हुए कानूनों का अधिनियमन; (viii) सरकारों द्वारा अधिकार-प्राप्त और समर्पित एजेंसियों की स्थापना; (ix) नवोन्मेषणों, ऋण वितरण की मौजूदा संरचनाओं में सुधारों एवं डाक घरों और पासपोर्ट खातों जैसी वर्तमान मूलभूत व्यवस्था के मिश्रण का उपयोग करते हुए सरकारों द्वारा और बैंकों द्वारा स्वयं प्रायोजित की गई योजनाओं सहित, विशेषीकृत और प्रायोजित योजनाओं का संचालन; (x) साहूकारों के परिचालनों का सामना करना, तथा (xi) समुदाय-आधारित बचत और ऋण समितियाँ तथा म्यूच्युअल बचत बैंक, जिन्हें एक प्रकार से आधुनिक व्यष्टि-वित्त आंदोलन के अग्रदूतों के रूप में देखा जा सकता है ।

उदाहरण के लिए, बंगला देश में सरकार ने वित्त की सीमा को निर्धनों के लिए आगे बढ़ाने में अग्रणी भूमिका निभाने के लिए गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) को आवश्यक स्थान उपलब्ध कराने तथा *ग्रामीण* बैंक की स्थापना को सुसाध्य बनाने के साथ, निम्न आय वाले परिवारों के लिए ऋण और जमा सेवाओं तक पहुँच उपलब्ध कराने के लिए सरकारी स्वामित्व वाले *कृषि* बैंक एवं बिल्डिंग रिसोर्सेस एक्रॉस कम्यूनिटी (बीआरएसी) का व्यापक तौर पर उपयोग करना जारी रखा। श्रीलंका और पाकिस्तान सहित अधिकांश एशियाई देशों ने भी वंचित लोगों तक बैंकिंग सेवाओं का विस्तार करने के लिए निजी बैंकों के राष्ट्रीयकरण का सहारा लिया और निम्न आय वाले खंडों की सेवा के लिए सरकारी स्वामित्व वाले नये बैंकों की स्थापना की । इस कार्यनीति में अन्य बातों के साथ-साथ शामिल हैं व्यष्टि-वित्त विकास योजनाएं, शाखा नेटवर्कों का विस्तार, इस्लामिक बैंकिंग का संवर्धन तथा ग्रामीण जनता तक पहुँचने के लिए नई सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के प्रयोग का उन्नयन ।

**संदर्भ :**

1. केम्पसन ई. ए., एटकिनसन और ओ. पिल्ले. 2004 । ''पालिसी लेवल रेस्पांस टू फाइनैंशियल एक्सक्लूज़न इन डेवलप्ड इकनॉमीज़ : लेसन्स फॉर डेवलपिंग कंट्रीज़।'' यूनिवर्सिटी ऑफ ब्रिस्टल ।
2. विश्व बैंक, 2008 । *फाइनैंस फॉर आल - पॉलिसी एण्ड पिटफाल्स इन एक्सपैंडिंग ऐक्सेस ।* विश्व बैंक, वाशिंगटन, डी.सी. ।

## बॉक्स VII.13
## विभिन्न देशों में वित्तीय समावेशन की पहलें

| देश | विधान/साधन/नीतिगत योजना | उद्देश्य |
|---|---|---|
| युनाइटेड किंगडम | सामाजिक वंचन यूनिट (एसईयू), 1997 | सामाजिक वंचन को कम करना, वित्तीय समावेशन जिसका एक अभिन्न अंग है |
| | नीतिगत कार्रवाई टीमें (पीएटी) | निर्धन पड़ोसियों की समस्याओं परएक समन्वित तरीके से ध्यान देना |
| | उचित व्यापार कार्यालय | 1. उपभोक्ता संरक्षण कानून और प्रतियोगिता कानून को लागू करना<br>2. प्रस्तावित विलयों की समीक्षा और बाजार अध्ययन का संचालन करना |
| | वित्तीय समावेशन कार्यदल | 1. बैंकिंग तक पहुँच, वहनीय ऋण तक पहुँच<br>2. निःशुल्क प्रत्यक्ष धन संबंधी परामर्श तक पहुँच |
| | वित्तीय समावेशन निधि | 1. बैंकिंग सेवाओं तक पहुँच<br>2. वहनीय ऋण तक पहुँच<br>3. धन संबंधी परामर्श तक पहुँच |
| संयुक्त राज्य अमरीका | सामुदायिक पुनर्निवेश अधिनियम, 1977 | 1. निम्न और साधारण आय वाले पड़ोसियों के विरुद्ध बैंकों द्वारा भेदभाव का निषेध करता है<br>2. निम्न आय वाले परिवारों को बंधक ऋण उपलब्ध कराना<br>3. बैंकों की रेटिंग हर तीन वर्ष में सामुदायिक ऋण आवश्यकताएँ पूरी करने में उनके प्रयासों पर निर्धारित की जाती है |
| | समतुल्य बचत योजना (एमएसएस), 1997 | 1. व्यक्तिगत विकास खातों (आइडीए)में वैयक्तिक बचत की समतुल्य राशि स्थानीय और राष्ट्रीय निधियों द्वारा दी जाती है<br>2. समतुल्यीकृत धनराशि का व्यय शिक्षा, व्यवसाय या घरेलू खरीद जैसे निर्धारित उपयोगों के दायरे में किसी एक के लिए करना होगा |
| फ्रांस | बैंकिंग अधिनियम, 1984 | 1. फ्रांसीसी राष्ट्रीयता से युक्त किसी भी व्यक्ति को किसी भी बैंक में खाता खोलने का अधिकार है<br>2. यदि अस्वीकृत किया गया तो अपकृत व्यक्ति एक बैंक को नामित करने के लिए बांक द फ्रांस को आवेदन कर सकता है तथा नामित बैंक को खाता खोलना होगा |
| | फ्रांसीसी बैंकर संघ (1992 का मूलभूत बैंकिंग सेवा चार्टर) | निम्नलिखित को उपलब्ध कराने के लिए प्रतिबद्ध<br>• वहनीय खाता<br>• नकदी कार्ड<br>• नकदी मशीन तक निःशुल्क प्रवेश<br>• दूरस्थ भुगतान सुविधाएँ<br>• बैंक विवरण<br>• चेकों की परक्राम्य संख्या |
| | वंचन संबंधी कानून, 1998 | 1. 1984 के बैंकिंग अधिनियम को दोहराया<br>2. खराब ऋण इतिहास के कारण वारित व्यक्तियों को लेनदेन खाते का अधिकार प्रदत्त<br>3. नकारे गये चेक के लिए सुधार हेतु एक अतिरिक्त महीने की अनुमति दी गई |
| आस्ट्रेलिया | आस्ट्रेलियन बैंकर संघ (एबीए) व्यवहार संहिता, 1995 | 1. 2002 में सामान्य खाता प्रारंभ किया गया<br>2. निम्न आय वाले ग्राहकों को स्टाफ द्वारा उपयुक्त खातों के बारे में जानकारी दी जानी है<br>3. शाखा बंद होने के बाद भी प्रत्यक्ष बैंकिंग सेवाएँ *फ्रैंचाइजिंग* जैसे वैकल्पिक माध्यमों द्वारा उपलब्ध कराना<br>4. किसी भी शाखा को बंद करने से पहले ग्राहकों को तीन महीने की लिखित सूचना देना |
| | ग्रामीण रूपांतरण केंद्र कार्यक्रम (आरटीसीपी) | 1. बैंकिंग सुविधाओं से रहित समुदायों को बैंकिंग और अन्य लेनदेन सेवाएँ उपलब्ध कराना<br>2. वर्तमान भंडारों और डाक घरों या एकल केंद्रों का उपयोग करना<br>3. डाक घरों में इलेक्ट्रॉनिक बिक्री केंद्र (ईपीओएस) उपकरण संस्थापित करना |
| बेल्जियम | मूलभूत बैंकिंग सेवाओं संबंधी चार्टर, 1996 | 1. न्यूनतम शेष राशि और ओवरड्राफ्ट सुविधाओं से रहित मूलभूत बैंक खाता उपलब्ध कराना<br>2. जमा अंतरण, प्रत्यक्ष नामे, तथा जमा और आहरण की सुविधाएँ<br>3. यदि अस्वीकृत हो तो ग्राहक को अवश्य कारण बताना होगा अर्थात् धन शोधन, खराब ऋण इतिहास आदि |
| | मूलभूत बैंकिंग अधिनियम, 2003 | यदि मूलभूत बैंकिंग सेवाओं संबंधी चार्टर, 1996 के सिद्धांतों को लागू नहीं किया गया तो दंड का विधान |
| कनाडा | मूलभूत बैंकिंग सेवा विनियमावली, 2003 तक पहुँच | 1. रोजगार या ऋण इतिहास का विचार किये बिना सभी कनाडियनों के लिए न्यूनतम पहचान की अपेक्षाओं सहित वैयक्तिक बैंक खाते<br>2. बैंकों/वित्तीय संस्थाओं को किसी प्रभार के बिना सरकारी चेक भुनाने होंगे |
| | कनाडा की वित्तीय उपभोक्ता एजेंसी (एफसीएसी), 2001 | 1. कनाडा के बैंक अधिनियम के अंतर्गत उपभोक्ताओं संबंधी पर्यवेक्षी व्यवस्थाएँ<br>2. मूलभूत बैंकिंग तक पहुँच<br>3. उपभोक्ता संरक्षण उपाय और उपभोक्ता शिक्षण का विस्तार<br>4. ग्रामीण बैंकिंग अर्थात् यह अपेक्षित होगा कि शाखा बंद होने की स्थिति में बैंक को चार महीने की सूचना तथा यदि 10 कि.मी. के दायरे में वह एकमात्र शाखा है तो छह महीने की सूचना देनी होगी |

7.73 सारांश के तौर पर रिज़र्व बैंक और सरकार द्वारा बेहतर बैंकिंग व्यापन और अधिक प्रसार (आउटरीच) को सुनिश्चित करने के लिए संस्थागत ढाँचे का एक विस्तृत तंत्र स्थापित किया गया है ताकि बैंकों को इस प्रयोजन के लिए अपनी स्वयं की नीतियाँ और कार्यनीतियाँ विकसित करने के लिए पर्याप्त लचीलेपन की अनुमति देते हुए कृषि और छोटे उद्यमों की ऋण आवश्यकताएं पूरी की जा सकें । जबकि भारत में वित्तीय समावेशन के लिए नीतिगत पहलें 1960 के दशक के उत्तरार्ध में प्रारंभ हुईं, 1970 और 1980 के दशकों में न्यायसंगत वृद्धि को सुनिश्चित करने के लिए ऋण को सरणीबद्ध करने पर ध्यान केंद्रित किया गया । 1990 और 2000 के दशकों में व्यष्टि-ऋण वित्तीय समावेशन के लिए एक मुख्य साधन के रूप में उभरा है ।

## V. भारत में वित्तीय समावेशन/वंचन का मूल्यांकन

7.74 जैसी कि पिछले खंड में चर्चा की गई है, वित्तीय सेवाओं तक पहुँच को व्यापक बनाना सामान्य रूप से वित्तीय क्षेत्र की नीतियों और विशेष रूप से बैंकिंग क्षेत्र की नीतियों का एक प्रमुख उद्देश्य रहा है । भारत में बैंकिंग क्षेत्र तक पहुँच को व्यापक बनाने के प्रति पहलें 1960 के दशक के उत्तरार्ध में शुरू हुईं । जैसा कि अध्याय III में विवरण दिया गया है, बैंकिंग क्षेत्र की नीतियाँ विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में औपचारिक वित्तीय प्रणाली के दायरे से बाहर रह गए आबादी के एक बड़े खंड के संबंध में निरंतर चिंता के उपलक्ष्य में बनाई गईं । 1960 के दशक से वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए रिज़र्व बैंक और भारत सरकार द्वारा की गई पहलों ने औपचारिक वित्तीय संस्थाओं तक पहुँच में काफी सुधार किया है । अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के अलावा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, सहकारी बैंकों और समितियों, डाक घरों और बीमा कंपनियों ने जनता की वित्तीय आवश्यकताएँ पूरी करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । तथापि, वित्तीय समावेशन के विभिन्न पहलुओं की प्रगति के संबंध में व्यापक सूचना तत्काल उपलब्ध नहीं है । अतः इस खंड में विश्लेषण विभिन्न स्रोतों से प्राप्त आंशिक सूचना के खंडों पर आधारित है, जैसे राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ) द्वारा एक दशक में एक बार जारी किया जानेवाला अखिल भारतीय ऋण और निवेश सर्वेक्षण (एआइडीआइएस)[6] तथा समय-समय पर रिज़र्व बैंक द्वारा प्रकाशित विभिन्न बैंकिंग संबंधी आंकड़े । यह विश्लेषण एनसीईएआर-मैक्स न्यूयार्क लाइफ एवं इंडिया इन्वेस्ट मार्केट सोल्यूशन्स (आइआइएमएस) द्वारा किये गये सर्वेक्षणों पर आधारित सूचना/आंकड़ों द्वारा भी संपूरित है । एनएसएसओ द्वारा जारी किया गया नवीनतम सर्वेक्षण संदर्भ वर्ष 2002 से संबंधित है जो 143,285 परिवारों (ग्रामीण क्षेत्र में 91,192 और शहरी क्षेत्र में 52,093) के नमूना आकार के साथ है जोकि देश में परिवारों की कुल संख्या (203.4 मिलियन) का 0.07 प्रतिशत बनता है । उक्त एनसीएईआर-मैक्स न्यूयार्क लाइफ सर्वेक्षण वर्ष 2004-05 के लिए 63,016 परिवारों के नमूना आकार के साथ किया गया जिनका उपयोग 205.9 मिलियन परिवारों के लिए अनुमान लगाने के प्रयोजन से किया गया था । उक्त आइआइएमएस सर्वेक्षण वर्ष 2006-07 के लिए 100,000 उत्तरदाताओं के नमूने के आधार पर देश में 321 मिलियन अर्जकों के लिए अनुमान उपलब्ध कराते हुए किया गया था । अर्जक की परिभाषा एक ऐसे व्यक्ति के रूप में दी गई जो 18-59 वर्ष की आयु का है और कुछ नकदी आय प्राप्त करता है ।

7.75 उक्त एनएसएसओ और अन्य एजेंसियों द्वारा किये गये सर्वेक्षण के आंकड़ों, तथा अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूलभूत सांख्यिकीय विवरणियों (बीएसआर) के माध्यम से प्राप्त बैंकिंग संबंधी आंकड़ों के अलावा, पीएसीएस, शहरी सहकारी बैंकों, डाक घरों, बीमा कंपनियों एवं एसएचजी/एमएफआइ से संबंधित आंकड़ों का भी विश्लेषण किया गया। चूँकि विभिन्न आंकड़ों के सेट विभिन्न पद्धतियों और परिभाषाओं पर आधारित हैं, अतः विभिन्न आंकड़ों के सेटों का प्रतिपादन और उनकी तुलना करते समय सावधानी बरतने की आवश्यकता है । एनएसएसओ के नवीनतम आंकड़े 2002 के साथ समाप्त दशक से संबंधित हैं । हाल के वर्षों में कृषि क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता में वृद्धि करने तथा विशेष रूप से निम्न आय वाले खंडों को बैंकिंग सेवाओं तक पहुँच उपलब्ध कराने के लिए अनेक पहलें की गई हैं । अतः वित्तीय समावेशन की वर्तमान स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए 2002 के बाद के आंकड़ों को भी ध्यान में रखने की आवश्यकता है । इस प्रयोजन के लिए बीएसआर डाटा का उपयोग किया गया है । एनएसएसओ के एआइडीआइएस सर्वेक्षण से केवल परिवारों की ऋणग्रस्तता के संबंध में ही सूचना मिलती है; इससे बचत जमाराशियों के बारे में सूचना उपलब्ध नहीं होती । दूसरी ओर, बीएसआर आंकड़ों की प्रमुख सीमा एक ही व्यक्ति के द्वारा धारित बहुविध खाते हैं जिससे वित्तीय समावेशन/वंचन की सीमा के बारे में पक्के निष्कर्ष निकालना कठिन हो जाता है । इस प्रकार इस खंड में भारत में वित्तीय समावेशन की प्रगति के मूल्यांकन का जो प्रयास किया गया है, वह संबंधित आंकड़ों/सूचना की कुछ सीमाओं और अनुपलब्धता के अधीन है।

### वित्तीय समावेशन : ऋण का पहलू *(सर्वेक्षणों पर आधारित विश्लेषण)*

7.76 राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ) का अखिल भारतीय ऋण और निवेश सर्वेक्षण (एआइडीआइएस), जो सर्वप्रथम रिज़र्व बैंक द्वारा 1951 में अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण के रूप में प्रारंभ किया गया था, परिवारों की ऋणग्रस्तता के स्वरूप के संबंध में सूचना उपलब्ध कराता है । यह सर्वेक्षण दशकीय आधार पर संचालित किया जाता है । फिर भी, पहले तीन सर्वेक्षणों ने केवल ग्रामीण परिवारों के संबंध में ही सूचना का संग्रहण किया था । 1981 में चौथे सर्वेक्षण से प्रारंभ करके शहरी परिवारों की ऋणग्रस्तता के संबंध में भी सूचना उपलब्ध करायी गयी है ।

6 अखिल भारतीय ऋण और निवेश सर्वेक्षण (एआइडीआइएस) के पहले दो दौरों को रिज़र्व बैंक द्वारा प्रकाशित किया गया ।

7.77 ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या समग्र रूप में एवं कुल परिवारों के प्रतिशत के रूप में भी 1961 और 1981 के बीच की अवधि के दौरान तेजी से घट गई। फिर भी, उसके बाद परिवारों की ऋणग्रस्तता ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या के रूप में तथा कुल परिवारों के प्रतिशत के रूप में ऋणग्रस्त परिवारों की स्थिति दोनों के तौर पर, शहरी क्षेत्रों में कुल परिवारों के संबंध में ऋणग्रस्त दोनों परिवारों की संख्या में सीमांत रूप में गिरावट को छोड़कर ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में उल्लेखनीय रूप में बढ़ गई। कुल मिलाकर भारत में 1991 के लगभग 22 प्रतिशत की तुलना में 2002 में भारत में कुल परिवारों का लगभग 24 प्रतिशत ऋणग्रस्त था। कुल ऋणग्रस्त परिवारों में ग्रामीण ऋणग्रस्त परिवारों का अंश 1991 के लगभग 77 प्रतिशत से बढ़कर 2002 में लगभग 80 प्रतिशत हो गया। ऋणग्रस्तता (कुल परिवारों के प्रतिशत के रूप में ऋणग्रस्त परिवार) शहरी क्षेत्रों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक थी। इसके अलावा, ग्रामीण/शहरी ऋणग्रस्तता के बीच अंतर 1991 की तुलना में 2002 में विस्तृत हो गया (सारणी 7.4)। 2008 में एनसीएईआर द्वारा जारी किये गये एक और सर्वेक्षण के अनुसार जून 2005 की समाप्ति पर सभी भारतीय परिवारों का 23.9 प्रतिशत (49.2 मिलियन) बकाया ऋणों से ग्रस्त था जिसमें से शहरी क्षेत्रों का अनुपात 20.9 प्रतिशत (12.8 मिलियन) और ग्रामीण क्षेत्रों में यह अनुपात 25.2 प्रतिशत (36.4 मिलियन) था (एनसीएईआर, 2008)।

7.78 सर्वेक्षणों के विभिन्न दौरों के अनुसार ग्रामीण परिवारों के बकाया ऋण की कुल राशि सांकेतिक तौर पर पिछले सभी चारों दशकों (1960, 1970, 1980 और 1990 के दशकों) में उल्लेखनीय रूप में बढ़ी। शहरी परिवारों का बकाया कर्ज भी 1980 और 1990 के दशकों में बढ़ा। 1990 के दशक में ग्रामीण परिवारों के कर्ज में वृद्धि सांकेतिक और वास्तविक दोनों तौर पर किसी भी दशक में हुई सबसे अधिक वृद्धि थी। 1991-2002 के दौरान ग्रामीण क्षेत्रों में सांकेतिक तौर पर बकाया कर्ज 15.8 प्रतिशत की वार्षिक चक्रवृद्धि दर से बढ़ा, जबकि वास्तविक तौर पर उसमें 8.5 प्रतिशत (1980 के दशक में 4.3 प्रतिशत) की वृद्धि हुई। शहरी क्षेत्रों में बकाया कर्ज सांकेतिक और वास्तविक दोनों रूप में 1991 और 2002 के बीच ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में कुछ निम्नतर दर से बढ़ा (सारणी 7.5)।

7.79 ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में वास्तविक रूप में प्रति ऋणग्रस्त परिवार बकाया कर्ज 1991 और 2002 के बीच तेजी से बढ़ा (सारणी 7.6)।

7.80 ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में ऋणग्रस्तता सामान्यतः आय के स्तरों में वृद्धि के साथ ही बढ़ी [जो आस्ति धारण करनेवाली श्रेणियों (एएचसी)द्वारा निरूपित है]। ग्रामीण और शहरी परिवारों में विभिन्न एएचसी के अंतर्गत ऋणग्रस्तता का स्वरूप 1991 और 2002 के बीच मोटे तौर पर अपरिवर्तित रहा (सारणी 7.7)। उच्चतर एएचसी में ऋणग्रस्तता में वृद्धि अन्य बातों के साथ-साथ समर्थक जमानत (कॉलेटरल) प्रस्तुत करने के द्वारा उधार लेने की उनकी बढ़ी हुई क्षमता,

**सारणी 7.4 : ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या**

(मिलियन)

| जून का अंत | ग्रामीण | शहरी | कुल |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| 1961 | 43.1<br>(62.8) | @ | 43.1@<br>(62.8) |
| 1971 | 31.8<br>(41.3) | @ | 31.8@<br>(41.3) |
| 1981 | 18.2<br>(19.4) | 5.0<br>(17.2) | 23.2<br>(18.9) |
| 1991 | 27.2<br>(23.4) | 8.1<br>(19.3) | 35.3<br>(22.3) |
| 2002 | 39.2<br>(26.5) | 9.9<br>(17.8) | 49.1<br>(24.1) |

@: 1961 और 1971 के सर्वेक्षणों के लिए केवल ग्रामीण परिवारों संबंधी सूचना ही संगृहीत की गई।

**टिप्पणी** : कोष्ठक में आंकड़े कुल परिवारों के प्रतिशत के रूप में ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या दर्शाते हैं।

**स्रोत** : एआइडीआइएस सर्वेक्षण; विभिन्न दौर।

**सारणी 7.5 : परिवारों का बकाया ऋण**

(राशि करोड़ रुपये में)

| जून का अंत | ग्रामीण | शहरी | कुल |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| 1961 | 2,789<br>(21.4) | @ | 2,789 @<br>(21.4) |
| 1971 | 3,752<br>(12.2) | @ | 3,752 @<br>(12.2) |
| 1981 | 6,193<br>(6.2) | 3,023<br>(4.3) | 9,216<br>(5.4) |
| 1991 | 22,211<br>(6.3) | 15,232<br>(5.1) | 37,443<br>(5.7) |
| 2002 | 1,11,468<br>(9.4) | 65,327<br>(5.1) | 1,76,795<br>(7.2) |
| सांकेतिक रूप में संयोजित वार्षिक वृद्धि दर (प्रतिशत) | | | |
| 1961-71 | 3.0 | @ | 3.0 @ |
| 1971-81 | 5.1 | @ | 5.1 * |
| 1981-91 | 13.6 | 17.6 | 15.0 |
| 1991-2002 | 15.8 | 14.2 | 15.2 |
| 1999-2000 की कीमतों पर संयोजित वार्षिक वृद्धि दर (प्रतिशत) | | | |
| 1961-71 | -3.2 | @ | -3.2 @ |
| 1971-81 | -3.7 | @ | -3.7 * |
| 1981-91 | 4.3 | 7.9 | 5.6 |
| 1991-2002 | 8.5 | 7.0 | 7.9 |

@: 1961 और 1971 के सर्वेक्षणों के लिए केवल ग्रामीण परिवारों संबंधी सूचना ही संगृहीत की गई।

* : ग्रामीण परिवारों से संबंधित।

**टिप्पणी** : कोष्ठक में आंकड़े चालू बाजार कीमतों पर जीडीपी का प्रतिशत हैं। चालू बाजार कीमतों पर ग्रामीण/शहरी जीडीपी की गणना कुल एनडीपी में ग्रामीण/शहरी एनडीपी के अंश को प्रयुक्त कर की गई, जो राष्ट्रीय लेखा सांख्यिकी, केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन (सीएसओ) में प्रकाशित है।

**स्रोत** : एआइडीआइएस सर्वेक्षण, विभिन्न दौर।

### सारणी 7.6 : प्रति ऋणग्रस्त परिवार बकाया ऋण

(रुपये)

| जून का अंत | ग्रामीण | शहरी | कुल |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| | | सांकेतिक रूप | |
| 1961 | 647 | @ | 647@ |
| 1971 | 1,180 | @ | 1,180@ |
| 1981 | 3,411 | 5,996 | 3,972 |
| 1991 | 8,166 | 18,805 | 10,607 |
| 2002 | 28,443 | 65,983 | 36,006 |
| | | 1999-00 की कीमतों पर | |
| 1961 | 12,629 | @ | 12,629@ |
| 1971 | 12,356 | @ | 12,356@ |
| 1981 | 14,904 | 26,200 | 17,359 |
| 1991 | 15,105 | 34,785 | 19,621 |
| 2002 | 25,711 | 59,645 | 32,548 |

@: 1961 और 1971 के सर्वेक्षणों के लिए केवल ग्रामीण परिवारों संबंधी सूचना ही संगृहीत की गई ।

**स्रोत :** एआइडीआइएस सर्वेक्षण, विभिन्न दौर ।

### सारणी 7.7 : परिवारों की ऋणग्रस्तता - आस्ति धारिता-वार*

(प्रतिशत)

| आस्ति धारिता (रु.'000) | जून 1991 का अंत | | आस्ति धारिता (रु.'000) | जून 2002 का अंत | |
|---|---|---|---|---|---|
| | ग्रामीण | शहरी | | ग्रामीण | शहरी |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 |
| 5 से कम | 11.8 | 9.6 | 15 से कम | 15.0 | 10.7 |
| 5-10 | 19.9 | 13.8 | 15-30 | 19.0 | 14.8 |
| 10-20 | 20.3 | 18.1 | 30-60 | 25.2 | 14.8 |
| 20-30 | 24.1 | 17.2 | 60-100 | 26.5 | 18.3 |
| 30-50 | 24.5 | 19.6 | 100-150 | 28.9 | 19.7 |
| 50-70 | 23.9 | 20.1 | 150-200 | 28.7 | 20.0 |
| 70-100 | 24.0 | 22.6 | 200-300 | 28.7 | 19.9 |
| 100-150 | 26.9 | 24.7 | 300-450 | 28.7 | 18.7 |
| 150-250 | 25.6 | 25.8 | 450-800 | 31.0 | 22.5 |
| 250 से अधिक | 29.7 | 25.2 | 800 से अधिक | 32.9 | 21.4 |
| **सभी** | **23.4** | **19.3** | **सभी** | **26.5** | **17.8** |

*: प्रत्येक आस्ति धारिता श्रेणी (एएचसी) के अंतर्गत कुल परिवारों के प्रतिशत के रूप में ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या दर्शाता है।

**स्रोत :** एनएसएसओ 48वें और 59वें दौर के सर्वेक्षण ।

ऋणदाताओं के विश्वास के संवर्धित स्तर, ऐसे परिवारों की उच्चतर वित्तपोषण की आवश्यकताओं और वित्त के विभिन्न स्रोतों की उपलब्धता के बारे में उनकी जानकारी के कारण थी ।

7.81 संस्थागत (सरकार, सहकारी समितियाँ और बैंक) और गैर-संस्थागत (भूस्वामी और साहूकार) स्रोत स्थूल रूप से ऐसे दो मुख्य स्रोत हैं जिनसे परिवार उधार लेते हैं । 1981 और 1991 के बीच संस्थागत स्रोतों के प्रति ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या तेजी से बढ़ी, जबकि गैर-संस्थागत स्रोतों के प्रति ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या तदनुरूप घट गई। 1991 और 2002 के बीच दोनों ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में समग्र रूप में संस्थागत स्रोतों के प्रति ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या लगातार बढ़ती रही। तथापि, पिछले तीन दशकों की प्रवृत्ति को उलटते हुए कुल ऋणग्रस्त परिवारों में संस्थागत स्रोतों के प्रति ऋणग्रस्त परिवारों का अंश कम हुआ, जबकि गैर-संस्थागत स्रोतों के प्रति ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या बढ़ गई। यह गिरावट ग्रामीण परिवारों के बीच अपेक्षाकृत अधिक सुस्पष्ट थी और यह सभी तीनों प्रमुख संस्थागत एजेंसियों अर्थात् सरकारी विभागों, सहकारी समितियों और वाणिज्य बैंकों का सहारा लेने में आई कमी के कारण थी (सारणी 7.8)। वित्तीय समावेशन संबंधी समिति की रिपोर्ट (भारत सरकार, 2008) के अनुसार एनएसएसओ के डेटा के मुताबिक कुल 89.3 मिलियन परिवारों में से देश में 45.9 मिलियन किसान परिवारों की संस्थागत अथवा गैर-संस्थागत स्रोतों से ऋण तक पहुँच नहीं है । परिवारों के बकाया ऋण के स्वरूप में भी लगभग ऐसी ही प्रवृत्ति पाई गई। संस्थागत स्रोतों का अंश, जो 1981 और 1991 के बीच तेजी से बढ़ा था, 1991 और 2002 के बीच घट गया (सारणी 7.9)।

7.82 आय के स्तरों को द्योतित करनेवाले विभिन्न एएचसी में परिवारों की ऋणग्रस्तता का स्वरूप यह दर्शाता है कि ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में निम्नतर आय समूहों द्वारा गैर-संस्थागत स्रोतों का आश्रय लेना अपेक्षाकृत अधिक है । दूसरे शब्दों में, जैसे-जैसे आय के स्तर ऊपर उठते हैं, वैसे ही गैर-संस्थागत स्रोतों से उधार लेनेवाले लोगों का अनुपात घटने की प्रवृत्ति दर्शाता है (सारणी 7.10)।

7.83 आइआइएमएस द्वारा किये गये इन्वेस्ट इंडिया आय और बचत सर्वेक्षण (2007)[7] से भी इसकी पुष्टि होती है जो यह संकेत करता है कि उच्चतर आय स्तर वाले अर्जक गैर-संस्थागत स्रोतों की तुलना में संस्थागत स्रोतों से अधिक उधार लेते हैं । इस सर्वेक्षण में यह पाया गया कि 50,000 रुपये से कम के आय-वर्ग के अर्जकों के मामले में दर्ज केवल 27.5 प्रतिशत की तुलना में 400,000 रुपये से अधिक के वार्षिक आय वर्ग में आनेवाले अर्जकों में से 70 प्रतिशत ने संस्थागत स्रोतों से उधार लिया (सारणी 7.11)।

7.84 गैर-संस्थागत स्रोतों पर निम्न आय वाले परिवारों की अपेक्षाकृत रूप में बढ़ी हुई निर्भरता अनेक उपादानों के कारण हो सकती है । निम्न आय स्तरों पर अपेक्षाओं में सामान्य रूप से ऐसे प्रयोजनों के लिए उधार शामिल हैं जिनके लिए संस्थागत स्रोतों से ऋण तत्काल उपलब्ध नहीं होते । औपचारिक वित्तीय प्रणाली का सहारा लेने के लिए

[7] इस सर्वेक्षण ने 100 हजार उत्तरदाताओं के नमूने के आधार पर देश में 321 मिलियन अर्जकों के लिए अनुमान उपलब्ध कराये ।

### सारणी 7.8 : ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या - संस्थागत *बनाम* गैर-संस्थागत स्रोत

(जून के अंत में)

| ऋण एजेंसी | ग्रामीण | | | | | शहरी | | | कुल | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1961 | 1971 | 1981 | 1991 | 2002 | 1981 | 1991 | 2002 | 1981 | 1991 | 2002 |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 | 12 |
| | | | | | मिलियन | | | | | | |
| **I. संस्थागत एजेंसियाँ** | **7.5** | **7.6** | **8.9** | **18.2** | **19.8** | **2.3** | **4.9** | **5.2** | **11.2** | **23.1** | **25.0** |
| | – | **(0.2)** | **(1.5)** | **(7.4)** | **(0.8)** | – | **(7.9)** | **(0.4)** | – | **(7.5)** | **(0.7)** |
| *जिनमें से :* | | | | | | | | | | | |
| (i) सरकार | 3.7 | 2.6 | 1.0 | 2.0 | 1.2 | 0.5 | 1.0 | 0.6 | 1.4 | 2.9 | 1.7 |
| (ii) सहकारी समितियाँ | 6.9 | 5.9 | 6.1 | 7.8 | 10.2 | 1.1 | 2.0 | 2.0 | 7.1 | 9.8 | 12.2 |
| | – | (-1.5) | (0.3) | (2.6) | (2.5) | – | (6.9) | (-0.2) | – | (3.3) | (2.0) |
| (iii) वाणिज्य बैंक | 0.3 | 0.3 | 2.9 | 8.7 | 8.4 | 0.7 | 1.5 | 1.8 | 3.6 | 10.3 | 10.2 |
| | – | (2.1) | (24.0) | (11.6) | (-0.3) | – | (8.2) | (1.3) | – | (11.0) | (-0.1) |
| **II. सभी गैर-संस्थागत एजेंसियाँ** | **35.6** | **24.2** | **9.3** | **11.4** | **22.9** | **2.7** | **3.9** | **5.2** | **12.0** | **15.3** | **28.1** |
| | – | **(-3.8)** | **(-9.1)** | **(2.1)** | **(6.5)** | – | **(3.7)** | **(2.6)** | – | **(2.5)** | **(5.7)** |
| *जिनमें से :* | | | | | | | | | | | |
| (i) भूस्वामी | 0.6 | 3.6 | 1.1 | 1.3 | 0.6 | 0.1 | 0.1 | 0.1 | 1.2 | 1.4 | 0.6 |
| (ii) कृषिगत साहूकार | 22.0 | 8.2 | 2.4 | 2.7 | 4.9 | 0.1 | 0.2 | 0.1 | 2.5 | 2.8 | 5.0 |
| (iii) पेशेवर साहूकार | 7.6 | 5.0 | 1.9 | 3.6 | 10.2 | 0.8 | 1.4 | 2.7 | 2.7 | 5.0 | 12.9 |
| **III. सभी एजेंसियाँ** | **43.1** | **31.8** | **18.2** | **27.2** | **39.2** | **5.0** | **8.1** | **9.9** | **23.2** | **35.3** | **49.1** |
| | – | **(-3.0)** | **(-5.5)** | **(4.1)** | **(3.4)** | – | **(4.8)** | **(1.9)** | – | **(4.3)** | **(3.0)** |
| | | | | | कुल ऋणग्रस्त परिवारों में से प्रतिशत | | | | | | |
| **I. संस्थागत एजेंसियाँ** | **17.3** | **24.0** | **48.8** | **66.7** | **50.6** | **46.0** | **61.1** | **52.2** | **48.2** | **65.4** | **50.9** |
| *जिनमें से :* | | | | | | | | | | | |
| (i) सरकार | 8.6 | 8.3 | 5.4 | 7.3 | 3.0 | 9.0 | 11.9 | 5.6 | 6.2 | 8.3 | 3.5 |
| (ii) सहकारी समितियाँ | 15.9 | 18.5 | 33.4 | 28.6 | 26.0 | 20.9 | 25.4 | 20.2 | 30.7 | 27.9 | 24.9 |
| (iii) वाणिज्य बैंक | 0.6 | 1.1 | 16.0 | 32.1 | 21.5 | 14.0 | 19.2 | 18.0 | 15.5 | 29.1 | 20.8 |
| **II. सभी गैर-संस्थागत एजेंसियाँ** | **82.7** | **76.0** | **51.2** | **41.9** | **58.5** | **54.0** | **48.7** | **52.8** | **51.8** | **43.4** | **57.3** |
| *जिनमें से :* | | | | | | | | | | | |
| (i) भूस्वामी | 1.4 | 11.2 | 6.2 | 4.7 | 1.5 | 1.4 | 1.0 | 0.6 | 5.1 | 3.9 | 1.3 |
| (ii) कृषिगत साहूकार | 51.0 | 25.8 | 13.2 | 9.8 | 12.5 | 2.2 | 2.1 | 1.1 | 10.8 | 8.1 | 10.2 |
| (iii) पेशेवर साहूकार | 17.7 | 15.7 | 10.5 | 13.2 | 26.0 | 16.4 | 17.6 | 27.5 | 11.8 | 14.2 | 26.3 |
| **III. सभी एजेंसियाँ** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** |

– : उपलब्ध नहीं

**टिप्पणी :** 1. कोष्ठक में आंकड़े संयोजित वार्षिक संवृद्धि दरें हैं ।

2. बहुविध एजेंसियों से उधार के कारण संभव है, उप-घटकों का जोड़ कुल से मेल न खाए ।

**स्रोत :** अखिल भारतीय ऋण और निवेश सर्वेक्षण (एआइडीआइएस), विभिन्न दौर ।

समर्थक जमानत (कॉलेटरल) देने में असमर्थता एक और महत्वपूर्ण कारक हो सकता है । दूसरी ओर, ग्रामीण और शहरी दोनों परिवारों में संस्थागत स्रोतों के प्रति उच्चतर एएचसी की अधिकाधिक ऋणग्रस्तता उधार लेने के लिए उनकी बढ़ी हुई क्षमता, उधारदाताओं के उन पर बढ़े हुए विश्वास के स्तर, ऐसे परिवारों की उच्चतर वित्तपोषण की आवश्यकताओं तथा वित्त के विभिन्न स्रोतों की उपलब्धता के बारे में उनकी अपेक्षाकृत अधिक जानकारी के कारण हो सकती है ।

7.85 एनएसएसओ के सर्वेक्षण के 59वें दौर के अनुसार बकाया घरेलू ऋण में गैर-संस्थागत स्रोतों का अंश 1991 की तुलना में 2002 में तेजी से बढ़ा । 1991 और 2002 के बीच समग्र घरेलू ऋण में वृद्धि और गैर-संस्थागत स्रोतों के प्रति ऋणग्रस्त परिवारों के अंश में वृद्धि के लिए प्रमुख कारण विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में वर्तमान कृषि व्यय और घरेलू व्यय में उल्लेखनीय वृद्धि थी (सारणी 7.12)। 'घरेलू व्यय' के अंतर्गत शामिल हैं - आवासीय भूखंड खरीदने पर किया गया व्यय; आवासीय प्रयोजनों के लिए भवन की खरीद, निर्माण, संवर्धन/परिवर्तन; अन्यों के साथ-साथ टिकाऊ घरेलू परिसंपत्तियों, वस्त्रों की खरीद एवं डाक्टरी चिकित्सा, शिक्षा, विवाह और पारिवारिक अनुष्ठानों के संबंध में व्यय (अनुबंध VII.1)। इस प्रकार 'घरेलू

### सारणी 7.9 : परिवारों का बकाया ऋण - संस्थागत *बनाम* गैर-संस्थागत स्रोत

(जून के अंत में)

| ऋण एजेंसी | ग्रामीण | | | | | | शहरी | | | कुल | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1951 | 1961 | 1971 | 1981 | 1991 | 2002 | 1981 | 1991 | 2002 | 1981 | 1991 | 2002 |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 | 12 | 13 |
| | | | | | राशि करोड़ रुपये में | | | | | | | |
| **I. संस्थागत एजेंसियां** | **–** | **413** | **1,094** | **3,794** | **14,215** | **63,648** | **1,813** | **10,662** | **49,060** | **5,606** | **24,878** | **1,12,708** |
| | **–** | **–** | **(10.2)** | **(13.2)** | **(14.1)** | **(14.6)** | **–** | **(19.4)** | **(14.9)** | **–** | **(16.1)** | **(14.7)** |
| *जिनमें से :* | | | | | | | | | | | | |
| (i) सरकार | – | 147 | 250 | 247 | 1,355 | 2,564 | 443 | 1,691 | 4,965 | 689 | 3,046 | 7,529 |
| (ii) सहकारी समितियाँ | – | 255 | 753 | 1,773 | 4,798 | 30,431 | 528 | 2,620 | 13,392 | 2,302 | 7,417 | 43,823 |
| | – | – | (11.4) | (8.9) | (10.5) | (18.3) | – | (17.4) | (16.0) | – | (12.4) | (17.5) |
| (iii) वाणिज्य बैंक | – | 12 | 82 | 1,736 | 7,485 | 27,310 | 679 | 3,290 | 19,402 | 2,415 | 10,775 | 46,712 |
| | – | – | (21.6) | (35.7) | (15.7) | (12.5) | – | (17.1) | (17.5) | – | (16.1) | (14.3) |
| **II. सभी गैर-संस्थागत एजेंसियाँ** | **–** | **2,376** | **2,658** | **2,399** | **7,996** | **47,820** | **1,210** | **4,570** | **16,266** | **3,610** | **12,566** | **64,086** |
| | **–** | **–** | **(1.1)** | **(-1.0)** | **(12.8)** | **(17.7)** | **–** | **(14.2)** | **(12.2)** | **–** | **(13.3)** | **(16.0)** |
| *जिनमें से :* | | | | | | | | | | | | |
| (i) भूस्वामी | – | 25 | 324 | 247 | 888 | 1,115 | 30 | 91 | 131 | 276 | 980 | 1,245 |
| (ii) कृषिगत साहूकार | – | 1,281 | 867 | 531 | 1,577 | 11,147 | 109 | 152 | 588 | 640 | 1,729 | 11,735 |
| (iii) पेशेवर साहूकार | – | 416 | 517 | 512 | 2,332 | 21,848 | 269 | 1,401 | 8,623 | 781 | 3,734 | 30,471 |
| **III. सभी एजेंसियाँ** | **–** | **2,789** | **3,752** | **6,193** | **22,211** | **1,11,468** | **3,023** | **15,232** | **65,327** | **9,216** | **37,443** | **1,76,795** |
| | – | **–** | **(3.0)** | **(5.1)** | **(13.6)** | **(15.8)** | – | **(17.6)** | **(14.2)** | – | **(15.0)** | **(15.2)** |
| | | | | | कुल बकाया ऋण में से प्रतिशत | | | | | | | |
| **I. संस्थागत एजेंसियां** | **7.2** | **14.8** | **29.2** | **61.3** | **64.0** | **57.1** | **60.0** | **70.0** | **75.1** | **60.8** | **66.4** | **63.8** |
| *जिनमें से :* | | | | | | | | | | | | |
| (i) सरकार | 3.7 | 5.3 | 6.7 | 4.0 | 6.1 | 2.3 | 14.6 | 11.1 | 7.6 | 7.5 | 8.1 | 4.3 |
| (ii) सहकारी समितियाँ | 3.5 | 9.1 | 20.1 | 28.6 | 21.6 | 27.3 | 17.5 | 17.2 | 20.5 | 25.0 | 19.8 | 24.8 |
| (iii) वाणिज्य बैंक | * | 0.4 | 2.2 | 28.0 | 33.7 | 24.5 | 22.5 | 21.6 | 29.7 | 26.2 | 28.8 | 26.4 |
| **II. सभी गैर-संस्थागत एजेंसियाँ** | **92.8** | **85.2** | **70.8** | **38.7** | **36.0** | **42.9** | **40.0** | **30.0** | **24.9** | **39.2** | **33.6** | **36.2** |
| *जिनमें से :* | | | | | | | | | | | | |
| (i) भूस्वामी | 3.5 | 0.9 | 8.6 | 4.0 | 4.0 | 1.0 | 1.0 | 0.6 | 0.2 | 3.0 | 2.6 | 0.7 |
| (ii) कृषिगत साहूकार | 25.2 | 45.9 | 23.1 | 8.6 | 7.1 | 10.0 | 3.6 | 1.0 | 0.9 | 6.9 | 4.6 | 6.6 |
| (iii) पेशेवर साहूकार | 46.4 | 14.9 | 13.8 | 8.3 | 10.5 | 19.6 | 8.9 | 9.2 | 13.2 | 8.5 | 10.0 | 17.2 |
| **III. सभी एजेंसियाँ** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** |

– : . उपलब्ध नहीं।  * : सहकारी समितियों के अंतर्गत सम्मिलित।

**टिप्पणी :** कोष्ठक में आंकड़े संयोजित वार्षिक वृद्धि दरें हैं ।

**स्रोत :** अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण, 1951-52, एवं एआइडीआइएस के विभिन्न दौर ।

व्यय' में ऐसी कई मदें शामिल हैं जिनके लिए संस्थागत स्रोतों से ऋण प्राप्त करने में परिवार कठिनाई महसूस कर सकते हैं ।

7.86 हाल की अवधि के लिए इन्वेस्ट इंडिया आय और बचत सर्वेक्षण (आइआइएमएस, 2007) भी यह सूचित करता है कि परिवारों द्वारा ऋण का एक बड़ा अंश वित्तीय आपात, चिकित्सा आपात और सामाजिक दायित्व पूरे करने के लिए लिया जाता है । ऋणग्रस्त अर्जकों द्वारा प्राप्त किये गये ऋणों का लगभग 53 प्रतिशत इन तीनों प्रयोजनों के लिए लिया गया है । इसके अलावा, गैर-संस्थागत स्रोतों के प्रति ऋणग्रस्त 60 प्रतिशत से अधिक अर्जकों ने उपर्युक्त तीनों प्रयोजनों के लिए ऋण लिये हैं (सारणी 7.13)। आपात की स्थितियों के मामले में लोगों को अपनी ऋण आवश्यकताओं के लिए गैर-संस्थागत स्रोतों से संपर्क करना सुविधाजनक लग सकता है । उदाहरण के लिए वित्तीय आपात स्थितियों में शामिल हैं - अन्य बातों के साथ-साथ कारोबार के संबंध में अनियोजित व्यय, उपभोग और विवाह जिनके लिए वित्त बैंकों और अन्य संस्थागत एजेंसियों द्वारा प्रदान नहीं किया जाता ।

**सारणी 7.10 : संस्थागत और गैर-संस्थागत ऋण एजेंसियों में ऋणग्रस्त परिवारों का वितरण***

(प्रतिशत)

| आस्ति धारिता (रु.'000) | जून 1991 के अंत में संस्थागत | गैर-संस्थागत | सभी | आस्ति धारिता (रु.'000) | जून 2002 के अंत में संस्थागत | गैर-संस्थागत | सभी |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 |
| | | | ग्रामीण परिवार | | | | |
| 5 से कम | 44.9 | 62.7 | 107.6 | 15 से कम | 24.0 | 80.0 | 104.0 |
| 5-10 | 49.2 | 51.8 | 101.0 | 15-30 | 32.6 | 73.2 | 105.8 |
| 10-20 | 52.7 | 53.2 | 105.9 | 30-60 | 34.5 | 70.2 | 104.8 |
| 20-30 | 64.3 | 39.4 | 103.7 | 60-100 | 41.1 | 66.8 | 107.9 |
| 30-50 | 62.4 | 44.9 | 107.3 | 100-150 | 47.1 | 61.9 | 109.0 |
| 50-70 | 66.1 | 42.3 | 108.4 | 150-200 | 50.9 | 59.6 | 110.5 |
| 70-100 | 70.0 | 40.0 | 110.0 | 200-300 | 56.4 | 54.7 | 111.1 |
| 100-150 | 72.1 | 41.6 | 113.8 | 300-450 | 65.2 | 46.0 | 111.1 |
| 150-250 | 78.9 | 34.4 | 113.3 | 450-800 | 71.0 | 41.9 | 112.9 |
| 250 से अधिक | 85.9 | 26.6 | 112.5 | 800 से अधिक | 81.2 | 31.3 | 112.5 |
| **सभी** | **66.7** | **41.9** | **108.5** | **सभी** | **50.6** | **58.5** | **109.1** |
| | | | शहरी परिवार | | | | |
| 5 से कम | 30.2 | 75.0 | 105.2 | 15 से कम | 13.1 | 88.8 | 101.9 |
| 5-10 | 35.5 | 73.2 | 108.7 | 15-30 | 16.2 | 86.5 | 102.7 |
| 10-20 | 48.6 | 59.1 | 107.7 | 30-60 | 30.4 | 74.3 | 104.7 |
| 20-30 | 47.1 | 53.5 | 100.6 | 60-100 | 39.3 | 65.0 | 104.4 |
| 30-50 | 57.1 | 54.6 | 111.7 | 100-150 | 42.1 | 61.9 | 104.1 |
| 50-70 | 59.7 | 52.2 | 111.9 | 150-200 | 44.5 | 60.0 | 104.5 |
| 70-100 | 54.9 | 51.8 | 106.6 | 200-300 | 55.8 | 50.8 | 106.5 |
| 100-150 | 76.9 | 40.9 | 117.8 | 300-450 | 64.7 | 43.9 | 108.6 |
| 150-250 | 67.8 | 43.0 | 110.9 | 450-800 | 75.1 | 32.0 | 107.1 |
| 250 से अधिक | 84.1 | 27.4 | 111.5 | 800 से अधिक | 86.4 | 19.6 | 106.1 |
| **सभी** | **61.1** | **48.7** | **109.8** | **सभी** | **52.2** | **52.8** | **105.1** |

* : प्रत्येक एएचसी के अंतर्गत संस्थागत और गैर-संस्थागत स्रोतों के बीच ऋणग्रस्त परिवारों के वितरण प्रतिशत
**टिप्पणी :** कुल जोड़ 100 से अधिक हो जाता है क्योंकि कुछ परिवारों ने दोनों स्रोतों से उधार लिया है ।
**स्रोत :** एनएसएसओ, 48वें और 59वें दौर के सर्वेक्षण ।

7.87 वित्तीय समावेशन का मूल्यांकन करने के लिए, कम से कम ऋण की उपलब्धता के निर्धारण हेतु एआइडीआइएस आंकड़ों के लिए एकल सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्रोत है । जैसा कि पहले संकेत किया गया है, इस डेटा स्रोत के अनुसार 1991 और 2002 के बीच परिवारों के ऋण में संस्थागत स्रोतों का अंश घटा, जबकि गैर-संस्थागत स्रोतों का अंश बढ़ गया । तथापि, विस्तृत विश्लेषण से यह संकेत मिलता है कि 1990 के दशक में संस्थागत स्रोतों ने मोटे तौर पर 1980 के दशक में देखी गई गति से ही ऋण प्रदान करना जारी रखा जैसा कि निम्नलिखित बिंदुओं से सिद्ध होता है। पहला, ऋणग्रस्त परिवारों की कुल संख्या एवं ग्रामीण क्षेत्रों में कुल परिवारों के प्रतिशत के रूप में ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या, जो 1961 और 1981 के बीच उल्लेखनीय रूप में घट गई थी, 1981 और 1991 के बीच थोड़ी तथा 1991 और 2002 के बीच तेजी से बढ़ गई । ग्रामीण परिवारों का बकाया ऋण, जो 1961 और 1981 के बीच जीडीपी के संबंध में कम हुआ था, 1981 और 1991 के बीच सीमांत रूप से तथा 1991 और 2002 के बीच उल्लेखनीय रूप में बढ़ गया । इसके परिणामस्वरूप, ग्रामीण क्षेत्रों में आस्ति की तुलना में ऋण का अनुपात 1981 के 19.9 प्रतिशत से उल्लेखनीय रूप में बढ़कर 1991 में 23.4 प्रतिशत हुआ तथा आगे और बढ़कर 2002 में 26.5 प्रतिशत हो गया । तथापि, 1991 और 2002 के बीच बढ़ी हुई ऋणग्रस्तता का एक प्रमुख कारण ऋणग्रस्त ग्रामीण परिवारों की संख्या में तीव्र वृद्धि थी जिन्होंने वर्तमान कृषि-व्यय के लिए, जिसकी उत्पादकता अन्य बातों के साथ-साथ मानसून और अन्य उपादानों पर निर्भर है, एवं घरेलू व्यय के लिए उधार लिया। परिणामतः सापेक्ष रूप में 1991 और 2002 के बीच संस्थागत स्रोतों का अंश उल्लेखनीय रूप में घट गया । मात्रात्मक रूप में बैंकों के प्रति ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या 1991 और 2002 के बीच लगभग एक ही स्तर पर बनी रही, जबकि सहकारी समितियों के प्रति ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या बढ़ गई (सारणी 7.8 देखें)। संस्थागत एजेंसियों से प्राप्त बकाया घरेलू ऋण 1991 और 2002 के बीच 14.7 प्रतिशत की वार्षिक संयोजित (कांपाउंड) दर पर बढ़ा, जो 1981 और 1991

## सारणी 7.11 : आय समूहों द्वारा ऋणों के स्रोत - आइआइएमएस सर्वेक्षण*

(ऋणग्रस्त अर्जकों@ का प्रतिशत)

| ऋण एजेंसियाँ/वार्षिक आय का दायरा | 50,000 रु. से कम | 50,000 रु. से 1,00,000 रु. | 100,000 रु. से 200,000 रु. | 200,000 रु. से 400,000 रु. | 400,000 रु. से अधिक | कुल |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| **I. संस्थागत स्रोत** | **27.5** | **46.0** | **59.4** | **60.2** | **70.5** | **32.8** |
| (i) बैंक | 13.0 | 34.5 | 49.3 | 51.6 | 62.8 | 19.1 # |
| (ii) सहकारी समितियाँ | 4.9 | 6.7 | 8.6 | 3.6 | 4.1 | 5.3 |
| (iii) व्यष्टि वित्त संस्थाएँ | 1.1 | 1.0 | 0.7 | 0.5 | 2.4 | 1.1 |
| (iv) स्वयं-सहायता समूह | 8.5 | 3.9 | 0.8 | 4.5 | 1.2 | 7.3 |
| **II. गैर-संस्थागत स्रोत** | **72.5** | **54.0** | **40.6** | **39.8** | **29.5** | **67.2** |
| (i) रिश्तेदार/मित्र | 35.1 | 32.1 | 26.5 | 22.2 | 22.1 | 33.9 |
| (ii) साहूकार | 34.9 | 19.6 | 12.0 | 11.8 | 5.5 | 30.8 |
| (iii) अन्य | 2.5 | 2.3 | 2.1 | 5.8 | 1.9 | 2.5 |
| **III. कुल** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** |

* : उत्तरदाताओं ने सूचित किया कि उन्होंने सर्वेक्षण की तारीख से पहले पूर्ववर्ती दो वर्षों में विभिन्न एजेंसियों से ऋण लिये हैं । सर्वेक्षण जुलाई 2007 में समाप्त हुआ।

@ : अर्जक की परिभाषा ऐसे व्यक्ति के रूप में दी गई है जो 18-59 वर्ष का है और कुछ नकदी आय प्राप्त करता है ।

# : उक्त सर्वेक्षण के अनुसार लगभग 15 मिलियन अर्जकों ने बैंकों से ऋण लिए हैं, जो बीएसआर डाटा के अनुसार 2005-07 के दौरान बैंकों द्वारा खोले गए 17 मिलियन अतिरिक्त ऋण खातों से तुलनीय हैं ।

**टिप्पणी :** बहुविध एजेंसियों से ऋण लेने के कारण ऋण लेने की सूचना देनेवाले उत्तरदाताओं के प्रतिशत में अधि-अनुमान (ओवर एस्टिमेशन) हो सकता है ।

**स्रोत :** इन्वेस्ट इंडिया मार्केट सोल्यूशन्स (आइआइएमएस), 2007।

के बीच 16.1 प्रतिशत की संवृद्धि दर के साथ लगभग तुलनीय है । बैंकों से प्राप्त घरेलू परिवारों का ऋण 1991 और 2002 के बीच 14.3 प्रतिशत की संयोजित (कांपाउंड) दर से बढ़ा जो 1981 और 1991 के बीच 16.1 प्रतिशत की वार्षिक संयोजित संवृद्धि दर से मामूली तौर पर कम था । तथापि, सहकारी समितियों से प्राप्त बकाया ऋण 1981 और 1991 के बीच के 12.4 प्रतिशत की तुलना में 1991 और

## सारणी 7.12 : परिवारों द्वारा लिये गये ऋणों का प्रयोजन - एनएसएसओ सर्वेक्षण

(जून के अंत में)

| ऋण का प्रयोजन | 1991 | | 2002 | | 1991 | | 2002 | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | ग्रामीण | शहरी | ग्रामीण | शहरी | ग्रामीण | शहरी | ग्रामीण | शहरी |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| | **ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या (मिलियन)** | | | | **बकाया ऋण (करोड़ रुपये)** | | | |
| **I. खेती व्यवसाय** | **6.3** | **0.3** | **15.1** | **0.5** | **5,442** | **545** | **45,702** | **3,397** |
| (i) चालू व्यय | 1.3 | 0.0 | 7.5 | 0.2 | 600 | 15 | 15,828 | 1,241 |
| (ii) पूँजीगत व्यय | 3.0 | 0.2 | 8.1 | 0.3 | 2,665 | 378 | 29,873 | 2,156 |
| **II. कृषीतर कारोबार** | **3.3** | **1.2** | **4.3** | **1.5** | **2,865** | **3,163** | **13,376** | **12,869** |
| (i) चालू व्यय | 0.9 | 0.3 | 1.2 | 0.5 | 444 | 605 | 3,121 | 2,090 |
| (ii) पूँजीगत व्यय | 1.7 | 0.6 | 3.1 | 1.1 | 1,288 | 1,634 | 10,255 | 10,779 |
| **III. घरेलू व्यय** | **12.4** | **6.3** | **22.9** | **8.2** | **8,840** | **11,152** | **52,390** | **49,060** |
| **IV. अविनिर्दिष्ट** | **6.3** | **0.4** | **–** | **–** | **5,064** | **372** | **–** | **–** |
| **V. कुल** | **27.2** | **8.1** | **39.2** | **9.9** | **22,211** | **15,232** | **1,11,468** | **65,327** |
| | **कुल में से प्रतिशत** | | | | | | | |
| **I. खेती व्यवसाय** | **23.2** | **3.6** | **38.5** | **5.1** | **24.5** | **3.6** | **41.0** | **5.2** |
| (i) चालू व्यय | 4.7 | 0.5 | 19.2 | 2.2 | 2.7 | 0.1 | 14.2 | 1.9 |
| (ii) पूँजीगत व्यय | 11.1 | 2.1 | 20.8 | 2.8 | 12.0 | 2.5 | 26.8 | 3.3 |
| **II. कृषीतर कारोबार** | **12.0** | **14.9** | **10.9** | **15.2** | **12.9** | **20.8** | **12.0** | **19.7** |
| (i) चालू व्यय | 3.4 | 4.1 | 3.0 | 5.1 | 2.0 | 4.0 | 2.8 | 3.2 |
| (ii) पूँजीगत व्यय | 6.4 | 7.8 | 7.9 | 10.7 | 5.8 | 10.7 | 9.2 | 16.5 |
| **III. घरेलू व्यय** | **45.6** | **77.5** | **58.5** | **82.6** | **39.8** | **73.2** | **47.0** | **75.1** |
| **IV. अविनिर्दिष्ट** | **23.1** | **4.7** | **–** | **–** | **22.8** | **2.4** | **–** | **–** |
| **V. कुल** | **@** | **@** | **@** | **@** | **100.0** | **100.0** | **100.0** | **100.0** |

@ : ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या के संबंध में उप-जोड़ो का योग 100 से अधिक हो सकता है क्योंकि ऋण एक परिवार द्वारा एक से अधिक प्रयोजनों के लिए लिये गये होंगे।

**टिप्पणी :** 1991 के लिए कृषि और कृषीतर कारोबार में अन्य व्यय भी शामिल है।

**स्रोत :** एनएसएसओ, 48वें और 59वें दौर के सर्वेक्षण ।

## सारणी 7.13 : अर्जकों द्वारा लिए गए ऋणों का प्रयोजन - आइआइएमएस सर्वेक्षण 2007

| ऋण का प्रयोजन | ऋण लेनेवाले अर्जकों की संख्या (मिलियन) | | | ऋण लेनेवाले अर्जकों में से प्रतिशत | | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | ग्रामीण | शहरी | कुल | ग्रामीण | शहरी | कुल |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| **सभी स्रोतों से** | | | | | | |
| 1. मकान/भूमि/स्थावर संपदा की खरीद | 6.8 | 2.1 | 8.9 | 8.9 | 13.9 | 9.7 |
| 2. वाहन की खरीद | 1.9 | 1.0 | 2.9 | 2.5 | 6.3 | 3.1 |
| 3. उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं की खरीद | 3.1 | 0.8 | 3.9 | 4.1 | 5.1 | 4.3 |
| 4. वित्तीय आपात स्थिति का सामना करना | 20.2 | 4.7 | 24.9 | 26.3 | 31.0 | 27.1 |
| 5. कारोबार की आवश्यकताओं के लिए | 7.1 | 2.1 | 9.2 | 9.3 | 14.0 | 10.0 |
| 6. चिकित्सा संबंधी आपात स्थिति | 12.5 | 1.8 | 14.3 | 16.3 | 11.7 | 15.5 |
| 7. खेती/फसल ऋण | 11.2 | 0.2 | 11.4 | 14.6 | 1.2 | 12.4 |
| 8. सामाजिक दायित्व पूरे करने के लिए | 7.1 | 1.1 | 8.2 | 9.2 | 7.5 | 8.9 |
| 9. अन्य उपभोग के प्रयोजनों के लिए | 3.3 | 0.7 | 4.0 | 4.3 | 4.5 | 4.3 |
| 10. शैक्षणिक ऋण | 1.9 | 0.4 | 2.3 | 2.4 | 2.9 | 2.5 |
| 11. अन्य | 1.6 | 0.3 | 1.9 | 2.1 | 2.0 | 2.0 |
| **कुल (1 से 11)** | **76.6** | **15.1** | **91.8** | **100.0** | **100.0** | **100.0** |
| **संस्थागत स्रोतों से** | | | | | | |
| 1. मकान/भूमि/स्थावर संपदा की खरीद | 2.8 | 1.1 | 3.8 | 11.4 | 20.1 | 13.0 |
| 2. वाहन की खरीद | 1.1 | 0.6 | 1.6 | 4.4 | 10.9 | 5.5 |
| 3. उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं की खरीद | 1.1 | 0.3 | 1.3 | 4.4 | 5.2 | 4.5 |
| 4. वित्तीय आपात स्थिति का सामना करना | 4.8 | 1.3 | 6.1 | 19.6 | 24.9 | 20.6 |
| 5. कारोबार की आवश्यकताओं के लिए | 3.2 | 0.9 | 4.1 | 13.0 | 17.1 | 13.8 |
| 6. चिकित्सा संबंधी आपात स्थिति | 2.0 | 0.3 | 2.3 | 8.1 | 6.0 | 7.7 |
| 7. खेती/फसल ऋण | 6.6 | 0.1 | 6.7 | 27.2 | 2.3 | 22.7 |
| 8. सामाजिक दायित्व पूरे करने के लिए | 1.2 | 0.3 | 1.5 | 5.1 | 4.8 | 5.0 |
| 9. अन्य उपभोग के प्रयोजनों के लिए | 0.7 | 0.2 | 0.9 | 2.8 | 3.5 | 2.9 |
| 10. शैक्षणिक ऋण | 0.5 | 0.2 | 0.7 | 2.2 | 3.3 | 2.4 |
| 11. अन्य | 0.4 | 0.1 | 0.5 | 1.8 | 1.9 | 1.8 |
| **कुल (1 से 11)** | **24.2** | **5.3** | **29.5** | **100.0** | **100.0** | **100.0** |
| **गैर-संस्थागत स्रोतों से** | | | | | | |
| 1. मकान/भूमि/स्थावर संपदा की खरीद | 4.1 | 1.0 | 5.1 | 7.7 | 10.5 | 8.2 |
| 2. वाहन की खरीद | 0.8 | 0.4 | 1.2 | 1.6 | 3.8 | 2.0 |
| 3. उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं की खरीद | 2.1 | 0.5 | 2.6 | 4.0 | 5.0 | 4.1 |
| 4. वित्तीय आपात स्थिति का सामना करना | 15.4 | 3.4 | 18.8 | 29.4 | 34.3 | 30.2 |
| 5. कारोबार की आवश्यकताओं के लिए | 3.9 | 1.2 | 5.2 | 7.5 | 12.3 | 8.3 |
| 6. चिकित्सा संबंधी आपात स्थिति | 10.5 | 1.5 | 12.0 | 20.1 | 14.8 | 19.2 |
| 7. खेती/फसल ऋण | 4.6 | 0.1 | 4.7 | 8.8 | 0.6 | 7.5 |
| 8. सामाजिक दायित्व पूरे करने के लिए | 5.8 | 0.9 | 6.7 | 11.1 | 9.0 | 10.8 |
| 9. अन्य उपभोग के प्रयोजनों के लिए | 2.6 | 0.5 | 3.1 | 5.0 | 5.0 | 5.0 |
| 10. शैक्षणिक ऋण | 1.3 | 0.3 | 1.6 | 2.5 | 2.7 | 2.6 |
| 11. अन्य | 1.1 | 0.2 | 1.3 | 2.2 | 2.0 | 2.1 |
| **कुल (1 से 11)** | **52.4** | **9.9** | **62.3** | **100.0** | **100.0** | **100.0** |

**स्रोत :** इन्वेस्ट इंडिया आय और बचत सर्वेक्षण, 2007।

2002 के बीच 17.5 प्रतिशत की एक उच्चतर वार्षिक संयोजित दर से बढ़ा (सारणी 7.9 देखें)। यह भी ध्यान देने योग्य महत्वपूर्ण बात है कि ये संवृद्धि दरें एक बड़े आधार पर प्राप्त की गईं क्योंकि 1981 और 1991 के बीच संवृद्धि दर उल्लेखनीय रूप से अधिक थी ।

7.88 दूसरे, परिवारों को बैंक ऋण में हुई कुछ कमी को 1990 के दशक में बैंकों के क्षत तुलन-पत्रों के कारण बैंकों के व्यवहार में परिवर्तन के संदर्भ में देखने की आवश्यकता है । 1990 के दशक के दौरान बैंकों की स्थिति एक प्रमुख चिंता बन गई थी, जिसके परिणामस्वरूप उनका फोकस ऋण संविभाग के विस्तार से सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश द्वारा तुलन-पत्रों को मजबूत बनाने की ओर अंतरित हुआ जिसमें जोखिम समायोजित प्रतिलाभ उच्चतर समझे गये । 1990 के दशक के प्रारंभ में विवेकपूर्ण मानदंडों को सख्त बनाने के बाद बैंक भी जोखिम

से कुछ विमुख हो गए । परिणामस्वरूप, कृषि सहित सभी क्षेत्रों को बैंकिंग क्षेत्र द्वारा समग्र ऋण वृद्धि 1980 के दशक की तुलना में 1990 के दशक में उल्लेखनीय रूप में मंद हुई जिसका विवरण अध्याय VI में दिया गया है। इस प्रकार परिवारों को दिये जानेवाले ऋण में मंदी बैंक ऋण में समग्र मंदी के अनुरूप ही थी।

7.89 तीसरे, परिवारों को ऋण में आई मंदी को कृषि और संबद्ध कार्यकलापों में मंदी के संदर्भ में भी देखे जाने की आवश्यकता है । कृषि उत्पादन के सूचकांक ने 1980 के दशक के 3.5 प्रतिशत की तुलना में एनएसएसओ सर्वेक्षण की अवधि के दौरान (48वें और 59वें दौर के बीच) 0.6 प्रतिशत की एक निम्न वार्षिक वृद्धि दर्शाई (सारणी 7.14)। इसने बैंकिंग प्रणाली से कृषिगत निवेश के प्रयोजनों के लिए कम कृषि माँग को प्रेरित किया होगा । चूंकि निम्नतर आय वाले परिवार सामान्यतः अपनी घरेलू उपभोग आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए गैर-संस्थागत स्रोतों का अत्यधिक सहारा लेते हैं, अतः ग्रामीण आय में अपेक्षाकृत मंद वृद्धि ने ऐसे परिवारों को अपनी ऋण आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए गैर-संस्थागत स्रोतों से संपर्क करने के लिए प्रेरित किया होगा । जैसा कि पहले संकेत किया गया है, एनएसएसओ डेटा के अनुसार 1991 और 2002 के बीच गैर-संस्थागत स्रोतों के प्रति ऋणग्रस्तता में वृद्धि निम्नतर एएचसी के मामले में अधिक सुस्पष्ट थी। चौथे, 1990 के दशक की ऋण माफी ने भी समग्र ऋण संस्कृति और कृषि ऋणों के प्रति बैंकों के रुख को प्रभावित किया होगा।

7.90 पाँचवें, एनएसएसओ सर्वेक्षण का अंतिम दौर वर्ष 2002 से संबंधित था । उसके बाद जरूरतमंद क्षेत्रों को ऋण की उपलब्धता में सुधार लाने के लिए सरकार/रिज़र्व बैंक द्वारा अनेक नीतिगत पहलें की गई हैं । इन उपायों का वित्तीय समावेशन पर एक उल्लेखनीय सकारात्मक प्रभाव रहा जैसा कि बीएसआर और डेटा के अन्य स्रोतों के आधार पर निम्नलिखित खंड में किये गये विश्लेषण द्वारा स्पष्ट है ।

**सारणी 7.14 : कृषि में और बैंक ऋण में वार्षिक औसत वृद्धि दरें**

(प्रतिशत)

| अवधि* | कृषि और संबद्ध कार्यकलाप # | कृषि उत्पादन का सूचकांक | खाद्येतर बैंक ऋण | कृषि को बैंक ऋण |
|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 |
| 1981-82 से 1991-92 | 3.0 | 3.5 | 16.4 | 16.1 |
| 1991-92 से 2002-03 | 2.3 | 0.6 | 15.4 | 13.2 |

* : एनएसएसओ सर्वेक्षणों के क्रमिक दौरों के बीच की अवधि का द्योतन करता है ।
# : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन (सीएसओ) द्वारा जारी किये गये जीडीपी डेटा पर आधारित ।
**स्रोत :** भारतीय अर्थव्यवस्था संबंधी सांख्यिकी की पुस्तिका, 2006-07; भारतीय रिज़र्व बैंक ।

**बैंकों/अन्य संस्थाओं के आंकड़ों के आधार पर विश्लेषण**

7.91 जहाँ एक ओर एनएसएसओ, आइआइएमएस और एनसीएईआर/मैक्स न्यूयार्क लाइफ जैसे मौजूदा सर्वेक्षण परिवारों से संबंधित सूचना उपलब्ध कराते हैं, वहीं दूसरी ओर बीएसआर और अन्य संस्थागत स्रोत संस्थाओं से संबंधित सूचना/आंकड़े केवल ऋण संबंधी ही नहीं, बल्कि जमाराशियों में वृद्धि के संबंध में भी उपलब्ध कराते हैं । सर्वेक्षणों की विभिन्न सीमाओं को ध्यान में रखते हुए तथा वित्तीय समावेशन की एक अद्यतन स्थिति प्राप्त करने के लिए भी, वाणिज्य बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, शहरी सहकारी बैंकों, प्राथमिक कृषि ऋण समितियों (पीएसीएस), और डाक घरों जैसे अन्य संस्थागत स्रोतों से उपलब्ध डेटा की जाँच करना भी उपयोगी है । इस प्रकार, अगले खंड में किये गये विश्लेषण में वित्तीय सेवाओं के लिए संस्थागत नेटवर्क, साधनों और मूलभूत संरचना की उपलब्धता सहित विभिन्न परिदृश्यों से वित्तीय समावेशन का मूल्यांकन किया गया है । जैसा कि पिछले खंड में विस्तार से बताया गया है, वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए हाल के वर्षों में अनेक पहलें की गई हैं । जून 2004 में केंद्र सरकार ने 'कृषि ऋण पैकेज' की घोषणा की थी जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ आगामी तीन वर्षों में कृषि को संस्थागत ऋण की उपलब्धता को दुगुनी करना निर्धारित किया गया था। वास्तव में कृषि क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता दो वर्ष के बाद निर्धारित समयावधि से पहले ही दुगुनी हो गई । केंद्रीय बजट 2008-09 में 2008-09 के दौरान कृषि ऋण के लिए 280,000 करोड़ रुपये का लक्ष्य निर्धारित किया गया है । क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, जिनकी स्थापना ग्रामीण क्षेत्र के प्रति ध्यान केंद्रित करने के लिए की गई थी, खराब स्थिति से गुजर रहे थे । तथापि, हाल की पुनर्व्यवस्था का एक सकारात्मक प्रभाव रहा है जिसके परिणामस्वरूप क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा कृषि/ग्रामीण क्षेत्र को ऋण की उपलब्धता में वृद्धि का साक्ष्य विद्यमान है (देखें सारणी 7.24)। कृषि को कुल संस्थागत ऋण प्रवाहों में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के अंश में हाल के वर्षों में सुधार हुआ है । अत्यधिक स्थानीयकृत आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए अनेक नवोन्मेष व्यष्टि-वित्त आधारित प्रयोग भी रहे हैं । बैंक सुविधा-रहित क्षेत्रों में बैंकिंग के प्रवेश तथा गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ), एमएफआइ और सीएसओ जैसे मध्यवर्तियों को प्रोत्साहित करने के लिए प्रोत्साहन दिये गये हैं । गहन रोजगार वाले क्षेत्रों को ऋण की उपलब्धता को प्रोत्साहित करने के लिए प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र की परिभाषा में आशोधन किया गया है । एक और प्रमुख पहल 'नो फ्रिल्स' खातों से संबंधित है, जिसमें एक अल्प अवधि में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।

*प्रति शाखा जनसंख्या*

7.92 बैंकिंग तक पहुँच को मापने के लिए एक प्रमुख संकेतक प्रति शाखा जनसंख्या है । 1969 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के शाखा नेटवर्क का तेजी से विस्तार हुआ । इसके परिणामस्वरूप, 1969 और 1991 के बीच प्रति शाखा जनसंख्या उल्लेखनीय रूप में कम हुई । ग्रामीण क्षेत्र में प्रति शाखा जनसंख्या में

**सारणी 7.15 : प्रति बैंक शाखा जनसंख्या**

(हजार में)

| मार्च के अंत में | ग्रामीण | शहरी | कुल |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| 1969* | 82 | 33 | 63 |
| 1981 | 20 | 17 | 19 |
| 1991 | 14 | 16 | 14 |
| 2001 | 16 | 15 | 16 |
| 2007 | 17 | 13 | 16 |

* : जून के अंत में विद्यमान स्थिति ।
**स्रोत :** भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूलभूत सांख्यिकीय विवरणियाँ ।

1991 के बाद वृद्धि हुई । तथापि, प्रति शाखा जनसंख्या शहरी क्षेत्रों में लगातार घटती रही (सारणी 7.15)[8] । 1991 और 2007 के बीच ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति शाखा जनसंख्या में वृद्धि हेतु जिम्मेदार कारकों में से एक 953 ग्रामीण केंद्रों का पुनर्वर्गीकरण था जिन्हें 1991 की जनगणना के अनुसार ग्रामीण के रूप में वर्गीकृत किया गया था, जिन्हें जनसंख्या में वृद्धि के कारण उच्चतर जनसंख्या वाले केंद्रों में अंतरित किया गया । पुनर्वर्गीकरण के साथ ही, ऐसे भी उदाहरण थे जहाँ कुछ केंद्र, जिन्हें पहले ग्रामीण के रूप में वर्गीकृत किया गया था, निकटवर्ती नगरपालिका/नगर निगम के अधिकार-क्षेत्र में लाये गये थे और इस प्रकार नगरपालिका/ नगर निगम की जनसंख्या के आधार पर शहरी/महानगरीय के रूप में वर्गीकृत किये गये थे ।

*ऋण खाते*

7.93 प्रति 100 व्यक्तियों/वयस्कों के लिए कुल ऋण खातों की संख्या, जो ऋण वितरण सेवाओं के विस्तार का एक संकेतक है, 1991 और 2001 के बीच घटने के बावजूद उसके बाद उल्लेखनीय रूप में बढ़ गई । भिन्न -भिन्न स्तर पर भी, ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में प्रति 100 व्यक्तियों/वयस्कों के लिए ऋण खातों में 2001 और 2007 के बीच सुधार आया (सारणी 7.16)। हाल के वर्षों में विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में ऋण खातों में हुई उल्लेखनीय वृद्धि फुटकर, आवास और उपभोक्ता वित्त में तीव्र वृद्धि के कारण थी । यह मुख्य रूप से क्रय शक्ति में वृद्धि, बदलती हुई उपभोक्ताओं की जनसांख्यिकी (डेमोग्राफिक्स) और उपभोग में वृद्धि के लिए अत्यधिक संभावना, वित्तीय सेवाओं/उत्पादों के वितरण में प्रौद्योगिकीगत नवोन्मेषण एवं वित्तीय संस्थाओं द्वारा फुटकर कारोबार को अपनी व्यावसायिक गतिविधियों के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में स्वीकृति की वजह से थी । वर्तमान में फुटकर बैंकिंग क्षेत्र की विशेषताएँ तीन मूलभूत तत्वों द्वारा प्रकट होती हैं : बहुविध उत्पाद (जमाराशियाँ, क्रेडिट कार्ड, बीमा, निवेश और प्रतिभूतियाँ) ; वितरण के बहुविध माध्यम (कॉल सेंटर, शाखा, इंटरनेट और कियोस्क) ; तथा बहुविध ग्राहक समूह (उपभोक्ता, छोटे कारोबार, और कारपोरेट)। भारतीय फुटकर बैंकिंग खंड में प्रस्तावित विशिष्ट उत्पाद हैं - आवास ऋण, टिकाऊ वस्तुएँ खरीदने के लिए उपभोग ऋण, ऑटो ऋण, क्रेडिट कार्ड और शैक्षणिक ऋण । फुटकर खंड के अंतर्गत आवास ऋण में पिछले कुछ वर्षों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई (विस्तृत जानकारी के लिए अध्याय VI देखें)।

7.94 ऋण खातों में प्रवेश ऋण खाते प्रति 100 व्यक्ति) 1991 और 2001 के बीच सभी क्षेत्रों में ग्रामीण और शहरी दोनों इलाकों में घट गया, केवल उत्तरी और पूर्वी क्षेत्रों में शहरी इलाकों को छोड़कर जहाँ उनमें मामूली वृद्धि हुई तथा पश्चिमी क्षेत्र को भी छोड़कर जहाँ वे अपरिवर्तित बने रहे । तथापि, ऋण खातों में प्रवेश 2001 और 2007 के बीच सभी क्षेत्रों में ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में उल्लेखनीय रूप में बढ़ गया (सारणी 7.17)।

**सारणी 7.16 : अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के पास ऋण खाते**

(मार्च के अंत में)

| वर्ष | | 1971* | 1981 | 1991 | 2001 | 2006 | 2007 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 |
| **ग्रामीण** | खातों की संख्या (मिलियन) | – | 16.4 | 49.9 | 36.6 | 50.5 | 53.1 |
| | खाते प्रति 100 व्यक्ति | – | 3.1 | 7.9 | 4.9 | 6.3 | 6.5 |
| | खाते प्रति 100 वयस्क | – | 5.2 | 12.7 | 7.5 | 9.3 | 9.6 |
| **शहरी** | खातों की संख्या (मिलियन) | – | 4.4 | 12.1 | 15.8 | 34.9 | 41.3 |
| | खाते प्रति 100 व्यक्ति | – | 2.7 | 5.5 | 5.5 | 11.3 | 13.1 |
| | खाते प्रति 100 वयस्क | – | 4.5 | 8.9 | 8.4 | 16.7 | 19.5 |
| **कुल** | खातों की संख्या (मिलियन) | 4.3 | 20.7 | 61.9 | 52.4 | 85.4 | 94.4 |
| | खाते प्रति 100 व्यक्ति | 0.8 | 3.0 | 7.3 | 5.1 | 7.7 | 8.3 |
| | खाते प्रति 100 वयस्क | 1.3 | 5.0 | 11.7 | 7.9 | 11.6 | 12.4 |

* : जून की समाप्ति पर यथाविद्यमान ।
**स्रोत :** भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूलभूत सांख्यिकीय विवरणियाँ ।

8 जनगणना के जनसंख्या समूह 'ग्रामीण' और 'शहरी' हैं, जबकि बीएसआर डाटा में प्रयुक्त जनसंख्या समूह हैं 'ग्रामीण', 'अर्ध-शहरी', 'शहरी' और 'महानगरीय'। दोनों के बीच कोई विशिष्ट संबंध नहीं है । अतः तुलना के प्रयोजन और आसानी के लिए 'ग्रामीण' और 'अर्ध-शहरी' को 'ग्रामीण' के रूप में लिया गया है तथा 'शहरी' और 'महानगरीय' को 'शहरी' के रूप में जोड़ दिया गया है । इस खंड में वयस्क जनसंख्या से आशय उस जनसंख्या से है जो 15 वर्ष और उससे अधिक आयु के वर्ग में है । 2007 के लिए ग्रामीण/शहरी जनसंख्या का अनुमान 2001 की जनसंख्या में ग्रामीण/शहरी अंश के आधार पर किया गया है । जब तक कि अन्यथा नहीं बताया गया हो/अलग से नहीं दिया गया हो, तब तक अनुसूचित वाणिज्य बैंकों में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक शामिल हैं ।

**सारणी 7.17 : अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के पास ऋण खाते - क्षेत्र-वार**

(प्रति 100 व्यक्ति)

| क्षेत्र/ मार्च के अंत में | ग्रामीण | | | शहरी | | | कुल | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1991 | 2001 | 2007 | 1991 | 2001 | 2007 | 1991 | 2001 | 2007 |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| उत्तरी | 6.6 | 4.7 | 5.6 | 5.9 | 7.4 | 10.0 | 6.4 | 5.6 | 7.1 |
| उत्तर-पूर्वी | 4.4 | 2.6 | 4.1 | 4.4 | 3.7 | 5.5 | 4.4 | 2.8 | 4.3 |
| पूर्वी | 7.2 | 3.5 | 4.5 | 4.3 | 4.6 | 6.2 | 6.6 | 3.7 | 4.8 |
| मध्य | 5.8 | 3.6 | 4.3 | 4.4 | 3.4 | 5.0 | 5.5 | 3.6 | 4.4 |
| पश्चिमी | 6.2 | 4.1 | 4.8 | 4.8 | 4.8 | 18.9 | 5.7 | 4.4 | 10.5 |
| दक्षिणी | 13.6 | 9.6 | 14.4 | 7.6 | 7.2 | 21.6 | 11.8 | 8.8 | 16.8 |
| अखिल भारतीय | 7.9 | 4.9 | 6.5 | 5.5 | 5.5 | 13.1 | 7.3 | 5.1 | 8.3 |

**स्रोत :** भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूलभूत सांख्यिकीय विवरणियाँ ।

7.95 वित्तीय समावेशन के प्रयोजन के लिए छोटे खातों में प्रगति विशेष रूप से संगत है । ऋण खातों के अलग-अलग विवरण से यह विदित होता है कि कुल ऋण खातों में 25,000 हजार रुपये तक की ऋण सीमा वाले ऋण खातों की संख्या के अंश तथा ऐसे खातों में बकाया राशि में 1991 और 2002 के बीच गिरावट आई और उसके आगे 2007 तक उसमें और गिरावट हुई । 25,000 रुपये-2,00,000 रुपये की ऋण सीमा वाले ऋण खातों तथा इन खातों में बकाया राशि ने 1991-2007 के दौरान लगातार वृद्धि दर्शाई (सारणी 7.18)। तथापि यह स्थिति संभवतः एक बड़ी सीमा तक मुद्रास्फीति के प्रभाव के कारण 25,000 रुपये तक की ऋण सीमा वाले कुछ ऋणों (जो सांकेतिक रूप में हैं) के उच्चतर श्रेणियों में अंतरण के कारण थी ।

7.96 मुद्रास्फीति के लिए समायोजित करने के बाद 25,000 रुपये से कम ऋण सीमा वाले ऋणों का अंश 2001 और 2006 के बीच लगातार घटता रहा । तथापि, यह गिरावट मुद्रास्फीति के लिए असमायोजित की अपेक्षा समायोजित ऋण सीमा के मामले में बहुत कम थी (सारणी 7.19)। 25,000 रुपये-200,000 रुपये की ऋण सीमा में स्थित खातों की संख्या का अंश 1991 और 2000 के बीच तथा उसके बाद 2006 तक भी बढ़ा। फिर भी, यह वृद्धि मुद्रास्फीति के लिए असमायोजित की तुलना में समायोजित ऋण सीमा के मामले में अपेक्षाकृत कम थी । इस स्थिति (पैटर्न) ने अन्य बातों के साथ-साथ वास्तविक आय में सुधार के प्रभाव को प्रतिबिंबित किया जिसका परिणाम ऋण की माँग की अधिकतर मात्रा और फुटकर ऋण में अधिक वृद्धि के रूप में हुआ ।

7.97 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पास स्थित ऋण खातों की संख्या भी 1990 के दशक के उत्तरार्ध में कुछ कम हुई, परंतु वह चालू दशक में तेजी से बढ़ी (सारणी 7.20)।

*सहकारी ऋण*

7.98 भारत में ग्रामीण साख समितियों की परिकल्पना अल्प आय वाले लोगों के संसाधनों का एकत्रीकरण करने और उन्हें विभिन्न वित्तीय सेवाओं में प्रवेश उपलब्ध कराने के लिए एक व्यवस्था के रूप में की गई थी । अल्पावधि ग्रामीण सहकारी ऋण संरचना (एसटीसीसीएस) मुख्य रूप से अल्पावधि ऋण और अन्य वित्तीय सेवाएँ प्रदान करती है जो वित्तीय समावेशन की दृष्टि से विशेष रूप से प्रासंगिक हैं । मार्च 2006 की

**सारणी 7.18 : ऋण खातों की संख्या और ऋण सीमा के आकार के अनुसार बकाया ऋण - सभी अनुसूचित वाणिज्य बैंक**

(राशि करोड़ रुपये में)

| मार्च के अंत में | 25,000 रु. तक ऋण सीमा | | | | 25,000 रु. और 2,00,000 रु. के बीच ऋण सीमा | | | | कुल | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | खाते (मिलियन) | कुल में से प्रतिशत | राशि | कुल में से प्रतिशत | खाते (मिलियन) | कुल में से प्रतिशत | राशि | कुल में से प्रतिशत | खाते (मिलियन) | राशि |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 |
| 1990 | 51.2 | 95.0 | 24,147 | 23.1 | 2.3 | 4.2 | 14,351 | 13.8 | 53.9 | 104,312 |
| 1991 | 58.8 | 94.9 | 27,323 | 22.0 | 2.7 | 4.4 | 17,267 | 13.9 | 61.9 | 124,203 |
| 1992 | 62.5 | 95.0 | 29,945 | 21.9 | 2.8 | 4.3 | 18,393 | 13.5 | 65.9 | 136,706 |
| 1993 | 58.5 | 94.2 | 32,091 | 19.8 | 3.1 | 5.0 | 20,217 | 12.4 | 62.1 | 162,467 |
| 1994 | 55.8 | 93.6 | 32,188 | 18.3 | 3.3 | 5.5 | 21,547 | 12.3 | 59.7 | 175,891 |
| 1995 | 53.9 | 92.8 | 34,060 | 16.1 | 3.5 | 6.1 | 23,882 | 11.3 | 58.1 | 210,939 |
| 1996 | 51.9 | 91.6 | 36,253 | 14.2 | 4.0 | 7.0 | 28,085 | 11.0 | 56.7 | 254,692 |
| 1997 | 50.1 | 90.1 | 37,446 | 13.2 | 4.6 | 8.3 | 32,227 | 11.3 | 55.6 | 284,373 |
| 1998 | 46.8 | 87.4 | 41,095 | 12.5 | 5.7 | 10.7 | 39,457 | 12.0 | 53.6 | 329,944 |
| 1999 | 42.7 | 81.7 | 38,285 | 10.0 | 8.2 | 15.8 | 49,997 | 13.1 | 52.3 | 382,425 |
| 2000 | 39.3 | 72.2 | 36,409 | 7.9 | 13.6 | 25.0 | 66,336 | 14.4 | 54.4 | 460,081 |
| 2001 | 37.3 | 71.1 | 37,816 | 7.0 | 13.2 | 25.2 | 68,478 | 12.7 | 52.4 | 538,434 |
| 2002 | 37.3 | 66.2 | 38,501 | 5.9 | 16.8 | 29.8 | 87,148 | 13.3 | 56.4 | 655,993 |
| 2003 | 36.9 | 62.0 | 41,038 | 5.4 | 19.7 | 33.0 | 104,019 | 13.8 | 59.5 | 755,969 |
| 2004 | 36.8 | 55.4 | 38,555 | 4.4 | 25.1 | 37.9 | 124,144 | 14.1 | 66.4 | 880,312 |
| 2005 | 38.7 | 50.2 | 42,992 | 3.7 | 32.4 | 42.0 | 156,888 | 13.6 | 77.2 | 1,152,468 |
| 2006 | 38.4 | 45.0 | 45,217 | 3.0 | 38.7 | 45.3 | 203,281 | 13.4 | 85.4 | 1,513,842 |
| 2007 | 38.6 | 40.9 | 45,903 | 2.4 | 45.7 | 48.4 | 232,992 | 12.0 | 94.4 | 1,947,100 |

**स्रोत :** भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूलभूत सांख्यिकीय विवरणियाँ ।

**सारणी 7.19 : सभी अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के ऋण खातों की संख्या - मुद्रास्फीति समायोजित ऋण सीमा**

| मार्च के अंत में | 25,000 रु. तक ऋण सीमा (1990 की कीमतों पर) | | 25,000 रु. और 2,00,000 रु. के बीच ऋण सीमा (1990 की कीमतों पर) | |
|---|---|---|---|---|
| | खातों की संख्या (मिलियन) | कुल में से अंश (प्रतिशत) | खातों की संख्या (मिलियन) | कुल में से अंश (प्रतिशत) |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 |
| 1990 | 51.2 | 95.0 | 2.3 | 4.2 |
| 1993 | 59.2 | 95.3 | 2.4 | 3.9 |
| 1997 | 52.3 | 94.1 | 2.7 | 4.9 |
| 2001 | 43.9 | 83.5 | 7.7 | 14.7 |
| 2004 | 48.9 | 73.7 | 16.1 | 24.2 |
| 2006 | 57.8 | 67.6 | 25.0 | 29.2 |

**टिप्पणी** : 1990 के समकक्ष रूप में वर्ष 1993 से आगे ऋण सीमाओं की गणना 1990 की ऋण सीमाओं के लिए जीडीपी अपस्फीतिकारक (डिफ्लेटर) को लागू करके की गई है ।

**स्रोत** : छोटे उधार खातों का सर्वेक्षण, भारतीय रिजर्व बैंक बुलेटिन (विभिन्न अंक) के आधार पर परिकलित।

समाप्ति पर उक्त तीन-स्तरीय एसटीसीसीएस के अंतर्गत ग्राम स्तर पर लगभग 106,400 प्राथमिक कृषि ऋण समितियाँ (पीएसीएस), जिला स्तर पर 12,991 शाखाओं के साथ 370 जिला मध्यवर्ती सहकारी बैंक एवं राज्य स्तर पर 962 शाखाओं के साथ 30 राज्य सहकारी बैंक विद्यमान हैं । एक प्राथमिक कृषि ऋण समिति (पीएसीएस) औसतन 6 गाँवों को सेवाएँ देती है । 125 मिलियन से भी अधिक ग्रामीण जनता की कुल सदस्यता के साथ प्राथमिक कृषि ऋण समिति (पीएसीएस) संभवतः विश्व की सबसे बड़ी ग्रामीण वित्तीय प्रणालियों में से एक है । उधारकर्ता सदस्यों की संख्या 1994 और 2003 के बीच उल्लेखनीय रूप में बढ़ी, परंतु उसके बाद उसमें गिरावट आई (सारणी 7.21)।

7.99 शहरी सहकारी बैंक (यूसीबी) देश के शहरी और अर्ध-शहरी क्षेत्रों की बढ़ती हुई ऋण आवश्यकताएं पूरी करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं । वे मध्यम और निम्न आय वर्गों से बचत की राशि जुटाते हैं और समाज के कमजोर वर्गों सहित छोटे उधारकर्ताओं को ऋण उपलब्ध कराते हैं । भारत में ये बैंक वित्तीय सहकारी संस्थाएँ हैं जो विदेशों में पाये जानेवाले ऋण संघों के सदृश हैं, केवल इस बात को छोड़कर कि वे गैर-सदस्यों से भी जमाराशियाँ स्वीकार कर सकते हैं । शहरी सहकारी बैंक भुगतान प्रणाली का भी एक अंग बनते हैं ।

7.100 हाल के वर्षों में वित्तीय समावेशन पर दिये जा रहे विशेष बल को देखते हुए सहकारी बैंकिंग ने भारतीय वित्तीय प्रणाली में नवीकृत महत्व प्राप्त किया है । एक सामूहिक सिद्धांत पर कार्यरत सदस्य-संचालित संस्थाएं होने के कारण वे अपने सदस्यों को उधार देने के प्रयोजन के लिए संसाधनों के संग्रहण को सुसाध्य बनाते हैं जो बैंक के शेयरधारक भी हैं और इसलिए जिनका बैंक के कार्यों में एक महत्वपूर्ण हित है । महाराष्ट्र, गुजरात और कर्नाटक जैसे देश के कुछ भागों में शहरी सहकारी बैंक शहरी क्षेत्रों में बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । मार्च 2007 की समाप्ति पर भारत में 1,813 शहरी सहकारी बैंकों की 7,670 शाखाएं (विस्तार काउंटरों सहित) थीं । अनंतिम अनुमान यह सूचित करते हैं कि मार्च 2007 के अंत में शहरी सहकारी बैंकों ने लगभग 7 मिलियन उधारकर्ताओं को कुल 78,660 करोड़ रुपये का ऋण प्रदान किया ।

*व्यष्टि-वित्त*

7.101 हाल की अवधि में व्यष्टि-वित्त लोगों को, विशेष रूप से औपचारिक वित्तीय प्रणाली से वंचित लोगों को, ऋण वितरण के एक महत्वपूर्ण अर्ध-औपचारिक प्रकार के रूप में उभरा है । भारत में व्यष्टि-वित्त के दो स्थूल मॉडल हैं अर्थात् स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी)-

**सारणी 7.20 : भारत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक - ऋण खाते/राशियाँ**

(खातों की संख्या '000 में, राशि करोड़ रुपये में)

| मार्च के अंत में | ऋण खाते | | छोटे उधार खाते | | स्तंभ 2 के प्रतिशत के रूप में स्तंभ 4 | स्तंभ 3 के प्रतिशत के रूप में स्तंभ 5 |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | खाते | राशि | खाते | राशि | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| 1996 | 13,056 | 7,344 | 12,902 | 6,120 | 98.8 | 83.3 |
| 1997 | 12,102 | 8,655 | 11,885 | 6,845 | 98.2 | 79.1 |
| 1998 | 12,293 | 10,200 | 12,001 | 7,797 | 97.6 | 76.4 |
| 1999 | 11,138 | 11,279 | 11,098 | 10,194 | 99.6 | 90.4 |
| 2000 | 11,868 | 13,126 | 11,801 | 11,561 | 99.4 | 88.1 |
| 2001 | 12,203 | 16,352 | 12,132 | 14,360 | 99.4 | 87.8 |
| 2002 | 12,627 | 18,869 | 12,543 | 16,435 | 99.3 | 87.1 |
| 2003 | 12,873 | 22,623 | 12,776 | 19,757 | 99.2 | 87.3 |
| 2004 | 12,715 | 26,020 | 12,593 | 22,310 | 99.0 | 85.7 |
| 2005 | 14,167 | 32,689 | 14,014 | 27,878 | 98.9 | 85.3 |
| 2006 | 13,394 | 36,644 | 13,195 | 30,163 | 98.5 | 82.3 |
| 2007 | 14,958 | 47,855 | 14,666 | 37,330 | 98.0 | 78.0 |

**स्रोत:** भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूलभूत सांख्यिकीय विवरणियाँ।

## सारणी 7.21 : प्राथमिक कृषि ऋण समितियों (पीएसीएस) की प्रगति

(मार्च के अंत में)

| विवरण | 1994 | 1995 | 2000 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 | 2007 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1. पीएसीएस की संख्या (हजार) | 91.6 | 91.1 | 101.5 | 98.2 | 112.3 | 105.7 | 108.8 | 106.4 | 97.2 |
| 2. सदस्य (मिलियन) | 89.0 | 90.6 | 108.6 | 102.1 | 123.6 | 135.4 | 127.4 | 125.2 | 125.8 |
| 3. उधारकर्ता (मिलियन) | 50.5 | 38.0 | 43.0 | 55.5 | 63.9 | 51.3 | 45.1 | 46.1 | 47.9 |
| 4. स्वाधिकृत निधियाँ (करोड़ रुपये) | 2,694 | 3,412 | 5,338 | 6,855 | 8,198 | 8,397 | 9,197 | 9,292 | 11,039 |
| 5. जमाराशियाँ (करोड़ रुपये) | 2,102 | 2,962 | 12,459 | 14,846 | 19,120 | 18,143 | 18,976 | 19,561 | 23,484 |
| 6. उधार (करोड़ रुपये) | 9,117 | 10,176 | 22,350 | 29,475 | 30,278 | 34,257 | 40,249 | 41,018 | 43,714 |
| **7. कुल संसाधन (4+5+6)** | **13,913** | **16,550** | **40,147** | **51,176** | **57,596** | **60,797** | **68,422** | **69,871** | **78,237** |
| **8. बकाया ऋण (करोड़ रुपये)** | **10,534** | **12,141** | **28,546** | **40,779** | **42,411** | **43,873** | **48,785** | **51,779** | **58,620** |

**स्रोत :** प्राथमिक कृषि ऋण समितियों का कार्यनिष्पादन (विभिन्न अंक), एनएएफएससीओबी।

बैंक सहबद्धता मॉडल एवं एमएफआइ मॉडल । इन दोनों मॉडलों में से एसएचजी-बैंक सहबद्धता मॉडल ने 1990 के दशक के पूर्वार्ध में अपने प्रारंभ से ही तीव्र गति से प्रगति की । वाणिज्य बैंक, सहकारी बैंक और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक इस कार्यक्रम में सक्रिय रूप से जुड़े हुए हैं । 31 मार्च 2007 की स्थिति के अनुसार 50 वाणिज्य बैंक, 96 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और 352 सहकारी बैंक इस कार्यक्रम में भाग ले रहे थे । स्वयं-सहायता समूहों को उधार देनेवाली बैंक शाखाओं की संख्या मार्च 2006 के अंत में 35,294 थी तथा भाग लेनेवाले गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) और अन्य एजेंसियों की संख्या 3,024 थी । उक्त कार्यक्रम 31 राज्यों/संघराज्य क्षेत्रों और 587 जिलों में कार्यान्वित किया जा रहा है।

## सारणी 7.22 : स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी)-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम

| वर्ष | वित्तपोषित एसएचजी की संचयी संख्या ('000) | बैंक ऋण (करोड़ रुपये) (संचयी) |
|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 |
| 1992-99 | 33 | 57 |
| 1999-00 | 115 | 193 |
| 2000-01 | 264 | 481 |
| 2001-02 | 461 | 1,026 |
| 2002-03 | 717 | 2,049 |
| 2003-04 | 1,079 | 3,904 |
| 2004-05 | 1,618 | 6,898 |
| 2005-06 | 2,239 | 11,398 |
| 2006-07 | 2,925 | 18,047 |
| 2006-07* | 2,895* | 12,366 * |

* : बकाया संख्या और राशि दर्शाता है । पूर्ववर्ती वर्षों के तुलनीय आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं ।

**स्रोत :** भारत में एसएचजी-बैंक सहबद्धता की प्रगति 2005-06, नाबार्ड ।

7.102 बैंक के साथ सहबद्ध स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी) की संख्या विशेष रूप से 1999-2000 से तेजी से बढ़ी । 2006-07 तक लगभग तीन मिलियन एसएचजी बैंक-सहबद्ध थे (सारणी 7.22)। यह मानते हुए कि औसतन प्रत्येक एसएचजी 14 सदस्यों का वित्तपोषण करता है, एसएचजी-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम द्वारा सेवा प्रदान किये गये परिवारों की संचित संख्या मार्च 2007 के अंत तक लगभग 41 मिलियन होगी । इस प्रकार, औसत परिवार के आकार में 5 सदस्यों को मानते हुए सहायताप्राप्त निर्धन लोगों की अनुमानित संख्या लगभग 205 मिलियन होगी ।

7.103 बैंकों के साथ सहबद्ध स्वयं-सहायता समूहों (एसएचजी) के क्षेत्र-वार स्वरूप ने दक्षिणी क्षेत्र में अपेक्षाकृत अधिक संकेंद्रण दर्शाया, यद्यपि अन्य क्षेत्रों के अंश में, विशेष रूप से पूर्वी क्षेत्र में उल्लेखनीय वृद्धि के साथ कुछ वर्षों में स्थानिक असमानता कम हुई (सारणी 7.23)।

7.104 औसत ऋण राशि प्रति एसएचजी 61,648 रुपये थी । उक्त कार्यक्रम की एक उल्लेखनीय विशेषता महिलाओं की सक्रिय सहभागिता

## सारणी 7.23 : बैंकों के साथ सहबद्ध स्वयं-सहायता समूहों (एसएचजी) का क्षेत्रीय स्वरूप

(कुल में से प्रतिशत)

| क्षेत्र/मार्च के अंत में | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| उत्तरी | 3.4 | 4.2 | 4.9 | 4.9 | 5.3 | 5.9 |
| उत्तर-पूर्वी | 0.2 | 0.3 | 0.6 | 1.1 | 2.1 | 2.8 |
| पूर्वी | 8.4 | 9.9 | 12.7 | 14.7 | 16.4 | 17.6 |
| मध्य | 10.9 | 10.4 | 11.4 | 11.8 | 12.2 | 12.0 |
| पश्चिमी | 5.9 | 6.4 | 5.9 | 5.1 | 5.9 | 7.4 |
| दक्षिणी | 71.1 | 68.8 | 64.6 | 62.5 | 58.0 | 54.3 |
| अखिल भारतीय | 100.0 | 100.0 | 100.0 | 100.0 | 100.0 | 100.0 |

**स्रोत :** भारत में एसएचजी-बैंक सहबद्धता की प्रगति 2005-06, नाबार्ड।

## बॉक्स VII.14
## स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी)-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम - एक मूल्यांकन

भारत में मूल स्तर पर एसएचजी-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम के प्रभाव के संबंध में मूल्यांकन के कुछ अध्ययन किये गये हैं । पुहझेंदी और सत्यसाई (2000) ने पाया कि स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी) से पहले और उसके बाद की स्थितियों के बीच परिवारों के आय स्तरों (स्लैबों) में उच्चतर आय स्तरों की ओर अंतरण था । लगभग 74 प्रतिशत नमूना परिवार एसएचजी-पूर्व स्थिति के दौरान 22,500 रुपये के वार्षिक आय के स्तर से नीचे थे । यह अनुपात बढ़ी हुई आय के स्तरों के कारण एसएचजी के बाद की स्थिति में घटकर 57 प्रतिशत हो गया । इसके अलावा, समूह में अंतर्ग्रस्तता ने सदस्यों के आत्मविश्वास में सुधार लाने के लिए उल्लेखनीय रूप में योगदान किया । एसएचजी के साथ संबद्ध होने के बाद स्वयं के महत्व की भावना और समूह के अन्य सदस्यों के साथ संवाद में सुधार आया । सामाजिक बुराइयों और समस्यात्मक स्थितियों का सामना करने में सदस्य अपेक्षाकृत अधिक दृढ़ थे ।

एक और अध्ययन में पुहझेंदी और बादात्या (2002) ने पाया कि साहूकारों और अन्य अनौपचारिक स्रोतों से उच्चतर ब्याज-दरों पर ऋण प्राप्त करना एसएचजी की मध्यस्थता के कारण उल्लेखनीय रूप में कम हो गया । यह भी देखा गया कि एसएचजी के बाद की स्थिति में उपभोग उन्मुख ऋणों का स्थान उत्पादन उन्मुख ऋणों ने ले लिया ।

एक अन्य अध्ययन (एपीएमएएस और ईडीए ग्रामीण प्रणालियाँ, 2006) ने पाया कि नमूने में स्थित एसएचजी में से 30 प्रतिशत सामुदायिक कार्यों में संबद्ध थे। इन कार्यों के अंतर्गत सामुदायिक कार्यों में सुधार (जल की आपूर्ति, शिक्षा, स्वास्थ्य रक्षा, पशु रक्षा, ग्रामीण सड़क सहित कुल कार्यों का 43 प्रतिशत), शराब की बिक्री और मद्यपान को रोकने का प्रयास (31 प्रतिशत), नई बुनियादी संरचना के लिए वित्त और श्रम का अंशदान करना (12 प्रतिशत), प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करना तथा दान के कार्य (गैर-सदस्यों के लिए) शामिल थे । एसएचजी द्वारा किया गया सर्वाधिक सामान्य प्रकार का कार्य स्थानीय शराब की दुकानों को बंद करवाने के लिए प्रयास था ।

उक्त अध्ययन में यह भी बताया गया कि इस प्रकार के सामुदायिक कार्यों में महिलाओं के लिए एक नई निर्भीकता और आत्मविश्वास निहित था जो प्रायः प्राधिकारियों (पंचायत, जिला अधिकारीगण और पुलिस) को अपना काम करने के लिए दबाव डालने में सक्रिय थीं चाहे वह याचिकाओं के माध्यम से हो, या रैलियाँ और रास्ता रोको आयोजित करने से; तथा एसएचजी के प्रमुखों के साथ विचार-विमर्श के जरिए अपनी बात को मनवाने का विभिन्न प्रकार का कौशल भी उल्लेखनीय था ।

आंध्र प्रदेश जैसे कुछ राज्य एसएचजी के माध्यम से विभिन्न विकासात्मक और गरीबी हटाने की योजनाओं के कार्यान्वियन का प्रयास कर रहे हैं ।

**संदर्भ :**


1. पुहझेंदी, वी. और सत्यसाई, के. जे. एस. 2000 । माइक्रो-फाइनैंस फॉर रूरल पीपल : ऐन इम्पैक्ट इवैल्युएशन; नाबार्ड ।
2. पुहझेंदी, वी. और बादात्या, के. सी. 2002 । एसएचजी-बैंक लिंकेज प्रोग्राम फॉर रूरलपूअर - एन इम्पैक्ट एसेसमेंट :www.microfinancegateway.org
3. एपीएमएएस और ईडीए रूरल सिस्टम्स. 2006 । सेल्फ-हेल्प ग्रुप्स इन इंडिया : ए स्टडी ऑफ द लाइट्स एण्ड शेड्स; आंध्र प्रदेश महिला अभिवृद्धि सोसाइटी (एपीएमएएस) तथा ईडीए रूरल सिस्टम्स प्राइवेट लिमिटेड द्वारा किया गया अध्ययन; www.apmas.org


(90 प्रतिशत) और ऋण की समय पर चुकौती (90 प्रतिशत से अधिक) थी । स्वयं-सहायता समूहों (एसएचजी) की चुकौती की उच्च दरों ने एसएचजी को ऋण देने के लिए बैंकों को सहूलियत प्रदान की (बॉक्स VII.14)।

7.105 उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि रिज़र्व बैंक और सरकार द्वारा की गई विभिन्न पहलों के कारण हाल के वर्षों में अपेक्षाकृत वंचित खंडों को औपचारिक वित्तीय संस्थाओं से ऋण वितरण में उल्लेखनीय रूप में सुधार आया है । इसके परिणामस्वरूप, सभी ऋण संस्थाओं द्वारा कृषि को समग्र ऋण 1991-92 और 2001-02 के बीच के 16.8 प्रतिशत की तुलना में 2002-03 और 2007-08 के बीच 26.5 प्रतिशत की वार्षिक चक्रवृद्धि दर से बढ़ा (सारणी 7.24)।

7.106 सारांश के तौर पर 2000 के दशक के प्रारंभ से अर्थात् एनएसएसओ द्वारा एआइडीआइएस के संदर्भ वर्ष के बाद की अवधि के दौरान ऋण-व्यापन (प्रति 100 व्यक्ति ऋण खाते) तथा सामान्य रूप से ग्रामीण क्षेत्र को और कृषि को ऋण की उपलब्धता में सुस्पष्ट सुधार हुआ है । औपचारिक ऋण के सभी स्रोतों को एक साथ लेने पर प्रति 100 वयस्क ऋण खातों की संख्या, जो 1993 के 20 से घटकर 2002 में 18 हो गई थी, सुधरकर 2007 में 25 हो गई (सारणी 7.25)।

### सारणी 7.24 : भारत में कृषि क्षेत्र को संस्थागत ऋण प्रवाह

(करोड़ रुपये)

| वर्ष | सहकारी संस्थाएँ | क्षे.ग्रा. बैंक | वाणिज्य बैंक | कुल |
|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 |
| 1991-92 | 5,797<br>(45.9) | 596<br>(78.2) | 4,806<br>(2.8) | 11,199<br>(24.7) |
| 2001-02 | 23,604<br>(13.5) | 4,854<br>(15.0) | 33,587<br>(20.8) | 62,045<br>(17.4) |
| 2002-03 | 23,716<br>(0.5) | 6,070<br>(25.1) | 39,774<br>(18.4) | 69,560<br>(12.1) |
| 2003-04 | 26,959<br>(13.7) | 7,581<br>(24.9) | 52,441<br>(31.8) | 86,981<br>(25.0) |
| 2004-05 | 31,424<br>(16.6) | 12,404<br>(63.6) | 81,481<br>(55.4) | 125,309<br>(44.1) |
| 2005-06 | 39,404<br>(25.4) | 15,223<br>(22.7) | 125,859<br>(54.5) | 180,486<br>(44.0) |
| 2006-07 | 42,480<br>(7.8) | 20,435<br>(34.2) | 140,382<br>(11.5) | 203,297<br>(12.6) |
| 2007-08 | 43,684<br>(2.8) | 24,814<br>(21.4) | 156,850<br>(11.7) | 225,348<br>(10.8) |
| *ज्ञापन : संयोजित वार्षिक संवृद्धि दरें* | | | | |
| 1991-92 से 2001-02 | 13.6 | 21.0 | 19.3 | 16.8 |
| 2002-03 से 2007-08 | 13.0 | 32.5 | 31.6 | 26.5 |

**टिप्पणी :** कोष्ठक में आंकड़े पिछले वर्ष की तुलना में प्रतिशत परिवर्तन हैं ।
**स्रोत :** भारतीय रिजर्व बैंक और नाबार्ड।

**सारणी 7.25 : संस्थाओं के पास ऋण खातों की संख्या**

(मिलियन)

| संस्था/मार्च के अंत में | 1993 | 2002 | 2007 |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| अनुसूचित वाणिज्य बैंक | 46.4 | 43.3 | 76.6 |
| क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक | 13.0 | 12.6 | 15.0 |
| प्राथमिक कृषि ऋण समितियाँ | 50.5 | 55.5 | 47.9 |
| शहरी सहकारी बैंक | 4.7 | 4.4 | 7.1 |
| स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी) | 0.0 | 7.4 | 40.5 |
| **कुल** | **114.6** | **123.3** | **187.1** |
| प्रति 100 व्यक्ति कुल खाते | 13 | 12 | 17 |
| प्रति 100 वयस्क कुल खाते | 20 | 18 | 25 |

**टिप्पणी:** 1. 1993 और 2002 के लिए शहरी सहकारी बैंकों संबंधी आंकड़े अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के मामले में पाई गई वृद्धि के समान ही मानते हुए अनुमानित हैं ।

2. एसएचजी के पास खाते 1993 और 2002 में औसतन प्रति एसएचजी 16 खाते तथा 2007 में 14 खाते मानते हुए अनुमानित हैं (नाबार्ड से सानुरोध प्राप्त)। अपेक्षाकृत छोटे आकार में अनेक नये एसएचजी के बनने के कारण हाल के वर्षों में एसएचजी का औसत आकार घट गया है।

3. दुहरी गणना से बचने के लिए एसएचजी की संख्या को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के पास ऋण खातों से समायोजित किया गया है ।

## वित्तीय समावेशन : जमा का पहलू

7.107 ऋण की उपलब्धता के अतिरिक्त, जमाराशियों की सुविधा वित्तीय समावेशन का एक और मुख्य तत्व है । यह खास तौर से कम और अनियमित आय वाले लोगों के लिए महत्वपूर्ण है । सुरक्षित जमाराशियों की सुविधा तक पहुँच ऐसे लोगों को सुविधापूर्वक अपने व्यय की योजना बनाने में समर्थ बनाती है । यह बचत (थ्रिफ्ट) को भी बढ़ावा देती है और बचत की संस्कृति को विकसित करती है । ऐसी सुविधा के अभाव में लोग अपनी बचत की राशि विभिन्न अनौपचारिक रूपों में रख सकते हैं जैसे घर में नकदी अथवा रिश्तेदारों/साहूकारों के पास जमा के रूप में । ऐसी स्थितियों में धनराशि को खो देने की संभावना बहुत अधिक रहती है जो लोगों को कष्ट पहुँचाती है और उन्हें और अधिक बचत करने के लिए निरुत्साहित करती है । [सुरक्षित जमाराशियों की कुंजी] जब भी आवश्यकता हो तब खातों से धनराशि आहरित करने का सामर्थ्य है । इस प्रकार इस संबंध में उपलब्ध उत्पादों का स्वरूप वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है ।

7.108 भारत के संदर्भ में बचत जमा खाते बैंकों और डाक घरों द्वारा उपलब्ध कराये जाते हैं । तदनुसार, इस खंड में बचत खाते उपलब्ध कराने के संबंध में बैंकिंग प्रणाली और डाक घरों द्वारा की गई प्रगति की जाँच की गई है जो बैंकों के लिए बीएसआर डाटा और डाक विभाग से प्राप्त डाटा पर आधारित है । इस विश्लेषण की एक सीमा है, एक ही व्यक्ति द्वारा धारित बहुविध खाते तथा निष्क्रिय खाते जो एक लंबे समय से परिचालित नहीं किये गये हैं । फिर भी, प्रति व्यक्ति जमा खाते वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने में की गई प्रगति के संबंध में कुछ महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्रदान कर सकते हैं ।

*बचत बैंक खाते*

7.109 अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा खोले गए बचत खातों की संख्या का वर्षों से, विशेष रूप से 1970 के दशक के प्रारंभ और 1990 के दशक के प्रारंभ के बीच उल्लेखनीय रूप से विस्तार हुआ । बचत खातों में विस्तार जनसंख्या की वृद्धि से भी अधिक तेज गति से हुआ था, जिसके परिणामस्वरूप बचत खाताओं के व्यापन में भारी सुधार (प्रति 100 व्यक्ति बचत खाते) हुआ (सारणी 7.26)। यह सुधार शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में देखा गया। प्रति 100 व्यक्ति/वयस्क बचत खातों की संख्या, जो 1991 और 2002 के बीच घट गई थी, उसके बाद, तेजी से बढ़ गई । इसके परिणामस्वरूप, मार्च 2007 की समाप्ति पर प्रति 100 व्यक्ति/वयस्क बचत खातों की संख्या मार्च 1991 के अंत में स्थित संख्या से बड़ी थी । यह आय के स्तरों में वृद्धि

**सारणी 7.26 : अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के पास बचत खाते**

(मार्च के अंत में)

| वर्ष | | 1971* | 1981 | 1991 | 2001 | 2006 | 2007 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 |
| **ग्रामीण** | खातों की संख्या (मिलियन) | – | 56.9 | 153.8 | 169.8 | 194.4 | 213.8 |
| | प्रति 100 व्यक्ति खाते | – | 10.9 | 24.5 | 22.9 | 24.2 | 26.2 |
| | प्रति 100 वयस्क खाते | – | 17.9 | 39.2 | 35.0 | 35.8 | 38.8 |
| **शहरी** | खातों की संख्या (मिलियन) | – | 40.9 | 99.2 | 110.2 | 149.1 | 159.7 |
| | प्रति 100 व्यक्ति खाते | – | 25.7 | 45.6 | 38.5 | 48.1 | 50.7 |
| | प्रति 100 वयस्क खाते | – | 42.3 | 73.1 | 58.9 | 71.4 | 75.2 |
| **कुल** | खातों की संख्या (मिलियन) | 23.6 | 97.8 | 253.0 | 280.0 | 343.4 | 373.5 |
| | प्रति 100 व्यक्ति खाते | 4.3 | 14.3 | 29.9 | 27.2 | 30.8 | 33.0 |
| | प्रति 100 वयस्क खाते | 7.1 | 22.9 | 46.8 | 41.5 | 45.9 | 48.9 |

* : जून के अंत में यथाविद्यमान ।

**स्रोत :** भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूलभूत सांख्यिकीय विवरणियाँ ।

और रिज़र्व बैंक द्वारा की गई विभिन्न पहलों को प्रतिबिंबित करता है जैसे 'शून्य' अथवा कम न्यूनतम शेषराशियों के साथ 'नो फ्रिल्स' खाते खोलने के लिए बैंकों को प्रेरित करना।

7.110 क्षेत्र-वार स्वरूप यह निर्दिष्ट करता है कि प्रति 100 व्यक्ति बचत खाते 1991 और 2001 के बीच केवल उत्तर-पूर्वी और मध्य क्षेत्रों को छोड़कर, जहाँ प्रति 100 व्यक्ति बचत खातों में वृद्धि हुई, सभी क्षेत्रों में घट गये । यह प्रवृत्ति मोटे तौर पर ग्रामीण और दोनोंशहरी क्षेत्रों में देखी गई । तथापि, बचत खाता व्यापन सभी क्षेत्रों में ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में 2001 और 2007 के बीच तेजी से बढ़ा (सारणी 7.27)। ऋण खातों की तुलना में बचत खातों तक पहुँच अधिक समान रूप से व्याप्त हुई । ऋण खातों ने दक्षिणी क्षेत्र में अधिक संकेंद्रण दर्शाया जबकि बचत खाते उत्तरी, दक्षिणी और पश्चिमी क्षेत्रों में लगभग समान रूप से व्याप्त हुए । तथापि, दोनों बचत खातों और ऋण खातों का व्यापन उत्तर-पूर्वी, पूर्वी और मध्य क्षेत्रों में कम रहा ।

7.111 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पास बचत खातों की संख्या, जो सारणी 7.27 में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के आंकड़ों में शामिल की गई है, 1991 और 2006 के बीच उल्लेखनीय रूप में बढ़ी । खातों की संख्या में वृद्धि के आगे-पीछे क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पास जमाराशियाँ भी बढ़ गईं (7.28)।

7.112 जैसा कि पहले संकेत किया गया है, वित्तीय समावेशन प्रदान करने के उद्देश्य से रिज़र्व बैंक ने सभी बैंकों को सूचित किया था कि वे 'शून्य' अथवा कम न्यूनतम शेषराशियों एवं प्रभारों के साथ एक मूलभूत बैंकिंग 'नो फ्रिल्स' खाता उपलब्ध कराएँ । भारत में बैंकों द्वारा खोले गए 'नो फ्रिल्स' खातों की संख्या में उल्लेखनीय प्रगति रही है (सारणी 7.29)।

7.113 इन्वेस्ट इंडिया आय और बचत सर्वेक्षण 2007 के अनुसार बचत खाते रखनेवाले उत्तरदाताओं का अनुपात उच्चतर आय समूहों की तुलना में निम्न आय समूहों में उल्लेखनीय रूप से कम था । आय के स्तर में वृद्धि के साथ ही बैंक खाता रखनेवाली आबादी का अनुपात बढ़ा। उक्त सर्वेक्षण से यह भी विदित होता है कि उत्तरदाताओं के लगभग 45 प्रतिशत के पास किसी बैंक के पास एक बचत खाता था । इसके अलावा, शहरी क्षेत्रों में धारित बचत खातों की संख्या ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में अधिक थी (सारणी 7.30)।

7.114 मैक्स न्यूयार्क लाइफ एण्ड एनसीएईआर द्वारा संचालित एक और सर्वेक्षण में पाया गया कि अखिल भारतीय स्तर पर परिवारों के 66 प्रतिशत के पास किसी वित्तीय संस्था (वाणिज्य बैंक, डाक घर, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और पंजीकृत समितियाँ) में खाते हैं । यह प्रतिशत शहरी क्षेत्रों के 82 प्रतिशत की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में 59 प्रतिशत पर कम था (एनसीएईआर, 2008)। इस सर्वेक्षण ने यह भी निर्दिष्ट किया कि भारत में कुल परिवारों के 36 प्रतिशत ने बचत की राशि को घर में ही रखने के लिए वरीयता दी, जबकि भारतीय परिवारों में से आधे से अधिक परिवारों ने अपनी बचत की राशियाँ बैंक जमाराशियों

**सारणी 7.28 : क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पास बचत खाते**

| वर्ष | खातों की संख्या (मिलियन) | बकाया जमाराशियाँ (करोड़ रुपये) |
|---|---:|---:|
| 1 | 2 | 3 |
| 1991 | 26.5 | 2,552 |
| 1992 | 28.5 | 2,899 |
| 1993 | 29.7 | 3,059 |
| 1994 | 30.5 | 4,016 |
| 1995 | 31.2 | 5,246 |
| 1996 | 31.4 | 6,006 |
| 1997 | 32.7 | 7,354 |
| 1998 | 34.4 | 9,242 |
| 1999 | 34.4 | 10,902 |
| 2000 | 35.4 | 12,777 |
| 2001 | 36.7 | 14,732 |
| 2002 | 36.7 | 17,507 |
| 2003 | 40.1 | 20,803 |
| 2004 | 42.9 | 25,670 |
| 2005 | 44.9 | 30,390 |
| 2006 | 47.5 | 37,559 |
| 2007 | 52.7 | 45,014 |

**स्रोत :** भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूलभूत सांख्यिकीय विवरणियाँ ।

**सारणी 7.27 : अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के बचत खाते**

(प्रति 100 व्यक्ति)

| क्षेत्र/मार्च के अंत में | ग्रामीण | | | शहरी | | | कुल | | |
|---|---:|---:|---:|---:|---:|---:|---:|---:|---:|
| | 1991 | 2001 | 2007 | 1991 | 2001 | 2007 | 1991 | 2001 | 2007 |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| उत्तरी | 30.1 | 27.3 | 29.9 | 62.6 | 50.3 | 64.1 | 40.0 | 35.0 | 41.5 |
| उत्तर-पूर्वी | 16.1 | 16.9 | 18.9 | 28.4 | 25.6 | 33.6 | 17.8 | 18.3 | 21.2 |
| पूर्वी | 17.7 | 16.2 | 18.4 | 40.0 | 37.4 | 44.4 | 21.8 | 20.2 | 23.3 |
| मध्य | 21.0 | 21.8 | 23.7 | 34.7 | 31.1 | 40.2 | 23.8 | 23.9 | 27.4 |
| पश्चिमी | 24.7 | 21.9 | 26.4 | 53.8 | 42.0 | 53.6 | 35.5 | 30.1 | 37.5 |
| दक्षिणी | 34.6 | 31.9 | 38.7 | 42.7 | 35.9 | 53.8 | 37.0 | 33.2 | 43.8 |
| **अखिल भारतीय** | **24.5** | **22.9** | **26.2** | **45.6** | **38.5** | **50.8** | **29.9** | **27.2** | **33.0** |

**स्रोत :** भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूलभूत सांख्यिकीय विवरणियाँ ।

**सारणी 7.29 : भारत में खोले गये 'नो फ्रिल्स' खातों की संख्या**

(खातों की संख्या)

| श्रेणी | मार्च 2006 के अंत में | मार्च 2007 के अंत में | दिसंबर 2007 के अंत में |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| सरकारी क्षेत्र के बैंक | 332,878 | 5,865,419 | 11,026,619 |
| निजी क्षेत्र के बैंक | 156,388 | 856,495 | 1,560,518 |
| विदेशी बैंक | 231 | 2,753 | 30,260 |
| **कुल** | **489,497** | **6,724,667** | **12,617,397** |

**स्रोत :** भारतीय रिज़र्व बैंक ।

में रखने के प्रति अधिमानता दी । ग्रामीण क्षेत्रों में बचत की राशि घर में ही रखने के लिए अधिमानता (41.7 प्रतिशत) शहरी क्षेत्रों में ऐसी अधिमानता (23.4 प्रतिशत) से उल्लेखनीय रूप से अधिक थी । दूसरी ओर, अपनी बचत की राशि बैंक जमाराशियों में रखने के लिए वरीयता देनेवाले ग्रामीण क्षेत्र के परिवारों (45.3 प्रतिशत) की तुलना में इस प्रकार वरीयता देनेवाले शहरी क्षेत्रों के परिवारों की संख्या (62.6 प्रतिशत) उल्लेखनीय रूप में अधिक थी ।

*डाक बचत और विप्रेषण*

7.115 बैंकिंग प्रणाली के अतिरिक्त, भारत में डाक घर भी जमाराशियाँ रखने और विप्रेषण करने की सेवाएँ प्रदान करते हैं । मार्च 2005 की समाप्ति पर 155,516 डाक घरों के साथ भारतीय डाक सेवा विश्व में सबसे अधिक व्याप्त डाक घर प्रणाली है । दूरस्थ क्षेत्रों में विस्तृत उपस्थिति के साथ डाक घरों की संख्या देश में बैंक शाखाओं की संख्या से दुगुनी से भी अधिक थी । भारत में एक डाक घर ने औसतन मार्च 2005 की समाप्ति पर 7,046 व्यक्तियों की सेवा की । भारतीय डाक घर विभिन्न प्रकार की अल्प बचत योजनाएं देते हैं तथा अन्य बैंकिंग और वित्तीय सेवाएं भी उपलब्ध कराते हैं । अल्प बचत योजनाओं में विभिन्न परिपक्वताओं वाली जमाराशियाँ और सार्वजनिक भविष्य निधियाँ शामिल हैं । अन्य वित्तीय सेवाओं में मनी आर्डर,

**सारणी 7.30 : बैंक खाता रखनेवाले अर्जक - 2007**

(कुल अर्जकों* में से प्रतिशत)

| वार्षिक आय का दायरा (रुपये) | शहरी | ग्रामीण | कुल |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| 50,000 से कम | 34.1 | 26.8 | 28.3 |
| 50,000 से 100,000 | 75.5 | 71.2 | 73.0 |
| 100,000 से 200,000 | 91.8 | 87.4 | 89.9 |
| 200,000 से 400,000 | 95.5 | 93.6 | 94.9 |
| 400,000 से अधिक | 98.0 | 96.3 | 97.6 |
| सभी | 61.7 | 38.0 | 44.9 |

* : अर्जक की परिभाषा एक ऐसे व्यक्ति के रूप में दी गई है जो 18-59 वर्ष की आयु के दायरे में है और कुछ नकदी आय अर्जित कर रहा है ।
**स्रोत :** आइआइएमएस, 2007

**चार्ट VII.3 : डाक घर बचत योजनाएँ - खातों की संख्या में अंश**
(मार्च 2005 के अंत में)

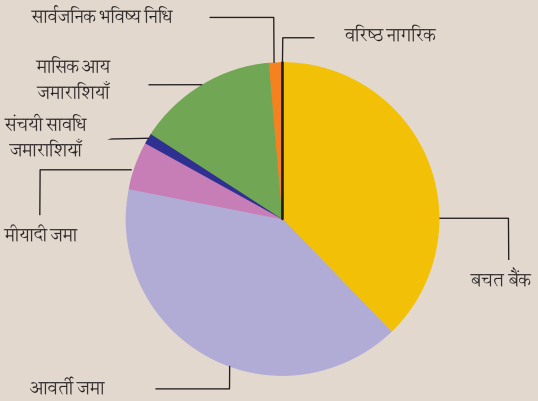


अंतरराष्ट्रीय विप्रेषण, म्यूच्युअल फंड और डाक जीवन बीमा शामिल हैं ।

7.116 डाक घरों के पास, जो चेक सुविधा देते हैं, बचत बैंक खातों की संख्या 60.3 मिलियन अर्थात् बैंकों के पास बचत खातों (लगभग 320 मिलियन) का लगभग 19 प्रतिशत थी । मार्च 2005 की समाप्ति पर डाक घरों में बचत जमाराशियों की प्रति खाता राशि लगभग 2,500 रुपये थी जबकि बैंकों के पास यह लगभग 15,000 रुपये थी । यह इसलिए था क्योंकि डाक घर बड़ी सीमा तक निम्न आय वर्गों की बैंकिंग आवश्यकताएँ पूरी करते हैं । बचत बैंक खातों के अतिरिक्त, डाक घर कई अन्य उत्पाद भी देते हैं (चार्ट VII.3)।

7.117 विभिन्न संस्थाओं (अनुसूचित वाणिज्य बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, शहरी सहकारी बैंक, प्राथमिक कृषि ऋण समितियाँ और डाक घर) के पास बचत खातों की कुल स्थिति ने संख्यात्मक रूप में 1993 की तुलना में 2002 तक और उससे आगे 2007 तक नियमित सुधार दर्शाया है । तथापि, प्रति 100 व्यक्ति/वयस्क बचत खाते 1993 की तुलना में 2002 में घट गये । इसके बाद स्थिति में उल्लेखनीय रूप में सुधार आया। इसके परिणास्वरूप, 2007 में प्रति 100 उसके व्यक्ति/वयस्क बचत खाते 1993 की तुलना में अधिक थे (सारणी 7.31)।

*बीमा सेवाएँ*

7.118 अधिकांश देशों में जनसंख्या के एक बहुत बड़े भाग के पास औपचारिक बीमा सेवाओं तक पहुँच नहीं है । अनेक देशों में व्यष्टि-बीमा सेवाओं का विस्तार केवल हाल के वर्षों में ही होने लगा है । बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण (आइआरडीए) निम्न आय वाले परिवारों के लिए बीमा सेवाएँ प्रदान करने के लिए सक्रिय रूप से प्रोत्साहित करता रहा है ।

**सारणी 7.31 : संस्थाओं के पास बचत खातों की संख्या**

(मिलियन)

| संस्था/मार्च के अंत में | 1993 | 2002 | 2007 |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| अनुसूचित वाणिज्य बैंक | 246.0 | 246.5 | 320.9 |
| क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक | 30.5 | 36.7 | 52.7 |
| प्राथमिक कृषि ऋण समितियाँ | 89.0 | 102.1 | 125.8 |
| शहरी सहकारी बैंक | 41.6 | 41.6 | 50.0 |
| डाक घर | 47.5 | 60.2 | 60.8 |
| **कुल** | **454.6** | **487.1** | **610.3** |
| **प्रति 100 व्यक्ति कुल खाते** | **51** | **46** | **54** |
| **प्रति 100 वयस्क कुल खाते** | **80** | **72** | **82** |

**टिप्पणी :** 1. 1993 और 2002 के लिए शहरी सहकारी बैंकों संबंधी आंकड़ों का अनुमान अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के मामले में पाई गई वृद्धि के समान ही मानते हुए किया गया है ।
2. प्राथमिक कृषि ऋण समितियों के मामले में खातों की संख्या कुल सदस्यता दर्शाती है ।
3. 2007 के लिए डाक घरों के पास बचत खातों संबंधी आंकड़ों का अनुमान 1999-2000 और 2004-05 के बीच चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर के आधार पर किया गया है ।

**सारणी 7.32 : बीमा व्यापन अनुपात - चयनित देश - 2005**

| देश | बीमा व्यापन |
|---|---|
| 1 | 2 |
| **विकासशील देश** | |
| बंगला देश | 0.61 |
| चीनी जनतांत्रिक गणतंत्र | 2.70 |
| **भारत** | **3.14** |
| इंडोनेशिया | 1.52 |
| पाकिस्तान | 0.67 |
| फिलिपीन्स | 1.48 |
| श्रीलंका | 1.46 |
| **विकसित देश** | |
| जापान | 10.54 |
| युनाइटेड किंगडम | 12.45 |
| संयुक्त राज्य अमेरिका | 9.15 |
| कोरिया गणतंत्र | 10.25 |

**टिप्पणी :** बीमा व्यापन सकल देशी उत्पाद के प्रतिशत के रूप में सकल बीमा प्रीमियम है ।
**स्रोत :** एशियाई विकास बैंक, 2007।

2002 में आइआरडीए ने बीमा कंपनियों के लिए ग्रामीण और सामाजिक क्षेत्र लक्ष्य निर्धारित किये हैं । आइआरडीए अधिनियम, 1999 के प्रारंभ होने के बाद इस व्यवसाय में प्रवेश करनेवाले सभी बीमाकर्ताओं से अपेक्षित है कि वे ग्रामीण और सामाजिक क्षेत्रों के प्रति अपने दायित्वों का पालन एक चरणबद्ध रूप में करें । भारत में, नवंबर 2007 में जीवन बीमा पालिसियों (व्यक्तिगत एकल प्रीमियम) की कुल संख्या लगभग 3.41 मिलियन थी (आइआरडीए, 2008)। इसका अर्थ यह है कि प्रति हजार व्यक्ति केवल लगभग 3.1 पालिसियाँ हैं । भारत में बीमा का व्यापन (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में बीमा प्रीमियम) कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक था, परंतु उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उल्लेखनीय रूप में कम था (सारणी 7.32)।

### विभिन्न एजेंसियों द्वारा वित्तीय समावेशन का मूल्यांकन : एक तुलना

7.119 एनएसएसओ के अखिल भारतीय ऋण और निवेश सर्वेक्षण एवं रिजर्व बैंक द्वारा प्रकाशित बीएसआर डाटा[9] की तुलना से यह विदित होता है कि बैंकों द्वारा परिवारों को प्रदान किये गये ऋण में उल्लेखनीय अंतर हैं (सारणी 7.33)। यह प्रतीत होता है कि बैंकिंग प्रणाली के प्रति घरेलू ऋणग्रस्तता की सीमा के संबंध में एनएसएसओ डेटा द्वारा परिवारों/खातों और बकाया ऋण दोनों के तौर पर कम अनुमान किया गया है । इसके अलावा, ऋण खातों की संख्या और ऐसे खातो में बकाया राशि, जैसी कि बीएसआर डेटा में प्रकट की गई है, 2002 और 2007 के बीच तेजी से बढ़ गईं ।

7.120 एनसीएईआर/मैक्स न्यूयार्क लाइफ सर्वेक्षण के साथ बचत खातों और अन्य संस्थाओं (शहरी सहकारी बैंकों, डाक घरों और प्राथमिक कृषि ऋण समितियों के पास खातों)के संबंध में समेकित बीएसआर डेटा की तुलना से भी वित्तीय समावेशन की सीमा में उल्लेखनीय अंतरों का पता चलता है । बैंकों और विभिन्न अन्य वित्तीय संस्थाओं से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार 2007 में 100 में से 54 व्यक्तियों ने किसी न किसी औपचारिक वित्तीय संस्था के पास बचत खाता रखा जबकि तुलनात्मक रूप में स्थिति 2005 में प्रति 100 व्यक्ति 50 खातों की थी । 5 व्यक्तियों को परिवार का औसत आकार मानते हुए मालूम होता है कि प्रति 100 परिवारों के लिए लगभग 250 खाते (प्रति परिवार 2.5 खाते) हैं । दूसरी ओर, एनसीएईआर/मैक्स न्यूयार्क लाइफ सर्वेक्षण ने पाया कि 66 प्रतिशत परिवारों ने किसी एक वित्तीय संस्था के पास खाता धारित किया, जिससे विदित होता है कि प्रति 100 व्यक्ति 13 खाते[10] हैं (चार्ट VII.4)। विभिन्न अध्ययनों में वित्तीय

[9] रिजर्व बैंक बीएसआर-1 नामक एक वार्षिक विवरणी में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों (क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों सहित) से 31 मार्च की स्थिति के अनुसार बकाया ऋण के बारे में सूचना संगृहीत करता है ।बीएसआर-1 के भाग-एवं में 200,000 रु पये से अधिक की ऋण सीमा वाले सभी खातों के बकाया ऋण के संबंध में विस्तृत खाता-वार सूचना उपलब्ध कराई जाती है तथा भाग-बी में 200,000 रु पये तक के अग्रिमों के लिए, जिन्हें छोटे उधार खाते कहा जाता है, सूचना दी जाती है । केवल खातों की संख्या, बकाया राशि और ऋण सीमाओं के संबंध में व्यवसाय-वार समेकित सूचना प्राप्त की जाती है । व्यक्तियों, स्वामित्व और भागीदारी वाले प्रतिष्ठानों, सहकारी समितियों, कंपनी निकायों और ऐसे अन्य समूहों जैसे खातादारों की श्रेणी के अनुसार छोटे उधार खातों के बकाया ऋणों के संबंध में विस्तृत खाता-वार सूचना छोटे उधार खातों के एक अलग सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त की जाती है । मार्च 2002 की स्थिति के अनुसार वैयक्तिक खाताधारकों के संबंध में कुल बकाया राशि की सूचना प्राप्त करने के लिए छोटे उधार खातों के सर्वेक्षण 2001 के परिणामों का उपयोग किया गया जो 31 मार्च 2002 के लिए बीएसआर-1 से संबंधित निकटतम सर्वेक्षण है ।

[10] आइआइएमएस, 2007 सर्वेक्षण ने निर्दिष्ट किया कि उत्तरदाताओं (अर्जकों) के लगभग 45 प्रतिशत का किसी न किसी बैंक में खाता था । उक्त सर्वेक्षण के निष्कर्ष, जो अर्जकों के लिए लागू हैं, अन्य डेटा के साथ तुलनीय नहीं हैं जिनके बारे में इस अध्याय में चर्चा की गई है ।

**सारणी 7.33 : एआइडीआइएस और बीएसआर डेटा की तुलना - वाणिज्य बैंकों के प्रति परिवारों की ऋणग्रस्तता**

| मद | एआइडीआइएस 1991 | बीएसआर 1991 | एआइडीआइएस 2002 | बीएसआर 2002 | बीएसआर 2007 |
|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 |
| परिवारों/खातों की संख्या '000 में | 10,277 (16.9) | 60,911 | 10,189 (19.9) | 53,918 | 83,016 |
| बकाया ऋण की राशि (करोड़ रुपये) | 10,775 (24.9) | 43,171 | 46,712 (27.8) | 175,659 | 654,392 |
| प्रति परिवार/खाता बकाया राशि (रुपये) | 10,464 | 7,088 | 45,846 | 32,579 | 78,827 |
| **विभिन्न ब्याज दर समूहों के अंतर्गत बकाया ऋण का अंश** | | | | | |
| 12.0 प्रतिशत से कम | – | – | 27.6 | 16.9 | 64.2 |
| 12.0-15.0 प्रतिशत | – | – | 40.9 | 57.2 | 18.5 |
| 15.0 प्रतिशत और उससे अधिक | – | – | 31.5 | 25.0 | 17.3 |

**टिप्पणी :** स्तंभ 2 और 4 में कोष्ठक में आंकड़े क्रमशः स्तंभ 3 और 5 में बीएसआर डेटा के प्रतिशत के रूप में एआइडीआइएस डेटा को निर्दिष्ट करते हैं ।

समावेशन/वंचन के परिमाण में अंतर अन्य बातों के साथ-साथ डेटा संबंधी समस्याओं और कार्यपद्धतियों में अंतरों, परिभाषाओं और अन्य उपादानों के कारण हो सकते हैं जिनके बारे में ऊपर चर्चा की गई है । अतः विभिन्न स्रोतों से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर परिणामों का सावधानीपूर्वक अर्थ लगाने की आवश्यकता है ।

7.121 बचत खातों के व्यापन का मूल्यांकन करते समय यह उपयुक्त होगा कि उन लोगों को छोड़ दिया जाए जिनके पास बचत करने के लिए बहुत कम अथवा शून्य क्षमता है । गरीबी की रेखा से नीचे रहनेवाले 22 प्रतिशत से भी अधिक लोगों के पास इतनी बचत नहीं होगी कि वे उसे बैंक जमाराशियों में अथवा अन्य वैकल्पिक सरणियों में रखें ।

**चार्ट VII.4 : प्रति 100 व्यक्ति बचत खाते - विभिन्न अनुमान**

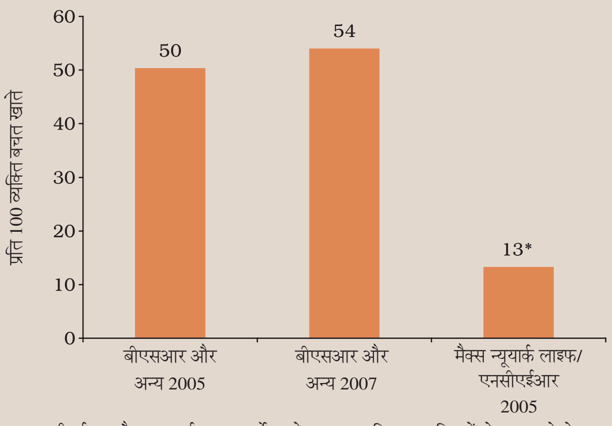


* : एनसीईआर/मैक्स न्यूयार्क लाइफ सर्वेक्षण के अनुसार प्रति 100 परिवारों के 66 खाते थे । प्रति परिवार 5 सदस्यों के औसत आकार को मानते हुए खातों की संख्या की गणना प्रति 100 व्यक्ति 13 खातों के रूप में की गई ।

**टिप्पणी :** बीसीआर और अन्य अ. वा. बैंकों, श. स. बैंकों, डाक घरों के पास बचत खातों तथा पीएसीएस के पास सदस्यता का द्योतन करते हैं (2006)।

इसकी पुष्टि मैक्स न्यूयार्क लाइफ-एनसीईआर अध्ययन (2008) द्वारा भी की गई जिन्होंने पाया कि कुल परिवारों में से लगभग 20 प्रतिशत के पास कोई बचत नहीं थी । इस प्रकार परिवारों के एक खंड के लिए बैंकिंग सेवाओं तक पहुँचने में बाधा उनके लिए उपलब्ध बैंकिंग सेवाओं के अभाव की अपेक्षा बचत के अभाव के कारण है । गरीबी की रेखा से नीचे रहनेवाले लोगों को वर्जित करने के बाद यह अनुमान है कि भारत में प्रति 100 वयस्क 105 खाते हैं[11] ।

7.122 व्यावहारिक विश्लेषण से यह विदित होता है कि आर्थिक वृद्धि और मूलभूत संरचना (माँग संबंधी कारक), तथा शाखा नेटवर्क (आपूर्ति संबंधी कारक) वित्तीय समावेशन के मुख्य निर्धारक तत्व हैं । इसके साथ ही, वित्तीय समावेशन अन्य बातों के साथ-साथ आर्थिक विकास को भी प्रभावित करता है (बॉक्स VII.15)।

7.123 सारांश के तौर पर एनएसएसओ के अखिल भारतीय ऋण और निवेश सर्वेक्षण के अनुसार परिवारों की ऋणग्रस्तता 1991 और 2002 के बीच तेजी से बढ़ी । यह मुख्य रूप से उपभोग और अन्य व्यय में तीव्र वृद्धि के कारण थी जिसके लिए वित्तपोषण संस्थागत स्रोतों से आसानी से नहीं हो सकता था । आंकड़ों से यह भी सूचना मिलती है कि आनुपातिक रूप में ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में संस्थागत स्रोतों के प्रति ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या 1991 और 2002 के बीच बढ़ी । तथापि, संस्थागत स्रोतों के प्रति ऋणग्रस्त परिवारों का अनुपात और परिवारों के बकाया ऋण में संस्थागत स्रोतों का अंश 1991 और 2002 के बीच तेजी से घट गया । विस्तृत रूप से किया गया विश्लेषण यह सूचित करता है कि 1991 और 2002 के बीच संस्थागत एजेंसियों ने परिवारों को ऋण में वृद्धि करना लगभग उसी दर से जारी रखा जो 1981 और 1991 के बीच विद्यमान थी । तथापि, गैर-संस्थागत स्रोतों से उपभोग और अन्य अनुत्पादक प्रयोजनों के लिए ऋण में तीव्र वृद्धि के परिणामस्वरूप

[11] प्रति 100 वयस्क 82 बचत खातों का आशय गरीबी की रेखा से ऊपर रहनेवाले लगभग प्रति 78 वयस्क 82 खाते हैं (गरीबी की रेखा से नीचे रहनेवाले 22 प्रतिशत लोगों को छोड़ने के बाद)।

## बॉक्स VII.15
## वित्तीय समावेशन और विकास के संकेतकों के बीच संबंध

माँग और आपूर्ति दोनों संबंधी कारकों का बैंकिंग सेवाओं के उपयोग के साथ एक महत्वपूर्ण संबंध है । आपूर्ति संबंधी कारकों में अन्य बातों के साथ-साथ शाखा से दूरी, शाखा का कार्य-समय, बोझिल प्रलेखन और कार्यविधियाँ तथा उत्पादों की उपयुक्तता शामिल हैं । माँग के संबंध में वित्तीय सेवाओं के लिए माँग को प्रभावित करनेवाले मुख्य कारक हैं आय का स्तर, मूलभूत संरचना का विकास और वित्तीय साक्षरता । वास्तव में, साहित्य में यह तर्क दिया जाता है कि वित्तीय समावेशन और आर्थिक विकास के बीच एक दुतरफा संबंध है अर्थात् अधिकाधिक वित्तीय समावेशन आय के उच्चतर स्तर को प्रेरित करता है जो फिर उच्चतर वित्तीय समावेशन के लिए प्रेरणा देता है ।

वित्त और संवृद्धि संबंधी साहित्य यह संकेत करता है कि वित्तीय समावेशन आर्थिक संवृद्धि का एक प्रमुख निर्धारक तत्व है । उच्चतर आर्थिक संवृद्धि और मूलभूत संरचना फिर वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं । इस प्रकार यह तर्क दिया जाता है कि समदृष्टि के साथ संवृद्धि का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए यह अनिवार्य है कि मूलभूत संरचना को वित्तीय समावेशन के आगे-पीछे विकसित किया जाए क्योंकि यह ऋण के अवशोषण की क्षमता को सुसाध्य बनाती है और उसमें वृद्धि करती है । 2001 और 2006 के लिए राज्य-वार पैनल आंकड़ों के आधार पर सामान्य रूप से वित्तीय समावेशन और आर्थिक विकास एवं विशेष रूप से मूलभूत संरचना के विकास के बीच परस्पर संबंध की अनुभवपूर्वक जाँच करने के लिए एक प्रयोग किया गया । प्रति 100 व्यक्तियों के बचत और ऋण खातों को वित्तीय समावेशन के परोक्ष संकेतकों के रूप में लिया गया । प्रति व्यक्ति आय का उपयोग आर्थिक विकास के संकेतक के रूप में किया गया तथा बिजली के उपभोग और सड़क की दूरी को मूलभूत संरचना के विकास के संकेतकों के रूप में लिया गया ।

उक्त विश्लेषण से निम्नलिखित निष्कर्ष निकलते हैं । पहला, प्रति व्यक्ति आय और शाखा नेटवर्क के अलावा, बिजली की खपत बचत खातों के विस्तार को निर्धारित करने में एक महत्वपूर्ण कारक है । दूसरे, बिजली की खपत भी ऋण खाता व्यापन को एक महत्वपूर्ण तरीके से प्रभावित करती है। तीसरे, प्रति 100 व्यक्तियों के लिए ऋण खातों के अतिरिक्त, मूलभूत संरचना का विकास भी प्रति व्यक्ति आय के स्तर को उल्लेखनीय रूप में प्रभावित करता है (सारणी 1)। इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि आर्थिक विकास और मूलभूत संरचना, बचत और ऋण के कार्यकलापों के विस्तार के लिए सहायक स्थितियों का निर्माण करते हुए वित्तीय समावेशन में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं । वित्तीय समावेशन का आर्थिक संवृद्धि पर एक सकारात्मक प्रभाव भी है ।

**सारणी 1 : प्रतिगमन अनुमान**

| परिवर्ती (वेरिएबल्स)/ समीकरण | आश्रित परिवर्ती | | |
|---|---|---|---|
| | बचत खाते | ऋण खाते | प्रति व्यक्ति आय |
| स्थिर | -105.8<br>(-2.69) * | -23.03<br>(-1.88) | 9.07<br>(108.95) * |
| प्रति व्यक्ति आय | 10.74<br>(2.54) * | 2.77<br>(2.14) * | – |
| बिजली | 0.15<br>(2.62) * | 0.04<br>(1.89) * | 0.006<br>(4.04) * |
| शाखा नेटवर्क | 2.86<br>(10.02) * | – | – |
| सड़क नेटवर्क | – | – | 0.001<br>(2.90) * |
| ऋण खाते | – | – | 0.30<br>(2.92) * |
| समायोजित आर$^2$ | 0.89 | 0.40 | 0.72 |

**टिप्पणी :**

1. प्रेक्षणों की संख्या - 54
2. कोष्ठक में आंकड़े 'टीट' ('T') सांख्यिकी हैं; (*) के साथ चिह्नित मूल्य 95 प्रतिशत पर महत्वपूर्ण हैं ।
3. परिवर्ती - रुपयों में प्रति व्यक्ति आय; बिजली = प्रति 100,000 व्यक्ति एमडब्ल्यू में बिजली की खपत; सड़क नेटवर्क = कि.मी. में सड़क की लंबाई; शाखा नेटवर्क = प्रति 100,000 व्यक्ति शाखाएँ; बचत खाते = प्रति 100 व्यक्ति बचत खाते; ऋण खाते = प्रति 100 व्यक्ति ऋण खाते ।
4. यह प्रयोग वर्ष 2001 और 2006 के लिए समूहीकृत विभिन्न क्षेत्रों से लिए गए राज्य-वार आंकड़ों पर आधारित है । विश्लेषण से कुछ संघ राज्य क्षेत्रों (यूटी)/छोटे राज्यों को छोड़ दिया गया है ।
5. 2006 के लिए सड़क की लंबाई के आंकड़ों का अनुमान 2002 के आंकड़ों और पिछले दो वर्षों के दौरान संवृद्धि की दर के आधार पर किया गया है; बिजली संबंधी आंकड़ों का अनुमान 2004-05 और पिछले दो वर्षों में संवृद्धि दर के आधार पर किया गया है ।

**आंकड़ों के स्रोत -** केंद्रीय बिजली प्राधिकरण, www.cea.nic.in; सड़क परिवहन और राजमार्ग विभाग, http://morth.nic.in; और भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की बैंकिंग सांख्यिकीय विवरणियाँ ।

ऋणग्रस्त परिवारों की कुल संख्या और उनके बकाया ऋण में संस्थागत स्रोतों के अंश में उल्लेखनीय गिरावट हुई ।

7.124 परिवारों को बैंक ऋण 1981 और 1991 के बीच की तुलना में 1991 और 2002 के बीच थोड़ी निम्नतर दर से बढ़ा । तथापि, इसे अपने तुलन-पत्रों को मजबूत बनाने के संबंध में बैंकों के बढ़े हुए फोकस तथा विवेकपूर्ण मानदंडों को लागू करने/सख्त बनाने के कारण जोखिम के प्रति उनकी कुछ विमुखता के संदर्भ में देखने की आवश्यकता है । उक्त अवधि के दौरान बैंकों का समग्र ऋण भी मंद हुआ । इस प्रकार परिवारों को बैंकों के ऋण में सीमांत रूप में मंदी ऋण में समग्र मंदी के अनुरूप ही थी । ग्रामीण क्षेत्र में ऋण के लिए माँग इस अवधि में कृषि की वृद्धि में मंदी द्वारा भी प्रभावित हुई थी । पिछला एआइडीआइएस सर्वेक्षण वर्ष 2002 के लिए संचालित किया गया था । तथापि, उसके बाद जरूरतमंद क्षेत्रों को ऋण की उपलब्धता बढ़ाने और बैंकिंग के दायरे में और अधिक लोगों को लाने के लिए रिज़र्व बैंक और सरकार द्वारा अनेक पहलें की गईं । 2000 के दशक के प्रारंभ से ऋण व्यापन (प्रति 100 व्यक्ति ऋण खाते) तथा सामान्य रूप से ग्रामीण क्षेत्र को और खास तौर से कृषि को ऋण की उपलब्धता में एक सुस्पष्ट सुधार रहा है । ऋण के सभी औपचारिक स्रोतों को एक साथ लेते हुए प्रति 100 वयस्क ऋण खातों की संख्या 2002 के 18 से उल्लेखनीय रूप में बढ़कर 2007 में 25 हो गई। एनएसएसओ और बीएसआर डेटा की तुलना से यह विदित होता है कि बैंकिंग प्रणाली के प्रति परिवारों की ऋणग्रस्तता की सीमा के संबंध में एनएसएसओ डेटा द्वारा परिवारों/खातों और बकाया ऋण दोनों के तौर पर भारी मात्रा में

कम अनुमान किया गया है जो अन्य बातों के साथ-साथ कार्यपद्धति में अंतरों के कारण हो सकता है ।

7.125 जमाराशियों की ओर, प्रति 100 व्यक्ति/वयस्क बचत खाते 1993 की तुलना में 2002 में सीमांत रूप से घटे, जो उन कारणों से था जिन्हें ऊपर निर्दिष्ट किया गया है । तथापि, स्थिति उसके बाद उल्लेखनीय रूप से सुधरी तथा प्रति 100 व्यक्ति/वयस्क बचत खाते 1993 की तुलना में 2007 में अधिक थे । बैंकों और अन्य संस्थाओं (शहरी सहकारी बैंकों, डाक घरों और प्राथमिक कृषि ऋण समितियों) के पास बचत खातों के संबंध में समेकित आंकड़ों के अनुसार 2007 में 100 में से 54 व्यक्तियों के पास बचत खाते थे । पाँच व्यक्तियों को परिवारों का औसत आकार मानते हुए प्रति 100 परिवार लगभग 250 खाते अथवा प्रति परिवार 2.5 खाते धारित किये गये । परिवारों के संबंध में 2005 में संचालित एनसीएईआर/मैक्स न्यूयार्क लाइफ सर्वेक्षण यह सूचित करता है कि 66 प्रतिशत परिवारों ने वित्तीय संस्थाओं के पास खाते धारित किये थे जो गणना से प्रति 100 व्यक्ति 13 खाते बनता है । इससे यह संकेत मिलता है कि विभिन्न डेटा सेटों/स्रोतों में महत्वपूर्ण अंतर हैं तथा वित्तीय समावेशन/वंचन की सीमा के बारे में किसी भी निष्कर्ष पर पहुँचते समय अत्यंत सावधानी बरतने की आवश्यकता है ।

7.126 देश में वित्तीय समावेशन की प्रगति का मूल्यांकन करने के लिए काफी अधिक विस्तृत कार्य करने और तब इसे बढ़ावा देने के लिए आगे और कार्यनीतियाँ बनाने की आवश्यकता है । आंकड़ों के एक ही स्रोत पर निर्भर होने से त्रुटिपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं तथा वास्तविक स्थिति का अधूरा मूल्यांकन हो सकता है । 1990 के दशक से सरकारी क्षेत्र के बैंकों को वित्तीय रूप से मजबूत करने के बाद चालू दशक में विभिन्न दिशाओं में उल्लेखनीय प्रगति की गई है । अंतिम रूप से आंकड़ों से व्यष्टि-वित्त आंदोलन को बहुत उल्लेखनीय रूप में मजबूत करने का संकेत मिलता है । दक्षिण के अलावा अन्य क्षेत्रों में उसकी व्याप्ति के लिए सशक्त रूप से कार्रवाई करने की आवश्यकता है । भारत के संदर्भ में अनुभवजन्य साक्ष्य यह संकेत करता है कि आर्थिक विकास और मूलभूत संरचना (माँग संबंधी कारक) तथा शाखा नेटवर्क (आपूर्ति संबंधी कारक) वित्तीय समावेशन को प्रभावित करनेवाले मुख्य कारक थे । अन्यों के साथ-साथ वित्तीय समावेशन भी आर्थिक विकास को प्रभावित करता है ।

## VI. वित्तीय समावेशन के लिए परिचालन लागत और प्रौद्योगिकी का उन्नयन

7.127 वित्तीय सेवाएँ प्रदान करने की परिचालन लागत और उपयोगकर्ताओं पर लगाये जानेवाले प्रभार वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया के महत्वपूर्ण आयाम हैं । यह तर्क दिया जाता है कि छोटे खातों या कम मूल्य के लेनदेनों की परिचालन लागत प्रायः इस प्रकार के परिचालनों से प्राप्त होनेवाले राजस्व से अधिक हो जाती है । इसके परिणामस्वरूप, बैंक या तो ऐसी सेवाएँ प्रदान करने में सतर्क हो जाते हैं या ऐसी सेवाओं के उपयोगकर्ताओं से उच्चतर शुल्क वसूल करते है । दोनों ही स्थितियों में वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने में परिचालन लागत को एक प्रमुख अवरोध माना जाता है । अतः इस खंड में वित्तीय समावेशन की परिचालन लागत पर ध्यान केंद्रित किया गया है तथा यह जाँच की गई है कि इसे किस प्रकार न्यूनतम किया जा सकता है ।

### ऋणदाता का परिप्रेक्ष्य

7.128 बैंक प्रायः कम आय वाले समूहों को सेवाएँ प्रदान करते समय ऋण की हानि के भय अथवा ऋणों की वसूली करने में असमर्थता के कारण, विशेष रूप से जब निर्धन लोगों के पास 'समर्थक जमानत' (कॉलेटरल) के रूप में गिरवी रखने के लिए शायद ही कोई आस्ति हो, एक सतर्क दृष्टिकोण अपनाने की प्रवृत्ति दर्शाते हैं । जमा की सुविधा के मामले में खाता रखने की परिचालन लागत, विशेष रूप से जब खाते में औसत जमाराशि कम हो, कम आय वाले समूहों के लिए बैंकिंग सेवाओं की उपलब्धता को बैंकों के लिए एक आर्थिक रूप से अलाभकारी प्रस्ताव बना सकती है ।

7.129 आम तौर पर ऋण प्रदान करते समय औपचारिक वित्तीय क्षेत्र द्वारा व्यय की जानेवाली लागतों के तीन प्रकार हैं, अर्थात् (क) निधियों की लागत, (ख) परिचालन लागत, और (ग) ऋण हानियों की लागत । यह प्रत्याशा की जाती है कि सभी प्रकार के ऋण के लिए निधियाँ जुटाने की लागत एक ही होगी । तथापि, परिचालन लागत और ऋण हानियों की लागत उधारकर्ताओं के विभिन्न खंडों के लिए भिन्न-भिन्न हो सकती है । सामान्यतः छोटे ऋण प्रदान करने की परिचालन लागत उच्चतर समझी जाती है । योजना आयोग (2007) के अनुसार सामान्य वित्त की तुलना में व्यष्टि-ऋण प्रदान करने की परिचालन लागत उल्लेखनीय रूप में अधिक है । स्टाफ को वेतन, यात्रा व्यय, वित्तीय लागतों के अंतर्गत वर्गीकृत न किये गये कमीशन, समूहों के उन्नयन संबंधी व्यय, स्टाफ कल्याण से संबंधित व्यय, परिशोधन और मूल्यह्रास, भाड़े पर लिये गये भवनों पर किराया और अन्य उपरिव्यय (ओवरहेड्स) - ये सब परिचालन व्यय के अंतर्गत आते हैं । ये लागतें औपचारिक बैंकिंग क्षेत्र के परिचालन के लिए महत्वपूर्ण हैं । निम्न आय वाले समूहों को, विशेष रूप से बैंक सुविधा रहित क्षेत्रों में, छोटे ऋण प्रदान करने की विभेदक लागत सहकारी ऋण संस्थाओं और लघु वित्त संस्थाओं (एमएफआइ) द्वारा लगाई जानेवाली उच्च ब्याज-दरों में प्रतिबिंबित होती है । चूँकि इन संस्थाओं के पास प्रायः अपर्याप्त जमाराशियाँ होती हैं, अतः वे नाबार्ड, सिडबी और वाणिज्य बैंकों जैसी अन्य एजेंसियों से प्राप्त होनेवाली पुनर्वित्त सुविधाओं पर निर्भर हैं । योजना आयोग ने पाया कि पुनर्वित्त की औसत लागत 8 से 14 प्रतिशत तक भिन्न होती है । तथापि, परिचालनगत रूप से उचित ब्याज-दर, जो एक कुशल एमएफआइ को उधारकर्ताओं से वसूल करनी चाहिए, 22-26 प्रतिशत है । यह अंतर काफी सीमा तक परिचालन लागत के कारण है जो अपने औसत उधारकर्ताओं को सेवा प्रदान करनेवाले बैंकों द्वारा व्यय किये जानेवाले 3-4 प्रतिशत की तुलना में एमएफआइ के लिए लगभग 10-14 प्रतिशत है (योजना आयोग, 2007)।

7.130 उच्चतर समझी गई परिचालन लागतें बैंकों को निम्न आय समूहों के लिए बचत खाते जैसी सरल बैंकिंग सेवाएँ भी उपलब्ध कराने से रोकती हैं । कुछ अनुमान यह संकेत करते हैं कि 'नो फ्रिल्स' खातों के लिए भी, आर्थिक रूप से सक्षम गतिविधि होने के लिए औसतन लगभग 2,000 रुपये की शेषराशि अपेक्षित है (राव, 2007)। उदाहरण के लिए केनरा बैंक के मामले में एक नया (नो-फ्रिल्स) खाता खोलने की लागत 48 रुपये थी तथा प्रत्येक लेनदेन (जमा/विप्रेषण) की लागत 10 रुपये थी[12]। लाभ-अलाभ (ब्रेक ईवन) की स्थिति तक पहुँचने के लिए अपेक्षित जमाराशि की औसत राशि लेनदेनों की संख्या पर निर्भर है । अपेक्षित लाभ-अलाभ (ब्रेक ईवन) की औसत जमाराशि का स्तर 1,911 रुपये (एक वर्ष में 12 लेनदेनों के लिए) तथा 11,465 रुपये (एक वर्ष में 72 लेनदेनों के लिए) था । केनरा बैंक के लिए औसत शेष का अनुमान 528 रुपये पर किया गया जो एक वर्ष में 12 लेनदेनों के लिए लाभ-अलाभ (ब्रेक ईवन) स्तर के आधे से कम था (राव, 2007)। दो अन्य बैंकों के सर्वेक्षण से यह विदित हुआ कि 'नो-फ्रिल्स' खाते को परिचालित करने की लागत संरचना लगभग केनरा बैंक की उक्त लागत संरचना के समान ही थी । इस स्थिति के होते हुए कि नियत लागतों में प्रायः बैंक शाखाओं की परिचालन लागत का एक बड़ा भाग निहित रहता है तथा कार्मिकों की संख्या सामान्यतः नियत रहती है, छोटे खाते खोलने की सीमांत लागत की जाँच और अधिक सावधानीपूर्वक करने की आवश्यकता है एवं ऐसे खातों को खोलने और अनुरक्षित करने की लागतों को कम करने के लिए प्रौद्योगिकी के प्रयोग का आगे और पता लगाने की आवश्यकता है ।

7.131 जबकि 'नो-फ्रिल्स' खातों की परिचालन लागतें अधिक प्रतीत हो सकती हैं, कुछ बैंकों के लिए समग्रता में परिचालनों का विश्लेषण यह संकेत करता है कि वे बड़ी संख्या में 'नो-फ्रिल्स' खाते खोल सकते हैं और तब भी अपने कार्यनिष्पादन का स्तर बनाये रख सकते हैं । उदाहरण के लिए सिंडिकेट बैंक ने 2006-07 में सबसे बड़ी संख्या में 'नो-फ्रिल्स' खाते (1.25 मिलियन) खोले थे, जो एक वर्ष में किसी एक बैंक द्वारा खोले गए ऐसे खातों की सबसे बड़ी संख्या थी । परिणामस्वरूप, मार्च 2007 की समाप्ति पर बैंकिंग उद्योग द्वारा 'नो-फ्रिल्स' खातों में सिंडिकेट बैंक का अंश सबसे अधिक रहा । फिर भी, ऐसा प्रतीत नहीं हुआ कि एक वर्ष में बड़ी संख्या में 'नो-फ्रिल्स' खाते खोलने से सिंडिकेट बैंक की वित्तीय स्थितियाँ (फाइनैंशियल्स) प्रभावित हुईं क्योंकि वह आस्तियों पर अपने प्रतिलाभ (रिटर्न ऑन एसेट्स- आरओए) को बनाये रख सका (सारणी 7.34)। यह सही है कि आरओए कई कारकों से प्रभावित होता है, फिर भी सिंडिकेट बैंक का मामला यह संकेत करता है कि 'नो-फ्रिल्स' खाते खोलना हानिकारक प्रस्ताव नहीं हो सकता । इस संदर्भ में यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि हाल के वर्षों में 'नो-फ्रिल्स' खातों में औसत जमाराशि का आकार बढ़ा है । उच्च आर्थिक संवृद्धि को देखते हुए यह अनुमान है कि औसत जमाराशि के आकार में वृद्धि की यह प्रवृत्ति आगे और गति पकड़ेगी । इसके अलावा, निम्नतर आय वाले समूहों को बैंकिंग सेवाएँ मुहैया कराने से एक ऐसे उत्तम चक्र को प्रेरणा मिलेगी जिसके द्वारा बैंकिंग सेवाओं तक पहुँच, उच्च आर्थिक संवृद्धि के लाभों के अधिक न्यायसंगत वितरण को संभव बनाएगी जिसके परिणामस्वरूप निम्नतर आय वाले समूहों की आय के स्तर में सुधार होगा । इससे निम्नतर आय वाले समूहों द्वारा खोले गए खातों में औसत जमाराशि के आकार में वृद्धि के लिए मार्ग प्रशस्त होगा जिससे वित्तीय समावेशन बैंकों के लिए एक परिचालनगत रूप से लाभकारी और धारणीय व्यावसायिक दृष्टिकोण बनेगा । इसके अलावा, जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था में वृद्धि होती है और आय की वृद्धि घटित हो जाती है, यह आशा की जा सकती है कि आज के 'नो-फ्रिल्स' खाते कुछ ही वर्षों में सामान्य खाते की स्थिति प्राप्त करेंगे ।

## उधारकर्ता का परिप्रेक्ष्य

7.132 भारत में लोग बैंकों, व्यष्टि वित्त संस्थाओं (एमएफआइ) और निजी साहूकारों जैसी विभिन्न एजेंसियों से ऋण प्राप्त करते हैं ।

**सारणी 7.34 : आस्तियों और 'नो-फ्रिल्स' खातों पर प्रतिलाभ - चयनित बैंक**

| बैंक | आस्तियों के प्रतिशत के रूप में प्रतिलाभ | | | | 'नो-फ्रिल्स' खातों की संख्या | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | 2003-04 | 2004-05 | 2005-06 | 2006-07 | मार्च 2006 के अंत में | मार्च 2007 के अंत में |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| केनरा बैंक | 1.34 | 1.01 | 1.01 | 0.98 | 13,429 | 305,972 |
| सिंडिकेट बैंक | 1.67 | 0.82 | 0.91 | 0.91 | 41,329 | 1,290,898 |
| भारतीय स्टेट बैंक | 0.94 | 0.99 | 0.89 | 0.84 | 0 | 585,720 |
| एचडीएफसी बैंक | 1.45 | 1.47 | 1.38 | 1.33 | 2,055 | 26,644 |
| आइसीआइसीआइ | 1.31 | 1.59 | 1.30 | 1.09 | 112,075 | 193,989 |
| **अनुसूचित वाणिज्य बैंक** | **1.10** | **0.9** | **0.88** | **0.9** | **489,497** | **6,732,335** |

**स्रोत :** भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति संबंधी रिपोर्ट (विभिन्न अंक), भारतीय रिज़र्व बैंक ।

12 गणनाएँ कैन्सराल परिचालन खातों के नमूना अध्ययन पर आधारित हैं । खाते के लिए ब्याज लागत 2.35 प्रतिशत पर ली गई, जैसी कि नमूने में पाई गई थी । अन्य लागतों में शामिल हैं - स्टाफ लागत और उपरिव्यय (ओवरहेड) लागत । स्टाफ लागत की गणना लेनदेनों में लगे समय और प्रति मिनट स्टाफ लागत (2 रुपये प्रति मिनट प्रति स्टाफ) के आधार पर की गई । उपरिव्यय लागत स्टाफ लागत के 58 प्रतिशत के रूप में ली गई ।

**सारणी 7.35 : भारत में विभिन्न एजेंसियों से ऋण की लागत**

| ऋणदाता की श्रेणी | ब्याज-दर (प्रतिशत प्रति वर्ष) |
|---|---|
| 1 | 2 |
| स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी) | 18-24 |
| व्यष्टि-वित्त संस्थाएँ (एमएफआइ) | 20-24 |
| अनौपचारिक ऋण प्रदाता | 18-36 |
| बैंक (छोटे उधार खाते) | 6-20 |

**स्रोत :** 1. धन उधार देने संबंधी विधि-निर्माण की समीक्षा के लिए गठित तकनीकी दल के लिए रिपोर्ट ।
2. छोटे उधार खातों का सर्वेक्षण, 2004, भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन, जुलाई 2006 ।

अनौपचारिक/अर्ध-औपचारिक स्रोतों से उधार की लागत बैंकों से उधार की तुलना में उल्लेखनीय रूप में उच्चतर है (सारणी 7.35)। उधार की इस उच्च लागत के दो कारक हो सकते हैं अर्थात् परिचालन लागत और जोखिम बोध । व्यष्टि-वित्त संस्था (एमएफआइ) और स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी) मॉडलों के माध्यम से ऋण प्रदान करने की परिचालन लागत बढ़ जाती है क्योंकि ये मॉडल ऋणदाताओं और अंतिम उधारकर्ताओं के बीच मध्यस्थता के एक अतिरिक्त स्तर को संबद्ध करते हैं । तथापि जहाँ तक जोखिम बोध का संबंध है, एसएचजी के मामले में उच्चतर वसूली दर यह सूचित करती है कि छोटे उधारकर्ताओं के बारे में जोखिम बोध कम होना चाहिए । अतः एमएफआइ अथवा अनौपचारिक एजेंसियों द्वारा लगाई गई उच्च दर या तो उच्च परिचालन लागत के कारण है या प्रभारित उच्च ब्याज मार्जिनों के कारण । जैसा कि भारत एवं अन्य देशों में विभिन्न प्रायोगिक परियोजनाओं के अनुभव से स्पष्ट है, छोटे उधारकर्ताओं को ऋण उपलब्ध कराने की परिचालन लागत यह अभिप्राय निकालते हुए उल्लेखनीय रूप में कम की जा सकती है कि छोटे ऋणों पर ब्याज-दरें कम करने के लिए बहुत गुंजाइश है ।

7.133 भारत में व्यष्टि-ऋण संस्थाओं (एमएफआइ) की लागतों और मार्जिन संबंधी रिपोर्ट (कृ.बैं.म., 2007) के अनुसार किसी एमएफआइ के उधारकर्ता के लिए लागत के अंतर्गत सामान्यतः ब्याज-दर और अन्य प्रभार जैसे प्रसंस्करण/प्रशासनिक प्रभार और प्रारंभिक

**सारणी 7.36 : व्यष्टि-वित्त संस्थाओं के प्रभार (मार्च 2006)**

| राज्य | उधारकर्ता के लिए लागत का दायरा (प्रतिशत) |
|---|---|
| 1 | 2 |
| आंध्र प्रदेश | 17.0 से 32.5 |
| कर्नाटक | 12.0 से 40.0 |
| उड़ीसा | 14.0 से 24.5 |
| राजस्थान | 16.0 |
| उत्तर प्रदेश | 13.0 से 26.0 |

**स्रोत :** कृ.बैं.म, 2007 । *व्यष्टि-वित्त संस्थाओं की लागतों और मार्जिन संबंधी रिपोर्ट,* कृषि बैंकिंग महाविद्यालय, (कृ.बैं.म.), भारतीय रिज़र्व बैंक ।

शुल्क शामिल हैं। उक्त अध्ययन यह दर्शाता है कि किसी एमएफआइ के उधारकर्ता के लिए समग्र लागत के संबंध में राज्यों के बीच व्यापक तौर पर विभिन्नता है जो लगभग 24 प्रतिशत की माध्यिका मूल्य के साथ है (सारणी 7.36)।

## प्रौद्योगिकी की भूमिका

7.134 विशेष रूप से ग्रामीण और निम्न आय वाले समूहों के खंडों में बैंकिंग सेवाएँ उपलब्ध कराने की परिचालन लागत कम करने में प्रौद्योगिकी एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है । यदि सही व्यावसायिक मॉडल और पालिसी के साथ उचित रूप में मिलाया जाए तो प्रौद्योगिकी विस्तारपूर्वक आबादी के लिए वित्त तक वहनीय, अर्थक्षम और धारणीय पहुँच उपलब्ध कराने के लिए सफलता की कुंजी का काम करती है । वित्तीय सेवाओं की वृद्धि को संचालित करने के लिए मोटे तौर पर तीन प्रकार की प्रौद्योगिकियों को अभिनिर्धारित किया गया है । ये हैं (i) गरीब-समर्थक नई सूचना और संचार प्रौद्योगिकी, प्रधानतः कम लागत वाले सेल फोन; (ii) एटीएम और अन्य बिक्री केंद्र साधन; तथा (iii) स्मार्ट प्लास्टिक कार्ड।

7.135 केंद्रीयकृत आंकड़ा संसाधन प्रणाली और कंप्यूटर प्रणालियों पर आधारित गैर-पारंपरिक पद्धतियाँ, जिनके लिए बिजली की अबाधित आपूर्ति और रेडियो आवृत्ति नेटवर्क की आवश्यकता नहीं होती, वित्तीय सेवाएँ उपलब्ध कराने की लागत को उल्लेखनीय रूप में कम कर सकती हैं । ऐसे अनेक मामले हैं जहाँ बैंकों ने उपयुक्त प्रौद्योगिकी के उपयोग के साथ परिचालन लागतों को कम रखते हुए वहनीय मूलभूत संरचना सहित दूरस्थ और बैंक सुविधा रहित क्षेत्रों में बैंकिंग सेवाओं की व्याप्ति का विस्तार किया है । प्रौद्योगिकी में नई वितरण व्यवस्थाओं और व्यावसायिक मॉडलों की दिशा में मार्ग प्रशस्त करने की संभावना है । उदाहरण के लिए प्रौद्योगिकी शाखारहित बैंकिंग तथा वित्तीय सेवा प्रदाताओं और अन्य सेवा प्रदाताओं के एक दायरे के बीच नई भागीदारियों की स्थापना को संभव बनाती है जबकि इसके पहले दूरस्थ क्षेत्रों में और आबादी की कम सघनता वाले क्षेत्रों में स्थित ग्राहकों को सेवाएँ प्रदान करना व्यवहार्य नहीं था ।

7.136 अनेक देशों में मोबाइल फोन-आधारित सेवाएँ व्यष्टि-वित्त सेवाओं में आमूल परिवर्तन कर रही हैं (एशियाई विकास बैंक, 2007)। मोबाइल बैंकिंग (अथवा मोबाइल भुगतान) एक ऐसी शब्दावली है जिसका प्रयोग शेष राशि की जाँच, खाता संबंधी लेनदेन, भुगतान आदि कार्य मोबाइल फोन जैसे चलते-फिरते साधन, पीडीए या इस प्रकार के अन्य साधन के माध्यम से करने के लिए प्रयुक्त है । अधिकांश मोबाइल भुगतान प्लेटफार्म चार श्रेणियों के अंतर्गत आते हैं : (i) मोबाइल बैंकिंग जिससे उपयोगकर्ता मोबाइल फोन का प्रयोग करते हुए शेष राशि की जाँच, निधि अंतरण, बिल भुगतान जैसे बैंकिंग संबंधी लेनदेन कर सकते हैं; (ii) दूरस्थ खरीद; (iii) व्यक्ति से व्यक्ति को अंतरण; और (iv) बिक्री केंद्र अर्थात् व्यापार

### सारणी 7.37 : विभिन्न प्रौद्योगिकियों के गुण और दोष

| संबद्धता | गुण | दोष |
|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 |
| संक्षिप्त संदेश सेवा (एसएमएस) | 1. अनुप्रयोग बनाना अधिक आसान<br>2. पहले से ही संप्रेषण के लिए लोकप्रिय माध्यम<br>3. बिलिंग कार्यकलाप परिचालक की प्रणालियों के साथ मजबूत एकीकरण द्वारा स्वचालित किये जा सकते हैं | 1. अभी अविश्वसनीय - संदेश की सुपुर्दगी की गारंटी नहीं है<br>2. प्रयोक्ता से अपेक्षित है कि कूट/संकेत शब्द याद रखे<br>3. प्रति संदेश डेटा आकार 160 अक्षरों/अंकों तक सीमित<br>4. बहुविध एसएमएस आधारित लेनदेनों के लिए प्रयोक्ता का प्रतिरोध संभव |
| सामान्य पैकेट रेडियो सेवा (जीपीआरएस)/ कूट प्रभाग बहुविध पहुँच (सीडीएमए) | 1. उन्नत विशेषताएँ निर्मित करने का सामर्थ्य देता है<br>2. प्रयोक्ता सुनिर्मित यूजर इंटरफेस (यूआइ) के साथ अन्योन्य क्रिया करता है और किसी प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं<br>3. ई-कॉमर्स परिदृश्यों के साथ सीमांतहीन रूप में एकीकृत हो सकता है<br>4. जीपीआरएस के लिए विकास कौशल सेट व्यापक रूप से उपलब्ध हैं | 1. जीपीआरएस/सीडीएमए अभी लोकप्रिय नहीं हैं<br>2. विशेषतः जीपीआरएस के लिए अलग हार्डवेअर आवश्यक है तथा जहाँ भी जीएसएम संबद्धता उपलब्ध है वहाँ मौजूद नहीं है<br>3. क्रम से दोनों ही के पास एक अखिल भारतीय स्तर पर उपस्थिति नहीं है<br>4. सीडीएमए के लिए विशेषीकृत कौशलसेट आवश्यक है जो व्यापक तौर पर उपलब्ध नहीं है |
| **हैंडसेट प्रौद्योगिकियाँ** | | |
| अभिदाता पहचान मॉड्यूल (एसआइएम) टूलकिट | 1. जब भी ग्राहक नया सिम कार्ड खरीदता है, तब अनुप्रयोग की उपलब्धता सुनिश्चित करता है<br>2. परिचालक मोबाइल बैंकिंग परियोजना के साथ घनिष्ठ रूप से संबद्ध है, अतः सेवा के वितरण का कार्य आसान है | 1. मौजूदा सिम कार्ड बदलने में परिचालक की सहायता अपेक्षित<br>2. बैंकों के लिए परिचालक का लॉक-इन<br>3. बहुविध परिचालक परिदृश्यों में प्रौद्योगिकी अंतर-परिचालनीय नहीं हो सकती |
| मोबाइल अनुप्रयोग विकास | 1. परिचालक स्वतंत्र है<br>2. जीपीआरएस के लिए विकास कौशल सेट व्यापक तौर पर मौजूद<br>3. बेहतर विशिष्टताएँ और प्रयोक्ता इंटरफेस बनाने और वितरित करने की क्षमता | 1. सीडीएमए के लिए विकास कौशल सेट दुर्लभ है<br>2. आंकड़ों की सुरक्षा चिंता की बात है |
| **उभरती प्रौद्योगिकी** | | |
| निकटवर्ती क्षेत्रीय संचार (एनएफसी) | 1. उपयोग की सरलता<br>2. अनुभव क्रेडिट कार्ड के उपयोग के समान | 1. अभी नवोदित चरण में, विश्व भर में विभिन्न प्रयोग किये जा रहे हैं<br>2. मोबाइल फोन अभी महँगे हैं |
| एक साधन के रूप में मोबाइल फोन | 1. ग्राहक के पास दिन-रात उपलब्धता<br>2. हमेशा कार्यरत और हमेशा संबद्ध<br>3. बैंक खातों से अधिक हैंडसेट<br>4. टेलीकॉम परिचालकों के पास पहले से ही परिष्कृत बिलिंग प्रणालियाँ हैं और वे बैंकों से अलग स्वतंत्र रूप से बैंकिंग सेवाएँ दे सकते हैं । | 1. मोबाइल लेनदेनों के लिए नहीं बनाया गया<br>2. बिक्री केंद्र (पीओएस)/स्वचालित टेलर मशीन (एटीएम) के साथ तुलनीय जो बैंकिंग कार्यकलापों के लिए निर्मित और प्रमाणित हैं<br>3. प्रधानतः वैयक्तिक पहचान संख्या (पीआइएन) आधारित प्रमाणीकरण, पिन संख्याएँ याद रखने की क्षमता से संबंधित चिंताएँ (फोन के साथ जैवमितीय स्कैनरों का समेकन करने के प्रयास जारी हैं) |

**स्रोत :** अग्रवाल, गौरव. 2007 । ''मोबाइल फोन बैंकिंग द्वारा वित्तीय समावेशन : समस्याएं और चुनौतियाँ'', सीएबी कालिंग, जुलाई-सितंबर, 2007 ।

के स्थान पर वस्तुओं के मूल्य का भुगतान करने के लिए फोन का प्रयोग । ये सेवाएँ विभिन्न उपलब्ध संबद्धता तकनीकों का प्रयोग करते हुए प्रदान की जा सकती हैं जिनमें से प्रत्येक के अपने गुण और दोष हैं (सारणी 7.37)। तथापि, निम्न स्तर पर वित्तीय सेवा उद्योग में प्रौद्योगिकी को किस सीमा तक समेकित किया जाएगा, यह समर्थक सरकारी नीतियों और विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत संरचना की गुणवत्ता पर निर्भर होगा ।

7.137 वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए कई देशों में विभिन्न प्रौद्योगिकियों को सफलतापूर्वक अपनाया गया है (बॉक्स VII.16) ।

7.138 भारत में बैंकों ने अपनी व्यापक पहुँच में वृद्धि करने के लिए स्मार्ट कार्डों/मोबाइल प्रौद्योगिकी का उपयोग करते हुए प्रायोगिक परियोजनाएँ प्रारंभ की हैं । विलक्षण रूप से ग्राहकों की पहचान करने के लिए जैवमितीय (बॉयोमेट्रिक) पद्धतियाँ भी अधिकाधिक अपनाई जा रही हैं । वहनीय कीमत पर ऋण का वितरण आबादी के एक अधिक व्यापक वर्ग को करने के लिए बैंक प्रौद्योगिकीगत समाधान भी अधिकाधिक अपना रहे हैं । भारतीय स्टेट बैंक (एसबीआइ) ने हाल ही में ऐज्वॉल में एसबीआइ टाइनी कार्ड खाते (एसबीआइटीसीए) नाम की एक परियोजना शुरू की । यह परियोजना 'नो-फ्रिल्स' खाते और बीसी/

**बॉक्स VII.16**
**प्रौद्योगिकी और वित्तीय समावेशन**

फिलीपीन्स में दो सेलफोन कंपनियाँ - स्मार्ट तथा ग्लोब टेलीकॉम्स - नवोन्मेष सेल फोन आधारित सुविधाएँ प्रदान करती हैं जिन्हें इलेक्ट्रॉनिक वालेट भी कहा जाता है जिनके अंतर्गत अन्य बातों के साथ-साथ धनराशि का अंतरण करने, बिलों का भुगतान करने, और स्टोरों से खरीद के लिए भुगतान करने की सुविधाएँ उपलब्ध हैं जो क्रमशः स्मार्ट मनी और जी-कैश कही जाती हैं। फरवरी 2005 में फिलीपीन्स माइक्रोएन्टरप्राइज़ ऐक्सेस टू बैंकिंग सर्विसेज़ के ग्रामीण बैंकर संघ (आरबीएपी-एमएबीएस) ने टेक्स्ट-ए-पेमेंट (टीएपी) नामक एक परियोजना प्रवर्तित की। टीएपी एक नवोन्मेष मोबाइल प्रौद्योगिकीगत उत्पाद है जो उधारकर्ताओं के व्यष्टि वित्त ऋण भुगतानों हेतु अदा करने के लिए ग्लोब टेलीकॉम (जी-कैश द्वारा शक्तिप्राप्त) की एसएमएस प्रौद्योगिकी का उपयोग करता है। टीएपी कार्यकुशलता और व्यापक पहुँच में सुधार लाने के लिए नई और कम लागत वाली प्रौद्योगिकी के उपकरण काम में लाने की अपेक्षा करता है। छोटे उधारकर्ता अपने व्यष्टि-वित्त ऋणों के भुगतानों के लिए इस सेवा का उपयोग कर सकते हैं। टीएपी के अन्य अनुप्रयोग हैं, दूरस्थ जमा स्वीकरण, नकदी आहरण, अंतरराष्ट्रीय और देशी विप्रेषण, खरीद और बिल भुगतान।

दक्षिण अफ्रीका में बैंकिंग संस्थाओं ने मोबाइल फोन कंपनियों के साथ निम्न आय वाले ग्राहकों को लक्ष्यीकृत करते हुए वित्तीय सेवाओं तक पहुँच में विस्तार करना प्रारंभ किया है जिसके अंतर्गत मोबाइल फोन के माध्यम से सुलभ एक ब्याज से युक्त बैंक खाते तथा एक डेबिट कार्ड की सुविधा है जिसके साथ वे फुटकर बिक्री-केंद्रों में खरीद कर सकते हैं तथा एटीएम से धनराशि जमा कर सकते हैं अथवा आहरित कर सकते हैं। ग्राहक अपने मोबाइल फोन का उपयोग व्यक्ति से व्यक्ति को भुगतान करने और धनराशि का अंतरण करने के लिए कर सकते हैं।

बोलीविया में एक अधिकार-पत्र प्राप्त (चार्टर्ड) बैंक *बैंकोसोल* का निर्माण करने के लिए प्रोडेम नामक प्रथम व्यष्टि-वित्त संगठन ने प्रोडेम स्मार्ट एटीएम, जो एक स्मार्ट कार्ड व एटीएम है, हाल ही में प्रारंभ किया है। इस कार्ड का उपयोग करते हुए जब भी लेनदेन किया जाता है, तब हर बार यह स्मार्ट कार्ड ग्राहक के खाते की शेष राशि को संचित करता है। इसके कारण प्रोडेम स्मार्ट एटीएम इंटरनेट की संबद्धता के अभाव में भी परिचालन करने में सक्षम होता है जिससे बोलीविया के ऐसे कई ग्रामीण इलाकों में वित्तीय सेवाएँ उपलब्ध कराने के लिए यह एक आदर्श साधन बन जाता है जहाँ व्यापक तौर पर पहुँच वाली ऑनलाइन नेटवर्क के लिए प्रौद्योगिकीगत आधारभूत संरचना नहीं है।

**संदर्भ :**

एशियाई विकास बैंक। 2007। ''लो इनकम हाउसहोल्ड्स ऐक्सेस टू फाइनैंशियल सर्विसेज़ - इंटरनेशनल एक्सपीरिएन्स, मेजर्स फॉर इम्प्रूवमेंट, एण्ड दी फ्यूचर'' ईएआरडी विशेष अध्ययन, अक्तूबर।

बीएफ मॉडल का सम्मिश्रण है। उक्त एसबीआइटीसीए का परिचालन निकटवर्ती क्षेत्रीय (नियर-फील्ड) संचार (एनएफसी) प्रौद्योगिकी पर आधारित नई पीढ़ी के मोबाइल फोन के माध्यम से किया जाता है जो उंगलियों के निशान को पहचानने के सॉफ्टवेयर के साथ उन्नत है और रसीद प्रिंटर के साथ संबद्ध है। यह कार्ड व्यष्टि-बचत (एसबीआइ टाइनी नो-फ्रिल्स प्री-पेड खाता), नकदी जमा और आहरण, व्यष्टि-ऋण (केसीसी, जीसीसी सहित), धनराशि अंतरण (प्रणाली के अंतर्गत खाते से खाते में), व्यष्टि-बीमा, व्यापारियों को नकदी के बिना भुगतान, स्वयं-सहायता समूहों (एसएचजी) के बचत-व-ऋण खातों और उपस्थिति प्रणालियों, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना जैसे सरकारी लाभों के संवितरण, समीकृत मासिक किस्तों (ईएमआइ) के लिए, उपयोगिता के भुगतान, कूपन, वाउचर और टिकट, लायल्टी पॉइंट, स्वचालित किराया वसूली प्रणालियों, (फ्रंट एण्ड) डिवाइसो के लिए पोर्टेबल और नियत स्थितियों (पूर्णतः अंतर-परिचालनीय) के प्रयोजन के लिए निधियों के लेनदेन को सक्रिय करना संभव बनाता है।

## VII. भावी दिशा

7.139 सरकार और रिज़र्व बैंक ने समाज के अल्प सुविधा प्राप्त और कमजोर वर्गों को बैंकिंग के दायरे में लाने के लिए अनेक पहलें की हैं जिनका अनुकूल प्रभाव रहा है। तथापि, इस समस्या का परिमाण बहुत बड़ा है तथा अभी भी ग्रामीण और शहरी निम्न आय वाली आबादी (मुख्य रूप से आप्रवासी श्रमिकों) के एक काफी बड़े भाग की वित्तीय सेवाओं तक पहुँच बहुत कम है। ये समूह साहूकारों और अन्य अनौपचारिक स्रोतों से ऋण तक पहुँचने के लिए भारी अधिमूल्य (प्रीमियम) चुकाते हैं। अतः ग्रामीण और शहरी निर्धनों को शामिल करने के लिए औपचारिक वित्तीय प्रणाली की व्यापक पहुँच में विस्तार करने की आवश्यकता है।

*वित्तीय वंचन का माप*

7.140 वित्तीय समावेशन के संदर्भ में सर्वाधिक महत्वपूर्ण विषय यह जानना है कि किस सीमा तक कम आय वाले परिवारों को औपचारिक वित्तीय प्रणाली से वर्जित किया गया है। बैंक शाखा सघनता अथवा बैंक खातों जैसे अधिकांश हेडलाइन संकेतक केवल वित्तीय समावेशन/वंचन के लिए परोक्षी हैं। वित्तीय समावेशन/वंचन के एक अधिक सही मूल्यांकन के लिए उन परिवारों की संख्या और उनकी विशेषताओं संबंधी जनगणना के आंकड़ों की आवश्यकता है जिनका किसी बैंक अथवा बैंक जैसी किसी संस्था में खाता है। बैंकिंग सेवाओं के उपयोग संबंधी जनगणना के आंकड़ों में भी उन व्यक्तियों के बीच प्रभेद करने की आवश्यकता है कि किन्होंने कम अथवा शून्य धनराशि की आय, या धनराशि की कम बचत के कारण वित्तीय सेवाओं का उपयोग न करने का स्वैच्छिक रूप से चयन किया है एवं कौन बैंकिंग सेवाओं की आवश्यकता के होते हुए भी अन्य बातों के साथ-साथ वित्तीय सेवाओं तक पहुँच के अभाव, साक्षरता के निम्न स्तर, वित्तीय सेवाओं के अधिक मूल्य तथा प्रलेखन की जटिल प्रक्रिया जैसे विभिन्न अवरोधों की वजह से वित्तीय सेवाओं से वंचित हैं। ऐसे प्रयोग के साथ विशेषीकृत और विस्तृत घरेलू सर्वेक्षण करना संबद्ध होगा। भारत में वर्तमान में

एनएसएसओ शहरी/ग्रामीण ऋणग्रस्तता सहित विभिन्न सर्वेक्षण संचालित करता है । अतः यह महसूस किया जाता है कि या तो वित्तीय समावेशन/वंचन से संबंधित अलग सर्वेक्षण संचालित किये जाएँ या एनएसएसओ द्वारा किये जा रहे ऋणग्रस्तता के सर्वेक्षण के दायरे का इस प्रकार विस्तार किया जाए कि उसमें वित्तीय समावेशन/वंचन के विभिन्न पहलुओं को शामिल किया जा सके । आवधिक सर्वेक्षणों के साथ ही, दशाब्दीय जनगणना में भी वित्तीय समावेशन/वंचन से संबंधित जानकारी को समाविष्ट किया जा सकता है । इस प्रकार के विशेषीकृत सर्वेक्षणों से इस समस्या की सीमा को समझा जा सकेगा तथा अंतर को समाप्त करने के लिए उपयुक्त नीतियाँ बनाने में सहायता मिल सकेगी।

7.141 नाबार्ड वर्तमान में स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी)-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम से संबंधित डेटा संगृहीत करता है । ऐसी सूचना/आंकड़े भी व्यापक रूप से प्रसारित किये जाते हैं । वर्तमान में बड़ी संख्या में व्यष्टि-वित्त संस्थाएँ (एमएफआइ)/गैर-सरकारी संगठन (एनजीओ) भी देश में परिचालित हैं । तथापि, इन संस्थाओं के विभिन्न पहलुओं पर आंकड़े/सूचना संगृहीत करने के लिए कोई व्यापक प्रणाली नहीं है जिससे उपयुक्त नीति-निर्धारण में बाधा उत्पन्न होती है । अतः यह महसूस किया जाता है कि एमएफआइ/एनजीओ के संबंध में आंकड़ा संग्रहण के लिए एक व्यापक प्रणाली स्थापित की जाए । साथ ही, व्यष्टि-वित्त संस्थाओं (एमएफआइ)/गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) द्वारा वित्तपोषित किये जा रहे परिवारों की संख्या के संबंध में सूचना प्राप्त करने की भी आवश्यकता है । यह कार्य नाबार्ड द्वारा किया जा सकता है ।

*वित्तीय समावेशन की परिचालन लागत*

7.142 वित्तीय समावेशन के मामले में सर्वाधिक चुनौतीपूर्ण समस्याओं में से एक वित्तीय सेवाएँ प्रदान करने की प्रक्रिया की परिचालनगत व्यवहार्यता और धारणीयता है । अनेक देशों ने वित्तीय संस्थाओं पर नियंत्रण करने और सब्सिडी प्रदान करने के माध्यम से वित्तीय सेवाओं की व्याप्ति को विस्तृत करने का प्रयास किया है । तथापि, इसका परिणाम यह हुआ कि राजकोषीय लागतें बहुत अधिक बढ़ गईं और इससे यह राजकोषीय तौर पर अधारणीय बन गया है (विश्व बैंक, 2008)। एक और दृष्टिकोण वित्तीय समावेशन का दायित्व वित्तीय संस्थाओं को सौंपने का है । यद्यपि वित्तीय समावेशन वित्तीय संस्थाओं को अपने ग्राहक आधार को व्यापक बनाते हुए अपने कारोबार का विस्तार करने के लिए एक अवसर प्रदान करता है, तथापि वित्तीय सेवाओं की व्यापकता को विस्तृत करने की परिचालन लागत एक ऐसा प्रमुख कारक है जो बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं को कुल मिलाकर जनता को, विशेष रूप से ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में रहनेवाले निम्न आय वाले समूहों को, विभिन्न सेवाएँ उपलब्ध कराने से रोकता है । बैंकों के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण-वितरण प्रायः महँगा माना जाता है जिसका कारण बड़ी संख्या में छोटे ऋण खातों की सर्विसिंग है ।

7.143 तथापि, भारत एवं अन्य देशों में अनेक बैंकों के अनुभव से यह संकेत मिलता है कि सूचना प्रौद्योगिकी के उचित प्रयोग से वित्तीय सेवाएँ प्रदान करने की लागत को कम करने में सहायता मिल सकती है तथा वित्तीय सेवाओं की व्याप्ति का विस्तार करने के लिए यह परिचालनगत रूप से व्यवहार्य बन सकता है । बैंकिंग संपर्कियों के प्रभावी उपयोग के साथ संबद्ध उचित प्रौद्योगिकी के पास यह संभावना है कि प्रत्येक गाँव में एक बैंकिंग सेवा केंद्र (आउटपोस्ट)/एटीएम निर्मित किया जा सके, जैसा कि आंध्र प्रदेश के मामले में देखा गया है जिसने रिज़र्व बैंक और आइडीबीआरटी के साथ समन्वय करते हुए दूरस्थ क्षेत्रों में बैंकिंग सेवाएँ उपलब्ध कराने के लिए मोबाइल फोन प्रौद्योगिकी को सफलतापूर्वक लागू किया है । देश के अंदर और बाहर और भी अनेक उदाहरण हैं जहाँ यह पाया गया है कि अत्यधिक परिचालन लागत की समस्या का समाधान करने के लिए प्रौद्योगिकी के पास क्षमता है । अतः आवश्यकता अब तक अप्रयुक्त क्षेत्रों में व्यापक पहुँच का विस्तार करने के लिए प्रौद्योगिकी के प्रयोग में वृद्धि करने की है । प्रौद्योगिकियों का एक व्यापक दायरा उपलब्ध है । तथापि, किसी प्रौद्योगिकी का चयन करते समय बैंकों के लिए यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि समाधान अत्यधिक सुरक्षित हों, लेखा-परीक्षा के अधीन हों तथा विभिन्न प्रणालियों के बीच अंतिम रूप से अंतर-परिचालनीयता को सुनिश्चित करने के लिए व्यापक तौर पर स्वीकृत खुले मानकों का अनुसरण करते हों, जैसा कि वर्ष 2007-08 के रिज़र्व बैंक के वार्षिक नीतिगत वक्तव्य में विशेष रूप से बल दिया गया है ।

*वित्तीय समावेशन एक अवसर के रूप में*

7.144 निम्न आय वाले समूहों को प्रदान की गई सेवाओं से प्राप्त होनेवाले प्रतिलाभ की तुलना में वित्तीय समावेशन की परिचालन लागत अत्यधिक समझी जाती है । अतः बैंक सामान्यतः ऐसे खंडों को वित्तीय सेवाएँ स्वैच्छिक रूप से उपलब्ध कराने से विमुख हैं । तथापि, स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी) की अनेक प्रायोगिक परियोजनाओं और अनुभव ने यह सिद्ध कर दिया है कि ऐसा अवबोधन निराधार है । कुछ प्रारंभिक लागतों के होने के बावजूद वित्तीय समावेशन को मध्यावधि में कारोबार का विस्तार करने के लिए एक अवसर के रूप में देखने की आवश्यकता है । कृषि और संबद्ध कार्यकलापों में निवेश एवं समूचे आपूर्ति चक्र में निहित विपुल क्षमता को पहचानने की भी जरूरत है । ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओं में बाजार की अपूर्णताओं के चलते, निवेशों पर प्रतिलाभ महत्वपूर्ण हो सकता है । बड़ी स्थानीय औद्योगिक कंपनियाँ पहले से ही संविदागत कृषि और ग्रामीण उत्पादों के प्रत्यक्ष विपणन में लिप्त हैं । इसके अलावा, सेवाएँ और विनिर्माण गतिविधियाँ ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक तेजी से बढ़ रही हैं । छँटाई, श्रेणीकरण, भंडारण, परिवहन, प्रसंस्करण और पैकेजिंग जैसी आपूर्ति चक्र की गतिविधियों के एक दायरे के साथ ही, बागबानी, पुष्पोत्पादन, जैविक (आर्गैनिक) कृषि, आनुवंशिक अभियंत्रणा (जेनेटिक इंजीनियरिंग) जैसी अपेक्षाकृत नई गतिविधियों में भी वृद्धि हुई है । ये सभी उभरती गतिविधियाँ सघन ऋण की आवश्यकता एवं वित्तपोषण की बृहत् संभावना से युक्त हैं (मोहन, 2006)। साथ ही,

आम उपभोग के लिए मदों से युक्त ग्रामीण बाजारों की क्षमता असीम है क्योंकि आबादी पार्श्वतः उच्चतर आय वाले वर्गों में आगे बढ़ रही है । ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोक्ता वित्तपोषण में सुधार के साक्ष्य को देखते हुए, बैंक और उधारकर्ता दोनों के हित में ग्रामीण क्षेत्रों में अंतिम उपयोगकर्ता को निम्नतम लागत पर ऋण वितरित करने के लिए आपूर्ति चक्र को कारगर बनाने की भी आवश्यकता है । इसके अलावा, किसानों के बीमा के क्षेत्र में विपुल अवसर हैं क्योंकि किसान नई और अपरीक्षित प्रौद्योगिकी को अपनाते हैं और निविष्टि प्रमुखताओं (इन्पुट इन्टेन्सिटीज़) को बढ़ाते हैं, तथा वे अपेक्षाकृत बड़ी जोखिमों का सामना करते हैं । ये सब ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के लिए व्यावसायिक अवसर बढ़ाने की विपुल गुंजाइश की ओर संकेत करते हैं । बैंकों के लिए यह भी आवश्यक है कि वे शहरी क्षेत्रों में अवसरों का पता लगाएँ और उनसे लाभ उठाएँ ।

*बैंकों द्वारा बहुविध उधार*

7.145 पिछले कुछ वर्षों में व्यष्टि-वित्त संस्थाओं (एमएफआइ) के क्षेत्र में त्वरित वृद्धि के परिणामस्वरूप कुछ समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं । रिज़र्व बैंक द्वारा कुछ प्रमुख बैंकों के साथ किये गये संयुक्त तथ्यान्वेषण अध्ययन से बहुविध उधार देने के कई मामले उजागर हुए तथा यह विदित हुआ कि व्यष्टि-वित्त संस्थाएँ (एमएफआइ) अपेक्षित सीमा तक क्षमता के निर्माण में सक्रिय नहीं थीं । बहुविध वित्तपोषण के मामलों से बचने के लिए बड़ी कंपनियों के लिए लागू पद्धति के समान ही, ऋण सूचना केंद्रों के माध्यम से ऋण रजिस्ट्रियों की एक प्रणाली (जिसके द्वारा ऋणदाता अपने ग्राहकों के चुकौती अभिलेखों के बारे में सूचना का आदान-प्रदान करते हैं) प्रारंभ करने की आवश्यकता है । ऋण रजिस्ट्रियाँ उधारकर्ताओं का ऋण अभिलेख स्थापित करते हुए पहुँच में वृद्धि कर सकती हैं । यह प्रारंभ में एमएफआइ के लिए निर्धारित साख निर्धारण (क्रेडिट रेटिंग) एजेंसियों, जैसे सीआरआइएसआइएल (क्रिसिल), एम-सीआरआइएल (एम-क्रिल), आइसीआरए (इक्रा) अथवा सीएआरई (केअर) में से किसी एक एजेंसी द्वारा किया जा सकता है जिन्हें एमएफआइ की रेटिंग के लिए बैंकों द्वारा प्रयोग किये जाने हेतु अनुमति दी गई है । इस संदर्भ में ऋण सूचना कंपनी अधिनियम को अधिसूचित किया गया है तथा शीघ्र ही अपना व्यवसाय प्रारंभ करने के लिए नई ऋण सूचना कंपनियों को प्राधिकृत किया जाएगा।

*उपयुक्त वित्तीय उत्पादों की उपलब्धता*

7.146 उपयुक्त सेवाओं/उत्पादों के अभाव के कारण ग्रामीण निर्धन लोगों के पास इसके सिवा और कोई विकल्प नहीं बचता कि वे अनौपचारिक क्षेत्र के साथ लेनदेन करें जो अल्प राशियाँ स्वीकार करता है, दरवाजे पर सेवा प्रदान करता है, सभी प्रयोजनों (उत्पादक और अनुत्पादक जैसे उपभोग की आवश्यकताओं, उत्सव, विवाह, चिकित्सा और आपात स्थितियों) के लिए निधियाँ उपलब्ध कराता है तथा आसानी से परिचालनों को सुनिश्चित करता है । अतः बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं के लिए यह भी आवश्यक है कि वे निर्धन और कमजोर वर्गों की आवश्यकताओं और उनकी चुकौती क्षमता को ध्यान में रखते हुए उनके लिए आवश्यकतानुरूप (टेलर-मेड) किफायत (थ्रिफ्ट), ऋण, बीमा और विप्रेषण उत्पाद बनाएँ । बचत और ऋण उत्पादों के अलावा निर्धन व्यक्तियों के लिए बीमा उत्पादों की भी आवश्यकता है । समय-समय पर स्वास्थ्य संबंधी व्यय कई परिवारों की आय के स्तरों से बहुत अधिक हो जाता है जिससे वे एक ऋणजाल की स्थिति में फँस जाते हैं । अतः बीमा कंपनियों के लिए भी यह आवश्यक है कि वे ग्रामीण निर्धनों के लिए कम लागत वाले स्वास्थ्य बीमा के उत्पाद तैयार करें । अत्यधिक/कम वर्षा के कारण हानि की स्थितियों में किसानों को राहत प्रदान करने के लिए मौसम बीमा उत्पादों की भी आवश्यकता महसूस की गई है ।

*वित्तीय साक्षरता और प्रौद्योगिकी*

7.147 सामान्य रूप से साक्षरता के अभाव और विशेष रूप से वित्तीय साक्षरता के अभाव को समाज के अपेक्षाकृत अधिक निर्धन खंडों के लिए वित्तीय सेवाओं की व्याप्ति के प्रसार में मुख्य बाधाओं के रूप में माना जाता है । अब तक की गई पहलों के बावजूद, इस समस्या के बृहत् परिमाण के चलते इस दिशा में संगठित प्रयास करने की आवश्यकता है । अतः यह महसूस किया जाता है कि परामर्श केंद्र स्थापित करने तथा विभिन्न वित्तीय उत्पादों की विशेषताओं, लाभों और जोखिम के बारे में अपने ग्राहकों का मार्गदर्शन करने के लिए बैंक आगे आएँ । ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय साक्षरता और वित्तीय उत्पादों के बारे में जागरूकता को भी बड़े पैमाने पर लेने की भी आवश्यकता है । डाकियों और स्कूल के अध्यापकों की सेवाओं का उपयोग करके इसे प्रभावी रूप में बढ़ावा दिया जा सकता है । संबंधित सूचना पुस्तिकाओं/पैम्फ्लेटों के रूप में भी एक सुनियोजित तरीके से ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों के बीच प्रसारित की जा सकती है । विभिन्न ग्राहक सुरक्षा व्यवस्थाओं से संबंधित सूचना को भी व्यापक तौर पर प्रसारित करने की आवश्यकता है जो प्रारंभ की जा चुकी हैं ।

7.148 देश के कुछ भागों में ग्रामीण सूचना ई-कियोस्कों और चलते-फिरते वाहनों के प्रयोग ने ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न उत्पादों और सेवाओं संबंधी सूचना उपलब्ध कराने में अपरिमित संभावना दर्शाई है । आवश्यकता केवल बैंकिंग उत्पादों के बारे में ही नहीं, बल्कि निविष्टि (इनपुट)/उत्पादन (आउटपुट) की कीमतों, बीमा उत्पादों और स्वास्थ्य सेवाओं के बारे में भी सूचना प्रसारित करने के लिए सूचना कियोस्कों के प्रयोग को बढ़ाने की है । बैंकों को चाहिए कि वे ऐसे कियोस्क संयुक्त रूप से स्थापित करने के लिए आगे आएँ और संचालन का व्यय आपस में बाँट लें । यह उल्लेखनीय है कि निजी क्षेत्र द्वारा इसी प्रकार का मॉडल (ई-चौपाल) मौसम, बाजार की कीमतों, कृषि की वैज्ञानिक प्रथाओं और जोखिम प्रबंध के संबंध में स्थानीय भाषा में तैयार जानकारी उपलब्ध कराने के लिए कार्यान्वित किया जा चुका है । यह मॉडल वर्तमान में 31,000 से भी अधिक गाँवों को समाविष्ट करता है और वित्तीय साक्षरता को बढ़ावा देने के लिए निजी एजेंसियों के साथ इसका उपयोग किया जा सकता है।

*साहूकारों के लिए कानून*

7.149 वर्तमान में साहूकारों को राज्य-विशिष्ट कानूनों के अंतर्गत समाविष्ट किया जाता है जो कई राज्यों में पुराने हो चुके हैं। धनराशि उधार देने संबंधी विधान की समीक्षा करने के लिए गठित तकनीकी दल (2007) द्वारा सुझाये गये मॉडल कानून की आगे और जाँच करने की आवश्यकता है तथा धनराशि उधार देने की गतिविधि को उसके नकारात्मक लक्षणों और सूदखोरी (यूज़ूरियस) ब्याज-दरों को समाप्त करते हुए मुख्य धारा में लाने एवं औपचारिक और अनौपचारिक खंडों के बीच सहक्रियाओं को मजबूत करने के लक्ष्य के साथ उक्त मॉडल कानून के संभावित कार्यान्वयन पर विचार करने की आवश्यकता है।

*संस्थागत संरचना को मजबूत करना*

7.150 समावेशक वित्तीय प्रणालियाँ निर्मित करने के लिए वैश्विक रूप से फोकस केवल विशेषीकृत व्यष्टि-ऋण संस्थाओं पर ही नहीं, बल्कि डाक बचत बैंकों, उपभोक्ता ऋण संस्थाओं जैसी अन्य वित्तीय संस्थाओं के एक विन्यास, और सर्वाधिक महत्वपूर्ण तौर पर बैंकिंग प्रणाली पर भी है। यह प्रत्याशित है कि इस स्थूल दृष्टिकोण से वित्तीय सेवा उद्योग की व्यापक पहुँच में विस्तार होगा।

7.151 भारत में भी वाणिज्य बैंकों, विभिन्न स्तरों पर सहकारी बैंकों, प्राथमिक कृषि ऋण समितियों, बीमा कंपनियों और डाक घरों जैसी वित्तीय संस्थाओं की भलीभाँति विविधीकृत संरचना है। आवश्यकता वित्तीय समावेशन के उद्देश्य को बढ़ावा देने के लिए न केवल वाणिज्य बैंकों, बल्कि बीमा कंपनियों और डाक घरों जैसे अन्य वित्तीय मध्यवर्तियों को भी संबद्ध करने की है। विशेष रूप से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और सहकारी बैंक एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं। तथापि, अपनी कमजोर वित्तीय स्थिति के कारण वे वित्तीय समावेशन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सहायता देने में पीछे रह गए हैं। जैसा कि पहले संकेत किया जा चुका है, 2001 और 2007 के बीच अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा धारित ऋण खातों की अपेक्षा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा धारित ऋण खातों की संख्या उल्लेखनीय रूप में घट गई। सरकार ने पहले ही क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की पुनः संरचना की है तथा अल्पावधि ग्रामीण सहकारी ऋण संरचना के पुनरुत्थान पैकेज का अनुमोदन कर दिया है। दीर्घावधि ग्रामीण सहकारी ऋण संरचना का पुनरुत्थान पैकेज भी तैयार किया जा रहा है। यह अनुमान है कि भविष्य में ये संस्थाएँ वित्तीय समावेशन के संवर्धन में एक अत्यंत महत्तर भूमिका अदा करेंगी। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और अन्य सहकारी संस्थाओं के अलावा, संयुक्त दायित्व समूह और स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी) मॉडल का भी उपयोग छोटे और सीमांत कृषकों, मौखिक पट्टेदारों और बंटाईदारों को ऋण प्रदान करने के लिए किया जा सकता है।

*सरकार की भूमिका*

7.152 ग्रामीण निर्धनों की आय और उत्पादक क्षमताओं को सुधारने में केवल ऋण ही सहायता नहीं कर सकता क्योंकि ऋण अवशोषण क्षमता विभिन्न अन्य उपादानों, जैसे मूलभूत संरचना और आपूर्ति शृंखला की सुविधा सहित उपयुक्त नीतिगत परिवेश पर निर्भर होगी। सड़कों, बिजली, सार्वजनिक परिवहन और विपणन सुविधाओं जैसी पर्याप्त मूलभूत संरचना बनाने में सरकार की एक महत्वपूर्ण भूमिका है जो ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में रहनेवाले लोगों द्वारा उत्पादन और उत्पादन के वितरण को सुसाध्य बनाएगी। स्वास्थ्य, शिक्षा, जल और स्वच्छता जैसी सामाजिक सेवाओं पर सरकार का व्यय भी उधारकर्ताओं की ऋण अवशोषण क्षमता को बढ़ाएगा। इसके अलावा, कम आय वाले परिवारों द्वारा ली गई उधार राशियों का एक बड़ा अनुपात चिकित्सा और अन्य आपात स्थितियों के लिए होता है। इस प्रकार, एक उल्लेखनीय सीमा तक गैर-संस्थागत स्रोतों से उधार को कम किया जा सकता है यदि ग्रामीण परिवारों को उचित प्रीमियम पर उपयुक्त चिकित्सा बीमा सहित स्वास्थ्य-रक्षा, शिक्षा और अन्य सेवाएं उचित लागत पर उपलब्ध कराई जाती हैं। इस अध्याय में इसके पहले चर्चित अनुभवजन्य प्रयोग के परिणामों ने इस बात की पुष्टि की कि वित्तीय समावेशन एवं आर्थिक संवृद्धि को बढ़ावा देने में मूलभूत संरचना एक उल्लेखनीय भूमिका अदा करती है। अतः ग्रामीण मूलभूत संरचना को मजबूत करने और समर्थक परिस्थितियाँ उपलब्ध कराकर वित्तीय समावेशन को सुसाध्य बनाने में सरकार की एक महत्वपूर्ण भूमिका है जैसा कि अध्याय VI में भी संकेत किया गया है।

*वित्तीय समावेशन के संवर्धन के लिए बैंकों के कार्यनिष्पादन का मूल्यांकन*

7.153 वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए बैंकों के कार्यनिष्पादन पर निगरानी रखना आवश्यक है। अमरिका जैसे कुछ देशों में बैंकों के कार्यनिष्पादन के मूल्यांकन की प्रणाली है। अतः भारत में भी बैंकों के कार्यनिष्पादन के मूल्यांकन की एक प्रणाली प्रारंभ की जा सकती है। इस प्रणाली के अंतर्गत भारतीय बैंकों को वित्तीय समावेशन के संबंध में उनके कार्यनिष्पादन पर प्रत्येक दो से तीन वर्ष तक रेटिंग दी जा सकती है तथा इस प्रकार का निर्धारण पब्लिक डोमेन में भी रखा जा सकता है। इस प्रकार की प्रणाली समकक्ष संस्थाओं के दबाव द्वारा वित्तीय समावेशन के लिए बैंकों के प्रयासों को प्रोत्साहित करेगी।

## VII. सारांश

7.154 वित्तीय समावेशन के व्यापक तौर पर पहचाने गए महत्व के बावजूद इसकी कोई सर्वव्यापी रूप में स्वीकृत परिभाषा नहीं है। वित्तीय समावेशन की कार्यशील अथवा परिचालनगत परिभाषाएँ सामान्यतः स्वामित्व अथवा मुख्य धारा के वित्तीय सेवाप्रदाताओं द्वारा प्रदत्त विशिष्ट वित्तीय उत्पादों तथा जमाराशियों, ऋण, दीर्घावधि बचत, धन अंतरण और बीमा जैसी सेवाओं तक पहुँच पर ध्यान केंद्रित करती हैं। इस परिभाषा के आधार पर वित्तीय समावेशन प्रायः बैंक खातों की संख्या जैसे संकेतकों द्वारा मापा जाता है। तथापि, मोटे तौर पर यह सहमति है कि वित्तीय समावेशन को किसी एक संकेतक द्वारा नहीं मापा जा सकता। अतः बहुविध संकेतकों का प्रयोग किया गया है जिनमें शामिल हैं - बैंक

खाता रखनेवाले लोगों का अनुपात, किसी भी औपचारिक वित्तीय संस्था की सेवाओं का उपयोग करनेवाली आबादी, औपचारिक वित्तीय लिखतों के माध्यम से नियमित रूप से धनराशि प्राप्त करनेवाले लोग औपचारिक वित्तीय संस्थाओं में धनराशि रखनेवाले लोग तथा ऐसे व्यक्ति जिन्होंने किसी औपचारिक वित्तीय संस्था से ऋण या ऋण सुविधा प्राप्त की है अथवा जिनका ऋण या ऋण सुविधा बकाया है ।

7.155 भारतीय संदर्भ में वित्तीय समावेशन वंचित लोगों के लिए औपचारिक वित्तीय प्रणाली द्वारा, वहनीय वित्तीय सेवाओं अर्थात् भुगतान और विप्रेषण सुविधाओं, बचत, ऋण और बीमा सेवाओं तक पहुँच की व्यवस्था के रूप में वर्णित है । वित्तीय प्रणाली को सघन बनाना और उसकी पहुँच को व्यापक करना दोनों संवृद्धि को त्वरित करने के लिए और न्यायसंगत वितरण हेतु महत्वपूर्ण हैं । वित्तीय वंचन के लिए प्रायः बताये गये प्रमुख कारणों में शामिल हैं - अत्यधिक जोखिम के अवबोधन के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में संस्थागत ऋण का अपेक्षाकृत कम विस्तार, अत्यधिक परिचालनगत लागतें, ग्रामीण आधारभूत संरचना का अभाव, तथा आधे मिलियन से अधिक गाँवों के साथ जिनमें से कुछ छुटपुट आबादी वाले हैं, देश का विशाल भौगोलिक विस्तार । व्यष्टि उपादानों के अंतर्गत, जिनके संबंध में यह समझा जाता है कि वे वंचित समूहों को ऋण की उपलब्धता के निरोधक हैं, मुख्य रूप से वित्तीय उत्पादों और सेवाओं की जानकारी का अभाव, कृषि संबंधी कृषीतर ऋण प्राप्त करने के लिए क्रियाविधियाँ, स्टाफिंग और मानव संसाधन, एवं महाजनी को विनियमित करने के लिए प्रभावी कानून का अभाव जैसे कारक शामिल हैं । माँग के दृष्टिकोण से, निम्न आय और बचत का स्तर वित्तीय सेवाओं, विशेष रूप से जमा सुविधाओं के लिए निम्नतर माँग का कारण बन सकता है ।

7.156 भारत ने वित्तीय समावेशन के लिए एक बहुविध दृष्टिकोण अपनाया है, जैसी स्थिति कई अन्य देशों में भी रही है । यद्यपि वित्तीय समावेशन शब्द का मूल हाल ही का है, तथापि समाज के अपेक्षाकृत निर्धन और कमजोर खंडों को औपचारिक बैंकिंग प्रणाली के दायरे में लाने के लिए प्रयास रिज़र्व बैंक और सरकार दोनों द्वारा बहुत पहले ही 1960 के दशक के उत्तरार्ध में प्रारंभ किये गये थे । भारत में वित्तीय समावेशन की दिशा में विशिष्ट नीतिगत पहलें मोटे तौर पर तीन चरणों में आती हैं जिनमें से पहला चरण 1960 के दशक में प्रारंभ हुआ जो 1980 के दशक तक रहा और जिसमें न्यायसंगत संवृद्धि को सुनिश्चित करने के लिए ऋण के सरणीकरण पर ध्यान केंद्रित किया गया था । बैंकों का राष्ट्रीयकरण, प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्रों को निदेशित उधार, शाखा लाइसेंसीकरण नीति में उपयुक्त परिवर्तन, विशिष्ट योजनाओं का प्रवर्तन, विशेषीकृत संस्थाओं की स्थापना और ब्याज-दर विनियमन ऐसी कुछ प्रमुख नीतिगत पहलें थीं जो सरकार और रिज़र्व बैंक द्वारा कमजोर वर्गों को बैंकिंग प्रणाली के दायरे में लाने के लिए की गई थीं । वित्तीय समावेशन का दूसरा चरण 1990 के दशक के प्रारंभ से 2005 के प्रारंभ तक था जिसमें फोकस वित्तीय संस्थाओं को मजबूत करने पर था । वित्तीय समावेशन के संबंध में इस चरण में की गई प्रमुख पहलें थीं - 1990 के दशक के प्रारंभ में स्वयं-सहायता समूह (एसएचजी)-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम का प्रवर्तन और किसान क्रेडिट कार्ड शुरू करना । वित्तीय रूप से वंचित लोगों को बैंकिंग के दायरे में लाने के लिए किये जा रहे प्रयासों को अप्रैल 2005 में भारी रूप में बढ़ावा मिला जब वित्तीय समावेशन को स्पष्टतया एक प्रमुख नीतिगत लक्ष्य बनाया गया । नवंबर 2005 में 'नो-फ्रिल्स' खाते प्रारंभ करना ग्रामीण और शहरी निर्धनों को सुरक्षित बचत जमा सुविधा उपलब्ध कराने के लिए उठाया गया एक और प्रमुख कदम था । इस प्रकार जनता तक वित्तीय सेवाओं की व्यापक पहुँच का विस्तार करने के लिए संस्थाओं का एक विस्तृत नेटवर्क स्थापित किया गया है ।

7.157 हाल के वर्षों में औपचारिक वित्तीय सेवाओं का विस्तार तेजी से हुआ है । अतः यह प्रश्न उठता है कि विभिन्न उपायों का वित्तीय समावेशन पर क्या प्रभाव रहा है । आंकड़ों के मौजूदा स्रोतों से वित्तीय समावेशन अथवा उसके दूसरे पक्ष अर्थात् वंचन की सीमा के संबंध में पक्के निष्कर्षों पर पहुँचना आसान नहीं है । विभिन्न स्रोतों से उपलब्ध आंकड़ों में अंतर हैं तथा इन आंकड़ों का समाधान करने के लिए और काफी अधिक कार्य करने की आवश्यकता है । फिर भी, उपलब्ध सूचना यह संकेत करती है कि 1960 के दशक के उत्तरार्ध से लेकर अधिकाधिक लोगों को औपचारिक वित्तीय संस्थाओं के दायरे के भीतर लाने के लिए उल्लेखनीय प्रगति की गई है । यह प्रवृत्ति 1990 के दशक में भी जारी रही । एनएसएसओ द्वारा किये गये परिवारों के सर्वेक्षणों से संबंधित आंकड़ों से यह संकेत मिलता है कि गैर-संस्थागत स्रोतों से ऋण प्राप्त करनेवाले परिवारों की संख्या का अंश 1960 के दशक के उत्तरार्ध से लेकर 1980 के दशक तक उल्लेखनीय रूप में घट गया । तथापि, उक्त अंश 1990 के दशक में बढ़ा । फिर भी, विभिन्न पहलुओं का विस्तृत विश्लेषण यह संकेत करता है कि ऋणग्रस्त परिवारों की संख्या और उनके बकाया ऋण में 1991 और 2002 के बीच तेजी से वृद्धि हुई । बढ़ा हुआ उक्त ऋण मुख्य रूप से उपभोग और इसी प्रकार के अन्य प्रयोजनों के लिए था जिनके लिए वित्त औपचारिक स्रोतों से आसानी से नहीं मिल सकता था । परिणामस्वरूप, गैर-संस्थागत स्रोतों के प्रति परिवारों की ऋणग्रस्तता का अंश 1991 और 2002 के बीच बढ़ा जबकि विभिन्न संस्थागत स्रोतों द्वारा परिवारों को ऋण 1991 और 2002 के बीच स्थूल रूप से उसी दर से बढ़ा जिस दर से 1981 और 1991 के बीच बढ़ा था । संस्थागत स्रोतों के भीतर बैंकों द्वारा ऋण 1981 और 1991 के बीच की स्थिति की तुलना में 1991 और 2002 के बीच सीमांत रूप से निम्नतर दर से बढ़ा । तथापि, इसे 1990 के बाद के दशक में अपने तुलन-पत्रों को मजबूत करने पर बैंकों के बढ़े हुए फोकस और विवेकपूर्ण मानदंडों को लागू करने/सख्त बनाने के कारण बैंकों द्वारा विकसित की गई जोखिम के प्रति कुछ विमुखता के संदर्भ में देखने की आवश्यकता है जिसके परिणामस्वरूप बैंकों का समग्र ऋण संविभाग भी मंद हो गया था ।

7.158 एनएसएसओ के नवीनतम आंकड़ों के लिए संदर्भ वर्ष 2002 था । बहुत हाल के बीएसआर डेटा के विश्लेषण से यह प्रकट होता है कि ऋण-व्यापन (प्रति 100 व्यक्ति ऋण खातों) में तथा सामान्य रूप से

ग्रामीण क्षेत्र को और विशेष रूप से कृषि को ऋण की उपलब्धता में 2000 के दशक के प्रारंभिक वर्षों से अर्थात् उक्त एनएसएसओ डेटा जारी करने के बाद सुस्पष्ट सुधार रहा है । हाल के वर्षों में की गई पहलों के प्रतिक्रियास्वरूप सभी संगठित वित्तीय संस्थाओं (वाणिज्य बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, शहरी सहकारी बैंक, प्राथमिक कृषि ऋण समितियों, व्यष्टि-वित्त संस्थाओं और स्वयं-सहायता समूह) के पास प्रति 100 वयस्क ऋण खातों की संख्या 2002 के 18 से सुधरकर 2007 में 25 हो गई ।

7.159 जमाराशि की ओर भी, संगठित वित्तीय संस्थाओं की व्यापक पहुँच में वर्षों से विस्तार हुआ । सभी औपचारिक संस्थाओं के पास प्रति 100 व्यक्ति बचत खातों की संख्या 1993 के 51 से बढ़कर 2007 में प्रति 100 व्यक्ति 54 (प्रति 100 वयस्क 82) हो गई । तथापि, गरीबी की रेखा से नीचे रहनेवाले लोगों को शामिल करने के बाद, जिनके पास बचत करने की बहुत कम क्षमता है अथवा शून्य क्षमता है, गरीबी की रेखा से ऊपर प्रति 100 वयस्क 100 से कुछ अधिक ही बचत खाते हैं । आय में तीव्रतर वृद्धि के साथ लोग उच्चतर आय वर्ग में आ सकते हैं । जैसे-जैसे गरीबी के स्तर कम होते हैं और परिवारों के आय के स्तर ऊपर उठते हैं, उनकी बचत करने की प्रवृत्ति में भी उन्नति होगी । बैंकिंग की आदतें विकसित करने के लिए ऐसे लोगों की औपचारिक वित्तीय प्रणाली में आसानी से पहुँच आवश्यक होगी । अतः बैंकों के लिए यह जरूरी होगा कि वे इस प्रकार के ग्राहकों को अपने दायरे में लाने के लिए नवीन प्रक्रियाओं और अपेक्षाकृत नई पद्धतियों के उपाय निकालें ।

7.160 आवास और फुटकर ऋण के माध्यम से बैंक परिवारों की एक संवर्धित संख्या को औपचारिक ऋण के दायरे में ला सके हैं । तथापि, अधिकांश विस्तार नगरों और बड़े कस्बों में हुआ है । अर्ध-शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय सेवाओं का विस्तार करने के लिए अत्यधिक संभावना है । एक ओर बढ़ते हुए शहरीकरण और दूसरी ओर ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि से इतर आधार वाली गतिविधियों की व्याप्ति के चलते ऋण की माँग में वृद्धि होने का अनुमान है । कृषि की गतिविधि का भी अधिकाधिक वाणिज्यीकरण हो रहा है जिससे बैंकों के लिए नये व्यावसायिक अवसर उत्पन्न होंगे । अतः बैंकों के लिए भी यह आवश्यक होगा कि वे ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापन में वृद्धि के लाभों का सावधानीपूर्वक परीक्षण करें । इस प्रगति से यह संकेत मिलता है कि बचत और उत्पादन प्रयोजन दोनों के लिए वित्तीय सेवाओं की माँग अतीत की तुलना में अत्यधिक होगी । ऋण की बढ़ती हुई माँग पूरी करने के लिए बैंकों के लिए यह आवश्यक होगा कि वे अब तक की तुलना में एक बृहत्तर पैमाने पर संसाधन जुटाएँ । इससे वित्तीय समावेशन को बढ़ावा मिलेगा और वित्तीय सघनता मजबूत होगी । संगठित और असंगठित दोनों क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के उद्यमों को ऋण प्रदान करने के साथ ही, वित्तीय प्रणाली के लिए यह आवश्यक होगा कि वह ऋण की गुणवत्ता को बनाये रखने और ऋण की वृद्धि को सँभाले रखने के लिए एक ही साथ जोखिम निर्धारण और जोखिम प्रबंध की क्षमताएँ बढ़ाए।

7.161 संवर्धित वित्तीय समावेशन की कुंजी लेनदेन की लागतों में कमी लाना है । छोटे खाते उपलब्ध कराने में परिचालन लागत कभी-कभी कम आय वाले समूहों तक बैंकिंग सेवाओं का विस्तार करने के लिए बाधा बन जाती है । तथापि, देश में एवं अन्य देशों में भी कुछ संस्थाओं का अनुभव यह सूचित करता है कि प्रौद्योगिकी का उचित प्रयोग वित्तीय समावेशन की परिचालन लागत को उल्लेखनीय रूप में कम कर सकता है तथा उसे एक व्यवहार्य और धारणीय गतिविधि बना सकता है । नई सूचना प्रौद्योगिकी की उपलब्धता, ऋण सूचना सेवाओं का विस्तार, व्यष्टि-वित्त में नवोन्मेषण तथा वित्तीय उत्पादों के वितरण के गैर-पारंपरिक प्रकार, छोटे बचतकर्ताओं और उधारकर्ताओं के साथ व्यवहार करने में लेनदेन की लागतों को कम करने के लिए आगे और अवसर प्रदान करते हैं । इस प्रकार पर्याप्त बुनियादी संरचना के अभाव, उच्चतर लेनदेन लागतों और लेनदेनों के कम परिमाण जैसी कमियों को दूर करके वित्तीय समावेशन की व्याप्ति और विस्तार में वृद्धि करने की चुनौती है ।

7.162 संस्थागत विकास के दृष्टिकोण से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और सहकारी बैंकों, जिनकी स्थापना बैंक-सुविधारहित क्षेत्रों/खंडों में वित्तीय सेवाओं के वितरण को विस्तृत करने के लिए की गई थी, की भूमिका में उनकी कमजोर वित्तीय स्थिति के कारण गतिरोध उत्पन्न हुआ । उन्हें मजबूत बनाने के लिए हाल में की गई पहलों के चलते यह अनुमान है कि वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने में वे एक बृहत्तर भूमिका का निर्वाह करेंगे । विशेष रूप से ग्रामीण ऋण वितरण प्रणाली में साहूकारों के महत्व को ध्यान में रखते हुए राज्य सरकारों द्वारा धनराशि उधार देने से संबंधित आदर्श (मॉडल) कानून के त्वरित कार्यान्वियन की भी आवश्यकता है ।

7.163 धारणीय वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया अनेक उपादानों पर निर्भर है । ऋणों की चुकौती की संभावनाओं को सुधारने में ऋण संबंधी परामर्श एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है । यद्यपि भारत में ऋण संबंधी परामर्श उपलब्ध कराने के लिए एक शुरुआत की जा चुकी है, तथापि इस दिशा में प्रयासों को और बढ़ाने की आवश्यकता है । मूलभूत बुनियादी संरचना को मजबूत बनाकर एक समर्थक वातावरण निर्मित करते हुए सरकार वित्तीय सेवाओं की अवशोषण क्षमता में सुधार लाने में सहायता कर सकती है । स्वास्थ्य, जल और स्वच्छता एवं शिक्षा जैसे मानवीय विकास में निवेश भी उधारकर्ताओं की ऋण अवशोषण क्षमता को सुधारेगा। इसके अलावा, विशेष रूप से समाज के कमजोर और निर्धन वर्गों द्वारा विभिन्न वित्तीय सेवाओं के उपयोग को सुधारने में वित्तीय साक्षरता को बढ़ावा देने के लिए किये जानेवाले प्रयासों के दूरगामी परिणाम हो सकते हैं ।

## अनुबंध VII.1 : एनएसएसओ सर्वेक्षण में प्रयुक्त विभिन्न प्रकार के व्यय की परिभाषाएँ

(i) **कृषि व्यवसाय :** कृषि व्यवसाय के अंतर्गत बागान और उद्यान की फसलों की खेती सहित खेती जैसे घरेलू आर्थिक कार्यकलाप, तथा खेत पर उत्पाद का प्रसंस्करण, उदा. धान का छिलका निकालना (पैडी हलिंग) और गुड़ बनाना शामिल हैं । यद्यपि गुड़ बनाना एक विनिर्माण की गतिविधि है, तथापि इसे कृषि व्यवसाय के अंतर्गत केवल तभी सम्मिलित किया गया जब यह खेत में देशी पद्धति से किया गया।

(ii) **कृषीतर व्यवसाय :** कृषीतर व्यवसाय की परिभाषा कृषि व्यवसाय में सम्मिलित कार्यकलापों को छोड़कर अन्य सभी घरेलू आर्थिक कार्यकलापों के रूप में दी गई । इसके अंतर्गत विनिर्माण, खनन और उत्खनन, व्यापार, होटल और रेस्तरां, परिवहन, निर्माण, मरम्मत और अन्य सेवाएँ शामिल हैं । इस सर्वेक्षण के प्रयोजन के लिए कृषीतर व्यवसाय के अंतर्गत ऐसी गतिविधियों को शामिल नहीं किया जाएगा जब वे घरेलू से इतर उद्यमों में की जाती हैं । फैक्टरीयाँ अधिनियम, 1948 की धारा 2एम(i) अथवा 2एम(ii) और धारा 85 के अंतर्गत पंजीकृत कृषीतर व्यवसाय उद्यम एवं बीड़ी और सिगार कामगार (रोजगार की स्थिति) अधिनियम, 1966 के अंतर्गत पंजीकृत बीड़ी और सिगार विनिर्माण प्रतिष्ठान उक्त सर्वेक्षण के दायरे से बाहर रखे गये ।

(iii) **कृषि व्यवसाय में पूँजीगत व्यय :** कृषि व्यवसाय में खरीद, स्वयं के निर्माण, बड़ी मरम्मतों, मेंड़-निर्माण (बंडिंग) एवं भूमि-उद्धार, परिवर्तन तथा भवनों के सुधार और अन्य निर्माणों सहित अन्य भूमि सुधार के कारण किया गया व्यय कृषि व्यवसाय में पूँजीगत व्यय है ।

(iv) **कृषि व्यवसाय में चालू व्यय :** इसके अंतर्गत कृषि व्यवसाय में बीज, खाद, चारे की खरीदी, मजदूरी के भुगतान, किराया, भू-राजस्व आदि तथा भवनों की सामान्य मरम्मत और रखरखाव, निर्माण, परिवहन उपस्कर सहित मशीनरी और कृषि व्यवसाय के लिए अपेक्षित उपस्कर, फर्नीचर और फिक्स्चर एवं घरेलू टिकाऊ वस्तुओं की खरीद के लिए चालू व्यय को शामिल किया गया।

(v) **कृषीतर व्यवसाय में पूँजीगत व्यय :** इसमें भवनों की खरीद, स्वयं के निर्माण, परिवर्धन,परिवर्तन, बड़ी मरम्मत और सुधार, अन्य निर्माण तथा परिवहन उपस्कर सहित मशीनरी और उपस्कर, फर्नीचर और फिक्स्चर के कारण कृषीतर व्यवसाय में किया गया व्यय शामिल है। कृषीतर व्यवसाय संबंधित भूमि-उद्धार सहित मेंड़-निर्माण (बंडिंग) और अन्य भूमि-सुधार को भी इसमें सम्मिलित किया गया।

(vi) **कृषीतर व्यवसाय में चालू व्यय :** इसके अंतर्गत कच्चे माल, ईंधन और लुब्रिकेंट, किराये के भुगतान, वेतन और मजदूरी, मशीनरी और उपस्कर आदि के किराये के प्रभार आदि तथा भवनों की सामान्य मरम्मत और रखरखाव, निर्माण, परिवहन उपस्कर सहित मशीनरी और उपस्कर, फर्नीचर और फिक्स्चर एवं कृषीतर व्यवसाय के लिए अपेक्षित घरेलू टिकाऊ वस्तुओं के लिए कृषीतर व्यवसाय में किया गया चालू व्यय शामिल है।

(vii) **घरेलू व्यय :** आवासीय भूखंड की खरीद, आवासीय प्रयोजनों के लिए भवन की खरीद, निर्माण, परिवर्धन/परिवर्तन, टिकाऊ घरेलू आस्तियों, वस्त्रों आदि की खरीद के कारण किया गया व्यय तथा डाक्टरी चिकित्सा, शिक्षा, विवाह, समारोह आदि के लिए किया गया व्यय घरेलू व्यय के अंतर्गत सम्मिलित किया गया ।

# VIII प्रतियोगिता और समेकन

8.1 वित्तीय सेवा उद्योग, विशेष रूप से बैंकिंग उद्योग, प्रौद्योगिकीगत उन्नति, अविनियमन और वैश्वीकरण के प्रभाव के अधीन 1980 के दशक के प्रारंभ से विश्व भर में उल्लेखनीय तौर पर रू पांतरित हुआ है। इस प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण पहलू समेकन रहा है क्योंकि बड़ी संख्या में बैंकों का विलय, समामेलन अथवा पुनर्व्यवस्थापन किया गया है। यद्यपि समेकन की प्रक्रिया 1980 के दशक में प्रारंभ हुई थी, तथापि 1990 के दशक में इसमें गति आई जब समष्टि-आर्थिक दबावों और बैंकिंग की संकट-स्थितियों ने बैंकिंग उद्योग को अपनी व्यावसायिक कार्यनीतियों को बदलने के लिए तथा विनियामकों को राष्ट्रीय स्तर पर बैंकिंग क्षेत्र का अविनियमन करने और वित्तीय बाजारों को विदेशी प्रतियोगिता के लिए खोलने के लिए विवश कर दिया। इसने बैंकों और बैंकेतर वित्तीय संस्थाओं तथा विभिन्न उत्पादों और वित्तीय संस्थाओं के भौगोलिक स्थापनों के बीच विभेदीकरण की अस्पष्टता को प्रेरित किया। परिणामतः उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं में बैंकों पर प्रतियोगी दबावों ने अन्य बातों के साथ-साथ राज्य के स्वामित्व वाले बैंकों के निजीकरण, विलय और अभिग्रहण (एमएण्डए) एवं विदेशी बैंकों की बढ़ी हुई उपस्थिति सहित बैंकिंग उद्योग की संरचना में तीव्र परिवर्तनों के लिए मार्ग प्रशस्त किया। एमएण्डए में निहित वित्तीय मूल्य कुछ वर्षों में कई गुना बढ़ गया। इन एमएण्डए के परिणामस्वरू प बैंकों की संख्या दोनों उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में बहुत कम हो गई है।

8.2 समेकन के उद्देश्य निश्चित विशेषताओं पर निर्भर रहे हैं, जैसे- खंडों के बीच अथवा एक ही खंड के अंतर्गत व्यवसाय के कार्यक्षेत्रों के बीच आकार अथवा संगठनात्मक संरचना (बीआइएस, 2001)। विकसित देशों में एमएण्डए के पीछे बाजार की शक्तियाँ मूल संचालक शक्ति रही हैं । वैश्वीकरण और अविनियमन बैंक स्प्रेडों और परिणामतःउनकी लाभप्रदता में गिरावट के कारण बने। लाभप्रदता में कमी को पूरा करने के लिए बैंकों के बीच अथवा बैंकों और बैंकेतर संस्थाओं के बीच विलय किए गए ताकि माप और विस्तार का लाभ प्राप्त किया जा सके। दूसरी ओर, कई ईएमई में संकट के परिणामस्वरूप बैंकिंग प्रणालियों की पुनर्संरचना के लिए विलयों और समामेलनों का संचालन प्रायः सरकारों द्वारा किया गया है।

8.3 वित्तीय समेकन के निहितार्थ न केवल प्रतियोगिता के लिए बल्कि वित्तीय स्थिरता, मौद्रिक नीति, वित्तीय संस्थाओं की कार्यकुशलता, ऋण प्रवाहों एवं भुगतान और निपटान प्रणालियों के लिए भी विद्यमान हैं। वित्तीय संस्थाओं के वैविध्यपूर्ण स्वरू प, वित्तीय विकास के विभिन्न स्तरों, कानूनी ढाँचे और अन्य समर्थक परिवेश के होते हुए वित्तीय समेकन के कारणों और उसके प्रभाव ने भी विभिन्न देशों के बीच भिन्नता की प्रवृत्ति दर्शाई है। उदाहरण के लिए, वित्तीय समेकन ने अमेरिका और जापान जैसे देशों में उच्चतर संकेंद्रण को प्रेरित किया यद्यपि अन्य देशों की तुलना में उनके पास लगातार काफी अधिक प्रतियोगी बैंकिंग प्रणालियाँ उपलब्ध हैं। फिर भी, कई अन्य देशों में समेकन की प्रक्रिया ने बैंकिंग संकेंद्रण में गिरावट को प्रेरित किया जिससे प्रतियोगिता में वृद्धि परिलक्षित होती है। यह मुख्य रूप से इसलिए था क्योंकि विलयों और अभिग्रहणों (एमएण्डए) में संबद्ध बैंक आकार में अपेक्षाकृत छोटे थे।

8.4 विभिन्न देशों में एमएण्डए को नियंत्रत करनेवाली शक्तियों से भारतीय बैंकिंग क्षेत्र अलग नहीं रहा है। भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में एमएण्डए की गतिविधि कोई नई बात नहीं है क्योंकि यह स्वतंत्रता के पहले भी घटित हो चुकी है। तथापि, 1990 के दशक में प्रारंभ किये गये आर्थिक सुधारों के कारण बैंकों की व्यावसायिक कार्यनीति में व्यापक परिवर्तन आया, जिसके द्वारा उन्होंने प्रतियोगी शक्ति प्राप्त करने हेतु आकार और कुशलता में वृद्धि के लिए विलयों और समामेलनों का सहारा लिया।

8.5 इस पृष्ठभूमि के साथ, इस अध्याय में समेकन और प्रतियोगिता के संबंध में सैद्धांतिक परिदृश्य और विभिन्न देशों के अनुभव को प्रस्तुत करते हुए भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में समेकन और प्रतियोगिता के विभिन्न पहलुओं का मूल्यांकन किया गया है। इस अध्याय का केंद्रबिंदु समेकन की प्रक्रिया की व्याप्ति और स्वरूप तथा बैंकिंग क्षेत्र में प्रतियोगिता और विलयित संस्थाओं की कुशलता पर उसके प्रभाव का परीक्षण करना है। निरंतर समेकन की कार्यविधि की प्रक्रिया में उत्पन्न होनेवाली कुछ महत्वपूर्ण समस्याओं की भी चर्चा की गई है। इस अध्याय का संगठन आठ खंडों में किया गया है। खंड II में बैंकिंग समेकन की प्रक्रिया के लिए सैद्धांतिक समर्थन को संक्षेप में निर्दिष्ट किया गया है। इसमें एमएण्डए को नियंत्रित करनेवाले उद्देश्यों और कारकों तथा समेकन की विभिन्न पद्धतियों को स्पष्ट किया गया है। विभिन्न देशों में एमएण्डए की गतिविधि में विद्यमान प्रवृत्तियों एवं भारत में बैंकिंग समेकन की प्रगति का ब्योरा क्रमशः खंड III और खंड IV में दिया गया है। भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में प्रतियोगिता पर समेकन की प्रक्रिया के प्रभाव और विलयित संस्थाओं की कार्यकुशलता का विश्लेषण खंड V में किया गया है। खंड VI में प्रतियोगिता और समेकन की निरंतर प्रक्रिया से उत्पन्न होनेवाली समस्याओं का समाधान किया गया है, जैसे (क) समेकन की प्रक्रिया जो चलायमान है, की भावी दिशा; (ख) बदले हुए आर्थिक परिवेश में सरकारी क्षेत्र के बैंकों की भूमिका; (ग) विदेशी प्रतियोगिता के लिए बैंकिंग क्षेत्र को आगे और खोलना; तथा (घ) बैंकिंग और वाणिज्य का संयोजन। भावी दिशा को सूचित करते हुए खंड VII में कुछ सुझाव दिये गये हैं जबकि खंड VIII में चर्चा के मुख्य बिंदुओं का समाहार किया गया है।

## II. समेकन - सैद्धांतिक समर्थन

8.6 समेकन की अनेक वैकल्पिक पद्धतियाँ हैं तथा मौजूदा स्थिति के आधार पर प्रत्येक पद्धति की अपनी खूबियाँ और कमियाँ हैं। फिर भी, सर्वाधिक सामान्य तौर पर फर्मों द्वारा अपनाई गई समेकन की पद्धति एमएण्डए के माध्यम से रही है। यद्यपि दोनों विलय और अभिग्रहण के कारण पूर्व में विद्यमान दो स्वतंत्र फर्म एक सामान्य तौर पर नियंत्रित संस्था बन जाते हैं, तथापि दोनों के बीच में सूक्ष्म अंतर है। जबकि अभिग्रहण का आशय एक निगम का नियंत्रण दूसरे निगम द्वारा अभिगृहीत करने से है, विलय एक विशिष्ट प्रकार का अभिग्रहण है जिसके परिणामस्वरू प अभिगृहीत होनेवाले और अभिग्रहण करनेवाले फर्मों की परिसपत्तियों और देयताओं दोनों का संयोजन किया जाता है (हैल्परीन और बेल, 1992; और रॉस आदि, 1995)। विलय में केवल एक संगठन बना रहता है और दूसरा अस्तित्वहीन हो जाता है। विलय के अलावा भी किसी फर्म को अभिगृहीत करने के तरीके हैं जैसे शेयर अभिग्रहण अथवा परिसंपत्ति अभिग्रहण।

8.7 विलय सामान्यतः तीन प्रमुख रूपों में होते हैं अर्थात् समस्तरीय विलय, विषमस्तरीय विलय और समूह विलय। समस्तरीय विलय व्यवसाय के एक ही क्षेत्र में कार्यरत दो या उससे अधिक फर्मों का संयोजन है। विषमस्तरीय विलय एक ही उत्पाद के उत्पादन या वितरण के विभिन्न स्तरों पर संबद्ध दो या उससे अधिक फर्मों का संयोजन है तथा यह अग्रगामी अथवा पश्चगामी हो सकता है। जब कोई कंपनी सामग्री के आपूर्तिकर्ता के साथ सम्मिलित हो जाती है तो वह पश्चगामी विलय कहा जाता है, और जब वह ग्राहक के साथ सम्मिलित हो जाती है तब वह अग्रगामी विलय के रूप में जाना जाता है। समूह विलय व्यावसायिक गतिविधि के असंबद्ध कार्यों में लिप्त फर्मों का संयोजन है।

8.8 वित्तीय क्षेत्र, विशेष रूप से बैंकिंग क्षेत्र में एमएण्डए मुख्य रूप से फर्मों के मूल्य को अधिकतम बनाने के लिए अथवा प्रबंधकों के निजी हित के लिए किये जाते हैं। किसी भी फर्म के साथ जो भी स्थिति हो, वित्तीय संस्था का मूल्य प्रत्याशित भावी लाभों के वर्तमान बट्टागत मूल्य द्वारा निर्धारित किया जाता है। विलय प्रत्याशित भावी लाभों को प्रत्याशित लागतों को कम करने या प्रत्याशित राजस्वों को बढ़ाने के द्वारा अथवा दोनों के सम्मिश्रण द्वारा बढ़ा सकते हैं। एमएण्डए के माध्यम से लागत में कमी कई कारणों से उत्पन्न हो सकती है जिनमें शामिल हैं बड़े पैमाने की किफायत (इकॉनमीज़ ऑफ स्केल), संभावना से प्राप्य लाभ (इकॉनमीज़ ऑफ स्कोप), कुशल प्रबंधन की व्यवस्था, भौगोलिक या उत्पाद के विविधीकरण के कारण जोखिम में कमी और उसका विविधीकरण, बढ़े हुए आकार के कारण पूँजी बाजारों या उच्चतर साख निर्धारण (क्रेडिट रेटिंग) तक पहुँच, तथा नये सिरे से प्रवेश के साथ संबद्ध लागत की तुलना में कम लागत पर नये भौगोलिक या उत्पाद के बाजारों में प्रवेश। एमएण्डए बैंकों को इस बात के लिए भी समर्थ बना सकते हैं कि वे ऐसी अतिरिक्त सेवाओं की व्यवस्था कर सकें जो उन्हें बड़े बैंकों के साथ प्रतियोगिता का सामना करने में सक्षम बनाएँ। इस प्रकार विलय अपेक्षाकृत बड़े आकार वाले फर्मों को विभिन्न प्रकार के उत्पादों के लिए 'सर्व सेवा केंद्र' (वन स्टॉप शॉपिंग) की सुविधा, संवर्धित उत्पाद या भौगोलिक विविधीकरण उपलब्ध कराते हुए बड़ी संख्या में ग्राहकों को बेहतर सेवा प्रदान करने में भी समर्थ बना सकते हैं जिससे संभावित ग्राहकों के विस्तृत समूह के लिए मार्ग प्रशस्त हो और जोखिम का सामना करने की सामर्थ्य में भी बढ़ोतरी हो। एमएण्डए का उपयोग अवांछित रूप में संभव अभिग्रहणों, खास तौर से भविष्य में अन्य बड़े बैंकों द्वारा प्रतिकूल अधिग्रहणों के विरुद्ध एक निवारक के रूप में भी किया जा सकता है।

8.9 तथापि, प्रबंधकों के कार्य और निर्णय हमेशा किसी फर्म के मूल्य को अधिकतम बनाने के अनुरूप नहीं होते। विशेष रूप से जब मालिकों और प्रबंधकों की पहचान में अंतर हो और पूँजी बाजार श्रेष्ठ स्तर से कम स्तर पर हों, तब प्रबंधक ऐसी कार्रवाइयाँ कर सकते हैं जो उनके वैयक्तिक लक्ष्य पूरे करते हों और फर्म के मालिकों के हित में न हों। कुछ मामलों में प्रबंधक केवल प्रतिस्पर्धियों की तुलना में अपने फर्म के आकार को बढ़ाने के लिए समेकन में लिप्त हो सकते हैं।

8.10 अविनियमन, सूचना प्रौद्योगिकी में सुधार, वैश्वीकरण, शेयरधारकों के दबाव और अधिक क्षमता का संचय या वित्तीय संकट ऐसे कुछ महत्वपूर्ण कारक रहे हैं जिन्होंने वित्तीय संस्थाओं के समेकन को प्रोत्साहित किया है। जबकि नई प्रौद्योगिकियों में अत्यधिक नियत लागतें सम्मिलित होती हैं, वे अधिक व्यापक भौगोलिक क्षेत्रों में अधिक तेज गति से संचार की गुणवत्ता और सूचना के प्रसंस्करण के साथ बड़ी संख्या में ग्राहकों को उत्पादों और सेवाओं के एक विस्तृत विन्यास की व्यवस्था को संभव बनाएँगी। दूसरे शब्दों में, वह ग्राहकों के एक अपेक्षाकृत बड़े वर्ग में वितरित कर उच्च नियत लागतों को व्याप्ति के द्वारा बड़े पैमाने की किफायत प्रदान करती है तथा उन फर्मों के विलय को प्रेरित करती हैं जो गैर-किफायती पैमानों पर परिचालित हैं। इसके अलावा, बड़ी संस्थाओं द्वारा वित्तीय इंजीनियरी के नये साधन, जैसे व्युत्पन्नी (डेरिवेटिव) संविदाएं, तुलन-पत्र में शामिल न होनेवाली गारंटियाँ और जोखिम प्रबंध, अधिक कुशलतापूर्वक उत्पन्न किए जा सकते हैं। ग्राहकों की सेवाओं के लिए कुछ नई वितरण पद्धतियाँ, जैसे फोन केंद्र, एटीएम और ऑनलाइन बैंकिंग नेटवर्क भी पारंपरिक शाखा-तंत्र की अपेक्षा अधिक बड़े पैमाने की किफायत दर्शा सकती हैं (रैडेकी आदि, 1997)।

8.11 अविनियमन बैंकिंग में पुनर्व्यवस्थापन की प्रक्रिया को बाजार की स्पर्धा और प्रवेश की शर्तों, वैयक्तिक विलय संबंधी लेनदेनों के लिए अनुमोदन/अस्वीकृति के निर्णयों, सेवाप्रदाताओं के लिए अनुमतियोग्य कार्यकलापों के दायरे की सीमाओं पर प्रभावों के माध्यम से संस्थाओं के सरकारी स्वामित्व और विफलताओं की सामाजिक लागतों को न्यूनतम बनाने के प्रयासों के जरिये प्रभावित करता है। पिछले दो दशकों में प्रौद्योगिकीगत उन्नति और वित्तीय संकट की प्रतिक्रिया के

रूप में सरकारों ने कानूनी और विनियामक ढाँचे, जिसके अंतर्गत वित्तीय संस्थाएं परिचालित की जाती हैं, पर विचार करने के बाद समेकन के संबंध में अनेक सरकारी अवरोधों को शिथिल कर दिया है। इसके परिणामस्वरूप, वित्तीय क्षेत्र में एमएण्डए की गति में तेजी आई। इसी समय, ब्याज और जमा दरों पर उच्चतम सीमाएं हटाई गईं जिसके कारण बैंकों की ब्याज-दरों के स्प्रेड संकीर्ण हो गए। एमएण्डए की लहर बढ़ी हुई प्रतियोगिता की प्रतिक्रिया के स्वरूप भी है जिसने लाभों के संबंध में चुनौती प्रस्तुत की । लाभप्रदता पर बैंकों के स्प्रेडों में गिरावट के प्रभाव को प्रतिसंतुलित करने के लिए बैंकों ने प्रमात्रा का विस्तार (बड़े पैमाने की किफायत) और अपने कार्यकलापों का विविधीकरण (संभावना से प्राप्य लाभ) करते हुए अपनी प्रतिक्रिया दर्शाई। बैंकिंग परिचालनों के लिए भौगोलिक क्षेत्रों और कार्यकलापों के विविधीकरण पर प्रतिबंध को हटाने से बैंकों के लिए अपने और बैंकेतर वित्तीय फर्मों के बीच समेकन करने के लिए अवसर उपलब्ध हो गए।

8.12 वैश्वीकरण, जो कई मायनों में प्रौद्योगिकी और अविनियमन का एक उप-उत्पाद है, का बड़े पैमाने की किफायतों से संबंध है और परिणामतः उन फर्मों के बीच समेकन को मजबूती से प्रभावित करता है जो थोक वित्तीय सेवाओं की व्यवस्था में लिप्त हैं। एमएण्डए उन बैंकों के लिए प्रायः एक विकल्प रहे हैं जो एक वैश्विक खुदरा प्रणाली निर्मित करना चाहते हैं। यह महसूस किया गया है कि लक्ष्य बाजार में एक मौजूदा संस्था का अभिग्रहण करने से, अभिग्रहणकर्ता संघटित (आर्गनिक) वृद्धि की कार्यनीति से संभव विस्तार की तुलना में अधिक त्वरित विस्तार प्राप्त करता है।

8.13 देशी और अंतरराष्ट्रीय दोनों प्रकार के पूँजी बाजारों में बढ़ी हुई पहुँच ने अन्य हितधारकों (स्टेकहोल्डर्स) की अपेक्षा शेयरधारकों के महत्व को बढ़ा दिया है। दूसरी ओर, बढ़ी हुई प्रतिस्पर्धा ने वित्तीय फर्मों के लाभ मार्जिनों पर दबाव डाला है जिसके परिणामस्वरूप कार्यनिष्पादन में सुधार लाने के लिए शेयरधारकों का दबाव बढ़ गया है। वित्तीय फर्म कार्यनिष्पादन में सुधार लाने के लिए उसे व्यावसायिक लाभों, उत्पादकता में बढ़ोतरी या और अधिक प्रभावी तुलन-पत्र के प्रबंध के माध्यम से प्राप्त करने के स्थान पर एमएण्डए की अधिक सरल कार्यनीति अपनाते रहे हैं।

8.14 जब किसी उद्योग या स्थानीय बाजार में अतिरिक्त क्षमता विद्यमान है, तब फर्म अनेक कारणों से अकुशल बन जाते हैं क्योंकि वे इष्टतम स्तर से नीचे अथवा उत्पादन की कुशल सीमा से नीचे परिचालित होते हैं। एमएण्डए के माध्यम से समेकन इन अकुशलता संबंधी समस्याओं का समाधान विलीन होनेवाले फर्मों के पहले से विद्यमान मुक्तांश (फ्रैंचाइज़) मूल्य को सुरक्षित रखते हुए दिवालियेपन या निर्गम के अन्य तरीकों की तुलना में अधिक कारगर ढंग से कर सकता है। इसी प्रकार, अधिक शक्तिशाली फर्मों द्वारा अभिग्रहण किये जानेवाले कमजोर या अकुशल फर्मों के संबंध में वित्तीय संकट की समस्याओं का समाधान करने के लिए एक कारगर तरीके के रूप में समेकन का प्रयोग किया जाता है। संक्षेप में, अन्य बातों के साथ-साथ नये व्यवसाय प्रारंभ करने/उनका संवर्धन करने, उत्पाद संविभागों को मजबूत करने, दुहराव को न्यूनतम करने और प्रतियोगी लाभ प्राप्त करने के लिए उत्पादन-पूर्व अवधि (गेस्टेशन पीरियड) को कम करने में बैंकों के विलयों से सहायता मिल सकती है। कार्यकुशलता को बढ़ाने के लिए एक अच्छी कार्यनीति के रूप में भी उनकी पहचान की गई है। आदर्श रूप में विलयों का लक्ष्य सहक्रियाओं से लाभ उठाने, परिचालनों में अतिव्याप्ति को कम करने, अधिक स्टाफ को पुनः प्रशिक्षित करने, श्रमिकों के पुनर्व्यवस्थापन या स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति द्वारा उन्हें उपयुक्त आकार में रखने और पुनः नियोजित करने का होना चाहिए।

8.15 दूसरी ओर बैंकिंग उद्योग के अंतर्गत समेकन में विनियमों, कारपोरेट संस्कृति और अभिशासन व्यवस्था में मतभेदों तथा सूचना की अपर्याप्त उपलब्धता द्वारा बाधा पहुँच सकती है । कानूनी और विनियामक परिवेश बैंकिंग उद्योग में समेकन के लिए अत्यधिक संभावित अवरोध का द्योतन करता है क्योंकि वह वित्तीय फर्मों द्वारा की जानेवाली अनुमतियोग्य गतिविधियों के दायरे को सीधे प्रभावित करता है। कुछ देशों में न्यासविरोधी कानून मुख्य रूप से क्षेत्रों के अंतर्गत देशी समेकन के लिए एक महत्वपूर्ण अवरोध उत्पन्न करते हैं। विवेकपूर्ण विनियमन पूँजीगत अपेक्षाओं में अंतरों के माध्यम से विदेशी समेकन में बाधा पहुँचा सकता है। समेकन के संबंध में विनियामक अवरोधों में राष्ट्रीय विजेताओं की सुरक्षा, वित्तीय संस्थाओं का सरकारी स्वामित्व, प्रतियोगिता की नीतियाँ और गोपनीयता संबंधी नियम शामिल हैं।

8.16 कंपनी अभिशासन में विभेद जो किसी संस्था की संगठनात्मक संरचना एवं जाँच-पड़ताल और शेषराशियों की प्रणाली को सम्मिलित करते हैं, एमएण्डए के लिए भी निवारक हो सकते हैं। विभिन्न देशों में निदेशक मंडल (''पर्यवेक्षी'') और वरिष्ठ प्रबंधन के कार्यों के संबंध में विधायी और विनियामक ढाँचें में उल्लेखनीय अंतर हैं। ये अंतर एक संस्था के अंतर्गत दो निर्णयन निकायों के परस्पर संबंधों तथा फर्म के मालिकों के साथ कर्मचारियों, ग्राहकों, समुदाय, रेटिंग एजेंसियों और सरकारों सहित अन्य हितधारकों के संबंधों को प्रभावित करते हैं। सांस्कृतिक अंतर और संबंधित सूचना संबंधी विषमताएँ भी विद्यमान हैं। ये विभिन्नताएं विदेशी और उत्पाद के विभिन्न स्तरों के समेकन के लिए एवं वित्तीय संस्थाओं के प्रतिकूल अधिग्रहणों में मजबूत अवरोधों के रूप में कार्य करती हैं।

8.17 हितधारक सूचना संबंधी जिस विषमता का सामना करते हैं, वह एमएण्डए में बाधा पहुँचा सकती है क्योंकि सूचना की अपर्याप्त उपलब्धता किसी विलय के परिणाम के बारे में अनिश्चितता को बढ़ाती है। सूचना की ऐसी विषमता अपूर्ण प्रकटीकरण या देशों और क्षेत्रों के बीच लेखांकन के मानकों में बड़े अंतरों, लेखांकन रिपोर्ट की तुलनीयता की कमी, परिसंपत्ति के मूल्यांकन में कठिनाई और पारदर्शिता के अभाव के कारण उत्पन्न होती है।

8.18 अन्य बातों के साथ-साथ समेकन के निहितार्थ वित्तीय स्थिरता और मौद्रिक नीति के लिए होते हैं। बैंकों के आकार में वृद्धि और कुछ बृहत् बैंकों में बैंकिंग कार्यकलापों के संकेंद्रण के चलते विभिन्न प्रकार की जोखिमों जैसे परिचालन जोखिम, संसर्ग जोखिम और प्रणालीगत जोखिम में वृद्धि हो सकती है। समेकन बाजार की शक्ति को प्रभावित करता है जो ब्याज-दर के अंतरपणन (आर्बिट्रेज) में अवरोध उत्पन्न कर आयवक्र पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है, बदले में उधारकर्ताओं को उधार और समर्थक जमानत (कॉलेटरल) के मूल्य मौद्रिक नीति के प्रसारण की सरणियों को प्रभावित करते हैं (बॉक्स VIII.1)।

## III. बैंकिंग उद्योग में विलय और अभिग्रहण में विद्यमान हाल की प्रवृत्तियाँ

8.19 हाल के वर्षों में उन्नत देशों में एमएण्डए की संख्या में वृद्धि हुई। जहाँ तक ईएमई का संबंध है, जबकि हाल के वर्षों में कुछ

### बॉक्स VIII.1
### समेकन एवं वित्तीय स्थिरता और मौद्रिक नीति के लिए उसके निहितार्थ

बैंकिंग समेकन, उद्देश्यों और प्रकारों का विचार किये बिना अनेक चुनौतियाँ प्रस्तुत करता है जिनमें से वित्तीय स्थिरता और मौद्रिक नीति संबंधी निहितार्थ महत्वपूर्ण हैं। इस बात पर बल दिया जाता है कि यद्यपि विशिष्ट फर्म के स्तर पर भौगोलिक और उत्पादगत विविधीकरण के माध्यम से वित्तीय जोखिम को कम करने के लिए कई संभावनाएँ हैं, तथापि बृहत् बैंकों के निर्माण के लिए मार्ग प्रशस्त करनेवाला समेकन समष्टि-आर्थिक स्तर पर विभिन्न प्रकार की वित्तीय जोखिमों को बढ़ा सकता है। वास्तव में, समेकन के बाद बैंकों के संबंध में राज्य के स्वामित्व को विकसित करने के वित्तीय स्थिरता के निहितार्थों और विदेशी बैंकों की बढ़ती हुई उपस्थिति को भी समझना विभिन्न देशों में नीति-निर्माताओं की कार्य-सूची में उच्च प्राथमिकता प्राप्त विषय है । परिचालन जोखिम परिचालन के आकार के साथ ही बढ़ सकती है क्योंकि बड़ी कंपनियों में प्रबंधक-वर्ग और परिचालन कार्मिकों के बीच दूरी अधिक है तथा प्रशासनिक प्रणालियाँ अधिक जटिल हैं। परिचालनों की पारदर्शिता भी खास तौर से विदेशी विलयों के संबंध में आकार में वृद्धि के साथ ही बिगड़ सकती है जिससे प्राधिकारियों के लिए संभावित संकटों की पहचान समय रहते करना कठिन हो जाता है। संसर्ग जोखिम अर्थात् किसी खास बैंक में उत्पन्न होनेवाली समस्याओं का अन्य बैंकों में व्याप्त होना, भी परिचालन का आकार बढ़ने के साथ ही बढ़ जाती है क्योंकि इसी के साथ बैंकों के एल दूसरे के प्रति एक्सपोज़र में वृद्धि होती है। साक्ष्य से यह विदित होता है कि परस्पर निर्भरताएँ जो समेकन के साथ सकारात्मक रूप में अन्योन्याश्रित हैं, बड़ी और जटिल वित्तीय संस्थाओं में बढ़ गई हैं। इसके अलावा, यह पाया गया है कि समेकित होनेवाली संस्थाएँ अपने संविभागों का अंतरण उच्चतर जोखिम-प्रतिलाभ निवेश के प्रति करती हैं। इसके परिणामस्वरूप, प्रणालीगत जोखिम के बारे में चिंताओं में वृद्धि हुई है क्योंकि कुछ बृहत् बैंकों में बैंकिंग कार्यकलापों के संकेंद्रण का अर्थ यह होगा कि उनकी थोक गतिविधियों के चलते किसी भी आघात के अप्रत्यक्ष प्रभाव वित्तीय प्रणाली और वास्तविक अर्थव्यवस्था पर हो सकते हैं। किसी छोटे मेजबान देश के लिए विदेशी वित्तीय एकीकरण का अर्थ एक मध्यम आकार वाले विदेशी बैंक के भी अस्थिरता का स्रोत बनने की संभावना में वृद्धि और उसके अपने प्रमुख बैंकों द्वारा देशी स्वामित्व के खो देने की संभाव्यता में बढ़ोतरी होगा।

प्रणालीगत जोखिम की बढ़ी हुई संभाव्यता के कारण 'विफल न होनेवाले बहुत बड़े' समझे जानेवाले इन बैंकों के लिए चिंताएँ और गहरी हो जाती हैं जिससे नैतिक संकट की समस्या उत्पन्न होती है। ऐसे बड़े बैंकों की हानि से बढ़ी हुई संभाव्य प्रणालीगत अस्थिरता के कारण प्रत्याशित घोषणा जो भी हो, आम जनता का बोध यह होगा कि सरकार इन बैंकों का पतन नहीं होने देगी और इसलिए यथार्थतः संकट से निकलने के लिए सहायता (बेलआउट) उपलब्ध कराएगी। सरकार द्वारा दी जानेवाली इस अनुभूत अंतर्निहित अथवा सुस्पष्ट गारंटी के कारण इन बैंकों का जोखिम उठाने का व्यवहार बढ़ सकता है जिससे प्रणालीगत जोखिम और बढ़ेगी। तथापि, कोई भी बैंक कब 'विफल न होनेवाला बहुत बड़ा' बैंक बनता है, यह तय करने के लिए विशिष्ट मानदंड बनाना संभव नहीं है, यद्यपि यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अर्थव्यवस्था और वित्तीय प्रणाली में बैंक के महत्व के संबंध में कुछ महत्त्वपूर्ण स्तर विद्यमान है।

समेकन वित्तीय क्षेत्र के अंतर्गत कुछ पार्टियों के बीच भुगतान और निपटान प्रवाहों के अधिकाधिक संकेंद्रण के लिए प्रेरणा देता है। ऐसे संकेंद्रण का यह निहितार्थ होगा कि यदि कोई भुगतान प्रॉसेसर विफल होता है अथवा भुगतान आदेशों का प्रसंस्करण नहीं कर सकता तो प्रणालीगत जोखिमें उत्पन्न हो सकती हैं। बहुराष्ट्रीय संस्थाओं और अपने बीच चलनिधि की बढ़ती हुई परस्पर निर्भरता के साथ विभिन्न देशों में भुगतान और निपटान प्रणालियों में लिप्त विशेषीकृत सेवा प्रदाताओं का आविर्भाव संसर्ग के प्रभावों के प्रसारण में भुगतान और निपटान प्रणालियों की संभावित भूमिका पर बल देता है।

मौद्रिक नीति संबंधी निर्णय वित्तीय फर्मों और बाजारों के व्यवहार से प्रभावित होते हैं। उनमें परिवर्तन करने के द्वारा समेकन की प्रक्रिया के भी मौद्रिक नीति के संचालन में अनेक निहितार्थ हैं। समेकन बाजारों में प्रतिस्पर्धा को कम कर सकता है, कुछ के लिए चलनिधि की लागत बढ़ा सकता है और बाजारों के बीच ब्याज के अंतरपणन को अवरु द्ध कर सकता है। यदि परिणामी बड़े बैंक अपनी छोटी पूर्ववर्ती संस्थाओं से भिन्न प्रकार से व्यवहार करते हैं तो बाजारों का कार्यनिष्पादन भी प्रभावित हो सकता है। घटी हुई प्रतियोगिता के कारण आय-वक्र के साथ अंतरपणन की अवरुद्धता वित्तीय बाजारों में ब्याज दरों के माध्यम से प्रभावित प्रसारण की मौद्रिक नीति सरणी पर असर डाल सकती है। समेकन के परिणामस्वरूप आविर्भूत बैंकों द्वारा बाजार की शक्ति का प्रयोग भी वित्तीय बाजारों में प्रत्यक्ष पहुँच के बिना उधारकर्ताओं को बैंक उधार के माध्यम से परिचालित होनेवाले मौद्रिक प्रसारण को परिवर्तित कर सकता है। समेकन उस तरीके को भी प्रभावित कर सकता है जिससे मौद्रिक नीति समर्थक जमानत (कॉलेटरल) के मूल्य पर असर डालती है और इस प्रकार वह निधियाँ प्राप्त करने के लिए जिन्हें कॉलेटरल की अपेक्षा है उनके लिए ऋण की उपलब्धता पर भी असर डाल सकता है।

देशों में एमएण्डए की गतिविधि में तेजी आई, कुछ अन्य देशों में इसमें मंदी रही। तथापि, उन देशों सहित जहाँ एमएण्डए गतिविधियाँ मंद रहीं, अनेक देशों में एमएण्डए के मूल्य में कई गुना वृद्धि हुई (सारणी 8.1)।

8.20 फ्रांस में समेकन की गतिविधि का काफी अंश 1990 के दशक में छोटे बैंकों के बीच घटित हुआ जिससे बैंकिंग संस्थाओं की कुल संख्या में भारी कटौती हुई। इसी प्रकार जर्मनी में समेकन अपेक्षाकृत छोटे बचत और सहकारी बैंकों के बीच हुआ तथा बैंकों की संख्या में 1990 के दशक के दौरान लगभग एक तिहाई की गिरावट हुई। समेकन के बाद इटली में भी बैंकों की संख्या इसी अवधि में एक तिहाई से अधिक कम हो गई। अंतर-राज्य और अंतः- राज्य बैंकिंग पर प्रतिबंधों के विघटित किये जाने, छोटी मीयादी और बचत जमाराशियों पर ब्याज-दर की उच्चतम सीमाओं के हटाये जाने तथा कार्यकलापों के विविधीकरण के संबंध में अनुमति के सम्मिलित प्रभाव से 1990 के दशक में अमरीका में बैंकों और बैंकेतर वित्तीय कंपनियों के बीच विलयों के लिए मार्ग प्रशस्त हुआ। उसके बाद हुए समेकन के परिणामस्वरूप सबसे बड़ी संस्थाओं द्वारा पूर्ण और सापेक्ष रूप दोनों में भारी वृद्धि की गई। यूके में 1980 और 1990 के दशकों के दौरान विनियामक सुधारों ने वित्तीय संस्थाओं पर प्रतिबंधों को हटाया ताकि वे पारंपरिक व्यवसाय प्रणालियों के अंतर्गत प्रतिस्पर्धा कर सकें। इससे सर्वव्यापी (यूनिवर्सल) बैंकिंग का विकास संभव हुआ जिसने अंतरराष्ट्रीय बैंकिंग की वृद्धि और भवन-निर्माण समितियों के बैंकों के रूप में परिवर्तन को प्रेरित किया। परिणामस्वरूप, यूके में बैंकों की संख्या में भारी वृद्धि हुई, परंतु बाद में हुए समेकन के बाद उनकी संख्या में लगभग 20 प्रतिशत की गिरावट हुई।

**सारणी 8.1 : विभिन्न देशों के बीच बैंक विलय और अभिग्रहण**

| | संख्या | | मूल्य (मिलियन अमरीकी डालर) | |
|---|---|---|---|---|
| देश | 1995-1999 | 2000-04 | 1995-1999 | 2000-04 |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 |
| यूके* | 7 | 52 | 1,137 | 20,376 |
| जर्मनी* | 22 | 84 | 13,100 | 34,023 |
| इटली* | 36 | 121 | 12,953 | 153,346 |
| जापान* | 18 | 58 | 8,892 | 41,069 |
| हांगकांग | 0 | 14 | 0 | – |
| सिंगापुर | 8 | 8 | 2,900 | 11,400 |
| कोरिया | 11 | 7 | 14,360 | 27,410 |
| इंडोनेशिया | 1 | 0 | – | 0 |
| मलेशिया | 2 | 16 | 20 | 3,020 |
| फिलीपींस | 2 | 13 | 6,900 | 17,740 |
| थाईलैंड | 5 | 2 | 57,700 | 28,000 |
| चिली | 5 | 6 | 870 | 1,220 |
| कोलंबिया | 9 | 11 | 40 | 33 |
| मेक्सिको | 8 | 5 | 81,900 | 170,600 |
| चेक गणतंत्र | 9 | 3 | – | – |
| हंगरी | 11 | 9 | 8,620 | 17,990 |
| पोलैंड | 23 | 30 | – | – |

* : उप-अवधि 1997-2000 और 2001-2007 के लिए ब्लूमबर्ग डेटाबेस पर आधारित । यह आवश्यक नहीं कि मूल्य सभी सौदों की राशि को सूचित करे ।

– : उपलब्ध नहीं

**स्रोत** : बीआइएस (2006) और ब्लूमबर्ग ।

8.21 कनाडा में देशी बैंकों ने पारंपरिक रूप से बैंकिंग क्षेत्र के एक बड़े अंश को नियंत्रित किया। बैंकिंग उद्योग पर कुछ बैंकों के हावी हो जाने के कारण समेकन 2000 में स्थापित एक मार्गदर्शी निदेश के माध्यम से विनियमित किया गया जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि इससे संकेंद्रण का अस्वीकार्य स्तर न बने, प्रतियोगिता में भारी कमी न हो और भावी विवेकसम्मत विषयों का समाधान करने में नीतिगत लचीलेपन में कोई कमी न आए। इस प्रकार 1990 के दशक में अधिक समेकन नहीं हुआ तथा विदेशी बैंकों के प्रवेश के कारण 1980 के दशक में पाई गई भारी वृद्धि से बैंकों की संख्या में कोई खास गिरावट नहीं हुई। जापान में भी 1990 के दशक में बहुत कम समेकन हुआ तथा कुछ बैंकों की विफलता के बाद 1990 के दशक के अंत में बैंकों की संख्या में केवल एक मामूली कमी रही।

8.22 1990 के दशक में स्वीडन में बैंकिंग उद्योग ने एक वाणिज्य बैंक के रूप में सहकारी बैंकों के विलय तथा एक बैंकिंग समूह के रूप में सबसे बड़े बचत बैंकों के रूपांतरण का अनुभव किया। इसके अलावा, सभी प्रमुख बैंकिंग समूहों के बीच समेकन हुआ था। जबकि उक्त सभी विलयों ने बैंकों की संख्या को कम कर दिया, बैंकों की कुल संख्या में विदेशी बैंकों के प्रवेश और लगभग इसी समय कई 'निश बैंकों' की स्थापना के कारण कुछ बढ़ोतरी हुई।

8.23 अनेक उभरती बाजार और उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में 1990 के दशक से बैंकिंग समेकन के परिणामस्वरूप बैंकों की संख्या में भारी कमी आई। अमरीका में पिछले दो से तीन दशकों में समेकन के कारण लगभग 25-30 प्रतिशत बैंक या तो बंद हो गए या उनका विलय हुआ (नीत्शूर, 2008)। वास्तव में, उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में बैंकिंग प्रणालियों ने कतिपय वाणिज्य बैंकों और प्रायः अपेक्षाकृत कम संख्या में बैंक शाखाओं के साथ अधिक निजी और विदेशी स्वामित्व वाली संरचनाओं की दिशा में विकसित होना सामान्यतः जारी रखा। कुछ देशों में ये प्रवृत्तियाँ संकट के बाद कमजोर वित्तीय संस्थाओं की छँटाई एवं प्राधिकारियों द्वारा प्रोत्साहित विलयों के परिणामस्वरूप रही हैं (उदाहरण के लिए इंडोनेशिया, मलेशिया और थाईलैंड)। अन्यत्र ये गतिविधियाँ अधिकांशतः बाजार से प्रेरित रही हैं (उदाहरण के लिए केंद्रीय यूरोप और मेक्सिको))(सारणी 8.2)।

## IV. भारत में समेकन और प्रतियोगिता

8.24 भारत में 1992 से आगे किये गये बैंकिंग क्षेत्र सुधारों का लक्ष्य वित्तीय संस्थाओं की सुरक्षा और सुदृढ़ता को सुनिश्चित करना

**सारणी 8.2 : वाणिज्य बैंकों की संख्या**

| देश | 2001 | 2005 | प्रतिशत में अंतर |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ** | | | |
| डेनमार्क | 190 | 161 | -15.3 |
| फ्रांस | 444 | 294 | -33.8 |
| जर्मनी | 304 | 251 | -17.4 |
| ग्रीस | 44 | 21 | -52.3 |
| इटली | 830 | 784 | -5.5 |
| जापान | 234 | 215 | -8.1 |
| कोरिया | 20 | 13 | -35.0 |
| सिंगापुर | 128 | 110 | -14.1 |
| स्पेन | 285 | 272 | -4.6 |
| यूके | 398 | 333 | -16.3 |
| अमरीका | 8,075 | 7,515 | -6.9 |
| **उभरती अर्थव्यवस्थाएँ** | | | |
| पेरू | 15 | 12 | -20.0 |
| फिलीपीन्स | 42 | 41 | -2.4 |
| पोलैंड | 69 | 54 | -21.7 |
| अर्जेन्टीना | 86 | 71 | -17.4 |
| ब्राजील | 180 | 161 | -10.6 |
| चिली | 27 | 26 | -3.7 |
| मेक्सिको | 32 | 29 | -9.4 |
| मिस्र (ईजिप्ट) | 53 | 43 | -18.9 |
| भारत | 100 | 88 | -12.0 |
| इजराइल | 26 | 15 | -42.3 |
| दक्षिण अफ्रीका | 59 | 34 | -42.4 |

**स्रोत :** विनियमन और पर्यवेक्षण संबंधी विश्व बैंक का डेटाबेस ।

और साथ ही उन्हें कुशल, कार्यात्मक तौर पर वैविध्यपूर्ण और प्रतियोगी बनाना था। वित्तीय क्षेत्र सुधारों ने बैंकों को परिचालनगत लचीलापन और कार्यात्मक स्वायत्तता प्रदान की । इन सुधारों ने उनका पुनःपूँजीकरण करने, लाभकारी बैंकों को पूँजी बाजार में पहुँचने की अनुमति देने और नये बैंकों के प्रवेश के जरिए बाजार में प्रतियोगी तत्वों को बढ़ाने के द्वारा वित्तीय क्षेत्र में संरचनात्मक परिवर्तन भी किये। निजी क्षेत्र के नये बैंकों के माध्यम से प्रतियोगिता प्रारंभ करते हुए अधिकाधिक कार्यकुशलता प्राप्त करने तथा सरकारी क्षेत्र के बैंकों के लिए बढ़ाई गई परिचालनात्मक स्वायत्तता के अलावा, बैंकिंग प्रणाली में सुधारों का उद्देश्य वित्तीय समेकन में वृद्धि करना, आर्थिक वृद्धि का निधीयन तथा जनसाधारण के लिए बेहतर ग्राहक सेवा उपलब्ध कराना भी था।

8.25 सरकार और भारतीय रिज़र्व बैंक ने वित्तीय संस्थाओं के समेकन के लिए एक उचित राजकोषीय, विनियामक और पर्यवेक्षी ढाँचे के माध्यम से समर्थक परिवेश उपलब्ध कराया और साथ ही, यह सुनिश्चित किया कि कुछ बड़ी संस्थाएँ बाजार में अल्पाधिकारी संरचना निर्मित न करें (तलवार, 2001)। प्रवेश और निर्गम के मानदंडों को शिथिल करते हुए और विदेशी बैंकों की बढ़ी हुई उपस्थिति द्वारा भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में प्रतियोगी स्थितियों को मजबूत किया गया। फरवरी 2005 में बैंकिंग प्रणाली की कार्यकुशलता और स्थिरता को और बढ़ाने के उद्देश्य से रिज़र्व बैंक द्वारा एक द्वि-मार्गी और क्रमिक दृष्टिकोण अपनाया गया। एक मार्ग तो दोनों सरकारी और निजी क्षेत्रों में देशी बैंकिंग प्रणाली का समेकन था। दूसरा मार्ग एक समक्रमिक तरीके से विदेशी बैंकों की उपस्थिति को क्रमशः बढ़ाना था (अनुबंध VIII.1)। तथापि भारत में बैंकिंग क्षेत्र के विभिन्न खंडों के लिए विनियामक ढाँचा भिन्न-भिन्न है।

*विलय और समामेलन : विनियामक रूपरेखा*

8.26 बैंकिंग क्षेत्र में एमएण्डए के लिए विनियामक रूपरेखा बैंककारी विनियमन (बीआर) अधिनियम, 1949 में निर्धारित की गई है। स्वातंत्र्योत्तर काल में भारत में बैंकों के समामेलनों के लिए कानूनी ढाँचा उक्त अधिनियम में उपलब्ध कराया गया। इस अधिनियम में दो प्रकार के समामेलनों के लिए उपबंध किया गया है *अर्थात्* (i) स्वैच्छिक और (ii) अनिवार्य। स्वैच्छिक समामेलन के लिए बीआर अधिनियम की धारा 44ए में व्यवस्था है कि किसी अन्य बैंकिंग कंपनी के साथ किसी बैंकिंग कंपनी के समामेलन की योजना के लिए यह अपेक्षित है कि वह दोनों बैंकिंग कंपनियों के निदेशक बोर्डों द्वारा अलग-अलगी रूप से अनुमोदित हो तथा बाद में दोनों बैंकिंग कंपनियों के शेयरधारकों (मूल्य में) की दो-तिहाई द्वारा अनुमोदित हो। इसके अलावा, बीआर अधिनियम की धारा 44ए यह अपेक्षा करती है कि प्रत्येक बैंकिंग कंपनी के शेयरधारकों के मूल्य में दो-तिहाई के रूप में संख्या में अपेक्षित बहुमत द्वारा समामेलन की योजना को अनुमोदित किये जाने के बाद मामला मंजूरी के लिए रिजर्व बैंक के पास प्रस्तुत किया जा सकता है। तथापि, बीआर अधिनियम की धारा 44ए के अंतर्गत दो बैंकिंग कंपनियों के स्वैच्छिक समामेलन का अनुमोदन करने के लिए रिज़र्व बैंक के पास विवेकाधिकार है।

8.27 हाल में निजी क्षेत्र के बैंकों के समामेलन की योजनाओं का अनुमोदन करने में रिज़र्व बैंक का अनुभव कुल मिलाकर संतोषजनक रहा है तथा अनुमोदन के लिए उसके पास प्रस्तुत समामेलन की किसी भी योजना को अस्वीकृत करने का कोई अवसर नहीं रहा है। अब तक निजी क्षेत्र के बैंकों के बीच छह स्वैच्छिक समामेलन हुए हैं, जबकि निजी क्षेत्र के दो बैंकों (कुरुण्डवाड का गणेश बैंक और फेडरल बैंक) के बीच एक समामेलन इनमें से एक बैंक के जमाकर्ताओं के हित में रिज़र्व बैंक द्वारा प्रेरित किया गया था। इनमें से अधिकांश स्वैच्छिक विलय स्वस्थ बैंकों के बीच थे जो कुछ-कुछ पहली नरसिंहम समिति द्वारा दिये गये सुझावों के अनुरूप थे। उक्त समिति की यह राय थी कि बैंकिंग प्रणाली के पुनर्व्यवस्थित संगठन की ओर गतिशीलता बाजार द्वारा संचालित होनी चाहिए, लाभप्रदता के विचारों पर आधारित होनी चाहिए तथा एक एमएण्डए की प्रक्रिया द्वारा लाई जानी चाहिए (लीलाधर, 2008)।

8.28 जहाँ तक अनिवार्य समामेलनों का संबंध है, ये जनहित में, या किसी संकटग्रस्त बैंक के जमाकर्ताओं के हित में, या किसी बैंकिंग कंपनी का समुचित प्रबंध निश्चित करने, अथवा बैंकिंग प्रणाली के हित में बैंककारी विनियमन अधिनियम की धारा 45 के अंतर्गत रिज़र्व बैंक द्वारा प्रेरित अथवा अनिवार्य किये जाते हैं। वित्तीय संकट से ग्रस्त किसी बैंकिंग कंपनी के मामले में बैंककारी विनियमन अधिनियम की धारा 45(2) के अंतर्गत रिज़र्व बैंक किसी बैंकिंग कंपनी के संबंध में अधिस्थगन के आदेश के लिए केंद्र सरकार को आवेदन कर सकता है तथा ऐसे अधिस्थगन की अवधि के दौरान किसी अन्य बैंकिंग संस्था (बैंकिंग कंपनी, राष्ट्रीयकृत बैंक, भारतीय स्टेट बैंक या उसकी सहायक संस्था) के साथ उक्त बैंकिंग कंपनी के समामेलन की योजना तैयार कर सकता है। यह अपेक्षित है कि रिज़र्व बैंक द्वारा बनाई गई ऐसी योजना संबंधित बैंकिंग कंपनियों को जमाकर्ताओं, शेयरधारकों और अन्यों से प्राप्त सुझावों और आपत्तियों सहित उक्त बैंकिंग कंपनियों के सुझावों और आपत्तियों के लिए भेजी जानी चाहिए। उन पर विचार करने के बाद रिज़र्व बैंक समामेलन की अंतिम योजना मंजूरी और सरकारी राजपत्र में अधिसूचना के लिए केंद्र सरकार को भेजता है। यह भी अपेक्षित है कि बैंककारी विनियमन अधिनियम की धारा 45 के अंतर्गत अनिवार्य समामेलन के लिए जारी की गई अधिसूचना संसद के दोनों सदनों के समक्ष प्रस्तुत की जाए। समामेलन इस संबंध में सरकार द्वारा जारी की गई अधिसूचना में निर्दिष्ट तारीख को प्रभावी हो जाता है।

8.29 किसी बैंकिंग संस्था द्वारा स्वैच्छिक विलय अथवा किसी वित्तीय कारोबार के अभिग्रहण के मामले में रिज़र्व बैंक का अनुमोदन प्राप्त करने के लिए बैंककारी विनियमन अधिनियम के अंतर्गत कोई व्यवस्था नहीं है। भारतीय बैंकिंग प्रणाली में समेकन की प्रक्रिया में उत्पन्न होनेवाले विनियामक, कानूनी, लेखांकन विषयक और मानव संबंधों से संबंधित मुद्दों पर पुनर्विचार करने के लिए भारतीय बैंक संघ (आइबीए) द्वारा एक कार्यदल (अध्यक्ष : श्री वी. लीलाधर) गठित किया गया। उक्त कार्यदल ने 2004 में प्रस्तुत अपनी 'भारतीय बैंकिंग प्रणाली में समेकन' शीर्षक रिपोर्ट में बैंककारी विनियमन अधिनियम में एक बहुप्रयोजन वाला (ऑम्नीबस) उपबंध बनाने की आवश्यकता को रेखांकित किया जिससे यह अपेक्षित हो कि कोई भी बैंकिंग संस्था किसी अन्य बैंकिंग संस्था अथवा गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्था के किसी अन्य व्यवसाय को अधिगृहीत करने से पहले अथवा उनके किसी अन्य कारोबार के विलय या समामेलन के पहले रिज़र्व बैंक का पूर्व अनुमोदन प्राप्त करे, जहाँ अदला-बदली के अनुपात (स्वैप रेशियो) को अंतिम रूप देने के लिए संपूर्ण अधिकार रिज़र्व बैंक के पास सुरक्षित हो और जिसे सभी संबंधितों के लिए बाध्यकारी बनाया जाए।

8.30 रिज़र्व बैंक ने संयुक्त संसदीय समिति (2002) की सिफारिशों पर बैंकिंग कंपनियों से संबंधित स्वैच्छिक विलयों हेतु मार्गदर्शी निदेश बनाने के लिए एक कार्यदल गठित किया था। उक्त कार्यदल की सिफारिशों के आधार पर रिज़र्व बैंक ने मई 2005 में मार्गदर्शी निदेश घोषित किये जिनमें विलय के प्रस्ताव, स्वैप अनुपातों के निर्धारण, प्रकटीकरण, उन स्तरों जहाँ बोर्ड विलय की प्रक्रिया में संबद्ध होंगे तथा विलय की प्रक्रिया से पहले और प्रक्रिया के दौरान प्रवर्तकों द्वारा शेयरों की खरीद/बिक्री के मानदंडों की प्रक्रिया निर्धारित की गई है। एक गैर-बैंकिंग कंपनी का किसी बैंकिंग कंपनी के साथ स्वैच्छिक समामेलन कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 391 और 394 द्वारा नियंत्रित होता है तथा समामेलन की योजना उच्च न्यायालय द्वारा अनुमोदित की जानी चाहिए। तथापि, विलीन संस्था की निरंतर मजबूती को सुनिश्चित करने के लिए उक्त मार्गदर्शी निदेशों में यह व्यवस्था की गई है कि ऐसे मामलों में बैंकिंग कंपनी को चाहिए कि वह समामेलन की योजना को अपने बोर्ड का अनुमोदन प्राप्त होने के बाद, परंतु अनुमोदन के लिए उसे उच्च न्यायालय को प्रस्तुत करने से पहले भारतीय रिज़र्व बैंक का अनुमोदन प्राप्त करे।

8.31 दोनों ही स्थितियों में, चाहे कोई गैर-बैंकिंग कंपनी एक बैंकिंग कंपनी के साथ समामेलित होती है या समामेलन बैंकिंग कंपनियों के बीच है, रिज़र्व बैंक यह सुनिश्चित करता है कि समामेलनों पर सामान्यतः व्यावसायिक तौर पर विचार करने के बाद निर्णय लिये जाते हैं । इसके लिए भी रिज़र्व बैंक ने मार्गदर्शी निदेश निर्धारित किये हैं, जिनके संबंध में निदेशक बोर्डों को विलय की प्रक्रिया के दौरान विचार करना चाहिए । ये मार्गदर्शी निदेश मुख्य रूप से निम्नलिखित से संबंधित हैं - (i) समामेलक बैंकिंग कंपनी की बहियों में शामिल करने के लिए प्रस्तावित समामेलित संस्था की आस्तियों और देयताओं तथा प्रारक्षित निधियों के मूल्य; (ii) सक्षम स्वतंत्र मूल्यांकनकर्ताओं द्वारा निर्धारित किया जानेवाला स्वैप अनुपात; (iii)शेयरधारिता का स्वरूप; (iv) समामेलक कंपनी की लाभप्रदता और पूँजी पर्याप्तता पर प्रभाव; एवं (v) निदेशक बोर्ड की संरचना में प्रस्तावित परिवर्तनों की उस संदर्भ में रिज़र्व बैंक के दिशानिर्देशों के साथ अनुरूपता (बॉक्स VIII.2)।

8.32 तथापि, सरकारी क्षेत्र के बैंकों अर्थात् राष्ट्रीयकृत बैंकों, भारतीय स्टेट बैंक और उसके सहायक बैंकों के समामेलन के लिए सांविधिक रूपरेखा बिलकुल अलग है क्योंकि बैंककारी विनियमन अधिनियम के पूर्ववर्ती उपबंध उन पर लागू नहीं हैं। राष्ट्रीयकृत बैंकों के संबंध में बैंककारी कंपनी (उपक्रमों का अर्जन और अंतरण) अधिनियम, 1970 और 1980, अथवा बैंक राष्ट्रीयकरण अधिनियम धारा 9(1)(ग) के अंतर्गत केंद्र सरकार को रिज़र्व बैंक के साथ परामर्श करने के बाद *अन्य बातों के साथ-साथ* एक 'तदनुरूपी नये बैंक' (अर्थात् एक राष्ट्रीयकृत बैंक) के उपक्रम का अंतरण अन्य 'तदनुरूपी नये बैंक' को करने के लिए अथवा किसी बैंकिंग संस्था का पूर्णतः या अंशतः अंतरण एक तदनुरूपी नये बैंक को करने के लिए एक योजना तैयार करने अथवा बनाने के लिए प्राधिकृत करते हैं। बैंककारी विनियमन अधिनियम की धारा 44ए के अंतर्गत रिज़र्व बैंक द्वारा योजनाओं की स्वीकृति के असमान, केंद्र सरकार द्वारा बनाई गई योजना के लिए बैंक राष्ट्रीयकरण अधिनियमों की धारा 9(6) के अंतर्गत यह अपेक्षित है कि

**बॉक्स VIII.2**
**बैंकों के विलय और समामेलन संबंधी मार्गदर्शी निदेश**

मई 2005 में रिजर्व बैंक द्वारा घोषित विलय और समामेलन संबंधी मार्गदर्शी निदेशों में अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित भी निर्धारित हैं :

- दोनों बैंकिंग कंपनियों में से प्रत्येक के निदेशक बोर्ड के कुल सदस्यों की कुल संख्या की दो तिहाई द्वारा समामेलन की योजना के प्रारूप को अलग-अलग रूप से अनुमोदित किया जाए।
- निदेशक बोर्डों के जो सदस्य समामेलन की योजना के प्रारूप का अनुमोदन करते हैं, उनसे अपेक्षित है कि वे प्रसंविदा विलेख (डीड ऑफ कोवनेंट्स) के हस्ताक्षरकर्ता हों जैसा कि कंपनी अभिशासन (कारपोरेट गवर्नेंस) संबंधी गांगुली कार्यदल द्वारा सिफारिश की गई है।
- समामेलन की योजना का प्रारूप प्रत्येक बैंकिंग कंपनी के शेयरधारकों द्वारा इस प्रयोजन के लिए बुलाई गई बैठक में स्वयं उपस्थित होकर अथवा प्रतिनिधि के माध्यम से शेयरधारकों के मूल्य में दो तिहाई की संख्या में बहुमत से पारित एक संकल्प द्वारा अनुमोदित किया जाए।
- अदला-बदली (स्वैप) का अनुपात अपेक्षित क्षमता और अनुभव रखनेवाले स्वतंत्र मूल्याकनकर्ताओं द्वारा निर्धारित किया जाए; बोर्ड को यह निर्दिष्ट करना चाहिए कि क्या इस प्रकार का स्वैप अनुपात उचित और उपयुक्त है।
- असहमति रखनेवाले शेयरधारकों को उनके द्वारा धारित शेयरों के संबंध में संबंधित बैंकिंग कंपनी द्वारा अदा किया जानेवाला मूल्य रिज़र्व बैंक द्वारा निर्धारित किया जाना होगा।
- समामेलन के बाद समामेलक बैंकिंग कंपनी के बोर्ड की शेयरधारिता का स्वरूप और उसकी संरचना रिज़र्व बैंक के मार्गदर्शी निदेशों के अनुरूप होनी चाहिए।
- जहाँ कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 391 से 394 तक के अनुसार किसी बैंकिंग कंपनी में किसी गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनी (एनबीएफसी) का समामेलन किया जाना प्रस्तावित है, वहाँ बैंकिंग कंपनी से यह अपेक्षित है कि वह समामेलन की योजना को अनुमोदन के लिए उच्च न्यायालय को प्रस्तुत करने से पहले रिज़र्व बैंक का अनुमोदन प्राप्त करे।

वह संसद के दोनों सदनों के समक्ष प्रस्तुत की जाए। इस प्रक्रिया के अंतर्गत अब तक किया गया एकमात्र विलय पहले के न्यू बैंक ऑफ इंडिया का पंजाब नैशनल बैंक के साथ न्यू बैंक ऑफ इंडिया की कमजोर वित्तीय स्थिति के कारण किये गये समामेलन से संबंधित है। जहाँ तक भारतीय स्टेट बैंक (एसबीआइ) का संबंध है, भारतीय स्टेट बैंक अधिनियम, 1955 स्टेट बैंक को यह शक्ति प्रदान करता है कि वह किसी भी बैंकिंग संस्था (जिसमें कोई बैंकिंग कंपनी भी शामिल है) के प्रबंधक वर्ग की सहमति से आस्तियों और देयताओं सहित किसी बैंक के व्यवसाय का अभिग्रहण कर सकता है। इस व्यवस्था के अंतर्गत जिस बैंक का अभिग्रहण किया जाना है उसकी सहमति, रिज़र्व बैंक का अनुमोदन, तथा केंद्र सरकार द्वारा ऐसे अभिग्रहण की स्वीकृति अपेक्षित हैं। इस मार्ग का अनुसरण करते हुए भारतीय स्टेट बैंक द्वारा निजी क्षेत्र के कई बैंकों का अभिग्रहण किया गया । तथापि, अब तक सरकारी क्षेत्र के किसी बैंक का अभिग्रहण इस प्रक्रिया के अंतर्गत नहीं किया गया है। भारतीय स्टेट बैंक के सहायक बैंकों के संबंध में भी इसी प्रकार के प्रावधान विद्यमान हैं। इस प्रकार विलय और समामेलन के मार्ग द्वारा सरकारी क्षेत्र के बैंकों के बीच भी समेकन को प्रोत्साहित और संवर्धित करने के लिए सरकारी क्षेत्र के बैंकों को नियंत्रित करनेवाली वर्तमान संविधियों में पर्याप्त समर्थक सांविधिक उपबंध हैं तथा इस प्रयोजन के लिए जिस प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना है वह भी सांविधिक रूप से निर्धारित की गई है।

8.33 संक्षेप में, समेकन की प्रक्रिया में रिज़र्व बैंक/सरकार का प्राथमिक लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि विलय जनहित, संबंधित बैंक, उनके जमाकर्ताओं और शेयरधारकों के हितों के प्रतिकूल न हों तथा यह भी कि वित्तीय स्थिरता से उनकी कोई टकराहट न हो। इस प्रकार रिज़र्व बैंक यह सुनिश्चित करता है कि किसी विलय, अभिग्रहण, पुनर्निर्माण अथवा अधिग्रहण के बाद बैंक अथवा बैंकिंग समूह के पास पर्याप्त वित्तीय शक्ति हो, तथा प्रबंधक-वर्ग के पास पर्याप्त विशेषज्ञता और सत्यनिष्ठा हो।

### विलय और समामेलन की प्रवृत्तियाँ

8.34 विलयों और अभिग्रहणों (एमएण्डए) द्वारा बैंकों का समेकन भारतीय बैंकिंग प्रणाली के लिए कोई नई घटना नहीं है, जो कई वर्षों से चला आ रहा है। 18वीं शताब्दी में इंग्लिश एजेंसी हाउस की स्थापना के माध्यम से भारत में आधुनिक बैंकिंग के प्रारंभ से लेकर स्वतंत्रता-पूर्व युग में सर्वाधिक महत्वपूर्ण विलय इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया (1955 में भारतीय स्टेट बैंक के रूप में नाम परिवर्तित किया गया) के निर्माण के लिए 19वीं सदी में स्थापित तीनों प्रेसीडेंसी बैंकों का 1935 में किया गया विलय था।

8.35 1959 में भारतीय स्टेट बैंक ने आठ पूर्ववर्ती शाही राज्यों के राज्य-स्वामित्व वाले बैंकों का अभिग्रहण किया। बैंकिंग प्रणाली को मजबूत बनाने के लिए त्रावणकोर कोचीन बैंकिंग जाँच आयोग (1956) ने कमजोर बैंकों के समापन/समामेलन के लिए सिफारिश की। परिणामस्वरूप, उसके बाद हुए समापन/समामेलनों द्वारा सूचना देनेवाले वाणिज्य बैंकों की संख्या 1951 के 561 से घटकर जून 1969 में 89 रह गई। 1960 के दशक के दौरान रिज़र्व बैंक के निदेश के अंतर्गत बैंकों का विलय किया गया। 1961 से 1969 तक की अवधि के दौरान दोनों सरकारी और निजी क्षेत्रों के 36 कमजोर बैंकों का विलय अन्य अधिक शक्तिशाली बैंकों के साथ किया गया।

8.36 सुधारों के बाद की अवधि में भारत में अनेक बैंक समामेलन हुए हैं। 1969 में 14 प्रमुख बैंकों का राष्ट्रीयकरण करने के बाद से

कुल 33 विलय और अभिग्रहण (एमएण्डए) किये गये हैं। इन विलयों में से 25 सरकारी क्षेत्र के बैंकों के साथ निजी क्षेत्र के बैंकों के विलय थे, जबकि शेष आठ मामलों में विलय निजी क्षेत्र के बैंकों के साथ संबद्ध थे। 33 में से 21 एमएण्डए सुधारोत्तर अवधि के दौरान हुए जिनमें 17 विलय/समामेलन 1999 के दौरान और उसके बाद किये गये (सारणी 8.3)[1]। 1999 से पहले बैंकों के समामेलन प्राथमिक तौर पर विलय होनेवाले बैंक की कमजोर वित्तीय स्थितियों द्वारा प्रेरित थे, जबकि 1999 के बाद की अवधि में स्वस्थ बैंकों के बीच भी विलय हुए हैं जो व्यावसायिक और वाणिज्यिक चिंतन द्वारा प्रेरित हैं (लीलाधर, 2008)।

**सारणी 8.3 : भारत में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद समामेलित बैंक**

| क्रम सं. | अंतरणकर्ता बैंक/संस्था का नाम | अंतरिती बैंक/संस्था का नाम | समामेलन की तारीख |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| 1. | बैंक ऑफ बिहार लिमिटेड | भारतीय स्टेट बैंक | 8 नवंबर 1969 |
| 2. | नेशनल बैंक ऑफ लाहौर लिमिटेड | भारतीय स्टेट बैंक | 20 फरवरी 1970 |
| 3. | मिराज स्टेट बैंक लिमिटेड | यूनियन बैंक ऑफ इंडिया | 29 जुलाई 1985 |
| 4. | लक्ष्मी कमर्शियल बैंक लिमिटेड | केनरा बैंक | 24 अगस्त 1985 |
| 5. | बैंक ऑफ कोचीन लिमिटेड | भारतीय स्टेट बैंक | 26 अगस्त 1985 |
| 6. | हिंदुस्तान कमर्शियल बैंक लिमिटेड | पंजाब नैशनल बैंक | 19 दिसंबर 1986 |
| 7. | ट्रेडर्स बैंक लिमिटेड | बैंक ऑफ बड़ौदा | 13 मई 1988 |
| 8. | युनाइटेड इंडस्ट्रियल बैंक लिमिटेड | इलाहाबाद बैंक | 31 अक्तूबर 1989 |
| 9. | बैंक ऑफ तमिलनाडु लिमिटेड | इंडियन ओवरसीज बैंक | 20 फरवरी 1990 |
| 10. | बैंक ऑफ तंजावूर लिमिटेड | इंडियन बैंक | 20 फरवरी 1990 |
| 11. | पारूर सेंट्रल बैंक लिमिटेड | बैंक ऑफ इंडिया | 20 फरवरी 1990 |
| 12. | पूर्बांचल बैंक लिमिटेड | सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया | 29 अगस्त 1990 |
| 13. | न्यू बैंक ऑफ इंडिया | पंजाब नैशनल बैंक | 4 सितंबर 1993 |
| 14. | काशी नाथ सेठ बैंक लिमिटेड | भारतीय स्टेट बैंक | 1 जनवरी 1996 |
| 15. | बारी दोआब बैंक लिमिटेड | ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स | 8 अप्रैल 1997 |
| 16. | पंजाब को-ऑपरेटिव बैंक लिमिटेड | ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स | 8 अप्रैल 1997 |
| 17. | बरेली कॉर्पोरेशन बैंक लिमिटेड | बैंक ऑफ बड़ौदा | 3 जून 1999 |
| 18. | सिक्किम बैंक लिमिटेड | यूनियन बैंक ऑफ इंडिया | 22 दिसंबर 1999 |
| 19. | टाइम्स बैंक लिमिटेड | एचडीएफसी बैंक लिमिटेड | 26 फरवरी 2000 |
| 20. | बैंक ऑफ मदुरा लिमिटेड | आइसीआइसीआइ बैंक लि. | 10 मार्च 2001 |
| 21. | आइसीआइसीआइ लिमिटेड | आइसीआइसीआइ बैंक लि. | 3 मई 2002 |
| 22. | बनारस स्टेट बैंक लिमिटेड | बैंक ऑफ बड़ौदा | 20 जून 2002 |
| 23. | नेडुंगडि बैंक लिमिटेड | पंजाब नैशनल बैंक | 1 फरवरी 2003 |
| 24. | साउथ गुजरात लोकल एरिया बैंक लि. | बैंक ऑफ बड़ौदा | 25 जून 2004 |
| 25. | ग्लोबल ट्रस्ट बैंक लिमिटेड | ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स | 14 अगस्त 2004 |
| 26. | आइडीबीआइ बैंक लिमिटेड | आइडीबीआइ लिमिटेड | 2 अप्रैल 2005 |
| 27. | बैंक ऑफ पंजाब लिमिटेड | सेंचुरियन बैंक लिमिटेड | 1 अक्तूबर 2005 |
| 28. | गणेश बैंक ऑफ कुरुंडवाड लि. | फेडरल बैंक लिमिटेड | 2 सितंबर 2006 |
| 29. | युनाइटेड वेस्टर्न बैंक लिमिटेड | आइडीबीआइ लिमिटेड | 3 अक्तूबर 2006 |
| 30. | भारत ओवरसीज बैंक लिमिटेड | इंडियन ओवरसीज बैंक | 31 मार्च 2007 |
| 31. | सांगली बैंक लिमिटेड | आइसीआइसीआइ बैंक लि. | 19 अप्रैल 2007 |
| 32. | लॉर्ड कृष्ण बैंक लिमिटेड | सेंचुरियन बैंक ऑफ पंजाब लि. | 29 अगस्त 2007 |
| 33. | सेंचुरियन बैंक ऑफ पंजाब लि. | एचडीएफसी बैंक लिमिटेड | 23 मई 2008 |

**स्रोत :** भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति संबंधी रिपोर्ट, भारतीय रिजर्व बैंक, विभिन्न अंक।

[1] 25 फरवरी 2008 को एचडीएफसी बैंक और सेंचुरियन बैंक ऑफ पंजाब के संबंधित बोर्डों ने एचडीएफसी बैंक के साथ सेंचुरियन बैंक ऑफ पंजाब के विलय का अनुमोदन किया।

8.37 हाल ही में भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में एमएण्डए की प्रक्रिया सामान्यतः बाजार द्वारा प्रेरित रही है। विलयों के नीतिगत उद्देश्य के चलते भारत में बैंकों के बीच अधिकांश विलय कार्यनीतिगत प्रयोजनों के लिए स्वैच्छिक रूप से हुए हैं। मान और व्याप्ति की किफायतों का विपुल लाभ उठानेवाले बड़े बैंकों के साथ प्रतियोगिता करने में छोटे बैंकों की कठिनाई के होते हुए जहाँ भी संभव है वहाँ रिज़र्व बैंक समेकन की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करता रहा है। राष्ट्रीयकरण के बाद की अवधि में निजी क्षेत्र के बैंकों के अधिकांश समामेलन रिज़र्व बैंक द्वारा अधिनियम की धारा 45 के अंतर्गत व्यापक जनहित में प्रेरित किये गये थे। इन सभी मामलों में कमजोर अथवा वित्तीय रूप से संकटग्रस्त बैंकों का समामेलन स्वस्थ बैंकों के साथ किया गया। समामेलन के प्रस्तावों के विचार को नियंत्रित करनेवाले अधिभावी सिद्धांत थे : (क) जमाकर्ताओं के हित की रक्षा; (ख) शीघ्र संकल्प; और (ग) विनियामक परिहार से बचना। सरकारी क्षेत्र के बैंकों के साथ पूर्व के ग्लोबल ट्रस्ट बैंक और युनाइटेड वेस्टर्न बैंक के समामेलन इस प्रकार के विलयों के हाल के उदाहरण हैं। ऐसे मामलों में भी, अंतरिती बैंक के वाणिज्यिक हितों और उसकी लाभप्रदता पर समामेलन के प्रभाव पर विधिवत् विचार किया गया। सुदृढ़ बैंकों के साथ निजी क्षेत्र के कई कमजोर बैंकों के विलयों ने भारतीय बैंकिंग क्षेत्र को एक विश्वसनीय स्थिति पर लाकर खड़ा किया क्योंकि देश में निजी क्षेत्र के सभी बैंकों का सीआरएआर मार्च 2007 के अंत में नौ प्रतिशत की न्यूनतम विनियामक अपेक्षा से अधिक था।

8.38 भारत में एमएण्डए का उपयोग वित्तीय प्रणाली को मजबूत करने के एक साधन के रूप में भी किया गया है। एक सचेतन दृष्टिकोण के माध्यम से कमजोर और छोटे बैंकों को अपेक्षाकृत मजबूत बैंकों के साथ विलय होने की अनुमति दी गई है ताकि जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा की जा सके, संभव वित्तीय संसर्ग से बचा जा सके जो विशिष्ट बैंक की विफलताओं के परिणामस्वरूप उत्पन्न हों तथा सहक्रिया के लाभ भी प्राप्त किये जा सकें। इस प्रकार भारतीय दृष्टिकोण कई अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थओं के दृष्टिकोण से अलग रहा है, जिनमें सरकारें समेकन की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से संबद्ध रही थीं। उदाहरण के लिए, पूर्वी एशिया में 1997 में बैंकिंग संकट के बाद अनेक छोटे और प्रायः परिवार के स्वामित्व वाले बैंकों की पूंजी पर्याप्तता और वित्तीय व्यवहार्यता को मजबूत बनाने के लिए सरकार ने बैंक विलयों की प्रक्रिया को प्रेरित किया। इन संकट से प्रभावित देशों में सरकार की संबद्धता अपरिहार्य थी क्योंकि अर्थक्षम परंतु विपत्तिग्रस्त संस्थाएँ कुछ अनर्जक ऋणों को किसी परिसंपत्ति प्रबंध कंपनी को अंतरित किये बिना और/या अस्थायी पूँजी सहायता प्राप्त किये बिना संभावित खरीदारों को आकर्षित करने की स्थिति में मुश्किल से थीं। इस प्रकार का हस्तक्षेप बैंक को सरकारी स्वामित्व में लेने की अपेक्षा अधिक किफायती भी सिद्ध हुआ। तथापि, उभरते बाजारों में अविनियमन, निजीकरण और विदेशी बैंकों के प्रवेश द्वारा प्रतियोगिता में तीव्रीकरण लाने के साथ ही, समेकन अधिक बाजार-चालित (मार्केट-ड्रिवेन) बन रहा है (बॉक्स VIII.3)।

8.39 हाल के वर्षों में भारत में बैंकिंग क्षेत्र में समेकन की प्रक्रिया निजी क्षेत्र में विलयों और राज्य के स्वमित्व वाले कुछ समेकन तक सीमित रही। 1969 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद भारत ने जनवरी 1993 तक जब निजी क्षेत्र के बैंकों के प्रवेश के लिए विद्यमान अवरोध हटाये गये निजी क्षेत्र के बैंकों के प्रवेश को अनुमति नहीं दी। सुधारों के बाद की अवधि में भारत ने विदेशी बैंकों के प्रवेश को भी उदारीकृत किया। इन उदारीकृत उपायों के परिणामस्वरूप अनेक नये बैंकों (निजी और विदेशी) का प्रवेश हुआ। तदनुसार वित्तीय क्षेत्र के सुधारों के प्रारंभिक चरण के दौरान बैंकों की संख्या बढ़ गई। तथापि, समेकन की प्रक्रिया ने 1999-2000 से गति पकड़ी जिससे निजी और विदेशी बैंकों की संख्या में उल्लेखनीय कमी आई (सारणी 8.4)। फरवरी 2005 में निजी क्षेत्र के बैंकों में स्वामित्व और अभिशासन से संबंधित व्यापक नीति की रूपरेखा उपलब्ध कराते हुए रिज़र्व बैंक ने निर्धारित किया कि निजी क्षेत्र के मौजूदा बैंकों की पूँजीगत अपेक्षा निजी क्षेत्र के नये बैंकों के लिए 3 जनवरी 2001 को निर्धारित प्रवेश पूँजी की अपेक्षा के समान होनी चाहिए, जिसके अनुसार बैंकों से यह अपेक्षित है कि उनके पास प्रारंभ में 200 करोड़ रुपये की पूँजी होनी चाहिए तथा यह प्रतिबद्धता होनी चाहिए कि व्यवसाय के प्रारंभ से तीन वर्षों के भीतर यह 300 करोड़ रुपये तक बढ़ाई जाएगी। यह आवश्यकता पूरी करने के लिए निजी क्षेत्र के सभी बैंकों के पास सदैव 300 करोड़ रुपये की निवल मालियत (नेट वर्थ) होनी चाहिए। इस प्रकार 2005 के बाद की अवधि में समामेलन/विलय अंशतः इन मार्गदर्शी निदेशों के परिणामस्वरूप हुए। निजी क्षेत्र के कुछ पुराने बैंकों के विलय के कारण अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की संख्या मार्च 2000 के अंत में स्थित 100 से घटकर मार्च 2007 के अंत में 82 रही। हाल के वर्षों में कुछ संकटग्रस्त बैंकों के मामले में रिज़र्व बैंक के पास उपलब्ध एकमात्र विकल्प बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 45 के अंतर्गत अपेक्षाकृत अधिक मजबूत बैंकों के साथ अनिवार्यतः उनका विलय करना था। इनमें शामिल थे, अगस्त 2004 में ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स के साथ ग्लोबल ट्रस्ट बैंक का समामेलन, सितंबर 2006 में फेडरल बैंक लिमिटेड के साथ गणेश बैंक ऑफ कुरुण्डवाड लिमिटेड का समामेलन तथा अक्तूबर 2006 में आइडीबीआइ लिमिटेड के साथ युनाइटेड वेस्टर्न बैंक का समामेलन।

8.40 विलयों और समामेलनों में अपेक्षाकृत छोटे बैंक संबद्ध हैं। सबसे बड़ी संख्या में विलय आइसीआइसीआइ बैंक, बैंक ऑफ बड़ौदा और ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स के साथ किये गये (इनमें से प्रत्येक बैंक तीन-तीन विलयों से संबद्ध था)। आइसीआइसीआइ बैंक ने भारतीय स्टेट बैंक के बाद भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में दूसरा स्थान लेने के लिए कई संस्थाओं को स्थानापन्न कर दिया। विश्व के शीर्षस्थ 1000 बैंकों की बैंकरों

## बॉक्स VIII.3
## बाजार चालित बनाम सरकार द्वारा प्रेरित बैंक समेकन : विभिन्न देशों के अनुभव

जबकि समेकन की प्रक्रिया के पीछे निहित तर्काधार और प्रेरक तत्व परिवर्तित हुए होंगे तथा विभिन्न देशों में भिन्न-भिन्न रहे होंगे, बैंक समेकनों के इतिहास से मोटे तौर पर दो सुस्पष्ट आयाम उभरते हैं अर्थात् सरकार द्वारा प्रेरित समेकन की तुलना में बाजार चालित समेकन।

अकुशल बैंकिंग प्रणालियों के पुनर्व्यवस्थापन के लिए प्रयासों के कारण अथवा संकट के बाद हस्तक्षेप से समेकन करने की सरकारी नीति के अनुसरण में बीसवीं सदी के प्रारंभ से बड़ी संख्या में बैंकिंग समेकन हुए हैं। जापान में 1927 के बैंक कानून ने बैंकों के लिए न्यूनतम पूँजी के मानदंड निर्धारित किये जो बैंकों के समेकन का संवर्धन करने के लिए सरकार के लिए एक शक्तिशाली उपाय के रूप में उपलब्ध हुआ। इसी प्रकार 1920 के दशक में अमरीका में कृषि संकट ने छोटे बैंकों की विफलता की एक लहर उत्पन्न की जिससे शाखा बैंकिंग का निषेध करनेवाले अनेक राज्य कानूनों को निरस्त करने की आवश्यकता पैदा हुई। दक्षिण-पूर्वी एशिया और लातीन अमरीका के उभरते बाजारों में वित्तीय प्रणाली के अंतर्गत संकट का समाधान करने की आवश्यकता के उत्पन्न होने के बाद 1990 के दशक से काफी अधिक बैंकिंग समेकन सरकार द्वारा प्रेरित रहा है। 1997 में वित्तीय संकट के दौरान कोरिया की सरकार ने खराब वित्तीय संस्थाओं के शीघ्रतम संभव समाधान के द्वारा वित्तीय क्षेत्र की पुनर्संरचना को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की। सरकार ने अलाभकारी समझी गई वित्तीय संस्थाओं की वित्तीय स्थितियों की व्यापक समीक्षा करने के बाद उन्हें बंद करने के लिए तेजी से और निर्णायक रूप से कार्रवाई की। मलेशिया, इंडोनेशिया और फिलीपीन्स में भी कुछ-कुछ इसी प्रकार की परिस्थिति देखी गई। हाल के वर्षों में ताइवान की सरकार ने भी वित्तीय क्षेत्र में समेकन को बढ़ावा दिया। इसी तरह लातीन अमरीका में वित्तीय क्षेत्र के संकट की अनेक घटनाओं के बाद इस क्षेत्र में बैंकों की संख्या में उल्लेखनीय रूप में कमी आई जो मुख्य रूप से बैंकिंग प्रणाली की पुनर्संरचना और समेकन करने के लिए सरकारी प्रयासों के माध्यम से हुई। जापान में एनपीएल के आविर्भाव और विवेकपूर्ण जोखिम प्रबंध के अभाव को स्वीकार करते हुए सरकार ने 1990 के दशक में अतिसंकुलता से युक्त (ओवरक्राउडेड) जापानी बैंकिंग प्रणाली में कुछ विलयों का संचालन किया।

दूसरी ओर अमरीका में 1984 से बैंक समेकन की प्रक्रिया यद्यपि कुछ विधायी परिवर्तनों द्वारा सुसाध्य हुई, यह बाजार चालित शक्तियों का भी परिणाम रही। 1980 के दशक में अमरीका में अनेक बैंकों ने मंदी से युक्त अर्थव्यवस्था और अत्यधिक जोखिम उठाने के साथ संबद्ध बड़े ऋणों की हानियाँ और लाभ अनुभव किये (शल और हैनवेक, 2001)। बैंकों की विफलताएं उच्च स्तरों तक बढ़ गईं जिसके परिणामस्वरूप बेहतर ढंग से पूँजीकृत और लाभकारी बैंकों द्वारा भारी संख्या में विलय और अभिग्रहण किये गये। इन गतिविधियों के कारण 1990 के दशक में लाभप्रदता और पूँजीकरण में भारी सुधार हुए। बैंकों के सुधारित कार्यनिष्पादन के प्रारंभ होने के साथ ही बैंकों की विफलता के कारण विलयों की संख्या कम हुई, परंतु अमरीका में नीतिगत अनुज्ञात्मकता के कारण विलयों की संख्या लगातार बढ़ती रही। 1980 के दशक के पहले विद्यमान कठोर विनियामक परिवेश ने अमरीका के बैंकिंग उद्योग के अंदर किसी भी आकस्मिक समेकन को अत्यधिक बाधित किया। बैंकिंग उद्योग का समेकन गंभीरतापूर्वक केवल बैंकिंग और बचत उद्योगों के अविनियमन की एक दशक से चली आ रही प्रक्रिया के माध्यम से 1980 के दशक के प्रारंभ में विनियामक बाधाओं के शिथिल किये जाने के बाद ही प्रारंभ हुआ ताकि बाजार के स्थान की वास्तविकताओं के प्रति वे अधिक अनुक्रियाशील रह सकें (जोन्स और क्रिचफील्ड, 2005)। 1994 के रीगल-नील इंटरस्टेट बैंकिंग एण्ड ब्रांच एफीशिएन्सी एक्ट के जरिए अलग-अलग राज्यों द्वारा बैंक शाखन और होल्डिंग कंपनी अभिग्रहणों पर भौगोलिक प्रतिबंधों के हटाये जाने से बैंक समेकन बहुत हद तक सुसाध्य हुआ। अधिकांश बैंक अभिग्रहण भविष्य में अर्जन की सुसंगत वृद्धि सुनिश्चित करने के उद्देश्य से किये गये। संतृप्त बाजारों ने सीमित सहज वृद्धि की संभावना प्रदान की जबकि बैंकों के तुलन-पत्र मजबूत थे। इस प्रकार दीर्घकालिक अर्जन सुनिश्चित करने के लिए विलयों और अभिग्रहणों द्वारा वृद्धि करने की आवश्यकता थी। कभी-कभी इस प्रवृत्ति ने अन्य परिपक्व अर्थव्यवस्थाओं में बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के लिए उनके घरेलू बाजारों में गति को बनाये रखने और समेकन करने के लिए बाजार के संवर्धित दबाव को भी प्रेरित किया। यूरोपीय संघ के वाणिज्यिक बैंकों के मामले में उक्त बैंकों ने नये परिचालनगत परिवेश के प्रति उनकी कार्यनीतियों को अपनाने, वितरण की नई सरणियों की माँग करने और अपनी संगठनात्मक संरचनाओं को परिवर्तित करने के द्वारा प्रतिक्रिया दर्शाई। इस प्रकार यूरोपीय संघ की अर्थव्यवस्थाओं में समेकन की प्रक्रिया में गति बढ़ाने के पीछे संवर्धित प्रतियोगिता को मुख्य प्रेरक शक्ति के रूप में माना गया है (कैसू और गिरैर्डोन, 2007)।

केंद्रीय और पूर्वी यूरोप तथा मेक्सिको में बैंक समेकन की प्रक्रिया भी, जो 1990 के दशक के उत्तरार्ध में प्रारंभ हुई, विदेशी बैंकों द्वारा एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करने के साथ ही अधिक बाजार चालित रही है। तथापि, सभी नहीं तो कुछ यूरोपीय बाजारों में राजनैतिक कार्रवाई ने समेकन की प्रक्रिया को प्रभावित किया है। उदाहरण के लिए , बड़े इटालियन बैंकों का बहुत अच्छा कार्यनिष्पादन बचत बैंकों के निजीकरण द्वारा सुसाध्य हुआ। इसी प्रकार, फ्रांस में देशी समेकन को "राष्ट्रीय विजेताओं" के निर्माण द्वारा प्रोत्साहित किया गया। यह देखा जा रहा है कि दोनों यूरोपीय देशों के अंदर और उनके बाहर विदेशों में समेकन के सौदों को प्रेरित करने के लिए बहुविध शक्तियाँ कार्य करती रही हैं। बाजार चालित समेकन की प्रक्रिया की इन कारक शक्तियों में शामिल हैं: विखंडित बाजार, विदेशी प्रतियोगिता, अविनियमन, प्रौद्योगिकीगत नवोन्मेषण तथा एकल मुद्रा (करेंसी) का प्रारंभ। उदाहरण के लिए पोलैंड में 'बैंक समेकन कार्यक्रम' ने राज्य के स्वामित्व में कार्यरत बैंकों के बाजार अंश और उनकी कार्यकुशलता को बढ़ाने के लिए उक्त बैंकों के समूहन को संबद्ध किया।

***संदर्भ :***

कैसू, बार्बरा और क्लाउडिया गिरैर्डोन (2007)। "डज कंपीटिशन लीड टू एफीशिएन्सी? दी केस ऑफ ईयू कमर्शियल बैंक्स।" *यूनिवर्सिटी ऑफ़ एसेक्स डिस्कशन पेपर* सं. 07-0, यूनिवर्सिटी ऑफ एसेक्स।

जोन्स, केनेथ डी. और टिम क्रिचफील्ड (2005)। "कन्सॉलिडेशन इन द यू.एस.बैंकिंग इंडस्ट्री : इज़ द 'लांग, स्ट्रेंज ट्रिप" एबाउट टू एण्ड?" *फ़ेडरल डिपॉजिट इन्शूरेंस कार्पोरेशन बैंकिंग रिव्यू,* खंड 17, सं. 4।

शल, बेर्नार्ड और हैनवेक, जेराल्ड ए. 2001, "बैंक मर्जर्स इन ए डीरेग्युलेटेड एन्विरॉनमेंट : प्रॉमिस एण्ड पेरिल", कोरम बुक्स, यूएसए।

## सारणी 8.4 : भारत में निजी क्षेत्र के नये बैंक और सरकारी क्षेत्र के बैंक तथा बैंक विलय

| वर्ष | बैंक विलयों की संख्या | स्थापित नये बैंक | | | बैंकों की संख्या (मार्च के अंत में) |
|---|---|---|---|---|---|
| | | निजी | विदेशी | सरकारी क्षेत्र के बैंक | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 |
| 1989-90 | 4 | 0 | 0 | 0 | 75 |
| 1990-91 | 1 | 0 | 2 | 0 | 74 |
| 1991-92 | 0 | 1 | 0 | 0 | 77 |
| 1992-93 | 0 | 0 | 0 | 0 | 77 |
| 1993-94 | 1 | 0 | 0 | 0 | 74 |
| 1994-95 | 0 | 8 | 4 | 0 | 86 |
| 1995-96 | 1 | 2 | 4 | 0 | 92 |
| 1996-97 | 0 | 1 | 8 | 0 | 101 |
| 1997-98 | 2 | 0 | 4 | 0 | 103 |
| 1998-99 | 0 | 0 | 8 | 0 | 105 |
| 1999-2000 | 3 | 0 | 1 | 0 | 100 |
| 2000-01 | 1 | 0 | 0 | 0 | 99 |
| 2001-02 | 0 | 1 | 4 | 0 | 98 |
| 2002-03 | 3 | 0 | 1 | 0 | 92 |
| 2003-04 | 0 | 1 | 1 | 0 | 90 |
| 2004-05 | 2 | 1 | 0 | 1* | 88 |
| 2005-06 | 2 | 1 | 0 | 0 | 84 |
| 2006-07 | 3 | 0 | 1 | 0 | 82 |

– : उपलब्ध नहीं।
* : आइडीबीआइ बैंक लि. का आइडीबीआइ के साथ विलय के बाद आइडीबीआइ लि. को अन्य सरकारी क्षेत्र बैंक के रूप में वर्गीकृत किया गया है। विलयों और नये बैंकों की स्थापना के अलावा, वर्षों से बैंकों की संख्या में परिवर्तन कुछ बैंकों के बंद होने के कारण भी है।

की सूची (जुलाई 2007) में 27 भारतीय बैंक थे (जुलाई 2004 के 20 की तुलना में)। इनमें से 11 बैंक शीर्षस्थ 500 बैंकों में थे (जुलाई 2004 के 6 की तुलना में)(सारणी 8.5)। एशिया के अंदर भी, भारत के सबसे बड़े बैंक अर्थात् भारतीय स्टेट बैंक और आइसीआइसीआइ बैंक ने क्रमशः 11वाँ और 25वाँ स्थान प्राप्त किया।

8.41 पाँच सबसे बड़े भारतीय बैंकों अर्थात् भारतीय स्टेट बैंक, आइसीआइसीआइ बैंक, पंजाब नैशनल बैंक, केनरा बैंक और बैंक ऑफ बड़ौदा की संयुक्त अस्तियां 31 मार्च 2006 को चीन के सबसे बड़े बैंक बैंक ऑफ चाइना, जो लगभग भारतीय स्टेट बैंक से 3.6 गुना बड़ा था, की आस्तियां का लगभग 51 प्रतिशत थीं। एशियाई संदर्भ में भी केवल एक ही भारतीय बैंक - भारतीय स्टेट बैंक - का स्थान टियर I पूँजी के आधार पर शीर्षस्थ 25 बैंकों में है, यद्यपि भारतीय बैंक समकक्ष एशियाई बैंकों के बीच पूँजी पर सर्वाधिक औसत प्रतिलाभ प्रदान करते हैं। भारतीय स्टेट बैंक की कुल आस्तियां विश्व में शीर्षस्थ तीन बैंकों की आस्तियों के 10.0 प्रतिशत से कम थीं। फिर भी, भारतीय स्टेट बैंक का आकार कोरिया और ब्राजील जैसे कुछ उभरते हुए बाजारों में परिचालित सबसे बड़े बैंक से बड़ा था। एक प्रकार से यह इस बात का द्योतक है कि बैंक और बैंकिंग क्षेत्र का आकार अर्थव्यवस्था के आकार पर निर्भर है (सारणी 8.6)।

## सारणी 8.5 : विश्व के शीर्षस्थ 1000 बैंकों में भारतीय बैंकों का स्थान

(31 मार्च 2006 को)

| क्रम सं. | बैंक का नाम | समग्र स्थान (रैंकिंग) | आस्तियां (मिलियन अमरीकी डॉलर) |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| 1 | भारतीय स्टेट बैंक* | 70 | 186,988 |
| 2 | आइसीआइसीआइ बैंक | 147 | 56,258 |
| 3 | पंजाब नैशनल बैंक | 255 | 32,509 |
| 4 | बैंक ऑफ बड़ौदा * | 259 | 33,690 |
| 5 | केनरा बैंक * | 281 | 38,069 |
| 6 | आइडीबीआइ | 329 | 20,209 |
| 7 | एचडीएफसी बैंक* | 335 | 20,945 |
| 8 | ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स | 378 | 13,190 |
| 9 | बैंक ऑफ इंडिया | 411 | 25,126 |
| 10 | इंडियन ओवरसीज बैंक * | 414 | 18,868 |
| 11 | यूनियन बैंक ऑफ इंडिया | 495 | 19,945 |
| 12 | कार्पोरेशन बैंक | 507 | 9,079 |
| 13 | आंध्रा बैंक * | 533 | 10,905 |
| 14 | इलाहाबाद बैंक | 548 | 12,374 |
| 15 | सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया | 561 | 16,713 |
| 16 | यूटीआइ बैंक | 580 | 11,129 |
| 17 | सिंडिकेट बैंक | 601 | 13,668 |
| 18 | इंडियन बैंक | 623 | 10,660 |
| 19 | यूको बैंक | 699 | 13,839 |
| 20 | युनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया * | 708 | 9,700 |
| 21 | जम्मू एण्ड कश्मीर बैंक | 744 | 5,919 |
| 22 | विजया बैंक | 722 | 7,057 |
| 23 | बैंक ऑफ महाराष्ट्र | 805 | 6,989 |
| 24 | फेडरल बैंक | 904 | 4,620 |
| 25 | पंजाब एण्ड सिंध बैंक | 916 | 4,262 |
| 26 | कर्नाटक बैंक | 962 | 3,346 |
| 27 | देना बैंक | 988 | 5,941 |

* : आंकड़े मार्च 2007 से संबंधित हैं ।
**टिप्पणी** : बैंकों का स्थान (रैंकिंग) टीयर I पूँजी के आकार के अनुसार है ।
**स्रोत** : दि बैंकर, जुलाई 2007 ।

8.42 भारत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों (आरआरबी) के विलय सितंबर 2005 से बड़े पैमाने पर हुए हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के विलय अधिकतर "कृषि और संबंधित कार्यकलापों को ऋण की उपलब्धता" के संबंध में गठित समिति (अध्यक्ष : प्रो. वी. एस. व्यास) की सिफारिशों के अनुसरण में नीति द्वारा संचालित हैं। उक्त समिति ने जून 2004 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की पुनर्संरचना की सिफारिश की थी जिससे क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की परिचालनगत व्यवहार्यता में सुधार लाया जा सके तथा बड़े पैमाने पर किफायत का लाभ उठाया जा सके। भारतीय वित्तीय प्रणाली में ऋण वितरण के एक प्रभावी साधन के रूप में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का प्रतिस्थापन करने के लिए भारत सरकार ने नाबार्ड, संबंधित राज्य सरकारों और प्रवर्तक बैंकों के साथ परामर्श करने के बाद क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का राज्य-स्तरीय प्रवर्तक बैंक-वार समामेलन प्रारंभ किया जिससे क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में विद्यमान कमियाँ दूर की जा सकें तथा उन्हें अर्थक्षम और लाभकारी इकाइयों के रूप में बनाया जा सके। भारत सरकार

### सारणी 8.6 : चयनित देशों के सबसे बड़े बैंकों की तुलना में भारत के सबसे बड़े बैंक का सापेक्ष आकार

| क्रम सं. | बैंक | देश | परिसंपत्तियाँ (मिलियन अमेरिकी डॉलर) | अन्य देशों में सबसे बड़े की बैंकों तुलना में भा.स्टे.बैंक का सापेक्ष आकार |
|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 |
| 1. | यूबीएस | स्विट्जरलैंड | 1,963,870 | 9.5 |
| 2. | बारक्लेस बैंक | यूके | 1,956,786 | 9.6 |
| 3. | सिटीग्रुप | अमेरिका | 1,882,556 | 9.9 |
| 4. | मित्शुबिशी यूएफजे वित्तीय समूह | जापान | 1,579,390 | 11.8 |
| 5. | ड्यूश बैंक | जर्मनी | 1,483,248 | 12.7 |
| 6. | एबीएन अम्रो बैंक | नेदरलैंड्स | 1,299,966 | 14.4 |
| 7. | आइसीबीसी | चीन | 961,576 | 19.4 |
| 8. | नैशनल आस्ट्रेलिया बैंक | आस्ट्रेलिया | 331,408 | 56.4 |
| 9. | कूकमिन बैंक | कोरिया | 180,805 | 103.4 |
| 10. | बैंको इताऊ होल्डिंग फाइनैंसेइरा | ब्राजील | 98,124 | 190.6 |
| 11. | भारतीय स्टेट बैंक | भारत | 186,988 | — |

**स्रोत :** दि बैंकर, जुलाई 2007।

द्वारा लागू किये गये 17 राज्यों में 20 बैंकों द्वारा प्रवर्तित 45 नये क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के रूप में 154 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के समामेलन के परिणामस्वरूप क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कुल संख्या 196 से घटकर 1 मई 2008 की स्थिति के अनुसार 88 रही (जिनमें पुदुचेरी के संघ राज्य क्षेत्र में स्थापित एक नया क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक शामिल है)। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के संरचनात्मक समेकन का परिणाम नये क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के निर्माण में हुआ जो व्यवसाय की प्रमात्रा और अधिकाधिक लोगों तक पहुँच की दृष्टि से वित्तीय रूप से अधिक मजबूत और आकार में अधिक बड़े हैं तथा बड़े पैमाने पर किफायत का लाभ उठाने और अपनी परिचालनगत लागतों को कम करने में समर्थ हैं।

8.43 समेकन को भारत में अव्यवहार्य शहरी सहकारी बैंकों के लिए एक निकास मार्ग के रूप में भी देखा गया है। अधिक मजबूत संस्थाओं के साथ कमजोर संस्थाओं के विलय की प्रक्रिया, विलय के प्रस्तावों की अनापत्ति प्रदान करने के लिए पारदर्शी और वस्तुनिष्ठ मार्गदर्शी निदेश उपलब्ध कराते हुए गतिशील कर दी गई। रिज़र्व बैंक विलय/समामेलन के लिए प्रस्तावों पर विचार करते समय जमाकर्ताओं के हितों और वित्तीय स्थिरता को ध्यान में रखने के बाद अपने अनुमोदन को विलय के वित्तीय पहलुओं तक सीमित रखता है। यह लगभग अनिवार्यतः उन बैंकों का स्वैच्छिक निर्णय है जो अपने विलय के प्रस्ताव हेतु अनापत्ति प्राप्त करने के लिए रिज़र्व बैंक से संपर्क करते हैं। विलयों के संबंध में मार्गदर्शी निदेशों का उद्देश्य बैंकों के बीच विलय के लिए पूर्वपिक्षाओं और की जाने के लिए अपेक्षित कार्रवाई की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए उक्त प्रक्रिया को सुसाध्य बनाना है। 30 अक्तूबर 2007 की स्थिति के अनुसार सहकारी समितियों के केंद्रीय पंजीयक/संबंधित सहकारी समितियों के पंजीयक (सीआरसीएस/आरसीएस) द्वारा सांविधिक आदेश जारी किये जाने पर कुल 33 विलय लागू किये गये थे (भा.रि.बैं., 2007)।

## V. विलय और अभिग्रहण : भारत में प्रतियोगिता और कार्यकुशलता पर प्रभाव

8.44 बैंक समेकन के प्रतियोगिता प्रभावों के संबंध में काफी बहस हुई है जो दो प्रतियोगी परिकल्पनाओं में अभिव्यक्त की गई है। संरचना-व्यवहार-कार्यनिष्पादन प्रतिमान का तर्क यह है कि संकेंद्रण बाजार की शक्ति को बढ़ाएगा और उसके द्वारा प्रतियोगिता और कार्यकुशलता को बाधित करेगा। इसके विरोध में कार्यकुशलता प्रतिमान यह तर्क देता है कि बड़े पैमाने पर किफायत बैंक विलयों और अभिग्रहणों को संचालित करती है, ताकि बढ़ा हुआ संकेंद्रण कार्यकुशलता में सुधारों के साथ-साथ चल सके।

8.45 प्रतियोगिता के संबंध में एमएण्डए के माध्यम से समेकन का प्रभाव अनेक सरणियों के माध्यम से परिचालित होता है तथा वह अन्यों के साथ बाजार की संरचना, प्रतियोगिता के स्वरूप एवं विनियामक और पर्यवेक्षी रूपरेखा पर आधारित है। प्रतियोगिता का प्रभाव संकेंद्रण की मात्रा, प्रवेश के लिए अवरोधों की मात्रा, उत्पादों की विषमता और अनुमतिप्राप्त मूल्य विभेदीकरण पर निर्भर होगा। बैंकिंग उद्योग की प्रतियोगिता के स्तर के आधार पर समेकन विभिन्न ग्राहक समूहों के लिए ऋण की व्यवस्था को प्रभावित करता है। विभिन्न देशों का विश्लेषण इस धारणा का समर्थन नहीं करता कि बैंक संकेंद्रण बैंकिंग क्षेत्र की कार्यकुशलता, वित्तीय विकास, औद्योगिक प्रतियोगिता, सामान्य संस्थागत विकास, अथवा बैंकिंग प्रणाली की स्थिरता के साथ घनिष्ठ रूप से संबद्ध है। वास्तव में, बैंकिंग क्षेत्र में प्रतियोगिता पर एमएण्डए का प्रभाव एकसमान नहीं रहा है (बॉक्स VIII.4)।

8.46 विशेष रूप से बाजार चालित एमएण्डए का लक्ष्य आकार (बाजार की शक्तियाँ) बढ़ाना, बड़े पैमाने की किफायत का फायदा उठाकर मूल्य (राजस्व) को अधिकतम करना, जोखिम का विविधीकरण और पूँजी का सुदृढ़ीकरण है। बहुत हाल ही में किये गये अध्ययनों में यह पाया गया है कि अमरीका में (बर्जर और मेस्टेर, 1997; बर्जर और हम्फ्री, 1997) तथा यूरोप में (ऐलेन और राय, 1996 और वैण्डर वेनेट, 2001) अपेक्षाकृत बड़े बैंकों के लिए भी ऐसी बड़े पैमाने की किफायत है जिससे लाभ नहीं उठाया गया है। अधिक क्षमता की मौजूदगी में कुछ बैंक इस बात के लिए बाध्य हैं कि वे कुशलता के मान से नीचे परिचालन करें तथा अकुशल उत्पाद का मिश्रण भी रखें, एवं इस कारण से कुशलता की सीमा के अंदर ही रहें। ऐसी परिस्थिति में पूर्णतया दिवालियेपन की अपेक्षा एमएण्डए इन समस्याओं का समाधान अधिक कुशलतापूर्वक कर सकते हैं क्योंकि वे विलय होनेवाले बैंकों के मुक्तांश (फ्रैंचाइज) मूल्यों को सुरक्षित रखते हैं (ह्वीजिंगा आदि, 2001)।

## बॉक्स VIII.4
## प्रतियोगिता पर समेकन का प्रभाव : विभिन्न देशों के साक्ष्य

समेकन की प्रक्रिया बढ़ी हुई प्रतियोगिता का सामना करने के लिए एक प्रतिक्रिया हो सकती है, परंतु वह संभावित प्रतियोगिता को भी प्रभावित करती है। संभावित प्रतियोगिता को प्रभावित करनेवाला प्राथमिक तत्व बैंकिंग प्रणाली में विलय होनेवाली दोनों संस्थाओं की सापेक्ष स्थिति है। उदाहरण के लिए बैंकिंग प्रणाली के निचले छोर पर परिचालित बैंकों के विलय का संभावित प्रतियोगिता के लिए बहुत कम निहितार्थ हो सकता है। समेकन बाजार के संकेंद्रण में वृद्धि के द्वारा प्रतियोगिता को प्रभावित कर सकता है। सामान्यतः वित्तीय उद्योग के मामले में विनियामक प्राधिकारियों द्वारा प्रवेश के संबंध में प्रत्यक्षतः लागू किये गये अवरोधों, फर्मों की लागत संरचनाओं में अंतर्निहित विशेषताओं तथा ग्राहकों की अपेक्षाकृत रूप में अनम्य माँग के कारण पूर्ण प्रतियोगितात्मकता बनी नहीं रह सकती।

प्रतियोगिता पर संकेंद्रण का प्रभाव इस बात पर भी निर्भर है कि क्या फर्म प्रमात्राओं या कीमतों पर प्रतियोगिता कर रहे हैं। पहली स्थिति में यह दिखाना स्पष्टवादिता से युक्त है कि फर्मों की संख्या जितनी कम होगी, एकाधिकार के प्रति बाजार का परिणाम उतना ही निकट होगा। दूसरी स्थिति में प्रभाव उत्पादों की विषमता पर आधारित है; उत्पाद जितने विषम होंगे, फर्मों की बाजार शक्ति उतनी ही अधिक होगी। उत्पादों की मुख्य विशेषताओं से आगे उनका विभेदीकरण करने के लिए फर्म विशिष्ट कार्यनीतियाँ अपनाने की प्रवृत्ति दर्शाते हैं।

प्रतियोगिता पर समेकन के प्रभावों का मूल्यांकन या तो समेकन संबंधी अनुभवप्राप्त बाजारों का अध्ययन करते हुए सीधे या फिर एक विशिष्ट समय पर संकेंद्रण की विभिन्न मात्राओं से युक्त बाजारों की तुलना करते हुए खंड-वार (क्रॉस-सेक्शनल) अध्ययन द्वारा परोक्ष रूप से किया जाता है। ऐसे अधिकांश अध्ययनों में यह पाई गई है कि एमएण्डए ने संभवतः बाजार की कीमतों को प्रभावित किया है। अमरीका में जमाराशियों पर ब्याज दरों में कटौती उन बाजारों में पायी गयी जो समेकन द्वारा प्रभावित हुए हैं (प्रैगर और हैनन, 1998)। स्विस खुदरा बैंकिंग बाजार के लिए कीमतों पर विलयों के प्रभाव के अनुमान यह सूचित करते हैं कि कीमतों पर संकेंद्रण का ऋणात्मक प्रभाव हो सकता है (एगली और राइम, 2000)। इटली में एमएण्डए में ऋण की ब्याज दरें तब बढ़ जाती हैं जब अभिगृहीत बैंक का बाजार अंश बड़ा है (सैपियेंज़ा, 1998)। यूरोपीय आंकड़ों का उपयोग करनेवाला अप्रत्यक्ष दृष्टिकोण यह पाता है कि अधिक संकेंद्रण के कारण बैंक के ग्राहकों के लिए कम अनुकूल स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं (डे बोनिस और फेरैंडो, 1997)। यह देखा गया है कि छोटे व्यावसायिक ऋणों और खुदरा जमाराशियों के लिए कीमतों के संबंध में बाजार की शक्ति दोनों अमरीका और यूरोप में विद्यमान है (बर्जर और हैनन, 1989 तथा हैनन 1991)। तथापि, यह निर्दिष्ट किया गया था कि संकेंद्रण और खुदरा जमा ब्याज-दरों के बीच संबंध 1990 के दशक में उससे पहले के दशक की अपेक्षा कुछ क्षीण हो गया है (हैनन, 1997)। यद्यपि अमरीका का बैंकिंग उद्योग जोखिमों के भौगोलिक विविधीकरण द्वारा अधिक मजबूत हो गया है, तथापि अधिकांश शोधकर्ताओं ने, विशेष रूप से 1980 के दशक और 1990 के दशक के प्रारंभिक वर्षों पर फोकस करनेवाले शोधकर्ताओं ने बड़े पैमाने की किफायत अथवा संभावना से प्राप्य लाभ से उत्पन्न होनेवाली लागत संबंधी किफायत में कोई व्यापक आधार वाले सुधार नहीं देखे हैं। लातीन अमेरिकी बैंकिंग प्रणाली के लिए यह देखा गया कि (i) बैंकिंग बाजारों में संकेंद्रण के कारण आवश्यक रूप से प्रतियोगिता का निम्नतर स्तर और उच्चतर बैंक कार्यनिष्पादन घटित नहीं हुआ; तथा (ii) बैंक प्रतिलाभ प्रतियोगिता की मात्रा के साथ ऋणात्मक तौर पर संबद्ध किये गये एवं एक निम्नतर सीमा तक विदेशी बैंक सहभागिता के साथ संबद्ध किये गये (यिल्दिरिम और फिलिपैटोस, 2007)। इसके अलावा, लातीन अमरीकी बैंकिंग प्रणाली के संदर्भ में येयाति और मिक्को (2007) ने सुझाया कि यह बिलकुल स्पष्ट नहीं था कि क्या प्रतियोगिता और संकेंद्रण को विपरीत दिशाओं में जाना चाहिए। 50 प्रमुख उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्ताओं को शामिल करके संरचनात्मक मॉडल का प्रयोग करते हुए विभिन्न देशों के संबंध में किये गये एक अध्ययन में क्लेसेन्स और लीवेन (2003) ने पाया कि बैंकिंग क्षेत्र में कार्यकलापों के संबंध में निम्नतर प्रतिबंध और विदेशी बैंकों की अधिकाधिक उपस्थिति बैंकिंग प्रणालियों को अधिक प्रतियोगी बनाते हैं। उक्त अध्ययन में उभरती अर्थव्यवस्थाओं के अंतर्गत अन्य देशों के साथ शामिल थे अर्जेन्टीना, ब्राजील, चिली, भारत, इंडोनेशिया, मलेशिया, फिलीपीन्स, रूसी महासंघ और तर्की। फिर भी, उन्होंने ऐसा कोई साक्ष्य नहीं पाया कि बैंकिंग प्रणाली का संकेंद्रण प्रतियोगिता के साथ ऋणात्मक तौर पर संबद्ध किया गया था।

उभरती बाजार बैंकिंग प्रणालियों में समेकन बड़ी सीमा तक प्रतियोगी दबावों में गिरावट के रूप में अभी तक परिणत नहीं हुआ है। कुछ हद तक इसके लिए उस प्रक्रिया को कारण माना गया है जो अभी विशेष रूप से केंद्रीय यूरोप और तुर्की में अपनी प्रारंभिक अवस्था में है। तुर्की में बैंकिंग क्षेत्र के अंतरराष्ट्रीयकरण को ध्यान में रखते हुए अब्बासोगलू, आयसान और गुनेस (2007) ने समेकन और प्रतियोगिता के बीच संबंध के अस्तित्व का कोई सबूत नहीं पाया है। फिर भी, उन देशों के लिए भी जहाँ समेकन की प्रक्रिया अधिक उन्नत है, अर्थात् अर्जेन्टीना और मेक्सिको के लिए प्रतियोगिता की प्रधानता पर समेकनों का कोई स्पष्ट प्रभाव नहीं देखा गया है (गेलोस और रोल्डोस, 2002)। अधिकांश उभरती अर्थव्यवस्थाओं में बैंक समेकन को संकेंद्रण में किसी उल्लेखनीय वृद्धि के साथ संबद्ध नहीं किया गया है क्योंकि यह प्रतीत होता है कि अधिकांश विलयों ने अपेक्षाकृत छोटे बैंकों को संबद्ध किया है। इस पैटर्न के लिए एक कारण सबसे बड़े बैंकों के बीच विलय की स्वीकृति देने के संबंध में प्राधिकारियों की अनिच्छा हो सकती है जिससे दोनों प्रतियोगिता और नैतिक संकट की चिंताएँ उत्पन्न हो सकती हैं। संकेंद्रण-प्रतियोगिता संबंधी हाल का साहित्य एक महत्वपूर्ण बिंदु सुझाता है कि बैंकों की संख्या और संकेंद्रण की मात्रा अपने आप में प्रतियोगितात्मकता के पर्याप्त संकेतक नहीं हैं। विनियामक नीतियों सहित अन्य कारक एक सुदृढ़ भूमिका अदा करते हैं जो प्रतियोगिता, एक सुविकसित वित्तीय प्रणाली, शाखा नेटवर्कों के प्रभावों एवं प्रौद्योगिकीगत उन्नतियों के प्रभाव और उनकी समझ को बढ़ावा देते हैं (नॉर्थकॉट, 2004)।

**संदर्भ :**

प्रैगर और हैनन, 1998। "दी रिलैक्जेशन ऑफ एन्ट्री बैरियर्स इन द बैंकिंग इंडस्ट्री : ऐन एम्पिरिकल इन्वेस्टिगेशन"। *जर्नल ऑफ फाइनैंशियल सर्विसेज रिसर्च,* 14(3)।

बर्जर, ऐलेन एन. और टाइमोथी एच. हैनन, 1989 । "दी प्राइस-कॉन्सन्ट्रेशन रिलेशनशिप इन बैंकिंग"। *रिव्यू ऑफ इकनॉमिक्स एण्ड स्टैटिस्टिक्स,* खंड 71।

क्लेसेन्स, स्टिज्न और लीवेन, लूक, 2003। "व्हाट ड्राइव्स बैंक कम्पीटिशन? सम इंटरनेशनल एविडेन्स"। *पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर सीरीज़* 3113, विश्व बैंक।

8.47 भारतीय बैंकिंग प्रणाली ने सुधारों के बाद की अवधि में कुछ सुस्पष्ट संरचनात्मक परिवर्तन देखे हैं। विलयों/समामेलनों और नये निजी और विदेशी बैंकों के प्रवेश के अलावा, सरकारी क्षेत्र के बैंकों में सरकारी इक्विटी भी मंद हुई है। सरकारी क्षेत्र के 28 बैंकों में से 22 बैंकों ने बाजार से पूँजी जुटाई है। तीन बैंकों में सरकारी इक्विटी धारिता नीचे 51 प्रतिशत के करीब आ गई। समेकन एवं निजी और विदेशी बैंकों के प्रवेश के साथ ही, स्वामित्व की संरचना में परिवर्तनों से यह अनुमान है कि बैंकिंग क्षेत्र में समग्र प्रतियोगिता पर इनका प्रभाव होगा।

8.48 बैंकिंग प्रणाली में विशिष्ट रूप से प्रतियोगिता पर विभिन्न परिवर्तनों के प्रभाव का मूल्यांकन करने के लिए अनेक संकेंद्रण संकेतकों का विश्लेषण किया गया है। समेकन की प्रक्रिया संकेंद्रण को बढ़ाने के द्वारा प्रतियोगिता को प्रभावित कर सकती है। इसके निहितार्थों का आकलन करने के लिए संकेंद्रण को मापना महत्वपूर्ण है जो बैंकों के आकार के वितरण को प्रतिबिंबित कर सकता है। इनमें शामिल हैं, के-संकेंद्रण अनुपात, हेरफिंडाहल-हिर्शमैन सूचकांक (एचएचआइ) और प्रमुख बैंकिंग क्षेत्र की परिवर्ती वस्तुओं जैसे आस्तियों और जमाराशियों के संबंध में थेइल का उत्क्रम (एंट्रोपी) माप (बॉक्स VIII.5)।

8.49 व्यापक तौर पर प्रयुक्त कई संकेतक यह सूचित करते हैं कि अनेक विलयों और अभिग्रहणों के बावजूद सुधारों के बाद की अवधि में भारतीय बैंकिंग प्रणाली कम संकेंद्रित हुई है। परिसंपत्ति के आकार

## बॉक्स VIII.5
## संकेंद्रण सूचकांकों की माप

विभिन्न सैद्धांतिक संस्थापनों के आधार पर संकेंद्रण की मात्रा को मापने के लिए विभिन्न पद्धतियाँ बनाई गई हैं (बिक्कर, 2004)। संकेंद्रण के माप उनकी भारक योजनाओं और संरचनाओं के अनुसार वर्गीकृत किये जा सकते हैं। किसी सूचकांक की भारक योजना परिवर्तनों के प्रति उसकी संवेदनशीलता को बैंक आकार के वितरण के अंत में निर्धारित करती है। संकेंद्रण के सूचकांक की संरचना पृथक् या संचयी हो सकती है। संकेंद्रण के पृथक् माप एक विवेकाधीन बिन्दु पर संकेंद्रण वक्र की ऊँचाई के अनुरूप होते हैं। उदाहरण के लिए के-बैंक संकेंद्रण अनुपात पृथक् माप है जो सरल है और जिसकी गणना तब भी की जा सकती है जब संपूर्ण आंकड़ों का समुच्चय उपलब्ध नहीं है। तथापि, यह माप बैंकिंग क्षेत्र के उन भागों में होनेवाले संरचनात्मक परिवर्तनों की उपेक्षा करता है जो संकेंद्रण अनुपात में शामिल नहीं हैं। दूसरी ओर संकेंद्रण का संचयी माप बैंकिंग क्षेत्र के समूचे आकार वितरण को स्पष्ट करता है और वितरण के सभी भागों में संरचनात्मक परिवर्तनों को शामिल करता है। हेरफिंडाहल-हिर्शमैन सूचकांक (एचएचआइ) और थेइल का एंट्रोपी सूचकांक ऐसी विशेषताएं प्रदर्शित करते हैं।

सरलता और सीमित आंकड़ों की आवश्यकताएँ के-बैंक संकेंद्रण अनुपात को संकेंद्रण का सर्वाधिक सामान्य तौर पर प्रयुक्त माप बनाती हैं जो सबसे बड़े के-बैंकों के बाजार अंशों का योग करता है। वह के-अग्रणी बैंकों को समान भार देता है, परंतु अपेक्षाकृत छोटे बैंकों की उपेक्षा करता है। वह 0 और एक के बीच भिन्नता रखता है (यदि बाजार के अंशों को प्रतिशत के स्थान पर भिन्नात्मक रूप में मापा जाता है)।

$$CR_k = \sum_{i=1}^{K} S_i$$

हेरफिंडाहल -हिर्शमैन सूचकांक बाजार संकेंद्रण का दूसरा सर्वाधिक लोकप्रिय सारांश माप है। वह बाजार में प्रत्येक बैंक के बाजार अंशों के वर्गफलों (स्क्वेअर्स) के योग के रूप में परिभाषित है। उसे प्रायः पूर्ण सूचना सूचकांक भी कहा जाता है क्योंकि वह बैंक आकारों के समूचे वितरण की विशेषताओं को ग्रहण करता है। वह निम्नानुसार रूप ग्रहण करता है :

$$HHI= \Sigma^{K}_{i=1} (S_i)^2$$

जब फर्मों की संख्या बहुत बड़ी हो और किसी भी फर्म के पास यथेष्ट बाजार अंश न हो तब उक्त सूचकांक एकाधिकार के मामले में 10,000 से (अथवा जब बाजार अंश भिन्नात्मक रूप में है तब 1.0 से) शून्य के निकट तक के दायरे में होता है। वह न केवल बाजार में बड़े के-बैंकों की एक विवेकाधीन संख्या द्वारा धारित जमाराशियों/आस्तियों के अनुपात के साथ, बल्कि बाजार में सभी बैंकों के बीच जमाराशियों के सापेक्ष वितरण के साथ भी भिन्नता रखेगा। अमरीका में एचएचआइ बैंकिंग में न्यास-विरोधी कानूनों के प्रवर्तन की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। एचएचआइ का उपयोग बैंकों के प्रस्तावित विलय की संवीक्षा करने के लिए किया जाता है (शल और हैनवेक, 2001)। 1982 से अमरीका का न्याय विभाग विलय संबंधी अपने दिशानिर्देशों के लिए एचएचआइ पर निर्भर रहा है।

एचएचआइ की तुलना में एंट्रोपी सूचकांक छोटे बैंकों को गुरूतर भार देता है और इसके विलोमतः भी उसके द्वारा भार निर्धारित किया जाता है। इस पद्धति के अंतर्गत प्रत्येक बैंक के बाजार अंश के प्रतिलोम के लॉग को लेते हुए प्रत्येक बाजार अंश को तोला जाता है। एचएचआइ और एंट्रोपी मापों का प्रयोग करने से प्रमुख लाभ यह है कि इच्छाधीन निर्दिष्ट सीमाओं (कट-ऑफ़) और अंश वितरण के प्रति असंवेदनशीलता से बचने के लिए प्रत्येक बैंक को अलग से शामिल किया जाता है।

एंट्रोपी सूचकांक किसी बैंक के कार्यकलाप के अंशों को संबंधित शेयरों के प्रतिलोम के लॉग टर्म द्वारा भार निश्चित करता है। एचएचआइ की तुलना में यह सूचकांक अपेक्षाकृत बड़े कार्यकलापों को कम भार देता है । ये दोनों माप परस्पर प्रतिलोम हैं। इनके अलावा, किसी विशिष्ट क्षेत्र में संस्थाओं के आकार के वितरण की समता या असमता का परीक्षण करनेवाले संकेंद्रण के कई अन्य वैकल्पिक माप हैं। इनमें शामिल हैं, अन्यों के साथ-साथ क्वोका सूचकांक, होरवैर्थ सूचकांक और रोजेनब्लथ सूचकांक।

**संदर्भ** :

बिक्कर, जाकोब ए. 2004। "कम्पीटीशन एण्ड एफीशियेन्सी इन ए यूनिफाइड यूरोपियन बैंकिंग मार्केट"। एडवर्ड एल्गार पब्लिशिंग।

शल, बेर्नार्ड और हैनवेक , जेराल्ड ए, 2001। "बैंक मेर्जर्स इन ए डीरेग्युलेटेड एन्विरॉनमेंट : प्रॉमिस एण्ड पेरिल"। कोरम बुक्स, यूएसए।

**चार्ट VIII.1 : भारत में वाणिज्य बैंकों का संकेंद्रण अनुपात**

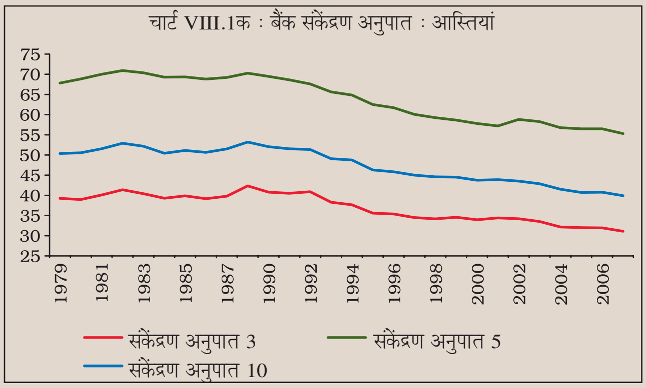


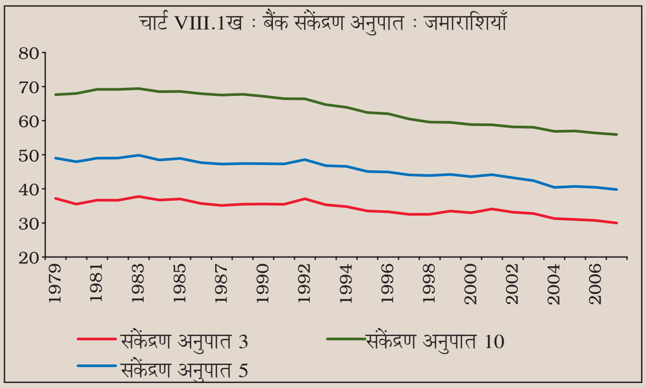


के आधार पर, 1978-79 और 1990-91 में पाँच-बैंक संकेंद्रण अनुपात में बहुत कम परिवर्तन आया; जबकि यह 1991-92 के 51.4 प्रतिशत से काफी घटकर 1998-99 में 44.5 प्रतिशत रहा तथा आगे और घटकर 2006-07 में 39.9 प्रतिशत रह गया । बैंक जमाराशियों के संकेंद्रण में इसी प्रकार की प्रवृत्ति देखी गई (चार्ट VIII.1)।

8.50 यह संभवतः इस कारण से था कि बैंक विलय अधिकांशतः ऐसे छोटे बैंकों के बीच हुए जिनका बाजार संरचना के संकेतकों पर अत्यल्प प्रभाव रहा। इसके अलावा, अनेक नये निजी और विदेशी बैंक भी स्थापित किये गये। फिर भी, यह ध्यान देने योग्य महत्व की बात है कि उक्त संकेंद्रण 1999-2000 के बाद भी कम हुआ जब परिचालित होनेवाले बैंकों की संख्या घट गई।

8.51 विभिन्न देशों के बीच संकेंद्रण अनुपातों के विश्लेषण से यह विदित होता है कि कई देशों में संकेंद्रण 1991 और 2006 के बीच घट गया है, जबकि कुछ उन्नत देशों (अमरीका, जापान, जर्मनी, स्पेन और फ्रांस) में यह कुछ बढ़ गया है। अधिकांश उन्नत और अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में भारतीय बैंकिंग क्षेत्र की बाजार संरचना कम विषम है (सारणी 8.7)। भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में संकेंद्रण की मात्रा चीन, फ्रांस, स्पेन, यूके, सिंगापुर और दक्षिण अफ्रीका से काफी नीचे थी। वास्तव में, 2006 में विद्यमान संकेंद्रण अनुपात के आधार पर भारतीय बैंकिंग प्रणाली में संकेंद्रण की मात्रा (रूसी महासंघ और अमरीका के बाद) निम्नतम अनुपातों में से एक थी।

8.52 बढ़ते हुए प्रतियोगी दबावों का साक्ष्य भी एचएचआइ की घटती हुई प्रवृत्ति से अच्छी तरह समर्थित था। कुल आस्तियों के लिए एचएचआइ 1991-92 के 1008.2 प्रतिशत से घटकर 2006-07 के दौरान 540.7 प्रतिशत हो गया। संकेंद्रण के एंट्रोपी सूचकांक ने भी एचएचआइ के आधार पर निकाले गए निष्कर्ष की पुष्टि की (चार्ट VIII.2)। ऐसी ही प्रवृत्ति बैंक जमाराशियों के आकार के आधार पर बाजार संरचना के संकेतकों से देखी जा सकती थी जिसमें संकेंद्रण आस्तियों के आकार की तुलना में अपेक्षाकृत कम था।

**सारणी 8.7 : विभिन्न देशों में बैंकिंग संकेंद्रण अनुपात की प्रवृत्ति***

| देश | 1991 | 1998 | 2006 |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएं** | | | |
| सिंगापुर | 0.86 | 0.81 | 0.99 |
| जर्मनी | 0.55 | 0.63 | 0.72 |
| स्पेन | 0.71 | 0.74 | 0.75 |
| फ्रांस | 0.60 | 0.48 | 0.68 |
| आस्ट्रेलिया | 0.89 | 0.62 | 0.64 |
| कनाडा | 0.71 | 0.55 | 0.60 |
| युनाइटेड किंगडम | 0.56 | 0.70 | 0.57 |
| नेदरलैंड्स | 0.55 | 0.77 | 0.54 |
| कोरिया, गणतंत्र | 0.58 | 0.38 | 0.51 |
| जापान | 0.32 | 0.33 | 0.41 |
| इटली | 0.69 | 0.48 | 0.40 |
| अमरीका | 0.20 | 0.22 | 0.33 |
| **उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ** | | | |
| दक्षिण अफ्रीका | 0.99 | 0.94 | 0.99 |
| इज़राइल | 0.85 | 0.74 | 0.81 |
| चीन | 0.91 | 0.83 | 0.70 |
| तुर्की | 0.83 | 0.53 | 0.70 |
| इंडोनेशिया | 0.72 | 0.40 | 0.63 |
| फिलीपीन्स | 0.83 | 0.65 | 0.60 |
| ब्राजील | 0.94 | 0.40 | 0.59 |
| मलेशिया | 0.42 | 0.40 | 0.53 |
| थाईलैंड | 0.56 | 0.51 | 0.51 |
| अर्जेन्टीना | 0.76 | 0.32 | 0.37 |
| भारत | 0.46 | 0.35 | 0.35 |
| रूसी महासंघ | 0.99 | 0.75 | 0.20 |

* : तीन सबसे बड़े बैंकों की आस्तियों के आधार पर।
**स्रोत :** टी.बेक, ए.डेमिरगुक-कुन्ट और आर. ई. लेवाइन, फाइनैंशियल रिसर्च, डब्ल्यूपीएस 2146, नवंबर 2007 में अद्यतन बनाया गया वित्तीय संरचना का डाटासेट। विश्व बैंक।

**चार्ट VIII.2 : संकेंद्रण के एचएचआइ और एंट्रोपी सूचकांक माप**

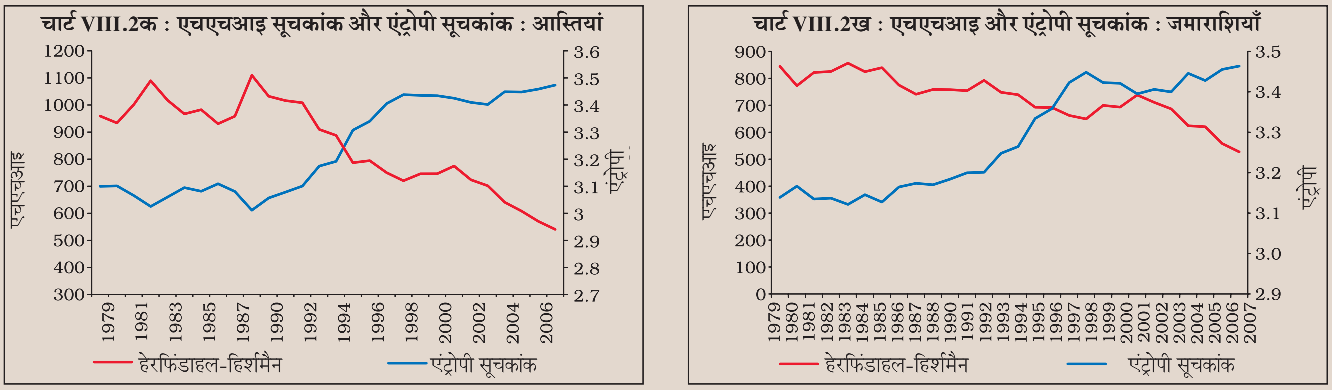


8.53 अन्य देशों के साथ तुलना करने पर यह विदित होता है कि एचएचआइ के रूप में मापा गया संकेंद्रण अनुपात भारत में 1998 और 2004 के बीच घटा, जबकि वह अध्ययन की गई सभी चयनित उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में बढ़ गया। 2004 में संकेंद्रण अमरीका में सबसे कम था और उसके बाद जर्मनी और यूके का स्थान था। एचएचआइ माप के आधार पर भारत में संकेंद्रण अनुपात भी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के चयनित नमूने से कम था जिससे भारत में बैंकिंग प्रतियोगिता की अधिक मात्रा का पता चलता है। एचएचआइ पर आधारित निष्कर्ष बहुत हद तक सारणी 8.7 में निर्धारित रूप में संकेंद्रण अनुपात के अनुरूप हैं। यद्यपि संकेंद्रण अनुपात और एचएचआइ संकेंद्रण आम तौर पर सबसे ज्यादा प्रयुक्त माप है, तथापि उन पर आधारित निष्कर्ष कुछ भिन्न हो सकते हैं क्योंकि संकेंद्रण केवल शीर्षस्थ के-बैंकों की संख्या को शामिल करता है जबकि एचएचआइ अधिक सूचनात्मक होने के कारण बैंकिंग क्षेत्र के समूचे आकार के वितरण को सम्मिलित करता है। भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में एचएचआइ पर आधारित संकेंद्रण अमरीका, जर्मनी और यूके की तुलना में (जो न्यूनतम संकेंद्रित देश हैं) अधिक था, जो संभवतः इन देशों में कार्यरत बैंकिंग संस्थाओं की बड़ी संख्या के कारण था, परंतु एचएचआइ नमूने में सम्मिलित अन्य सभी देशों से कम था (सारणी 8.8)।

8.54 जबकि संकेंद्रण अनुपातों के विभिन्न माप बाजार संरचना उपलब्ध कराते हैं और बैंकों के परिचालित किये जाने के तरीकों को प्रभावित करते हैं, वे वास्तविक संचालन को और इसलिए बाजार के कार्यनिष्पादन को पूर्णतःनिर्दिष्ट नहीं करते। दूसरे शब्दों में, अत्यधिक संकेंद्रित बैंकिंग क्षेत्र आवश्यक रूप से प्रतियोगिता के अभाव का संकेत नहीं करता, यद्यपि वह बड़े बैंकों के बीच साँठ-गाँठ की संभावना को निर्मित करता है। कार्यकुशलता भी आवश्यक रूप से प्रतियोगिता द्वारा नहीं बढ़ाई जाती, क्योंकि ऐसा हो सकता है कि अत्यधिक संकेंद्रित बाजार में बड़े बैंकों के दुरभिसंधिपूर्ण व्यवहार बेहतर बाजार निष्पादन के रूप में परिणत होता है (बिक्कर और हाफ, 2002)। साहित्य में बैंकिंग उद्योग के संचालन (प्रतियोगिता) के लिए एक सामान्य माप अल्पाधिकारी, प्रतियोगी और एकाधिकारी बाजारों के बीच भेद दिखलाने के लिए पांजार और रोस (1987) द्वारा बनाई गई एच-सांख्यिकी है। एच-सांख्यिकी के आधार पर भारतीय बैंकिंग उद्योग की विशेषता एकाधिकारिक तौर पर प्रतियोगी बाजार के रूप में बताई जा सकती है जैसी कि अधिकांश अन्य उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की स्थिति है। यह प्रतीत हुआ कि प्रतियोगिता का स्तर सुधारों के प्रारंभिक वर्षों में कुछ घट गया है, परंतु उसके बाद उसमें वृद्धि हुई। यह भी पाया गया कि भारतीय बैंकिंग उद्योग में प्रतियोगिता का स्तर सबसे बड़े तीन से पाँच बैंकों के पास स्थित आस्तियों के संकेंद्रण से प्रभावित था। दूसरे शब्दों में, कुछ बड़े बैंकों में बैंकिंग आस्तियों के संकेंद्रण की मात्रा जितनी अधिक होती है, प्रतियोगिता की मात्रा उतनी ही कम होती है (बॉक्स VIII.6)।

**सारणी 8.8 : हेरफिंडाहल-हिर्शमैन सूचकांक***

| देश | 1998 | 2004 |
|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ** | | |
| अमरीका | 117 | 157 |
| जर्मनी | 245 | 283 |
| यूके | 339 | 493 |
| इटली | 489 | 542 |
| फ्रांस | 399 | 682 |
| स्पेन | 854 | 1188 |
| **उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएँ** | | |
| **भारत** | **720** | **541#** |
| मलेशिया | 1317 | 1334 |
| चिली | 974 | 1462$ |
| मेक्सिको | 1542+ | 1529& |
| दक्षिण अफ्रीका | 1310++ | 1840# |
| ब्राजील | 2164+ | 3352 |

+ : 2000 के लिए; ++ 2001 के लिए; $2002 के लिए; & 2005 के लिए तथा # 2006 के लिए
* : बैंकों की आस्ति के आकार के आधार पर।
**स्रोत** : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और अन्य विशिष्ट देशों के कागज-पत्र (भारत को छोड़कर)।

## बॉक्स VIII.6
## पांजार-रोस सांख्यिकी : भारतीय स्थिति

अल्पाधिकारी, एकाधिकार के तौर पर प्रतियोगी और परिशुद्ध रूप से प्रतियोगी बाजारों के बीच भेद दिखलाने के लिए जॉन सी. पांजार और जेम्स एन. रोस (1987) द्वारा एक प्रायोगिक जाँच विकसित की गई। उनकी कार्यविधि जो लघुकृत रूप के राजस्व समीकरणों की तुलनात्मक सांख्यिकीय विशेषताओं पर आधारित है, एक संक्षिप्त संकेतक को निष्पादित करती है जिसे एच-सांख्यिकी कहा जाता है। कुछ प्रतिबंधात्मक धारणाओं के अंतर्गत इसका अर्थ एक विशिष्ट बाजार में प्रचलित प्रतियोगिता के समग्र स्तर के एक निरंतर और वृद्धिशील मापक के रूप में लगाया जा सकता है। पांजार और रोस द्वारा सुझाई गई कार्यपद्धति एक सामान्य संतुलित बाजार मॉडल से उत्पन्न होती है। वह इस आधार-वाक्य पर निर्भर है कि बाजार सहभागियों के प्रतियोगी व्यवहार के आधार पर उपादान निविष्टि कीमतों में परिवर्तनों के प्रति प्रतिक्रियास्वरूप फर्म कीमत-निर्धारण की विभिन्न रणनीतियों का प्रयोग करते हैं। दूसरे शब्दों में, प्रतियोगिता का माप उस सीमा तक किया जाता है जहाँ तक निविष्टि कीमतों में परिवर्तन फर्मो के संतुलन में प्रतिबिंबित होते हैं। उक्त एच-सांख्यिकी विचाराधीन बाजार में प्रचलित प्रतियोगिता के समग्र स्तर को प्रतिबिंबित करनेवाली एक एकल संख्या उपलब्ध कराती है। उक्त एच-सांख्यिकी का प्रयोग तीन प्रमुख बाजार संरचनाओं अर्थात एकाधिकार/पूर्ण दुरभिसंधि, एकाधिकारी प्रतियोगिता और पूर्ण प्रतियोगिता/स्पर्धा के लिए योग्य बाजार को पहचानने के लिए किया जा सकता है। बाजार संरचना के प्रकार के बारे में निष्कर्ष एच-सांख्यिकी के आकार और संकेत के आधार पर निकाले जाते हैं।

पांजार और रोस ने तर्क दिया कि बाजार की शक्ति की माप उस सीमा तक की जा सकती है जहाँ तक उपादान कीमतों में परिवर्तन राजस्वों में प्रतिबिंबित होते हैं। पूर्ण प्रतियोगिता के साथ ही उपादान कीमतों (उदाहरण के लिए जमा ब्याज दरों) में वृद्धि उत्पादन में किसी परिवर्तन को प्रेरित नहीं करती, परंतु उत्पादन की कीमतों (अर्थात एक पूर्ण रूप से लचीली माँग की धारणा के अंतर्गत) में आनुपातिक वृद्धि को प्रेरित करती है। इसके स्थान पर एकाधिकारी प्रतियोगिता के साथ, अथवा स्पर्धायोग्य बाजारों की ओर मार्ग प्रशस्त करनेवाले संभावित प्रवेश के साथ राजस्व आनुपातिक तौर की तुलना में कम बढ़ेंगे, क्योंकि बैंकिंग उत्पादों के लिए अलग-अलग बैंकों के समक्ष विद्यमान मांग पूर्ण रूप से लचीले स्तर से कम है। हाल के वर्षों में किये गये अनेक अध्ययनों ने बैंकिंग क्षेत्र को पी-आर कार्यपद्धति प्रदान की है। एकल बैंक स्तर पर राजस्व के लघुकृत रूप के समीकरण के आधार पर बाजार की शक्ति एच-सांख्यिकी से अनुमानित की जाती है जो उस सीमा की माप करती है जहाँ तक उपादान कीमतों में परिवर्तन बैंकों के राजस्व में प्रतिबिंबित होते हैं। यदि बाजार पूर्ण रूप से प्रतियोगी है, तो उपादान कीमतों में वृद्धि राजस्वों को समान आनुपातिक तौर पर बढ़ाती है तथा एच-सांख्यिकी को चाहिए कि वह 1 के समान मूल्य ग्रहण करे। दूसरी ओर, एकाधिकारी प्रतियोगिता की "मध्यवर्ती" स्थिति में एच-सांख्यिकी राजस्वों में आनुपातिक तौर से कम वृद्धि के लिए प्रेरित करनेवाली निविष्टि कीमतों में वृद्धि के साथ 0 और 1 के बीच का मूल्य ग्रहण करती है क्योंकि अलग-अलग बैंकों के समक्ष विद्यमान बैंक उत्पादों के लिए माँग लोचहीन है। उस स्थिति में एक ऋणात्मक एच उत्पन्न होता है जब बाजार की संरचना एकाधिकार अथवा पूर्ण दुरभिसंधिपूर्ण अल्पाधिकार से युक्त है (रोजास, 2007)। प्रतियोगिता-योग्य बाजार भी एकता के समकक्ष एक इरा एच-सांख्यिकी उत्पन्न करते हैं।

चूँकि पी-आर एक स्थिर दृष्टिकोण है, अतः प्रायोगिक कार्यान्वयन की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि जाँच अवश्य ऐसे प्रेक्षणों पर की जानी चाहिए जो दीर्घकालिक संतुलन में हैं। पूर्व के अध्ययनों में दीर्घकालिक संतुलन के लिए जाँच के अंतर्गत चर वस्तु (वेरिएबल) के रूप में राजस्वों के स्थान पर ईक्विटी/आस्तियों (आरओई अथवा आरओए) पर प्रतिलाभ जैसे माप का प्रयोग करते हुए लाभप्रदता के लघुकृत रूप वाले समीकरण में एच-सांख्यिकी की गणना को संबद्ध किया गया। यह अपेक्षा की गई थी कि परिणामी एच संतुलन में उल्लेखनीय रूप में शून्य के समान हो, तथा विसंतुलन की स्थिति में उल्लेखनीय रूप में ऋणात्मक हो। समग्र रूप में, पी-आर मॉडल को बाजार की स्थितियों का आकलन करने के लिए एक मूल्यवान उपकरण के रूप में माना जाता है।

पूर्व में किये गये पी-आर मॉडल के अधिकांश प्रायोगिक अनुमान विकसित देशों के लिए किये गये थे, तथा हाल में अनेक अध्ययनों में विकासशील और संक्रमणशील देशों में बैंकिंग उद्योग की प्रतियोगिता की मात्रा और बाजार संरचना का परिमाणात्मक आकलन करने के लिए इस कार्यपद्धति का उपयोग किया गया। सामान्य तौर पर इन सभी अध्ययनों में यह पाया गया है कि बैंकिंग बाजार का सर्वोत्तम अंकन एकाधिकारी प्रतियोगिता के रूप में किया गया है। 1996-2004 की अवधि के लिए अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के संबंध में वार्षिक आंकड़ों का उपयोग करते हुए प्रसाद और घोष (2005) ने यह पाया कि भारतीय बैंकिंग प्रणाली प्रतियोगी स्थितियों में परिचालन करती है तथा राजस्वों को इस प्रकार अर्जित करती है मानो एकाधिकारी प्रतियोगिता के अंतर्गत हो।

भारतीय बैंकिंग प्रणाली के संदर्भ में एच-सांख्यिकी की गणना करने के एक प्रयास में बैंक राजस्व कार्य के लिए समीकरण के निम्नलिखित लघुकृत रूप का अनुमान लगाया गया :

$$Ln(TREV) = \alpha 0 + \alpha 1\ Ln\ PL + \alpha 2\ LnPK + \alpha 3\ Ln\ PF + \alpha 4\ Ln\ EQ + \alpha 5\ Ln\ Size + \alpha 6\ Ln\ LO$$

जहाँ :

TREV कुल आस्तियों की तुलना में कुल राजस्व का अनुपात है, PL कुल आस्तियों के प्रतिशत के रूप में कर्मचारियों की तुलना में कार्मिक व्ययों का अनुपात है, PK पूँजी की यूनिट कीमत के लिए परोक्षी के रू प में प्रयुक्त कुल आस्तियों की तुलना में अन्य व्ययों का अनुपात, एवं PF कुल आस्तियों की तुलना में वार्षिक ब्याज व्ययों का अनुपात हैं। कई बैंक-विशिष्ट उपादान भी आकार, जोखिम, और क्षमता के अंतरों का हिसाब देने के लिए नियंत्रण संबंधी चर वस्तुओं (वेरिएबल्स) के रूप में शामिल किये गये। इनके आकार का माप कुल आस्तियों, पूँजी की संरचना में अंतर हेतु नियंत्रण करने के लिए आस्तियों की तुलना में पूँजी के अनुपात (EQ), एवं वित्तीय मध्यस्थता की मात्रा के लिए परोक्षी के रूप में कुल आस्तियों की तुलना में ऋण के अनुपात (LO) के रूप में किया गया । P-R ढाँचे के अंतर्गत एच-सांख्यिकी तीन निविष्टि कीमतों अर्थात् $H = a1 + a2 + a3$ के संबंध में राजस्व की मूल्य-सापेक्षताओं (एलैस्टिसिटीज) के योग के समान है। एकाधिकारी प्रतियोगिता के लिए परीक्षणयोग्य परिकल्पना $0 < H < 1$ है, जबकि $H \leq 0$ एकाधिकार है। एक सममित (सिमेट्रिक) एकाधिकारी प्रतियोगी बाजार में $0 < H < 1$। इस बात पर बल देने की आवश्यकता है कि न केवल H का संकेत महत्वपूर्ण है, बल्कि उसका विस्तार भी समान रू प से महत्वपूर्ण है (पांजार और रोस, 1987)।

1990 से 2007 तक की अवधि के लिए एच-सांख्यिकी का अनुमान 5-वर्ष के आवर्ती समाश्रयणों (रोलिंग रेग्रेशन्स) का प्रयोग करते हुए किया गया। निधियों (PF) की यूनिट लागत का एक धनात्मक संकेत था तथा 1 प्रतिशत के स्तर पर वह सांख्यिकीय रू प से महत्वपूर्ण था। साथ ही, PL महत्व के परंपरागत

स्तरों पर महत्वपूर्ण पाया गया। प्रसाद और घोष (2005) के निष्कर्षों की पुष्टि करते हुए उक्त परिणामों से यह विदित हुआ कि निधियों की कीमत का अंशदान ब्याज राजस्वों की व्याख्या के प्रति (और इसलिए एच सांख्यिकी के प्रति) सबसे अधिक था तथा उसके बाद श्रम की कीमत का स्थान रहा। उक्त एच-सांख्यिकी 0.8 और 0.45 के दायरे में रही जिसके संबंध में मूल्य ने प्रारंभ में गिरावट दर्शाई और उसके बाद उसमें वृद्धि हुई (चार्ट)। ऐसा प्रतीत होता है कि बैंक प्रतियोगिता खास तौर से 2000 के बाद की अवधि में मजबूत हुई है। चूंकि एच सांख्यिकी को दोनों 0 और 1 से उल्लेखनीय रूप में भिन्न पाया गया है, अतः एकाधिकार और पूर्ण प्रतियोगिता की परिकल्पनाएं अस्वीकृत की गई हैं और इस धारणा का समर्थन करती हैं कि भारतीय बैंक अपने राजस्वों का अर्जन एकाधिकारी प्रतियोगिता के अंतर्गत करते हैं जो स्थिति अधिकांश विकसित देशों और अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में भी विद्यमान है। तथापि, साहित्य का एक सर्वेक्षण यह दर्शाता है कि चीन, हांगकांग, कुवैत, संयुक्त अरब अमीरात और सऊदी अरब में बैंकिंग क्षेत्र लगभग पूर्ण प्रतियोगिता की परिस्थितियों के अंतर्गत परिचालन करते हैं (सारणी क)। चीन के मामले में युआन (2006) यह तर्क देते हैं कि चीन में छोटे बैंक अपेक्षाकृत नये हैं, तथा वे अंतरराष्ट्रीय बैंकों के प्रबंधकीय अनुभव का अध्ययन करने के चरण में हैं, और इसके अलावा, वे राज्य द्वारा सुरक्षित नहीं हैं। परिणामस्वरूप, छोटे बैंकों के बीच प्रतियोगिता इतनी अधिक है कि वह पूर्ण प्रतियोगिता के करीब है। इसी प्रकार, चीन के बड़े बैंक व्यवसायों का परिचालन अंतरराष्ट्रीय पैमाने पर करते हैं तथा अंतरराष्ट्रीय बाजार में अन्यों के साथ प्रतियोगिता करते हैं और काफी अधिक प्रतियोगी स्थितियों में भी कार्य करते हैं।

इसके अलावा, चूँकि यह प्रत्याशा की जाती है कि बाजार का संचालन बाजार की संरचना से प्रभावित होता है, भारत के लिए एच-सांख्यिकी तथा संकेन्द्रण के विभिन्न उपायों के बीच संबंध अनुमानित था। जैसाकि प्राथमिक सैद्धांतिक तर्कों से प्रत्याशित है, संकेन्द्रण अनुपातों और सूचकांक के सभी मापों का एच-सांख्यिकी के साथ एक ऋणात्मक संबंध था, जिससे यह संकेत मिलता है कि बैंकिंग आस्तियों के संकेंद्रण की मात्रा जितनी अधिक होगी, प्रतियोगिता की मात्रा उतनी ही कम होगी। फिर भी, उक्त संबंध केवल तीन सबसे बड़े बैंकों के संकेंद्रण अनुपात के साथ परंपरागत स्तर पर सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण था। कुल आस्तियों में निजी क्षेत्र के अंश के साथ संबंधों को बढ़ाने पर यह पाया गया कि उक्त ऋणात्मक संबंध 'सीआर10' को छोड़कर संकेंद्रण अनुपातों के सभी उपायों के लिए सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण थे (सारणी ख)। सारांश के रूप में भारतीय बैंकिंग उद्योग में प्रतियोगिता का स्तर सबसे बड़े तीन से पाँच बैंकों के पास स्थित आस्तियों के संकेंद्रण द्वारा प्रभावित था।

**चार्ट : 5-वर्षीय आवर्ती समाश्रयणों (रोलिंग रिग्रेशन्स) से प्राप्त एच-सांख्यिकी : भारतीय संदर्भ**

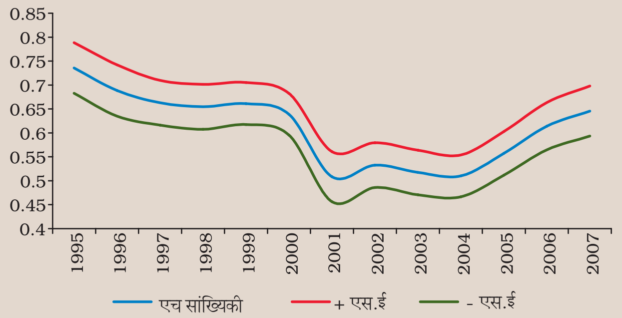


**सारणी क : विभिन्न देशों में एच सांख्यिकी**

| देश | अवधि | एच सांख्यिकी | अध्ययन |
|---|---|---|---|
| अर्जेन्टीना | 1997-99 | 0.87 | यिलद्रिम और फिलिप्पटोस, 2005 |
| बहरीन | 1993-2002 | 0.70 | मुहर्रमी, मैथ्यूस और खबरी, 2006 |
| ब्राजील | 1997-99 | 0.71 | यिलद्रिम और फिलिप्पटोस, 2006 |
| चिली | 1997-99 | 0.62 | यिलद्रिम और फिलिप्पटोस, 2007 |
| चीन | 2000 | 0.95 | युआन, 2006 |
| जर्मनी | 1993-2002 | 0.43 | गिश्चेर और स्टीएल, 2004 |
| हांगकांग | 1992-2002 | 0.98 | जियांग, वांग, तांग और स्जे, 2004 |
| भारत | 1996-2004 | 0.37 | प्रसाद और घोष, 2005 |
| कोरिया | 2005 | 0.47 | ली और ली, 2005 |
| कुवैत | 1993-2002 | 1.02 | मुहर्रमी, मैथ्यूस और खबरी, 2006 |
| मलेशिया | 2002-05 | 0.73 | मजीद और सूफियान, 2006 |
| मेक्सिको | 1993-2005 | 0.50 | मउडोस और सोलिस, 2007 |
| क़तार | 1993-2002 | 1.02 | मुहर्रमी, मैथ्यूस और खबरी, 2006 |
| सऊदी अरब | 1993-2002 | 0.63 | मुहर्रमी, मैथ्यूस और खबरी, 2006 |
| स्पेन | 1986-2005 | 0.57 | रोज़ास, 2007 |
| संयुक्त अरब अमीरात | 1993-2002 | 1.00 | मुहर्रमी, मैथ्यूस और खबरी, 2006 |
| यूके | 1992-2004 | 0.46 | मैथ्यूस, मुरिंडे और झाओ, 2007 |
| अमरीका | 1976-2005 | 0.61 | यिलद्रिम और मोहंती, 2007 |
| अमरीका | 1996-2005 | 0.44 | यिलद्रिम और मोहंती, 2007 |

**सारणी ख : भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में प्रतियोगिता और संकेंद्रण अनुपातों के बीच संबंध**

(आश्रित वेरिएबल एच सांख्यिकी)

| | एचएचआइ | सीआर3 | सीआर5 | सीआर10 |
|---|---|---|---|---|
| स्थिर | 1.08<br>(3.0)* | 1.96<br>(2.7)* | 1.85<br>(2.2)* | 1.90<br>(2.1)* |
| संकेंद्रण सूचकांक | -7.95<br>(-17.4)* | -4.2<br>(-2.0)* | -3.0<br>(-1.6) | -2.34<br>(-1.6) |
| आर $^2$ | 0.16 | 0.20 | 0.14 | 0.14 |

कोष्ठक में आंकड़े टी-सांख्यिकी हैं। *: पारंपरिक स्तरों पर महत्वपूर्ण।

**संदर्भ :**

गुटिएरेज द रोजास, लुई. 2007। "टेस्टिंग फर कम्पीटीशन इन द स्पैनिश बैंकिंग इंडस्ट्री : दी पांजार-रोस अप्रोच रीविजिटेड"। *बैंको द एस्पाना रिसर्च पेपर* सं. डब्ल्यूपी-0726, अगस्त।

पांजार, जे और रोस. जे. 1987। "टेस्टिंग फॉर मोनोपोली ईक्विलीब्रियम"। *जर्नल ऑफ़ इंडस्ट्रियल इकोनॉमिक्स,* खंड 35, पृष्ठ 443-56।

प्रसाद ए. और घोष. 2005। "कम्पीटीशन इन इंडियन बैंकिंग", *आइएमएफ वर्किंग पेपर* सं. डब्ल्यूपी/05/141।

8.55 भारतीय संदर्भ में किये गये कुछ अध्ययनों ने पाया कि सुधारोत्तर अवधि के दौरान बैंक विलयों ने विलय होनेवाले बैंकों के लिए कार्यकुशलता की वृद्धि हेतु मार्ग प्रशस्त किया। उक्त विलयों ने अपने आप में कार्यकुशलता के लाभों की भारी संभावना दर्शाई। इन लाभों का अधिकतर अंश विभिन्न, परंतु संबंधित उत्पाद मिश्रणों के समक्रमण से उत्पन्न हुआ। गाउरले आदी (2006) ने पाया कि भारत में संकटग्रस्त और मजबूत बैंकों के बीच विलयों में समय के साथ कार्यकुशलता की निरंतरता प्रदर्शित करने की प्रवृत्ति रही। दूसरे शब्दों में आर्थिक नीतिगत सुधारों ने कमजोर और अकुशल बैंकों का विलय अधिक मजबूत बैंकों के साथ करते हुए उनकी छँटाई करने में सफलता पाई है। तथापि, ऐसा प्रतीत नहीं हुआ कि आश्रयी (इनकम्बेन्ट) मजबूत बैंकों ने अपनी कार्यकुशलता को बढ़ाने के लिए एमएण्डए के मार्ग को अपनाया हो।

8.56 एमएण्डए का एक लक्ष्य लागत को घटाने या राजस्व को बढ़ाने अथवा दोनों के संयोजन द्वारा कार्यकुशलता को बढ़ाना है जैसा कि पहले संकेत किया गया है। एमएण्डए से उत्पन्न होनेवाले कार्यकुशलता के लाभों का विश्लेषण विलय से पूर्व और विलय के बाद की अवधियों के बीच आस्तियों पर प्रतिलाभ और परिचालन लागत के रूप में कार्यनिष्पादन के अनुपातों की तुलना द्वारा किया जा सकता है। एमएण्डए का लाभ कुशलता प्रभाव सबसे अधिक सम्मिलनकारी है। वह दोनों लागतों और राजस्वों के लिए मान, व्याप्ति, उत्पादों के मिश्रण और एक्स-कुशलता (प्रभावात्मकता जिसके साथ निविष्टियों के विशिष्ट सेट का प्रयोग उत्पादन के उत्पाद के लिए किया जाता है) के प्रभावों को अपने में सम्मिलित करता है तथा विविधीकरण के भी कम से कम कुछ प्रभावों को शामिल करता है। भारत में बैंक विलयों के लिए, आस्तियों पर प्रतिलाभ में वृद्धि और लागत में कमी दोनों के तौर पर कार्यकुशलता के लाभ केवल सरकारी क्षेत्र के बैंकों के विषय में ही पाये गये हैं। इस प्रकार के लाभ निजी क्षेत्र की संस्थाओं के विलय के संबंध में नहीं पाये गये (बॉक्स VIII.7)।

8.57 बैंकिग क्षेत्र के सुधारों के परिणामस्वरूप, सुधारों के बाद की अवधि में भारत में समग्र बैंकिंग क्षेत्र के कार्यनिष्पादन में सामान्य तौर पर

## बॉक्स VIII.7
## एमएण्डए से कार्यकुशलता के लाभ : चयनित बैंकों का एक वृत्त अध्ययन

भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में सुधारों के बाद की अवधि के दौरान 21 विलय और समामेलन हुए हैं। इनमें से अपेक्षाकृत बड़े बैंकों को शामिल कर किए गए विलय के सात मामलों को चुना गया। विलय के बाद की अवधि में नमूने के बैंकों में लाभप्रदता/कार्यकुशलता के संकेतकों में परिवर्तन की जाँच करने के लिए वाल्ड परीक्षण किया गया। वाल्ड परीक्षण एक सांख्यिकीय जाँच है जिसका प्रयोग विशिष्ट रूप से यह निर्धारित करने के लिए किया जाता है कि कोई प्रभाव अस्तित्व में है या नहीं। इस परीक्षण के अंतर्गत हित के मानदंड (मानदंडों) की अधिकतम संभावना अनुमान $\theta$ की तुलना प्रस्तावित मूल्य $\theta_0$ (वर्तमान संदर्भ में शून्य) से इस धारणा के साथ की जाती है कि $\theta$ और $\theta_0$ के बीच का अंतर लगभग सामान्य होगा। विशिष्ट रूप से अंतर के वर्गफल (स्क्वेअर) की तुलना काइ-स्क्वेअर्ड वितरण से की जाती है । दो वेरिएबल अर्थात् आस्तियों पर प्रतिलाभ और आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत का अनुपात चुने जाते हैं। उक्त तथ्य के होते हुए यह परिकल्पना की जाती है कि विलय/समामेलन सहक्रिया के प्रभावों के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं, विलय के बाद की अवधि के दौरान आस्तियों पर प्रतिलाभ के बढ़ने का अनुमान किया जाता है जबकि आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत के अनुपात के घटने की प्रत्याशा की जाती है। उक्त मानदंड में वृद्धि/कमी के सांख्यिकीय महत्व का अनुमान $X^2$ सांख्यिकी के तदनुरूपी पी-मूल्य से लगाया जा सकता है।

प्राथमिक प्रत्याशाओं के अनुसार यह पाया गया कि विलय से पहले की अवधि की तुलना में विलय के बाद की अवधि में आस्तियों पर औसत प्रतिलाभ में परिवर्तन धनात्मक था और सरकारी क्षेत्र के बैंकों के विषय में सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण था, जबकि निजी क्षेत्र के दो बैंकों के मामले में धनात्मक, परंतु महत्वहीन था। निजी क्षेत्र के एक बैंक के मामले में आस्तियों पर औसत प्रतिलाभ विलय के बाद घट गया।

विलय के बाद की अवधि के दौरान परिचालन लागत-आस्ति अनुपात के माध्यम से मापे गए परिचालन व्यय में गिरावट के रूप में कार्यकुशलता के लाभ भी सरकारी क्षेत्र के चुनिंदा चार में से तीन बैंकों के मामले में उल्लेखनीय पाये गये। दूसरी ओर, निजी क्षेत्र के बैंकों के नमूने के संबंध में यह पाया गया कि परिचालन लागत-आस्ति अनुपात का औसत विलय के बाद अधिक था, यद्यपि सांख्यिकीय तौर पर महत्वपूर्ण नहीं था, जिससे यह विदित होता है कि ये बैंक विलयों और अभिग्रहणों से उत्पन्न होनेवाले परिचालन व्यय के तौर पर कार्यकुशलता के लाभ प्राप्त नहीं कर सके (सारणी)। इस प्रकार विलय के बाद की अवधि के दौरान निजी क्षेत्र के बैंकों की अपेक्षा सरकारी क्षेत्र के बैंक कार्यकुशलता के गुरुतर लाभ प्राप्त कर सके हैं।

### सारणी : भारत में विलयित बैंकों में कार्यकुशलता के संकेतकों का परीक्षण

पैनल क : विलय के पहले और उसके बाद आस्तियोंपर में प्रतिलाभ (आरओए) में परिवर्तन : वाल्ड परीक्षण*

| बैंक | Δ आरओए | $X^2$ सांख्यिकी | म/म.न. |
|---|---|---|---|
| पंजाब नैशनल बैंक | 0.57 | 25.34 | म |
| यूनियन बैंक ऑफ इंडिया | 0.49 | 15.68 | म |
| ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स | 0.7 | 13.62 | म |
| बैंक ऑफ बड़ौदा | 0.53 | 12.5 | म |
| एचडीएफसी बैंक | -0.4 | 1.33 | म.न. |
| आइसीआइसीआइ बैंक | 0.04 | 0.02 | म.न. |
| सेंचुरियन बैंक ऑफ पंजाब | 0.52 | 0.26 | म.न. |

पैनल ख : विलय के पहले और उसके बाद परिचालन व्यय-आस्ति अनुपात(ओपी) में परिवर्तन : वाल्ड परीक्षण

| बैंक | Δ आरओए | $X^2$ सांख्यिकी | म/म.न. |
|---|---|---|---|
| पंजाब नैशनल बैंक | 0.46 | 15.69 | म |
| यूनियन बैंक ऑफ इंडिया | -0.84 | 54.61 | म |
| ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स | -0.83 | 12.97 | म |
| बैंक ऑफ बड़ौदा | -0.21 | 6.71 | म |
| एचडीएफसी बैंक | 0.34 | 1.0 | म.न. |
| आइसीआइसीआइ बैंक | 0.21 | 0.45 | म.न. |
| सेंचुरियन बैंक ऑफ पंजाब | 1.44 | 2.7 | म.न. |

**टिप्पणी :** म/म.न. : महत्वपूर्ण/महत्वपूर्ण नहीं ।

सुधार रहा है। अतः यह संभव है कि ऊपर बताये अनुसार चयनित अंतरिती बैंकों की विलय से पहले और विलय के बाद की कार्यकुशलता में अंतर बैंकिंग क्षेत्र में समग्र सुधार के परिणामस्वरूप थे और विलयों के कारण नहीं थे। विलयों से कार्यकुशलता में लाभ/हानि की जाँच करने के लिए विलय के बाद की अवधि में चयनित अंतरिती बैंकों के आस्ति पर प्रतिलाभ के अनुपातों की तुलना उनके संबंधित बैंक समूहों की आस्ति पर प्रतिलाभ से की गई। यह पाया गया कि सरकारी क्षेत्र के अधिकांश बैंकों के मामले में, जिनके साथ अन्य बैंकों का विलय किया गया, आस्ति पर प्रतिलाभ के अनुपात विलय से पहले और विलय के बाद दोनों अवधियों में उनके समूह के औसत से अधिक थे (चार्ट VIII.3)। इस प्रकार इसका अर्थ यह लगाया जा सकता है कि कार्यकुशलता में हुए लाभ विलयों के माध्यम की तुलना में उद्योग में सामान्य सुधार के कारण अधिक थे।

8.58 सारांश के तौर पर एमएण्डए की गतिविधि में सुधारों के बाद की अवधि में, विशेष रूप से 1999 के बाद गति आई । फिर भी, विलयों/समामेलनों के साथ ही नये निजी और विदेशी बैंक भी अस्तित्व में आए। कुल मिलाकर बैंकों की संख्या 1998-99 तक बढ़ी, परंतु उसके बाद प्रति वर्ष घटती रही। चूँकि विलय/समामेलन अधिकांशतः अपेक्षाकृत छोटे बैंकों के बीच थे अथवा वित्तीय रूप से कमजोर बैंकों का अधिग्रहण मजबूत बैंकों द्वारा किया गया था, अतः भारतीय बैंकिंग प्रणाली में प्रतियोगिता के स्तर में सुधार आया, भले ही बैंकों की कुल संख्या में 1998-99 के बाद गिरावट रही। यह सुधार संकेंद्रण अनुपातों और प्रतियोगिता के संकेतकों के विभिन्न मापों में उजागर हुआ। भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में संकेंद्रण कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में उल्लेखनीय रूप में कम पाया गया। कई अन्य उन्नत देशों और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की तरह भारतीय बैंकिंग उद्योग एकाधिकारी प्रतियोगी स्थितियों के अंतर्गत परिचालित रहा। तथापि, कार्यकुशलता पर विलयों के प्रभाव में भिन्नता थी। जिन सरकारी क्षेत्र के बैंकों के साथ निजी क्षेत्र की संस्थाओं का विलय हुआ, उनकी आस्तियों पर प्रतिलाभ एवं आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत दोनों द्वारा मापी गई कार्यकुशलता में सुधार पाया गया। फिर भी, इस प्रकार के लाभ निजी क्षेत्र की संस्थाओं के संबंध में नहीं देखे गये।

## VI. भारत में समेकन और प्रतियोगिता में विद्यमान समस्याएँ

8.59 भारतीय बैंकिंग क्षेत्र एक नाजुक दौर से गुजर रहा है। बैंकिंग क्षेत्र को प्रतियोगी बनाने के लिए किये गये विभिन्न उपायों से अपेक्षित परिणाम प्राप्त हुए। तथापि, इस संधिकाल में भारतीय बैंकिंग क्षेत्र के सामने कई चुनौतियाँ और समस्याएँ भी विद्यमान हैं। ये अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित से संबंधित हैं । (i) समेकन की प्रक्रिया जो चालू है उसकी भावी दिशा क्या होनी चाहिए ? (ii) क्या परिवर्तित आर्थिक

**चार्ट VIII.3 : संबंधित बैंक समूह की तुलना में चयनित विलयित बैंकों की आस्तियों पर प्रतिलाभ (आरओए)**

परिवेश में सरकारी क्षेत्र के बैंकों को निजी क्षेत्र में लाने की आवश्यकता है ? (iii) क्या बैंकिंग क्षेत्र विदेशी बैंकों के साथ अधिकाधिक प्रतियोगिता में सम्मिलित होने के लिए तैयार है ? तथा (iv) क्या औद्योगिक घरानों को बैंकिंग क्षेत्र में पदार्पण करने के लिए अनुमति दी जानी चाहिए ? ये प्रश्न बैंकिंग क्षेत्र के भविष्य के लिए गंभीर जटिलताओं से युक्त तात्विक स्वरूप के हैं । इनका परीक्षण इस खंड में विस्तार से किया गया है, जबकि अगले खंड में भविष्य की दृष्टि से विशिष्ट सुझाव दिये गये हैं ताकि सुदृढ़ रूप में बैंकिंग क्षेत्र की भावी वृद्धि को सुनिश्चित किया जा सके।

## समेकन और प्रतियोगिता

8.60 इस प्रश्न के संबंध में व्यापक बहस की गई है कि भारतीय संदर्भ में समेकन का स्वरूप और सीमा क्या होनी चाहिए। भारतीय बैंकिंग प्रणाली में समेकन की आवश्यकता वित्तीय प्रणाली संबंधी समिति (सीएफएस) (अध्यक्ष : श्री एम. नरसिंहम) द्वारा 1991 में रेखांकित की गई थी। उक्त सीएफएस ने यह तर्क दिया कि वैश्विक वित्तीय क्षेत्र में उभरती हुई प्रवृत्तियों को देखते हुए बैंकों के बीच तथा बैंकों और बैंकेतर संस्थाओं के बीच विलय आर्थिक और वाणिज्यिक बोध को जागृत करेंगे तथा अंशों के योग की तुलना में संपूर्ण को बृहत्तर होना चाहिए एवं उसका एक "शक्ति गुणक प्रभाव" होना चाहिए। उक्त सीएफएस ने एक संभावित संरचना की सिफारिश की जिसकी दिशा में आगे चलकर बैंकिंग प्रणाली विकसित हो सकती है। सिफारिश की गई उक्त संरचना के अंतर्गत तीन से चार बड़े बैंकों (भारतीय स्टेट बैंक सहित) की एक अंतरराष्ट्रीय उपस्थिति हो सकती है, जबकि आठ से दस राष्ट्रीय बैंक देश भर में शाखाओं के नेटवर्क के साथ सामान्य अथवा सर्वव्यापी बैंकिंग में लिप्त हो सकते हैं। उसने स्थानीय बैंकों के लिए भी सिफारिश की जिनके परिचालन विशिष्ट क्षेत्रों तक सीमित होंगे तथा ग्रामीण बैंकों (क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों सहित) के लिए भी सिफारिश की जिनके परिचालन ग्रामीण क्षेत्रों तक सीमित होंगे और जिनका व्यवसाय प्रधानतः कृषि और संबंधित कार्यकलापों का वित्तपोषण होगा।

8.61 बैंकिंग क्षेत्र सुधार संबंधी समिति (सीबीएसआर)(अध्यक्ष : श्री एम. नरसिंहम) ने 1998 में देशी और अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिता के एक प्रभावी साधन के लिए कुछ बृहत् बैंकों के निर्माण के संबंध में सीएफएस की सिफारिशों को दुहराया। बैंकिंग में विद्यमान वैश्विक प्रवृत्तियों का संज्ञान लेते हुए जो समेकन और अभिसरण (कन्वर्जन्स) के जुड़वे परिदृश्यों द्वारा सुस्पष्ट हैं, उक्त सीबीएसआर ने विलयों के महत्व पर बल दिया तथा सरकारी क्षेत्र के 27 बैंकों की आवश्यकता पर प्रश्न उठाया। उसने बैंकों के लिए ऐसे आकार के होने की आवश्यकता को रेखांकित किया जो बैंकिंग परिचालनों को अधिकाधिक प्रतियोगी बल प्रदान कर सके। तथापि, उक्त समिति ने इस बात पर जोर दिया कि सरकारी क्षेत्र के बैंकों में समेकन की प्रक्रिया के लिए इस बात की आवश्यकता है कि वे सहक्रियाओं, तथा स्थान संबंधी और व्यावसायिक रूप से विशिष्ट पूरकताओं पर आधारित हों, जो उभरती हुई परिस्थितियों के अनुकूल अपने आपको ढालने में उनकी सहायता करेंगी। उक्त सीबीएसआर द्वारा रेखांकित किया गया एक महत्वपूर्ण तत्व यह था कि भारतीय सरकारी क्षेत्र के बैंकों में विलय की प्रक्रिया बैंकों के प्रबंधक-वर्ग से प्रारंभ होनी चाहिए जिसमें सरकार को एक समर्थक भूमिका अदा करते हुए एक सामान्य शेयरधारक के रूप में होना चाहिए। सरकारी क्षेत्र के कमजोर बैंकों की पुनर्संरचना संबंधी कार्यदल (अध्यक्षः श्री एम. एस. वर्मा) ने भी 1999 में जारी की गई अपनी रिपोर्ट में भारतीय बैंकिंग प्रणाली की एक व्यापक पुनर्संरचना की आवश्यकता पर बल दिया जिसके लिए भारतीय बैंकों के विलय अथवा समापन तथा उनके निजीकरण के संबंध में सावधानीपूर्वक विचार करने की अपेक्षा होगी।

8.62 वैश्विक प्रतियोगिता का सामना करने के लिए भारतीय बैंकों के आकार की अपर्याप्तता को रेखांकित करते हुए 2005-06 के अपने बजट भाषण में केंद्र के वित्त मंत्री द्वारा भी भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में समेकन की आवश्यकता पर जोर दिया गया। यह तर्क भी दिया गया कि विश्व भर में बैंकिंग क्षेत्र में समेकन के प्रचलन और उसकी सफलता एवं वैश्वीकरण द्वारा उत्पन्न अनिवार्यताएँ निकट भविष्य में भारतीय वित्तीय प्रणाली में समेकन को अधिक सुस्पष्ट बनाएँगी। 2003 में जारी भारतीय बैंक संघ की "बैंकिंग उद्योग : परिदृष्टि 2010" संबंधी रिपोर्ट में यह स्पष्ट रूप से परिकल्पित किया गया कि सरकारी क्षेत्र के बैंकों के बीच, अथवा सरकारी क्षेत्र के बैंकों और निजी क्षेत्र के बैंकों के बीच विलय अगली तर्कपूर्ण घटना हो सकती है क्योंकि बाजार के सहभागी प्रतियोगिता की दौड़ में बने रहने के लिए अपनी स्थिति को मजबूत करने की प्रवृत्ति दर्शाते हैं। तथापि, उक्त रिपोर्ट में यह भी बताया गया कि विलय अथवा बड़ा आकार केवल सहायक मात्र है, परंतु निरंतर आधार पर सुधारित लाभप्रदता के लिए कोई गारंटी नहीं है। बल तो जोखिम प्रबंध की क्षमताओं, कारपोरेट अभिशासन और अनुकूल व्यावसायिक आयोजना सुधार लाने पर होना चाहिए। अल्पकालिक तौर पर बाहर की एजेंसियों से काम करवाने (आउटसोर्सिंग) और रणनीतिगत संबंधों जैसे विकल्पों का प्रयास एक सार्थक तरीके से किया जा सकता है।

8.63 बैंकिंग समेकन की प्रक्रिया के संदर्भ में पूर्णतर पूँजी लेखा परिवर्तनीयता संबंधी समिति (एफसीएसी) की रिपोर्ट में यह पाया गया कि कुछ छोटे बैंक जो व्यवयाय के कुछ क्षेत्रों अथवा प्रांतों में विशेषज्ञता प्राप्त हैं, अपनी मुख्य क्षमता के बल पर बड़े बैंकों के मुकाबले तुलनात्मक तौर पर एक सुविधाजनक स्थिति में हो सकते हैं। इस स्थिति के होते हुए, केवल विलयों के द्वारा अपेक्षाकृत बड़े बैंकों के समेकन पर बल देने से बैंकिंग प्रणाली के सुदृढ़ीकरण के लिए मार्ग प्रशस्त नहीं होगा। दूसरे शब्दों में, आकार और परिचालनगत कुशलता के बीच कोई अपरिवर्तनीय संबंध नहीं है। एक और मुद्दा जिस पर एफसीएसी संबंधी उक्त समिति द्वारा जोर दिया गया, वह विधायी ढाँचे से संबंधित था। बैंकिंग प्रणाली का लगभग तीन-चौथाई भाग सरकारी क्षेत्र के द्वारा आवृत है। यह अपने आप में एक अवरोध नहीं होना चाहिए, परंतु विधायी ढाँचा एक प्रमुख बाधा है तथा समेकन और अभिशासन के लिए सन्निहित अशक्तताएँ विद्यमान हैं। पहला, सरकारी क्षेत्र के अंतर्गत स्टेट बैंक समूह के लिए विधायी ढाँचा

राष्ट्रीयकृत बैंकों से अलग है। बैंकों की पूँजीगत अपेक्षाएँ बासेल II के संदर्भ में बढ़ेंगी, क्योंकि कुछ जोखिमों के लिए उन्हें पूँजी बनाये रखनी होगी जिनके लिए बासेल I के अंतर्गत कोई पूँजीगत अपेक्षा नहीं होगी। चूँकि बैंकों को वर्तमान की अपेक्षा जोखिमों के अधिकाधिक स्तर का सामना करना होगा, अतः आगे चलकर पूँजीगत अपेक्षा में और भी वृद्धि होगी। उक्त समिति के अनुसार, सरकारी क्षेत्र के बैंकों में बड़े पैमाने पर अतिरिक्त पूँजी का अंतःक्षेपण (इंजेक्शन) करने के लिए सरकार या तो असमर्थ है, अथवा ऐसा करने के लिए अनिच्छुक है; साथ ही, सरकारी क्षेत्र के बैंकों में अधिकांश धारिता को कम करने के लिए सरकार सहमत नहीं थी।

8.64 आगे बढ़ते हुए, भारतीय बैंकिंग प्रणाली को अधिकाधिक प्रतियोगिता का सामना करना पड़ेगा। अतः उक्त समिति ने चेतावनी दी कि सरकारी क्षेत्र के बैंकों के मामले में विनियामक परिहार इस प्रणाली को ज्यादा से ज्यादा कमजोर बनाएगी और इस स्थिति के होते हुए इससे बचना चाहिए। इस संदर्भ में सरकारी क्षेत्र के बैंकों के अधिकांश सरकारी स्वामित्व का प्रश्न सामने आएगा। सरकारी क्षेत्र के सभी बैंकों को "एक-आकार-सबके-योग्य है" के दृष्टिकोण के साथ नहीं होना चाहिए। उक्त समिति ने यह सिफारिश की कि रिज़र्व बैंक को अपनी विवेकसम्मत नीतियाँ ऐसे तरीके से बनानी चाहिए जो बैंकिंग क्षेत्र में समेकन का समर्थक हो। समिति ने यह भी संस्तुति की कि रिजर्व बैंक को न केवल बड़े बैंकों, बल्कि मजबूत और व्यावसायिक रूप से प्रबंधित बैंकों के आविर्भाव को भी सुसाध्य बनाना चाहिए। भारत में बैंकिंग क्षेत्र के विभिन्न खंडों के लिए विभिन्न संविधियों में ऐसे उपबंध निहित हैं जिनसे अच्छे अभिशासन और समेकन में बाधा पहुँचती है। इस प्रकार उक्त समिति ने इस बात पर बल दिया कि सभी वाणिज्य बैंक एक ही बैंकिंग विधान के अधीन होने चाहिए तथा सरकारी क्षेत्र के बैंकों के समूहों के लिए अलग-अलग विधायी ढाँचों का निराकरण किया जाना चाहिए ताकि बैंकिंग क्षेत्र के अंतर्गत अपेक्षाकृत सरल बाजार-संचालित समेकन का संवर्धन किया जा सके।

8.65 इसके अलावा, यह तर्क दिया गया है कि जैसे-जैसे भारतीय वित्तीय प्रणाली के वैश्विक समेकन और बैंकिंग प्रणाली के नियत कार्य में व्यापकता आएगी, वैसे ही यह प्रत्याशा होगी कि बैंकिंग सेवाओं के संबंध में कारपोरेट क्षेत्र यह माँग करेगा कि परिवर्तन न केवल आकार में, बल्कि संरचना और गुणवत्ता में भी होनी चाहिए (रंगराजन, 2007)। इसके लिए बैंकों की संगठनात्मक प्रभावकारिता पर फोकस की अपेक्षा होगी।

8.66 भारत में समेकन के लिए तर्क दो सुस्पष्ट अथवा अंतर्निहित धारणाओं पर आधारित है। एक, भारत में बहुत सारे बैंक हैं। दो, यदि बैंकिंग क्षेत्र का आकलन अंतरराष्ट्रीय संदर्भ में किया जाना है, तो आकार सबसे बड़ा घटक है। यह तर्क दिया जाता है कि किसी बैंक का आकार उसकी जोखिम वहन क्षमता को बढ़ाता है, जिसके लिए सुव्यवस्थित एमएण्डए द्वारा समेकन आवश्यक हो सकता है। अधिक प्रतियोगिता के साथ ही, जैसे जैसे निवल ब्याज मार्जिन कम होते जाएँगे, वैसे वैसे अधिक परिष्कृत उत्पादों और कम लागत वाली प्रौद्योगिकी की आवश्यकता उत्पन्न हो सकती है। यह तर्क दिया जाता है कि इष्टतम से कम आकार के साथ बैंक प्रौद्योगिकी में निवेश नहीं कर सकते तथा इस प्रकार से अपने ग्राहकों की सेवा नहीं कर सकते।

8.67 भारत में प्रति मिलियन व्यक्तियों के लिए जमाराशियाँ स्वीकार करनेवाली संस्थाओं (डीटीआइ) की संख्या कई अन्य देशों में विद्यमान स्थिति से उल्लेखनीय रूप से अधिक है, यद्यपि अर्थव्यवस्था के आकार के सापेक्ष रूप में बैंकिंग क्षेत्र का आकार इन देशों के साथ तुलनीय था। उदाहरण के लिए भारत में एक मिलियन की जनसंख्या पर 110 डीटीआइ थीं जबकि अमरीका में 79, मलेशिया में 65, ब्राजील में 9, चिली में 2 तथा दक्षिण अफ्रीका में एक से अधिक थीं, यद्यपि इन सभी देशों में अर्थव्यवस्था के आकार के सापेक्ष रूप में बैंकिंग क्षेत्र का आकार मोटे तौर पर भारत के साथ तुलनीय था (सारणी 8.9)।

8.68 जहाँ तक आकार का संबंध है, यह कहना कठिन है कि एक बैंक का इष्टतम आकार क्या है, जो देश विशेष के अनुसार (कंट्री-स्पेसिफिक) है तथा अनेक कारकों पर निर्भर है जैसे देयताओं की संरचना, ऋण-जमा (सीडी) अनुपात, आस्तियों की गुणवत्ता, तथा ब्याज आय की तुलना में शुल्क का अनुपात। प्रणाली में छोटे बैंकों का भी एक स्थान है क्योंकि वे कुछ विशिष्ट क्षेत्रों की आवश्यकताएँ पूरी करते हैं। यह ध्यान में रखा जा सकता है कि विकसित देशों में भी छोटे और मध्यम आकार वाले बैंक बड़े बैंकों के साथ बने रह सके हैं। यह कहने के बाद यह महसूस किया जाता है

**सारणी 8.9 : अर्थव्यवस्था के आकार की तुलना में बैंकिंग प्रणाली का आकार**

| देश | डीटीआइ की संख्या प्रति मिलियन व्यक्ति 1999 | जीडीपी की तुलना में बैंक आस्तियों का अनुपात (2006) |
|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 |
| **भारत*** | **110** | **0.58** |
| इंडोनेशिया | 48 | 0.33 |
| कोरिया | 80 | 1.02 |
| मलेशिया | 65 | 1.17 |
| थाईलैंड | 80 | 0.99 |
| अर्जेन्टीना | 3 | 0.26 |
| ब्राजील | 9 | 0.72 |
| चिली | 2 | 0.63 |
| मेक्सिको | 0.4 | 0.30 |
| दक्षिण अफ्रीका | 1.4 | 0.77 |
| जापान | 5 | 1.55 |
| यूके | 9 | 1.64 |
| अमरीका | 79 | 0.63 |

* : भारत के लिए, डीटीआइ में केवल अनुसूचित वाणिज्य बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, शहरी सहकारी बैंक, ग्रामीण सहकारी संस्थाएँ और जमाराशियाँ स्वीकार करनेवाली गैर-बैंक वित्तीय कंपनियाँ शामिल हैं।

डीटीआइ : जमाराशियाँ स्वीकार करनेवाली संस्थाओं में वाणिज्य, बचत और विभिन्न प्रकार के म्युचुअल और सहकारी बैंक, तथा इसी प्रकार की मध्यवर्ती संस्थाएं जैसे बिल्डिंग समितियाँ, थ्रिफ्ट, बचत और ऋण संघ, क्रेडिट संघ, डाक-बैंक और वित्त कंपनियाँ शामिल हैं, परंतु बीमा कंपनियाँ, पेंशन निधियाँ, यूनिट ट्रस्ट और म्युचुअल फंड शामिल नहीं हैं।

**स्रोत :** अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (2001) और विश्व बैंक (2008)।

कि भारत में अनेक वाणिज्य बैंक हैं जो बहुत छोटे हैं। इसका अर्थ यह है कि 53 देशी बैंकों (सरकारी और निजी दोनों) में से मार्च 2007 के अंत में 16 बैंकों का आकार अलग-अलग बैंकिंग क्षेत्र के आकार के 0.5 प्रतिशत से कम था। सरकारी क्षेत्र (राष्ट्रीयकृत बैंक और भारतीय स्टेट बैंक समूह) में भी पाँच बैंकों का अलग-अलग आकार बैंकिंग क्षेत्र के आकार के एक प्रतिशत से कम था तथा अन्य ग्यारह बैंकों का आकार एक और दो प्रतिशत के बीच में था। बाद के अध्याय में किये गये विश्लेषण से भी यह विदित होता है कि सामान्य तौर पर बड़ी संस्थाएँ छोटी संस्थाओं की तुलना में अधिक कार्यकुशल हैं । अतः यह महसूस किया जाता है कि यदि ऐसे बैंक जो छोटे और उतने कुशल नहीं हैं, बड़े और अधिक कुशल बैंकों के साथ समेकित होते हैं तो व्यवस्था की बेहतर सेवा की जा सकती है। इस प्रकार, अब तक अपेक्षाकृत छोटे बैंकों को संबद्ध करते हुए भारतीय बैंकिंग क्षेत्र समेकन की प्रक्रिया में अग्रसर हो चुका है। तथापि, एमएण्डए द्वारा कम कुशल छोटे बैंकों की छँटाई करने अथवा व्यवस्था में निहित अधिक क्षमता को हटाने के लिए इसका संचालन उनकी सहक्रियाओं के आधार पर बाजार द्वारा किया जाना चाहिए। सरकारी क्षेत्र के बैंकों के बीच कोई भी सार्थक समेकन अवश्य अलग अलग बैंकों द्वारा सरकार और विनियामक के साथ वाणिज्यिक उत्प्रेरणा से संचालित किया जाना चाहिए जिससे इस प्रक्रिया को अधिक से अधिक सुसाध्य बनाया जा सके। दूसरे, समेकन की प्रक्रिया का यह अर्थ नहीं है कि छोटे और मध्यम आकार वाले बैंकों का कोई भविष्य नहीं होगा। छोटे, परंतु कुशल बैंकों को टिके रहने में समर्थ होना चाहिए। वास्तव में, भारतीय संदर्भ में छोटे बैंकों को उसी प्रकार एक अधिक सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए जिस प्रकार स्वाभाविक ऋणदाता छोटे व्यवसायों के लिए करते हैं। छोटे और अकुशल बैंक ही परिवर्तित परिवेश का सामना करने में कठिनाई पाएँगे।

8.69 समेकन के तीन पहलू हैं अर्थात् समेकन को नियंत्रित करनेवाली सुस्पष्ट कानूनी और विनियामक व्यवस्था, समर्थक नीतिगत ढाँचा विशेष रूप से जहाँ कई बैंक सरकार के स्वामित्व में हैं, तथा ऐसे समेकन को सुसाध्य बनानेवाली बाजार की स्थितियाँ जो यह स्वीकार करती हों कि सभी एमएण्डए संबंधित पार्टियों अथवा समग्र रूप में प्रणाली के हित में होंगे, यह आवश्यक नहीं है (रेड्डी, 2004)। विलय सफल हों, इसके लिए भी यह आवश्यक है कि दोनों विलयित संस्थाओं की मानव शक्ति और संस्कृति का एकीकरण हो। जब इन पहलुओं का एकीकरण सफलतापूर्वक किया जाता है, केवल तभी विलयित संस्थाएँ अपनी सहक्रियाओं से लाभ उठा सकेंगी। अतः एक ओर जहाँ समेकन की प्रक्रिया बाजार की शक्तियों द्वारा प्रेरित होगी, वहीं दूसरी ओर यह सुनिश्चित करना आवश्यक होगा कि मानव शक्ति और सांस्कृतिक पहलुओं सहित सभी प्रकार से विलय सफल हों, जो भारतीय संदर्भ में विलक्षण हैं (उदेशी, 2004)।

## सरकारी बैंकों से संबंधित समस्याएँ

8.70 बैंकिंग उन महत्वपूर्ण क्षेत्रों में से एक है जो सरकार के कार्यक्षेत्र में आता है। बैंकों के स्वामित्व का प्रश्न सुसंगत है क्योंकि वाणिज्य बैंकिंग आधुनिक अर्थव्यवस्था में सर्वाधिक आधारभूत उद्योग है जिसकी पूँजी के आबंटन और कारपोरेट उधारकर्ताओं की निगरानी में केंद्रीय भूमिका है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की अवधि में अनेक देशों में सामान्य रूप से नीति-निर्धारक बाजार की असफलताओं और राजनैतिक दबावों के प्रतिक्रियास्वरूप सरकार के स्वामित्व के प्रति काफी अधिक प्रवृत्त थे। इसका परिणाम पसंदीदा समूहों को निदेशित ऋण प्रदान करने, निजी बैंकों द्वारा ऋणों की गारंटी देने तथा सरकारी बैंकों और विकास वित्त संस्थाओं (डीएफआइ) के माध्यम से स्वयं अनेक वित्तीय सेवाएं उपलब्ध कराने में हुआ। देशी बैंकों की रक्षा करने के लिए सरकारों ने भी विदेशी बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं से प्रतियोगिता को प्रतिबंधित किया। कई देशों में बड़ी संख्या में निजीकरणों के बावजूद भी सरकारी बैंक अभी भी अपनी वित्तीय प्रणालियों में एक प्रमुख भूमिका अदा करते हैं। सरकारी स्वामित्व और वित्तीय क्षेत्र में अन्य हस्तक्षेपों का उल्लेख प्रायः यह सुनिश्चित करने के तरीकों के रूप में किया गया कि निधीयन तक छोटे और ग्रामीण उधारकर्ताओं की पहुँच हो। तथापि, इन सरकारी हस्तक्षेपों का समग्र अभिलेख निराशाजनक था (विश्व बैंक, 2005)।

8.71 बैंकों के सरकारी स्वामित्व के प्रभाव के बारे में परस्पर विरोधी धारणाएँ विद्यमान हैं। एक धारणा के अनुसार सरकारें पूँजी बाजार की विफलताओं से उबरने में सहायता करती हैं, बाह्यताओं से लाभ उठाती हैं तथा अनुकूल रूप से महत्वपूर्ण परियोजनाओं में निवेश करती हैं (गेरश्चेन्क्रोन, 1962)। इस विचार के अनुसार सामाजिक तौर पर वांछनीय निवेशों को बढ़ावा देने के लिए सरकारों के पास पर्याप्त सूचना और प्रोत्साहन होते हैं। इसके विरोध में यह तर्क दिया गया है कि सरकारी स्वामित्व संसाधनों के आबंटन का राजनीतिकरण करता है, बजट की कमियों को सुहावना बनाता है तथा आर्थिक कुशलता को बाधित करता है। इस प्रकार सरकारी स्वामित्व आर्थिक दृष्टि से प्रभावकारी परियोजनाओं के वित्तपोषण को नहीं, बल्कि राजनैतिक दृष्टि से आकर्षक परियोजनाओं के वित्तपोषण को सुकर बनाता है। अनुभवजन्य साक्ष्य से यह विदित होता है कि प्रारंभ में सरकारी स्वामित्व के उच्चतर स्तर रखनेवाले देशों ने बाद में कम वित्तीय विकास और धीमी आर्थिक वृद्धि की प्रवृत्ति दर्शाई है (ला पोर्ता आदि, 2002)। अधिकाधिक सरकारी स्वामित्व सामान्यतः कम प्रभावकारी और कम सुविकसित वित्तीय प्रणालियों के साथ संबद्ध है (बार्थ आदि, 2001ए)।

8.72 हाल के वर्षों में सरकारी स्वामित्व की कुछ कमियाँ अधिक सुस्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हुई हैं। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में बैंकों के निजीकरण और विदेशी स्वामित्व के साथ संबद्ध लाभों और लागतों संबंधी विपुल मात्रा में साहित्य यह सूचित करता है कि अकुशल सरकारी स्वामित्व वाले बैंक अकुशल निजी क्षेत्र के बैंकों के लिए प्रतियोगी से कम स्तर के बाजारों में फलने-फूलने के अवसर उपलब्ध कराते हैं, अथवा वैकल्पिक रूप से कुशल बैंकों को असाधारण लाभ अर्जित करने की अनुमति देते हैं। वित्तीय क्षेत्र में सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों की भूमिका के विदेशी अनुभव का सारांश देते हुए ऐण्ड्रूस (2005) तर्क करते हैं कि एक

अंतर्निहित या बहिर्गत सरकारी गारंटी के कारण निजी स्वामित्व वाले बैंकों की तुलना में सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों के पास सामान्यतः निधियों की लागत का लाभ रहता है। इसके अलावा, वे निश्चयपूर्वक कहते हैं कि इन निधियों का उपयोग आम तौर पर सरकारी स्वामित्व वाले अकुशल उद्यमों के वित्तपोषण के लिए किया गया है जिससे निजी मध्यस्थता का वर्चस्व कायम हो गया है। सामान्य तौर पर साक्ष्य से यह विदित होता है कि उत्पादक, आबंटनकारी और गतिशील कुशलताएं सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों की प्रधानता से युक्त बैंकिंग प्रणालियों में कम पाई जाती हैं जबकि निजीकरण और विदेशी बैंकों की बढ़ी हुई भूमिका से कार्यकुशलता के कम से कम कुछ पहलुओं में सुधार लाने में सहायता मिलती है (मिहालजेक, 2006)। बैंकिंग क्षेत्रों, विशेष रूप से पश्चिमी यूरोप में विद्यमान बैंकिंग क्षेत्रों का विश्लेषण इस बात की पुष्टि करता है कि सरकार द्वारा संचालित बैंकों के निजीकरण के परिणामस्वरूप बैंकों की लाभप्रदता और कार्यकुशलता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। चूँकि हाल के वर्षों में सभी यूरोपीय बैंकिंग प्रणालियों ने संवर्धित बाजार संकेंद्रण का साक्षात्कार किया है, अतः लाहूसेन (2004) ने तर्क किया है कि इससे सामान्य तौर पर बैंकों के कार्यनिष्पादन में सुधार आना चाहिए क्योंकि अधिक संकेंद्रण एक नियम के रूप में बड़े बैंकों को यह अनुमति देता है कि वे प्रभावकारी आकार वाली इकाइयों के साथ परिचालन करें और बड़े पैमाने की किफायत को अधिक आसानी से उत्पन्न करें। उन्होंने इस बात को भी रेखांकित किया कि सहयोग के लिए उपयुक्त सहभागियों का चयन करने में अधिकतम संभव स्वतंत्रता देने के द्वारा सुव्यवस्थित निजीकरण प्रभावकारी समेकन की कुंजी रहा है।

8.73 1970 के दशक के मध्य से विश्व भर में बैंक निजीकरणों की बढ़ी हुई संख्या यह साक्ष्य उपलब्ध कराती है कि कई नीतिनिर्धारकों के पास बैंकों का सरकारी स्वामित्व कम लोकप्रिय बन गया है। यह स्थिति अनेक कारणों से उत्पन्न हुई है : (i) अर्थव्यवस्था में आर्थिक प्रभावकारिता को बढ़ाना और सरकार के हस्तक्षेप को कम करना; (ii) व्यापकतर साझेदारी वाले स्वामित्व को बढ़ावा देना; (iii) प्रतियोगिता लागू करना; (iv) सरकारी स्वामित्व वाले उद्यमों में बाजार अनुशासन लागू करना; तथा (v) राज्य के लिए राजस्व जुटाना। कुछ देशों में बैंकों का निजीकरण एक प्रणालीगत संकट के बाद किया गया। सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों के पुनःपूँजीकरण में शामिल राजकोषीय लागत और बैंकिंग संकट के साथ संबद्ध उत्पादन की हानि के चलते संकट के बाद कई देशों की सरकारों ने निजीकरण का सहारा लेते हुए इन प्रतिकूल निहितार्थों से बचने की प्रवृत्ति दर्शाई। इसके अलावा, सरकार के स्वामित्व वाले बैंकों की घटती हुई भूमिका भी अधिकांश देशों में गैर-वित्तीय सरकारी उद्यमों की घटती हुई भूमिका को अंशतः प्रतिबिंबित करती है जिनके लिए साधन-संपत्ति अधिकांशतः सरकार के स्वामित्व वाले बैंकों द्वारा उपलब्ध कराई गई (बॉक्स VIII.8)।

8.74 विकासशील देशों में वित्तीय क्षेत्र के सरकारी स्वामित्व का आधारभूत उद्देश्य अर्थव्यवस्था की "प्रभावशाली ऊँचाइयों" को नियंत्रित करना था जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि - (i) व्यावसायिक उद्यम केवल लाभ को अधिकतम बनाने पर ध्यान केंद्रित (फोकस) करने की अपेक्षा सामाजिक और आर्थिक उद्देश्यों में संतुलन स्थापित करें; (ii) बाजार की विफलताएं वृद्धि की प्रक्रिया को अवरुद्ध न करें; तथा (iii) मालिक और एजेंट के बीच सूचनात्मक विषमताओं का समाधान किया जाए। इन प्रश्नों की पृष्ठभूमि में सरकार के स्वामित्व को इनका समाधान करने के लिए आर्थिक दृष्टि से एक प्रभावकारी साधन के रूप में देखा गया। तथापि, वाणिज्य बैंकों के सरकारी स्वामित्व के लंबे इतिहास से युक्त देशों के संदर्भ में साहित्य यह सूचना देता है कि अधिक हस्तक्षेप-रहित (लैसे फेअर) प्रणालियों की तुलना में सुरक्षा, कार्यकुशलता और पारदर्शिता संबंधी सरोकार प्रायः असीम मात्रा में अधिक जटिल और दुर्दमनीय पाये गये हैं।

8.75 भारत के मामले में यद्यपि स्वतंत्रता के बाद 1950 और 1960 के दशकों में बैंकिंग प्रणाली ने दोनों कार्यात्मक तौर पर और भौगोलिक व्याप्ति की दृष्टि से काफी प्रगति की, तथापि अभी भी अनेक बैंक सुविधा रहित ग्रामीण और अर्ध-शहरी क्षेत्र रह गए थे। इसके अलावा, बड़े उद्योगों तथा बड़े और स्थापित व्यावसायिक घरानों द्वारा ऋण सुविधाओं के एक बड़े अंश को प्राप्त किए जाने की प्रवृत्ति थी, जो कृषि, लघु उद्योग और निर्यात जैसे प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों के लिए हानिकारक थी जैसा कि अध्याय III में विस्तार से बताया गया है। इन सरोकारों ने 1969 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के लिए मार्ग प्रशस्त किया। 14 बैंकों के बैंक राष्ट्रीयकरण का उद्देश्य राष्ट्रीय प्राथमिकताओं और लक्ष्यों के अनुरूप अर्थव्यवस्था के विकास की आवश्यकताओं की बेहतर सेवा करना था। वित्तीय मध्यवर्ती उत्पादक प्रयोजनों के लिए ऋण की माँगें पूर्णतः पूरी करते हैं, यह सुनिश्चित करने के सामाजिक उद्देश्य को सघन बनाने में बैंकों के राष्ट्रीयकरण ने सहायता पहुँचाई। राष्ट्रीयकरण के दो महत्वपूर्ण पहलू थे- (i) तीव्र शाखा विस्तार; और (ii) योजना की प्राथमिकताओं के अनुसार ऋण का सरणीकरण (मोहन, 2004ए)। लगभग इसी प्रकार के अनुभव के दुहराये जाने पर, राष्ट्रीयकरण के 11 वर्ष बाद सरकार ने निर्धारित (कट-ऑफ) आकार से ऊपर स्थित छह और अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के राष्ट्रीयकरण की घोषणा की । राष्ट्रीयकरण के दूसरे दौर ने यह विचार उत्पन्न किया कि यदि निजी क्षेत्र का कोई बैंक कट-ऑफ आकार तक बढ़ जाता है, तो वह राष्ट्रीयकरण की आशंका के अधीन होगा (रेड्डी, 2002)। इस प्रकार, भारत में सरकारी क्षेत्र के बैंक वर्षों के बाद निजी क्षेत्र के बैंकों के राष्ट्रीयकरण द्वारा अस्तित्व में आये, जो प्रवृत्ति उस समय अन्य देशों में भी प्रचलित थी।

8.76 1991 से आर्थिक सुधारों के प्रारंभ होने के साथ ही, भारत में सरकारी क्षेत्र के बैंकों के निजीकरण के संबंध में बहस महत्त्वपूर्ण हो गयी। फिर भी, इस मुद्दे पर सीएफएस में खास तौर से विचार नहीं किया गया। सीएफएस की दृष्टि में वित्तीय संस्थाओं के कार्यचालन में स्वामित्व की तुलना में सत्यनिष्ठा और स्वायत्तता अधिक संगत प्रश्न हैं तथा कार्यकुशलता और लाभप्रदता के मुद्दे स्वामित्व के प्रति तटस्थ हैं। इसी प्रकार की धारणा के साथ रेड्डी (1992) ने राय व्यक्त की कि

**बॉक्स VIII.8**
**वाणिज्य बैंकों का निजीकरण : विभिन्न देशों के अनुभव**

यद्यपि सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों के निजीकरण की लहर 1970 के दशक में ही प्रारंभ हुई थी, तथापि बैंकों की स्वामित्व-संरचना में परिवर्तन हाल के वर्षों में ही अधिक महत्वपूर्ण हो गये हैं। चिली में 1973 में शुरू किये गये एक व्यापक सुधार कार्यक्रम के भाग के रूप में 20 सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों में से 19 बैंक 1975 में निजी निवेशकों को बेचे गये थे। इनमें से अधिकांश बैंकों का अधिग्रहण वित्तीय संगुटो (कांग्लोमरेट्स) द्वारा किया गया था। मेक्सिको में सरकार ने जून 1991 से जुलाई 1992 तक की अवधि के दौरान 18 बैंकों में नियंत्रक हितों (कंट्रोलिंग स्टेक्स) को बेच दिया था। 1997 में हंगरी पहली संक्रमणशील अर्थव्यवस्था थी जिसने व्यावहारिक रूप से सरकारी बैंकों का निजीकरण करने की प्रक्रिया पूरी कर ली। सामान्य रूप से विभिन्न देशों में कुल बैंक ऋण में सरकारी बैंकों के अंश में एक उल्लेखनीय गिरावट देखी गई है। अन्य प्रमुख निजीकरण इंडोनेशिया, कोरिया, थाईलैंड और केंद्रीय यूरोप में किये गये हैं । केंद्रीय यूरोप और लातीन अमरीका में कुल बैंक ऋण में सरकारी बैंकों का अंश अब क्रमशः केवल 10 प्रतिशत और 11 प्रतिशत है (1994 में यह क्रमशः 45 प्रतिशत और 15 प्रतिशत था), जबकि विदेशी स्वामित्व वाले बैंकों के अंश में तीव्र वृद्धि रही है। कोरिया में चार बैंकों में निजीकरण किया गया जिनका राष्ट्रीयकरण 1997-98 के संकट के दौरान किया गया था। थाईलैंड में प्राधिकारियों ने पाँच प्रमुख देशी बैंकों में से तीन में अपनी शेयरधारिता कम कर दी है जिनका अधिग्रहण 1997 के संकट के दौरान वित्तीय संस्था विकास निधि द्वारा की गई थी। इसी प्रकार इंडोनेशिया में 2000-2004 के दौरान बैंक पुनर्संरचना एजेंसी द्वारा प्रारंभिक सार्वजनिक प्रस्तावों में कुल बैंकिंग परिसंपत्तियों का 70 प्रतिशत अंश रखनेवाले 15 बैंक बेचे गये। यद्यपि चीन, भारत, रूस और इंडोनेशिया सहित उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में कुल बैंक ऋण में निजी देशी बैंकों का अंश बढ़ गया है, तथापि कुल बैंक ऋण में सरकारी बैंकों का अभी भी काफी अंश है। सारांश रूप में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में बैंकिंग प्रणालियाँ सामान्यतः अधिक निजी और विदेशी स्वामित्व वाली संरचनाओं की दिशा में निरंतर विकसित हो रही हैं।

जहाँ तक 1990 के बाद के दशक में निजीकरण की पद्धतियों का संबंध है, पूर्वी एशिया की अधिकांश अर्थव्यवस्थाओं में वे आस्ति प्रबंध कंपनियों के माध्यम से संकट से प्रभावित राष्ट्रीयकृत बैंकों की क्षतिग्रस्त आस्तियों का निपटान करते हुए कार्यान्वित की गईं। इसके विपरीत, केंद्रीय यूरोप और लातीन अमरीका की अर्थव्यवस्थाओं में बैंकों का निजीकरण अनुकूल विदेशी निवेशकों को हितों (स्टेक्स) के विक्रय के द्वारा किया गया। और हाल के वर्षों में बैंकों के निजीकरण का प्रयास प्रारंभिक और अनुवर्ती सार्वजनिक प्रस्तावों, निविदा या नीलामी द्वारा शेयरों की बिक्री तथा कुछ मामलों में अनुकूल निवेशकों को निजी स्थापनों (प्लेसमेंट्स) के माध्यम से किया गया (मिहालजेक, 2006)। तथापि, बैंक निजीकरण का ब्राजील का अनुभव कुछ भिन्न है, क्योंकि कुछ सरकारी बैंकों का सीधे निजीकरण उनके नियंत्रकों द्वारा किया गया, जबकि कुछ अन्यों ने उनका निजीकरण करने से पहले प्रथमतः अपना नियंत्रण राज्यों से फेडरल सरकार को अंतरित कर दिया। हाल के वर्षों में बैंकों के निजीकरण की पद्धतियों में परिवर्तन वस्तुतः 1990 के दशक के उत्तरार्ध में बाजार आधारित सिद्धांतों की ओर अर्थव्यवस्थाओं के प्रणालीबद्ध रुपांतरण को दर्शाता है।

इस तथ्य के बावजूद कि अधिकांश उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में ज्यादा से ज्यादा निजीकरण किया गया है, यह देखा गया है कि सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों द्वारा खराब कार्यनिष्पादन के लिए कारणभूत कई तत्वों का समाधान करने के लिए केवल स्वामित्व में परिवर्तन ही पर्याप्त नहीं हो सकता। ऐण्ड्रूस (2005) के अनुसार, मजबूत बैंकिंग के लिए उत्प्रेरक संस्थागत कारक, जैसे- धारणीय समष्टि-आर्थिक नीतियाँ, विशेष रूप से संविदा विधि एवं संपार्श्विक जमानत (कॉलेटरल) की गिरवी के लिए उपायों और प्रतिभूति का प्रवर्तन करने के लिए करारों के संबंध में आधारभूत कानूनी संरचना तथा उपयुक्त और व्यापक तौर पर प्रयुक्त लेखांकन के मानक निजीकृत बैंकों के सफल परिणाम के लिए आवश्यक पूर्वापेक्षाएँ हैं। क्रोशिया, चेक गणतंत्र, मोजांबिक और यूगांडा में निजीकरण के अनुभव के आधार पर बैंकों के निजीकरण से पहले एक उचित विवेकसम्मत समीक्षा करने पर भी सामान्यतः जोर दिया गया क्योंकि निजीकरण के बाद बैंकों के कार्यनिष्पादन के लिए इसके महत्वपूर्ण निहितार्थ थे। इसके अलावा, अनेक वृत्त अध्ययनों से प्राप्त साक्ष्य यह सूचित करता है कि बेहतर वित्तीय कार्यनिष्पादन तब प्राप्त किया जाता है जब निजीकरण एक महत्वपूर्ण शेयरधारक के रू प में किसी मजबूत वित्तीय संस्था को संबद्ध करता है। इनके अतिरिक्त, बैंकों के निजीकरण को एक राजनैतिक प्रक्रिया के रूप में भी देखा जाता है क्योंकि संसाधनों/सेवाओं के प्रांतीय एवं क्षेत्रीय आबंटन में और रोजगार के परिरक्षण में भी इसके निहितार्थ हैं। ऐण्ड्रू (2005) ने पाया कि जब बैंकों के निजीकरण को एक अच्छी नीति के विकल्प की तरह देखा जाता है, तब भी उसका कार्यान्वयन समस्यामूलक हो सकता है। विकसित देशों की तुलना में विकासशील देशों में सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों के निजीकरण की प्रक्रिया को राजनैतिक तत्व उल्लेखनीय रूप में प्रभावित करते हैं (बोहमेर आदि, 2005)। जिन मुख्य मुद्दों का प्रबंध करने की आवश्यकता है, उनमें शामिल हैं निरंतर सरकारी स्वामित्व वाली बैंकिंग प्रणाली के साथ संबद्ध लागत, अन्य सुधारों का अनुक्रमण, तथा राजनैतिक मतैक्य की प्राप्ति।

**संदर्भ :**

ऐण्ड्रूस, ए. माइकेल, 2005। "स्टेट-ओन्ड बैंक्स, स्टेबिलिटी, प्राइवेटाइजेशन, एण्ड ग्रोथ : प्रैक्टिकल पॉलिसी डेसिजन्स इन ए वर्ल्ड विदाउट एम्पिरिकल प्रूफ"। *आइएमएफ वर्किंग पेपर* सं. डब्ल्यूपी/05/10 ।

बोहमेर, ई. नाश, आर.सी. और नेटर, जे.एम. 2005। "बैंक प्राइवेटाइजेशन इन डेवलपिंग एण्ड डेवलप्ड कंट्रीज : क्रॉस-सेक्शनल एविडेन्स ऑन द इम्पैक्ट ऑफ इकोनॉमिक एण्ड पोलिटिकल फैक्टर्स ।" *जर्नल ऑफ बैंकिंग एण्ड फाइनैंस*, खंड 29।

मिहालजेक, दुब्रावको, 2006। "प्राइवेटाइजेशन, कन्सालिडेशन एण्ड द इंक्रीज्ड रोल ऑफ फारेन बैंक्स।" *बीआइएस पेपर्स* सं. 28, अगस्त।

"वित्तीय क्षेत्र में निजीकरण की प्रवृत्ति को मूल रूप से समष्टि-आर्थिक सुधारों के एक भाग के रूप में तथा प्रतियोगिता को बढ़ाने के लिए उपयुक्त विनियामक ढाँचे को सुनिश्चित करने के रूप में देखा जाना चाहिए, और स्वामित्व का निर्माण करना तो एक गौण विषय है। " इसके अतिरिक्त, अन्य विनिर्माण उद्योगों की तुलना में वित्तीय बाजार के भंगुर स्वरूप को देखते हुए इस बात पर जोर दिया गया कि बैंकिंग क्षेत्र

का फोकस स्वामित्व के बजाय विनियमन पर अधिक होना चाहिए। एक कुशल बाजार में प्रतियोगिता अकुशल फर्मों को बाहर कर देती है। तथापि, वित्तीय क्षेत्र के बैंकिंग खंड के भंगुर स्वरूप के कारण यह महसूस किया गया कि बैंकों के निर्गम के बारे में बहुत अधिक सतर्कता के साथ विचार करने की आवश्यकता है। वित्तीय प्रणाली में स्थिरता सेवा लेनेवालों के विश्वास पर निर्भर है। सूचना की विषमताओं की ओर ले जाने वाली "भेड़ चाल" की वजह से यह विश्वास आसानी से खोया जा सकता है जिसके परिणामस्वरूप बैंकों से जमाराशि वापस लेने की होड़ (बैंक रन) की प्रवृत्ति जन्म लेगी जो स्वस्थ इकाइयों पर भी लागू होगी और समूची वित्तीय प्रणाली में व्याप्त होगी। इस संबंध में, रेड्डी (1992) ने पाया कि "विनिर्माण क्षेत्र में किसी फर्म के निर्गम की लागत की तुलना में, वित्तीय क्षेत्र में एक फर्म के निर्गम की लागत समग्र रूप में वित्तीय क्षेत्र की व्यवहार्यता पर गंभीर अप्रत्यक्ष प्रभाव डाल सकती है। संभवतः यह मुख्य कारण है जिससे वित्तीय क्षेत्र के संबंध में स्वामित्व पर इतना फोकस नहीं किया जाता और विनियमन को अधिकतर तत्काल स्वीकार किया जाता है। " प्रतियोगिता के महत्व और संभावित लाभों को स्वीकार करते हुए विश्व विकास रिपोर्ट 2001 में इस बात को रेखांकित किया गया कि अत्यधिक प्रतियोगिता एक अस्थिर बैंकिंग परिवेश का निर्माण कर सकती है, जबकि अपर्याप्त प्रतियोगिता अकुशलता अथवा उधारकर्ताओं के लिए ऋण तक घटी हुई पहुँच की स्थिति उत्पन्न कर सकती है (विश्व बैंक, 2001)।

8.77 तथापि, आर्थिक सुधारों में प्रगति के साथ ही बैंकों के सरकारी स्वामित्व के बारे में प्रश्न किया जाने लगा। जोशी और लिटल (1996) ने बैंकों के निजीकरण के लिए एक मजबूत अनुभवजन्य स्थिति पाई क्योंकि ऋण के आबंटन में राजनैतिक और प्रशासनिक हस्तक्षेप के कारण प्रबंधकीय अकुशलता के लिए सरकारी स्वामित्व मुख्य रूप से उत्तरदायी था। अतः उन्होंने सिफारिश की कि ''सरकारी स्वामित्व के ढाँचे के भीतर स्वायत्तता को सुरक्षित रखने के प्रयास की व्यर्थ प्रक्रिया से गुजरने की अपेक्षा सरकार को चाहिए कि वह सरकारी क्षेत्र के अनेक बैंकों का निजीकरण करने के लिए योजना तैयार करे।''

8.78 फिर भी, सीबीएसआर ने स्थिति का एक व्यावहारिक आकलन करके इस समस्या के समाधान का प्रयास किया तथा निजीकरण के बदले यह सिफारिश की कि पूँजीगत अपेक्षाओं में संभावित कमी पूरी करने के लिए सरकारी क्षेत्र के बैंक पूँजी बाजार में पहुँचें तथा सरकार/रिज़र्व बैंक द्वारा सांविधिक न्यूनतम शेयरधारिता को 51 प्रतिशत से घटाकर 33 प्रतिशत किया जाए। सरकारी क्षेत्र के कमजोर बैंकों की पुनर्संरचना संबंधी कार्यदल (अध्यक्ष : श्री एम. एस. वर्मा) ने तीन कमजोर बैंकों के संदर्भ में पाया था कि सरकारी क्षेत्र के इन तीन बैंकों का निजीकरण एक स्वीकार्य प्रक्रिया है क्योंकि केवल उक्त प्रक्रिया ही आगे और पूँजीकरण करने के सरकारी दायित्व को कम करेगी तथा दीर्घावधि में सरकार को इन बैंकों में किये गये निवेश को वापस प्राप्त करने में समर्थ बनाएगी । फिर भी, उक्त कार्यदल ने (i) पुनर्संरचना की निषेधात्मक रूप से अधिक लागत; (ii) अपेक्षित संसाधनों के अभाव; (iii) पूँजी बाजार तक पहुँचने में इन बैंकों की असमर्थता; और (iv) स्टाफिंग के विद्यमान स्वरूप एवं कुशलताओं और प्रौद्योगिकी के स्तरों पर विचार करते हुए उस समय निजीकरण की सिफारिश नहीं की।

8.79 यह तर्क दिया गया है कि सरकारी क्षेत्र के बैंकों की अधिकांश समस्याएँ विकट रूप में सरकारी स्वामित्व और नियंत्रण के साथ संबद्ध हैं जिसके लिए उनका निजीकरण किया जाना चाहिए जैसाकि अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों में किया गया था (आचार्य, 2001)। तथापि, राम मोहन (2002) ने सामान्य रूप से निजीकरण के संदर्भ में यह निष्कर्ष निकाला कि ''लोक अनुमान के विपरीत, निजीकरण के संबंध में न तो सिद्धांत और न ही अनुभवजन्य साक्ष्य इस विश्वास के लिए संपूर्ण सहायता प्रदान करता कि निजीकरण ऐसे परिणामों के लिए मार्ग प्रशस्त करता है जो सरकारी स्वामित्व की तुलना में बेहतर हों। सैद्धांतिक साहित्य निजी स्वामित्व के संभावित लाभों को बताने के साथ ही यह भी रेखांकित करता है कि ऐसे लाभों के कार्यान्वित होने के लिए अनेक शर्तें अपेक्षित हैं।''

8.80 भारतीय संदर्भ में कई अध्ययनों ने सुधारों के बाद की अवधि में निजी क्षेत्र के बैंकों की तुलना में सरकारी क्षेत्र के बैंकों के कार्यनिष्पादन संकेतकों के बीच कोई उल्लेखनीय अंतर नहीं पाया है। बैंक की कार्यकुशलता पर स्वामित्व के स्वरूप के प्रभाव का अध्ययन करते समय राम मोहन और राय (2004) तथा महेश और राजीव (2006) ने पाया कि निजी क्षेत्र के अपने समकक्ष बैंकों की अपेक्षा सरकारी क्षेत्र के बैंकों में कार्यकुशलता और उत्पादकता कम हैं, इस तर्क का समर्थन करना कठिन है। सरकारी क्षेत्र के बैंकों और निजी क्षेत्र के बैंकों की तुलना करते हुए सरकार आदि (1998) ने भी पाया कि कार्यनिष्पादन पर केवल कमजोर स्वामित्व का ही एकमात्र प्रभाव है। इसके लिए इस तथ्य को कारण माना जा सकता है कि सरकारी क्षेत्र के बैंकों की अभिमुखता में सामाजिक उद्देश्यों से लाभप्रदता पर बल देने की ओर परिवर्तन रहा है, विशेष रूप से इस बात के होते हुए कि इनमें से कुछ बैंकों को शेयर बाजार में सूचीबद्ध किया गया है और इस प्रकार निजी निवेशकों का हित इसमें संबद्ध है। यह प्रतीत होता है कि एक और तत्व जिसने उल्लेखनीय भूमिका निभाई है, यह है कि सरकारी क्षेत्र के बैंक निजी क्षेत्र के बैंकों की तुलना में परिचालनों के मान के रूप में प्रथम प्रवर्तक होने का विपुल लाभ प्राप्त करते हैं तथा इन लाभों से संभवतः ऐसी किसी भी अकुशलता की क्षतिपूर्ति हो जाती है जिसके लिए सरकारी स्वामित्व को कारण माना जा सकता है (राम मोहन, 2005)।

8.81 भारत में सरकारी क्षेत्र के बैंकों के निजीकरण का तर्क सामान्यतः निम्नलिखित दिशाओं में दिया गया है : (क) बैंकों के पुनःपूँजीकरण से राजकोष के लिए भारी लागत की आवश्यकता होती है; (ख) बैंकों के सरकारी स्वामित्व के कारण प्रतियोगिता में हानि उठानी पड़ती है और अकुशलता उत्पन्न होती है; (ग) यह आवश्यक नहीं कि सरकारी स्वामित्व बैंकिंग संकट की संभाव्यता को कम कर दे, तथा (घ) बैंकों का निजी और

विदेशी स्वामित्व कार्यकुशलता, नवोन्मेषण और आर्थिक वृद्धि को प्रेरित करता है।

8.82 सामान्य पुनःपूँजीकरण 1998-99 तक लगातार लागू किया गया था। तब से वह केवल 2001-02, 2002-03 और 2005-06 में ही कार्यान्वित हुआ। तथापि, जीडीपी के प्रतिशत के रूप में पुनःपूँजीकरण की लागत कई अन्य देशों की तुलना में काफी कम थी। इस स्थिति के होते हुए अंतरराष्ट्रीय अनुभव से यह विदित होता है कि निजी स्वामित्व से पुनःपूँजीकरण की लागत में कमी होगी, यह आवश्यक नहीं है। यह इसलिए क्योंकि निजी स्वामित्व में भी, सरकारें बैंकों को विफल नहीं होने देतीं और इसके परिणामस्वरूप पुनःपूँजीकरण के लिए राजकोषीय लागत महत्वपूर्ण हो सकती है। बैंकिंग संकट से ग्रस्त देशों में बैंकों के सरकारी स्वामित्व के बावजूद बजटों पर प्रभाव जीडीपी के 40-55 प्रतिशत तक उच्च रहा है (होनोन्हन और क्लिंजबियेल, 2000)। बैंकिंग प्रणाली की सुदृढ़ता दोनों समष्टि-आर्थिक और राजकोषीय स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण है । यदि बैंकिंग प्रणाली, चाहे वह सरकारी हो या निजी, अस्वस्थ और कमजोर है, तो भार राजकोष पर ही पड़ेगा क्योंकि बचाव (बेलआउट) के लिए निधीयन सरकारी तौर पर ही करना होगा। यह तर्क कि केवल स्वामित्व को सरकारी क्षेत्र से निजी क्षेत्र में अंतरित करने से राजकोष पर संभावित प्रभाव से प्रतिरक्षा मिलेगी, सही नहीं है (रेड्डी, 2001)।

8.83 जहाँ तक भारत में सरकारी क्षेत्र के बैंकों की कार्यकुशलता का संबंध है, सुनिर्मित नीतिगत सुधारों ने उन्हें क्रमशः संवर्धित प्रतियोगी परिवेश में ला खड़ा किया है। इन नीतिगत सुधारों ने प्रतियोगिता की शक्तियों को उन्मुक्त करते हुए सरकारी क्षेत्र के बैंकों को कार्यकुशलता प्राप्त करने के लिए संसाधनों का इष्टतम प्रयोग करने के लिए विवश कर दिया। परिणामतः सरकारी क्षेत्र के बैंकों के कार्यनिष्पादन में उल्लेखनीय सुधार आया है। जैसा कि आगामी अध्याय में विवेचित किया गया है, कुछ सरकारी क्षेत्र के बैंक निजी क्षेत्र के बैंकों और विदेशी बैंकों के समान ही कुशलताप्राप्त हैं। वास्तव में, भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में सबसे कम कुशल 29 बैंक निजी और विदेशी बैंक खंडों से संबंधित हैं। सुदृढ़ता और आस्ति-गुणवत्ता के मानदंडों के तौर पर भी सरकारी क्षेत्र के बैंकों का कार्यनिष्पादन निजी क्षेत्र के और विदेशी बैंकों की ओर अभिमुख हो गया है।

8.84 इस प्रकार सरकारी क्षेत्र के बैंकों ने प्रतियोगिता की नई चुनौतियों के संबंध में अपनी प्रतिक्रिया दर्शाई है, जैसा कि बैंकिंग क्षेत्र के समग्र लाभ में इन बैंकों के अंश में वृद्धि से स्पष्ट होता है। 1990 के बाद के दशक के मध्य निवल हानि की स्थिति से, हाल के वर्षों में, वाणिज्य बैंकिंग प्रणाली के लाभ में सरकारी क्षेत्र के बैंकों का अंश मोटे तौर पर परिसंपत्तियों में उनके अंश के अनुरूप हो गया है जिससे विभिन्न बैंक समूहों के बीच लाभप्रदता की एक व्यापक अभिमुखता प्रकट होती है। इससे यह संकेत मिलता है कि परिचालनगत लचीलेपन के साथ सरकारी क्षेत्र के बैंक निजी क्षेत्र के और विदेशी बैंकों के साथ कारगर ढंग से मुकाबला कर सके हैं। संभवतः सरकारी क्षेत्र के अधिकांश बैंकों को सूचीबद्ध करने के द्वारा लागू किये गये 'बाजार अनुशासन' ने भी इस सुधरे हुए कार्यनिष्पादन में अंशदान किया है। सरकारी क्षेत्र के बैंकों के प्रबंधकवर्ग अब संभवतः अपने कार्यकलापों के बाजार संबंधी परिणामों के लिए अधिक अनुकूल स्थिति में हैं (मोहन, 2006)।

8.85 सरकारी क्षेत्र के स्वामित्व के साथ बैंकिंग व्यवस्था की स्थिरता पर अंतर्निहित तर्क यह रहा है कि सरकारी स्वामित्व के साथ संबद्ध निम्नतर प्रतियोगिता के कारण अंतर्भूत अकुशलता के चलते संकट की जोखिम बढ़ गई है। तथापि, अंतरराष्ट्रीय अनुभव सरकारी स्वामित्व और बैंकिंग संकट के बीच किसी असंदिग्ध संबंध को प्रकट नहीं करता। बैंकिंग संकट का सामना कर चुके 34 देशों के एक नमूने में बार्थ आदि (2000) ने पाया कि इनमें से आधे देशों में सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों ने कुल बैंकिंग आस्तियों के 20 प्रतिशत से अधिक अंश का नियंत्रण किया, जबकि छह देशों में यह अंश 20 प्रतिशत से कम था। संकटग्रस्त नौ देशों में सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों का कोई अस्तित्व नहीं था (सारणी 8.10)। ऐसे उदाहरण हैं जहाँ बैंकिंग संकट से पहले निजीकरण किया गया था, जैसे कैमेरून, क्रोशिया, मेक्सिको, कोरिया और यूक्रेइन (ऐण्ड्रूस, 2005)। इस प्रकार, बैंकिंग संकट की जोखिम बैंकों के सरकारी स्वामित्व के परिमाण के साथ संबद्ध नहीं थी। इस तथ्य के लिए कि भारत ने किसी प्रणालीगत बैंकिंग संकट का सामना नहीं किया है, सरकारी क्षेत्र के बैंकों द्वारा बैंकिंग क्षेत्र पर हावी होना ही कारण माना जा सकता है।

8.86 इस तथ्य के अतिरिक्त कि सरकारी क्षेत्र के बैंकों के कार्यनिष्पादन में उल्लेखनीय रूप में सुधार आया है, निजी क्षेत्र के बैंको और विदेशी बैंकों की अपेक्षा सरकारी क्षेत्र के बैंकों से अनेक अन्य लाभ रहे हैं। निजी क्षेत्र के बैंकों और विदेशी बैंकों की तुलना में सरकारी क्षेत्र के बैंकों ने अपने विशाल शाखा नेटवर्क के माध्यम से प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के मानदंडों में परिकल्पित रूप में कृषि एवं छोटे और मझोले उद्यमों (एसएमई) के क्षेत्र को ऋण प्रदान करने में काफी बृहत्तर भूमिका निभाई है। सरकारी क्षेत्र के बैंक वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने में भी अधिक सक्रियतापूर्वक लिप्त हैं जो हाल में एक प्रमुख नीतिगत लक्ष्य के रूप में उभरा है। यह तर्क दिया गया है कि भारतीय संदर्भ में खास तौर से कृषि और ग्रामीण क्षेत्र के प्रति पर्याप्त ध्यान देने की आवश्यकता को देखते हुए मौजूदा सरकारी क्षेत्र के बैंकों के सरकारी क्षेत्र के स्वरूप को नहीं त्यागना चाहिए (जालान, 2002)। इसके अलावा, प्रतियोगी परिस्थितियों के अंतर्गत परिचालित की जानेवाली भलीभाँति विविधीकृत बैंकिंग प्रणाली वित्तीय स्थिरता के परिप्रेक्ष्य में एक अच्छा संकेत देती है।

8.87 सारांश के तौर पर, सरकारी क्षेत्र के बैंकों का निजीकरण एक ऐसा मुद्दा है जिसने वित्तीय क्षेत्र के सुधारों को प्रारंभ करने के बाद प्रमुखता प्राप्त की है। सरकारी क्षेत्र के बैंकों के निजीकरण के लिए सामान्य रूप से सबसे अधिक बताया जानेवाला कारण उनकी अंतर्निहित अकुशलता रही है। तथापि, भारतीय संदर्भ में यह पाया गया है कि सरकारी क्षेत्र के बैंकों के कार्यनिष्पादन में उल्लेखनीय सुधार हुए हैं जो

**सारणी 8.10 : सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों की आस्तियों की मात्रा और बैंकिंग संकट**

| देश | सरकारी स्वामित्व 20 प्रतिशत तक | संकट की श्रेणी | | देश | सरकारी स्वामित्व 20 प्रतिशत तक | संकट की श्रेणी | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | प्रणाली-गत | प्रमुख | | | प्रणाली-गत | प्रमुख |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 |
| बोलीविया | 0 | हाँ | हाँ | अर्जेन्टीना | 30.5 | हाँ | हाँ |
| कनाडा | 0 | हाँ | हाँ | ब्राजील | 51.0 | हाँ | हाँ |
| कोलंबिया | 19.0 | हाँ | हाँ | चिली | 23.8 | हाँ | हाँ |
| डेनमार्क | 0 | नहीं | हाँ | मिस्र | 66.6 | हाँ | हाँ |
| ईक्वेडर | उ.न. | हाँ | हाँ | फिनलैंड | 41.1 | हाँ | हाँ |
| एल-सैल्वडोर | 6.9 | हाँ | हाँ | घाना | 38.8 | हाँ | हाँ |
| हांगकांग | 0 | नहीं | हाँ | भारत | 80.0 | नहीं | हाँ |
| जापान | 0 | हाँ | हाँ | इंडोनेशिया | 41.5 | हाँ | हाँ |
| कोरिया | 0 | हाँ | हाँ | इटली | 25.0 | नहीं | हाँ |
| मलेशिया | 9.6 | हाँ | हाँ | मडागास्कर | 22.0 | हाँ | हाँ |
| नाइजीरिया | 13.0 | हाँ | हाँ | मेक्सिको | 41.5 | हाँ | हाँ |
| पेरू | 0 | हाँ | हाँ | नॉर्वे | 37.6 | हाँ | हाँ |
| फिलीपीन्स | 19.8 | हाँ | हाँ | श्रीलंका | 58.0 | हाँ | हाँ |
| स्वीडन | 0 | हाँ | हाँ | तांजानिया | 50.1 | हाँ | हाँ |
| अमरीका | 0 | नहीं | हाँ | थाईलैंड | 29.0 | हाँ | हाँ |
| वेनेज्वेला | 7.2 | हाँ | हाँ | तुर्की | 36.5 | हाँ | हाँ |
| | | | | उरुग्वे | 45.5 | हाँ | हाँ |
| | | | | जिम्बाब्वे | 24.6 | हाँ | हाँ |

**स्रोत :** बैर्थ, कैप्रियो और लेवीन (2000)।

परिचालनगत लचीलेपन और कार्यात्मक स्वायत्तता से प्राप्त किये गये हैं। वास्तव में सरकारी क्षेत्र के बैंकों के अधिकाधिक सामाजिक दायित्व के अधीन होने के बावजूद निजी क्षेत्र के बैंकों और विदेशी बैंकों का कार्यनिष्पादन इनमें से कई बैंकों की तुलना में श्रेष्ठ नहीं था। फिर भी ऐसे कई अन्य मुद्दे हैं जैसे परिचालन का परिवर्तित परिवेश तथा बैंकों को पूँजी उपलब्ध कराने में सरकार द्वारा अनुभव की जानेवाली समस्याओं के कारण सरकारी क्षेत्र के बैंकों के परिचालनों को बनाये रखना, जिनके बारे में सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करने की आवश्यकता है। इनके बारे में इसके बाद के खंड में चर्चा की गई है।

## विदेशी बैंकों के परिचालनों से संबंधित समस्याएँ

8.88 बैंकिंग क्षेत्र के समेकन की प्रक्रिया ने विशेष रूप से ईएमई में विदेशी बैंकों के व्यापक तौर पर प्रवेश को प्रेरित किया। इसके अलावा, माल और सेवाओं के व्यापार के अंतरराष्ट्रीयकरण ने भी बड़े अंतरराष्ट्रीय और क्षेत्रीय बैंकों की लाभकारी बाजारों में प्रवेश करने की इच्छा को प्रतिबिंबित करते हुए विदेशी बैंकों को अपने परिचालनों का विस्तार अन्य देशों में करने के लिए विवश कर दिया। विदेशी बैंक अब वैश्विक वित्तीय प्रणाली को विकसित करने में एक अधिकाधिक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। ऐतिहासिक रूप से आर्थिक समेकन के साथ ही विदेशी बैंकों के लिए मुख्य प्रेरणा व्यापार ऋण परिचालन करने के लिए प्रतिनिधि कार्यालय स्थापित करने की थी जिससे अंतरराष्ट्रीय लेनदेनों में उनके अपने देश के ग्राहकों की सहायता की जा सके तथा संभवतः मेजबान देश के उधारकर्ताओं और स्रोत देश के उधारदाताओं के बीच अंतरराष्ट्रीय निजी ऋण और इक्विटी स्थाननों की व्यवस्था की जा सके। एक उत्तरवर्ती स्तर पर विदेशी बाजार की अधिक समझ और स्थानीय वित्तीय संस्थाओं के साथ संबंध के विकसित नेटवर्क सहित विदेशी बैंक ऐसी शाखाएँ खोलते हैं जो थोक जमा और मुद्रा बाजारों के साथ लेनदेन करती हैं। अंततः खुदरा बैंकिंग में प्रवेश करने के लिए सहायक संस्थाएँ स्थापित की जाती हैं। फिर भी, विदेशी बैंकों के प्रवेश के लिए कारण एवं प्रतियोगी और विनियामक स्थितियाँ विकसित और विकासशील देशों के बीच उल्लेखनीय रूप में भिन्न-भिन्न हैं।

8.89 सामान्य रूप से विदेशी बैंक अपनी मूल अर्थव्यवस्थाओं के बाहर व्यावसायिक कार्यकलापों में प्रवेश विदेशी उधार के माध्यम से अथवा भौतिक उपस्थिति द्वारा करते हैं। विदेशी उधार के मामले में एक किफायती कार्यनीति के रूप में विदेशी बैंक मेजबान देश के क्षेत्र में कोई बाह्य कार्यालय (आउटपोस्ट) नहीं रखते। विदेशी बैंकों की भौतिक उपस्थिति ग्रीनफील्ड निवेश के माध्यम से नए सिरे से (द नोवो) बैंक खोलने के रूप में अथवा किसी घरेलू बैंक के अधिकांश हित (स्टेक) को खरीदने के द्वारा हो सकती है। ग्रीनफील्ड निवेश के माध्यम से विदेशी बैंक मेजबान देश में बैंक की कार्यनीतिगत आवश्यकता और मेजबान देश में प्रचलित विनियामक व्यवस्था के आधार पर एक शाखा अथवा सहायक संस्था खोलते हैं । हाल के वर्षों में विदेशी बैंकों की शेयरधारिताओं के स्वरूप को निर्धारित करने में लाभ के अवसर एक

महत्वपूर्ण कारक बन गए हैं तथा उन्होंने विभिन्न प्रकार के रूप धारण किये हैं :अभिग्रहण, विशिष्ट गतिविधियों की लक्ष्यीकृत खरीदियाँ, संयुक्त उद्यम अथवा मैत्री (अलाइंस) एवं प्रशासनिक और वित्तीय सेवाएं बाहरी एजेंसियों से प्राप्त करना (आउटसोर्सिंग) (बॉक्स VIII.9)।

## बॉक्स VIII.9
## विदेशी बैंकों की शाखाएँ बनाम सहायक संस्थाएँ

1990 के दशक की दूसरी छमाही से लातीन अमरीका और पूर्वी यूरोप की कुछ उभरती अर्थव्यवस्थाओं के बैंकिंग क्षेत्रों ने विदेशी बैंकों के बढ़ते हुए नियंत्रण और प्राबल्य को देखा। वास्तव में इनमें से अधिकांश उभरती अर्थव्यवस्थाएँ बैंकिंग संकटों से ग्रस्त हुई थीं तथा बाद में सुदृढ़ीकरण के एक भाग के रूप में इन अर्थव्यवस्थाओं के बैंकिंग क्षेत्र को विदेशी बैंकों के प्रवेश के लिए खोल दिया गया। विदेशी बैंकों के प्रवेश के उदारीकरण का निर्णय करते समय नीति-निर्धारक न केवल घरेलू बैंकों और कंपनी क्षेत्र के संबंध में लागतों और हितों का विचार करते हैं, बल्कि प्रायः निर्णय करने से पहले प्रवेश करने के प्रकार के संबंध में पक्ष-विपक्ष का विश्लेषण भी करते हैं। विदेशी बैंक को प्रवेश करने के लिए दो प्रकार के माध्यम से अनुमति दी जा सकती है : पहला, विदेशी बैंक ग्रीनफील्ड निवेश के माध्यम से एक नये सिरे से (द नोवो) बैंक खोल सकता है और दूसरा, विदेशी बैंक मौजूदा घरेलू बैंकिंग संस्था के अभिग्रहण के माध्यम से प्रवेश कर सकता है।

पुनः, ग्रीनफील्ड निवेश के मामले में नीति-निर्धारकों और विदेशी बैंकों के पास दो विकल्प हैं, अर्थात् एक शाखा अथवा एक सहायक संस्था की स्थापना करना। मेजबान देश द्वारा किसी शाखा को लाइसेंस मूल कंपनी के चार्टर में परिभाषित शक्तियों के साथ, परंतु मेजबान देश में प्राधिकारियों द्वारा बताई गई बाध्यता और सीमा के साथ प्रदान की जाती है। एक सहायक संस्था मेजबान देश में उसके अपने चार्टर द्वारा निर्धारित शक्तियों और जिम्मेदारियों के साथ पूर्णतः स्वतंत्र वैध संस्था है। सामान्यतः विदेशी बैंक ग्रीनफील्ड निवेश के मामले में प्रवेश के प्रकार का निर्णय मूल बैंक द्वारा निवेश के प्रयोजन के आधार पर लेते हैं। यदि कोई विदेशी बैंक मेजबान देश में बैंकिंग कार्यकलापों, जैसे जमाराशियों, ऋणों और अन्य वित्तीय सेवाओं के समूह के माध्यम से लाभकारी अवसरों की तलाश करना चाहता है, तो स्पष्ट रूप से इसके लिए विकल्प होगा सहायक संस्था। दूसरी ओर, संभवतः शाखा का विकल्प तब होगा जब विदेशी बैंक का प्रवेश मूल बैंक के समन्वित परिचालनों को बढ़ावा देने के उद्देश्य के साथ हुआ है। चूँकि हाल में अर्जेन्टीना में अपनी सहायक संस्थाओं का पूँजीकरण न करने के लिए कुछ विदेशी बैंकों के निर्णयों से उदाहरण प्रस्तुत किया गया है, अतः मूल बैंक की पूँजी तक शाखाओं की पहुँच सहायक संस्थाओं की स्थिति की तुलना में अधिकतर प्रायः प्रत्यक्ष है (क्लैर्क आदि, 2002)। विदेशी बैंकों की शाखाएँ विशिष्ट रूप से थोक बैंकिंग से संबद्ध हैं, जबकि सहायक संस्थाएँ अधिकांश देशों में फुटकर बैंकिंग में लिप्त हैं।

शाखा अथवा सहायक संस्था के रूप में विदेशी बैंक के प्रवेश से संबंधित एक और मुद्दा संकट की अवधियों के दौरान उनके संभावित व्यवहार से उत्पन्न होता है। यद्यपि एक सामान्य विश्वास है कि विदेशी बैंकों का प्रभाव स्थानीय संकट से पहले या उसके दौरान स्थिरीकृत करने के लिए हो सकता है, तथापि उनकी प्रतिक्रिया शाखाओं अथवा सहायक संस्थाओं के माध्यम से उनके प्रवेश पर निर्भर हो सकती है। एक शाखा मूल बैंक का भाग है और वह कठिनाई की स्थिति में मूल बैंक से पूँजी आहरित कर सकती है। यदि कोई सहायक संस्था किसी कठिनाई का सामना करती है, तो मूल कंपनी उक्त सहायक संस्था को मात्र बंद कर सकती है। दूसरे शब्दों में मूल बैंक शाखाओं की देयताओं की पूरी जिम्मेदारी का सामना करते हैं, जबकि सहायक संस्थाओं के मामले में निवेश की गई इक्विटी की हानि के प्रति उनकी देयता सीमित है। तथापि, समय-समय पर प्रतिष्ठा की हानि के बारे में चिंताओं ने बैंकों को अपनी सहायक संस्थाओं को सहायता प्रदान करने के लिए प्रेरित किया है, यद्यपि ऐसा करने के लिए वे कानूनी तौर पर आबद्ध नहीं थे।

आइसेनबेइस और काउफमैन (2005) ने इस बात को रेखांकित किया कि शाखा कार्यालयों अथवा सहायक बैंकों के रूप में विदेशी स्वामित्व के प्रति लाभ संचित होने के बावजूद विदेशी बैंकिंग अनेक नीतिगत चिंताओं को जन्म देता है। ये जमा बीमा के प्रावधान, विवेकपूर्ण विनियमन की प्रभावात्मकता, बाजार अनुशासन की शक्ति, किसी दिवालिया संस्था को आधिकारिक तौर पर दिवालिया घोषित करने तथा उसे प्रापण अथवा संरक्षण में रखने के समय, एवं बैंकों के दिवालियेपन का समाधान करने की प्रक्रियाओं से संबंधित हैं। अकसर यह भी पाया गया है कि विदेशी शाखाओं के साथ संबद्ध मुख्य लाभ उनकी बढ़ी हुई उधार देने की क्षमता (मूल बैंक की पूँजी पर ऋण के आकार की सीमाओं को आधार बनाकर) तथा घटाई गई कंपनी अभिशासन (कारपोरेट गवर्नैंस) की अपेक्षाओं के रूप में हैं जो विदेशी बैंकों की सहायक संस्थाओं के मामले में नहीं हैं।

वैश्विक वित्तीय प्रणाली संबंधी समिति (2004) ने विदेशी संस्थाओं द्वारा मेजबान विनियामक और पर्यवेक्षी प्राधिकारियों के साथ सूचना के आदान-प्रदान से संबंधित मुद्दों पर बल दिया। चिंता विशेष रूप से उन विदेशी शाखाओं के लिए तीव्र है जिनके पास सार्थक तुलन-पत्र अथवा आय के विवरण नहीं होते। इससे मेजबान देश के विनियामक के लिए निगरानी कठिन हो जाती है। सहायक संस्थाओं के मामले में चूँकि वे अलग वैध संस्थाएँ हैं, अतः उनके पास तुलन-पत्र और आय के विवरण होंगे जो उस देश में विनियामक के लिए उपलब्ध होंगे जिस देश में उन्हें अधिकार-पत्र प्राप्त है।

मेजबान देश के परिप्रेक्ष्य में शाखाओं और सहायक संस्थाओं के रूप में विदेशी बैंकों का प्रवेश काफी हद तक उस देश के विनियामक और पर्यवेक्षी प्राधिकारियों की सक्षमता और तत्परता पर निर्भर होगा। फिर भी, विदेशी बैंकों के बाह्य कार्यालयों (आउटपोस्टों) के बढ़ते हुए आकार के साथ ही, शाखा और सहायक संस्था के बीच भिन्नता के आधार पर मेजबान और मूल देश के बीच पर्यवेक्षी जिम्मेदारियों का विभाजन अधिकाधिक अस्पष्ट होता जा रहा है।

**संदर्भ :**

अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक, 2004। "फारिन डाइरेक्ट इन्वेस्टमेंट इन द फाइनैंशियल सेक्टर ऑफ एमर्जिंग मार्केट इकॉनमी"। सीजीएफएस, प्रकाशन सं. 22, मार्च।

जार्ज, क्लैर्क आदि, 2002। "दी एफेक्ट्स ऑफ फारेन एण्ट्री ऑन अर्जेन्टीनाज डोमेस्टिक बैंकिंग सेक्टर"। विश्व बैंक, वाशिंगटन।

आइसेनबेइस, आर.ए. और काउफमैन, जी. 2005। "बैंक क्राइसेस रिजोल्यूशन एण्ड फारेन-ओन्ड बैंक्स"। इकॉनमिक रिव्यू, 90-4। फेडरल रिजर्व बैंक ऑफ अटलांटा।

8.90 कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में विदेशी बैंकों का प्रवेश बैंकिंग संकट के बाद अपनी वित्तीय प्रणालियों की कार्यकुशलता और स्थिरता में सुधार लाने के लिए एवं कमजोर घरेलू बैंकों के पुनःपूँजीकरण को कम करने के लिए भी स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा की गई पहलों का परिणाम रहा है। उभरती अर्थव्यवस्थाओं में जोखिम की माप और प्रबंध में सुधारों के साथ ही विदेशी बैंकों ने मानक ढाँचों का प्रयोग करते हुए बाजार और ऋण जोखिमों का परिमाण-निर्धारण और प्रबंध करने में अनुभव प्राप्त किया है। पुनर्नवीकृत समष्टि-आर्थिक नीतिगत ढाँचों और बाजार की शक्तियों पर अधिकाधिक निर्भरता ने भी ईएमई-संबंधी जोखिमों के स्वरूप को परिपक्व अर्थव्यवस्थाओं की ऐसी जोखिमों के साथ अधिक निकट से पंक्तिबद्ध कर दिया है । इन गतिविधियों ने इन देशों में विदेशी बैंकों के विस्तार को सुसाध्य कर दिया है । विभिन्न अध्ययनों में विदेशी बैंकों के बढ़े हुए प्रभाव को उभरती अर्थव्यवस्थाओं के बैंकिंग क्षेत्रों में उनके नियंत्रण और सहभागिता के रूप में, विशेष रूप से 1990 के दशक की दूसरी छमाही के दौरान और उसके बाद पाया गया है (आइशेनग्रीन और मूसा, 1998)। मुक्त व्यापार और पूँजी प्रवाहों के साथ लातीन अमरीका की अर्थव्यवस्थाओं के उदारीकरण ने नए वित्तीय उत्पादों और सेवाओं की माँग के लिए मार्ग प्रशस्त किया जिसकी पूर्ति की व्यवस्था सुधारित और पुनःसंरचित बैंकिंग प्रणालियों द्वारा की गई (एग्वीर और नोर्टन, 2000)।

8.91 उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) ने विदेशी बैंकों को प्रवेश के लिए अवसर उपलब्ध कराये क्योंकि इन देशों में ब्याज मार्जिन एवं परिचालन लागतें अनिवार्य रूप से अत्यंत अधिक थीं । इसके अलावा, ईएमई ने वित्तीय संकट के परिणामस्वरू प उत्पन्न स्थिति में विदेशी व्यापार और निवेश के लिए अधिकाधिक खुलेपन के साथ प्रतियोगिता और कार्यकुशलता प्रदान करते हुए बैंकिंग क्षेत्रों का रूपांतरण करना तथा अंतरराष्ट्रीय बैंकों से आशा करते हुए वित्तीय स्थिरता लाना चाहा (बॉक्स VIII.10)।

8.92 विदेशी बैंकों के प्रवेश के साथ अनेक संभावित लागतें और लाभ संबद्ध हैं। विदेशी बैंकों का प्रवेश मेजबान राष्ट्रों की वित्तीय प्रणालियों को मजबूत कर सकता है। बैंकों के प्रवेश से लाभ अनेक कारणों से उत्पन्न होते हैं। बैंकों की संख्या में वृद्धि सीधे प्रतियोगिता को बढ़ाती है । प्रौद्योगिकी और कुशल प्रबंधन प्रदान करने से कार्यकुशलता भी बढ़ती है जिससे सेवाओं की गुणवत्ता में समग्र सुधार संभव होता है। औपचारिक ऋण मानकों के प्रयोग के कारण ऋण के आबंटन में सुधार हो जाता है। बाजार के कुछ खंडों को विकसित करने के लिए प्रोत्साहन और विशेषज्ञता भी स्थानीय बाजारों के विकास में सहायता पहुँचाते हैं। श्रेष्ठ जोखिम प्रबंध प्रथाओं को लागू करने से भी घरेलू वित्तीय प्रणाली की सुदृढ़ता में बढ़ोतरी होती है। विदेशी बैंकों के अपेक्षाकृत अधिक मजबूत पूँजीगत आधार और मेजबान देश के व्यवसाय चक्र के प्रति उनकी कम संवेदनशीलता से वित्तीय संकट के समय स्थिरीकरण का प्रभाव पड़ता है। विदेशी बैंकों की निम्नतर लागत संरचना भी समूची बैंकिंग प्रणाली की लागत संरचना को कम करने में सहायता पहुँचाती है।

8.93 दूसरी ओर, विदेशी बैंकों के प्रवेश के प्रकार के आधार पर संकेंद्रण के कारण प्रतियोगिता की हानि हो सकती है। परिणामस्वरूप, मध्यस्थता की निम्नतर लागत के रूप में ग्राहकों के लिए लाभ प्रवेश के रूप तथा नतीजतन अनुसरण की जानेवाली कीमत-निर्धारण की कार्यनीति पर आधारित होंगे। घरेलू बैंकों के लिए बड़े विदेशी बैंकों के साथ प्रतियोगिता करने का अर्थ अतिरिक्त व्यय करना हो सकता है। एक सामान्य चिंता यह भी है कि विदेशी बैंकों के प्रवेश से छोटे ग्राहकों की उपेक्षा होगी और अंतर-बैंक बाजार के माध्यम से बड़ी कंपनियों की ओर घरेलू निधियों का विपथन होगा। इसके अलावा, ऐसी पर्यवेक्षी और विनियामक चुनौतियाँ भी हैं जो विदेशी बैंकों के प्रवेश के कारण पनपती हैं (बॉक्स VIII.11)।

8.94 विदेशी साक्ष्य यह प्रकट करता है कि विदेशी बैंकों से लाभ और लागतें असंदिग्ध नहीं हैं तथा वे वित्तीय क्षेत्र सुधारों के अनुक्रमण और संबंधित देश के विकास के स्तर के आधार पर प्रासंगिक रहे हैं। थाईलैंड, फिलीपीन्स जैसे कुछ देशों तथा केंद्रीय और पूर्वी यूरोप के देशों में विदेशी बैंकों के प्रवेश ने सुधारित प्रतियोगिता और कार्यकुशलता के लिए मार्ग प्रशस्त किया। दूसरी ओर, लातीन अमरीका के कई देशों में विदेशी बैंकों के साथ बैंकिंग आस्तियों के बढ़े हुए संकेंद्रण के कारण प्रतियोगिता के स्तर में कमी आई। सामान्य रूप से विदेशी बैंक उन विकसित देशों की अपेक्षा विकासशील देशों में अधिक प्रतियोगी दबाव उत्पन्न करते हैं जहाँ घरेलू बैंक पहले से ही प्रतियोगी हैं। वित्तीय स्थिरता और बैंकों के उधार देने के स्वरूप पर विदेशी बैंकों के प्रभाव के संबंध में अनुभवजन्य साक्ष्य का अभी कोई अंतिम निष्कर्ष नहीं निकाला गया है (बॉक्स VIII.12)।

8.95 विदेशी और देशी बैंकों के बीच सापेक्ष कार्यकुशलता के संबंध में भी विभिन्न देशों का साक्ष्य मिश्रित रहा है । विकासशील देशों के लिए समूह के रूप में विदेशी बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन घरेलू बैंकों की तुलना में कम थे। तथापि, देशी बैंकों की आस्ति की तुलना में उपरिव्यय (ओवरहेड) का अनुपात तथा आय की तुलना में लागत का अनुपात निम्नतर थे। विभिन्न क्षेत्रों में उल्लेखनीय अंतर पाये गये थे। फिर भी, दक्षिणी एशिया में मुख्य रूप से भारत में अपने कार्यनिष्पादन को प्रतिबिंबित करते हुए विदेशी बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन घरेलू बैंकों की तुलना में उच्चतर थे। तथापि, देशी बैंकों की अपेक्षा आस्ति की तुलना में ओवरहेड का अनुपात और आय की तुलना में लागत का अनुपात निम्नतर थे (सारणी 8.11)।

## बॉक्स VIII.10
## उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में विदेशी बैंकों का बढ़ता हुआ महत्व

बढ़ते हुए वित्तीय उदारीकरण के चलते अनेक उभरते बाजारों की वित्तीय प्रणाली में सर्वाधिक प्रभावशाली परिवर्तनों में से एक परिवर्तन विशेष रूप से बैंकिंग क्षेत्र में विदेशी स्वामित्व वाली वित्तीय संस्थाओं की बढ़ती हुई उपस्थिति रहा है। 1990 के दशक के दौरान कई ईएमई में बैंकिंग संकट के अनुसरण में बैंकिंग क्षेत्र के कार्यनीतिगत समेकन के एक भाग के रूप में प्राधिकारियों ने अर्थव्यवस्थाओं को विदेशी बैंकों के लिए खोल दिया। फिर भी, उभरते बाजारों में बैंकों के विदेशी स्वामित्व में वृद्धि परिपक्व और उभरते बाजारों दोनों में बैंकिंग प्रणालियों के निरंतर समेकन का एक पहलू है (मैथीसन और रोल्डोस, 2001)।

उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में विदेशी बैंकों के नियंत्रण और सहभागिता की सीमा 1990 के दशक के उत्तरार्ध के दौरान और उसके बाद बढ़ गई है। तथापि, अध्ययनों में यह पाया गया कि विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियाँ विद्यमान हैं एवं केंद्रीय यूरोप और लातीन अमरीका ने एशिया की अपेक्षा विदेशी बैंकों की उपस्थिति में अधिक वृद्धि का साक्षात्कार किया। केंद्रीय यूरोप में विदेशी बैंकों की सहभागिता, जो 1990 के दशक के उत्तरार्ध में बहुत अधिक बढ़ गई, उक्त दशक के अंत तक 50 प्रतिशत से अधिक की स्थिति पर पहुँच गई। लातीन अमरीका में यद्यपि विदेशी बैंकों की उपस्थिति अनेक दशकों पहले ही दर्ज थी, अग्रणी स्पेनी वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्रारंभ किये गये अभिग्रहण कार्यक्रम के चलते 1990 के दशक के उत्तरार्ध में विदेशी बैंकों की सहभागिता की सीमा में मात्रात्मक उछाल आई है। उदाहरण के लिए 1994 के अंत तक अर्जेन्टीना और चिली में विदेशी बैंकों की अपेक्षाकृत बड़ी उपस्थिति थी, तथा विदेशी नियंत्रण के अंतर्गत आस्तियों का अंश 50 प्रतिशत तक बढ़ गया जिसके बाद 1996-97 में विलयों और अभिग्रहणों की एक शृंखला देखी जा सकती है (मैथीसन और रोल्डोस, 2001)। मेक्सिको में बैंकिंग क्षेत्र की कुल आस्तियों में विदेशी बैंकों का अंश 75 प्रतिशत से अधिक रहा।

लातीन अमरीका के चयनित देशों में विदेशी और घरेलू बैंकों के कार्यनिष्पादन की तुलना से विदित हुआ कि जबकि समग्र वित्तीय स्थिति में देशी बैंकों की अपेक्षा विदेशी बैंकों का बहुत कम अंतर रहा, उन्होंने अधिक तीव्र ऋण वृद्धि, आस्ति की गुणवत्ता में कमी के प्रति एक अधिक आक्रामक प्रतिक्रिया, हानियों का अवशोषण करने की अधिक सामर्थ्य की विलक्षणता दर्शाई जिससे उनके मेजबान देशों की वित्तीय प्रणालियों को मजबूत करने में सहायता मिल सकी (गोल्डबर्ग, क्रिस्टल और डेजस, 2002)। केंद्रीय यूरोप और लातीन अमरीका की तुलना में एशिया में विदेशी बैंकों ने अपेक्षाकृत छोटी भूमिका निभाई जो अंशतः विशेष रू प से स्थानीय खुदरा बैंकिंग बाजारों में सीमित प्रवेश के संबंध में सरकारी नीतियों के रुझान के कारण था।

पिछले दशक ने भी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में विदेशी बैंकों की भूमिका के रूपांतरण को देखा है। पहला, जबकि बड़े विदेशी बैंकों ने चयनित बाजारों में अपने परिचालनों का विस्तार किया, कुछ मध्यम आकार वाले विदेशी बैंकों ने भी 1990 के दशक के मध्य से ईएमई में प्रवेश किया। तदनुसार, अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआइएस) को रिपोर्ट करनेवाले बैंकों के अंतरराष्ट्रीय दावों में एशिया, लातीन अमरीका तथा मध्य और पूर्वी यूरोप के सभी उभरते बाजारों में भारी वृद्धि हुई (सारणी क)। दूसरा, जबकि प्रारंभ में विदेशी बैंकों ने अपने पारंपरिक ग्राहकों को सेवाएँ प्रदान कीं, बाद में उन्होंने भी ईएमई में स्थानीय ग्राहकों को आक्रामक तौर पर लक्ष्यीकृत करना प्रारंभ किया। इस गतिविधि का एक द्योतक यह है कि विदेशी बैंकों के प्रधान कार्यालयों द्वारा विदेशों में दिये जानेवाले प्रत्यक्ष उधार की अपेक्षा उनकी विदेशी संबद्ध संस्थाओं (एफीलियेट्स) के स्थानीय उधार को क्रमिक रूप में कहीं अधिक महत्व मिलता रहा है। स्थानीय खुदरा कार्यकलापों पर विदेशी बैंकों के बढ़ते फोकस के परिणामस्वरूप विश्व भर में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में बीआइएस को रिपोर्ट करनेवाले बैंकों के स्थानीय दावों में प्रचुर मात्रा में वृद्धि हुई (सारणी क)। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में विदेशी बैंकों की

### सारणी क : उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में बीआइएस रिपोर्टिंग बैंकों के अंतरराष्ट्रीय और स्थानीय दावे

| मद | वर्ष | एशिया | लातीन अमरीका | मध्य और पूर्वी यूरोप | अन्य |
|---|---|---|---|---|---|
| **अंतरराष्ट्रीय** | 1995 | 745 | 188 | 76 | 61 |
| **दावे*** | 2000 | 471 | 257 | 87 | 91 |
| (बिलियन | 2005 | 590 | 196 | 190 | 105 |
| अमरीकी डॉलर) | 2007 | 961 | 251 | 353 | 186 |
| **स्थानीय दावे**** | 1995 | 159 | 28 | 3 | 1 |
| (बिलियन | 2000 | 286 | 165 | 35 | 7 |
| अमरीकी डॉलर) | 2005 | 529 | 331 | 175 | 17 |
| | 2007 | 730 | 505 | 276 | 114 |
| **स्थानीय दावे/** | 1995 | 21 | 15 | 4 | 2 |
| **अंतरराष्ट्रीय दावे** | 2000 | 61 | 64 | 40 | 8 |
| (प्रतिशत) | 2005 | 90 | 169 | 92 | 17 |
| | 2007 | 76 | 202 | 78 | 61 |

* : सभी मुद्राओं में बीआइएस के रिपोर्टिंग बैंकों के सीमापार दावे और विदेशी मुद्राओं में उनकी विदेशी संबद्ध संस्थाओं के स्थानीय दावे।

** : स्थानीय मुद्राओं में बीआइएस के रिपोर्टिंग बैंकों के स्थानीय दावे।

**स्रोत:** बीआइएस (समेकित बैंकिंग सांख्यिकी)।

बढ़ी हुई सहभागिता इन देशों में बीआइएस के रिपोर्टिंग बैंकों के बढ़ते हुए सीमापार अंतरराष्ट्रीय दावों और स्थानीय दावों में देखी जा सकती है।

ईएमई सहित, विश्व भर में विदेशी बैंकों के बढ़ते हुए प्रभाव का एक और प्रकटीकरण विभिन्न क्षेत्रों में कुल आस्तियों में उनके बढ़ते हुए अंश में है (सारणी ख)। पूर्वी यूरोप और लातीन अमरीका में कुल आस्तियों में विदेशी बैंकों का अंश 1995-2005 के दौरान दुगुने से भी अधिक बढ़ गया। केंद्रीय और पूर्वी यूरोप के कुछ देशों में बैंकिंग प्रणाली की कुल आस्तियों का लगभग 90 प्रतिशत विदेशी बैंकों का रहा। फिर भी, एशिया में कुल आस्तियों में विदेशी बैंकों का अंश बहुत कम था और इस अवधि के दौरान वह एक ही समान स्तर पर अवरुद्ध रह गया।

### सारणी ख : विभिन्न क्षेत्रों में विदेशी बैंकों की आस्तियाँ (प्रतिशत)

| क्षेत्र | 1995 | 2005 |
|---|---|---|
| सभी देश | 15 | 23 |
| उत्तरी अमरीका | 10 | 21 |
| पश्चिमी यूरोप (19) | 23 | 29 |
| पूर्वी यूरोप (8) | 24 | 58 |
| लातीन अमरीका (14) | 18 | 38 |
| अफ्रीका (25) | 8 | 8 |
| मध्य पूर्व (25) | 14 | 17 |
| मध्य एशिया (4) | 2 | 2 |
| पूर्वी एशिया और ओशेनिया (13) | 5 | 6 |

**टिप्पणी :** कोष्ठक में आंकड़े बैंकों की संख्या दर्शाते हैं।

**स्रोत :** अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अप्रैल 2007।

### संदर्भ :

गोल्डबर्ग, एल.एस.,क्रिस्टल, जे और डेजस, बी.जी. 2002। "हैज फारीन बैंक एंट्री लेड टू साउण्डर बैंक्स इन लैटीन अमरीका ?" *करंट इश्यूज इन इकनॉमिक्स एण्ड फाइनैंस*, खंड 8, सं. 1।

मैथीसन, डोनाल्ड जे. और रोल्डोस, जे. 2001। "दी रोल आफ फारीन बैंक्स इन एमर्जिंग मार्केट्स" तृतीय वार्षिक वित्तीय बाजार और विकास सम्मेलन, विश्व बैंक, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, और ब्रूकिंग्स इन्स्टीट्यूशन के लिए तैयार किया गया।

## बॉक्स VIII.11
## विदेशी बैंकों के प्रवेश की लागत और लाभ

विदेशी बैंकों के प्रवेश के आम तौर पर रेखांकित लाभ निम्नलिखित हैं। पहला, वह प्रतियोगिता का उत्थान तथा कार्यकुशलता का संवर्धन करता है जिससे लागतों में कमी अथवा उत्पादकता में वृद्धि होती है। जब कोई विदेशी बैंक ग्रीनफील्ड निवेश के माध्यम से प्रवेश करता है और नए सिरे से (द नोवो) कोई संस्था स्थापित करता है, तब मेजबान देश में बैंकों की संख्या में वृद्धि प्रत्यक्ष रूप से प्रतियोगिता को बढ़ाती है। विलय और अभिग्रहण द्वारा प्रवेश, जो अधिक उन्नत प्रणालियाँ और जोखिम प्रबंध लागू करते हुए अधिक कुशलताप्राप्त प्रबंध मुहैया कराता है और अभिशासन (गवर्नेंस) का कोटि-उन्नयन करता है, मेजबान देश में अन्य बैंकों को इस बात के लिए विवश कर सकता है कि वे अपने बाजार अंशों की रक्षा का लिए अपनी कार्यकुशलता में सुधार लाएँ।

दूसरा, विदेशी बैंकों का प्रवेश ऋण के आबंटन में सुधार लाता है, जैसा कि ऋण संबंधी निर्णय लेने में है, वे औपचारिक ऋण मानकों का प्रयोग करते हैं और जोखिम-समायोजित कीमत-निर्धारण करते हैं तथा अन्य प्रकार के विचारों के प्रभाव में नहीं आते हैं।

तीसरा, विदेशी बैंक स्थानीय वित्तीय बाजारों के विकास में सहायता करते हैं क्योंकि निधीयन, डेरिवेटिव और प्रतिभूति बाजारों जैसे स्थानीय बाजार के कुछ खंडों का विकास करने के लिए उनके पास दोनों प्रोत्साहन और विशेषज्ञता उपलब्ध हैं। विदेशी बैंक जिनके पास अपने कार्यकलापों के जमा वित्तपोषण की गारंटी देने के लिए कोई शाखा नेटवर्क नहीं है, बहुत संभवतः अंतर-बैंक बाजार की ओर उन्मुख होते हैं। विदेशी बैंक स्थानीय विदेशी मुद्रा बाजारों में व्यावसायिक विशेषज्ञता उपलब्ध कराकर भी योगदान कर सकते हैं। वे अकसर विशेष रूप से कंपनी ग्राहकों को संरचित उत्पादों सहित विभिन्न प्रकार की नई वित्तीय सेवाएं प्रदान करने के द्वारा बाजारों का निर्माण करने अथवा उत्पादों के नवोन्मेषण के माध्यम से बाजार का अंश प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।

चौथा, विदेशी मूल बैंको की जोखिम प्रबंधन प्रथाएं लागू कर देशी वित्तीय प्रणाली की समग्र सुदृढ़ता बढ़ा दी जाती है । सख्त ऋण समीक्षक नीतियों और प्रथाओं के आधार पर, वे आस्ति गुणवत्ता में आई गिरावट का समाधान करने के लिए अधिक आक्रमक उपाय करते हैं तथा वित्तीय प्रणाली में अनर्जक आस्तियों के निर्माण को सीमित करते हैं।

पांचवां, वित्तीय संकट के अवसर पर विदेशी बैंक स्थिरीकरण करने का प्रभाव डालने का प्रयास करते हैं क्योंकि यदि आवश्यकता हो तो मूल बैंक द्वारा अधिक मजबूत पूँजीकरण एवं अतिरिक्त निधियों के अंतःक्षेपण की संभावना विफलता की संभाव्यता को कम कर देती है। इसी के लिए विदेशी बैंक घरेलू और मेजबान देश दोनों के व्यावसायिक चक्रों के प्रति कम संवेदनशील होते हैं तथा इसके परिणामस्वरूप इस बात की संभावना है कि दबाव के अवसरों पर सीमा पार उधार देने अथवा बाजारों में देशी बैंकों के उधार देने की अपेक्षा स्थानीय बाजार में स्थानीय निवासियों को उधार देना अधिक स्थिरता से युक्त है। इसके अलावा, जब संकट की स्थिति में विदेशी बैंक परिचालन करना जारी रखते हैं, तब समग्र रूप में प्रणाली के कार्यात्मक होने की संभावना बढ़ जाती है।

छठा, बैंकिंग प्रणाली में निम्नतर लागत की संरचनाओं से दीर्घकालिक लाभ हो सकते हैं । सामान्यतः यह पाया गया है कि विदेशी बैंक कम प्रशासनिक लागतों के साथ परिचालन करते हैं, जैसा कि लातीन अमरीका और अधिकांश अन्य विकासशील देशों में देखा गया है (कल और पेरिया, 2004)। तथापि, यह देखा गया कि भारत जैसे कुछ देशों में विदेशी बैंकों की परिचालन लागत देशी बैंकों की तुलना में अधिक है।

सातवाँ, सामान्यतः विदेशी स्वामित्व दोनों प्रबंधकीय और परिचालनगत स्तर पर श्रम शक्ति के अंतरण को संबद्ध करता है। इसका पूरक बैंक ऑफिस रुटीनों अथवा ऋण नियंत्रण प्रणालियों जैसी "सुलभ" (सॉफ्ट) बुनियादी संरचना का अंतरण है। कार्यविधियों के मानकीकरण के माध्यम से बड़े पैमाने की किफायतों का लाभ उठाने के लिए ऐसे अंतरणों का महत्व बढ़ गया है।

विदेशी बैंकों के प्रवेश के साथ अनेक लागतें भी संबद्ध हो सकती हैं।

पहले, विदेशी बैंकों के प्रवेश से संकेंद्रण और प्रतियोगिता की हानि भी हो सकती है। अनेक देशों में विदेशी बैंकों ने मुख्य रूप से मौजूदा देशी बैंकों के अभिग्रहण द्वारा प्रवेश किया, जबकि कुछ देशों में विदेशी बैंकों की प्रतियोगिता की प्रतिक्रिया के रूप में देशी बैंकों का समेकन और संकेंद्रण घटित हुआ।

दूसरे, यद्यपि विदेशी बैंकों का प्रवेश ब्याज मार्जिनों को कम कर सकता है तथा वित्तीय मध्यस्थता की प्रक्रिया को संभवतः प्रोत्साहित करता है, तथापि यह प्रभाव उसके द्वारा लिये जानेवाले प्ररूप पर आधारित होगा और उससे सभी उधारकर्ता लाभान्वित नहीं हो सकेंगे। उक्त लाभ इस बात पर निर्भर होंगे कि क्या निम्नतर स्प्रेड सभी स्तरों पर समान रूप से अधिक आक्रामक कीमत-निर्धारण की कार्यनीति का परिणाम है अथवा बैंकों द्वारा केवल उन सर्वाधिक पारदर्शी खंडों को उधार देने का चयन करने का परिणाम है, जहाँ अधिक प्रतियोगिता है या कम से कम अधिकाधिक बाजार स्पर्धनीयता है।

तीसरे, विदेशी बैंकों की बढ़ती हुई उपस्थिति पर्यवेक्षी प्राधिकारियों के समक्ष विद्यमान कार्यों की जटिलता को बढ़ा सकती है और इस प्रकार विनियामक संघर्षों को प्रेरित कर सकती है। यह उन देशों में विशेष रूप से चिंताजनक हो सकता है जहाँ विदेशी वाणिज्य बैंक बीमा, संविभाग प्रबंध, और निवेश बैंकिंग जैसी बैंकेतर वित्तीय सेवाओं के क्षेत्र में तीव्र गति से अपने परिचालनों का विस्तार करते हैं। कई अंतरराष्ट्रीय तौर पर सक्रिय बैंकों की जटिल संरचना को देखते हुए विदेशी बैंकों के अंदर विद्यमान अंगभूत मुद्दों को अधिकाधिक संभावित प्रणालीगत महत्व के मुद्दों के रूप में दर्शाया जा रहा है (सोंग, 2004)।

चौथे, विदेशी बैंक देश को अपने प्रवेश के साथ संबद्ध कुछ अधोमुखी जोखिमों/चुनौतियों के प्रति एक्सपोज कर देते हैं। अधिक आश्चर्यजनक रूप से उभरते बाजारों में देशी बैंक सामान्यतः लागतों को स्वयं वहन करते हैं क्योंकि उन्हें खास तौर से विकासशील विश्व में बेहतर प्रतिष्ठा से युक्त बड़े अंतरराष्ट्रीय बैंकों के साथ प्रतियोगिता करनी होती है।

पाँचवें, एक सामान्य चिंता यह है कि चूँकि विदेशी बैंकों ने ऐतिहासिक रूप से मूल देश के ग्राहकों का अनुसरण किया है अथवा कारपोरेट ग्राहकों को सेवाएँ उपलब्ध कराने में विशेषज्ञता हासिल की है, अतः उनके प्रवेश से ग्रामीण ग्राहकों एवं छोटे और मध्यम आकार के फर्मों की उपेक्षा करने के लिए मार्ग प्रशस्त होता है। एक और चिंता यह है कि विदेशी बैंकों द्वारा काफी मात्रा में अपने निधीयन के लिए अंतर-बैंक बाजार का प्रयोग करने के कारण स्थानीय बैंक घरेलू ऋणों से अपनी निधियों का विपथन अंतर-बैंक बाजार में कर सकते हैं जिससे वे छोटी कंपनियों की कीमत पर बड़े कारपोरेटों की ओर निधि को प्रवृत्त करते हैं।

छठे, यह भी तर्क दिया जाता है कि यह आवश्यक नहीं कि विदेशी बैंकों की उपस्थिति से घरेलू उधारकर्ताओं को ऋण का एक अधिक स्थिर स्रोत प्राप्त होगा, क्योंकि विदेशी बैंक समय-समय पर जोखिम प्रबंध के प्रयोजनों के लिए निधियों का अंतरण अचानक एक बाजार से दूसरे बाजार में कर देते हैं। साहित्य से भी यह संकेत मिलता है कि यदि उनके अपने मूल बैंक कमजोर हैं तो विदेशी बैंकों द्वारा किसी संकट के दौरान अपनी निधियों का अंतरण अधिक आकर्षक बाजारों में किये जाने की अधिक संभावना होगी।

**संदर्भ :**

कल, आर. और पेरिया, एम.एस.एम. 2007। ''फारिन बैंक पार्टिसिपेशन एण्ड क्राइसेस इन डेवलपिंग कंट्रीज।'' *वर्ल्ड बैंक पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर* सं. 4128।

सोंग, इनवोन, 2004। ''फारेन बैंक सुपरविजन एण्ड चैलेंजेस टू एमर्जिंग मार्केट सुपरवाइजर्स।'' *आइएमएफ वर्किंग पेपर* सं, डब्ल्यूपी/04/82।

## बॉक्स VIII.12
## विदेशी बैंकों के प्रवेश के लाभ और लागतें : विभिन्न देशों के साक्ष्य

विदेशी बैंकों के प्रवेश के लाभों और लागतों के संबंध में अनुभवजन्य साक्ष्य मिश्रित रहा है। प्रतियोगिता पर विदेशी बैंकों के प्रभाव के संबंध में थाईलैंड के संदर्भ में चांतापोंग और मेंकहॉफ (2005) यह व्यक्त करते हैं कि एक बड़ी सीमा तक देशी बैंक 1995-2003 के दौरान तथा उल्लेखनीय रूप में 1997 के वित्तीय संकट के बाद सर्वोत्तम प्रथा मानकों के अनुरूप स्वयं को ढाल सके, जिसका आंशिक कारण यह था कि अभिग्रहणों के माध्यम से अधिकाधिक विदेशी सहभागिता के कारण बैंकिंग उद्योग में प्रतियोगिता का दबाव बढ़ा और देशी बैंकों की वित्तीय पुनःसंरचना की गई। फिलीपींस के बैंकिंग क्षेत्र के संदर्भ में युनाइट और सलिवान (2002) ने भी पाया कि विदेशी बैंकों का प्रवेश ब्याज दर स्प्रेडों और बैंक के लाभों में कमी के साथ संबद्ध था, परंतु यह उन्हीं देशी बैंकों के संबंध में लागू था जो किसी खानदानी व्यावसायिक समूह के साथ संबद्ध थे। सामान्य रूप से विदेशी बैंकों के प्रवेश से परिचालनगत कार्यकुशलता में सुधार हुआ, परंतु इससे ऋण संविभागों में कमी आई। मध्य और पूर्वी यूरोप के 10 देशों को नमूने के तौर पर लेकर 1995-2001 के बीच 219 बैंकों के कार्यनिष्पादन का विश्लेषण करते हुए उइबाउपिन (2004) ने इस धारणा के अनुरूप साक्ष्य प्रस्तुत किया कि विदेशी बैंकों के प्रवेश ने प्रतियोगिता को बढ़ाया।

दूसरी ओर 11 लातीन अमरीकी देशों में संवर्धित समेकन और विदेशी बैंकों के प्रवेश की जाँच करते हुए यिल्दिरिम और फिलिपैटोस (2007) ने पाया कि 1990 के दशक के अंतिम वर्षों में ब्राजील, चिली और वेनेज्वेला के लिए प्रतियोगिता में कमी आई थी जो बढ़े हुए समेकन के कारण ही माना जा सकता है। फिर भी, उन्होंने पाया कि अविनियमन और विदेशी सहभागिता के लिए वित्तीय बाजारों को खोल देने की गतिविधि ने बैंकिंग बाजारों की प्रतियोगात्मकता को बढ़ाने के लिए एक महत्वपूर्ण उत्प्रेरक के रूप में कार्य किया। मेक्सिको के मामले में विदेशी बैंकों की सहभागिता ने प्रतियोगिता और कार्यकुशलता में वृद्धि को प्रेरित नहीं किया और इसके स्थान पर उधार देने में कटौती के लिए मार्ग प्रशस्त किया (हैबर और मुसैच्चियो, 2005)। चीन के मामले में हुआंग आदि (2007) ने तर्क दिया कि इस संबंध में निष्कर्ष निकालना कठिन है कि क्या विदेशी बैंकों के प्रवेश ने चीन के घरेलू बैंकों की प्रतियोगितात्मकता में वृद्धि की है।

यह देखा गया कि विदेशी बैंकों के प्रवेश से लाभ वित्तीय क्षेत्र सुधारों के अनुक्रमण और आर्थिक विकास के स्तर पर निर्भर हैं। 30 विकासशील और विकसित देशों से संबंधित आंकड़ों का उपयोग करते हुए बेरक्तर और वांग (2004) ने पाया कि विदेशी बैंकों के प्रवेश ने उन देशों में घरेलू बैंकों की प्रतियोगात्मकता में उल्लेखनीय रूप में सुधार किया था जिन्होंने पहले अपने शेयर बाजार का उदारीकरण किया। इन देशों में दोनों लाभ और लागत के संकेतक विदेशी बैंकों के अंश के साथ ऋणात्मक रूप से संबंधित थे। ऐसा प्रतीत हुआ कि जिन देशों ने पहले अपने पूँजी खाते का उदारीकरण किया, उन्होंने अन्य दो सेटों के देशों की तुलना में विदेशी बैंकों के प्रवेश से कम लाभ उठाया है।

साहित्य से भी यह संकेत मिलता है कि घरेलू बैंकों पर विदेशी बैंकों के प्रवेश का प्रभाव विकसित और विकासशील देशों में एकसमान नहीं है। उदाहरण के लिए 80 देशों के 7900 बैंकों के नमूने के आधार पर क्लेसेन्स आदि (2001) ने पाया कि यद्यपि विदेशी बैंकों का प्रवेश देशी बैंकों की लाभप्रदता और मार्जिनों में कमी के लिए कारण बना, तथापि विकासशील देशों में घरेलू बैंकों की तुलना में विदेशी बैंकों के लाभ अधिक थे, जबकि विकसित देशों में इससे विपरीत स्थिति थी। यह संभवतः संगठनात्मक समस्या, स्थानीय ग्राहकों की बेहतर समझ एवं भाषा और संस्कृति की भिन्नता जैसे घरेलू आधारभूत लाभ के कारण हो सकता है। इसके परिणामस्वरूप विदेशी बैंक विकसित देशों में घरेलू बैंकों के ब्याज मार्जिनों, परिचालन व्यय और लाभप्रदता आदि पर कोई प्रभाव डालने में असमर्थ हैं।

अर्थव्यवस्था और वित्तीय क्षेत्र की स्थिरता पर विदेशी बैंकों के प्रवेश के प्रभाव के संबंध में साक्ष्य भी अस्पष्ट रहा है। कुछ उभरते बाजारों में यह देखा गया है कि संकट की अवधियों के पहले और बाद में विदेशी बैंकों ने स्थिरकारी का प्रभाव डाला है क्योंकि यह प्रतीत होता है कि देशी बैंकों की तुलना में वे संकट की अवधियों में अपने उधार देने के कार्य में उल्लेखनीय रूप में कमी नहीं करते। अर्जेन्टीना और मेक्सिको में विदेशी बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋण स्थानीय स्वामित्व वाले बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋण की तुलना में अधिक स्थिर था (गोल्डबर्ग आदि , 2000)। मलेशिया में 1997-98 के संकट के दौरान विदेशी बैंकों ने स्थानीय बाजारों का परित्याग नहीं किया और उन्होंने देशी संस्थाओं की तुलना में सरकारी सहायता कम प्राप्त की (डेट्रागियाच और गुप्ता, 2004)। दूसरी ओर, विभिन्न देशों के संदर्भ में यह देखा गया कि विदेशी स्वामित्व ने न तो अर्थव्यवस्था पर और न ही वित्तीय क्षेत्र की स्थिरता पर असंदिग्ध प्रभाव दर्शाया।

विदेशी और घरेलू बैंकों के व्यावसायिक फोकस में भिन्नता के संबंध में अनुभवजन्य साक्ष्य मिश्रित रहा है। मध्य यूरोप में देखा गया कि मजबूत प्रतियोगिता और उल्लेखनीय रूप में प्रवेश के कारण विदेशी बैंकों ने छोटे और मध्यम आकार वाले उद्यमों और घर-परिवारों को उधार देने पर अधिकाधिक ध्यान केंद्रित किया। फिर भी, अधिकांश उभरते बाजारों में स्थानीय उद्योग की सीमित जानकारी के कारण लघुतर फर्मों को उधार देने के संबंध में विदेशी बैंक सतर्क थे। इस प्रकार विभिन्न देशों के संबंध में ऐसा कोई निर्णायक अनुभवजन्य साक्ष्य नहीं है कि विदेशी बैंकों का प्रवेश छोटे और मझौले आकार के उद्यमों को दिये जानेवाले उधार को प्रतिकूल रूप में प्रभावित करे।

**संदर्भ :**

क्लासेन्स, एस., डेमिरगुक-कुन्ट, ए. और ह्यूजिंगा, एच. 2001। "हाउ डज फारेन एन्ट्री अफेक्ट डोमेस्टिक बैंकिंग मार्केट्स ?" *जर्नल ऑफ बैंकिंग एण्ड फाइनैंस,* खंड 25, सं. 5।

उइबाउपिन, जे. 2004। "इंप्लिकेशन्स ऑफ फारिन बैंक एन्ट्री ऑन सेंट्रल एण्ड ईस्ट यूरोपियन बैंकिंग मार्केट।" *क्रून एण्ड इकनॉमी,* सं. 1, पृ. 25-35।

यिल्दिरिम, एच. एस. और जी. सी. फिलिपैटोस, 2007। रीस्ट्रक्चरिंग, कन्सॉलिडेशन एण्ड कम्पीटिशन इन लैटिन अमेरिकन बैंकिंग मार्केट्स। *जर्नल ऑफ बैंकिंग एण्ड फाइनैंस,* खंड 31, सं. 3।

**सारणी 8.11 : विकासशील क्षेत्रों में विदेशी और देशी बैंक कार्यनिष्पादन के संकेतक - 1998-2005 (औसत)**

| श्रेणी | निवल ब्याज मार्जिन (%) | आस्तियों की तुलना में ओवरहेड अनुपात (%) | आस्तियों की तुलना में करों का अनुपात | आस्तियों की तुलना में ऋण- हानि रिजर्व का अनुपात | सकल ऋणों की तुलना में ऋण-हानि रिजर्व | आस्तियों की तुलना में कर-पूर्व लाभ का अनुपात | आय की तुलना में लागत का अनुपात |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| **विकासशील देश** | | | | | | | |
| देशी | 7.27 | **5.72** | **0.53** | 4.51 | **8.32** | **1.69** | **69.60** |
| विदेशी | 6.86 | **6.30** | **0.63** | 3.63 | **7.27** | **1.29** | **76.52** |
| **पूर्वी एशिया और पैसिफिक** | | | | | | | |
| देशी | 3.84 | 2.68 | **0.35** | **3.26** | **6.01** | **0.66** | 63.98 |
| विदेशी | 3.83 | 3.03 | **0.57** | **10.35** | **11.85** | **2.04** | 62.10 |
| **यूरोप और मध्य एशिया** | | | | | | | |
| देशी | **7.71** | **6.55** | **0.67** | **5.24** | **8.13** | **2.08** | **67.86** |
| विदेशी | **6.02** | **5.59** | **0.41** | **2.92** | **5.70** | **1.43** | **73.73** |
| **लातीन अमरीका और कैरिबियन** | | | | | | | |
| देशी | **9.79** | 7.55 | **0.44** | 3.06 | 7.23 | **1.84** | 76.74 |
| विदेशी | **7.83** | 8.05 | **0.83** | 2.74 | 7.52 | **0.63** | 81.30 |
| **मध्य पूर्व और उत्तरी अफ्रीका** | | | | | | | |
| देशी | 3.57 | **2.16** | 0.25 | 5.84 | 12.66 | 1.08 | **59.78** |
| विदेशी | 3.71 | **2.69** | 0.27 | 8.25 | 16.07 | 0.90 | **76.09** |
| **दक्षिणी एशिया** | | | | | | | |
| देशी | 2.85 | 2.52 | **0.44** | 2.47 | 6.35 | **0.92** | 64.75 |
| विदेशी | 3.75 | 2.38 | **1.02** | 1.62 | 7.06 | **2.46** | 51.07 |
| **उप सहारन अफ्रीका** | | | | | | | |
| देशी | 10.08 | 7.76 | 0.79 | **8.52** | **12.56** | 2.55 | 74.08 |
| विदेशी | 9.07 | 7.24 | 0.81 | **3.31** | **5.54** | 1.89 | 81.40 |
| **विकसित देश** | | | | | | | |
| देशी | 2.63 | 2.20 | 0.27 | **1.92** | 3.19 | 1.01 | **59.78** |
| विदेशी | 1.80 | 1.74 | 0.23 | **1.40** | 2.69 | 1.26 | **55.86** |

**टिप्पणी :** मोटे अंकों में जोड़े विदेशी और देशी बैंकों के लिए तदनुरूपी संकेतकों के साधनों में अंतर को सूचित करते हैं तथा 10 प्रतिशत के स्तर पर सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण हैं। निवल ब्याज मार्जिन अर्जक आस्तियों के प्रतिशत के रूप में निवल ब्याज आय है।

**स्रोत :** वैश्विक विकास वित्त, 2008, विश्व बैंक।

8.96 भारत में विदेशी बैंकों की उपस्थिति स्वतंत्रता-पूर्व अवधि से ही रही है। तथापि, स्वतंत्रता के बाद सरकारी क्षेत्र के बैंकों की बढ़ी हुई सहभागिता के चलते घरेलू बैंकिंग क्षेत्र को मजबूत करने पर अधिकाधिक बल दिया गया। वित्तीय क्षेत्र के सुधार प्रारंभ करने के बाद भारत में विदेशी बैंकों के प्रवेश के लिए आगे और खुलापन लाया गया। 1991 में सीएफएस और 1998 में सीबीएसआर ने प्रतियोगिता और कार्यकुशलता में वृद्धि करने के लिए विदेशी बैंकों के लिए भारतीय बैंकिंग क्षेत्र को और खोलने की सिफारिश की। सीएफएस ने यह प्रस्तुत किया कि और अधिक विदेशी बैंकों के प्रवेश से भारतीय बैंकिंग क्षेत्र की प्रतियोगी कुशलता बढ़ेगी और घरेलू बैंकों को इस बात के लिए प्रोत्साहन मिलेगा कि वे बैंकिंग प्रौद्योगिकी और व्यावसायिक अभिशासन प्रथाएँ प्रारंभ करें। इसके अलावा, विश्व व्यापार संगठन के व्यापार एवं सेवा संबंधी सामान्य करार (जीएटीएस) के अंतर्गत भारत में विदेशी बैंकों के विस्तार के लिए एक पटल (विंडो) खोला गया। प्रारंभ में जीएटीएस के अंतर्गत भारत ने दोनों नए और मौजूदा विदेशी बैंकों को पाँच अतिरिक्त शाखा लाइसेंस जारी करने के लिए प्रतिबद्धता की। उसके बाद, जुलाई 1995 में हस्ताक्षर किये गये एक पूरक करार में पाँच शाखाओं की इस सीमा को बढ़ाकर आठ शाखाएं किया गया तथा फरवरी 1998 में इसमें और वृद्धि करते हुए इसे बाहर शाखाएँ कर दिया गया। विदेशी बैंकों की अधिक शाखाओं को अनुमति प्रदान करने के साथ उन्हें उनके परिचालनों में और लचीलापन देते हुए भारत विश्व व्यापार संगठन संबंधी 12 शाखाओं की प्रतिबद्धता से आगे निकल गया। वास्तव में, प्रत्येक वर्ष अनुमति दी गई शाखाओं की संख्या विश्व व्यापार संगठन संबंधी प्रतिबद्धताओं से पहले ही अधिक रही है।

8.97 प्रारंभ में भारत में विदेशी बैंकों को प्रवेश करने और केवल नए सिरे से खोली गई (द नोवो) शाखाओं द्वारा ही विस्तार करने की अनुमति दी गई थी और उन्हें देशी बैंकों में नियंत्रक हित (स्टेक्स) प्राप्त करने की अनुमति नहीं थी। उसके बाद सभी स्रोतों से कुल विदेशी निवेश के लिए किसी निजी बैंक की प्रदत्त पूँजी के अधिकतम 74 प्रतिशत तक अनुमति दी गई थी।

8.98 भारत में विदेशी बैंकों की उपस्थिति के लिए रूपरेखा, जो दो चरणों में विभक्त थी, फरवरी 2005 में अनावृत की गई थी। पहले चरण (अप्रैल 2005-मार्च 2009) में विदेशी बैंकों को इस बात की अनुमति दी गई थी कि वे एक प्रकार की उपस्थिति के मानदंड का अनुसरण करते हुए अपनी उपस्थिति की स्थापना या तो पूर्ण स्वामित्व वाली सहायक संस्थाओं (डब्ल्यूओएस) के रू प में या मौजूदा शाखाओं को डब्ल्यूओएस के रूप में परिवर्तित करते हुए करें। भारत में शाखा विस्तार के लिए डब्ल्यूओएस को विदेशी बैंकों की वर्तमान शाखाओं के समकक्ष माना जाता है। फिर भी, डब्ल्यूओएस उपस्थिति के लिए अब तक किसी बैंक ने आवेदन प्रस्तुत नहीं किया है। दूसरा चरण अप्रैल 2009 में प्रारंभ होगा तथा विदेशी बैंकों की उपस्थिति से संबंधित आगे के उपायों का निर्णय चरण I में प्राप्त अनुभव की समीक्षा करने के बाद लिया जाएगा ।

8.99 मौजूदा प्रक्रियाओं से यह विदित होता है कि विदेशी बैंकों के संबंध में रिज़र्व बैंक द्वारा अनुसरण की जा रही विनियामक व्यवस्था भेदभाव रहित है तथा वास्तव में वह वैश्विक मानकों की दृष्टि से अधिक उदार है। यह इन तथ्यों से स्पष्ट है। (i) भारत विदेशी बैंकों को एकल श्रेणी का एक लाइसेंस जारी करता है तथा उनसे यह अपेक्षा नहीं करता कि कुछ वर्षों के बाद निम्नतर श्रेणी से उच्चतर श्रेणी के बैंकिंग लाइसेंस हेतु क्रमिक विकास करें; (ii) एकल श्रेणी के लाइसेंस से वस्तुतः उन्हें उसी स्तर पर रखा जाएगा जैसा कि किसी भारतीय बैंक को रखा जाता है तथा उनके परिचालनों के दायरे के संबंध में कोई प्रतिबंध नहीं रखे जाएँगे; (iii) विदेशी बैंकों और उनके समूह की कंपनियों द्वारा स्वचालित मार्ग के अंतर्गत विनिर्दिष्ट 18 गतिविधियों के लिए भारत में गैर-बैंकिंग वित्तीय सहायक संस्था की स्थापना के संबंध में कोई प्रतिबंध विद्यमान नहीं है; (iv) किसी भेदभाव से रहित प्रीमियम पर सभी विदेशी बैंकों के लिए जमा बीमा की सुरक्षा एकसमान रूप से उपलब्ध है; (v) पूँजी पर्याप्तता, आय निर्धारण और आस्ति वर्गीकरण आदि के लिए विदेशी बैंकों के लिए लागू विवेकपूर्ण मानदंड कुल मिलाकर वही हैं जो भारतीय बैंकों के लिए लागू हैं। इस प्रकार विदेशी बैंकों और घरेलू बैंकों की शाखाओं के बीच उनके प्राधिकरण और उनके परिचालनों की सीमा के संबंध में भारतीय विनियामक व्यवस्था आवश्यक रूप से भेदभाव-रहित है। वास्तव में कुछ लोगों की धारणा है कि भारतीय बैंकों के लिए अपेक्षित 40 प्रतिशत के स्तर की तुलना में समायोजित निवल बैंक ऋण के 32 प्रतिशत पर प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के लिए निम्नतर अपेक्षा के रूप में विदेशी बैंकों के पक्ष में कुछ सकारात्मक भेदभाव विद्यमान है। इस प्रकार भारतीय विनियामक व्यवस्था वस्तुतः काफी अधिक न्यायसंगत है तथा दोनों विकसित और उभरती अर्थव्यवस्थाओं में कई अन्य क्षेत्राधिकारों की अपेक्षा विदेशी बैंकों के लिए काफी अधिक समान अवसर क्षेत्र (लेवल प्लेइंग फील्ड) उपलब्ध कराती है (लीलाधर, 2007)।

8.100 भारत में विदेशी बैंकों की संख्या 1990 के 24 से बढ़कर 2000 के दौरान 41 हुई, यद्यपि विदेशी बैंकों की भारतीय शाखाओं के बीच विलय, वैश्विक स्तर पर बैंकों के विलय और कुछ विदेशी बैंकों के बंद हो जाने के कारण, उनकी संख्या घटकर 2005 में 29 हो गई। फिर भी, भारत में परिचालित होनेवाले कुल अनुसूचित वाणिज्य बैंकों में विदेशी बैंकों का अंश 2000 के 13.9 प्रतिशत से बढ़कर 2007 में 16.5 प्रतिशत हो गया जो देशी बैंकों की कुल संख्या में गिरावट के कारण था। फिर भी, विदेशी बैंकों की शाखाओं की संख्या 1990 के 138 से उल्लेखनीय रूप में बढ़कर 2000 में 186 हुई तथा आगे और बढ़कर 2007 में 272 हो गई । अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की कुल आस्तियों में विदेशी बैंकों का अंश 1990 के 5.6 प्रतिशत से बढ़कर 2000 में 7.5 प्रतिशत हुआ तथा 2007 में और बढ़कर 8.0 प्रतिशत हो गया (सारणी 8.12)। इस प्रकार भारत में विदेशी बैंकों के प्रवेश के संबंध में 1995 और 2004 में कार्यान्वित किये गये नीतिगत परिवर्तनों का भारतीय बैंकिंग उद्योग में उनकी उपस्थिति पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा।

**सारणी 8.12 : भारत में विदेशी बैंक**

| वर्ष | विदेशी बैंक (संख्या) | विदेशी शाखाएँ (संख्या) | भारत में परिचालित वाणिज्य बैंकों की कुल संख्या में अंश (प्रतिशत) | वाणिज्य बैंकों की कुल आस्तियों में अंश (प्रतिशत) |
|---|---|---|---|---|
| 1980 | 14 | 129 | 9.5 | 3.9 |
| 1990 | 24 | 138 | 8.8 | 5.6 |
| 1995 | 29 | 156 | 10.2 | 7.3 |
| 2000 | 41 | 186 | 13.9 | 7.5 |
| 2003 | 36 | 207 | 12.9 | 6.9 |
| 2005 | 29 | 251 | 13.6 | 6.5 |
| 2006 | 29 | 262 | 16.5 | 7.2 |
| 2007 | 29 | 272 | 16.5 | 8.0 |

**स्रोत :** भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति संबंधी रिपोर्ट (भा.रि.बैं.), विभिन्न अंक ।

## बैंकिंग और वाणिज्य

8.101 निजी क्षेत्र में नये बैंकों के लाइसेंसीकरण के लिए मार्गदर्शी निदेश रिज़र्व बैंक द्वारा 22 जनवरी 1993 को जारी किये गये थे। जनवरी 2001 में निजी क्षेत्र में नये बैंकों के प्रवेश के लिए मार्गदर्शी निदेशों की समीक्षा करते समय रिज़र्व बैंक ने किसी बैंक का सीधे प्रवर्तन करने से बड़े औद्योगिक घरानों पर विशिष्ट रूप से रोक लगाई। फिर भी, बड़े औद्योगिक घरानों के साथ संबद्ध अलग-अलग कंपनियों को निजी क्षेत्र के नये बैंकों की इक्विटी का अधिकतम 10 प्रतिशत तक, परंतु नियंत्रक हित (स्टेक) के बिना, अभिगृहीत करने की अनुमति दी गई। उक्त 10 प्रतिशत की सीमा बड़े औद्योगिक घरानों की परस्पर संबद्ध सभी कंपनियों पर लागू की गई तथा कौन-सी कंपनी किसी औद्योगिक घराने की है या उसके साथ संबद्ध है, इसके बारे में अंतिम निर्णय रिज़र्व बैंक के पास सुरक्षित है (भा.रि.बैं., 2001)।[2] किसी भी उच्चतर स्तर का अभिग्रहण रिज़र्व बैंक के पूर्व अनुमोदन के साथ होना चाहिए तथा 3 फरवरी 2004 के मार्गदर्शी निदेशों के अनुसार होना चाहिए। इसी प्रकार यह निर्धारित किया गया कि प्रस्तावित बैंक प्रवर्तक समूह की व्यावसायिक संस्थाओं और ऊपर निर्धारित किये गये रूप में इक्विटी के 10 प्रतिशत तक निवेश करनेवाली अलग-अलग कंपनी/कंपनियों के साथ भेदभाव से रहित निष्पक्ष संबंध बनाये रखेगा। बैंक प्रवर्तकों और इक्विटी के 10 प्रतिशत तक निवेश करनेवाली कंपनी/कंपनियों को कोई भी ऋण सुविधाएँ प्रदान नहीं कर सकते।

8.102 बृहत्तर पूँजी खाता परिवर्तनीयता के संदर्भ में भारतीय बैंकिंग उद्योग के समेकन की आवश्यकता के चलते एफसीएसी संबंधी समिति (अध्यक्ष : श्री एस. एस. तारापोर) ने वाणिज्यिक बैंकिंग में औद्योगिक घरानों की अधिकाधिक सहभागिता के लिए अनुमति देने की सिफारिश की। उक्त समिति ने यह पाया कि भारत में वाणिज्य बैंक, बैंकिंग समूहों के आधार पर छह अलग-अलग संविधियों द्वारा नियंत्रित हैं [अर्थात् बैंककारी कंपनी (उपक्रमों का अर्जन और अंतरण) अधिनियम, 1970; बैंककारी कंपनी (उपक्रमों का अर्जन और अंतरण) अधिनियम, 1980; भारतीय

2 'निजी क्षेत्र में नये बैंकों के प्रवेश के संबंध में मार्गदर्शी सिद्धांत' पर भा.रि.बैं. की अधिसूचना. भा.रि.बैं., 2001 ।

स्टेट बैंक अधिनियम, 1955; भारतीय स्टेट बैंक (समनुषंगी बैंक) अधिनियम, 1959; औद्योगिक विकास बैंक (उपक्रमों का अंतरण और निरसन) अधिनियम, 2003; तथा कंपनी अधिनियम, 1956)] जो बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 के अतिरिक्त हैं । ये संविधियाँ अंतःस्थापित उपबंधों से युक्त होकर अच्छे अभिशासन और समेकन में बाधा डालती हैं। अतः उक्त समिति ने सिफारिश की कि अपेक्षाकृत सुगम बाजार चालित समेकन को बढ़ावा देने के लिए उपर्युक्त संविधियों में आवश्यक विधायी संशोधन किये जाएँ ताकि सभी वाणिज्य बैंक एक ही कंपनी अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत हों तथा बैंककारी विनियमन अधिनियम के अंतर्गत विनियमित हों। उक्त समिति ने आगे यह भी सिफारिश की कि बैंकिंग प्रणाली में समेकन को बढ़ावा देने के लिए संबंधित संविधियों में जब तक संशोधन नहीं किया जाता, तब तक रिज़र्व बैंक को चाहिए कि वह भारतीय बैंकों में हित (स्टेक) धारण करने के लिए अथवा नये बैंकों का प्रवर्तन करने के लिए औद्योगिक घरानों को मामला-दर-मामला आधार पर अनुमति देने के लिए नीतियाँ विकसित करे।

8.103 2009 के बाद की अवधि के लिए वाणिज्य बैंकिंग में औद्योगिक घरानों की अधिकाधिक सहभागिता का भी तर्क दिया गया है जब विदेशी बैंकों के प्रवेश की समीक्षा की जाएगी। यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि भारत में दो सबसे बड़े निजी क्षेत्र के बैंकों में अधिकांश विदेशी शेयरधारिता पहले से ही विद्यमान है।

8.104 बैंकिंग और वाणिज्य को जोड़ने के लिए तर्क मुख्य रूप से परिचालन और सूचना की कुशलताओं से उत्पन्न होनेवाले संभावित लाभों पर आधारित हैं। यदि बड़े पैमाने की किफ़ायत और संभावना से प्राप्य लाभ हैं तो परिचालन लागत कम हो जाएगी क्योंकि उत्पादन के मान और उत्पाद के विविधीकरण में वृद्धि के साथ उत्पादन की औसत लागत घट जाएगी। साक्ष्य से यह विदित होता है कि बैंकिंग और वाणिज्य की संबद्धताएँ किसी विशिष्ट बाजार में सेवा की विशिष्ट आवश्यकता और उस सेवा को उपलब्ध कराने के लिए किसी विशिष्ट बैंक के सामर्थ्य के सम्मिलन से उत्पन्न होती हैं। इसी प्रकार, बैंकों के साथ संबद्ध होने के लिए वाणिज्यिक फर्मों को प्रोत्साहन तब मिलेगा जब संभावना से प्राप्य लाभ प्राप्त किये जाने हैं। सूचनात्मक कौशल के संबंध में यह निश्चयपूर्वक कहा जाता है कि जब बैंक गैर-वित्तीय फर्मों की इक्विटी धारण करते हैं, तब गैर-वित्तीय फर्मों की वित्तीय बाधाएँ कम कर दी जाती हैं क्योंकि बैंक अपने पास विशिष्ट सूचना होने के कारण उक्त फर्म की निधीयन की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए व्यवस्था कर सकते हैं। एक अंतरंगी बैंक किसी असंबद्ध बैंक की तुलना में उक्त फर्म के समक्ष विद्यमान जोखिमों का अधिक सही निर्धारण कर सकता है तथा अतिरिक्त सेवाएँ उपलब्ध कराने में समर्थ हो सकता है।

8.105 जबकि नीति-निर्धारकों को कोई आपत्ति नहीं होगी यदि बैंकिंग और वाणिज्य को संयोजित करने से परिचालन लागतें कम होती हैं तथा फर्मों और निवेशकों के बीच सूचना के प्रवाह में सुधार होता है, तथापि इसके अंतर्गत कई जोखिमें निहित हैं। तीन सर्वाधिक गंभीर विनियामक चिंताएँ बैंकिंग और वाणिज्य के बीच हितों के संघर्ष, प्रतियोगिता के घटे हुए स्तर और सुरक्षा जाल के प्रति खतरे से उत्पन्न होती हैं। हितों के टकराव के संबंध में प्रायः सबसे अधिक दिया जानेवाला उदाहरण बांडों के निर्गम में फर्मों की सहायता करने और उक्त निधियों का उपयोग बैंक ऋणों की अदायगी करने के लिए बैंकों के पास विद्यमान संभाव्यता है। बैंक किसी फर्म के संबंध में अपनी अंतरंग जानकारी का उपयोग उस फर्म की प्रतिभूतियों में लाभप्रद रूप में व्यापार करने के लिए भी कर सकते हैं। ऐतिहासिक रूप से बैंकिंग और वाणिज्य को अलग करने के लिए एक मुख्य कारण बैंकों के हाथों में आर्थिक शक्तियों के संकेंद्रण को कम करने की इच्छा थी। जब बैंक फर्मों की इक्विटी का बड़ा अंश धारित करते है, तब वे फर्म की इक्विटी के निवेश पर अधिकाधिक प्रतिलाभ अर्जित करने के लिए उक्त फर्म के प्रतियोगियों को वित्त प्रदान करने से इनकार कर सकते हैं। तथापि, ऐसी स्थितियाँ वहाँ संभव हैं, जहाँ प्रतियोगिता पहले से ही अपूर्ण है और पक्षपात के शिकार फर्मों के पास वित्त के कोई वैकल्पिक स्रोत नहीं हैं।

8.106 बैंकिंग और वाणिज्य को संयोजित करने से जोखिम का बृहत्तम स्रोत जमा बीमा और 'विफल न होनेवाली बहुत बड़ी' संस्थाओं, जिनके जमाकर्ताओं को संपूर्ण बीमा प्रदान किया गया है, के अंतर्गत प्रदत्त सुरक्षा जाल के प्रति खतरे तथा बैंकों को सब्सिडीकृत केंद्रीय बैंक उधार के माध्यम से संसाधनों के अपवितरण (मिसचैनलिंग) से उत्पन्न होता है। उपलब्ध कराये गये सुरक्षा जाल के कारण बैंकों के साथ संबद्ध फर्म जमाकर्ताओं की धनराशि के साथ अधिक जोखिम उठा सकते हैं जो प्रायः उन बड़ी संस्थाओं के लिए हो सकती है जिनके संबंध में प्राधिकारियों की ओर से अंतर्निहित गारंटी है। बैंक केंद्रीय बैंक से सस्ती लागत पर निधियाँ प्राप्त कर वाणिज्यिक फर्म को उपलब्ध करा सकता है। दूसरी ओर, पूँजी प्रदान करने के लिए संबद्ध वाणिज्यिक संस्था से अशोध्य आस्तियाँ बढ़ी हुई कीमत पर फर्मों से आस्तियाँ खरीदकर अथवा बाजार दरों से कम दरों पर धनराशि उधार देकर बैंक को अंतरित की जा सकती हैं। यद्यपि विनियामक निगरानी द्वारा और औपचारिक जाँच के माध्यम से बैंकों के जोखिम उठाने के प्रोत्साहनों को कम कर देते हैं, तथापि जब बैंकिंग और वाणिज्य को सम्मिलित किया जाता है तब यह पर्यवेक्षी कार्य अधिक कठिन हो जाता है।

8.107 अनुभवजन्य रूप में, विभिन्न देशों के संदर्भ में बैंक और वाणिज्य को संबद्ध करने की लागत और लाभ एक अनिर्णीत मुद्दा है। यह तर्क दिया जाता है कि जर्मन सर्वव्यापी बैंकिंग प्रणाली "हासबैंक" में सर्वव्यापी बैंकों द्वारा कंपनियों पर स्वामित्व और नियंत्रण ने कंपनियों पर बेहतर कारपोरेट नियंत्रण की व्यवस्था के लिए मार्ग प्रशस्त किया। जापान के मामले में भी ऐसी ही धारणा व्यक्त की जाती है जहाँ बैंक और वाणिज्य को सम्मिलित करने के द्वारा प्रमुख बैंक, दुर्बल संविदा प्रवर्तन से युक्त परिवेश में ऋण प्रदान करते हुए वित्तीय रूप से संकटग्रस्त कंपनियों को बचा सकते हैं। कम विकसित अर्थव्यवस्थाओं के लिए जहाँ संविदाएँ निष्प्रभावी हैं और बाजार से कीमतों के संकेत अपेक्षाकृत सूचनात्मकता से रहित हैं, वहाँ वाणिज्य और बैंकिंग को संयोजित करते हुए संबंध आधारित उधार (रिलेशनशिप-लेंडिंग) दूरी (आर्म्स लेंग्थ) वाले ऋण संबंध की तुलना में बेहतर रूप में कारगर हो सकता है (राजन और ज़िंगालेस, 1998)।

8.108 अमरीका में बैंकिंग और वाणिज्य को अलग करने की नीति का सामान्य रूप से अनुसरण 1787 से ही किया गया है और समय के चलते इसे बल मिला है। बैंकों ने वाणिज्यिक गतिविधियों में लिप्त होने के लिए बारंबार प्रयास किया है तथा वाणिज्यिक फर्मों ने अकसर बैंकों पर नियंत्रण प्राप्त करने की कोशिश की है। तथापि, फेडरल और राज्य विधायकों ने जब भी उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि या तो (i) वाणिज्यिक गतिविधियों में बैंकों की संबद्धता ने उनकी सुरक्षा और सुदृढ़ता के लिए खतरा पैदा किया है; या (ii) वाणिज्यिक फर्म बड़ी संख्या में बैंकों का अभिग्रहण कर रहे हैं, तब बैंकिंग और वाणिज्य को अलग करने के लिए बार-बार कानून पारित किये हैं (विलमैर्थ, जेआर, 2007)। इस संदर्भ में चिंताएँ अनुकूल शर्तों और छूट प्राप्त हामीदारी मानकों तथा ऋण के आबंटन में विकृतियों के साथ वाणिज्यिक संबद्ध संस्थाओं को दिए जाने वाले ऋणों से संबंधित हैं जो वाणिज्यिक संबद्ध संस्थाओं के आपूर्तिकर्ताओं और ग्राहकों को अधिमानी बैंक उधार के कारण हैं। एक नया कानून 'दि ग्राम-लीच-ब्लाइली अधिनियम' 1999 में अधिनियमित किया गया जो वाणिज्य और निवेश बैंकों को समेकन करने की अनुमति देता है, परंतु बैंकिंग और वाणिज्यिक गतिविधियों को अलग करना जारी रखता है । अमरीका के साथ-साथ कनाडा, इज़राइल, हांगकांग, इटली, मलेशिया, मेक्सिको, फिलिपीन्स और थाईलैंड सहित कई अन्य देश बैंकों का स्वामित्व प्राप्त करने के लिए गैर-वित्तीय फर्मों को अनुमति नहीं देते।

8.109 तथापि, जर्मन सर्वव्यापी बैंकिंग के बारे में एडवर्ड्स और फिश्चर (1994) द्वारा एवं जापानी फर्मों के संबंध में कांग और स्टूल्ज (2000) द्वारा प्रस्तुत अनुभवजन्य साक्ष्य ने बैंकिंग और वाणिज्य को सम्मिलित करने के लाभों का खंडन किया है। यह उल्लेखनीय है कि जर्मनी और जापान में बैंक वाणिज्यिक फर्मों में इक्विटी धारण करने के अपने अधिकार का प्रयोग करते हैं, परंतु वाणिज्यिक फर्मों के लिए बैंकों का स्वामित्व प्राप्त करना असामान्य है। इसके अलावा, बैंकिंग और वाणिज्य के सम्मिलन को उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय संकट के लिए एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में पहचान लिया गया है। उल्लेखनीय उदाहरण रहे हैं चिली का 1982 का बैंकिंग संकट, जहाँ बैंकों और कारपोरेट के बीच संपर्क के कारण विनियामक नियंत्रणों से बचनेवाले ऋणों के समाप्त न होनेवाले नवीकरणों को अनुमति दी गई थी तथा थाईलैंड का 1997 का वित्तीय संकट जहाँ बैंकों और उनकी संबद्ध संस्थाओं के बीच उच्च स्तर के संबंधित पार्टी लेनदेन थे। तथापि बैर्थ, कैप्रियो और लेवाइन (2000) ने पाया कि यदि गैर-वित्तीय फर्मों के बैंक स्वामित्व पर अधिक सख्त प्रतिबंध लगाये जाते तो बैंकिंग संकट की संभावना काफी अधिक होती।[3]

8.110 बैंकिंग और वाणिज्य का मिश्रण करने में अंतर्निहित समस्याओं को पहचानते हुए कुछ उभरते बाजारों ने दोनों गतिविधियों को अलग करने के लिए कुछ कदम उठाये हैं। सिंगापुर में बैंकों से कहा गया है कि वे अपनी गैर-वित्तीय आस्तियों का विनिवेश करें। निदेशकों, प्रबंधकों अथवा ब्रांड नामों का सहभाजन भी प्रतिबंधित किया गया है। इसी प्रकार, ब्राजील में प्रमुख बैंकों से कहा गया है कि वे अपनी गैर-वित्तीय कंपनियों से विनिवेश करें, जबकि कोरिया गणतंत्र में वित्तीय पूँजी को नियंत्रित करने से औद्योगिक पूँजी को रोकने के लिए बैंक होल्डिंग कंपनी के एकल स्वामित्व को कुल इक्विटी के 4 प्रतिशत तक सीमित कर दिया गया है।

## VII. भावी दिशा

8.111 पिछले खंड में समेकन की प्रक्रिया, सरकारी क्षेत्र के बैंकों की भूमिका, भारत में विदेशी बैंकों के परिचालन एवं बैंकिंग और वाणिज्य के संयोजन से संबंधित कुछ मुद्दों पर चर्चा की गई। बैंकिंग क्षेत्र में लाभों का आगे और समेकन करने की दृष्टि से इस खंड में ऊपर संदर्भित चारों पहलुओं में से प्रत्येक के संबंध में कुछ विशिष्ट सुझाव दिये गये हैं।

*समेकन*

8.112 हाल के वर्षों में भारतीय बैंकिंग उद्योग में कुछ विलय और समामेलन हुए हैं। फिर भी, इसके बावजूद बैंकिंग क्षेत्र में प्रतियोगिता बढ़ी है क्योंकि विलय अपेक्षाकृत छोटे बैंकों से संबद्ध हैं। वर्तमान में 15 सबसे बड़े बैंकों में से 13 सरकारी क्षेत्र में हैं जिनमें केंद्र सरकार की धारिता 51 प्रतिशत से कम नहीं हो सकती। इससे यह भी सुनिश्चित होता है कि प्रतियोगिता के लिए कोई खतरा नहीं है। तथापि, आगे बढ़ते हुए परिदृश्य बदल सकता है। सरकार को बाजार से पूँजी जुटाने के लिए सरकारी क्षेत्र के बैंकों को संभवतः अनुमति देनी होगी जैसी कि इस खंड में बाद में चर्चा की गई है। साथ ही, विदेशी बैंकों के लिए रूपरेखा की समीक्षा 2009 में की जानी अपेक्षित है। ये गतिविधियाँ जब भी घटित होंगी, तब उनकी निगरानी और उनका मार्गदर्शन सावधानीपूर्वक करने की आवश्यकता होगी ताकि बैंकिंग प्रणाली में प्रतियोगी दबावों को समग्र बैंकिंग की कार्यकुशलता के हित में बनाये रखा जा सके। विभिन्न देशों के अनुभवों से विदित होता है कि जहाँ विदेशी बैंकों के प्रवेश की अनुमति मौजूदा देशी बैंकों के अभिग्रहण के रूप में दी गई, वहाँ विदेशी प्रतियोगिता के प्रतिक्रियास्वरूप देशी बैंकों ने समेकन किया जिसके परिणामस्वरूप बैंकिंग प्रणाली में आस्तियों और देयताओं का संकेंद्रण हुआ और प्रतियोगिता की हानि हुई। विभिन्न देशों के अनुभवों से यह भी पता चलता है कि 1990 के दशक के मध्य से प्रारंभ करके उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की बैंकिंग गतिविधियों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में भारी वृद्धि हुई। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में बैंकों को लक्ष्यीकृत करके विभिन्न देशों में विलयों और अभिग्रहणों (एमएण्डए) द्वारा मापे गए प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का मूल्य 1991-95 के लगभग 2.5 बिलियन अमरीकी डॉलर से बढ़कर अगले पाँच वर्षों में 51.5 बिलियन अमरीकी डॉलर हुआ तथा 2001 से अक्तूबर 2005 तक 67.5 बिलियन अमरीकी डॉलर हो गया। लक्ष्य के रूप में उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) से वित्तीय संस्थाओं को संबद्ध करते हुए सीमापार के एमएण्डए के सौदों का अंश 1991-95 में

3 तथापि, उक्त अध्ययन में यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया है कि बैंक स्वामित्व पर अधिक सख्त मानदंड संकट के बाद के थे या उसके पहले विद्यमान थे ।

वैश्विक राशि के 13 प्रतिशत से बढ़कर 1996-2000 में 28 प्रतिशत हुआ तथा आगे और बढ़कर 2001 से अक्तूबर 2005 तक 35 प्रतिशत हो गया। 1991 और 2005 के बीच लातीन अमरीका के क्षेत्र में बैंकों को लक्ष्यीकृत करनेवाले लेनदेन 58 बिलियन अमरीकी डॉलर के अथवा ईएमई में बैंकों को लक्ष्यीकृत करनेवाले सीमापार के कुल एमएण्डए का 48 प्रतिशत थे। लातीन अमरीका के बाद उभरते एशिया का स्थान था जिसका अंश 43 बिलियन अमरीकी डॉलर (कुल एमएण्डए का 36 प्रतिशत) का तथा उसके पश्चात् 20 बिलियन अमरीकी डॉलर (कुल एमएण्डए के 17 प्रतिशत) के साथ मध्य और पूर्वी यूरोप का स्थान था (डोमनस्की, 2005)। बासेल II का कार्यान्वयन भी समेकन की प्रक्रिया में गति ला सका क्योंकि अपेक्षाकृत छोटे बैंकों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा जैसे लागत संबंधी निहितार्थ और उच्चतर प्रबंध सूचना प्रणाली (एमआइएस) की अपेक्षाएँ। बासेल II का कार्यान्वयन अपने आप भी तुरंत पूँजी की अपेक्षाएँ उत्पन्न करेगा। ऊपर संदर्भित आवश्यकताओं को देखते हुए यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता होगी कि समेकन प्रतियोगिता को दुर्बल नहीं करने पाए।

8.113 खास तौर से बड़े बैंकों के बीच समेकन दोनों प्रतियोगिता और नैतिक संकट संबंधी चिंताएँ अर्थात् "इतना बड़ा कि विफल नहीं हो सकता" (टू बिग टु फेल) उत्पन्न करेगा। कुछ क्षेत्रों में यह भी तर्क किया गया है कि आकार की दृष्टि से भारत के बैंकों की भलीभाँति तुलना अन्य देशों के बैंकों के साथ नहीं की जा सकती। जैसा कि पहले संकेत किया जा चुका है, बैंकिंग क्षेत्र के आकार को अर्थव्यवस्था के आकार के साथ सापेक्ष रूप में देखने की आवश्यकता है। और यदि आकार मुख्य प्रश्न है, तो विश्व के कुछ बैंक भारत के अनुसूचित वाणिज्य बैंकिंग क्षेत्र के आकार से बड़े हैं।

8.114 प्रतियोगिता को सुरक्षित रखने के लिए कनाडा जैसे कुछ देशों ने बैंकों के विलयों को अस्वीकार किया। आस्ट्रेलिया में "चार स्तंभों" की एक नीति है जिसके द्वारा बड़े चार बैंकों में से किन्हीं दो या उससे अधिक बैंकों के विलय की अनुमति नहीं दी जाती। कुछ देशों ने बाजार के बड़े अंश अर्थात् 20 प्रतिशत या उससे अधिक से युक्त बैंकों के लिए उच्चतर सीआरएआर भी लागू कर दिया है। अतः यह आवश्यक होगा कि एक उचित नीति विद्यमान होनी चाहिए जिसके द्वारा भविष्य में प्रतियोगिता का महत्व कम नहीं किया जाए। जबकि बड़े बैंकों के बीच विलयों से प्रतियोगिता को हानि पहुँच सकती है, प्रतियोगिता को ऐसी स्थिति में बढ़ाया जा सकता है यदि विलय अपेक्षाकृत छोटे और कमजोर बैंकों के बीच होता है जिससे बड़े बैंकों के साथ मुकाबला किया जा सके। अनुभवजन्य विश्लेषण दर्शाता है कि बड़े पैमाने की किफायत बैंकिंग क्षेत्र के निम्नतर आकार वाले खंड में उल्लेखनीय रूप में विद्यमान रहती है।[4] फिर भी, बड़े पैमाने की किफायतें आकार में वृद्धि के साथ समाप्त हो जाती हैं और केवल सबसे बड़ी श्रेणी के आकार के बैंकों के लिए अलाभकारी स्थिति (डिसइक्नॉमीज़) के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। इससे यह संकेत मिलता है कि भारत में अनेक छोटे बैंकों के लिए विलयों और अभिग्रहणों के माध्यम से आगे और विस्तार करने तथा तब भी बड़े पैमाने की किफायत के क्षेत्र में परिचालन करने की गुंजाइश है। जबकि एक बड़ा और अच्छी तरह पूँजीकृत बैंक अलग-थलग पड़े हुए छोटे बैंकों का तत्काल आमेलन कर विलयित संस्थाओं के कार्यनिष्पादन में सुधार ला सकता है, इस बात की संभावना नहीं है कि दो कमजोर बैंकों का विलय करने से वे तुरंत एक मजबूत बैंक का निर्माण कर सकते हैं। तथापि, अपेक्षाकृत छोटे बैंकों का विलय करने के किसी भी प्रयास में अतीत की भाँति सहक्रियाओं द्वारा चालित होने की आवश्यकता है । यह सुनिश्चित करने की भी आवश्यकता होगी कि अपेक्षाकृत बड़ी संस्थाएं छोटे ग्राहकों की उपेक्षा नहीं करें।

*सरकारी क्षेत्र के बैंक*

8.115 1969 में 14 बैंकों और 1980 में छह बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद बैंकिंग प्रणाली का एक प्रमुख खंड सरकार के स्वामित्व के अंतर्गत आ गया। यद्यपि निजी क्षेत्र के नये बैंकों के प्रवेश के साथ सरकारी क्षेत्र के बैंकों का अंश घट गया, तथापि वे अभी भी भारतीय बैंकिंग क्षेत्र का मुख्य आधार बने हुए हैं जिनका अंश आस्तियों और आय का लगभग 70 प्रतिशत है।

8.116 जैसा कि पिछले खंड में संकेत किया गया है, कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में सरकारी स्वामित्व वाले बैंकों का निजीकरण किया गया है। तथापि, यह संकट की स्थितियों के बाद बैंकिंग प्रणालियों की पुनःसंरचना के लिए किया गया। इसकी तुलना में भारतीय बैंकिंग क्षेत्र सुदृढ़ स्थिति में है। सरकारी क्षेत्र के बैंक अपने कार्यनिष्पादन में सुधार कर सके हैं। सरकारी क्षेत्र के बैंक एक बड़ी सीमा तक उन लक्ष्यों को प्राप्त कर सके हैं जिनके लिए उनका राष्ट्रीयकरण किया गया था। अधिमानी क्षेत्रों, विशेष रूप से कृषि को ऋण प्रदान करने में तीव्र समग्र वृद्धि रही है। उन समस्याओं से बचने के लिए पर्याप्त सुरक्षोपाय हैं जिन्होंने सरकार को बैंकों का राष्ट्रीयकरण करने के लिए विवश कर दिया था। वांछित क्षेत्रों को ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के लक्ष्य विद्यमान हैं। ऐसे लक्ष्य तब तक जारी रहेंगे जब तक कुछ अधिमानी क्षेत्रों को ऋण निर्दिष्ट करने की आवश्यकता महसूस की जाएगी।

8.117 यद्यपि स्वामित्व एक मुद्दा नहीं है जहाँ तक सरकारी क्षेत्र के बैंकों की कार्यकुशलता और वांछित क्षेत्रों को ऋण उपलब्ध कराने का संबंध है, तथापि ऐसे कई अन्य मुद्दे हैं जिन्हें सावधानीपूर्वक महत्व देने की आवश्यकता है। पिछले कुछ वर्षों में बैंकों के लिए परिचालन के परिवेश में बिलकुल उल्लेखनीय रूप में परिवर्तन आया है। भारतीय अर्थव्यवस्था वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ अधिकाधिक एकीकृत हो रही है। भारत भी

4 आवश्यक रूप से रे-माप (रे स्केल) अर्थव्यवस्थाएं विभिन्न आकारों के बैंक समूहों के लिए उत्पादन (मान) में परिवर्तन के प्रति लागत की प्रतिक्रिया को मापती हैं। 1 से अधिक मूल्य दर्शाता है कि मान में एक यूनिट वृद्धि के कारण लागत में यूनिट से अधिक वृद्धि होती है, अर्थात् मान में अलाभ की स्थिति है। 1 से कम मूल्य का संकेत है, उत्पादन में यूनिट वृद्धि के लिए लागत में 1 से कम वृद्धि होती है, अर्थात् मान की किफायतें उपलब्ध हैं। 1 का मूल्य स्थिर प्रतिलाभ मान को दर्शाता है (अनुबंध VIII.2)।

संपूर्ण पूँजी खाता परिवर्तनीयता की दिशा में प्रगामी रूप में अग्रसर है। बैंकिंग क्षेत्र में प्रतियोगिता तीव्र हो गई है। एक प्रतियोगी परिवेश में बैंकों को बदलती हुई परिस्थितियों के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए लचीलेपन की आवश्यकता है। साथ ही, परिचालनों को बनाये रखने के लिए बैंकों के लिए यह आवश्यक है कि वे निरंतर आधार पर बाजार से पूँजी जुटाएँ। वर्तमान में सरकारी क्षेत्र के सभी बैंक 10 प्रतिशत से अधिक सीआरएआर रखते हैं। यद्यपि बासेल II मानदंडों के लागू होने के साथ पूँजी अपेक्षाओं के 100 से 150 आधार अंक बढ़ जाने की आशा है, तथापि सरकारी क्षेत्र के सभी बैंकों को चाहिए कि वे बासेल II मानदंड पूरे करने की स्थिति में हों। इस प्रकार सरकारी क्षेत्र के बैंकों के लिए पूँजीगत अपेक्षाओं का निधीयन करने में फिलहाल कोई कठिनाई नहीं है जैसा कि अध्याय V में वर्णित है। तथापि, मध्यावधि से दीर्घावधि में बैंकों से यह अपेक्षा हो सकती है कि वे बाजार से पूँजी (नवोन्मेष लिखतों को छोड़कर) जुटाएँ। कानून के वर्तमान उपबंधों के अनुसार सरकारी क्षेत्र के बैंकों में सरकार की इक्विटी 51 प्रतिशत से कम नहीं हो सकती। यदि सरकारी क्षेत्र के बैंकों के विस्तार के लिए सरकार पर्याप्त पूँजी उपलब्ध नहीं करा सकती, तो यह एक ऐसा मुद्दा बन सकता है जो सरकारी क्षेत्र के बैंकों की वृद्धि में बाधक हो। इस प्रकार, इस समस्या के लिए एक टिकाऊ समाधान की तलाश करने की आवश्यकता होगी जिसके द्वारा या तो सरकार बैंकों की पूँजी में अंशदान करेगी या बैंकों को बाजार से पूँजी जुटाने की अनुमति देगी। अतः परिचालन के बदले हुए परिवेश की पृष्ठभूमि में सरकारी स्वामित्व के मुद्दे को महत्व देने की आवश्यकता है तथा यह देखने की आवश्यकता है कि क्या सरकारी क्षेत्र के बैंक पूँजी द्वारा निरुद्ध हुए बिना विस्तार करना जारी रख सकते हैं।

*विदेशी बैंक*

8.118 यद्यपि भारत ने एक वर्ष में विदेशी बैंकों की 12 शाखाओं की प्रतिबद्धता व्यक्त की है, तथापि वह अपनी प्रतिबद्धताओं से अधिक उदार रहा है। 2003 से अक्तूबर 2007 तक की अवधि के दौरान भारत ने 75 नई विदेशी बैंक शाखाओं के लिए अनुमोदन प्रदान किया है। विदेशी बैंकों की उपस्थिति के लिए रूपरेखा में यह परिकल्पित था कि विदेशी बैंकों को संपूर्ण राष्ट्रीय व्यवहार प्रदान करने, डब्ल्यूओएस में हित (स्टेक) के मंदन तथा भारत में किसी भी निजी क्षेत्र के बैंक के विलय/अभिग्रहण से संबंधित प्रश्नों की अप्रैल 2009 में समीक्षा की जाएगी। समीक्षा के समय अनेक मुद्दों की सावधानीपूर्वक जाँच-पड़ताल करने की आवश्यकता होगी।

8.119 विदेशी बैंकों की संवर्धित उपस्थिति के पक्ष में एक तर्क देशी बैंकिंग क्षेत्र की कार्यकुशलता को बढ़ाना है। अकसर यह तर्क दिया जाता है कि विदेशी बैंकों का प्रवेश देशी बैंकिंग प्रणाली को अधिक प्रतियोगी बनाता है तथा इसके द्वारा देशी बैंकों पर दबाव डालता है कि वे अपनी कार्यकुशलता और उत्पादकता में सुधार लाएँ। उदाहरण के लिए, 1990 के दशक के दौरान कई उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में बैंकिंग क्षेत्र के संकट और समष्टि-आर्थिक दबावों के बाद ईएमई में बैंकिंग क्षेत्रों को विदेशी बैंकों के प्रवेश के लिए खोला गया ताकि प्रतियोगिता, कार्यकुशलता और स्थिरता लाई जा सके। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में ऐतिहासिक रूप से बैंकिंग एक अत्यंत सुरक्षित उद्योग रहा जिसके पास बहुत कम परिचालनगत लचीलापन था और विदेशी बैंकों की उपस्थिति नहीं थी। फिर भी, भारतीय बैंकिंग की स्थिति भिन्न है। भारत के पास पहले से ही एक सुविकसित बैंकिंग क्षेत्र है। भारतीय बैंकिंग क्षेत्र का कार्यक्षेत्र व्यापक है एवं उसके पास बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराने की विशेषज्ञता है। भारत में विस्तृत बैंकिंग विशेषज्ञता विविधीकृत बैंकिंग संस्थाओं अर्थात् सरकारी क्षेत्र, निजी क्षेत्र और विदेशी बैंकों से प्राप्त हुई है जिनका ऐतिहासिक रूप से अस्तित्व रहा है तथा जो अर्थव्यवस्था के विभिन्न वर्गों की आवश्यकताएँ पूरी कर रहे हैं। विभिन्न बैंकिंग गतिविधियों के अविनियमन के साथ ही बैंकों के विभिन्न समूहों के सह-अस्तित्व ने भारत में सभी बैंकिंग समूहों को कार्यकुशलता के लाभ दिये। भारत में विदेशी बैंकों ने अतीत में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। वे अपने साथ नवीनतम कौशल और प्रौद्योगिकियाँ भी लाये हैं और उनकी उपस्थिति का देशी बैंकों पर एक महत्वपूर्ण सकारात्मक व्यापक प्रभाव रहा है। आगे बढ़ते हुए, यद्यपि विदेशी बैंकों की संवर्धित उपस्थिति से प्राप्त कार्यकुशलता के लाभों पर निरंतर विचार करने की आवश्यकता होगी, तथापि विदेशी बैंकों के परिचालनों के अन्य संभावित प्रभावों पर विचार करना आवश्यक होगा। विदेशी बैंकों की बढ़ी हुई उपस्थिति प्रतियोगिता को तीव्र करते हुए समेकन की प्रक्रिया में गति ला सकी है जो कि चालू है। जबकि यह सकारात्मक परिणाम हो सकता है, इसी समय यह संकेंद्रण की जोखिम को भी बढ़ा सकती है। विदेशी बैंकों के प्रवेश के संबंध में उदारीकरण की संभावना भी देशी बैंकिंग क्षेत्र के अंतर्गत समेकन के लिए मार्ग प्रशस्त कर सकी है। मान, संभावना और उत्पाद मिश्रित कार्यकुशलताओं पर विदेशी समेकन के प्रभाव के संबंध में अधिक अनुभवजन्य साक्ष्य नहीं है। तथापि, इस बात की संभावना है कि यह देश के अंदर के मान, संभावना और मिश्रित प्रभावों से भिन्न हो। यदि विलय बड़े बैंकों को संबद्ध करते हैं, तो इससे संकेंद्रण के लिए प्रेरणा मिल सकेगी, जैसा कि कई लातीन अमरीकी देशों में देखा गया था। यहाँ पर यह विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि देशी बैंकिंग प्रणाली की कार्यकुशलता को बढ़ाने के लिए प्रवेश करनेवालों के बाजार अंश की अपेक्षा उनकी संख्या अधिक महत्वपूर्ण है।

8.120 एक और प्रश्न जो विदेशी बैंकों के विस्तार के प्रभाव से संबंधित है, देशी संस्थाओं विशेष रूप से छोटी संस्थाओं, जो बाह्य वित्त के लिए बैंक वित्त पर अत्यधिक निर्भर हैं, को ऋण की आपूर्ति से जुड़ा हुआ है। ऐसे अध्ययन उपलब्ध हैं जो यह सूचित करते हैं कि बड़े विदेशी बैंकों की उपस्थिति के कारण छोटे व्यवसायों को उधार में भारी कटौती हो सकती है। यह प्रश्न वर्तमान संदर्भ में विशेष रूप से सुसंगत है क्योंकि छोटे और मझौले उद्यम (एमएमई) क्षेत्र के लिए उधार को वर्तमान संरचना में भी पर्याप्त ध्यान नहीं मिल सका है। विदेशी बैंकों की अधिकतर उपस्थिति कई गृह-मेजबान (होम-होस्ट) मुद्दे उत्पन्न करती है जिसका विवरण अध्याय X में दिया गया है। अतः विदेशी बैंकों की उपस्थिति के लिए रूपरेखा की समीक्षा करते समय इन मुद्दों की सावधानीपूर्वक जाँच करने की आवश्यकता होगी।

8.121 भारत में विदेशी बैंकों की उपस्थिति के लिए परिकल्पित रूपरेखा को लागू करने के संबंध में आनेवाले दिनों में संबद्ध प्रश्नों के बहुविध आयाम हैं जिन्हें ध्यान में रखने की आवश्यकता है। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, उक्त रूपरेखा के चरण I के अंतर्गत परिकल्पित, मतदान के अधिकारों के प्रयोग पर सांविधिक प्रतिबंध को हटाने एवं बैंकों में अभिशासन (गवर्नेंस) के मानकों को मजबूत करने और इस विविधीकृत स्वामित्व को प्राप्त करने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक को शक्तियाँ प्रदान करने से संबंधित एक महत्वपूर्ण विचार को कार्यान्वित करना अभी बाकी है। सरकारी क्षेत्र के बैंकों के खंड, जिसके पास लगातार भारतीय बैंकिंग प्रणाली की आस्तियों का एक बड़ा अंश है, में समेकन और अभिशासन की प्रथाओं के संबंध में अभी तक कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई है। सरकारी क्षेत्र के बैंकों द्वारा इन बैंकों के निदेशक बोर्डों पर नामित स्वतंत्र निदेशकों के चयन के संबंध में 'योग्य और उचित' (फिट एण्ड प्रॉपर) मानदंडों के पालन को सुनिश्चित करने के लिए प्रक्रिया का पूर्णतः अनुपालन किया जाना बाकी है।

8.122 भारत में उपस्थित विदेशी बैंकों के पास 30 जून 2008 की स्थिति के अनुसार भारतीय बैंकिंग प्रणाली की कुल आस्तियों में 10.1 प्रतिशत और कुल तुलन-पत्र से इतर कारोबार में 63.8 प्रतिशत का अंश था तथा कुछ पहलुओं में वे अपने भारतीय प्रतिरूपों (काउंटरपार्ट्स) की तुलना में अनुकूल विनियामक व्यवहार प्राप्त कर रहे थे। तथापि, अन्य अधिकार-क्षेत्रों में भारतीय बैंकों का अनुभव सूचित करता है कि कुछ अधिकार-क्षेत्रों में आदान-प्रदान (रेसिप्रोसिटी) के सिद्धांत का पूर्णतः पालन नहीं किया गया है। कुछ बड़े वैश्विक बैंक ऋण बाजार की अशांति और उसके पतन के परिणामस्वरूप भारी विक्षोभ से आक्रांत और वित्तीय संकट से ग्रस्त हैं। इससे इन वैश्विक बैंकों की जोखिम प्रबंध क्षमता की लेखा-परीक्षा, उनके कंपनी अभिशासन की प्रभावोत्पादकता एवं उनके वित्तीय कार्यों में पारदर्शिता के बारे में प्रश्न उठता है। उक्त रूपरेखा के प्रति दृष्टिकोण के अंतर्गत इन गतिविधियों को ध्यान में रखना पड़ सकता है जिनके निहितार्थ और प्रशाखन अभी तक स्पष्ट नहीं हैं।

8.123 विश्व व्यापार संगठन संबंधी हमारी प्रतिबद्धता के अनुसार, नये विदेशी बैंकों को लाइसेंस तब अस्वीकार किये जा सकते हैं जब बैंकिंग प्रणाली की कुल आस्तियों (तुलन-पत्र की मदों और तुलन-पत्र में शामिल न होनेवाली मदों दोनों सहित) में दोनों तुलन-पत्र की मदों और तुलन-पत्र में शामिल न होनेवाली मदों दोनों सहित, भारत में विदेशी बैंकों की आस्तियों का अंश 15 प्रतिशत से अधिक हो जाता है। तुलन-पत्र की मदों और तुलन-पत्र में शामिल न होनेवाली मदों दोनों(आनुमानिक मूल आधार पर) सहित, भारतीय बैंकिंग प्रणाली की कुल आस्तियों में विदेशी बैंकों का वास्तविक अंश सीमा से काफी अधिक रहा है। विदेशी बैंकों का यह अंश जनवरी 2007 की समाप्ति पर 49 प्रतिशत पर रहा, जैसा कि भारत की व्यापार नीति समीक्षा, 2007 में उल्लेख किया गया है। तथापि, भारत ने नये विदेशी बैंकों को लाइसेंस अस्वीकार करने के लिए अब तक स्वायत्त रूप से इस सीमा को लागू नहीं किया है।

8.124 भारतीय बैंकों के विदेशी परिचालनों के विभिन्न मुद्दों को महत्व देने की भी आवश्यकता है। जैसे-जैसे भारतीय अर्थव्यवस्था का आगे और विस्तार होता है, अंतरराष्ट्रीय पूँजी बाजारों में पहुँचनेवाले कारपोरेटों की संख्या में भी वृद्धि होगी। इसके लिए विदेशों में भारतीय बैंकों की बृहत्तर उपस्थिति अपेक्षित होगी और भारत में विदेशी बैंकों के विस्तारित प्रवेश में आदान-प्रदान (रेसिप्रोसिटी) के मुद्दों पर भी विचार करने की आवश्यकता होगी।

*बैंकिंग और वाणिज्य का संयोजन*

8.125 बैंकिंग क्षेत्र में बैंकिंग और वाणिज्य को संयोजित करने के प्रश्न पर ऐतिहासिक परिदृश्य एवं विदेशी अनुभवों के आलोक में भी विचार करने की आवश्यकता है। 1969 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण से पहले बैंकों के साथ भारत के अनुभव एवं कई अन्य देशों के अनुभवों से यह विदित होता है कि बैंकिंग और वाणिज्य को सम्मिलित करने में अनेक जोखिमें उत्पन्न होती हैं। वास्तव में 1969 और 1980 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के लिए एक मुख्य कारण यह था कि औद्योगिक घरानों द्वारा नियंत्रित बैंकों ने जनता की जमाराशियों का विपथन ऋणों के रूप में अपनी स्वयं की कंपनियों को किया और जनता को उपलब्ध नहीं कराया, जिसके परिणामस्वरूप प्रवर्तकों के हाथों में धन-संपदा का केन्द्रीकरण हो गया। औद्योगिक घरानों द्वारा परिचालित बैंकों के साथ कई अन्य देशों के अनुभव भी इसी प्रकार के थे। अतः अनेक देश बैंकिंग और वाणिज्य को जोड़ने पर प्रतिबंध जारी रखे हुए हैं।

8.126 वाणिज्यिक हितों को बैंकिंग कारोबार करने की अनुमति देने के मुद्दे के साथ कई प्रश्न संबद्ध हैं। पहला, बैंक अपने स्वरूप से ही अत्यधिक लीवरेज्ड संस्थाएँ हैं जिसके द्वारा छोटी-सी इक्विटी के साथ संसाधनों की बड़ी राशि पर उनका अधिकार है। इसी संदर्भ में बैंकों में विविधीकृत स्वामित्व के विषय पर बल दिया जाता है। इसकी तुलना में औद्योगिक घराने या तो अत्यधिक संकेंद्रित हैं या उतने भलीभाँति विविधीकृत नहीं हैं। साथ ही, कुछ मामलों में व्यावसायिक घराने परिवार के स्वामित्व में हैं। वाणिज्यिक हितों का संकेंद्रित स्वामित्व बैंकों के विविधीकृत स्वामित्व की प्राप्ति को अत्यंत कठिन बना देता है। इस तथ्य के होते हुए कि बैंकों के मालिकों अथवा शेयरधारकों के पास केवल एक अल्प हित होता है तथा बैंकों की उत्थान-क्षमता (एक की तुलना में दस से अधिक) को ध्यान में रखते हुए वे जनता की निधियों की बहुत बड़ी मात्रा पर अधिकार रखते हैं जिसमें से उनका अपना हित अत्यंत कम (मिनिस्क्यूल) है। इस प्रकार नैतिक संकट की समस्या और व्यवसायों के साथ मालिकों की सहबद्धताओं (लिंकेजेज़) के कारण जनता की विपुल निधियों पर नियंत्रण करनेवाले बैंकों में संकेंद्रित शेयरधारिता स्वामित्व के संकेंद्रण की जोखिम से संबंधित समस्याएँ उत्पन्न कर सकती है। इसके अलावा, अलग-अलग कंपनियों के अधिकाधिक नियंत्रण भी परस्पर संबद्ध उधार की समस्या पैदा करता है जो भारत में बैंकों के राष्ट्रीयकरण से पहले व्यापक तौर पर प्रचलित थी। इस प्रकार, स्वामित्व का विविधीकरण एवं ऐसे मालिकों और निदेशकों की

'योग्य और उचित' (फिट एण्ड प्रॉपर) स्थिति सुनिश्चित करना भी वांछनीय है (मोहन, 2004बी)। अतः वाणिज्यिक हितों द्वारा बैंकों के स्वामित्व से संबंधित नीति के विषय में हितों के संभावित संघर्ष से संबंधित मुद्दों, संसर्ग के प्रभावों की बढ़ी हुई संभाव्यता और संवर्धित संकेंद्रण के चलते अंतरराष्ट्रीय प्रथाओं का पूरा ध्यान रखना होगा।

## VIII. सारांश

8.127 1990 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में बैंकिंग क्षेत्र के उदारीकरण का एक महत्वपूर्ण पहलू निजी क्षेत्र के नये बैंकों का प्रवेश और प्रतियोगिता में वृद्धि करने के लिए बढ़ी हुई विदेशी बैंकों की उपस्थिति थी। 1990 के दशक के बड़े हिस्से के दौरान निजी क्षेत्र के नये बैंकों और विदेशी बैंकों की संख्या बढ़ी जिसके परिणामस्वरूप बैंकों की संख्या में समग्र वृद्धि हुई। तथापि, 1990 के दशक के उत्तरार्ध के दौरान विलयों और समामेलनों के माध्यम से समेकन की प्रक्रिया को गति मिली जिसके कारण बैंकों की संख्या में गिरावट हुई। विलय और समामेलन बाजार चालित थे तथा रिज़र्व बैंक द्वारा केवल एक सुसाध्यकर्ता की भूमिका निभाई जा रही थी। समेकन की त्वरित गति के बावजूद भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में प्रतियोगिता बढ़ी जैसी कि संकेंद्रण के विभिन्न मापों में प्रतिबिंबित थी जो हाल के वर्षों में घट गई। यह मुख्य रूप से इसलिए था कि विलयों और समामेलनों में संबद्ध बैंक छोटे थे। भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में संकेंद्रण अनेक अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं और कुछ विकसित देशों की भी तुलना में कम रहा। जैसी कि कई अन्य विकसित और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में स्थिति है, भारतीय बैंकिंग क्षेत्र एकाधिकारी प्रतियोगी स्थितियों के अंतर्गत परिचालन कर रहा था तथा प्रतियोगिता की मात्रा में हाल के वर्षों में कुछ-कुछ सुधार हुआ।

8.128 भारतीय बैंकिंग क्षेत्र एक संकटकाल में है तथा कई चुनौतियों/समस्याओं का सामना कर रहा है। ये आगे और समेकन के स्वरूप और सीमा, सरकारी क्षेत्र के बैंकों के लिए परिवर्तित परिवेश और सरकारी स्वामित्व के कारण उनके द्वारा अनुभव की जा रही पूँजी की कमी एवं विदेशी प्रतियोगिता के लिए बैंकिंग क्षेत्र को और अधिक खोलने से संबंधित हैं। तथापि, भारत में कुछ बैंक बहुत छोटे आकार के हैं। यद्यपि कुछ विशिष्ट क्षेत्रों की आवश्यकताएँ पूरी करने में छोटे बैंकों की भूमिका है, तथापि छोटे और कम कुशल बैंकों के लिए अत्यधिक प्रतियोगी परिवेश में अपने परिचालनों को बनाये रखने में कठिनाई हो सकती है। अतः समेकन के लिए गुंजाइश है। अनुभवजन्य विश्लेषण से भी यह विदित होता है कि बड़े पैमाने की किफायत प्राप्त करने की गुंजाइश निम्नतर स्तर पर परिचालित बैंकों के लिए विद्यमान है। फिर भी, छोटे बैंकों के संबंध में समेकन की प्रक्रिया भी बाजार द्वारा संचालित होनी चाहिए।

8.129 भारत में सरकारी क्षेत्र के बैंकों ने भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि को बढ़ावा देने में एक बहुत उपयोगी भूमिका अदा की है। सुधारों के बाद की अवधि में दोनों कार्यकुशलता/उत्पादकता और सुदृढ़ता के मानदंडों के अनुसार उनका कार्यनिष्पादन निजी और विदेशी बैंकों के कार्यनिष्पादन की ओर अभिमुख हो गया है। इस प्रकार, जबकि कार्यकुशलता के दृष्टिकोण से स्वामित्व एक मुद्दा नहीं है, बैंक अब एक प्रतियोगी परिवेश में परिचालन करते हैं, इसलिए उन्हें पर्याप्त लचीलेपन की आवश्यकता है। एक और प्रश्न पूँजी की अपेक्षाओं के निधीयन से संबंधित है। यद्यपि इस प्रकार का निधीयन निकट भविष्य में कोई मुद्दा नहीं है, तथापि यह अनुमान है कि मध्यावधि और दीर्घावधि में सरकारी क्षेत्र के बैंकों की पूँजी के निधीयन का प्रश्न उभर सकता है। सरकारी क्षेत्र के बैंकों की पूँजी के पर्याप्त विस्तार के लिए प्रावधान करने होंगे जैसी कि आवश्यकता हो एवं जो अभिशासन के मानदंडों और प्रथाओं के अनुरूप भी हों जिससे वे बढ़ी हुई प्रतियोगिता के दबावों की उपस्थिति में प्रतियोगी बन सकें। अतः इस संदर्भ में सरकारी स्वामित्व के प्रश्न को महत्व देने की आवश्यकता है तथा सरकारी क्षेत्र के बैंकों के समेकन पर विचार करने की आवश्यकता है।

8.130 भारत में विदेशी बैंकों की उपस्थिति के लिए रूपरेखा (रोडमैप) में उक्त रूपरेखा के चरण I के कार्यान्वयन के दौरान प्राप्त अनुभव की 2009 में समीक्षा करने की परिकल्पना है। उस स्तर पर किसी देश में विदेशी बैंकों की मौजूदगी के अनेक आयामों का परीक्षण सावधानीपूर्वक करने की आवश्यकता होगी। एक सामान्य अवबोधन है कि उभरते बाजारों में विदेशी बैंक मेजबान देशों के लिए कई लाभ पहुँचाते हैं, जैसे आधुनिक प्रौद्योगिकी, त्वरित समेकन, संवर्धित प्रतियोगिता और कार्यकुशलता में परिणामी लाभ। जबकि भारतीय संदर्भ में कार्यकुशलता के लाभों के विचारों को निरंतर ध्यान में रखने की आवश्यकता होगी, इस बात का साक्ष्य कि संघटित अथवा असंघटित मार्ग (ऑर्गेनिक ऑर इनॉर्गेनिक रूट) द्वारा विदेशी बैंकों की विस्तारित उपस्थिति विभिन्न देशों में मेजबान अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों को कैसे प्रभावित करती है, स्पष्ट नहीं है। यह एक सार्वजनिक नीति संबंधी चिंता रही है कि विदेशी बैंक किसी देश में प्रवेश करते हैं, परंतु बड़ी हद तक अपनी नगर-केंद्रित उपस्थिति के कारण और चूँकि वे विशेष रूप से ऋण के क्षेत्र में समुद्रपारीय प्रधान कार्यालय में केंद्रीकृत निर्णयन की संरचना की वजह से स्थानीय तत्वों की उपेक्षा करने की प्रवृत्ति दर्शाते हैं, इसलिए भी व्यापक समुदाय को लाभ मुहैया नहीं कराते। यह तर्क भी दिया जाता है कि विदेशी बैंक छोटे और मध्यम आकार वाले उद्यमों को बैंक ऋण देने से बचते हुए अपेक्षाकृत बड़े कारपोरेटों पर ध्यान केंद्रित करने की प्रवृत्ति रखते हैं। विभिन्न अध्ययन यह संकेत करते हैं कि किसी भी देश में विदेशी बैंकों की विस्तारित उपस्थिति के कारण छोटे फर्मों और छोटे उधारकर्ताओं को ऋण की उपलब्धता में कमी आ सकती है। भारतीय संदर्भ में यह एक विशेष चिंता का क्षेत्र होगा। इस प्रकार, भारत में विदेशी बैंकों की बढ़ी हुई उपस्थिति के संबंध में एक नीतिगत ढाँचा विकसित करते समय इन सभी विचारों का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करना आवश्यक होगा।

8.131 1969 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण से पहले भारत का अनुभव एवं कई अन्य देशों के अनुभव भी यह संकेत करते हैं कि वाणिज्य के साथ बैंकिंग को संयोजित करने से अनेक गंभीर जोखिमें उत्पन्न होती हैं, जैसे हितों का टकराव, संसाधनों का त्रुटिपूर्ण आबंटन और औद्योगिक घरानों की एकाधिकार शक्ति का आविर्भाव। इन चिंताओं को पहचानते हुए, कई देशों ने बैंकिंग और वाणिज्य को सम्मिलित करने पर प्रतिबंध लागू करना जारी रखा है।

## अनुबंध VIII.1 : भारत में विदेशी बैंकों की उपस्थिति के लिए रूपरेखा

भारतीय रिज़र्व बैंक (आरबीआइ) ने भारत में विदेशी बैंकों की उपस्थिति के लिए रूपरेखा एवं निजी क्षेत्र के बैंकों में स्वामित्व और अभिशासन संबंधी मार्गदर्शी निदेश जारी किये हैं। श्री पी. चिदंबरम, वित्त मंत्री, भारत सरकार ने 2005-2006 के लिए केंद्र बजट की घोषणा करते हुए अपने भाषण में कहा कि 'भारतीय रिज़र्व बैंक ने बैंकिंग क्षेत्र के सुधारों के लिए एक रूपरेखा तैयार की है तथा इसे प्रकट किया जाएगा।'

तदनुसार, निम्नलिखित तीन दस्तावेज जारी किये गये :

क. भारत में विदेशी बैंकों की उपस्थिति के लिए रूपरेखा,

ख. पूर्णतः स्वाधिकृत बैंकिंग सहायक संस्थाओं की स्थापना के लिए अनुबंध, और

ग. निजी क्षेत्र के बैंकों में स्वामित्व और अभिशासन संबंधी मार्गदर्शी निदेश।

### भारत में विदेशी बैंकों की उपस्थिति के लिए रूपरेखा

स्मरण रहे कि वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार ने 5 मई 2004 को बैंकिंग क्षेत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआइ) संबंधी मौजूदा दिशानिर्देशों को संशोधित किया था। इन दिशानिर्देशों में बैंकिंग क्षेत्र में अनिवासी भारतीयों (एनआरआइ) और विदेशी संस्थागत निवेशकों (एफआइआइ) द्वारा निवेश भी शामिल था।

उक्त दिशानिर्देशों के अनुसार सभी स्रोतों से कुल विदेशी निवेश की अनुमति बैंक की प्रदत्त पूँजी के अधिकतम 74 प्रतिशत तक दी गई थी जबकि उक्त पूँजी की निवासी भारतीय धारिता कम से कम 26 प्रतिशत होनी चाहिए थी । यह व्यवस्था भी की गई थी कि विदेशी बैंक भारत में परिचालन तीन सरणियों में से किसी एक के माध्यम से ही कर सकते हैं, अर्थात् (i) शाखा/शाखाएँ (ii) एक पूर्णतः स्वाधिकृत सहायक संस्था अथवा (iii) किसी निजी क्षेत्र के बैंक में अधिकतम 74 प्रतिशत तक कुल विदेशी निवेश से युक्त एक सहायक संस्था। भारत सरकार के साथ परामर्श करने के बाद भारतीय रिज़र्व बैंक ने उक्त दिशानिर्देशों को लागू करने के लिए भारत में विदेशी बैंकों की उपस्थिति के लिए रूपरेखा जारी कर दी है।

उक्त रूपरेखा दो चरणों में विभाजित है। पहले चरण के दौरान मार्च 2005 और मार्च 2009 के बीच विदेशी बैंकों को अनुमति दी जाएगी कि वे एक पूर्णतः स्वाधिकृत बैंकिंग सहायक संस्था (डब्ल्यूओएस) स्थापित करने या मौजूदा शाखाओं को एक डब्ल्यूओएस के रूप में परिवर्तित करने के द्वारा अपनी उपस्थिति स्थापित करें।

इसे सुसाध्य बनाने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक ने विस्तृत मार्गदर्शी निदेश भी जारी किये हैं। इन मार्गदर्शी निदेशों में अन्य बातों के साथ-साथ आवेदक विदेशी बैंकों की पात्रता के मानदंड जैसे- स्वामित्व का स्वरूप, वित्तीय सुदृढ़ता, पर्यवेक्षी श्रेणी-निर्धारण (रेटिंग) तथा अंतरराष्ट्रीय स्थान (रैंकिंग) शामिल हैं। उक्त डब्ल्यूओएस के लिए 300 करोड़ रुपये अर्थात् 3 बिलियन रुपये की न्यूनतम पूँजी की अपेक्षा होगी तथा सुदृढ़ कंपनी अभिशासन को सुनिश्चित करने की आवश्यकता होगी। उक्त डब्ल्यूओएस को एक वर्ष में 12 शाखाओं की विश्व व्यापार संगठन संबंधी मौजूदा प्रतिबद्धताओं से आगे जाने के लिए लचीलेपन एवं कम बैंक सुविधा वाले क्षेत्रों में शाखाओं का विस्तार करने की वरीयता के साथ शाखा-विस्तार के लिए विदेशी बैंकों की मौजूदा शाखाओं के समकक्ष माना जाएगा। रिज़र्व बैंक डब्ल्यूओएस के परिचालनों के लिए अंतरराष्ट्रीय प्रथाओं और देश की आवश्यकताओं के अनुरूप विश्व व्यापार संगठन के साथ सामंजस्य रखते हुए बाजार में पहुँच और राष्ट्रीय व्यवहार परिसीमा एवं अन्य उचित परिसीमाएँ भी निर्धारित कर सकता है।

इस चरण के दौरान पात्र विदेशी बैंकों द्वारा भारतीय निजी क्षेत्र के बैंकों में शेयरधारिता के अभिग्रहण के लिए अनुमति पुनःसंरचना के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा अभिनिर्धारित बैंकों तक सीमित होगी। भारतीय रिज़र्व बैंक यदि इस बात से संतुष्ट है कि संबंधित विदेशी बैंक द्वारा इस प्रकार का निवेश निवेशिती बैंक में सभी हितधारकों (स्टेकहोल्डर्स) के दीर्घकालिक हित में होगा, तो ऐसे अभिग्रहण के लिए अनुमति प्रदान करेगा। जहाँ ऐसा अभिग्रहण भारत में उपस्थिति रखनेवाले विदेशी बैंक द्वारा है, वहाँ 'उपस्थिति के एक रूप' की संकल्पना के अनुरूप होने के लिए अधिकतम छह महीने की अवधि दी जाएगी।

प्राप्त अनुभव की समीक्षा करने के बाद एवं बैंकिंग क्षेत्र में सभी हितधारकों (स्टेकहोल्डर्स) के साथ उचित परामर्श करने के उपरांत अप्रैल 2009 में दूसरा चरण प्रारंभ होगा। इस समीक्षा के अंतर्गत डब्ल्यूओएस को राष्ट्रीय व्यवहार प्रदान करने, दूसरे चरण में हित के मंदन और किसी विदेशी बैंक द्वारा भारत में निजी क्षेत्र के किसी बैंक के विलय/अभिग्रहण की अनुमति देने से संबंधित मुद्दों का परीक्षण किया जाएगा।

### निजी क्षेत्र के बैंकों के लिए स्वामित्व और अभिशासन संबंधी दिशानिर्देश

स्मरण रहे कि रिज़र्व बैंक ने 2 जुलाई 2004 को निजी क्षेत्र के बैंकों में स्वामित्व और अभिशासन के लिए एक नीतिगत ढाँचे का प्रारूप चर्चा और प्रतिसूचना के लिए जारी किया था। इन दिशानिर्देशों में बैंकों में विविधीकृत स्वामित्व की वांछनीयता, महत्वपूर्ण स्टेकधारकों, निदेशकों और मुख्य कार्यपालक अधिकारी (सीईओ) की 'योग्य और उचित' (फिट एण्ड प्रॉपर) स्थिति तथा न्यूनतम पूँजी/निवल मालियत (नेट वर्थ) के मानदंड की आवश्यकता पर जोर दिया गया। नीति और प्रक्रियाओं को पारदर्शी और निष्पक्ष रखते हुए उपयुक्त संक्रमण की व्यवस्थाओं के लिए प्रबंध किया गया। इन दिशानिर्देशों को सार्वजनिक पहुँच (पब्लिक डोमेन) में काफी समय तक रखा गया है तथा इन पर व्यापक तौर पर चर्चा की गई है। मालिकों और निदेशकों की योग्य और उचित स्थिति सुनिश्चित करने के अभिभावी लक्ष्य को रखने के साथ ही बैंकिंग प्रणाली में अच्छे अभिशासन और प्रबंध की आवश्यकता तथा यथासंभव सीमा तक विविधीकृत स्वामित्व की वांछनीयता के संबंध में एक आम सहमति है। मौजूदा बैंकों पर उक्त रूपरेखा को लागू करने तथा बैंकिंग प्रणाली में पुनःसंरचना और समेकन को सुसाध्य बनाने के लिए 10 प्रतिशत से अधिक शेयरधारिता की अनुमति देने की आवश्यकता संबंधी कुछ प्रश्न भी उठाये गये।

प्राप्त प्रतिसूचना के आधार पर तथा भारत सरकार के साथ परामर्श करने के बाद रिज़र्व बैंक ने अब स्वामित्व और अभिशासन संबंधी दिशानिर्देशों को अंतिम रूप दे दिया है। इन दिशानिर्देशों में योग्य और उचित मानदंड के अनुपालन के साथ ही, पुनःसंरचना और समेकन को सुनिश्चित करने के लिए अन्य बातों के साथ-साथ उच्चतर स्तरों की शेयरधारिताओं के लिए व्यवस्था की गई है। विदेशी संस्थागत निवेशकों (एफआइआइ) द्वारा शेयरों के अभिग्रहण/अंतरण के लिए अभिस्वीकृति की वर्तमान नीति 3 फरवरी 2004 को जारी किये गये शेयरों के अभिग्रहण/अंतरण की अभिस्वीकृति संबंधी दिशानिर्देशों के आधार पर जारी रहेगी तथा भारतीय रिजर्व बैंक समूचे लाभकारी हित के संबंध में संबंधित विदेशी संस्थागत निवेशक से प्रमाणीकरण की माँग कर सकता है।

उपर्युक्त नीतियों को कार्यान्वित करते समय भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा यह सुनिश्चित किया जाएगा कि दृष्टिकोण परामर्शी है, कार्यविधियाँ पारदर्शी और उचित हैं एवं एक अविघटनकारी (नॉन-डिस्रप्टिव) मार्ग का अनुसरण किया जाता है।

## अनुबंध VIII.2 : रे माप (रे स्केल) अर्थव्यवस्थाएं

| | 1999-2000 | 2006-07 |
|---|---|---|
| आकार श्रेणी/बैंकों की संख्या | 99 | 79 |
| I | 0.908 | 0.867 |
| II | 0.880 | 0.888 |
| III | 0.909 | 0.889 |
| IV | 0.943 | 0.921 |
| V | 0.950 | 0.921 |
| VI | 0.960 | 0.936 |
| VII | 0.973 | 0.941 |
| VIII | 0.987 | 0.944 |
| IX | 0.984 | 0.948 |
| X | 0.992 | 0.953 |
| XI | 0.990 | 0.956 |
| XII | 0.992 | 0.926 |
| XIII | 0.992 | 0.964 |
| XIV | 0.990 | 0.969 |
| XV | 0.997 | 0.971 |
| XVI | 1.004 | 0.998 |
| XVII | | 1.008 |

**टिप्पणी :** एक विशिष्ट श्रेणी आवश्यक रूप से विश्लेषण की दोनों अवधियों के लिए एक ही आकार को द्योतित नहीं करता ।

# IX बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता, उत्पादकता और सुदृढ़ता

9.1 एक सुपरिचालित वित्तीय क्षेत्र वित्तीय संसाधनों की मध्यस्थता को सुगम बनाता है। कोई वित्तीय प्रणाली संसाधन सृजन और उसके आबंटन में जितनी ही अधिक कार्य कुशल होगी, आर्थिक विकास में उसका योगदान उतना ही अधिक होगा (मोहन 2005)। वित्तीय मध्यस्थता की कार्य-कुशल प्रणाली अर्थव्यवस्था में जोखिम न्यूनीकरण प्रक्रिया में भी योगदान करती है। उदाहरण के लिए उत्पादकता में हुई वृद्धि को पूंजी के उस सुरक्षित भंडार को सुदृढ़ करने में लगाए जाने पर, जो जोखिम को आत्मसात कर लेता है, बैंकिंग में वर्धित कार्यकुशलता के फलस्वरूप अपेक्षाकृत अधिक और ज्यादा उपयुक्त नवोन्मेष, वर्धित लाभप्रदता के साथ-साथ अधिकाधिक सुरक्षा और वित्तीय सुदृढ़ता आ सकती है। (कासु, गिरारडोन और मोलीन्यूक्स, 2002)। इसके अलावा, कार्यकुशलता अथवा उत्पादकता सम्बन्धी उपाय बैंकिंग प्रणाली की शक्तियों अथवा उसकी कमजोरियों को उभारने में महत्त्वपूर्ण संकेतक के रूप में काम कर सकते हैं तथा वे जब आवश्यक हो, उस समय विनियामक द्वारा पहले से पूर्वक्रियात्मक उपाय किए जाने को संभव बना सकते हैं। इसलिए, बैंकिंग क्षेत्र में कार्यकुशलता और उत्पादकता की जांच-पड़ताल और उनकी माप हमेशा से अनुसंधान की दृष्टि से रुचि के क्षेत्र रहे हैं।

9.2 अनुभव के आधार पर यह पता चला है कि कार्य-कुशलता के लिए अधिक अंक प्राप्त करने वाले बैंकों के तुलनात्मक रूप से कम अंक पाने वाले बैंकों की अपेक्षा अपना अस्तित्व बनाए रखने की संभावना अधिक होती है (बार और सीम्स, 1996)। एक अन्य अध्ययन ने वाणिज्यिक बैंकों में प्रबंधकीय समस्याओं के समय-पूर्व चेतावनी संकेतों के प्रयोजन हेतु नियमित आधार पर लागतपरक कार्य-कुशलता की छानबीन की प्रासंगिकता को वैध बना दिया है। यह अध्ययन लागतपरक कार्य-कुशलता और बैंक की विफलता की जोखिम के बीच नकारात्मक और महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध की पुष्टि कर देता है (पॉडपियरा एण्ड पॉडपियरा, 2005)। इस प्रकार बैंकिंग की कार्य-कुशलता और उत्पादकता के मूल्यांकन को अधिक महत्त्व प्राप्त हो जाता है।

9.3 कतिपय कारकों को वित्तीय मध्यवर्तियों की कार्य-कुशलता और उत्पादकता से जुड़ा हुआ पाया गया। जबकि विभिन्न देशों में विशिष्ट कारक अलग-अलग हो सकते हैं, सामान्य रूप से अपेक्षाकृत अधिक कार्य-कुशलता और लाभप्रदता के पीछे निहित प्रेरक शक्ति बड़े पैमाने की किफायतों, कार्यकलापों के विविधीकरण तथा अधुनातन प्रौद्योगिकियों को लागू किए जाने से होने वाले लाभों को सुगम बनाने वाला नीतिगत परिवेश ही रही है। अतः ये कारक विश्वभर के नीति-निर्माताओं का ध्यान आकृष्ट करते रहे हैं।

9.4 भारत में बैंकिंग क्षेत्र के सुधारों का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य प्रणाली में लचीलेपन, परिचालनात्मक स्वायत्तता और प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देना तथा भारत में बैंकिंग मानकों को अंतरराष्ट्रीय उत्तम परंपराओं के अनुरूप उन्नत करना था (रेड्डी, 2002)। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के उद्देश्य से 1990 वाले दशक के प्रारंभिक दिनों से ही कई उपाय किए गए हैं। प्रौद्योगिकीय विकास के साथ ही इन उपायों के फलस्वरूप, भारत में बैंकों के परिचालनात्मक वातावरण में महत्त्वपूर्ण रूप से परिवर्तन आए हैं। भारतीय बैंकिंग प्रणाली को विदेशी बैंकों की बढ़ी हुई उपस्थिति और निजी क्षेत्र के नये बैंकों के प्रवेश के फलस्वरूप बढ़ी हुई प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है। अधिकांश सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक पूंजी बाज़ार में पहुंच गए हैं। इससे, जैसा कि पूर्ववर्ती अध्याय में वर्णित है, उन्हें बाजार अनुशासन का पालन करने के अलावा, उनका पूंजी ढांचा ही परिवर्तित हो गया है। ब्याज दरों का निर्धारित ढांचा लगभग विनियमित हो गया है। आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सीआरआर) और सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) के रूप में सांविधिक पूर्व-क्रयों में महत्त्वपूर्ण रूप से कमी आ गई है। बैंकों को गैर-परम्परागत कार्यकलापों में विविधीकरण करने की भी अनुमति दे दी गई है। बैंकों को उनके समक्ष उपस्थित स्थिति के अनुरूप निर्णय लेने में उन्हें समर्थ बनाने हेतु उन्हें उनकी दैनंदिन की निर्णय प्रक्रिया में परिचालनात्मक लचीलापन और कार्यपरक स्वायत्तता प्रदान की गई। बैंकों पर अंतरराष्ट्रीय श्रेष्ठ परंपराओं के अनुरूप विवेकसम्मत मानदंड भी लागू किए गए। अतीत में, बैंकों की निधियों की एक बड़ी मात्रा अनर्जक आस्तियों में उलझ जाती थी। बैंकों को उनकी विगत प्राप्य राशियों को शीघ्रतापूर्वक वसूल करने में समर्थ बनाने के लिए बहु-आयामी संस्थागत व्यवस्थाएं भी लागू की गईं। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी में हुई उन्नतियों ने बैंकों को नये उत्पाद और सुपुर्दगी चैनल आरंभ करने तथा उनकी आंतरिक नियंत्रण प्रणालियों को सुदृढ़ बनाने से समर्थ बना दिया है। इन समस्त परिवर्तनों से बैंकों की उस विधि को परिवर्तित करने की आशा की जाती है, जिसमें वे इस प्रकार के उत्पाद और सेवाओं का निर्माण तथा सुपुर्दगी करने हेतु निविष्टियों को लगाते हैं जो उनकी कार्यकुशलता और उत्पादकता को प्रभावित करती हैं।

9.5 उपर्युक्त पृष्ठभूमि में, इस अध्याय में भारत में बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता, उत्पादकता और वित्तीय सुदृढ़ता का मूल्यांकन किया गया है। इस अध्याय का केंद्रबिन्दु इस बात का निर्धारण करना है कि क्या बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता और उत्पादकता में सुधारोत्तर अवधि में वृद्धि हुई है और यदि वैसा है, तो वह किस सीमा तक हुई है। भारतीय बैंकिंग प्रणाली की उत्पादकता और कार्य-कुशलता की अन्य देशों, विशेषकर उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) वाले देशों के साथ तुलना भी की गई है। कार्य-कुशलता की तीन भिन्न-भिन्न आयामों, यथा - स्वामित्व (सार्वजनिक बनाम निजी), आकार (छोटे बनाम बड़े) और कार्यकलाप (विशिष्टीकरण बनाम विविधीकरण) के साथ जांच भी की गई है।

9.6 इस अध्याय को आठ खंडों में संगठित किया गया है। खण्ड II में कार्य-कुशलता और उत्पादकता की माप के सम्बन्ध में कुछ संकल्पनात्मक मुद्दे निर्धारित किए गए हैं। खण्ड III में लेखांकन उपायों और वित्तीय अनुपातों के आधार पर बैंकिंग क्षेत्र के साथ-साथ बैंकों की

समूह-वार उत्पादकता और कार्य-कुशलता का मूल्यांकन किया गया है। जहां कहीं भी संभव हुआ, अन्य देशों के साथ तुलना भी की गई है। निवल ब्याज मार्जिन (एनआइएम), जो बैंकों की आय का मुख्य स्रोत होता है, को प्रभावित करने वाले कारकों का भी मूल्यांकन किया गया है। खण्ड IV में आर्थिक उपायों की दृष्टि से उत्पादकता और कार्य-कुशलता को मापा गया है तथा सम्पूर्ण भारतीय बैंकिंग क्षेत्र के साथ-साथ बैंकों की समूह-वार कार्य-कुशलता के निर्धारक तत्त्वों का पता लगाने का भी प्रयास किया गया है। एक ओर कार्य-कुशलता और दूसरी ओर स्वामित्व, आकार और विविधीकरण के बीच सम्बन्धों को भी इस खण्ड में विश्लेषित किया गया है। खण्ड V में जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूंजी का अनुपात (सीआरएआर) और आस्ति की गुणवत्ता की दृष्टि से बैंकिंग क्षेत्र की वित्तीय सुदृढ़ता का मूल्यांकन किया गया है। इसमें कार्य-कुशलता और वित्तीय सुदृढ़ता के बीच विद्यमान सम्बन्धों के निर्धारण का भी प्रयास किया गया है। खण्ड VI में उन कारकों की व्याख्या की गई है, जिनके फलस्वरूप पिछले वर्षों में कार्य-कुशलता में वृद्धि हुई है। आगे के मार्ग के रूप में खण्ड VII में उन मुद्दों को रेखांकित किया गया है, जिनका बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता, उत्पादकता और वित्तीय सुदृढ़ता में और अधिक सुधार लाने की दृष्टि से निराकरण किया जाना आवश्यक है। खण्ड VIII में इस विश्लेषण से उठने वाले प्रमुख मुद्दों को सारांशीकृत किया गया है।

## II. उत्पादकता और कार्य-कुशलता की माप : कुछ संकल्पनात्मक मुद्दे

9.7 उत्पादकता से आशय है किसी आर्थिक इकाई की एक विशिष्ट निविष्टि और प्रौद्योगिकी की सहायता से अधिकतम संभाव्य उत्पादन करने की सामर्थ्य और इच्छा (कालीराजन और चांद, 1994)। प्रति इकाई निविष्टि उत्पादन जितना ही अधिक होगा, उत्पादकता उतनी ही अधिक होगी। दूसरी ओर कार्य-कुशलता में बैंक के कार्य-निष्पादन को सीमा के भीतर अथवा सीमा-पार उद्योग के अग्रगण्य बैंक के साथ मानकीय रूप में तुलना करते हुए मापा जाता है। यद्यपि, सामान्यतया, यह आशा की जाती है कि उत्पादकता और कार्य-कुशलता में सहवर्ती उतार-चढ़ाव होगा, तथापि इन दोनों मापों की दृष्टि से किसी बैंक के अंक में वास्तविक रूप में भिन्नता होगी। जहाँ किसी बैंक की उत्पादकता में एक अवधि के दौरान बढ़ोत्तरी होगी, वहीं उसकी उत्पादकता में हुई वृद्धि के उद्योग के सर्वश्रेष्ठ कार्यनिष्पादक की तुलना में कम होने पर उसकी कार्य-कुशलता के अंक में गिरावट आ सकती है (बॉक्स IX.1)।

9.8 किसी आर्थिक पाठ्यपुस्तक में किसी विशिष्ट फर्म के मामले के ठीक विपरीत, बैंक कोई निश्चित उत्पाद या उत्पादन का निर्माण नहीं करता - इसके बजाय वह एक बहु-उत्पाद उत्पादक इकाई होता है। अतः, किसी विशिष्ट विनिर्माण फर्म की उत्पादकता को मापने वाला सामान्य मापदंड बैंकों के मामले में सहजता से नहीं लागू किया जा सकता। बैंकिंग इकाइयों की उत्पादकता और कार्य-कुशलता को मापने के लिए आवश्यक विशिष्ट पद्धतियां मोटे तौर पर दो प्रकार की होती हैं, यथा - लेखांकन माप और आर्थिक माप। लेखांकन मापों से आशय है विविध प्रकार के ऐसे वित्तीय अनुपात जो किसी बैंकिंग इकाई के कार्य-निष्पादन अथवा उसकी उत्पादकता को मापने के लिए किसी एक या उससे अधिक उत्पादनों और उनसे संबंधित निविष्टियों पर बल देते हैं। एक मानदंडीय संकल्पना के रूप में कार्य-कुशलता को देश के भीतर अथवा उसके बाहर विद्यमान उत्तम परंपराओं के समक्ष इन अनुपातों का उपयोग करते हुए यथा मूल्यांकित बैंक के कार्य-निष्पादन से तुलना करके मापा जा सकता है।

### बॉक्स IX.1
### उत्पादकता और कार्य-कुशलता - सूक्ष्म भेद

लेखांकन मापों के रूप में बेहतर ढंग से ज्ञात उत्पादकता के मानक मापों में यह मानते हुए कि अन्य परिवर्ती कारक, प्रौद्योगिकी और संस्थाएं (औसत उत्पादकता) अपरिवर्तित रहते हैं, किसी एकल निविष्टि में प्रति इकाई उत्पादन में आए परिवर्तन की गणना शामिल होती है। प्रति कर्मचारी कारोबार, प्रति कर्मचारी लाभ, औसत आस्ति की तुलना में परिचालन लागत के औसत अथवा कर्मचारी व्यय की तुलना में परिचालनगत आय के अनुपात का उपयोग प्रायः बैंकिंग क्षेत्र में उत्पादकता के परंपरागत मापों के रूप में किया जाता है। उत्पादकता में परिवर्तन की इन मानक संकल्पनाओं में कार्य-कुशलता और उत्पादकता के बीच विद्यमान सूक्ष्म भेद मिट जाता है। हालांकि, कुल उपादान उत्पादकता (टीएफपी) जैसे उत्पादकता के सकल मापों के विकास ने उत्पादन में परिवर्तन को दो महत्त्वपूर्ण संघटकों, यथा - कार्यकुशलता में परिवर्तन के कारण उत्पादन में परिवर्तन और प्रौद्योगिकी में हुए परिवर्तन के कारण उत्पादन में परिवर्तन में विसमुच्चयन को संभव बना दिया है। जहां कार्य-कुशलता में परिवर्तन में निविष्टि में बढ़ोत्तरी के बिना उत्पादन में वृद्धि अथवा उत्पादन में कमी लाए बिना निविष्टियों में कमी को मापता है, वहीं प्रौद्योगिकी में आया परिवर्तन उत्पादन में आए उस परिवर्तन का द्योतक होता है, जो नवोन्मेषों (तकनीकी प्रगति), आघातो (वित्तीय संकट), बाज़ार के ढांचे में परिवर्तन (विलयन और अभिग्रहण के कारण अधिक संकेन्द्रण) और विनियामक नीतियों (वित्तीय अविनियमन) के फलस्वरूप आता है। अधिक तकनीकी रूप से कार्य-कुशलता में परिवर्तन उत्पादन कार्यों (लक्ष्य के अनुरूप होने या पिछड़ जाने) से सम्बद्ध उतार-चढ़ाव होता है, जबकि प्रौद्योगिकी में परिवर्तन उत्पादन कार्यों में बदलाव से सम्बन्धित होता है (परिशिष्ट IX.1 देखें)। दूसरे शब्दों में, कार्यकुशलता की संकल्पना इस बात से सम्बन्धित होती है कि कोई बैंक वर्तमान उत्पादन संभावनाओं की सीमारेखा की तुलना में उसके संसाधनों का कितनी अच्छी तरह से उपयोग करता है। इसलिए, बैंकिंग कार्य-कुशलता का विश्लेषण अन्तः क्षेत्रीय तुलनाओं पर निर्भर करती है, उसमें प्रौद्योगिकीय और सापेक्ष मूल्य-निर्धारण, दोनों ही पहलुओं का समावेश होता है तथा इसमें उत्पादकता सम्बन्धी कार्य-निष्पादन का विश्लेषण किए जाने हेतु आंशिक संकेतक मूल्य का भी समावेश होता है। दूसरी ओर उत्पादकता की संकल्पना से सम्पूर्ण क्षेत्र का कार्य-निष्पादन अभिप्रेत है, तथा उसमें कार्य-कुशलता और प्रौद्योगिकीय उन्नतियों में औसत माप में हुए परिवर्तनों का भी प्रभावी ढंग से समावेश होता है (ओस्टर और ऐन्टिओक, 1995)।

**सन्दर्भ :**

ओस्टर, ए. और एल ऐन्टिओक, 1995 ''मेजरिंग प्रॉडक्टिविटि इन दि आस्ट्रेलियन बैंकिंग सेक्टर'', रिजर्व बैंक ऑफ आस्ट्रेलिया ।

9.9 लेखांकन माप के मामले में विविध प्रकार के अनुपातों की गणना की जाती है और उनमें से प्रत्येक का सम्बन्ध बैंक गतिविधि के किसी विशिष्ट पहलू से होता है। चूंकि बैंकिंग उद्योग बहु-विध उत्पादों का निर्माण करने के लिए बहुविध निविष्टियों का उपयोग करता है, इसका एक सुस्पष्ट अनुमान लगाना हमेशा संभव नहीं हो सकता। इस परिसीमा पर नियंत्रण पाने के उद्देश्य से किसी बैंकिंग इकाई की कुल उपादान उत्पादकता की गणना करने के लिए ऐसी वैकल्पिक तकनीकें अपनाई जाती हैं, जिनमें एक ही माप में बैंकिंग परिचालनों के सभी पहलुओं का समावेश हो जाता है। ये तकनीकें, जिन्हें आम तौर पर आर्थिक माप कहा जाता है, मोटे तौर पर दो प्रकार की होती हैं - उत्पादन कार्य संबंधी विनिर्देश के आधार पर प्राचलीय पश्चगमन और वैकल्पिक रूप से गैर-प्राचलीय दृष्टिकोण (परिशिष्ट IX.1)।

9.10 इस विषय पर विशालकाय साहित्य मौजूद है, जो बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता और उत्पादकता को मूल्यांकित करने की वैकल्पिक पद्धतियों पर प्रकाश डालता है (बॉक्स IX.2)।

## III. भारत में बैंकिंग क्षेत्र की उत्पादकता और कार्य-कुशलता की माप - लेखांकन माप

9.11 इस अध्याय में भारत में बैंकिंग क्षेत्र की उत्पादकता और कार्य-कुशलता को लेखांकन मापों और आर्थिक मापों, दोनों ही का उपयोग करते हुए मापा गया है। जहाँ लेखांकन माप समग्र कार्य-कुशलता के स्तर को निर्धारित करने वाले अलग-अलग मानदंडों की दृष्टि से बैंक के कार्य-निष्पादन का विसमुच्चयित और तीक्ष्ण विश्लेषण करने में समर्थ बनाते हैं, वहीं आर्थिक माप प्रत्येक बैंक की तुलना उद्योग के सर्वश्रेष्ठ कार्य-निष्पादक की कार्यकुशलता और उत्पादकता से करते हुए एक संमिश्र और सुस्पष्ट अनुमान उपलब्ध कराते हैं। इस खण्ड में उत्पादकता और कार्य-कुशलता का निर्धारण लेखांकन मापों का उपयोग करते हुए किया गया है, जबकि आर्थिक मापों के आधार पर मूल्यांकन अगले खण्ड में किया गया है।

9.12 किसी बैंकिंग इकाई की कार्य-कुशलता और उत्पादकता का मूल्यांकन करने के लिए अन्य बातों के साथ ही मध्यस्थता लागत, ब्याजगत अंतर, परिचालन व्यय, आय की तुलना में लागत का अनुपात, आस्तियों पर प्रतिलाभ, इक्विटी पर प्रतिलाभ, प्रति कर्मचारी कारोबार, प्रति कर्मचारी आय और प्रति कर्मचारी कारोबार कुछ सामान्य तौर पर प्रयुक्त होने वाले लेखांकन माप हैं। यद्यपि इनमें से प्रत्येक अनुपात उत्पादकता कार्य-कुशलता का संकेतक होता है तथा वह बैंकिंग की कार्यप्रणाली के कुछ पहलुओं का द्योतक होता है, किसी बैंकिंग इकाई के कार्यनिष्पादन के सम्बन्ध में अन्तर्दृष्टि प्राप्त करने के लिए इसका अन्य अनुपातों के साथ सन्निधान किया जाना आवश्यक होता है (बॉक्स IX.3)।

### कुल आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत

9.13 यह अनुपात आस्ति की प्रति इकाई पर खर्च हुई परिचालन लागत की रकम का संकेत करता है। किसी बैंक द्वारा उसकी श्रम शक्ति और शाखाओं तथा 'बैक आफिस' परिचालनों को युक्तियुक्त करते हुए लागत में कमी लाने के लिए किए जाने वाले प्रयासों को इस अनुपात में प्रतिबिंबित कर लिया जाना चाहिए। यह अनुपात जितना ही बड़ा होगा, कार्यकुशलता उतनी ही कम होगी। इस अनुपात का उपयोग कुछ अनुसंधानकर्ताओं द्वारा बैंकिंग प्रणाली की मध्यस्थता लागत को निरूपित करने हेतु भी किया जाता है। इस प्रकार के उपयोग का तर्क इस तथ्य में निहित होता है कि अन्ततः बैंक इन परिचालन लागतों का उपयोग अपनी उपलब्ध निधियों (अर्थात जमाराशियों) से आस्ति (अर्थात ऋण) सृजन करने में ही करते हैं। परिचालन लागत में कमी का परिणाम अन्ततः उधार देने की दरों में तथा निवल ब्याजगत मार्जिन में भी कमी के रूप में सामने आता है जिससे ऋण का अपेक्षाकृत अधिक उठाव सुगम हो जाता है और इसलिए आर्थिक वृद्धि संभव होती है (भिडे, प्रसाद और घोष, 2002)। बासेल II मानदंडों के अनुसार कम से कम आस्ति की तुलना में बैंकों का लागत अनुपात लगभग एक प्रतिशत होना चाहिए (घोष, सी.आर. और अन्य, 2004)।

9.14 कुल मिलाकर भारतीय बैंकिंग उद्योग के आस्ति की तुलना में लागत अनुपात के स्तर में क्रमिक और लगभग स्थायी गिरावट की प्रवृत्ति दिखाई देती है, जो 1995-96 के 2.93 प्रतिशत के शीर्ष स्तर से घटकर 2006-07 में 1.91 प्रतिशत रह गई। हालांकि, अलग-अलग बैंक समूहों में यह प्रवृत्ति अलग-अलग थी। निजी क्षेत्र के नए बैंकों की आस्ति की तुलना में लागत अनुपात, जिसमें 1997-98 और 2001-02 के बीच की अवधि में तीव्र गति से कमी आई थी, 2002-03 और उसके बाद में क्रमिक रूप से बढ़ गया। हालांकि, अन्य सभी बैंक समूहों से संबंधित अनुपात, जो 1990 वाले दशक में सामान्य रूप से बढ़ गया था, 2000 वाले दशक में कम हो गया। सम्पूर्ण अवधि अर्थात 1991-92 और 2006-07 के बीच की अवधि में जहाँ सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों और निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों के अनुपात में कमी आई, वहीं विदेशी बैंकों और निजी बैंकों के मामले में यह बढ़ गया (सारणी 9.1)।

9.15 वर्ष 2001-02 में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की कुल आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत में आई तीव्र गिरावट कार्यबल के युक्तिकरण के कारण थी। भारतीय स्टेट बैंक और राष्ट्रीयकृत बैंकों ने 2000-01 के दौरान स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना लागू की थी, जिसका 2001-02 में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के आस्ति की तुलना में लागत अनुपात पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव हुआ। वर्ष 2006-07 के दौरान परिचालन व्ययों में आई तीव्र गिरावट को पिछले वर्षों की तुलना में मजदूरी बिल में हुई अपेक्षाकृत कम वृद्धि के रूप में स्पष्ट किया जा सकता है, क्योंकि हाल के वर्षों में बैंक कई प्रकार के नेमी स्वरूप वाले क्रियाकलापों की भी आउटसोर्सिंग कराने की ओर प्रवृत्त हुए हैं। निजी क्षेत्र के नये बैंकों के मामले में अनुपात में हुई वृद्धि, जो 1990 वाले दशक के उत्तरवर्ती दिनों में आरंभ हुई थी, शाखा नेटवर्क में विस्तार तथा प्रौद्योगिकीय श्रेणी उन्नयन पर व्यय और आधारभूत सुविधाओं के निर्माण को प्रतिबिंबित करती है। नये निजी क्षेत्र वाले तथा विदेशी बैंकों ने प्रौद्योगिकी उन्नयन पर भारी रकमें निवेशित कर रखी हैं, जिसका बेहतर उपभोक्ता समर्थन उपलब्ध कराने और दीर्घकाल तक आस्ति प्रबंधन करने हेतु प्रौद्योगिकी से लाभ उठाने पर चमत्कारिक प्रभाव हुआ (डिसूजा, 2002), यद्यपि अल्पकालिक तौर पर परिचालन लागत बढ़ गई। यह स्थिति विदेशी बैंकों के मामले में अर्जन आस्तियों की तुलना में निरंतर बढ़ती गैर-श्रमिक लागत अनुपात से प्रमाणित हो

## बॉक्स IX.2
## उत्पादकता और कार्य-कुशलता : विविध देशों के अनुभवजन्य साक्ष्य

प्रारंभ में, कार्य-कुशलता से संबंधित अध्ययन इस सुस्पष्ट धारणा के तहत कि बैंक तकनीकी रूप से तथा निर्धारित रूप से कार्यकुशल होते हैं पैमाने (आकार) और प्रसार (उत्पाद संमिश्र) की किफायतों का पता लगाने तक ही सीमित हुआ करते थे (बर्जर और हम्फ्री, 1997)। हालांकि, वित्तीय वैश्वीकरण और नये उत्पादों के विकास की पृष्ठभूमि में बैंकिंग के ढांचे में आए आमूल-चूल परिवर्तन के फलस्वरूप एक व्यापक आम राय यह बनी कि तकनीकी कार्य-कुशलता में अन्तरों पूर्णतया उत्पादन की गलत माप और प्रसार का परिणाम नहीं हो सकते (बर्जर और हम्फ्री, 1997)।

इस संभावना का पता लगाने के लिए कि शाखा नेटवर्क बैंकों की लागतपरक कार्य-कुशलता में योगदान करता है अथवा नहीं अमरीकी बैंकिंग उद्योग में व्यापक अनुभवजन्य कार्य उपलब्ध हैं। किन्तु इस सम्बन्ध में उपलब्ध साक्ष्य अनिर्णायक ही हैं। अमरीकी बैंकिंग क्षेत्र के सम्बन्ध में 5,548 बैंकों के नमूने वाले एक व्यापक कार्य से यह पता चलता है कि शाखा नेटवर्क के परिचालन, चाहे वह घरेलू हो या फिर विदेशी, ने अपेक्षाकृत अधिक लागतपरक अकुशलता में योगदान किया है (कापार्किस और अन्य 1994) दूसरी ओर, अमरीकी बैंकिंग क्षेत्र से सम्बन्धित एक अन्य अध्ययन में इस बात का उल्लेख है कि शाखा बैंकों और गैर-शाखा वाली बैंकिंग इकाइयों के बीच कार्यकुशलता में कोई महत्त्वपूर्ण अंतर नहीं था और समग्र तथा तकनीकी कार्यकुशलता उत्पाद की विविधता से नकारात्मक रूप से सम्बन्धित थी और शहरीकरण की सीमा से सकारात्मक रूप से सम्बन्धित थी।

इसी प्रकार, जहाँ तक बैंकों की कार्य-कुशलता पर अविनियमन के प्रभाव का सम्बन्ध है, इस सम्बन्ध में भी आमराय पूर्ण से कम ही है। 88 स्पैनिश बैंकों और 55 बचत बैंकों के 1985-91 की अवधि वाले अलग-अलग पैनलों पर आधारित एक अध्ययन में इस मुद्दे को रेखांकित किया गया है कि अविनियमन वाणिज्यिक बैंकों के मामले में तुलनात्मक लागतपरक कार्यकुशलता में कमी से जुड़ा था, किन्तु बचत बैंकों के मामले में इसके कारण कोई परिवर्तन नहीं हुआ (क्यूर्टा, रैंड ओरिया, एल 2002)। इसके अलावा, तुर्की के वाणिज्यिक बैंकों के सम्बन्ध में 1988 से 1999 तक की अवधि वाले डेटा पर्यावरण विश्लेषण अपनाते हुए किए गए एक अध्ययन से यह पता चला कि अविनियमन की अवधि में बैंकों की भारी अकुशलता का अनुभव हुआ। दूसरी ओर, भारतीय बैंकिंग क्षेत्र से सम्बन्धित कुछ अध्ययनों से यह पता चलता है कि अविनियमन, जिसमें शुल्क आधारित क्रियाकलापों में विविधीकरण की अनुमति दी गई थी तथा शाखाएं खोलने हेतु मानदंडों को शिथिल किया गया था, ने कार्यकुशलता और उत्पादकता की वृद्धि में योगदान किया है (भट्टाचार्य, भट्टाचार्य और कुंभकार, 1997)। इसी प्रकार, 1981 से 90 तक की अवधि हेतु किए गए तुर्की के बैंकों से सम्बन्धित एक अध्ययन में यह पाया गया कि अविनियमन के बाद उत्पादकता में महत्त्वपूर्ण से सुधार हुआ, किन्तु वह तकनीकी उन्नति की बजाय मुख्यतः अकुशल बैंकों द्वारा सर्वश्रेष्ठ बैंकों के अनुरूप होने की दिशा में किए गए प्रयासों द्वारा प्रेरित थी। इसके अलावा, तुलनपत्र में शामिल न की जाने वाली मदों जैसे गैर-परम्परागत क्रियाकलापों को अलग कर दिए जाने के कारण सम्पूर्ण उद्योग की औसत कार्य-कुशलता और उत्पादकता के अंकों में महत्त्वपूर्ण रूप से कमी आ गई।

जहाँ तक विविधीकरण के प्रभाव का सम्बन्ध है, उसके सम्बन्ध में कमोबेश आम राय है। 1985 से लेकर 1990 तक की अवधि हेतु 86 वाणिज्यिक बैंकों के समावेश वाले एक पैनल अध्ययन में यह पाया गया कि विविधीकरण के परिणामस्वरूप अमरीकी वाणिज्यिक बैंकिंग उद्योग में मोटे तौर पर 1 प्रतिशत का समग्र आर्थिक अभिलाभ दर्ज हुआ है। इसी प्रकार 1981 से लेकर 1992 तक की अवधि हेतु ताइवान के 22 देशी बैंकों, जिनमें से 11 सार्वजनिक बैंक थे, के समावेश वाले एक पैनल ने यह अभिज्ञात किया कि ताइवान के बैंकिंग उद्योग में माप (आकार) और प्रसार (स्कोप) दानों ही प्रकार की किफायतें अस्तित्व में थीं।

दो विविध देशीय अध्ययन भी हैं, जिनमें विभिन्न देशों के बैंकिंग उद्योग की तुलनात्मक कार्य-कुशलता के स्तरों का मूल्यांकन किया गया है। यूरोपीय आयोग ने 1987 से 94 तक की अवधि हेतु यूरोपीय संघ के सभी प्रमुख बैंकिंग क्षेत्रों के लिए एक समूहित समय श्रृंखला लागत सीमा का अनुमान लगाया। कुल मिलाकर उक्त अध्ययन में 20 प्रतिशत की औसत उत्पादकता अकुशलताएं पाई गईं। एक अलग देश के स्तर पर लक्जमबर्ग के बैंक अपेक्षाकृत अधिक कार्य-कुशल पाए गए। 1992 में 8 यूरोपीय देशों के मामले में उत्पादकता, कार्य-कुशलता और प्रौद्योगिकी में विद्यमान अंतरों पर किए गए एक व्यापक अध्ययन में यह बताया गया है कि फ्रान्स, स्पेन और बेल्जियम (क्रमशः 0.95, 0.82 और 0.81 कार्य-कुशलता अंकों के साथ) सर्वाधिक कुशल बैंकिंग क्षेत्र वाले देश पाए गए, जबकि इंग्लैंड (0.54) आस्ट्रिया (0.61) और जर्मनी (0.65) सबसे कम कुशल देश पाए गए।

कुछ अध्ययनों में इस बात को प्रलेखित किया गया है कि लागतपरक कार्य-कुशलता किस प्रकार से बैंकिंग प्रणाली की सुरक्षा और वित्तीय सुदृढ़ता को विशेष रूप से बढ़ा सकती है। वास्तव में बर्जर और डि यंग ने समस्यामूलक ऋणों और आस्ति की गुणवत्ता के बीच विद्यमान एक दोहरी हेतुकता - जो कैमेल्स रेटिंग के तहत सुरक्षा और वित्तीय सुदृढ़ता का एक अपरिष्कृत संकेतक है - तथा 1985 और 1994 के बीच वाली अवधि के दौरान अमरीकी बैंकों के मामले में लागतपरक कार्य-कुशलता का पता लगाया है।बाहरी घटनाओं के कारण निर्मित अनर्जक ऋण बैंकों पर अतिरिक्त परिचालन लागत थोप सकते हैं।

अनुभव के आधार पर सिद्ध हो गया है कि डेटा पर्यावरण विश्लेषण से प्राप्त कार्यकुशलता अंकों का प्रयोग करते हुए प्रबन्धन की गुणवत्ता के एक परोक्षी के रूप में बैंक की विफलता की भविष्यवाणी कैसे की जा सकती है। यह पाया गया कि अधिक कार्य-कुशलता अंक प्राप्त करने वाले बैंकों के कम अंक पाने वाले बैंकों की तुलना में अपना अस्तित्व बनाए रखने की संभावना काफी अधिक होती है (बर और साइम्स, 1996)।

एक अन्य अध्ययन ने चेकोस्लोवाकिया में वाणिज्यिक बैंकों में विद्यमान प्रबन्धकीय समस्याओं की समय-पूर्व चेतावनी के लिए लागतपरक कार्यकुशलता की नियमित छानबीन किए जाने की अत्यधिक प्रासंगिकता को वैध बना दिया है। इसने लागतपरक कार्यकुशलता और बैंक विफलता के जोखिम के बीच नकारात्मक और महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध की पुष्टि कर दी है। इसे ध्यान में रखते हुए बैंकिंग की कार्य-कुशलता और उत्पादकता के मूल्यांकन को प्रारंभिक महत्त्व प्राप्त हो जाता है (पॉडपियरा और पॉडपियरा, 2005)।

**संदर्भ :**


बर, आर और टी. साइम्स, 1996 : ''बैंक फेल्योर प्रिडिक्शन यूजिंग डी.ई ए टु मेजर मैनेजमेंट क्वालिटी,'' फेडरल रिजर्व बैंक ऑफ डल्लास वर्किंग पेपर।

बर्जर, ए.एन. और डी.बी. हम्फ्री, 1997, ''इफिसियेन्सी ऑफ फाइनैन्सियल इंस्टीट्यूशन्स : इंटरनेशनल सर्वे एण्ड डाइरेक्शन्स फॉर फ्यूचर रिसर्च,'' यूरोपियन जर्नल ऑफ ऑपरेशनल रिसर्च, 98 : 175-212।

बर्जर, ए.एन. और आर. डि यंग, 1997, ''प्रॉब्लम लोन्स एण्ड कॉस्ट एफिशिएन्सी इन कॉमर्शियल बैंक्स,'' फेडरल रिजर्व बोर्ड फाइनैन्स एण्ड इकॉनॉमिक्स डिस्कशन सिरीज 8।

भट्टाचार्य, अंजना, अरुणवा भट्टाचार्य और सुबल सी. कुंभकार, 1997, ''चेन्जेज इन इकॉनॉमिक रेजीम एण्ड प्रॉडक्टिविटि ग्रोथ; ए स्टडी ऑफ इण्डियन पब्लिक सेक्टर बैंक्स,'' जर्नल ऑफ कम्पेरेटिव इकॉनॉमिक्स, 25(2) : 196-219।

क्यूर्टा, आर. और एल.ओरिया, 2002, ''मर्जर्स एण्ड टेक्निकल एफिशिएन्सी इन स्पैनिस सेविंग्स बैंक्स,: ए स्टॅकैस्टिक डिस्टैन्स फंक्शन एप्रोच,'' जर्नल ऑफ बैंकिंग एण्ड फाइनैन्स, 26(12) 2231-2247।

पॉडपियेरा, ए. और जे. पॉडपियेरा, 2005, ''डिटीरिओरेटिंग कॉस्ट एफिशिएन्सी इन कमर्शियल बैंक्स सिग्नल्स ऐन इनक्रीजिंग रिस्क ऑफ फेल्योर,'' सीएनबी वर्किंग पेपर सिरीज, दिसम्बर।

## बॉक्स IX.3
## अनुपात विश्लेषण का विश्लेषणात्मक ढांचा

बैंकिंग क्षेत्र में कार्य-कुशलता और उत्पादकता के विश्लेषण हेतु अपनाया जाने वाला एक सामान्य दृष्टिकोण है अनुपात विश्लेषण, जिसके द्वारा किसी बैंकिंग इकाई के कार्य-निष्पादन की जांच कुछ प्रमुख मानदंडों तथा आय की तुलना में लागत के अनुपात, प्रति कर्मचारी कारोबार, प्रति शाखा कारोबार आदि जैसे अनुपातों के अनुसार की जाती है। हालांकि, यह देखा जा सकता है कि उक्त विश्लेषण में पूर्वापरता अपनाई जाती है और इनमें से प्रत्येक अनुपात अन्तर-सम्बद्ध होते हैं। उदाहरण के लिए आय की तुलना में लागत अनुपात को बैंक की समग्र कार्यकुशलता का माप कहा जा सकता है। यह इस बात का संकेत होता है कि बैंक अपना समग्र परिचालन कितनी कुशलता से संचालित करता है। आय के अलग-अलग घटकों को लेकर और उन्हें उनके सम्बद्ध लागत घटकों के साथ जोड़ने पर विभिन्न क्रियाकलापों में बैंक की सक्षमता का पता चलेगा अथवा उसके प्रति अन्तर्दृष्टि प्राप्त होगी। जमा संग्रहण और ऋण सृजन बैंकिंग कारोबार के मुख्य अंग होते हैं। इसलिए मध्यस्थता लागत, जो ऋण की आय को जमा लागत से जोड़ती है, बचतकर्ताओं से जमाराशियां जुटाने तथा उसे प्रयोक्ता समूहों को उधार देने के बैंक के मुख्य कार्य में उसकी कार्यकुशलता को उजागर करेगी। इसी प्रकार, सरकारी और गैर-सरकारी प्रतिभूतियों में बैंक के निवेश को या तो घरेलू स्तर पर या फिर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जुटाई गई उधार ली गई निधियों से उद्भूत हुआ परिकल्पित किया जा सकता है। निवल ब्याजगत मार्जिन अनुपात इस बात का संकेत करता है कि बैंक आस्ति देयता असंतुलन से उद्भूत होने वाली अपनी आर्थिक जोखिमों का कितनी कुशलता से प्रबंधन करते हैं।

जहाँ तक गैर-निधिक अथवा शुल्क आधारित क्रियाकलापों का सम्बन्ध है, किसी विशिष्ट डेस्क से सम्बन्धित मामलों की देखरेख करने वाले बैंक कर्मचारियों के वैयक्तिक कौशल और उनकी व्यावसायिक कुशाग्रता महत्त्वपूर्ण होती है। हालांकि, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि कार्मिकों को उसी समूह को निधि और गैर-निधि आधारित, दोनों ही प्रकार के क्रियाकलापों को संभालने में लगाया जा सकता है, किसी बैंक द्वारा उसके शुल्क आधारित क्रियाकलापों को संभालने वाले कार्मिकों के सम्बन्ध में वहन किए जाने वाले खर्च को अलग करना कठिन होता है। इस प्रकार, इस तीसरे प्रकार के कारोबार में बैंकों की कार्य-कुशलता को मोटे तौर पर ब्याजगत आय अथवा कुल आय की तुलना में गैर-ब्याजगत आय के अनुपात के अनुसार मापा जाता है। बैंक प्रायः कुल लाभ में प्रत्येक बैंकिंग क्रियाकलाप के योगदान की गणना करने हेतु अंतरण मूल्य-निर्धारण व्यवस्था अपनाते हैं।

आय दो कारकों पर निर्भर करती है - यथा, कारोबार का आकार अथवा ऋण की मात्रा अथवा निवेश संविभाग और मूल्य अथवा उधार दरें अथवा निवेश की प्रति इकाई पर ब्याज/लाभांश/पूंजीगत अभिलाभ। इस प्रकार उप-क्रियाकलापों में बैंक की सक्षमता का पता लगा लिए जाने के बाद, उसकी कार्य-कुशलता को उसकी निविष्टियों, अर्थात प्रति कर्मचारी कारोबार अथवा प्रति शाखा कारोबार, की प्रत्येक इकाई पर कारोबार की समग्र मात्रा की दृष्टि से देखा जा सकता है। अन्त में, इसे आस्ति की प्रति इकाई से प्रतिलाभ अथवा इक्विटी पर प्रतिलाभ जैसे लाभप्रदता अनुपातों द्वारा ज्ञात किया जा सकता है।

जाती है, जो उद्योग के स्तर से काफी अधिक है। इसके अलावा, विदेशी बैंक आकर्षक वेतन और सुविधाओं की सहायता से उद्योग की सर्वश्रेष्ठ प्रतिभाओं को आकर्षित करते रहे हैं। उन्होंने अपने कार्यबल को टिकाए रखने के लिए प्रशिक्षण और मानव संसाधन प्रबंधन रणनीतियों पर संसाधनों की उल्लेखनीय मात्रा निवेशित कर रखी है, जिससे उनकी श्रम लागत में इसके बाद यथावर्णित ढंग से वृद्धि हो गई है।

### सारणी 9.1 : भारत में वाणिज्य बैंकों की कुल आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत

(प्रतिशत)

| वर्ष | देशी बैंक | | | | | | समस्त देशी बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 2.48 | 2.67 | 2.60 | 2.97 | * | 2.97 | 2.61 | 2.26 | 2.59 |
| 1992-93 | 2.64 | 2.64 | 2.64 | 2.71 | * | 2.71 | 2.64 | 2.70 | 2.65 |
| 1993-94 | 2.66 | 2.64 | 2.65 | 2.49 | * | 2.49 | 2.64 | 2.65 | 2.64 |
| 1994-95 | 2.95 | 2.76 | 2.83 | 2.35 | * | 2.35 | 2.80 | 2.72 | 2.79 |
| 1995-96 | 3.09 | 2.93 | 2.99 | 2.63 | 1.82 | 2.47 | 2.95 | 2.77 | 2.93 |
| 1996-97 | 2.94 | 2.85 | 2.88 | 2.49 | 1.94 | 2.36 | 2.83 | 3.04 | 2.85 |
| 1997-98 | 2.68 | 2.65 | 2.66 | 2.30 | 1.76 | 2.14 | 2.60 | 2.98 | 2.63 |
| 1998-99 | 2.70 | 2.63 | 2.65 | 2.22 | 1.74 | 2.04 | 2.59 | 3.39 | 2.65 |
| 1999-2000 | 2.46 | 2.56 | 2.52 | 2.18 | 1.42 | 1.85 | 2.43 | 3.11 | 2.48 |
| 2000-01 | 2.66 | 2.76 | 2.72 | 1.98 | 1.75 | 1.87 | 2.60 | 3.05 | 2.64 |
| 2001-02# | 2.11 | 2.40 | 2.29 | 2.08 | 1.12 | 1.45 | 2.13 | 3.00 | 2.19 |
| 2002-03 | 2.11 | 2.33 | 2.25 | 2.04 | 1.95 | 1.99 | 2.20 | 2.78 | 2.24 |
| 2003-04 | 2.21 | 2.21 | 2.21 | 1.99 | 2.04 | 2.02 | 2.17 | 2.75 | 2.21 |
| 2004-05 | 2.14 | 2.06 | 2.09 | 2.02 | 2.03 | 2.03 | 2.08 | 2.88 | 2.13 |
| 2005-06 | 2.28 | 1.93 | 2.05 | 2.11 | 2.11 | 2.11 | 2.06 | 2.94 | 2.13 |
| 2006-07 | 1.98 | 1.67 | 1.77 | 1.88 | 2.11 | 2.06 | 1.84 | 2.78 | 1.91 |

* : निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त वर्ष से उपलब्ध हुए।

# : वर्ष 2001-02 में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की कुल आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत में आई तीव्र गिरावट भारतीय स्टेट बैंक और राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा वर्ष 2000-01 के दौरान लागू की गई स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना के कारण थी।

**स्रोत** : भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियों (भारतीय रिज़र्व बैंक) से परिकलित।

चार्ट IX.1 : कुल आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत 2006-07

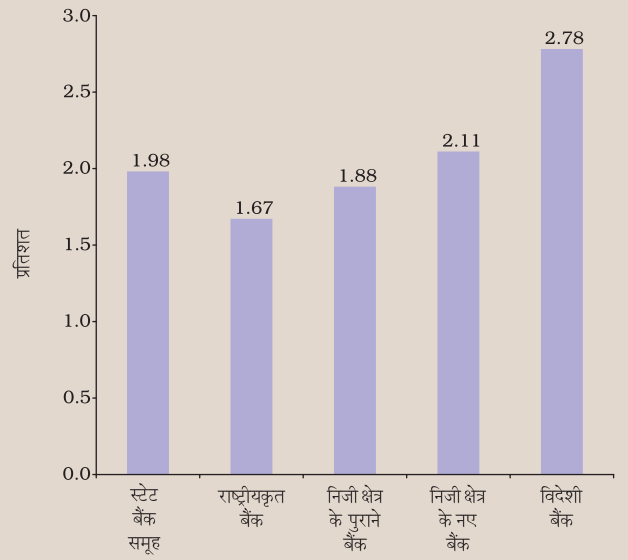


चार्ट IX.2 : कुल आस्तियों की तुलना में तुलनपत्रेतर एक्सपोज़र (मार्च के अंत में)

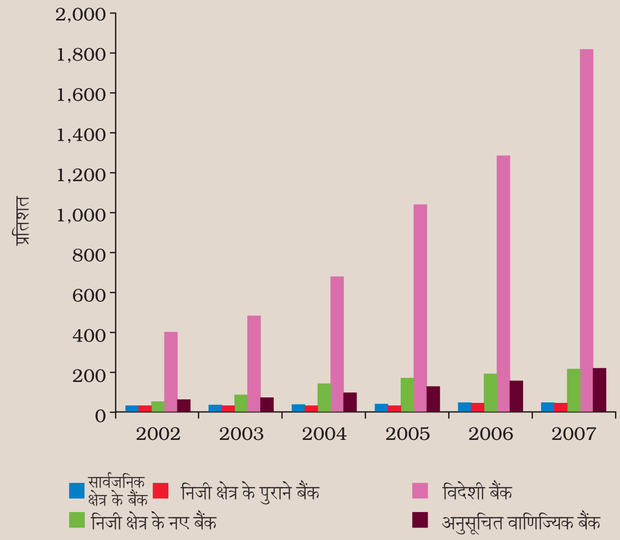


9.16 सभी बैंक समूहों के मामले में आस्तियों की तुलना में लागत के अनुपात की तुलना करने पर यह पता चलता है कि वर्ष 2006-07 के दौरान आस्तियों की तुलना में लागत का अनुपात राष्ट्रीयकृत बैंकों के मामले में सबसे कम था, उसके बाद पुराने निजी बैंकों, स्टेट बैंक समूह और नए निजी बैंकों का क्रम था। विदेशी बैंकों के मामले में यह सर्वाधिक था (चार्ट IX.1)।

9.17 विदेशी बैंकों के मामले में अधिक अनुपात तुलनपत्र में शामिल न की जानेवाली मदों में एक्सपोजर के कारण कुछ हद तक भ्रामक हो सकता है, जिनमें उनके कुल कारोबार के पर्याप्त अंश का समावेश होता है (चार्ट IX.2)। यद्यपि इस प्रकार के कारोबार में लागत अपरिहार्य होती है, तथापि इसे आस्ति में शामिल नहीं किया जाता, जिसके फलस्वरूप आस्ति की तुलना में परिचालन लागत का अनुपात बढ़ जाता है।

9.18 विभिन्न देशों की तुलना से यह पता चलता है कि कुल आस्तियों की तुलना में परिचालन व्यय के अनुपात में कतिपय उन्नत अर्थव्यवस्थाओं तथा उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में 1999 और 2006 के बीच वाली अवधि में मुख्यतः देश के भीतर और सीमा पार वाले देशों में बढ़ते स्पर्धात्मक दबावों के कारण गिरावट आ गई। यद्यपि भारत में यह अनुपात उन्नत देशों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक था, यह अधिकांश उभरती बाजार अर्थव्यवस्था वाले देशों के साथ अनुकूल रूप से तुलनीय था। जबकि, वर्ष 2006 के दौरान यह अनुपात उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के मामले में सामान्यतया 2 से भी कम था, तथापि यह उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं वाले देशों के मामले में 1.43 से लेकर 7.13 तक के बीच वाली सीमा तक था। इसके अलावा एशिया की उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में यह अनुपात लातीनी अमरीका और पूर्वी यूरोप के देशों यथा रूस की तुलना में कम था। भारत के मामले में यह अनुपात थाईलैंड, फिलीपीन्स और इंडोनेशिया के साथ अनुकूल रूप से तुलनीय किंतु कोरिया, और चीन के साथ प्रतिकूल रूप से तुलनीय था (सारणी 9.2 और चार्ट IX.3)[1]।

*आय की तुलना में लागत अनुपात*

9.19 आय की तुलना में लागत अनुपात यह सूचित करता है कि बैंकों द्वारा निधियों को कितने लाभप्रद ढंग से अभिनियोजित किया गया है। यह अनुपात किसी बैंक की उसके व्यय से राजस्व सृजित करने की योग्यता को निरूपित करता है। इसमें तुलन पत्र में शामिल न की जानेवाली मदों से संबंधित परिचालनों का प्रभाव शामिल होता है और इस प्रकार यह आस्ति की तुलना में लागत के अनुपात की अपेक्षा कार्य-कुशलता को मापने का बेहतर माप होता है। समग्र उद्योग के मामले में, आय की तुलना में लागत का अनुपात 1992-93 के 71.89 प्रतिशत के शीर्ष स्तर से कम हो कर 2007 में 50.15 प्रतिशत हो गया (सारणी 9.3)। हालांकि अलग-अलग बैंक समूहों में प्रवृत्तियों में भिन्नता मौजूद थी। जहां विदेशी और निजी क्षेत्र के नए बैंकों के मामले में उक्त अनुपात में बढ़ोत्तरी हुई, वहीं अन्य बैंक समूहों के मामले में यह क्रमिक रूप से कम हो गया।

9.20 इसके फलस्वरूप, विभिन्न बैंक समूहों में अनुपात में अंतर पिछले वर्षों में कम हो गया। वर्ष 2006-07 के दौरान विदेशी बैंकों के मामले में आय की प्रति इकाई लागत सबसे कम बनी हुई है, जिसमें यह ध्वनित होता है कि यह समूह उद्योग का सर्वाधिक कार्य-कुशल समूह है,

[1] तुलनीयता के लिए, इसमें तथा बाद की सभी सारणियों में विभिन्न देशों की तुलना संबंधी भारत के आंकड़े ''बैंक स्कोप''से लिए गए है। व्याप्ति में अंतर के कारण जरूरी नहीं हैं कि भारत के ये आंकड़े अन्य सारणियों के आंकड़ों से मेल खाएं।

## सारणी 9.2 : चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की कुल आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत

(प्रतिशत)

| देश | 1999 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| संयुक्त राज्य अमरीका | 2.30 | 2.75 | 2.82 | 2.71 | 2.79 | 1.65 | 1.83 | 1.88 |
| कनाडा | * | 3.21 | 3.29 | 3.49 | 3.23 | 2.98 | 2.99 | 2.57 |
| यूके | * | 2.38 | 2.58 | 2.47 | 1.34 | 1.56 | 1.40 | 1.39 |
| इटली | 3.26 | 3.23 | 3.32 | 3.34 | 3.43 | 2.32 | 1.91 | 2.30 |
| फ्रांस | 1.59 | 2.02 | 1.71 | 1.63 | 1.57 | 1.49 | 1.31 | 1.37 |
| जर्मनी | 1.89 | 1.94 | 2.54 | 2.80 | 2.37 | 1.93 | 1.71 | 1.59 |
| जापान | 2.63 | 2.35 | 2.92 | 2.45 | 2.28 | 1.87 | 1.43 | 1.48 |
| **उभरती अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| मैक्सिको | 11.26 | 6.29 | 6.09 | 5.98 | 5.49 | 5.33 | 5.74 | 6.02 |
| चिली | 4.43 | 3.63 | 3.75 | 3.81 | 3.46 | 3.41 | 3.38 | 3.16 |
| कोरिया | 4.59 | 4.27 | 2.86 | 2.81 | 3.74 | 2.88 | 2.16 | 2.07 |
| थाईलैंड* | 7.70 | 2.34 | 1.85 | 2.69 | 2.48 | 2.36 | 2.28 | 3.21 |
| फिलीपीन्स | 5.52 | 5.37 | 3.77 | 3.84 | 3.39 | 3.69 | 3.81 | 3.87 |
| मलेशिया | * | 2.34 | 2.82 | 2.39 | 2.07 | 2.06 | 1.99 | 1.91 |
| इंडोनेशिया | 7.61 | 2.44 | 3.45 | 2.94 | 3.39 | 3.31 | 3.79 | 3.97 |
| ब्राजील | 9.25 | 7.60 | 7.27 | 7.18 | 7.20 | 7.35 | 7.16 | 7.13 |
| रूसी महासंघ | 6.54 | 4.60 | 5.15 | 4.80 | 4.44 | 4.70 | 4.61 | 5.93 |
| चीन | 1.73 | 1.61 | 1.58 | 1.60 | 1.63 | 1.56 | 1.44 | 1.43 |
| *मेमो:* | | | | | | | | |
| **श्रेणी** | **1.59 - 11.26** | **1.61 - 7.60** | **1.58 - 7.27** | **1.60 - 7.18** | **1.34 - 7.20** | **1.49 - 7.35** | **1.31- 7.16** | **1.37 - 7.13** |
| **भारत** | **2.99** | **3.43** | **3.06** | **3.30** | **3.40** | **3.42** | **3.22** | **2.97** |

*: आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं अथवा यदि उपलब्ध हैं, तो उनके नमूने बहुत छोटे हैं और इसलिए उनके विश्लेषण पर विचार नहीं किया गया।

**स्रोत :** बैंक स्कोप।

**चार्ट IX.3 : चुनिंदा देशों में बैंकों की औसत आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत अनुपात की भूमिका - 2006**

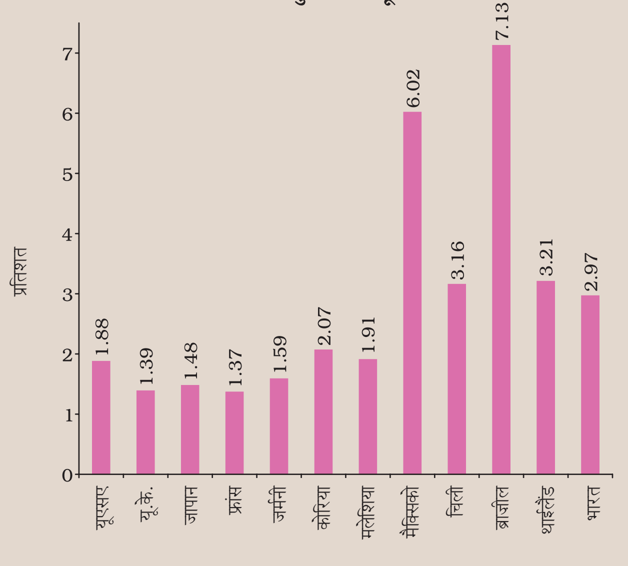


इसके बाद राष्ट्रीयकृत बैंकों और निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों का स्थान था। इस अनुपात की दृष्टि से स्टेट बैंक और निजी क्षेत्र के नए बैंक समूहों को सबसे कम कार्य-कुशल पाया गया (चार्ट IX.4)। अंतरराष्ट्रीय श्रेष्ठ प्रथा मानदंडों के अनुसार, बैंकों को 40 प्रतिशत[2] का लागत-आय अनुपात लक्ष्य प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। अतएव, 50.15 प्रतिशत के आय की तुलना में लागत अनुपात के साथ भारत को अंतरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धात्मकता के स्तर की प्राप्ति तथा श्रेष्ठ प्रथा मानदंडों पर खरे उतरने के लिए काफी कुछ करने की आवश्यकता है।

9.21 यद्यपि आय की तुलना में परिचालन लागत का अनुपात वांछित स्तर से अधिक था, यह उल्लेखनीय है कि भारतीय बैंकों का अनुपात कतिपय उन्नत और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं वाले देशों से अनुकूल रूप से तुलनीय था (चार्ट IX.5)। नमूने में शामिल अधिकांश देशों में, यह अनुपात 50 प्रतिशत से अधिक था। केवल तीन उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं (मलेशिया, चीन और कोरिया) में उक्त अनुपात 40 प्रतिशत के आसपास था। चीन आय की तुलना में लागत अनुपात को 1999 और 2006 के बीच वाली अवधि में आधा नीचे लाने में समर्थ हुआ था (सारणी 9.4)।

2 ''स्ट्रैटेजिक मॉडेल्स फॉर रिपोजीशनिंग ऑफ पब्लिक सेक्टर बैंक्स-क्रीएटिंग ग्लोबल विनर्स,'' बैंकॉन 2004 में दर्शाए गए बासेल II मानदण्ड, घोष, सी.आर. और अन्य (2004)।

## सारणी 9.3 : भारत में वाणिज्य बैंकों की आय की तुलना में लागत अनुपात

(प्रतिशत)

| क्षेत्र | देशी बैंक | | | | | | समस्त देशी बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 47.44 | 67.51 | 58.41 | 58.96 | * | 58.96 | 58.44 | 30.91 | 55.30 |
| 1992-93 | 59.19 | 86.35 | 73.72 | 66.75 | * | 66.75 | 73.32 | 59.15 | 71.89 |
| 1993-94 | 64.84 | 79.09 | 73.08 | 57.33 | * | 57.33 | 72.02 | 41.22 | 68.10 |
| 1994-95 | 60.43 | 72.65 | 67.57 | 52.21 | * | 52.21 | 66.49 | 40.34 | 63.51 |
| 1995-96 | 59.53 | 71.98 | 66.66 | 54.39 | 39.42 | 51.53 | 65.34 | 45.36 | 63.25 |
| 1996-97 | 57.37 | 69.33 | 64.31 | 56.20 | 38.34 | 51.31 | 63.04 | 45.54 | 61.00 |
| 1997-98 | 56.85 | 66.61 | 62.72 | 53.80 | 37.21 | 48.47 | 61.14 | 43.04 | 58.88 |
| 1998-99 | 62.41 | 68.29 | 65.94 | 65.13 | 48.69 | 58.96 | 65.26 | 56.61 | 64.26 |
| 1999-2000 | 58.64 | 66.25 | 63.23 | 54.22 | 40.22 | 48.62 | 61.36 | 48.35 | 59.86 |
| 2000-01 | 65.15 | 68.22 | 67.01 | 53.15 | 50.13 | 51.75 | 65.12 | 49.90 | 63.37 |
| 2001-02 | 52.11 | 56.65 | 54.93 | 43.47 | 47.95 | 45.61 | 53.53 | 48.76 | 53.01 |
| 2002-03 | 48.16 | 49.97 | 49.30 | 43.36 | 46.08 | 45.05 | 48.53 | 46.35 | 48.34 |
| 2003-04 | 45.76 | 45.03 | 45.30 | 43.51 | 49.22 | 47.13 | 45.63 | 42.92 | 45.38 |
| 2004-05 | 46.74 | 50.16 | 48.87 | 55.76 | 51.81 | 53.03 | 49.60 | 49.13 | 49.56 |
| 2005-06 | 51.19 | 52.69 | 52.11 | 58.69 | 53.97 | 55.19 | 52.77 | 46.79 | 52.11 |
| 2006-07 | 52.80 | 49.36 | 50.58 | 50.72 | 52.59 | 52.17 | 50.98 | 44.64 | 50.15 |

* : निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त वर्ष से उपलब्ध हुए ।
**स्रोत :** भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियों (भारतीय रिज़र्व बैंक) से परिकलित ।

9.22 परिचालन लागत को श्रम और गैर-श्रम परिचालन लागतों के रूप में विखंडित किया जा सकता है। इस प्रकार का विखंडन विभिन्न बैंकिंग प्रणालियों में श्रम/प्रौद्योगिकी द्वारा प्राप्त किए गए सापेक्ष महत्त्व का पता लगाने में सहायक होता है। इसके अलावा, विश्व भर में वित्तीय सेवाओं और बाज़ारों के बढ़ते एकीकरण से वित्तीय सेवाएं उपलब्ध कराने से अधिकाधिक स्पर्धात्मकता और गति प्राप्त करने के लिए प्रौद्योगिकीय हलों पर अधिक से अधिक निर्भरता आवश्यक हो जाने के फलस्वरूप यह आशा की जाती है कि गैर-श्रम परिचालन लागत को श्रम लागत की अपेक्षा अधिक अंश प्राप्त होगा।

**चार्ट IX.4 : आय की तुलना में लागत अनुपात - 2006-07**

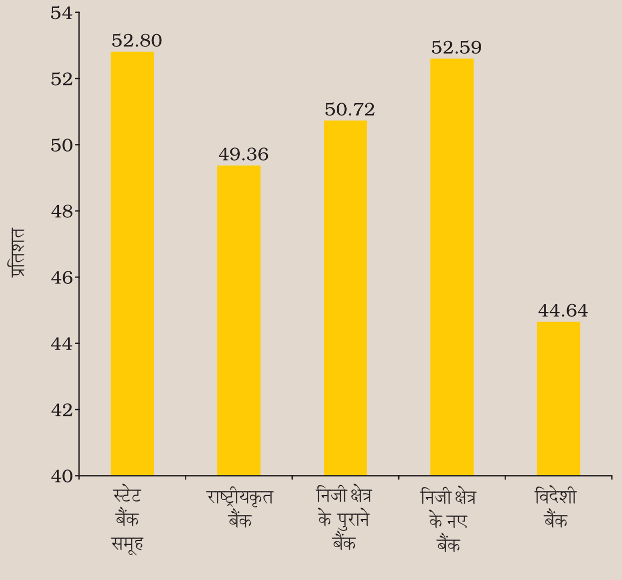


**चार्ट IX.5 : चुनिंदा देशों में बैंकों की आय की तुलना में लागत अनुपात - 2006**

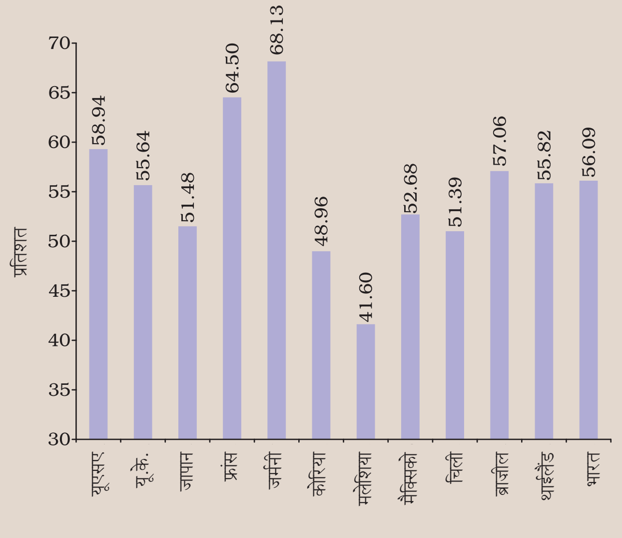

### सारणी 9.4 : चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की आय की तुलना में लागत अनुपात

(प्रतिशत)

| देश | 1999 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| यू एस ए | 57.87 | 60.07 | 62.34 | 63.69 | 51.74 | 52.07 | 54.90 | 58.94 |
| कनाडा | * | 68.38 | 69.42 | 70.46 | 70.66 | 69.83 | 72.66 | 65.53 |
| यू.के. | * | 60.89 | 69.21 | 67.03 | 67.14 | 57.20 | 56.28 | 55.64 |
| इटली | 73.28 | 69.85 | 75.24 | 87.93 | 82.99 | 66.31 | 60.37 | 59.29 |
| फ्रांस | 72.58 | 70.74 | 76.77 | 77.34 | 72.85 | 68.03 | 66.16 | 64.50 |
| जर्मनी | 70.02 | 70.62 | 91.90 | 87.13 | 89.52 | 72.92 | 71.96 | 68.13 |
| जापान | 50.47 | 49.53 | 52.47 | 51.64 | 51.61 | 50.13 | 51.55 | 51.48 |
| **उभरती अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| मैक्सिको | 57.50 | 68.64 | 62.13 | 65.75 | 61.85 | 63.18 | 55.35 | 52.68 |
| चिली | 60.49 | 59.41 | 58.07 | 55.05 | 54.59 | 54.67 | 54.65 | 51.39 |
| कोरिया | 43.91 | 48.93 | 40.98 | 39.95 | 41.18 | 43.56 | 48.10 | 48.96 |
| थाईलैंड | 91.52 | 86.54 | 78.96 | 64.02 | 58.05 | 52.18 | 51.78 | 55.82 |
| फिलीपीन्स | 70.39 | 68.29 | 72.81 | 60.06 | 56.91 | 64.02 | 61.69 | 61.97 |
| मलेशिया | * | 37.92 | 41.79 | 41.41 | 42.07 | 43.35 | 42.26 | 41.60 |
| इंडोनेशिया | 60.19 | 62.96 | 55.86 | 55.31 | 52.65 | 49.58 | 57.06 | 53.21 |
| ब्राज़ील | 71.10 | 82.32 | 71.23 | 62.46 | 62.33 | 65.20 | 58.99 | 57.06 |
| रूसी महासंघ | 51.50 | 62.15 | 49.34 | 57.29 | 51.47 | 52.85 | 48.72 | 54.22 |
| चीन | 79.91 | 75.69 | 72.54 | 54.09 | 48.50 | 46.18 | 46.03 | 41.98 |
| *मेमो :* | | | | | | | | |
| **श्रेणी** | **43.91 - 91.52** | **37.92 - 86.54** | **40.98 - 91.90** | **39.95 - 87.93** | **41.18 - 89.52** | **43.35 - 72.92** | **42.26 - 72.66** | **41.60 - 68.13** |
| **भारत** | **57.78** | **58.87** | **53.93** | **48.67** | **46.32** | **51.29** | **54.13** | **56.09** |

*** :** आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं अथवा यदि उपलब्ध हैं, तो उनके नमूने बहुत छोटे हैं और इसलिए उनके विश्लेषण पर विचार नहीं किया गया।
**स्रोत :** बैंक स्कोप।

*अर्जक आस्ति की प्रति इकाई श्रम लागत*

9.23 बैंकिंग, उत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रौद्योगिकी सॉल्यूशनों पर बढ़ी हुई निर्भरता के बावजूद स्वरूप की दृष्टि से ही एक सूचना और मानवीय पूंजी प्रधान उद्योग है। इसलिए, बैंकों की लाभप्रदता के निर्धारण में श्रम-लागत एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अतएव, परिचालन लागत के विखंडित स्तर पर अर्जक आस्तियों की प्रति इकाई श्रम लागत (वेतन पर व्यय) परिचालन लागतों के घटकों में महत्त्वपूर्ण हो जाता है। अर्जक आस्तियों की प्रति इकाई श्रम लागत संपूर्ण उद्योग के मामले में आधी कम हो गई, जो 1991-92 के 2.30 प्रतिशत से घटकर 2006-07 में 1.23 प्रतिशत के स्तर पर आ गई। यह मुख्यतः सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों तथा निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों की प्रति नए इकाई श्रम लागत में आई गिरावट के कारण संभव हुआ, निजी क्षेत्र के नए बैंकों और विदेशी नए बैंकों की इकाई लागत में वृद्धि हुई (सारणी 9.5)। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के मामले में आई गिरावट व्यापक तौर पर 2000-01 में स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना के कठोर कार्यान्वयन के कारण संभव हुई।

9.24 वर्ष 2006-07 के दौरान निजी क्षेत्र के नये बैंकों के मामले में श्रम लागत समस्त बैंक समूहों में सबसे कम थी, यह अनिवार्य रूप से इसलिए संभव हुई क्योंकि वे नेमी स्वरूप वाले अधिकांश कार्यों की आउटसोर्सिंग करवाने के अलावा नेमी कार्यों के लिए भी श्रम बल के बजाय प्रौद्योगिकी पर अधिक निर्भर करते हैं (चार्ट IX.6)। हालांकि, अधिकांश उनके शाखा नेटवर्क के विस्तार तथा कर्मचारियों की भर्ती के कारण उनकी श्रम लागत में बढ़ोत्तरी हो रही है। दूसरी ओर, विदेशी बैंकों की श्रम लागत, जो 1991-92 में 1.08 प्रतिशत के रूप में बैंकिंग क्षेत्र में सबसे कम थी, मुख्यतः उनके द्वारा भुगतान की गई अपेक्षाकृत अधिक परिलब्धियों के कारण 2006-07 में बढ़कर 1.56 प्रतिशत हो गई। विदेशी बैंकों, जिनका 1991-92 में शाखा नेटवर्क में अंश मात्र 0.38 प्रतिशत तथा समस्त वाणिज्यिक बैंकों के मुकाबले कर्मचारी शक्ति में अंश मात्र 1.45 प्रतिशत था, वाणिज्यिक बैंकों के बीच वेतन पर हुए कुल व्यय में उनकी हिस्सेदारी 3.14 प्रतिशत थी। विदेशी बैंकों का वेतन व्यय का अंश समस्त वाणिज्यिक बैंकों के कुल वेतन व्यय का 8.52 प्रतिशत था, जबकि उनके पास 2006-07 में कुल बैंक कर्मचारियों के केवल 3.11 प्रतिशत कर्मचारी थे और 0.47 प्रतिशत शाखा नेटवर्क था।

9.25 पिछले 10 वर्षों अथवा उसके आसपास की अवधि के दौरान श्रम उत्पादकता में हुई पर्याप्त बढ़ोत्तरी के बावजूद भारत में श्रम लागत विकसित अर्थव्यवस्थाओं के मुकाबले अपेक्षाकृत अधिक बनी हुई है। अधिकांश विकसित देशों और चीन, कोरिया, थाईलैंड और मलेशिया

## सारणी 9.5 : भारत में वाणिज्य बैंकों की अर्जक आस्तियों की प्रति इकाई श्रम लागत

(प्रतिशत)

| वर्ष | देशी बैंक | | | | | | | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | समस्त देशी बैंक | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 2.41 | 2.34 | 2.36 | 2.86 | * | 2.86 | 2.38 | 1.08 | 2.30 |
| 1992-93 | 2.51 | 2.40 | 2.44 | 2.59 | * | 2.59 | 2.45 | 0.96 | 2.34 |
| 1993-94 | 2.51 | 2.38 | 2.43 | 2.22 | * | 2.22 | 2.42 | 1.10 | 2.31 |
| 1994-95 | 2.86 | 2.48 | 2.61 | 2.05 | * | 2.05 | 2.58 | 1.23 | 2.48 |
| 1995-96 | 3.22 | 2.89 | 3.01 | 2.29 | 0.37 | 1.91 | 2.92 | 1.37 | 2.80 |
| 1996-97 | 3.01 | 2.73 | 2.83 | 1.96 | 0.36 | 1.56 | 2.70 | 1.45 | 2.60 |
| 1997-98 | 2.75 | 2.51 | 2.59 | 1.81 | 0.38 | 1.38 | 2.46 | 1.31 | 2.37 |
| 1998-99 | 2.70 | 2.52 | 2.58 | 1.83 | 0.39 | 1.30 | 2.44 | 1.37 | 2.35 |
| 1999-2000 | 2.37 | 2.40 | 2.39 | 1.77 | 0.36 | 1.17 | 2.22 | 1.31 | 2.15 |
| 2000-01 | 2.55 | 2.62 | 2.59 | 1.53 | 0.40 | 0.99 | 2.37 | 1.24 | 2.28 |
| 2001-02 | 1.93 | 2.11 | 2.04 | 1.54 | 0.47 | 0.93 | 1.86 | 1.33 | 1.83 |
| 2002-03 | 1.80 | 1.91 | 1.87 | 1.45 | 0.52 | 0.86 | 1.69 | 1.10 | 1.65 |
| 2003-04 | 1.78 | 1.80 | 1.79 | 1.35 | 0.56 | 0.84 | 1.61 | 1.17 | 1.58 |
| 2004-05 | 1.66 | 1.62 | 1.63 | 1.30 | 0.58 | 0.81 | 1.48 | 1.15 | 1.46 |
| 2005-06 | 1.79 | 1.46 | 1.57 | 1.38 | 0.62 | 0.83 | 1.41 | 1.34 | 1.40 |
| 2006-07 | 1.51 | 1.23 | 1.32 | 1.26 | 0.71 | 0.84 | 1.21 | 1.56 | 1.23 |

*: निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त वर्ष से उपलब्ध हुए।

**स्रोत :** भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियों (भारतीय रिज़र्व बैंक) से परिकलित।

जैसे एशियाई राष्ट्रों में श्रम लागत (प्रतिशत की दृष्टि से अर्जक आस्ति की प्रति इकाई कार्मिक व्यय) 1 प्रतिशत से भी कम था। हालांकि भारत की श्रम-लागत हाल के वर्षों में इटली के साथ तुलनीय और फिलिपिन्स तथा इंडोनेशिया के मुकाबले कुछ हद तक बेहतर थी। अन्य उभरती बाज़ार

**चार्ट IX.6: प्रति अर्जक आस्ति श्रम लागत - 2006-07**

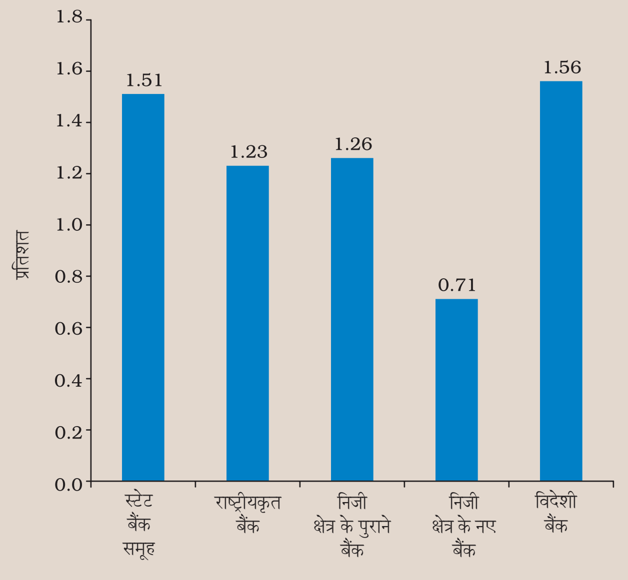


अर्थव्यवस्थाओं में ब्राज़ील और रूस में श्रम लागतें 2 प्रतिशत से अधिक की दर से महत्त्वपूर्ण रूप से अधिक थीं (सारणी 9.6 और चार्ट IX.7)।

9.26 इन स्वरूपों से यह पता चलता है कि केवल आर्थिक विकास ही श्रम लागतों की व्याख्या करने में महत्त्वपूर्ण कारक नहीं हो सकता। प्रतिस्पर्धात्मक दबाव और श्रम बाज़ार का ढांचा भी श्रम लागत को प्रभावित करने वाले महत्त्वपूर्ण कारक सिद्ध होते हैं।

### *गैर-श्रम लागत*

9.27 आंकड़ों के अपेक्षाकृत शीघ्र गति से संसाधन और नेमी स्वरूप के कार्यों के लिए तथा अधिक ग्राहकोनुकूल सेवाएं प्रदान करने के लिए प्रौद्योगिकीय सॉल्यूशनों पर अधिक बल दिए जाने के परिणामस्वरूप बैंकों की गैर श्रम लागतों[3] में निरपेक्ष दृष्टि से वृद्धि हो रही है। अर्जक आस्तियों की प्रति इकाई गैर-श्रम लागत सुधारों की प्रारंभिक अवधि में सभी बैंक समूहों के मामले में बढ़ गई (सारणी 9.7)। हालांकि 1990 वाले दशक के मध्यकाल से विदेशी और निजी क्षेत्र के नये बैंकों को छोड़कर सभी बैंक समूहों के मामले में गैर-श्रम लागतों में कमी आई है। तथापि, प्रौद्योगिकी-प्रधान निविष्टियों पर बढ़े हुए व्यय से आगे चल कर गैर श्रम-लागतों की तुलना में अर्जक आस्तियों के अपेक्षाकृत अधिक तीव्र विस्तार के फलस्वरूप उत्पादकता और कार्य-

[3] गैर-श्रम लागत = कुल परिचालन लागत - श्रम लागत

## सारणी 9.6 : चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की अर्जक आस्तियों की तुलना में कार्मिक व्ययों का अनुपात

(प्रतिशत)

| देश | 1999 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| यू एस ए | 0.86 | 0.90 | 0.89 | 0.67 | 0.73 | 0.57 | 0.63 | 0.62 |
| कनाडा | * | 1.68 | 1.67 | 1.73 | 1.69 | 1.67 | 1.52 | 1.41 |
| यू.के. | * | 1.01 | 1.00 | 0.90 | 0.84 | 0.76 | 0.64 | 0.63 |
| इटली | * | 1.37 | 1.40 | 1.38 | 1.38 | 1.32 | 1.00 | 1.12 |
| फ्रांस | * | 1.01 | 0.91 | 0.91 | 0.89 | 0.84 | 0.68 | 0.66 |
| जर्मनी | * | 0.97 | 1.03 | 1.00 | 0.93 | 0.79 | 0.75 | 0.80 |
| जापान | * | 0.43 | 0.41 | 0.46 | 0.42 | 0.38 | 0.39 | 0.36 |
| **उभरती अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| मैक्सिको | 2.98 | 2.37 | * | * | * | * | * | * |
| चिली | * | 1.85 | 1.85 | 1.80 | 1.71 | 1.62 | 1.56 | 1.51 |
| कोरिया | 0.90 | 0.89 | 0.88 | 0.95 | 0.92 | 0.91 | 0.92 | 0.93 |
| थाईलैंड | * | 0.72 | 0.72 | 0.67 | 0.68 | 0.74 | 0.79 | 0.84 |
| फिलीपीन्स | * | 1.54 | 1.50 | 1.48 | 1.52 | 1.38 | 1.40 | 1.36 |
| मलेशिया | * | 0.76 | 0.83 | 0.76 | 0.72 | 0.73 | 0.72 | 0.72 |
| इंडोनेशिया | * | 0.83 | 1.01 | 1.13 | 1.36 | 1.61 | 1.78 | 1.71 |
| ब्राज़ील | * | 4.22 | 3.58 | 3.19 | 3.22 | 3.13 | 2.86 | 2.59 |
| रूसी महासंघ | 2.35 | 2.38 | 2.31 | 2.35 | 2.37 | 2.62 | 2.43 | 2.16 |
| चीन | * | 0.31 | 0.45 | 0.56 | 0.51 | 0.47 | 0.53 | 0.52 |
| *मेमो:* | | | | | | | | |
| **श्रेणी** | **0.86 – 2.98** | **0.31 - 4.22** | **0.41 - 3.58** | **0.46 - 3.19** | **0.42 - 3.22** | **0.38 - 3.13** | **0.39 - 2.86** | **0.36 - 2.59** |
| **भारत** | ***** | **1.96** | **1.54** | **1.56** | **1.49** | **1.40** | **1.37** | **1.20** |

*: आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं अथवा यदि उपलब्ध हैं तो उनके नमूने बहुत छोटे है और इसलिए उनके विश्लेषण पर विचार नहीं किया गया।
**स्रोत :** बैंक स्कोप।

कुशलता में वृद्धि होने की आशा है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों तथा निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों की तुलना में निजी क्षेत्र के नए बैंकों तथा विदेशी बैंकों की गैर-श्रम लागतें उल्लेखनीय रूप से उच्चतर थीं । विदेशी बैंक

**चार्ट IX.7: चुनिंदा देशों में कुल आस्तियों की तुलना में श्रम लागत का अनुपात - 2006**

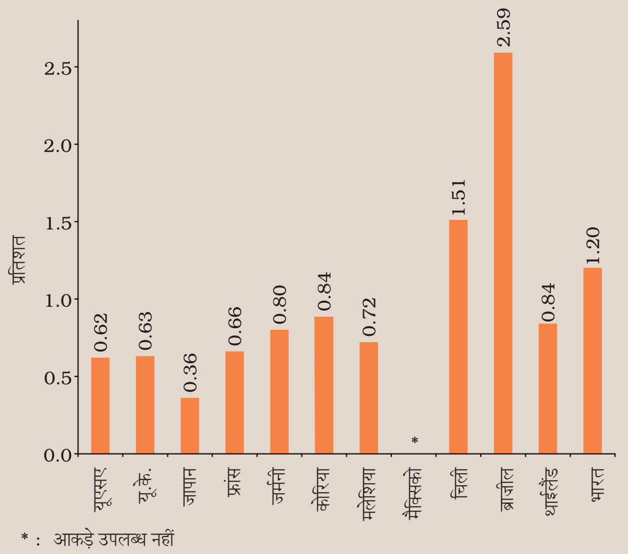


* : आकड़े उपलब्ध नहीं

समूहों की गैर-श्रम लागतें उच्च होने का एक मुख्य कारण बड़े स्तर पर तुलन-पत्रेतर एक्सपोजर का होना था जिन्हें हर (कुल आस्तियां)में नहीं दर्शाया जाता,जबकि ऐसे कारोबारों को चलाने की लागत अंश (गैर-श्रम लागत) में दर्शाई जाती है । विदेशी तथा निजी क्षेत्र के नए बैंक समूहों की गैर-श्रम लागतों का उच्चतर स्तर शाखा विस्तार, प्रौद्योगिकी उन्नयन तथा इन्फ्रास्ट्रक्चर निर्माण पर हुए व्यय के कारण भी था जिससे दीर्घावधि में उनकी कार्यक्षमता तथा उत्पादन क्षमता में वृद्धि होने की संभावना है (चार्ट IX.8)।

9.28 गैर-श्रम लागतों में गिरावट की सामान्य प्रवृत्ति के बावजूद गैर श्रम लागतों (अर्जक आस्तियों द्वारा सामान्यीकृत) की तुलना में श्रम लागत अनुपात में कुछेक रोचक प्रवृत्तियां दिखाई देती हैं, जिन्हें विभिन्न बैंक समूहों की श्रम प्रधानता का संकेतक माना जा सकता है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों और निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों के मामले में अनिवार्यतः इन बैंक समूहों द्वारा आरंभ किए गए प्रौद्योगिकीय सॉल्यूशनों के कारण श्रम-प्रधानता में गिरावट की प्रवृत्ति दिखाई देती है (सारणी 9.8)। इसके अलावा, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में श्रम बल के युक्तियुक्तकरण से भी उनकी श्रम-प्रधानता में कमी लाने में सहायता प्राप्त हुई है। दूसरी ओर, नए निजी बैंकों की श्रम-प्रधानता में श्रम बल में बढ़ोत्तरी तथा इसके पूर्व यथावर्णित उनके द्वारा भुगतान की गई परिलब्धियों, दोनों ही के कारण क्रमिक रूप से वृद्धि हुई।

## सारणी 9.7 : भारत में वाणिज्य बैंकों की अर्जक आस्तियों की प्रति इकाई गैर-श्रम लागतें

(प्रतिशत)

| वर्ष | देशी बैंक | | | | | | समस्त देशी बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 1.02 | 1.05 | 1.04 | 1.17 | * | 1.17 | 1.05 | 2.18 | 1.12 |
| 1992-93 | 0.98 | 1.05 | 1.03 | 1.10 | * | 1.10 | 1.03 | 2.89 | 1.17 |
| 1993-94 | 1.23 | 1.12 | 1.16 | 1.11 | * | 1.11 | 1.15 | 2.36 | 1.25 |
| 1994-95 | 1.09 | 1.21 | 1.17 | 1.05 | * | 1.05 | 1.16 | 2.53 | 1.26 |
| 1995-96 | 1.09 | 1.07 | 1.08 | 1.21 | 2.10 | 1.38 | 1.11 | 2.53 | 1.22 |
| 1996-97 | 1.14 | 1.03 | 1.07 | 1.25 | 2.12 | 1.47 | 1.11 | 2.67 | 1.24 |
| 1997-98 | 0.92 | 0.97 | 0.95 | 1.19 | 1.92 | 1.41 | 1.00 | 2.77 | 1.14 |
| 1998-99 | 1.09 | 0.91 | 0.98 | 1.07 | 1.88 | 1.36 | 1.02 | 3.27 | 1.20 |
| 1999-2000 | 0.94 | 0.86 | 0.89 | 1.01 | 1.48 | 1.21 | 0.93 | 2.63 | 1.06 |
| 2000-01 | 0.94 | 0.83 | 0.87 | 0.94 | 1.81 | 1.36 | 0.94 | 2.69 | 1.07 |
| 2001-02 | 0.78 | 0.79 | 0.79 | 0.99 | 1.47 | 1.26 | 0.86 | 2.68 | 0.99 |
| 2002-03 | 0.73 | 0.79 | 0.77 | 0.95 | 1.88 | 1.54 | 0.91 | 2.38 | 1.00 |
| 2003-04 | 0.80 | 0.78 | 0.79 | 0.98 | 1.90 | 1.58 | 0.94 | 2.50 | 1.04 |
| 2004-05 | 0.80 | 0.75 | 0.77 | 1.09 | 1.83 | 1.58 | 0.93 | 2.58 | 1.02 |
| 2005-06 | 0.85 | 0.77 | 0.80 | 1.08 | 1.82 | 1.61 | 0.98 | 2.57 | 1.08 |
| 2006-07 | 0.79 | 0.70 | 0.73 | 0.96 | 1.80 | 1.60 | 0.93 | 2.36 | 1.03 |

*: निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त वर्ष से उपलब्ध हुए।

**स्रोत :** भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियों (भारतीय रिज़र्व बैंक) से परिकलित।

9.29 भारतीय बैंकों की लगभग 2 प्रतिशत की दर से गैर-श्रम लागत उन्नत देशों तथा कोरिया, मलेशिया और चीन जैसी कुछ उभरती अर्थव्यवस्थाओं के मुकाबले कुछ हद तक अधिक थी (चार्ट IX.9)। मैक्सिको, ब्राज़ील और रूस जैसे कुछ देशों में यह अनुपात वैश्विक मानकों से 3 से 4 गुना अधिक था। एशिया के थाईलैंड, इंडोनेशिया और फिलिपीन्स जैसी कुछ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में भी यह अनुपात अपेक्षाकृत अधिक था (सारणी 9.9)।

चार्ट IX.8: प्रति अर्जक आस्ति गैर-श्रम लागत - 2006-07

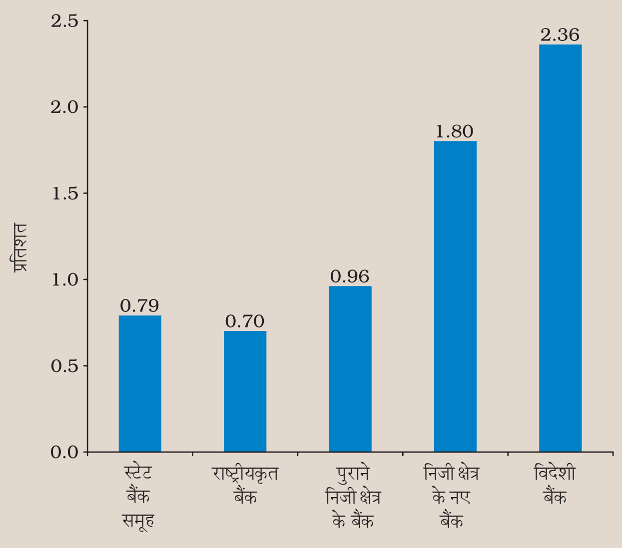


9.30 उभरती अर्थव्यवस्थाओं में सुदूर पूर्व एशियाई अर्थव्यवस्थाओं यथा मलेशिया और कोरिया की गैर-श्रमिक लागत विकसित विश्व की अर्थव्यवस्थाओं से तुलनीय है (चार्ट IX.9)।

*मध्यस्थता लागत*

9.31 मध्यस्थता लागत की कोई एक परिभाषा नहीं है। यद्यपि कुछेक अनुसंधानकर्ताओं ने उधार देने और जमा की दरों के बीच अंतर का प्रयोग मध्यस्थता की परिभाषा के रूप में किया है, तथापि मध्यस्थता लागत की सर्वाधिक सामान्य रूप से प्रयुक्त परिभाषा है जमा लागत और ऋण आस्तियों से प्रतिलाभ के बीच अंतर। यह उस कार्य-कुशलता को द्योतित करता है जिससे बैंकों द्वारा बचतकर्ताओं से वित्तीय संसाधन निवेशकों को मध्यस्थीकृत किए जाते हैं। बैंकिंग प्रणाली की उत्पादकता / कार्य-कुशलता के फलस्वरूप मध्यस्थीकरण लागतों में गिरावट की अपेक्षा की जाती है, क्योंकि अधिक कार्य-कुशल वित्तीय प्रणालियों से अपेक्षाकृत कम लेन-देन लागत पर सुलभ निधि संग्रहण को सुविधाजनक बनाए जाने की आशा की जाती है।

9.32 वित्तीय क्षेत्र के सुधारों को आरंभ किए जाने के फलस्वरूप भारत में मध्यस्थीकरण की लागत में क्रमिक रूप से कमी आ रही है।

### सारणी 9.8 : भारत में वाणिज्य बैंकों की गैर-श्रम लागत की तुलना में श्रम लागत का अनुपात

(प्रतिशत)

| वर्ष | देशी बैंक | | | | | | समस्त देशी बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 236.24 | 221.98 | 227.08 | 245.12 | * | 245.12 | 227.96 | 49.36 | 204.72 |
| 1992-93 | 257.00 | 227.60 | 237.99 | 235.20 | * | 235.20 | 237.84 | 33.23 | 199.59 |
| 1993-94 | 203.81 | 213.47 | 209.79 | 199.84 | * | 199.84 | 209.24 | 46.79 | 184.95 |
| 1994-95 | 262.20 | 204.24 | 223.47 | 194.83 | * | 194.83 | 221.74 | 48.68 | 196.74 |
| 1995-96 | 294.18 | 269.41 | 278.48 | 188.97 | 17.68 | 138.37 | 263.68 | 54.35 | 230.20 |
| 1996-97 | 264.38 | 264.02 | 264.16 | 156.80 | 17.16 | 106.44 | 243.33 | 54.52 | 210.34 |
| 1997-98 | 299.84 | 258.05 | 272.09 | 152.20 | 19.71 | 98.11 | 245.33 | 47.20 | 207.60 |
| 1998-99 | 246.80 | 276.16 | 264.51 | 171.41 | 20.64 | 95.60 | 238.74 | 41.81 | 196.81 |
| 1999-2000 | 251.97 | 278.45 | 268.24 | 176.57 | 24.22 | 96.72 | 238.38 | 49.61 | 202.81 |
| 2000-01 | 270.32 | 317.40 | 298.02 | 161.65 | 22.07 | 72.71 | 252.76 | 46.28 | 212.80 |
| 2001-02# | 247.87 | 266.69 | 259.70 | 155.73 | 31.97 | 73.81 | 216.28 | 49.63 | 184.85 |
| 2002-03 | 245.97 | 241.73 | 243.25 | 152.70 | 27.77 | 56.03 | 185.49 | 46.21 | 164.28 |
| 2003-04 | 221.91 | 231.26 | 227.72 | 137.94 | 29.65 | 53.19 | 170.51 | 46.70 | 152.33 |
| 2004-05 | 207.03 | 215.01 | 212.07 | 119.72 | 31.65 | 51.34 | 159.73 | 44.72 | 142.73 |
| 2005-06 | 209.33 | 189.16 | 196.54 | 128.39 | 33.94 | 51.20 | 143.69 | 52.10 | 129.99 |
| 2006-07 | 189.80 | 174.46 | 179.94 | 130.95 | 39.35 | 52.52 | 129.73 | 66.12 | 119.90 |

* : निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त वर्ष से उपलब्ध हुए।

# : बैंक विलयन के लिए आंकड़े समायोजित किए गए हैं।

**स्रोत :** भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियों (भारतीय रिजर्व बैंक) से परिकलित।

उद्योग स्तर पर मध्यस्थता लागत 1991-92 के 6.24 से घटकर 2006-07 में 3.43 प्रतिशत रह गयी (सारणी 9.10) मध्यस्थता लागत में यह गिरावट आय की तुलना में लागत अनुपात में आई कमी के अनुरूप है। यह गिरावट सभी बैंक समूहों में परिलक्षित हुई, जिससे बढ़ते प्रतिस्पर्धी दबाव का पता चलता है।

**चार्ट IX.9: चुनिंदा देशों में बैंकों की कुल आस्तियों की तुलना में गैर श्रम लागतों का अनुपात -2006**

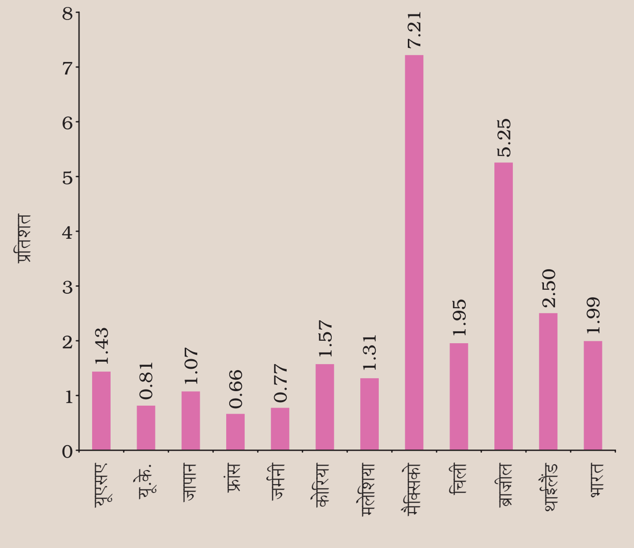


9.33 वर्ष 2006-07 के दौरान स्टेट बैंक समूह के मामले में मध्यस्थता लागत सबसे कम (2.97 प्रतिशत) थी, जिसके बाद राष्ट्रीयकृत बैंकों (3.32 प्रतिशत), निजी क्षेत्र के नए बैंकों (3.61 प्रतिशत), निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों (3.63 प्रतिशत) और विदेशी बैंकों (5.50 प्रतिशत) का स्थान था (चार्ट IX.10)।

9.34 विदेशी बैंकों के मामले में अधिक मध्यस्थता लागत आंशिक रूप से उनकी अल्प लागत वाली जमारा-शियां जुटाने की योग्यता के कारण थी। वर्ष 2005-06 के दौरान विदेशी बैंक समूह के मामले में 3.5 प्रतिशत की दर से जमा लागत स्टेट बैंक समूह के मुकाबले कम से कम 100 आधार अंक कम थी। यह उल्लेख करना भी महत्त्वपूर्ण है कि कुल जमाराशियों में चालू खाते की जमाराशियों का अंश विदेशी बैंकों के मामले में सर्वाधिक था। हालांकि, भारतीय संदर्भ में मध्यस्थता लागत का निर्वचन सावधानीपूर्वक किए जाने की आवश्यकता है। यह इसलिए है क्योंकि जुटाए गए संसाधनों का एक महत्त्वपूर्ण भाग आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सीआरआर) और सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) के रूप में सांविधिक अपेक्षाओं में अभिनियोजित किए जाने की आवश्यकता होती है, जिस पर अतीत में बैंक बाज़ार की तुलना में कम प्रतिलाभ अर्जित करते थे। इसके कारण बैंकों द्वारा प्रति-आर्थिक-सहायता आवश्यक हो गई थी, जिसके फलस्वरूप मध्यस्थता लागतों में एक बड़ी फन्नी (wedge) निर्मित हो गई थी। वह सीमा जहां तक इस प्रकार के संसाधनों का पूर्वक्रय किया जाता है, महत्त्वपूर्ण रूप से कम हो गई है और बैंक

## सारणी 9.9: चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की कुल अर्जक आस्तियों की तुलना में गैर श्रम लागतों का अनुपात

(प्रतिशत)

| देश | 1999 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| यू एस ए | 2.13 | 1.95 | 2.03 | 2.03 | 2.11 | 1.18 | 1.36 | 1.43 |
| कनाडा | * | 1.91 | 2.08 | 2.28 | 2.00 | 1.78 | 1.86 | 1.47 |
| यू.के. | * | 1.29 | 1.36 | 1.37 | 1.25 | 0.99 | 0.86 | 0.81 |
| इटली | * | 1.59 | 1.77 | 1.93 | 1.97 | 1.65 | 1.07 | 1.19 |
| फ्रांस | * | 0.92 | 0.91 | 0.89 | 0.84 | 0.83 | 0.72 | 0.66 |
| जर्मनी | * | 1.06 | 1.43 | 1.66 | 1.31 | 1.01 | 0.88 | 0.77 |
| जापान | * | 1.75 | 2.39 | 1.84 | 1.70 | 1.39 | 1.03 | 1.07 |
| **उभरती अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| मैक्सिको | 11.36 | 6.26 | 7.34 | 7.16 | 6.56 | 6.26 | 6.87 | 7.21 |
| चिली | * | 2.35 | 2.44 | 2.44 | 2.23 | 2.1 | 1.94 | 1.95 |
| कोरिया | 4.46 | 3.99 | 2.54 | 2.35 | 3.31 | 2.36 | 1.54 | 1.57 |
| थाईलैंड | * | 1.63 | 1.21 | 2.13 | 1.90 | 1.69 | 1.57 | 2.50 |
| फिलीपीन्स | * | 3.41 | 3.27 | 3.35 | 2.29 | 2.95 | 3.01 | 3.17 |
| मलेशिया | * | 1.63 | 2.05 | 1.68 | 1.41 | 1.37 | 1.43 | 1.31 |
| इंडोनेशिया | * | 2.63 | 2.78 | 2.24 | 2.35 | 2.28 | 2.65 | 2.85 |
| ब्राज़ील | * | 4.80 | 4.72 | 5.03 | 4.82 | 5.07 | 5.16 | 5.25 |
| रूसी महासंघ | 5.98 | 3.07 | 3.78 | 3.32 | 3.10 | 3.04 | 3.11 | 4.84 |
| चीन | * | 1.73 | 1.61 | 1.43 | 1.35 | 1.20 | 1.08 | 1.04 |
| *मेमोः* | | | | | | | | |
| **श्रेणी** | **2.13-11.36** | **0.92 - 6.26** | **0.91 - 7.34** | **0.89 - 7.16** | **0.84 - 6.56** | **0.83 - 6.26** | **0.72 - 6.87** | **0.66 - 7.21** |
| **भारत** | ***** | **1.80** | **1.71** | **2.00** | **2.18** | **2.20** | **2.09** | **1.99** |

*: आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं अथवा यदि उपलब्ध हैं तो उनके नमूने बहुत छोटे हैं और इसलिए उनके विश्लेषण पर विचार नहीं किया गया।

**स्रोत :** बैंक स्कोप।

सरकारी प्रतिभूतियों में उनके निवेशों पर बाजार से संबद्ध ब्याज दरें भी प्राप्त करते हैं। हालांकि, अब भी प्रति-आर्थिक-सहायता के तत्व से इनकार नहीं किया जा सकता। अतः भारतीय संदर्भ में मध्यस्थता लागत निवल ब्याज मार्जिन द्वारा बेहतर ढंग से निरूपित होती है।

## सारणी 9.10 : भारत में वाणिज्य बैंकों की मध्यस्थता लागतें

(प्रतिशत)

| वर्ष | देशी बैंक | | | | | | समस्त देशी बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 5.92 | 5.66 | 5.77 | 6.13 | * | 6.13 | 5.79 | 13.28 | 6.24 |
| 1992-93 | 4.05 | 4.26 | 4.22 | 5.54 | * | 5.54 | 4.29 | 12.81 | 4.82 |
| 1993-94 | 4.85 | 4.84 | 4.85 | 5.78 | * | 5.78 | 4.91 | 9.25 | 5.22 |
| 1994-95 | 3.54 | 4.17 | 3.95 | 5.06 | * | 5.06 | 4.03 | 7.30 | 4.27 |
| 1995-96 | 4.69 | 5.58 | 5.26 | 5.70 | 4.00 | 5.31 | 5.27 | 7.03 | 5.43 |
| 1996-97 | 5.83 | 6.18 | 6.06 | 6.19 | 7.93 | 6.62 | 6.14 | 7.45 | 6.28 |
| 1997-98 | 3.68 | 4.58 | 4.26 | 5.00 | 5.59 | 5.17 | 4.37 | 6.89 | 4.61 |
| 1998-99 | 3.49 | 4.23 | 3.96 | 3.86 | 4.36 | 4.03 | 3.98 | 6.32 | 4.19 |
| 1999-2000 | 2.69 | 3.88 | 3.45 | 3.71 | 3.57 | 3.68 | 3.48 | 4.88 | 3.59 |
| 2000-01 | 3.09 | 3.86 | 3.58 | 3.44 | 3.48 | 3.48 | 3.57 | 5.81 | 3.74 |
| 2001-02# | 2.15 | 3.14 | 2.79 | 3.24 | 4.83 | 4.15 | 2.97 | 5.12 | 3.12 |
| 2002-03 | 1.79 | 3.33 | 2.78 | 3.06 | 4.77 | 4.07 | 3.03 | 5.22 | 3.17 |
| 2003-04 | 1.82 | 3.36 | 2.82 | 3.43 | 4.69 | 4.18 | 3.09 | 4.72 | 3.18 |
| 2004-05 | 2.04 | 2.86 | 2.58 | 3.33 | 3.96 | 3.68 | 2.79 | 4.35 | 2.87 |
| 2005-06 | 2.20 | 3.07 | 2.78 | 3.38 | 3.71 | 3.58 | 2.95 | 4.79 | 3.05 |
| 2006-07 | 2.97 | 3.32 | 3.20 | 3.63 | 3.61 | 3.61 | 3.30 | 5.50 | 3.43 |

* : निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त वर्ष से उपलब्ध हुए।

\# : बैंक विलयन के आंकड़े समायोजित किए गए हैं।

**स्रोत :** भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियों (भारतीय रिज़र्व बैंक) से परिकलित।

चार्ट IX.10: मध्यस्थता लागत - 2006-07

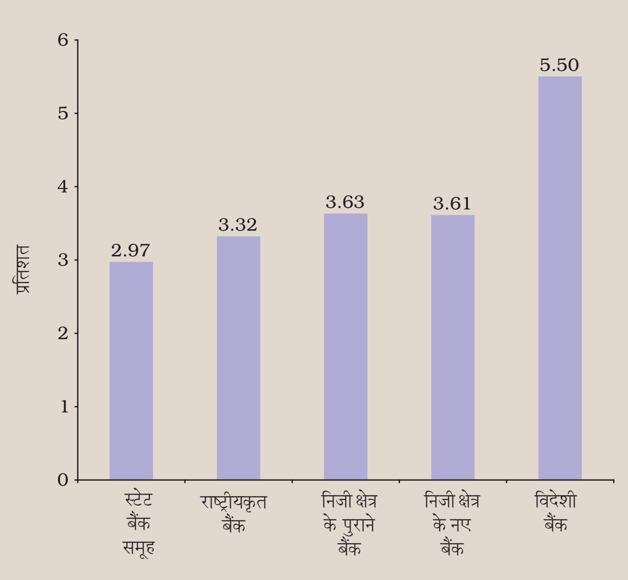


## निवल ब्याज मार्जिन अथवा स्प्रेड

9.35 निवल ब्याज मार्जिन को आस्तियों द्वारा प्रसामान्यीकृत कुल उपचित ब्याज (निवेशों जैसी मदों सहित) और कुल खर्च ब्याज (अंतर बैंक उधारों जैसी मदों सहित) के बीच के अंतर के रूप में परिभाषित किया गया है। यह अनुपात इस बात का संकेत करता है कि बैंक अपनी समस्त निधियों (जमाराशियों और उधार ली गई राशियों, दोनों ही) को ऋण और निवेश परिचालनों से आय सृजित करने हेतु कितने प्रभावी ढंग से अभिनियोजित करते हैं। यह अनुपात जितना ही कम होता है, बैंकिंग प्रणाली उतनी ही अधिक कार्य-कुशल होती है।

9.36 ऐतिहासिक रूप से, मुख्यतः पर्याप्त प्रतिस्पर्धा के अभाव के कारण भारतीय बैंकों का निवल ब्याज मार्जिन अधिक रहा है। ऐसा लगता है कि सुधार आरंभ किए जाने के उपरांत उद्योग में व्याप्त वर्धित प्रतिस्पर्धात्मक दबावों ने स्प्रेडों पर अधोमुखी दबाव डालना आरंभ कर दिया। उद्योग का निवल ब्याज मार्जिन, जो 1991-92 में 3.30 प्रतिशत था, घटकर 2001-02 में 2.57 प्रतिशत हो गया। वर्ष 2002-03 और उसके बाद से आर्थिक गतिविधियों में हुए सुधार तथा अभूतपूर्व ऋण वृद्धि के परिणामस्वरूप, निवल ब्याज मार्जिन में ऊर्ध्वमुखी प्रवृत्ति आरंभ हुई और वह 2006-07 तक कम होकर 2.69 प्रतिशत के स्तर पर आने के पहले 2003-04 तक 2.87 प्रतिशत पर आ गया था (सारणी 9.11)।

9.37 बैंक-समूहवार आंकड़ों से यह पता चलता है कि 1991-92 में स्टेट बैंक समूह, निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों और विदेशी बैंकों से सम्बन्धित निवल ब्याज मार्जिन (एनआइएम) लगभग उसी स्तर पर था। जहाँ पिछले वर्षों में विदेशी बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन में केवल मामूली गिरावट आई, वहीं स्टेट बैंक समूह और निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों के मार्जिन में महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आई। निजी क्षेत्र के नए बैंकों से सम्बन्धित प्रवृत्तियों में भारी घट-बढ़ परिलक्षित हुआ। 1995-96 और 2001-02 के बीच वाली अवधि में लगभग निरंतर आधार पर कम होने के बाद उक्त अनुपात उसके बाद महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ गया। हालांकि, इस वृद्धि के बावजूद, उनका निवल ब्याज मार्जिन 2006-07 में सबसे कम (2.36 प्रतिशत) था, उसके बाद राष्ट्रीयकृत बैंकों (2.58 प्रतिशत), निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों (2.74 प्रतिशत), स्टेट बैंक समूह (2.79 प्रतिशत) और

### सारणी 9.11: भारत में वाणिज्य बैंकों की कुल आस्तियों की तुलना में निवल ब्याज मार्जिन का अनुपात

(प्रतिशत)

| वर्ष | देशी बैंक | | | | | | समस्त देशी बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 3.80 | 2.86 | 3.22 | 4.01 | * | 4.01 | 3.26 | 3.90 | 3.30 |
| 1992-93 | 3.01 | 2.02 | 2.39 | 2.92 | * | 2.92 | 2.42 | 3.57 | 2.51 |
| 1993-94 | 2.68 | 2.17 | 2.36 | 3.01 | * | 3.01 | 2.40 | 4.20 | 2.54 |
| 1994-95 | 3.27 | 2.73 | 2.92 | 3.07 | * | 3.07 | 2.93 | 4.27 | 3.03 |
| 1995-96 | 3.34 | 2.95 | 3.10 | 3.17 | 2.85 | 3.10 | 3.10 | 3.75 | 3.15 |
| 1996-97 | 3.48 | 2.97 | 3.16 | 2.96 | 2.94 | 2.95 | 3.14 | 4.13 | 3.22 |
| 1997-98 | 3.14 | 2.78 | 2.91 | 2.56 | 2.25 | 2.46 | 2.86 | 3.98 | 2.95 |
| 1998-99 | 2.85 | 2.78 | 2.81 | 2.17 | 2.01 | 2.11 | 2.73 | 3.52 | 2.79 |
| 1999-2000 | 2.76 | 2.67 | 2.70 | 2.33 | 1.87 | 2.13 | 2.63 | 3.85 | 2.72 |
| 2000-01 | 2.76 | 2.90 | 2.84 | 2.51 | 2.14 | 2.33 | 2.77 | 3.64 | 2.84 |
| 2001-02# | 2.71 | 2.74 | 2.73 | 2.40 | 1.18 | 1.58 | 2.52 | 3.25 | 2.57 |
| 2002-03 | 2.77 | 2.99 | 2.91 | 2.46 | 1.68 | 1.96 | 2.73 | 3.36 | 2.77 |
| 2003-04 | 2.83 | 3.06 | 2.98 | 2.56 | 2.03 | 2.21 | 2.82 | 3.57 | 2.87 |
| 2004-05 | 3.06 | 2.82 | 2.91 | 2.65 | 2.18 | 2.34 | 2.80 | 3.34 | 2.83 |
| 2005-06 | 3.07 | 2.73 | 2.85 | 2.72 | 2.28 | 2.40 | 2.75 | 3.58 | 2.81 |
| 2006-07 | 2.79 | 2.58 | 2.65 | 2.74 | 2.36 | 2.45 | 2.60 | 3.74 | 2.69 |

* : निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त वर्ष से उपलब्ध हुए।

# : बैंक विलयन के आंकड़े समायोजित किए गए हैं।

**स्रोत :** भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियों (भारतीय रिज़र्व बैंक) से परिकलित।

विदेशी बैंकों (3.74 प्रतिशत) के मार्जिन थे (चार्ट IX.11)। विदेशी बैंकों के मामले में अपेक्षाकृत अधिक निवल ब्याज मार्जिन उनके चालू खातों की विशाल मात्रा के कारण था, जिन्होंने बैंकों को इसके पूर्व यथा वर्णित अल्प-लागत वाली जमाराशियां जुटाने में समर्थ बनाया।

9.38 अन्तरराष्ट्रीय अनुभव से पता चलता है कि अविनियमित और प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण में निवल ब्याज मार्जिन में कमी आती है। यह इसलिए होता है, क्योंकि जैसे-जैसे प्रतिस्पर्धा बढ़ती जाती है, प्रतिस्पर्धी बैंक निधियां आकर्षित करने हेतु जमाराशियों पर तुलनात्मक रूप से अपेक्षाकृत अधिक ब्याज दरें प्रदान करने लगते हैं, जबकि उसके साथ ही उनके कारोबार को विस्तारित करने के लिए ऋणों पर अपेक्षाकृत कम ब्याज भी लेने लगते हैं। हाल के वर्षों में मार्जिनों में आई गिरावट का कारण प्रतिफल वक्र का समतल हो जाना भी हो सकता है। अन्तरराष्ट्रीय अनुभव से पता चलता है कि प्रतिफल वक्र को संकुचित किए जाने के फलस्वरू प निवल ब्याज मार्जिनों में, विशेषतः उन अर्थव्यवस्थाओं में, जिनमें ब्याज दर व्युत्पन्नियां सुविकसित नहीं है और गैर-ब्याजगत आय अर्जित करने के अवसर सीमित हैं, कमी आ सकती है। 1997-98 से 2007-08 तक की अवधि के दौरान भारत में सरकारी प्रतिभूतियों के बाज़ार के गौण बाज़ार प्रतिफलों से परिकलित प्रतिफल वक्र महत्त्वपूर्ण रूप से निवल ब्याज मार्जिन से सह-सम्बद्ध था (बॉक्स IX.4)।

चार्ट IX.11: निवल ब्याज मार्जिन - 2006-07

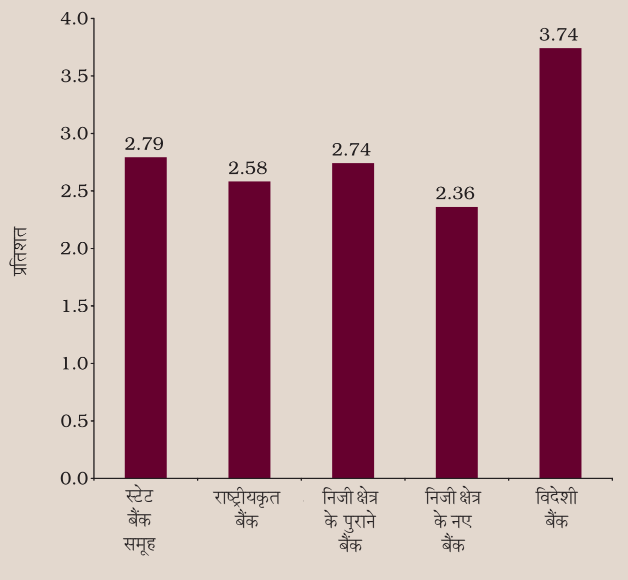


## बॉक्स IX.4
## प्रतिफल वक्र और बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन

परम्परागत रूप से यह तर्क दिया जाता है कि प्रतिफल वक्र और बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन के बीच एक तर्कपूर्ण सम्बन्ध विद्यमान होता है। बैंक उनकी जमाराशियों पर अल्पावधिक ब्याज दरों के आधार पर ब्याज का भुगतान करते हैं, जबकि ऋण देते समय उसे दीर्घावधिक ब्याज दरों से जोड़ देते हैं। इस प्रकार प्रदत्त और प्राप्त ब्याज के बीच अंतर, जो निवल ब्याज मार्जिन होता है, को अल्पावधिक और दीर्घावधिक ब्याज दरों के बीच अंतर के रूप में परिभाषित प्रतिफल वक्र की ढलान (slope) द्वारा प्रभावित होना चाहिए। इस मामले में अन्तरराष्ट्रीय संवाद को 1984 और 1994 में ऐतिहासिक रूप से समर्थन प्रदान किया गया, जब प्रतिफल वक्र अन्तर में परिवर्तनों और बैंकों के दो तिमाही के अंतराल वाले निवल ब्याज मार्जिनों के बीच सह-सम्बन्ध 70 प्रतिशत नियत किया गया। प्रतिफल वक्र और निवल ब्याज मार्जिन के बीच विद्यमान यह सम्बन्ध इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि प्रतिफल वक्र का समतल होना आर्थिक वृद्धि के मंद होने तथा उसके परिणामस्वरूप बैंकों के अर्जन पर वर्धित दबाव की पूर्वपीठिका होती है, सूक्ष्म-आर्थिक दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण होता है। हालांकि, इन दिनों कतिपय कारणों से बैंक प्रतिफल वक्र में होने वाले उतार-चढ़ावों के प्रति कम संवेदनशील हो गए हैं। एक, इसका एक कारण बदलता बैंकिंग विनियमन और उत्पाद विभेदन हो सकता है, जिसने बैंकों को गैर-परम्परागत क्रियाकलापों में विविधीकृत होने में समर्थ बना दिया है। दो, ब्याज दरों में उतार-चढ़ावों के प्रति एक्सपोजर को ब्याज दर अदला-बदली (swaps), प्रतिभूतिकरण और समायोज्य दर वाले ऋणों जैसे नए वित्तीय उत्पादों के विकास के माध्यम से मंदित कर दिया गया है। तीन, बैंक उनके निवल ब्याज मार्जिनों पर घटते प्रतिफलों के प्रभाव को उनकी आस्तियों का इक्विटी और मांग जमाराशियों जैसी गैर-ब्याज वाली देयताओं के माध्यम से अधिकाधिक निधीयन करते हुए प्रतितुलित करने में समर्थ रहे हैं।

एक अन्य रोचक प्रेक्षण यह है कि यद्यपि बड़े बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन प्रतिफल वक्र में होने वाले उतार-चढ़ावों के अनुरूप घटते-बढ़ते रहे हैं, छोटे बैंकों ने प्रतिफल वक्र की निर्धारित प्रवृत्ति से विलग होने के संकेत प्रदर्शित किए हैं। इसका कारण छोटे और बड़े बैंकों के बीच आस्ति के विन्यास और निधीयन लागत में अंतर हो सकता है।

बड़े बैंक वाणिज्यिक और औद्योगिक ऋणों के विशेषज्ञ होते हैं, जिनमें प्रभारित की जाने वाली दरों में, बैंक और गैर-बैंक, दोनों ही स्रोतों से प्रतिस्पर्धा के कारण गिरावट की प्रवृत्ति परिलक्षित हुई है। दूसरे, अपेक्षाकृत बड़े बैंकों को उनकी एक-दिवसीय और थोक निधीयन, जिनका ब्याज दरों में ऊर्ध्वमुखी संशोधन के दौरान शीघ्रतापूर्वक पुनर्मूल्य-निर्धारण किया जाता है, पर अधिकाधिक निर्भरता के कारण निधीयन लागत में द्रुत गति से वृद्धि का सामना करना पड़ा है। यह अपेक्षाकृत छोटे बैंकों की स्थिति के ठीक विपरीत है, जो दीर्घावधिक जमाराशियों पर अधिक निर्भर करते हैं।

भारत के मामले में, प्रतिफल अंतर (1 वर्ष और 10 वर्ष के बीच की अवधि वाली सरकारी प्रतिभूतियों के बीच) के 1996-97 में 3.22 प्रतिशत से संकुचित होकर 2006-07 में 0.72 प्रतिशत पर आ जाने के फलस्वरूप प्रतिफल वक्र के समतल रहने की प्रवृत्ति जारी है। इसका कारण था दीर्घावधिक दरों में गिरावट और अल्पावधिक दरों की समानुपातिक स्थिरता, क्योंकि स्फीतिकारी अपेक्षाएं सुस्थिर रहीं। निवल ब्याज मार्जिन संभवतः इसलिए पश्चता के साथ प्रतिफल स्प्रेड का अनुसरण करता रहा है, क्योंकि उधार देने और जमा/उधार (लेने की) दरें बाज़ार के उतार-चढ़ावों से तुरंत समायोजित नहीं हो पातीं। एक वर्ष की पश्चता के साथ प्रतिफल स्प्रेड और निवल ब्याज मार्जिन के बीच सह-सम्बन्ध लगभग 0.68 था (चार्ट)।

चार्ट : प्रतिफल स्प्रेड और निवल ब्याज मार्जिन

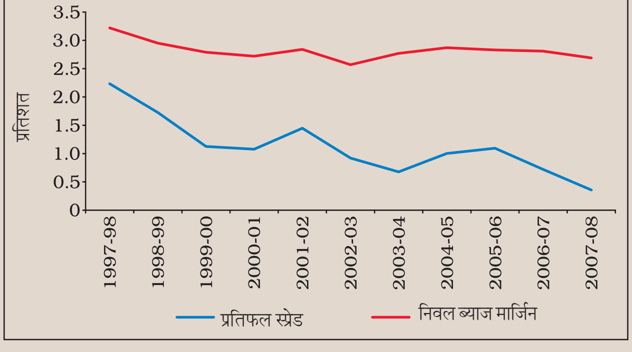

9.39 भारत में बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन के निर्धारकों का पता लगाने हेतु किए गए अनुभवजन्य अभ्यास से यह पता चलता है कि परिचालन व्यय निवल ब्याज मार्जिनों के मुख्य निर्धारक तत्व होते हैं। प्रावधानीकरण के परिणामस्वरूप भी निवल ब्याज मार्जिनों में वृद्धि होती है। दूसरे शब्दों में, अधिक अनर्जक आस्तियों वाले बैंकों को अपेक्षाकृत बड़े प्रावधान करने की आवश्यकता होती है, जो अंततः अपेक्षाकृत अधिक निवल ब्याज मार्जिनों में परिवर्तित हो जाता है। उक्त विश्लेषण से यह भी पता चलता है कि विविधीकरण से निवल ब्याज मार्जिनों में कमी आती है। इसका अभिप्राय यह है कि बेहतर ढंग से विविधीकृत बैंकों का निवल ब्याज मार्जिन अपेक्षाकृत कम होगा। आर्थिक वृद्धि पश्चता के साथ निवल ब्याज मार्जिनों को सकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। इसके अलावा, हरफिंडहल सूचकांक- संकेन्द्रण का एक माप - के गुणांक से यह पता चलता है कि संकेन्द्रण में कमी (प्रतिस्पर्धा में वृद्धि) के फलस्वरूप प्रत्याशानुसार निवल ब्याज मार्जिनों में कमी आती है, यद्यपि गुणांक सांख्यिकीय दृष्टि से महत्त्वपूर्ण नहीं था। यह इसलिए हो सकता है, क्योंकि बैंक उत्पादों की दृष्टि से प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिन्हें अन्य बातों के साथ-साथ परिपक्वता, ऋण के आकार, अनुग्रह अवधि और शोधन (चुकौती) की दृष्टि से विभेदित किया जाता है। इसलिए, बैंक ब्याज दरों में कमी किए बिना भी उनके उत्पादों को बेचना जारी रख सकते हैं। इस प्रकार, समग्र निवल ब्याज मार्जिन पर बढ़ी हुई प्रतिस्पर्धा का प्रभाव आनुपातिक रूप से कमज़ोर लगता है (बॉक्स IX.5)।

9.40 विभिन्न देशों के साक्ष्य से यह पता चलता है कि भिन्न-भिन्न देशों के विविध बैंकिंग क्षेत्रों में निवल ब्याज मार्जिनों में व्यापक भिन्नताएं मौजूद हैं (चार्ट IX.12)। 2000 वाले दशक के प्रथमार्ध में सभी विकसित देशों में निवल ब्याज मार्जिनों में सामान्यतया कमी आई। हालांकि, अमरीका, इंग्लैंड, कनाडा, जापान, जर्मनी और फ्रांस जैसे उन्नत देशों में आम तौर पर निवल ब्याज मार्जिन दो से कम था। हाल की गिरावट के बावजूद, भारतीय बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन का समग्र स्तर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रचलित दर की अपेक्षा थोड़ा अधिक था। उभरती अर्थव्यवस्थाओं में निवल ब्याज मार्जिन उन्नत देशों के मुकाबले काफी अधिक थे, जिनमें ब्राज़ील का अंश 8.37 प्रतिशत था, जिसके बाद मैक्सिको (7.66 प्रतिशत) और इंडोनेशिया (5.90 प्रतिशत) का स्थान था। ब्राज़ील में अंतर के अधिक होने का कारण वह ऋण कार्यक्रम था, जिसमें बैंकों के लिए उनके ऋणों का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा बाज़ार की ब्याज दरों से कम दर पर चुनिंदा अधिक जोखिमपूर्ण, उच्च लागत वाले उधारकर्ताओं को आवंटित करना आवश्यक होता है। बैंक चुनिंदा बाज़ारों में हुई उनकी हानियों को

**चार्ट IX.12: चुनिंदा देशों में बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन - 2006**

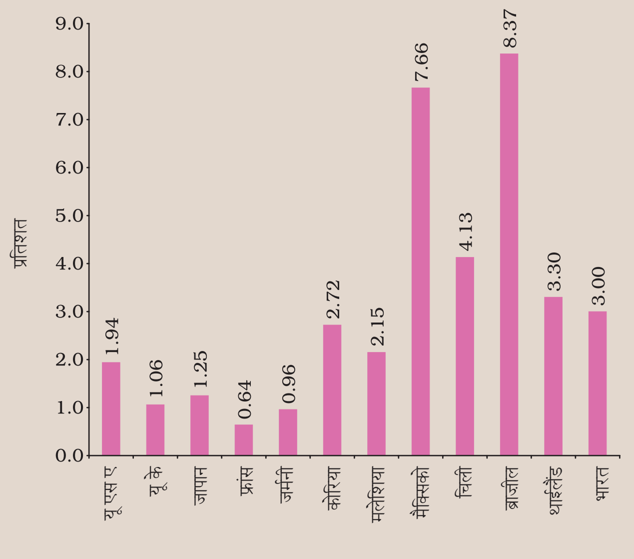


## बॉक्स IX.5
## भारत में निवल ब्याज मार्जिन के निर्धारक

साहित्य से यह पता चलता है कि निवल ब्याज मार्जिन प्रतिस्पर्धा अथवा औद्योगिक संकेन्द्रण, अनर्जक आस्तियों के स्तर, परिचालन व्ययों और सकल देशी उत्पादों में वृद्धि द्वारा महत्त्वपूर्ण रूप से प्रभावित होते हैं। यह भी तर्क दिया जाता है कि बैंकिंग क्रियाकलापों में अपेक्षाकृत अधिक विविधीकरण भी न्यून निवल ब्याज मार्जिन में योगदान करता है। अपेक्षाकृत अधिक गैर-निधिक आय वाले बैंक उनकी निधि-आधारित गतिविधियों को प्रति-आर्थिक सहायता प्रदान करते हैं, जिसके फलस्वरूप निवल ब्याज मार्जिन कम हो जाता है। इन पहलुओं का अनुभव के आधार पर पता लगाने के उद्देश्य से 1995-96 से 2006-07 तक की अवधि हेतु पैनल-पश्चगमन आरंभ किया गया था। संकेन्द्रण को हरफिन्डियल सूचकांक (संकेन्द्रण में कमी से प्रतिस्पर्धा में वृद्धि का पता चलेगा) द्वारा मापा गया, विविधीकरण का पता कुल आय की तुलना में अन्य आय के अनुपात से लगाया गया, जबकि वर्ष के दौरान किए गए प्रावधानीकरण का उपयोग आस्ति की गुणवत्ता का मूल्यांकन करने हेतु किया गया। परिवर्तियों को अनुमान लगाने के पहले अन्तर निकाल कर स्थिर किया गया। अनुमानित परिणामों से यह पता चलता है कि निवल ब्याज मार्जिन परिचालन व्ययों, सकल देशी उत्पाद में वृद्धि और प्रावधानीकरण सम्बन्धी अपेक्षाओं द्वारा महत्त्वपूर्ण और सकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। जैसी कि आशा थी, विविधीकरण का स्तर निवल ब्याज मार्जिन से ऋणात्मक रूप से जुड़ा होता है। जहां तक संकेन्द्रण का सम्बन्ध है, परिणाम परम्परागत समझदारी के प्रतिकूल हैं। अपेक्षाकृत अधिक संकेन्द्रण अनुपात को निवल ब्याज मार्जिन से सकारात्मक रू प से सम्बद्ध पाया गया, यद्यपि वह सांख्यिकीय दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं था (सारणी)।

**सारणी : आश्रित परिवर्ती : निवल ब्याज मार्जिन**

| परिवर्ती | गुणांक | मानक त्रुटी | सांख्यिकी | संभा. |
|---|---|---|---|---|
| कुल आय की तुलना में अन्य आय | -0.04 | 0.009 | -3.91 | 0.00 |
| परिचालन व्यय | 0.57 | 10.50 | 5.43 | 0.00 |
| संकेन्द्रण | 0.002 | 0.002 | 1.41 | 0.166 |
| प्रावधानीकरण | 0.25 | 0.039 | 6.53 | 0.000 |
| सकल देशी उत्पाद वृद्धि दर (-1) | 0.02 | 0.008 | 2.51 | 0.017 |
| **आर- स्वेयर्ड** | **0.65** | **डर्बिन-वाटसन स्टैट** | | **2.21** |

गैर-चुनिंदा बाज़ार में अननुपातिक रूप से अधिक स्प्रेड प्रभारित करते हुए प्रतितुलित करते हैं (सूजा सुब्रीन्हों, 2007)। हालांकि, भारत में औसत निवल ब्याज मार्जिन थाईलैंड, कोरिया और फिलीपीन्स जैसे कतिपय देशों के साथ तुलनीय था (तालिका 9.12)।

### कुल आय की तुलना में अन्य परिचालन आय

9.41 यद्यपि, कुल आय की तुलना में अन्य परिचालन आय (गैर-ब्याजगत आय) के अनुपात को स्वतः किसी लेखांकन माप के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता, इसका उपयोग तुलनपत्र में शामिल न की जाने वाली मदों में एक्सपोज़रों जैसे आय के अन्य स्रोतों के बढ़ते महत्त्व तथा शुल्कों एवं कमीशन जैसे आय के गैर-परंपरागत स्रोतों को दर्शाने के लिए किया गया है। इस प्रकार यह अनुपात एक तरह से बैंकों के परिचालनों के विविधीकरण का संकेतक होता है। विदेशी बैंकों को छोड़कर सभी बैंक समूहों का अनुपात चार भिन्न-भिन्न चरणों से होकर गुज़रा है (सारणी 9.13)। 1991-92 से 1995-96 तक के पहले चरण में मुख्यतः उत्फुल्ल प्राथमिक पूंजी बाज़ार के कारण आय के गैर-ब्याजगत स्रोतों में तीव्र गति से वृद्धि हुई, क्योंकि बैंक व्यापारी बैंकिंग क्रियाकलापों से पर्याप्त आय अर्जित करने में समर्थ हुए। 1996-97 से 2000-01 तक के दूसरे चरण में मुख्यतः मंद पूंजी बाजार के कारण शुल्क और कमीशन पर आधारित आय में कमी के कारण गैर-ब्याजगत आय में वृद्धि की प्रवृत्ति रुक गई। 2001-02 और 2003-04 तक की अवधि वाले तीसरे चरण में, जब बैंकों में अधिक ब्याज प्रदान करने वाली सरकारी प्रतिभूतियों को बेच दिया तथा भारी मात्रा में ट्रेडिंग संबंधी लाभ अर्जित किया, तो आय की तुलना में गैर-ब्याजगत आय का अनुपात तेज़ी से बढ़ गया। हालांकि, 2004-05 से 2006-07 तक के चौथे चरण में कुल आय की तुलना में अन्य परिचालनगत आय का अनुपात घट गया, क्योंकि कुछ बैंक को ब्याज दरों में वृद्धि हो जाने के कारण सरकारी प्रतिभूतियों में व्यापारिक हानि वहन करनी पड़ी। हालांकि, विदेशी बैंकों के कुल आय की तुलना में गैर-ब्याजगत आय के अनुपात में अपेक्षाकृत कम उतार-चढ़ाव परिलक्षित हुए। कुल मिलाकर, सभी अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के अनुपात में 1991-92 और 2006-07 की अवधि के बीच सुधार परिलक्षित हुआ।

9.42 निजी क्षेत्र के नए बैंकों और विदेशी बैंकों दोनों ही के मामले में कुल आय में अन्य आय का अंश सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों और निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों की तुलना में महत्त्वपूर्ण रूप से अधिक रहा। यह मुख्यतः सार्वजनिक क्षेत्र के तथा निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों की तुलना में विदेशी और निजी क्षेत्र के नये बैंकों के तुलनपत्रेतर एक्सपोज़रों के बड़े आकार के कारण हुआ (चार्ट IX.13)।

9.43 भारत में बैंकों की अन्य परिचालनगत आय का महत्त्व मुख्यतः गैर परम्परागत क्रियाकलापों में बैंकों के प्रवेश के कारण बढ़ गया। हालांकि,

**सारणी 9.12: चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों के निवल ब्याज मार्जिन**

(प्रतिशत)

| देश | 1999 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| यू एस ए | 2.81 | 3.28 | 3.32 | 1.94 | 2.80 | 2.54 | 2.27 | 1.94 |
| कनाडा | * | 2.12 | 2.24 | 2.47 | 2.36 | 2.19 | 1.95 | 1.76 |
| यू.के. | * | 1.30 | 1.33 | 1.42 | 0.86 | 1.36 | 1.15 | 1.06 |
| इटली | 2.35 | 2.33 | 2.50 | 2.24 | 2.14 | 2.25 | 1.65 | 2.03 |
| फ्रांस | 0.88 | 1.00 | 0.64 | 0.67 | 0.87 | 0.99 | 0.72 | 0.64 |
| जर्मनी | 1.13 | 1.08 | 1.18 | 1.20 | 1.13 | 1.02 | 0.94 | 0.96 |
| जापान | 1.44 | 1.30 | 1.43 | 1.32 | 1.30 | 1.24 | 1.23 | 1.25 |
| **उभरती अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| मैक्सिको | 5.59 | 6.73 | 6.37 | 5.42 | 5.07 | 5.71 | 7.17 | 7.66 |
| चिली | 4.65 | 4.48 | 4.61 | 4.97 | 3.33 | 4.12 | 4.21 | 4.13 |
| कोरिया | 2.11 | 2.20 | 2.13 | 2.53 | 2.84 | 2.96 | 3.00 | 2.72 |
| थाईलैंड | 0.92 | 1.72 | 1.93 | 2.11 | 2.29 | 2.77 | 3.08 | 3.30 |
| फिलीपीन्स | 4.24 | 5.49 | 3.85 | 4.77 | 4.93 | 3.65 | 4.08 | 3.91 |
| मलेशिया | * | 3.17 | 3.02 | 2.86 | 2.67 | 2.45 | 2.25 | 2.15 |
| इंडोनेशिया | -3.67 | 2.31 | 3.55 | 4.07 | 4.90 | 5.90 | 5.78 | 5.90 |
| ब्राज़ील | 9.19 | 7.83 | 7.92 | 9.02 | 9.52 | 8.56 | 8.69 | 8.37 |
| रूसी महासंघ | 6.18 | 5.72 | 5.98 | 5.05 | 4.85 | 5.07 | 5.04 | 5.10 |
| चीन | 2.23 | 2.10 | 2.12 | 2.30 | 2.33 | 2.35 | 2.22 | 2.30 |
| *मेमो:* | | | | | | | | |
| **श्रेणी** | **(-)3.67 - 9.19** | **1.00 - 7.83** | **0.64 - 7.92** | **0.67 - 9.02** | **0.86 - 9.52** | **0.99 - 8.56** | **0.72 - 8.69** | **0.64 - 8.37** |
| **भारत** | **2.92** | **3.14** | **2.95** | **3.13** | **3.30** | **3.29** | **3.22** | **3.00** |

*: आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं अथवा यदि उपलब्ध हैं तो उनके नमूने बहुत छोटे हैं और इसलिए उनके विश्लेषण पर विचार नहीं किया गया।

**स्रोत :** बैंक स्कोप।

## सारणी 9.13: भारत में वाणिज्य बैंकों की कुल आय में अन्य आय का अंश

(प्रतिशत)

| वर्ष | देशी बैंक | | | | | | समस्त देशी बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 12.31 | 9.73 | 10.74 | 9.62 | * | 9.62 | 10.69 | 22.72 | 11.82 |
| 1992-93 | 12.87 | 9.88 | 11.04 | 10.76 | * | 10.76 | 11.03 | 7.86 | 10.73 |
| 1993-94 | 14.44 | 11.88 | 12.83 | 12.88 | * | 12.88 | 12.84 | 18.20 | 13.34 |
| 1994-95 | 15.40 | 11.17 | 12.77 | 13.85 | * | 13.85 | 12.84 | 19.89 | 13.48 |
| 1995-96 | 16.79 | 10.85 | 13.13 | 14.10 | 16.02 | 14.46 | 13.25 | 18.31 | 13.72 |
| 1996-97 | 14.41 | 10.54 | 12.01 | 12.18 | 17.01 | 13.40 | 12.16 | 18.64 | 12.79 |
| 1997-98 | 14.72 | 11.60 | 12.75 | 14.66 | 21.09 | 16.59 | 13.21 | 21.98 | 14.08 |
| 1998-99 | 14.39 | 10.44 | 11.91 | 11.04 | 14.43 | 12.25 | 11.95 | 19.35 | 12.67 |
| 1999-2000 | 14.19 | 11.62 | 12.59 | 14.95 | 18.09 | 16.15 | 13.07 | 20.72 | 13.75 |
| 2000-01 | 13.60 | 11.16 | 12.09 | 11.43 | 14.13 | 12.65 | 12.17 | 20.93 | 12.96 |
| 2001-02 | 13.44 | 14.50 | 14.10 | 20.29 | 20.75 | 20.51 | 15.06 | 25.20 | 15.93 |
| 2002-03 | 16.37 | 16.68 | 16.56 | 20.93 | 23.96 | 22.88 | 17.81 | 25.43 | 18.34 |
| 2003-04# | 21.05 | 19.97 | 20.38 | 21.01 | 23.94 | 22.88 | 20.87 | 29.76 | 21.49 |
| 2004-05 | 17.71 | 16.17 | 16.74 | 12.39 | 23.11 | 19.51 | 17.25 | 29.65 | 18.10 |
| 2005-06 | 16.19 | 12.26 | 13.71 | 11.25 | 21.60 | 18.68 | 14.77 | 30.41 | 16.02 |
| 2006-07 | 12.16 | 10.47 | 11.04 | 12.10 | 19.58 | 17.86 | 12.73 | 27.80 | 14.09 |

* : निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त वर्ष से उपलब्ध हुए।

\# : वर्ष 2003-04 में कुल आय की तुलना में गैर-ब्याजगत आय का अनुपात तीव्र गति से बढ़ा, जब बैंकों ने अधिक ब्याज देने वाली सरकारी प्रतिभूतियों को बेचा और भारी मात्रा में व्यापारिक लाभ अर्जित किया।

**स्रोत :** भारत में बैंकों से सम्बन्धित सांख्यिकीय सारणी (भारिबैंक) से परिकलित।

यह विकसित विश्व में अमरीका, फ्रांस और कनाडा और उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में ब्राज़ील तथा रूस की तुलना में अब भी कम है (सारणी 9.14 और चार्ट IX.14)।

9.44 प्रथम दृष्ट्या, ऐसा लगता है कि कुल आय की तुलना में अन्य परिचालनगत आय के अंश का निर्धारण करने में आर्थिक विकास का स्तर निर्णायक कारक नहीं है। ब्राज़ील और रूसी महासंघ के बैंकों

**चार्ट IX.13: कुल आय की तुलना में अन्य परिचालनगत आय - 2006-07**

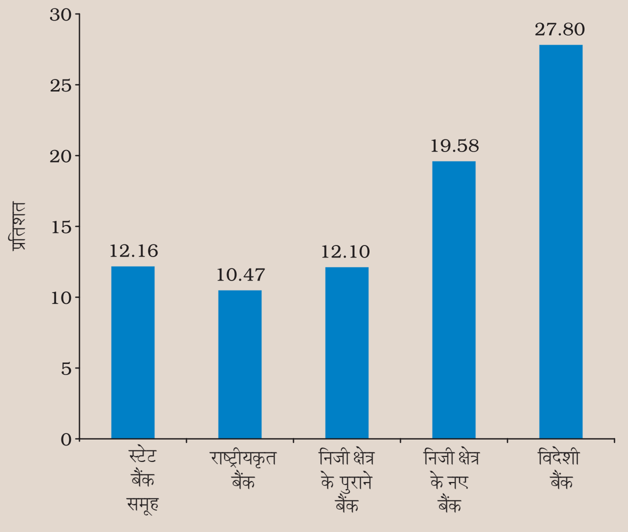


**चार्ट IX.14: चुनिंदा देशों में बैंकों की कुल आय की तुलना में अन्य आय का अनुपात - 2006**

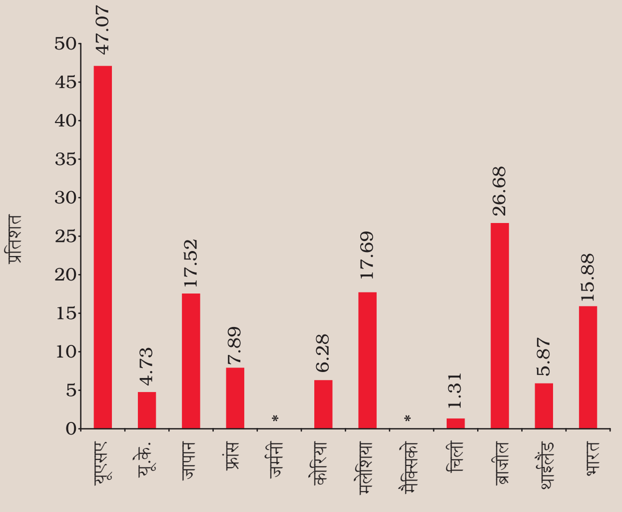


* : आकड़े उपलब्ध नहीं

## सारणी 9.14: चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की कुल आय की तुलना में अन्य परिचालनगत आय का अनुपात

(प्रतिशत)

| देश | 1999 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| यू एस ए | 15.22 | 15.81 | 15.09 | 45.11 | 38.74 | 42.84 | 43.16 | 47.07 |
| कनाडा | * | 55.80 | 53.64 | 48.89 | 28.26 | 24.64 | 24.70 | 24.39 |
| यू.के. | * | 43.29 | 40.48 | 33.89 | 7.49 | 2.40 | -0.10 | 4.73 |
| इटली | 6.51 | 4.92 | 7.77 | 10.47 | 13.10 | 5.31 | 5.85 | 5.30 |
| फ्रांस | 2.30 | 2.67 | 3.40 | 3.12 | 3.52 | 17.01 | 18.35 | 17.52 |
| जर्मनी | 13.25 | 11.86 | 10.42 | 13.19 | -3.34 | 8.94 | 10.92 | 7.89 |
| जापान | * | * | * | * | * | * | * | * |
| **उभरती अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| मैक्सिको | * | * | * | * | * | * | * | * |
| चिली | 1.89 | 1.44 | 1.32 | 1.21 | 1.91 | 2.39 | 4.07 | 1.31 |
| कोरिया | 23.14 | 18.18 | 16.64 | 5.39 | 3.84 | 5.04 | 6.56 | 6.28 |
| थाईलैंड | 27.43 | 8.79 | 9.84 | 8.78 | 8.74 | 6.35 | 5.81 | 5.87 |
| फिलीपीन्स | 9.92 | 6.44 | 13.29 | 10.47 | 11.71 | 13.71 | 10.15 | 12.29 |
| मलेशिया | * | 8.32 | 9.82 | 11.17 | 11.49 | 13.65 | 16.05 | 17.69 |
| ब्राज़ील | 32.36 | 26.38 | 29.71 | 25.62 | 19.25 | 26.68 | 25.19 | 26.68 |
| रूसी महासंघ | 30.61 | 23.35 | 21.15 | 20.26 | 23.76 | 15.54 | 22.79 | 34.88 |
| चीन | 5.59 | 3.94 | 3.16 | 3.58 | 4.44 | 5.27 | 5.13 | 3.90 |
| *मेमो :* | | | | | | | | |
| **श्रेणी** | **1.89-32.36** | **1.44-55.80** | **1.32-53.64** | **1.21-48.89** | **(-)3.34-38.74** | **2.39-42.84** | **(-)0.10-43.16** | **1.31-47.07** |
| **भारत** | **11.47** | **8.98** | **4.30** | **5.85** | **7.21** | **10.56** | **12.91** | **15.88** |

*: आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं अथवा यदि उपलब्ध हैं तो उनके नमूने बहुत छोटे हैं और इसलिए उनके विश्लेषण पर विचार नहीं किया गया।

**स्रोत :** बैंक स्कोप।

की आय का एक बड़ा हिस्सा कई एक उन्नत देशों की तुलना में अन्य स्रोतों से ही उद्भूत था (सारणी 9.14)। दूसरी ओर कुल आय की तुलना में परिचालनगत आय का अनुपात, जो यू. के. कोरिया और थाईलैंड में अधिक था, हाल के वर्षों में कम हो गया।

*प्रति कर्मचारी कारोबार*

9.45 अब तक प्रयुक्त विविध प्रकार के अनुपात कार्य-निष्पादन का मूल्यांकन कुल अर्जक आस्तियों के अनुपात के रूप में लागत अथवा प्रतिलाभ की दृष्टि से किया करते थे, जिससे श्रमिकों की उत्पादकता का प्रत्यक्ष रूप से पता नहीं चल पाता था। बैंक द्वारा प्रदत्त सेवाओं के मूल्य-निर्धारण जैसे विविध प्रकार के अन्य पहलुओं के प्रभाव से वंचित श्रमिक उत्पादकता की प्रवृत्ति को समझने के लिए मूल्यांकन कार्य प्रति कर्मचारी कारोबार और प्रति शाखा कारोबार जैसे अनुपातों का प्रयोग करते हुए भी किया जा सकता है। भारत में वाणिज्यिक बैंकों के प्रति कर्मचारी कारोबार (जमाराशियां जोड़ें ऋण) में ग्यारह गुने से भी अधिक वृद्धि हुई और वह 1991-92 के 46.66 लाख रुपये से बढ़कर 2006-07 में 521.94 रुपये तक पहुँच गया (सारणी 9.15)। प्रति कर्मचारी कारोबार में वृद्धि की यह प्रवृत्ति सभी बैंक समूहों में परिलक्षित हुई। प्रति कर्मचारी कारोबार में वृद्धि की यह प्रवृत्ति अन्य बैंक समूहों की तुलना में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों और निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों में 1990 वाले दशक के प्रारंभिक दिनों में उनके अत्यंत कम आधार के कारण अधिक मुखर रही। हालांकि, इस वृद्धि के बावजूद, इन बैंक समूहों की उत्पादकता अब भी विदेशी और निजी क्षेत्र के नए बैंकों की उत्पादकता के आधे से भी कम है। नए निजी क्षेत्र के नए बैंकों का प्रति कर्मचारी कारोबार प्रारंभ से ही अन्य बैंक समूहों की तुलना में महत्त्वपूर्ण रू प से अधिक था तथा उन्होंने अपनी यह अग्रणी स्थिति 2002-03 तक के उस समय तक बनाए रखी, जब विदेशी बैंकों का प्रति कर्मचारी कारोबार निजी क्षेत्र के नए बैंकों से अधिक हो गया। वर्ष 2006-07 के दौरान विदेशी बैंकों का प्रति कर्मचारी कारोबार सर्वाधिक था, उसके बाद निजी क्षेत्र के नए बैंकों, राष्ट्रीयकृत बैंकों, निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों और स्टेट बैंक समूह का स्थान था (चार्ट IX.15)।

9.46 ऐसा लगता है कि निजी क्षेत्र के नये बैंकों के प्रवेश से, आक्रामक विपणन रणनीतियों और संमिश्र उत्पादों की शुरुआत किए जाने के अलावा अत्यधिक प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण निर्मित करते हुए सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों को प्रति कर्मचारी कारोबार को विस्तारित करने की प्रेरणा प्राप्त हुई। गहन प्रतिस्पर्धा के फलस्वरूप बैंकिंग उत्पादों में विस्तार हुआ, बैंकिंग की बैंक रहित क्षेत्रों में पैठ बनी, कोर बैंकिंग सोल्यूशन जैसी प्रौद्योगिकी द्वारा सुयोग्य रूप से समर्थित आक्रामक विपणन रणनीतियों के माध्यम से कारोबार विस्तार संभव हुआ। अन्य बचत उत्पादों की अपेक्षाकृत कम पैठ के साथ ही अपेक्षाकृत अधिक आर्थिक वृद्धि और उच्चतर सकल देशी बचतों के

## सारणी 9.15: भारत में वाणिज्य बैंकों का प्रति कर्मचारी कारोबार

(प्रतिशत)

| वर्ष | देशी बैंक | | | | | | समस्त देशी बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 42.99 | 46.37 | 45.15 | 33.48 | * | 33.48 | 44.42 | 199.47 | 46.66 |
| 1992-93 | 47.28 | 48.24 | 47.91 | 43.49 | * | 43.49 | 47.65 | 233.66 | 50.32 |
| 1993-94 | 49.65 | 41.69 | 44.10 | 55.26 | * | 55.26 | 44.66 | 287.39 | 47.57 |
| 1994-95 | 56.58 | 60.10 | 58.87 | 73.68 | * | 73.68 | 59.72 | 326.96 | 63.40 |
| 1995-96 | 65.65 | 67.52 | 66.86 | 83.39 | 734.57 | 99.74 | 68.89 | 393.63 | 73.42 |
| 1996-97 | 72.51 | 76.86 | 75.30 | 102.24 | 794.18 | 129.76 | 78.72 | 448.24 | 84.09 |
| 1997-98 | 84.43 | 91.91 | 89.20 | 124.12 | 908.73 | 165.91 | 94.14 | 480.99 | 100.04 |
| 1998-99 | 102.45 | 107.67 | 105.78 | 138.78 | 793.78 | 193.95 | 111.57 | 504.81 | 117.72 |
| 1999-2000 | 122.11 | 126.18 | 124.71 | 169.53 | 976.01 | 255.23 | 133.93 | 627.00 | 140.92 |
| 2000-01 | 158.83 | 160.18 | 159.69 | 196.62 | 758.99 | 296.39 | 170.58 | 720.19 | 179.43 |
| 2001-02# | 181.54 | 197.59 | 191.57 | 218.10 | 651.21 | 333.86 | 204.10 | 773.40 | 213.97 |
| 2002-03 | 205.09 | 221.05 | 215.09 | 266.19 | 834.88 | 445.68 | 236.45 | 909.68 | 247.02 |
| 2003-04 | 232.90 | 255.74 | 247.22 | 316.86 | 898.08 | 527.85 | 275.17 | 952.50 | 286.90 |
| 2004-05 | 284.04 | 318.92 | 305.96 | 362.03 | 870.97 | 578.65 | 335.98 | 966.11 | 348.27 |
| 2005-06 | 337.79 | 383.07 | 366.61 | 419.53 | 904.30 | 670.67 | 405.91 | 955.41 | 419.77 |
| 2006-07 | 435.52 | 490.21 | 470.99 | 486.02 | 818.02 | 694.07 | 506.77 | 995.09 | 521.94 |

*: निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त हुए वर्ष से उपलब्ध हुए।
#: बैंक विलयन के आंकड़े समायोजित किए गए हैं।
**स्रोत:** भारत में बैंकों से सम्बन्धित सांख्यिकीय सारणी (भा.रि.बैंक) से परिकलित।

भी परिणामस्वरूप जमाराशियों और ऋणों में वृद्धि हुई। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को 2000 वाले दशक के प्रारंभिक दिनों में लागू की गई स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना के जरिए कार्यबल को युक्तियुक्त बनाने और उन परंपराओं के लागू किए जाने, जिनके द्वारा कुछ नैमित्तिक कार्यों की आउटसोर्सिंग किए जाने की शुरुआत हुई, का भी लाभ प्राप्त हुआ। बैंकों ने जनशक्ति प्रधान बैंकिंग की अपेक्षा उन्नत प्रौद्योगिकियों के अनुरूप मानवीय पूंजी प्रधान प्रक्रियाओं के माध्यम से बैंकिग सेवाएं सृजित करने पर ध्यान केन्द्रित किया । विदेशी बैंकों के मामले में भी यह वृद्धि देखी जा सकती थी, किन्तु वह उतनी तीव्र नहीं थी, जितनी कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के मामले में थी । निजी क्षेत्र के नए बैंकों और विदेशी बैंकों, दोनों ही के प्रति कर्मचारी कारोबार में वृद्धि पिछले दो वर्षों के दौरान कम हो गई, जबकि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में उसके बढ़ने का क्रम जारी रहा।

**चार्ट IX.15: प्रति कर्मचारी कारोबार - 2006-07**

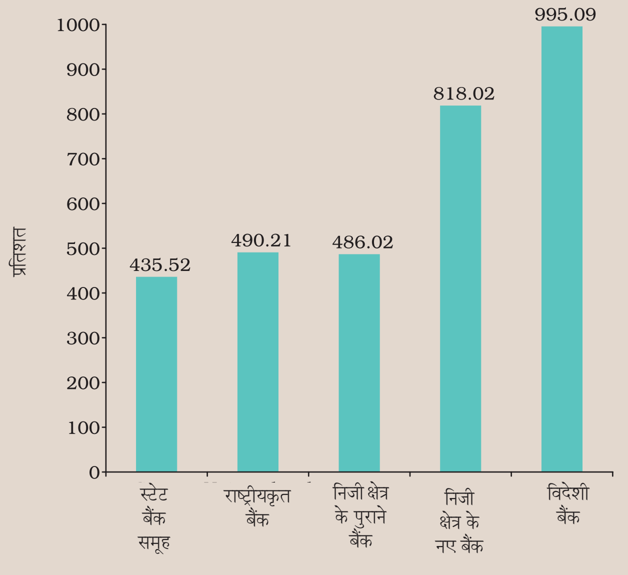


9.47 हालांकि, प्रति इकाई श्रम लागत की दृष्टि से कारोबार के मामले में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की स्थिति, निजी क्षेत्र के नये बैंकों को छोड़कर अन्य बैंक समूहों के साथ अनुकूल रूप से तुलनीय थी (सारणी 9.16)। 1996-97 और 2006-07 के बीच वाली अवधि में निजी क्षेत्र के नये बैंकों और विदेशी बैंकों दोनों ही के मामले में संभवतया इन बैंकों में श्रम लागतों में हुई तीव्र वृद्धि के कारण यह अनुपात कम हो गया, जबकि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के मामले में इस अनुपात में मुख्यतः कम मज़दूरी वाले उत्पादक श्रमिकों के कारण स्थिर वृद्धि परिलक्षित हुई। निजी क्षेत्र के नए बैंक अन्य सभी बैंक समूहों से काफी अधिक आगे थे। वर्ष 2006-07 के दौरान प्रति इकाई श्रम लागत कारोबार निजी क्षेत्र के नए बैंकों के मामले में सर्वाधिक था, उनके बाद राष्ट्रीयकृत बैंकों, निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों, स्टेट बैंक समूह और विदेशी बैंकों का स्थान था।

## सारणी 9.16: भारत में वाणिज्य बैंकों का प्रति इकाई श्रम लागत कारोबार

(प्रतिशत)

| वर्ष | देशी बैंक | | | | | | समस्त देशी बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 64.50 | 72.85 | 69.74 | 62.26 | * | 62.26 | 69.35 | 141.27 | 71.60 |
| 1992-93 | 60.99 | 71.31 | 67.37 | 69.01 | * | 69.01 | 67.45 | 149.62 | 70.01 |
| 1993-94 | 60.90 | 69.41 | 66.26 | 79.01 | * | 79.01 | 66.93 | 133.01 | 69.43 |
| 1994-95 | 53.04 | 66.74 | 61.41 | 83.79 | * | 83.79 | 62.60 | 128.84 | 64.96 |
| 1995-96 | 47.90 | 57.41 | 53.73 | 75.91 | 438.90 | 89.62 | 55.72 | 114.77 | 57.95 |
| 1996-97 | 53.02 | 60.29 | 57.57 | 86.87 | 452.83 | 108.14 | 60.49 | 107.19 | 62.60 |
| 1997-98 | 58.00 | 65.44 | 62.68 | 94.40 | 435.09 | 122.35 | 66.35 | 115.95 | 68.50 |
| 1998-99 | 59.66 | 64.89 | 62.95 | 91.73 | 396.06 | 124.98 | 66.73 | 101.14 | 68.29 |
| 1999-2000 | 65.02 | 67.47 | 66.58 | 93.10 | 421.85 | 136.24 | 71.50 | 99.73 | 72.81 |
| 2000-01 | 59.05 | 61.74 | 60.74 | 107.68 | 373.74 | 159.15 | 66.43 | 104.41 | 68.02 |
| 2001-02 | 76.28 | 75.81 | 75.98 | 104.16 | 271.37 | 148.20 | 81.70 | 101.71 | 82.70 |
| 2002-03 | 78.24 | 80.27 | 79.54 | 108.57 | 252.48 | 163.76 | 87.39 | 119.73 | 88.77 |
| 2003-04 | 78.26 | 84.68 | 82.31 | 115.79 | 241.71 | 170.72 | 91.35 | 118.23 | 92.56 |
| 2004-05 | 87.41 | 93.02 | 91.01 | 125.53 | 243.76 | 182.12 | 100.54 | 118.49 | 101.37 |
| 2005-06 | 85.71 | 108.58 | 99.67 | 119.68 | 234.47 | 181.88 | 110.32 | 105.38 | 110.02 |
| 2006-07 | 106.58 | 133.76 | 123.52 | 133.67 | 210.90 | 183.23 | 133.05 | 89.94 | 129.37 |

* निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त हुए वर्ष से उपलब्ध हुए।

**स्रोत:** भारत में बैंकों से सम्बन्धित सांख्यिकीय सारणी (भा.रि.बैंक) से परिकलित।

*प्रति शाखा कारोबार*

9.48 प्रति कर्मचारी कारोबार की भांति ही निरंतर रूप से वृद्धि हुई। 1990 वाले दशक के प्रारंभिक दिनों से बैंकिंग उद्योग के मामले में और सभी बैंक समूहों के मामले भी प्रति शाखा कारोबार में लगातार वृद्धि हुई। इसका कारण नए कारोबार का विस्तार, कुछ बैंकों द्वारा शाखाओं का युक्तियुक्तकरण तथा एटीएमों में साझेदारी जैसी नयी कारोबार रणनीतियों का प्रचलन हो सकता है ताकि लागतों में किफायत की जा सके और प्रौद्योगिकी से लाभ उठाया जा सके। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के मामले में प्रति शाखा कारोबार में बढ़ोत्तरी उतनी तीव्र नहीं थी, जितनी कि वह प्रति कर्मचारी कारोबार के मामले में थी, जिसमें हुई वृद्धि कुछ हद तक सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा लागू की गई स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजनाओं के कारण थी। विदेशी और निजी क्षेत्र के नये बैंकों का प्रति शाखा कारोबार, जो पहले से ही अधिक था, सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों की तुलना में अपेक्षाकृत तीव्र गति से बढ़ा। इसके कारण विविध बैंक समूहों के बीच समानुपातिक उत्पादकता स्तरों में प्रतिशाखा कारोबार से मापा गया अंतर और बढ़ गया।

9.49 वर्ष 2006-07 के दौरान विदेशी बैंकों का प्रति शाखा कारोबार निजी क्षेत्र के नये बैंकों की तुलना में लगभग 3.5 गुना और स्टेट बैंक समूह तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों की तुलना में लगभग 15 गुना था (सारणी 9.17, चार्ट IX.16)। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के अपेक्षाकृत कम प्रति शाखा कारोबार का कारण ग्रामीण शाखाओं की बड़ी मात्रा हो सकता है, जहाँ लेन-देन का आकार बहुत छोटा होता है। दूसरी ओर विदेशी और देशी निजी क्षेत्र के नये बैंक व्यापक तौर पर शहरी क्षेत्रों में परिचालन करते हैं तथा ऊंची निवल हैसियत वाले व्यक्तियों और बड़ी कम्पनियों के खातों का प्रबंधन करते हैं। यह प्रति शहरी/महानगरीय शाखा कारोबार के आकार से भी स्पष्ट हो जाता है, जो सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की तुलना में विदेशी बैंकों और निजी क्षेत्र के बैंकों के मामले में महत्त्वपूर्ण था (सारणी 9.18)।

*आस्तियों पर प्रतिलाभः*

9.50 आस्तियों पर प्रतिलाभ (आओए) इस बात का संकेत देता है कि कोई व्यावसायिक इकाई (वर्तमान मामले में बैंक) उसकी आस्तियों की प्रति इकाई से कितना लाभ सृजित कर सकती है। इस अनुपात का अपेक्षाकृत अधिक होना अपेक्षाकृत अधिक लाभप्रदता और इसलिए उत्पादकता का संकेतक होता है। बासेल II मानदंडों के अनुसार, आस्ति पर प्रतिलाभ (आरओए) एक प्रतिशत से अधिक होना चाहिए (घोष, सी.आर. और अन्य; 2004)।

9.51 भारत में बैंकिंग प्रणाली में बढ़ी हुई प्रतिस्पर्धा के बावजूद, आस्तियों पर प्रतिलाभ में महत्त्वपूर्ण रू प से बढ़ोत्तरी हुई और वह 1991-92 के 0.39 प्रतिशत से बढ़कर 2003-04 में 1.13 प्रतिशत हो गया, यद्यपि उसके बाद वाले तीन वर्षों में यह 0.90 प्रतिशत पर स्थिर होने से पहले उसमें कुछ उतार-चढ़ाव हुए हैं (सारणी 9.19)। लाभप्रदता अनुपात में हुई यह महत्त्वपूर्ण बढ़ोत्तरी उस समय और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है, जब बैंक की मध्यस्थता लागत में उसी अवधि में गिरावट आई हो।

## सारणी 9.17: भारत में वाणिज्य बैंकों का प्रति शाखा कारोबार

(प्रतिशत)

| वर्ष | देशी बैंक | | | | | | समस्त देशी बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 10.53 | 8.27 | 8.93 | 4.87 | * | 4.87 | 8.59 | 149.96 | 9.12 |
| 1992-93 | 11.52 | 9.03 | 9.76 | 6.01 | * | 6.01 | 9.45 | 179.39 | 10.08 |
| 1993-94 | 12.09 | 9.72 | 10.42 | 7.46 | * | 7.46 | 10.16 | 208.37 | 10.92 |
| 1994-95 | 13.84 | 11.34 | 12.08 | 9.86 | * | 9.86 | 11.88 | 160.22 | 12.72 |
| 1995-96 | 16.15 | 12.89 | 13.86 | 11.44 | 35.85 | 13.09 | 13.79 | 278.06 | 14.84 |
| 1996-97 | 17.91 | 14.29 | 15.36 | 13.86 | 45.57 | 16.69 | 15.49 | 312.23 | 16.72 |
| 1997-98 | 20.85 | 16.72 | 17.94 | 16.62 | 55.00 | 20.87 | 18.23 | 334.71 | 19.59 |
| 1998-99 | 24.92 | 19.23 | 20.90 | 19.04 | 66.34 | 25.24 | 21.32 | 349.04 | 22.75 |
| 1999-2000 | 29.03 | 22.12 | 24.15 | 22.35 | 95.61 | 32.46 | 25.01 | 389.20 | 26.58 |
| 2000-01 | 34.64 | 25.32 | 28.06 | 25.96 | 111.12 | 39.82 | 29.26 | 423.81 | 31.13 |
| 2001-02# | 38.47 | 28.93 | 31.73 | 27.35 | 133.27 | 46.71 | 31.73 | 461.81 | 35.32 |
| 2002-03 | 43.08 | 32.05 | 35.27 | 33.88 | 182.42 | 65.33 | 38.35 | 672.42 | 40.56 |
| 2003-04 | 48.23 | 36.45 | 39.87 | 38.79 | 201.82 | 77.41 | 43.94 | 712.28 | 46.45 |
| 2004-05 | 58.05 | 44.53 | 48.42 | 43.11 | 220.23 | 88.92 | 53.00 | 759.19 | 55.81 |
| 2005-06 | 64.39 | 50.94 | 54.78 | 45.87 | 271.19 | 109.31 | 61.31 | 803.45 | 64.74 |
| 2006-07 | 77.14 | 62.78 | 66.83 | 52.31 | 293.96 | 133.16 | 75.04 | 1004.10 | 79.39 |

* : निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त हुए वर्ष से उपलब्ध हुए।
\# : बैंक विलयन के आंकड़े समायोजित किए गए हैं।
**स्रोत :** भारत में बैंकों से सम्बन्धित सांख्यिकीय सारणियों (भा.रि.बैंक) से परिकलित।

9.52 बैंक समूहों में स्टेट बैंक समूह और राष्ट्रीयकृत बैंकों के मामले में इस अनुपात में महत्त्वपूर्ण रूप से सुधार हुआ। राष्ट्रीयकृत बैंकों का अनुपात सुधारों के प्रारंभिक वर्षों में विवेकसम्मत मानदंडों को लागू किए जाने के बाद ऋणात्मक हो गया था, जिनसे भारी मात्रा में अनर्जक आस्तियों तथा बैंकों द्वारा अपेक्षित भारी प्रावधानीकरण की आवश्यकता का पता चलता है, जिसके परिणामस्वरूप कुछ बैंकों को निवल हानियां उठानी पड़ीं। 1991-92 के 3 बैंकों के मुकाबले 1992-93 में 13 बैंकों ने हानि वहन करने की रिपोर्ट दर्ज की। सभी बैंकों के आस्ति पर प्रतिलाभ में 1990 वाले दशक में भारी उतार-चढ़ाव हुए। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का आस्ति पर प्रतिलाभ (आरओए) 1997-98 के दौरान अनर्जक आस्तियों में गिरावट के कारण अपेक्षाकृत कम प्रावधान किए जाने के कारण कुल आस्तियों की तुलना में निवल लाभ में वृद्धि के कारण महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ गया। दूसरी ओर, नए निजी बैंकों के अनुपात में वर्ष के दौरान उनके निवेश संविभाग के बाज़ार मूल्य को बही में अंकित किए जाने पर हुई हानियों के लिए अपेक्षाकृत अधिक प्रावधान किए जाने के कारण गिरावट आ गई। हालांकि, निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों के आस्ति पर प्रतिलाभ में 1990 वाले दशक के अंतिम तीन वर्षों के दौरान तीव्र गिरावट आई। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों और निजी क्षेत्र के बैंकों का आस्ति पर प्रतिलाभ प्रायः अभिसरित हो गया, जबकि विदेशी बैंकों का आस्ति पर प्रतिलाभ निरंतर अधिक बना हुआ है, जिससे तुलनपत्र में शामिल न की जाने वाली मदों के कारोबार से हुए लाभ का पता चलता है (चार्ट IX.17)।

**चार्ट IX.16: विविध बैंक समूहों का प्रति शाखा कारोबार - 2006-07**

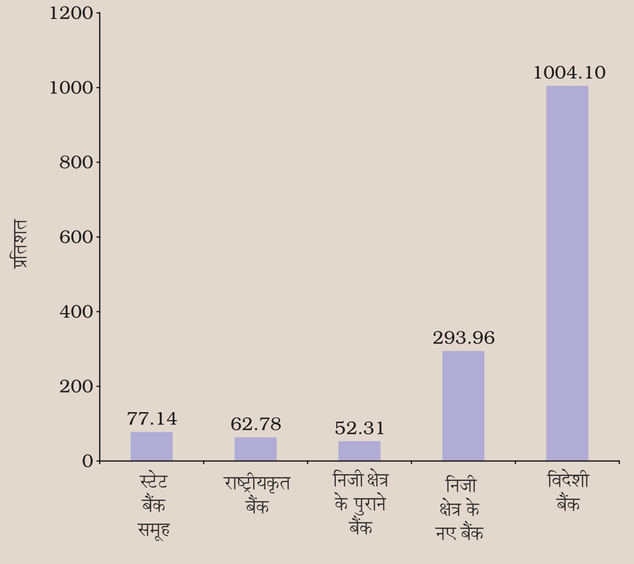


9.53 सम्पूर्ण विश्व में फैले बैंकों के आस्ति पर प्रतिलाभ में महत्त्वपूर्ण रूप से भिन्नता मौजूद है। हालांकि अत्यधिक उन्नत देशों और कुछ उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में यह अनुपात एक से कम था। ब्राज़ील और रूस

### सारणी 9.18: भारत में वाणिज्य बैंकों की प्रति शहरी/ महानगरीय शाखा कारोबार[4]

(करोड़ रुपयों में)

| वर्ष | देशी बैंक | | | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | निजी बैंक | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 |
| 1991-92 | 22.23 | 15.26 | 7.48 | 225.43 | 18.06 |
| 1992-93 | 26.79 | 17.44 | 8.84 | 245.52 | 20.85 |
| 1993-94 | 28.79 | 19.40 | 12.57 | 267.57 | 23.14 |
| 1994-95 | 32.86 | 22.82 | 20.45 | 322.15 | 27.64 |
| 1995-96 | 36.53 | 24.05 | 24.96 | 359.54 | 30.02 |
| 1996-97 | 36.26 | 25.82 | 31.51 | 373.72 | 32.19 |
| 1997-98 | 41.07 | 30.19 | 37.22 | 408.11 | 37.20 |
| 1998-99 | 47.99 | 34.89 | 44.58 | 428.64 | 42.72 |
| 1999-00 | 56.42 | 39.91 | 57.61 | 501.18 | 49.88 |
| 2000-01 | 65.39 | 45.64 | 66.14 | 541.85 | 57.22 |
| 2001-02 | 73.79 | 52.03 | 93.77 | 580.69 | 67.23 |
| 2002-03 | 77.47 | 59.40 | 119.27 | 588.71 | 76.81 |
| 2003-04 | 92.61 | 68.44 | 141.04 | 689.86 | 90.23 |
| 2004-05 | 110.33 | 83.07 | 151.11 | 701.24 | 106.06 |
| 2005-06 | 128.31 | 97.29 | 180.08 | 896.41 | 125.54 |
| 2006-07 | 154.95 | 116.51 | 218.43 | 1094.53 | 151.39 |

**स्रोत :** मूल सांख्यिकी विवरणी 7।

के बैंकों ने संभवतः कम प्रतिस्पर्धा के कारण इन बैंकों के स्प्रेड औसत से अधिक होने के कारण आस्ति पर प्रतिलाभ का अपेक्षाकृत उच्च स्तर दर्शाया (सारणी 9.20 और चार्ट IX.18)।

**चार्ट IX.17: विविध बैंक समूहों की आस्तियों पर प्रतिलाभ - 2006-07**

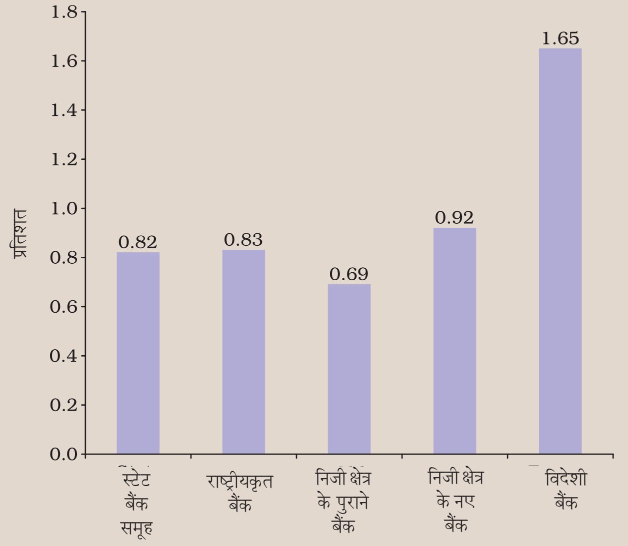


*इक्विटी पर प्रतिलाभ*

9.54 इसके पूर्व यथाविश्लेषित आस्ति की तुलना में प्रतिलाभ अनुपात कुछ विदेशी बैंकों के मामले में ऊर्ध्वमुखी प्रवृत्ति दर्शा सकता है, क्योंकि वे तुलनपत्र में शामिल न की जाने वाली मदों में एक्सपोजरों से भारी लाभ

### सारणी 9.19 : भारत में वाणिज्य बैंकों की आस्तियों पर प्रतिलाभ

(प्रतिशत)

| वर्ष | देशी बैंक | | | | | | समस्त देशी बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 0.21 | 0.33 | 0.28 | 0.57 | * | 0.57 | 0.30 | 1.56 | 0.39 |
| 1992-93 | 0.22 | -1.71 | -0.99 | 0.34 | * | 0.34 | -0.92 | -2.70 | -1.07 |
| 1993-94 | 0.25 | -1.98 | -1.15 | 0.58 | * | 0.58 | -1.05 | 1.72 | -0.84 |
| 1994-95 | 0.54 | 0.10 | 0.25 | 1.16 | * | 1.16 | 0.31 | 1.87 | 0.43 |
| 1995-96 | 0.42 | -0.36 | -0.07 | 1.03 | 1.89 | 1.20 | 0.03 | 1.59 | 0.15 |
| 1996-97 | 0.82 | 0.41 | 0.56 | 0.93 | 1.84 | 1.15 | 0.62 | 1.20 | 0.66 |
| 1997-98 | 1.04 | 0.62 | 0.77 | 0.80 | 1.60 | 1.04 | 0.80 | 0.97 | 0.81 |
| 1998-99 | 0.51 | 0.37 | 0.42 | 0.46 | 1.05 | 0.67 | 0.45 | 1.01 | 0.50 |
| 1999-2000 | 0.80 | 0.44 | 0.57 | 0.84 | 0.97 | 0.90 | 0.62 | 1.24 | 0.66 |
| 2000-01 | 0.55 | 0.33 | 0.42 | 0.62 | 0.81 | 0.71 | 0.46 | 1.00 | 0.50 |
| 2001-02 | 0.77 | 0.69 | 0.72 | 1.08 | 0.44 | 0.66 | 0.71 | 1.35 | 0.76 |
| 2002-03 | 0.91 | 0.98 | 0.96 | 1.17 | 0.88 | 0.99 | 0.96 | 1.59 | 1.00 |
| 2003-04 | 1.02 | 1.19 | 1.12 | 1.16 | 0.84 | 0.95 | 1.09 | 1.64 | 1.13 |
| 2004-05 | 0.91 | 0.85 | 0.87 | 0.19 | 1.13 | 0.83 | 0.86 | 1.29 | 0.89 |
| 2005-06 | 0.86 | 0.80 | 0.82 | 0.54 | 1.00 | 0.87 | 0.83 | 1.54 | 0.88 |
| 2006-07 | 0.82 | 0.83 | 0.83 | 0.69 | 0.92 | 0.87 | 0.84 | 1.65 | 0.90 |

*: निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त हुए वर्ष से उपलब्ध हुए।
**स्रोत:** भारत में बैंकों से सम्बन्धित सांख्यिकीय सारणियों (भा.रि.बैंक) से परिकलित।

4 शहरी समूह में ऐसे केन्द्र शामिल हैं जिनकी जनसंख्या 1 लाख और अधिक है किन्तु 10 लाख से कम है। महानगरीय समूह में ऐसे केन्द्र शामिल हैं जिनकी जनसंख्या 10 लाख और उससे अधिक है।

## सारणी 9.20: चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की आस्तियों पर प्रतिलाभ

(प्रतिशत)

| देश | 1999 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| यू एस ए | 0.84 | 0.97 | 0.87 | 0.77 | 1.33 | 1.72 | 1.26 | 0.99 |
| कनाडा | * | 0.72 | 0.68 | 0.52 | 0.75 | 0.85 | 0.71 | 0.95 |
| यू.के. | * | 0.90 | 0.68 | 0.65 | 0.37 | 0.63 | 0.54 | 0.53 |
| इटली | 0.68 | 0.55 | 0.13 | 0.05 | 0.35 | 0.66 | 0.60 | 0.74 |
| फ्रांस | 0.28 | 0.43 | 0.11 | 0.13 | 0.20 | 0.54 | 0.48 | 0.54 |
| जर्मनी | 0.23 | 0.68 | -0.19 | -0.36 | -0.26 | 0.09 | 0.33 | 0.48 |
| जापान | 0.13 | -0.04 | -0.64 | -0.64 | -0.12 | 0.13 | 0.56 | 0.50 |
| **उभरती अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| मैक्सिको | 1.42 | 1.12 | 0.90 | 0.53 | 1.50 | 1.09 | 2.14 | 2.53 |
| चिली | 0.82 | 1.07 | 1.32 | 1.13 | 1.32 | 1.30 | 1.35 | 1.38 |
| कोरिया | -1.21 | -0.39 | 0.70 | 0.51 | 0.02 | 0.80 | 1.14 | 0.98 |
| थाईलैंड | -5.72 | 0.07 | 1.47 | 0.23 | 0.69 | 1.24 | 1.31 | 0.68 |
| फिलीपीन्स | 0.39 | 0.71 | 0.54 | 1.25 | 1.61 | 1.10 | 1.25 | 1.22 |
| मलेशिया | * | 1.18 | 0.68 | 1.03 | 1.10 | 1.03 | 1.02 | 0.99 |
| इंडोनेशिया | -9.42 | 0.44 | 0.86 | 1.30 | 1.66 | 2.32 | 1.52 | 1.56 |
| ब्राज़ील | 1.62 | 0.65 | 1.02 | 2.32 | 1.90 | 1.76 | 2.04 | 1.85 |
| रूसी महासंघ | 2.00 | 3.69 | 2.07 | 1.83 | 2.35 | 2.19 | 2.60 | 2.33 |
| चीन | 0.17 | 0.17 | 0.21 | 0.30 | 0.49 | 0.57 | 0.55 | 0.62 |
| *मेमो:* | | | | | | | | |
| **श्रेणी** | **(-)9.42 - 2.00** | **(-)0.39 - 3.69** | **(-)0.64 - 2.07** | **(-)0.64 - 2.32** | **(-)0.26 - 2.35** | **0.09 - 2.32** | **0.33 - 2.60** | **0.48 - 2.53** |
| **भारत** | **0.83** | **0.54** | **0.72** | **0.98** | **1.20** | **0.91** | **0.90** | **0.85** |

*: आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं अथवा यदि उपलब्ध हैं तो उनके नमूने बहुत छोटे हैं और इसलिए उनके विश्लेषण पर विचार नहीं किया गया।
**स्रोत :** बैंक स्कोप।

कमा सकते हैं। अत: कुल इक्विटी पूंजी की तुलना में कर पश्चात निवल लाभ के रूप में परिभाषित इक्विटी पर प्रतिलाभ का उपयोग लाभप्रदता की एक वैकल्पिक माप के रूप में किया जाता है। हालांकि, इस उपाय के

**चार्ट IX.18: चुनिंदा देशों में बैंकों की आस्तियों पर प्रतिलाभ - 2006**

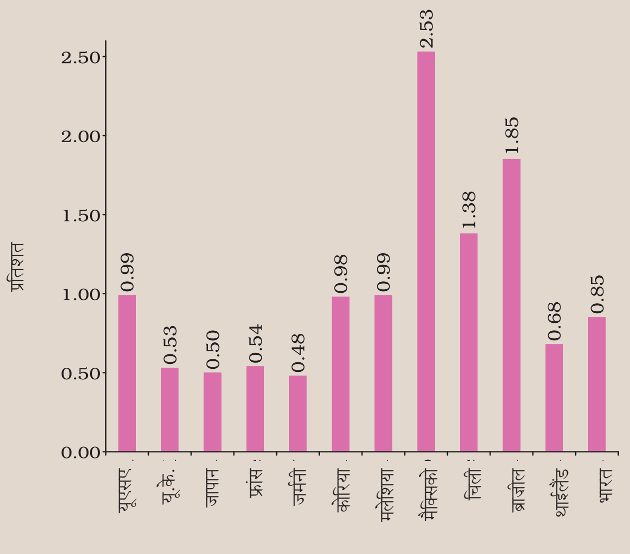


फलस्वरूप होने वाली हानि यह होती है कि उनकी आस्ति का आकार समान होने पर भी विभिन्न बैंकों की इक्विटी में महत्त्वपूर्ण रूप से भिन्नता हो सकती है। हालांकि, विविध प्रकार के देशी बैंक समूहों को इस समस्या का सामना नहीं करना पड़ता, क्योंकि उनकी इक्विटी का स्तर (उनकी जोखिम-भारित आस्तियों के प्रतिशत के रूप में) महत्त्वपूर्ण रूप से भिन्न नहीं होता। इक्विटी पर प्रतिलाभ किसी व्यावसायिक इकाई द्वारा उसके इक्विटी निवेशकर्ताओं के लिए सृजित लाभ को दर्शाता है। इस अनुपात का व्यापक तौर पर उपयोग इक्विटी निवेशकों द्वारा उनके निर्णयन में किया जाता है। उक्त अनुपात का अपेक्षाकृत अधिक मूल्य अपेक्षाकृत अधिक लाभप्रदता, और इसलिए, उत्पादकता दर्शाता है।

9.55 भारतीय बैंकों के मामले में इक्विटी पर प्रतिलाभ में आस्ति पर प्रतिलाभ जैसी ही प्रवृत्ति दिखाई पड़ी। सभी वाणिज्यिक बैंकों के इक्विटी पर प्रतिलाभ में 1991-92 से लेकर 2006-07 तक की अवधि में उनकी लाभप्रदता और भारत में प्रचलित पूंजी की स्थिति के अनुरूप व्यापक रूप से उतार-चढ़ाव हुए हालांकि, आस्ति पर प्रतिलाभ के ठीक विपरीत सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का इक्विटी पर प्रतिलाभ विदेशी बैंकों के साथ भी तुलनीय था। वास्तव में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों, निजी क्षेत्र के नए बैंकों और विदेशी बैंकों का इक्विटी पर प्रतिलाभ 2006-07 में लगभग 14-15 प्रतिशत के स्तर पर अभिसरित रहा, जबकि निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों का प्रतिलाभ कुछ हद तक पिछड़ गया (सारणी 9.21 और चार्ट IX.19)। वर्ष 2000-01 के दौरान

## सारणी 9.21 : भारत में वाणिज्य बैंकों की इक्विटी पर प्रतिलाभ

(प्रतिशत)

| वर्ष | देशी बैंक | | | | | | | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | समस्त देशी बैंक | | |
| | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के समस्त बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 |
| 1991-92 | 12.72 | 10.45 | 11.02 | 26.77 | * | 26.77 | 11.62 | 42.26 | 14.77 |
| 1992-93 | 12.55 | -52.44 | -36.41 | 13.62 | * | 13.62 | -34.04 | -47.00 | -36.10 |
| 1993-94 | 7.44 | -33.14 | -22.91 | 19.04 | * | 19.04 | -21.44 | 24.44 | -16.55 |
| 1994-95 | 15.23 | 1.31 | 4.28 | 29.76 | * | 29.76 | 5.41 | 19.73 | 7.07 |
| 1995-96 | 11.21 | -5.46 | -1.31 | 18.09 | 13.01 | 16.12 | 0.55 | 15.23 | 2.53 |
| 1996-97 | 17.02 | 6.16 | 9.37 | 15.51 | 19.50 | 16.88 | 10.17 | 10.73 | 10.25 |
| 1997-98 | 20.04 | 8.93 | 12.21 | 13.88 | 19.15 | 15.88 | 12.62 | 8.58 | 12.07 |
| 1998-99 | 11.10 | 6.26 | 7.78 | 8.41 | 16.66 | 11.70 | 8.24 | 10.96 | 8.59 |
| 1999-2000 | 17.25 | 7.98 | 11.10 | 15.19 | 14.23 | 14.73 | 11.66 | 12.97 | 11.83 |
| 2000-01 | 12.77 | 6.44 | 8.65 | 11.49 | 14.79 | 13.09 | 9.32 | 11.53 | 9.61 |
| 2001-02 | 17.20 | 12.98 | 14.45 | 18.56 | 7.19 | 10.99 | 13.69 | 14.61 | 13.81 |
| 2002-03 | 19.50 | 18.34 | 18.75 | 19.56 | 13.93 | 15.86 | 18.12 | 14.15 | 17.59 |
| 2003-04 | 20.25 | 21.22 | 20.88 | 19.26 | 13.52 | 15.46 | 19.68 | 15.30 | 19.13 |
| 2004-05 | 17.32 | 14.55 | 15.46 | 3.18 | 14.66 | 11.50 | 14.53 | 10.51 | 14.02 |
| 2005-06 | 15.82 | 13.68 | 14.38 | 8.13 | 12.39 | 11.38 | 13.55 | 12.62 | 13.43 |
| 2006-07 | 15.30 | 14.65 | 14.86 | 10.32 | 13.57 | 12.81 | 14.30 | 13.86 | 14.24 |

*** :** निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त वर्ष से प्राप्त हुए।

**स्रोत :** भारत में बैंकों से सम्बन्धित सांख्यिकीय सारणियों (भा.रि.बैंक) से परिकलित।

निजी क्षेत्र के नए बैंकों को छोड़कर सभी बैंक समूहों में निवल लाभों में कमी हो जाने के कारण इक्विटी पर प्रतिलाभ भारी मात्रा में कम हो गया। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के मामले में यह कमी विशेष रूप से अन्य बातों के साथ-साथ उक्त अवधि के दौरान स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति से सम्बन्धित भुगतानों के कारण निर्मित भारी मज़दूरी बिलों के कारण आई।

9.56 विभिन्न देशों के बैंकों के 1999 से लेकर 2006 तक के बीच की अवधि की इक्विटी पर प्रतिलाभ व्यापक रूप से भिन्न-भिन्न हैं । वर्ष 2006 के दौरान हुए अनुपात में 8.10 (थाईलैंड) और 19.21 (मैक्सिको) के बीच अंतर रहा। भारतीय बैंकों का इक्विटी पर प्रतिलाभ (आरओई) अमरीका, इटली, जर्मनी और कोरिया तथा इंडोनेशिया जैसी कुछ उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के बैंकों के साथ तुलनीय था। ब्राज़ील और रूस में इक्विटी पर प्रतिलाभ कई एक अन्य देशों की तुलना में काफी अधिक थे, जिससे, जैसा कि इसके पहले उल्लेख किया गया है, इन देशों के बैंकों द्वारा प्राप्त किए गए उच्च स्तर के स्प्रेडों का पता चलता है (सारणी 9.22 और चार्ट IX.20)।

**चार्ट IX.19: विविध बैंक समूहों की इक्विटी पर प्रतिलाभ - 2006-07**

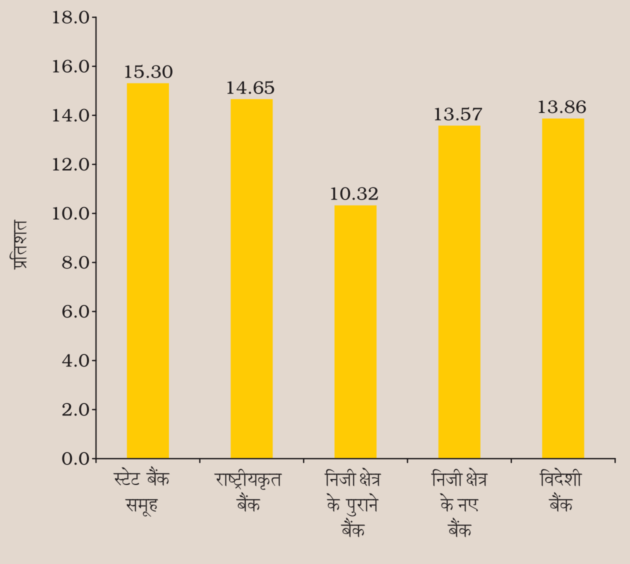


9.57 संक्षेप में विविध प्रकार के लेखांकन मापों के विश्लेषण से सुधारोत्तर अवधि में भारतीय बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता/उत्पादकता में हुए महत्त्वपूर्ण सुधार का पता चलता है, यद्यपि विविध बैंक समूहों में आए इस सुधार के स्तर भिन्न-भिन्न थे। विशेषतः सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के कार्य-निष्पादन में सुधार के प्रारंभिक वर्षों में गिरावट आ गई थी, क्योंकि 8 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को 1992-93 में तथा 6 बैंकों को 1993-94 में निवल हानि वहन करनी पड़ी थी। हालांकि, उसके बाद, विशेषतः 2001-02 के आरंभ से कार्य-निष्पादन में क्रमिक रूप से सुधार हुआ। सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सुधार मध्यस्थता लागतों में देखने में आया, जिसमें पिछले कुछ वर्षों में महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आई है, जिससे गहन होते प्रतिस्पर्धात्मक दबावों के प्रभाव का पता चलता है। हालांकि इसके बावजूद बैंकों की लाभप्रदता में सुधार हुआ, जैसा कि आस्तियों पर प्रतिलाभ से पता चलता है। इसे परिचालन लागत में कटौती करते हुए तथा आय के गैर-ब्याजगत स्रोतों के आश्रय में बढ़ोत्तरी करते हुए, जिन्हें क्रमशः आय की तुलना में लागत अनुपात द्वारा और कुल आस्तियों की तुलना में गैर ब्याजगत आय द्वारा मापा गया, प्राप्त किया गया। अनर्जक

## सारणी 9.22: चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की इक्विटी पर प्रतिलाभ

(प्रतिशत)

| देश | 1999 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| यू.एस.ए. | 8.81 | 10.22 | 6.97 | 7.25 | 14.36 | 18.45 | 14.08 | 12.00 |
| कनाडा | * | 13.52 | 12.89 | 9.77 | 14.61 | 17.28 | 14.37 | 18.28 |
| यू के | * | 14.94 | 10.31 | 9.05 | 9.94 | 15.56 | 15.53 | 15.43 |
| इटली | 13.03 | 10.08 | 2.29 | 0.77 | 5.31 | 10.00 | 10.15 | 12.66 |
| फ्रांस | 6.08 | 7.72 | 2.29 | 2.65 | 3.90 | 14.54 | 13.23 | 14.39 |
| जर्मनी | 7.20 | 16.39 | -3.73 | -8.76 | -6.31 | 2.61 | 9.17 | 13.34 |
| जापान | 2.57 | -0.88 | -15.45 | -17.93 | -2.88 | 2.95 | 10.79 | 8.83 |
| **उभरती अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| मैक्सिको | 15.60 | 12.04 | 9.05 | 4.77 | 13.27 | 9.86 | 17.27 | 19.21 |
| चिली | 10.91 | 14.52 | 17.45 | 12.92 | 14.55 | 14.88 | 15.44 | 16.68 |
| कोरिया | -24.75 | -8.95 | 14.10 | 10.88 | 0.56 | 14.99 | 17.76 | 14.86 |
| थाईलैंड | * | 1.35 | 27.05 | 3.98 | 9.61 | 16.25 | 15.66 | 8.10 |
| फिलीपीन्स | 2.48 | 2.78 | 3.01 | 6.79 | 10.51 | 9.43 | 11.25 | 10.65 |
| मलेशिया | * | 13.89 | 8.13 | 11.71 | 13.06 | 13.02 | 13.12 | 13.53 |
| इंडोनेशिया | * | 6.60 | 14.08 | 16.29 | 17.90 | 22.49 | 15.65 | 14.72 |
| ब्राज़ील | 15.87 | 6.96 | 10.49 | 24.72 | 17.70 | 17.39 | 19.73 | 18.00 |
| रूसी महासंघ | 17.94 | 27.54 | 13.28 | 11.90 | 15.36 | 14.43 | 18.15 | 17.12 |
| चीन | 2.58 | 2.68 | 4.42 | 24.96 | 65.27 | 71.04 | 13.04 | 11.83 |
| मेमो : | | | | | | | | |
| **श्रेणी** | **(-)24.75-17.94** | **(-)8.95-27.54** | **(-)15.45-27.05** | **(-)17.93-24.96** | **(-)6.31-65.27** | **2.61-71.04** | **9.17-19.73** | **8.10-19.21** |
| **भारत** | **14.18** | **9.65#** | **14.53** | **18.63** | **21.36** | **15.35** | **14.19** | **14.76** |

*** :** आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं, अथवा यदि वे उपलब्ध भी हैं तो उनके नमूने बहुत छोटे हैं और इसलिए उनके विश्लेषण पर विचार नहीं किया गया।

**# :** 2001-02 के दौरान सभी बैंक समूहों (निजी क्षेत्र के नये बैंकों को छोड़कर) के निवल लाभ में विशेषतः अधिक वेतन बिलों (उक्त अवधि के दौरान लागू की गई स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के कारण) के कारण आई कमी की वजह से इक्विटी पर प्रतिलाभ में भारी कमी आ गई थी, जबकि बैंकों की पूंजी में किसी प्रकार की तदनुरूप वृद्धि नहीं हुई थी।

**स्रोत:** बैंक स्कोप

आस्तियों में अवरुद्ध विगत देय राशियों की वसूली आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सीआरआर) और सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) के रूप में सांविधिक पूर्व-क्रयों में कटौती तथा कारपोरेट कर की दरों में कटौती ने भी लाभप्रदता बढ़ाने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। पिछले वर्षों के दौरान हुए महत्त्वपूर्ण सुधार के परिणामस्वरूप, विविध प्रकार के अनुपातों द्वारा यथा-निर्धारित भारतीय बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता/उत्पादकता बढ़ कर वैश्विक स्तर निकट पहुँच गई।

**चार्ट IX.20: चुनिंदा देशों के बैंकों की इक्विटी पर प्रतिलाभ - 2006**

9.58 हालांकि, विभिन्न कार्यकुशलता/उत्पादकता मापों में हुआ सुधार विभिन्न बैंक समूहों के मामले में अलग-अलग था। 1991-92 और 2006-07 के बीच निवल ब्याज अंतर में सबसे बड़ी गिरावट निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों के मामले में देखने में आई थी। हालांकि, लागत की तुलना में आय के मामले में सर्वाधिक सुधार प्रदर्शित करने वाला समूह राष्ट्रीयकृत बैंकों का था। प्रति कर्मचारी कारोबार में भारी वृद्धि निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों के मामले में परिलक्षित हुई। निजी क्षेत्र के नये बैंकों के गैर-ब्याजगत स्रोतों में सर्वाधिक वृद्धि दर्ज हुई। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने आस्ति पर प्रतिलाभ और इक्विटी पर प्रतिलाभ के मामले में सर्वाधिक सुधार दर्शाया। अधिकांश अनुपातों के सम्बन्ध में विविध बैंक समूहों का कार्य-निष्पादन अभिसरित होता लगा। 2006-07 के दौरान निजी क्षेत्र के नये बैंक मध्यस्थता लागत (निवल ब्याज मार्जिन के द्वारा मापी गई) की दृष्टि से सर्वाधिक कुशल सिद्ध हुए, उनके काफी निकट राष्ट्रीयकृत बैंक थे। यह उल्लेख करना महत्त्वपूर्ण होगा कि विदेशी बैंक समूह की जमा लागत सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की अपेक्षा लगभग 100 आधार अंक कम थी। हालांकि, उनकी उधार देने की दरों में इसका प्रतिबिंबन नहीं हुआ, जिसके

परिणामस्वरूप निवल ब्याज मार्जिन बढ़ गया। तथापि आय की तुलना में परिचालन लागत का अनुपात विदेशी बैंकों के मामले में सर्वाधिक कम, तथा स्टेट बैंक समूह के मामले में सर्वाधिक था। वास्तव में, स्टेट बैंक समूह और विदेशी बैंक दो ऐसे समूह थे जिनका आय की तुलना में लागत अनुपात 1991-92 और 2006-07 की अवधि के बीच बढ़ गया। इससे काफी हद तक श्रम लागत का प्रतिबिंबन हुआ, जो दोनों ही बैंक समूहों के मामले में समान था। तथापि, स्टेट बैंक और अन्य बैंक समूहों की अपेक्षा विदेशी बैंक आमतौर पर महत्त्वपूर्ण रूप से उनकी आय का अपेक्षाकृत एक बड़ा हिस्सा तुलनपत्र में शामिल न की जानेवाली मदों से सृजित करते हैं, जिसके फलस्वरूप आय की तुलना में परिचालन लागत का अनुपात कम हो जाता है। विदेशी और निजी क्षेत्र के नये बैंकों, दोनों ही समूहों के प्रति कर्मचारी कारोबार और प्रति शाखा कारोबार सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की तुलना में काफी बेहतर थे। यह इस तथ्य के बावजूद हुआ कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की श्रम उत्पादकता 15 वर्षों के अंतराल में लगभग 10 गुना बढ़ी। एक निश्चित सीमा तक यह इस तथ्य से स्पष्ट हो सकता है कि विदेशी बैंकों और निजी क्षेत्र के नये बैंकों के समूहों के ठीक विपरीत सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक ग्रामीण शाखाओं का भी संचालन करते हैं, जहाँ लेन-देन का आकार छोटा होता है।

9.59 वर्ष 2006-07 के दौरान विदेशी बैंक समूह का लाभप्रदता अनुपात आय के गैर-ब्याजगत स्रोतों के उच्चतर हिस्से, साथ ही उच्चतर निवल ब्याज मार्जिन के कारण सर्वाधिक था। हालांकि, 2006-07 के दौरान स्टेट बैंक समूह का इक्विटी पर प्रतिलाभ सर्वाधिक था, उसके बाद राष्ट्रीयकृत बैंकों का स्थान था (सारणी 9.23)।

**सारणी 9.23 : भारत में वाणिज्य बैंकों के उत्पादकता अनुपात की एक झलक**

(प्रतिशत)

| अनुपात | वर्ष | देशी बैंक | | | | | | | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक | | | निजी बैंक | | | देशी बैंक समस्त | | |
| | | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | सार्वजनिक क्षेत्र के सभी बैंक | पुराने निजी बैंक | नए निजी बैंक | समस्त निजी बैंक | | | |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 |
| आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत | 1991-92 | 2.48 | 2.67 | 2.60 | 2.97 | * | 2.97 | 2.61 | 2.26 | 2.59 |
| | 1998-99 | 2.70 | 2.63 | 2.65 | 2.22 | 1.74 | 2.04 | 2.59 | 3.39 | 2.65 |
| | 2006-07 | 1.98 | 1.67 | 1.77 | 1.88 | 2.11 | 2.06 | 1.84 | 2.78 | 1.91 |
| आय की तुलना में लागत अनुपात | 1991-92 | 47.44 | 67.51 | 58.41 | 58.96 | * | 58.96 | 58.44 | 30.91 | 55.30 |
| | 1998-99 | 62.41 | 68.29 | 65.94 | 65.13 | 48.69 | 58.96 | 65.26 | 56.61 | 64.26 |
| | 2006-07 | 52.80 | 49.36 | 50.58 | 50.72 | 52.59 | 52.17 | 50.98 | 44.64 | 50.15 |
| अर्जक आस्तियों की प्रति इकाई श्रम लागत | 1991-92 | 2.41 | 2.34 | 2.36 | 2.86 | * | 2.86 | 2.38 | 1.08 | 2.30 |
| | 1998-99 | 2.70 | 2.52 | 2.58 | 1.83 | 0.39 | 1.30 | 2.44 | 1.37 | 2.35 |
| | 2006-07 | 1.51 | 1.23 | 1.32 | 1.26 | 0.71 | 0.84 | 1.21 | 1.56 | 1.23 |
| अर्जक आस्तियों की प्रति इकाई गैर-श्रम लागत | 1991-92 | 1.02 | 1.05 | 1.04 | 1.17 | * | 1.17 | 1.05 | 2.18 | 1.12 |
| | 1998-99 | 1.09 | 0.91 | 0.98 | 1.07 | 1.88 | 1.36 | 1.02 | 3.27 | 1.20 |
| | 2006-07 | 0.79 | 0.70 | 0.73 | 0.96 | 1.80 | 1.60 | 0.93 | 2.36 | 1.03 |
| मध्यस्थता लागत | 1991-92 | 5.92 | 5.66 | 5.77 | 6.13 | * | 6.13 | 5.79 | 13.28 | 6.24 |
| | 1998-99 | 3.49 | 4.23 | 3.96 | 3.86 | 4.36 | 4.03 | 3.98 | 6.32 | 4.19 |
| | 2006-07 | 2.97 | 3.32 | 3.20 | 3.63 | 3.61 | 3.61 | 3.30 | 5.50 | 3.43 |
| निवल ब्याज मार्जिन (स्प्रेड) | 1991-92 | 3.80 | 2.86 | 3.22 | 4.01 | * | 4.01 | 3.26 | 3.90 | 3.30 |
| | 1998-99 | 2.85 | 2.78 | 2.81 | 2.17 | 2.01 | 2.11 | 2.73 | 3.52 | 2.79 |
| | 2006-07 | 2.79 | 2.58 | 2.65 | 2.74 | 2.36 | 2.45 | 2.60 | 3.74 | 2.69 |
| कुल आय की तुलना में अन्य आय (गैर-ब्याजगत) | 1991-92 | 12.31 | 9.73 | 10.74 | 9.62 | * | 9.62 | 10.69 | 22.72 | 11.82 |
| | 1998-99 | 14.39 | 10.44 | 11.91 | 11.04 | 14.43 | 12.25 | 11.95 | 19.35 | 12.67 |
| | 2006-07 | 12.16 | 10.47 | 11.04 | 12.10 | 19.58 | 17.86 | 12.73 | 27.80 | 14.09 |
| प्रति कर्मचारी कारोबार (लाख रुपए में) | 1991-92 | 42.99 | 46.37 | 45.15 | 33.48 | * | 33.48 | 44.42 | 199.47 | 46.66 |
| | 1998-99 | 102.45 | 107.67 | 105.78 | 138.78 | 793.78 | 193.95 | 111.57 | 504.81 | 117.72 |
| | 2006-07 | 435.52 | 490.21 | 470.99 | 486.02 | 818.02 | 694.07 | 506.77 | 995.09 | 521.94 |
| प्रति शाखा कारोबार (करोड़ रुपए में) | 1991-92 | 10.53 | 8.27 | 8.93 | 4.87 | * | 4.87 | 8.59 | 149.96 | 9.12 |
| | 1998-99 | 24.92 | 19.23 | 20.90 | 19.04 | 66.34 | 25.24 | 21.32 | 349.04 | 22.75 |
| | 2006-07 | 77.14 | 62.78 | 66.83 | 52.31 | 293.96 | 133.16 | 75.04 | 1004.10 | 79.39 |
| आस्तियों पर प्रतिलाभ | 1991-92 | 0.21 | 0.33 | 0.28 | 0.57 | * | 0.57 | 0.30 | 1.56 | 0.39 |
| | 1998-99 | 0.51 | 0.37 | 0.42 | 0.46 | 1.05 | 0.67 | 0.45 | 1.01 | 0.50 |
| | 2006-07 | 0.82 | 0.83 | 0.83 | 0.69 | 0.92 | 0.87 | 0.84 | 1.65 | 0.90 |
| इक्विटी पर प्रतिलाभ | 1991-92 | 12.72 | 10.45 | 11.02 | 26.77 | * | 26.77 | 11.62 | 42.26 | 14.77 |
| | 1998-99 | 11.10 | 6.26 | 7.78 | 8.41 | 16.66 | 11.70 | 8.24 | 10.96 | 8.59 |
| | 2006-07 | 15.30 | 14.65 | 14.86 | 10.32 | 13.57 | 12.81 | 14.30 | 13.86 | 14.24 |

***:** निजी क्षेत्र के नए बैंकों के प्रकाशित तुलनपत्रों के पहले आंकड़े मार्च 1996 में समाप्त वर्ष से उपलब्ध हुए।
**स्रोत**: भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणी (भा.रि.बैंक) से परिकलित।

9.60 भारतीय बैंकिंग क्षेत्र के अधिकांश कार्यनिष्पादन संकेतक उन्नत और अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं के बैंकों के कार्यनिष्पादन के साथ अनुकूल रूप से तुलनीय हैं। उदाहरण के लिए भारत में आय की तुलना में लागत का अनुपात कनाडा, फ्रांस और जर्मनी जैसे कई उन्नत देशों के बैंकों से बेहतर था। इसी प्रकार, कुल आस्तियों की तुलना में परिचालन लागत की दृष्टि से भारत के बैंक मैक्सिको, चिली, थाईलैंड, फिलीपीन्स, इंडोनेशिया, ब्राज़ील और रूस जैसी कतिपय उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में बेहतर स्थिति में थे। यद्यपि, 1999 और 2006 के बीच की अवधि में श्रम लागत में निरंतर गिरावट की प्रवृत्ति परिलक्षित हुई, तथापि वह चीन, कोरिया और मलेशिया जैसी कई एक उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं तथा विकसित विश्व के अधिकांश उन्नत देशों से भिन्न अर्जक आस्तियों के 1 प्रतिशत से अधिक थी। इससे यह पता चलता है कि श्रम लागत में सुधार की गुंजाइश है। दूसरी ओर, निवल ब्याज मार्जिन (एनआइएम) की दृष्टि से चीन, कोरिया और मलेशिया के बैंक भारत के बैंकों की तुलना में बेहतर स्थिति में थे। बैंकों की आय (गैर-ब्याजगत आय) में गैर-परंपरागत स्रोतों का अंशदान यू.के., इटली और जर्मनी जैसी कई एक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की अपेक्षा भारत में अपेक्षाकृत अधिक था। इसी प्रकार, वर्ष 2006 में भारत में इक्विटी पर प्रतिलाभ अमरीका, इटली, जर्मनी और जापान जैसी कई एक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के साथ ही अधिकांश उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के मुकाबले अपेक्षाकृत अधिक था।

## IV. भारत में बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता और उत्पादकता की माप- आर्थिक माप

9.61 पिछले खण्ड में कार्य-कुशलता/उत्पादकता को परंपरागत लेखांकन मापों का उपयोग करते हुए मापा गया था। हालांकि, इस प्रकार की माप की सीमाएं होती हैं क्योंकि किसी एक अनुपात का चुनाव किसी बैंक के कार्यनिष्पादन के विविध आयामों के सम्बन्ध में सुस्पष्ट सूचना नहीं प्रदान करता, जिसमें बहुविध आउटपुट का निर्माण करने हेतु बहुविध इनपुट का उपयोग किया जाता है। इसके अलावा, ये माप कार्य-कुशलता और उत्पादकता में सुस्पष्ट रीति से विभेद भी नहीं करते । इस समस्या को उस आर्थिक माप के माध्यम से बेहतर ढंग से हल किया जा सकता है, जिसमें बैंकिंग परिचालनों के सभी पहलुओं को एक ही माप में शामिल कर लिया जाता है।

9.62 आर्थिक मापों (परिशिष्ट IX.1 देखें) की कतिपय तकनीकों में इस अध्याय में प्रयुक्त आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (डीईए) दृष्टिकोण में अन्यों की अपेक्षा कतिपय लाभ निहित होते हैं। एक, यह बैंक स्तर की कार्यकुशलता के अंक उपलब्ध कराता है। दो, इसमें अन्तर्निहित प्रौद्योगिकियों के बारे में पूर्व विनिर्देशन की आवश्यकता नहीं पड़ती।

9.63 आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण दृष्टिकोण में एक श्रेष्ठ प्रथा सीमांत, जो संसाधनों के इष्टतम उपयोग के स्तर का निरूपण करता है तैयार किया जाता है तथा बैंकों की कार्यकुशलता को उस श्रेष्ठ सीमांत (बेंचमार्क) के अनुपात में मापा जाता है। यदि कोई बैंक सीमांत पर है, तो उसे एक कुशल बैंक कहा जाता है, अन्यथा उसे कम कुशल कहा जाता है। बैंक उक्त सीमांत से जितनी ही अधिक दूर होगा, उसकी कार्यकुशलता का स्तर उतना ही कम होगा (बॉक्स IX.6)। चूँकि, व्यवहार में वास्तविक आदर्श प्रौद्योगिकी प्रेक्षणीय नहीं होती, आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण व्यवहार्य प्रौद्योगिकी सीमान्त को परिभाषित करने का प्रयास करता है।

9.64 श्रेष्ठ प्रथा सीमांत का अनुमान लगाने के उद्देश्य से श्रम, अचल आस्तियों, जमाराशियों और उधारों को इनपुट माना गया है, जबकि ऋण, निवेश और तुलनपत्र में शामिल न की जाने वाली मदों के परिचालनों[5] के समकक्ष आस्तियों को आउटपुट माना गया है।

### भारत में कार्य-कुशलता के अनुमान

9.65 आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण अनुमानों के अनुसार सुधारों को शुरू किए जाने के बाद सभी बैंक समूहों में कार्य-कुशलता के स्तरों में महत्त्वपूर्ण सुधार हुआ है। कार्य-कुशलता में आया यह सुधार 1992 और 1998 के बीच वाली अवधि के मुकाबले 1998 और 2007 के बीच वाली अवधि में अधिक मुखर था। 1991-92 के दौरान बैंकिंग क्षेत्र के आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण के अनुमानों के आधार पर लागत कार्य-कुशलता 0.42 थी (जिससे यह संकेत प्राप्त होता है कि प्रेक्षित इनपुट-आउटपुट पुंजों और व्यवहार्य प्रौद्योगिकी को ध्यान में रखते हुए उसी स्तर के आउटपुट का निर्माण करने हेतु 58 प्रतिशत लागत कम की जा सकती थी), जो 2006-07 तक बढ़कर 0.71 हो गई (सारणी 9.24)। बैंक-समूहों की दृष्टि से 1992 और 2007 की अवधि के बीच लागत कार्य-कुशलता में अभिलाभ 1990 वाले दशक के प्रारंभिक दिनों में व्यापक रूप से कम आधार के कारण अन्य बैंक समूहों की तुलना में निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों के मामले में अधिक महत्त्वपूर्ण थे। निजी बैंक समूहों द्वारा प्राप्त भारी अभिलाभों के बावजूद, जहाँ तक सम्पूर्ण कार्य-कुशलता का सम्बन्ध है, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक, विशेषतः स्टेट बैंक समूह बाज़ार में अपना अग्रणी स्थान बनाए रखने में सफल रहे।

9.66 वर्ष 2006-07 के दौरान, 0.85 की कार्य-कुशलता स्तर के साथ स्टेट बैंक समूह सर्वाधिक लागत कुशल था, उसके बाद 0.83 के कार्य-कुशलता स्तर के साथ निजी क्षेत्र के नये बैंकों, 0.80 के कार्यकुशलता स्तर के साथ राष्ट्रीयकृत बैंकों, 0.66 के कार्य-कुशलता स्तर के साथ विदेशी बैंकों और 0.59 के कार्य-कुशलता स्तर के साथ निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों का स्थान था (सारणी 9.24)। दूसरे शब्दों में, निजी क्षेत्र के पुराने बैंक निरपेक्ष दृष्टि से सबसे कम लागत-कुशल बैंक थे । महत्त्वपूर्ण

5. तुलन पत्र में शामिल न किए गए परिचालनों की समतुल्य आस्ति का निर्धारण बैंको की कुल आस्तियों के साथ कुल आय की तुलना में गैर-ब्याजगत आय अनुपात को गुणा कर के किया गया है ।

## बॉक्स IX.6
## आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण

आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण बैंक/फर्म जैसी किसी निर्णयकर्ता इकाई (डीएमयू) की कार्यकुशलता को मापने की एक गैर-मानदंडीय पद्धति होती है। आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (डीईए) में प्रेक्षित आंकड़ों से एक श्रेष्ठ प्रथा सीमांत का निर्माण करने तथा निर्मित सीमांत के अनुरूप कार्यकुशलता मापने के लिए गणितीय योजना का उपयोग किया जाता है। आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण के सीमांत का निर्माण श्रेष्ठ प्रथा प्रेक्षणों (स्थानवार रैखिक संयोजन) के सेट को जोड़कर किया जाता है। इस प्रकार निर्णयकर्ता इकाई अथवा बैंक के लिए आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण के कार्य-कुशलता अंक को किसी निरपेक्ष मानक द्वारा परिभाषित नहीं किया जाता, अपितु उसे अन्य बैंकों से परिभाषित किया जाता है। किसी ऐसे उद्योग के मामले में जहाँ दो इनपुटों का उपयोग करते हुए एक आउटपुट निर्मित किया जाता है, इसे किसी इकाई के आइसोक्वैंट (esoquant) द्वारा भी दर्शाया जा सकता है।

आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण को समझाने का सर्वोत्तम तरीका है अनुपात के रूप वाला तरीका। प्रत्येक निर्णयकर्ता इकाई के लिए हम समस्त इनपुटों (x) की तुलना में समस्त आउटपुटों (y) के अनुपात का माप प्राप्त करना चाहेंगे, जैसे u'y/v'x, जिसमें U आउटपुट का भार तथा V इनपुट का भार होता है। इष्टतम भारों का चयन करने हेतु, हम गणितीय योजना की समस्या का विनिर्देशन करते हैं।

अधिकतम $(u'y / v'x)$

s.t. $u'y/v'x \leq 1$, j=1,2…………..N

$u, v \geq 0$

इसमें u और v का इस प्रकार मूल्य ज्ञात करना शामिल होता है कि 1v निर्णयकर्ता इकाई की कार्यकुशलता का माप इस प्रतिबंध की शर्त पर अधिकतम हो जाए कि समस्त कार्यकुशलता माप आवश्यक रूप से एक से कम अथवा इसके बराबर हों। इस विशिष्ट अनुपात विन्यास के साथ एक समस्या यह होती है कि इसमें हलों की अनंत संख्या होती है। इससे बचने के लिए इस समस्या के एक समकक्ष पर्यावरणिक रूप का अनुमान लगाया जाता है। यथा

न्यूनतम $\Phi$

s.t. $-y + Y\lambda \geq 0$,

$\Theta x - X\lambda \geq 0$

इसे निम्नलिखित परिकल्पित उदाहरण द्वारा समझाया जा सकता है : फर्म सी की तकनीकी कार्यकुशलता ($\varphi$) का मूल्यांकन करने हेतु निम्नलिखित रैखिक योजना को हल किया जाता है :

**सारणी : छह फर्मों की परिकल्पित इनपुट और आउटपुट मात्राएं**

| फर्म | ए | बी | सी | डी | ई | एफ |
|---|---|---|---|---|---|---|
| आउटपुट 1 | 4 | 9 | 6 | 8 | 7 | 11 |
| आउटपुट 2 | 2 | 4 | 3 | 6 | 5 | 8 |
| आउटपुट 1 | 2 | 7 | 6 | 5 | 8 | 6 |
| आउटपुट 2 | 3 | 5 | 7 | 8 | 4 | 6 |

Max $\varphi$

s.t. $4\lambda_A + 9\lambda_B + 6\lambda_C + 8\lambda_D + 7\lambda_E + 11\lambda_F - 6\varphi \geq 0$;

$2\lambda_A + 4\lambda_B + 3\lambda_C + 6\lambda_D + 5\lambda_E + 8\lambda_F - 3\varphi \geq 0$

$2\lambda_A + 7\lambda_B + 6\lambda_C + 5\lambda_D + 8\lambda_E + 6\lambda_F \leq 6$

$3\lambda_A + 5\lambda_B + 7\lambda_C + 8\lambda_D + 4\lambda_E + 6\lambda_F \leq 7$

$\lambda_A, \lambda_B, \lambda_C \ldots.. \lambda_F \geq 0$; $\Phi$ free

फर्म सी की आउटपुट मात्राएं असमानताओं की बाईं ओर $\Phi$ के सहगुणांक के रूप में दिखाई देती हैं, जहां उसकी इनपुट मात्राएं बाधाओं की दाहिनी ओर दिखाई देती हैं। इस समस्या का इष्टतम हल निम्नानुसार है :

$\lambda^*_A = 1$; $\lambda^*_F = 0.667$; $\lambda^*_B = \lambda^*_C = \lambda^*_D = 0$; $\varphi^* = 1.889$

इसका अर्थ यह हुआ कि यदि हम फर्म एफ के 66.7 प्रतिशत इनपुट-आउटपुट बंडलों को फर्म ए के इनपुट-आउटपुट बंडलों के साथ मिलकर किसी संदर्भ फर्म (उदाहरण के लिए 'सी') का निर्माण करते हैं, तो यह नयी फर्म x 1 की 6 इकाइयों और x 2 की 7 इकाइयों का उपयोग करते हुए y 1 की 11.33 इकाइयों और y2 की 7.33 इकाइयों का निर्माण करेगी। इस संभाव्य आउटपुट बंडल की फर्म सी के वास्तविक आउटपुट स्तरों से तुलना किए जाने पर यह पता चलता है कि आउटपुट y 2 को 1.889 के एक कारक द्वारा विस्तारित किया जा सकता है, जबकि आउटपुट y2 को 2.444 के कारक द्वारा बढ़ाया जा सकता है। इसे इष्टतम हल में $\varphi^*$ द्वारा मापा जाता है। इसलिए फर्म सी की तकनीकी कार्य-कुशलता का माप निम्नानुसार है:

$$TE(C) = 1/1.889 = 0.529$$

आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण को सर्वप्रथम परिचालन अनुसंधान सामग्री में चार्न्स, कूपर और रॉड्स (सीसीआर मॉडल, यूरोपियन जर्नल ऑफ ऑपरेशन्स रिसर्च : 1978) (रे; 2004) द्वारा लागू किया गया था। यद्यपि मूल सीसीआर मॉडल केवल भारी मात्रा में स्थिर प्रतिलाभों की विशिष्टता वाली प्रौद्योगिकियों पर ही लागू होता था, बैंकर, चार्न्स और कूपर (बीसीसी) (प्रबंधन विज्ञान, 1984) में सीसीआर मॉडल को उन प्रौद्योगिकियों तक विस्तारित कर दिया जो भारी मात्रा में परिवर्ती प्रतिलाभ दर्शाती हैं।

यद्यपि, प्रथमदृष्ट्या आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण अपेक्षाकृत एक नयी पद्धती लगता है, तथापि अर्थशास्त्र में आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण का बौद्धिक समर्थन किए जाने की परंपरा 1950 वाले दशक से ही आरंभ हो गई थी। डेब्रू (1951) ने संसाधन उपयोग के सह-गुणांक को सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की तकनीकी कार्य-कुशलता के एक माप के रूप में परिभाषित किया था तथा इकाई से इस माप के किसी भी विचलन को संसाधनों के अकुशल उपयोग के कारण समाज को होने वाली अति भार वाली क्षति के रूप में माना गया था। फैरेल (1957) ने फर्मों के नमूनों के वास्तविक इनपुट-आउटपुट आंकड़ों का उपयोग करते हुए एक रैखिक कार्यक्रम मॉडल की रचना की। उन्होंने प्रेक्षित इनपुट-आउटपुट समूहों के समावेश वाले शंकु की उत्तल पोत खोल द्वारा निर्धारित अन्तर्निहित उत्पादन संभाव्यता का मोटा अनुमान लगाया। कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले के कृषि अर्थशास्त्रियों के एक दल ने फैरेल के माप में और सुधार किया। ऐगनर और चू ने उत्पादन सीमांत के मानदंडीय विनिर्देशन को बनाए रखा, किन्तु प्रतिबंधित प्रेक्षित आंकड़े इस कार्य के पीछे निहित असत्य को उजागर कर देते हैं। उन्होंने गणितीय योजना का उपयोग करते हुए विनिर्दिष्ट कार्य को आंकड़ों के यथासंभव निकट लाने का प्रस्ताव रखा।

दूसरे शब्दों में, अर्थशास्त्र में रैखिक योजना का उपयोग करते हुए कार्यकुशलता के गैर-मानदंडीय विश्लेषण के पीछे सामग्री में आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण को औपचारिक रूप से लागू किए जाने के पहले एक लम्बा इतिहास निहित है।

**सन्दर्भ :**

बैंकर, आर.डी. ए .चार्न्स और डब्ल्यू.डब्ल्यू.कूपर, 1984, 'सम मॉडेल्स फार एस्टीमेटिंग टेक्निकल एण्ड स्केल इन-एफिसिएन्सीज इन डेटा एन्वेलपमेंट एनालिसिस,' मैनेजमेंट साइंस, 30(9): 1078-1092.

चार्न्स, ए. डब्ल्यू.डब्ल्यू.कूपर और ई. रॉड्स, 1978, ''मेजरिंग दि इफिसियेन्सी ऑफ डिसीजन मेकिंग यूनिट्स यूरोपियन जर्नल ऑफ ऑपरेशनल रिसर्च, 2(4): 429-444.

डेब्रू, जी, 1951, 'दि कोएफिसिएंट ऑफ रिसेर्स यूटीलाइजेशन'' इकॉनॉमेट्रिका, 19:273-92.

फैरल, एम.जे.1957, ''दि मेजरमेंट ऑफ प्रोडॅक्टिव एफिसिएंसी '' जर्नल ऑफ रॉयल स्टैटिस्टिकल सोसाइटी, 120(ए), 253-81.

रे, एस. 2004, डाटा एन्वेलपमेंट एनालिसिस, टेकनीक्स फॉर आपरेशन्स रिसर्च एण्ड इकॉनॉमिक्स.

## सारणी 9.24 : बैंक समूहवार कार्य-कुशलता के स्तर

| बैंक समूह | कार्य-कुशलता के स्तर | | | | कार्य-कुशलता की वृद्धि दर (प्रतिशत में) | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | कार्यकुशलता का प्रकार | 1991-92* | 1997-98 | 2006-07 | 1992 से1998तक | 1998 से 2007तक | 1992 से 2007 तक |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 |
| **स्टेट बैंक समूह** | लागत | 0.52 | 0.57 | 0.85 | 10.62 | 48.53 | 64.30 |
| | तकनीकी | 0.70 | 0.75 | 0.95 | 7.49 | 26.89 | 36.38 |
| | निर्धारक | 0.74 | 0.76 | 0.89 | 3.07 | 17.13 | 20.73 |
| **राष्ट्रीयकृत बैंक** | लागत | 0.53 | 0.60 | 0.80 | 11.71 | 34.82 | 50.61 |
| | तकनीकी | 0.69 | 0.76 | 0.93 | 10.31 | 22.10 | 34.69 |
| | निर्धारक | 0.77 | 0.78 | 0.86 | 1.59 | 10.21 | 11.96 |
| **पुराने निजी बैंक** | लागत | 0.29 | 0.42 | 0.59 | 44.98 | 40.52 | 103.72 |
| | तकनीकी | 0.49 | 0.52 | 0.72 | 4.72 | 40.08 | 46.70 |
| | निर्धारक | 0.59 | 0.82 | 0.81 | 37.99 | -0.39 | 37.46 |
| **नए निजी बैंक** | लागत | 0.45 | 0.53 | 0.83 | 18.84 | 57.15 | 86.76 |
| | तकनीकी | 0.56 | 0.60 | 0.95 | 7.62 | 57.31 | 69.30 |
| | निर्धारक | 0.84 | 0.88 | 0.88 | 5.02 | -0.45 | 4.55 |
| **विदेशी बैंक** | लागत | 0.43 | 0.50 | 0.66 | 16.34 | 31.11 | 52.54 |
| | तकनीकी | 0.51 | 0.61 | 0.79 | 19.58 | 29.89 | 55.33 |
| | निर्धारक | 0.84 | 0.83 | 0.83 | -1.42 | -0.59 | -2.01 |
| **समस्त बैंक** | लागत | 0.42 | 0.51 | 0.71 | 20.80 | 39.65 | 68.70 |
| | तकनीकी | 0.57 | 0.63 | 0.84 | 9.53 | 33.38 | 46.09 |
| | निर्धारक | 0.73 | 0.82 | 0.84 | 12.03 | 3.22 | 15.64 |

*: नए निजी बैंकों के मामले में आंकड़े 1996-97 से सम्बन्धित हैं।

रूप से विदेशी बैंकों को सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की तुलना में कम कार्यकुशल पाया गया।

9.67 जहाँ तक विदेशी बैंक समूह के मामले में देखने में आई कार्यकुशलता के अपेक्षाकृत कम स्तरों का सम्बन्ध है, यह उल्लेखनीय है कि 0.37 के सर्वाधिक कम स्तर से लेकर 1.0 के अधिकतम स्तर जैसे अलग-अलग स्तरों वाला यह एक अत्यधिक विषम जातीय समूह है। इसके अलावा, इस समूह में शामिल बहुत कम कार्य-कुशलता स्तर वाले बैंक बहुत छोटे आकार तथा सीमित कारोबारी परिचालन वाले बैंक भी हैं। इन बहिर्वासी (कम कार्य-कुशलता वाले) बैंकों को छोड़कर विदेशी बैंक समूह का औसत कार्य-कुशलता स्तर, जिसका एक साथ मिला देने पर इस समूह के समग्र आकार (कुल आस्तियों की दृष्टि से) के 20 प्रतिशत से अधिक अंश नहीं होता, 1997-98 में 0.66 से अधिक और 2006-07 में लगभग 1.0 था। कुल 28 विदेशी बैंकों में से 2006-07 में 9 बैंकों का कार्य-कुशलता स्तर 1.0 था, 1997-98 में केवल एक विदेशी बैंक का कार्य-कुशलता अंक 1.0 था, जो संयोगवश किसी भी समूह में 1.0 कार्य-कुशलता अंक रखने वाला एकमात्र बैंक था। दूसरी ओर, सार्वजनिक क्षेत्र के सभी 28 बैंक 0.8 और 1.0 वाली कार्य-कुशलता श्रेणी में थे, जिनमें से 5 बैंकों का कार्य-कुशलता स्तर 1.0 था। सार्वजनिक क्षेत्र के 24 बैंकों ने 1997-98 के 0.60 - 0.79 स्तर तक के कार्य-कुशलता अंक की तुलना में 2006-07 में 0.80 - 1.0 का स्तर प्राप्त कर लिया। निजी क्षेत्र के छ: नए बैंकों में से तीन बैंक 1.0 वाले कार्य-कुशलता स्तर में थे। निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों में से किसी ने भी 1.0 का कार्य-कुशलता स्तर नहीं प्राप्त किया था। उद्योग के जिन कुल 17 बैंकों ने 2006-07 में 1.0 प्रतिशत का कार्य-कुशलता स्तर दर्ज किया था, उनमें से 9 विदेशी बैंक समूह से, निजी क्षेत्र के नये बैंक और स्टेट बैंक समूह प्रत्येक से 3 और राष्ट्रीयकृत बैंक समूह से 2 बैंक थे (सारणी 9.25)।

9.68 आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (डीईए) के माध्यम से निर्मित लागत कार्य-कुशलता अनुमानों को तकनीकी और निर्धारक कार्य-कुशलता में विश्रृंखलित किया जा सकता है। तकनीकी कार्य-कुशलता से आशय है, किसी बैंक की एक निश्चित निविष्टि (इनपुट) समूह से अधिकतम आउटपुट प्राप्त करने की योग्यता, जबकि निर्धारक कार्य-कुशलता से आशय होता है बैंक की इनपुटों के सम्बन्धित मूल्यों को ध्यान में रखते हुए उनका इष्टतम मात्रा में उपयोग करने की योग्यता। समग्र कार्य-कुशलता में प्राप्त अधिकांश अभिलाभ निर्धारक कार्य-कुशलता (1991-92 में 0.73 से 2006-07 में 0.84) के बजाय तकनीकी कार्य-कुशलता (1991-92 में 0.57 से 2006-07 में 0.84) में हैं। तकनीकी और निर्धारक कार्य-कुशलता की दृष्टि से सापेक्ष्य अभिलाभ विभिन्न बैंक समूहों के कार्य-निष्पादन के प्रति और अधिक अंतर्दृष्टि उपलब्ध कराते हैं (चार्ट IX.21)। महत्त्वपूर्ण रूप से विदेशी और निजी बैंकों के मामले में प्राप्त अभिलाभ केवल तकनीकी कार्य-कुशलता तक ही सीमित थे। इन बैंकों की निर्धारक कार्य-कुशलता 1990 वाले दशक के आरंभ से हमेशा अधिक रही है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के मामले में ये अभिलाभ तकनीकी और निर्धारक,

## सारणी 9.25 : कार्य-कुशलता की आवृत्ति का वितरण

| कार्य-कुशलता अंक | स्टेट बैंक समूह | | | राष्ट्रीयकृत बैंक | | | निजी क्षेत्र के पुराने बैंक | | | निजी क्षेत्र के नए बैंक | | | विदेशी बैंक | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1991-92 | 1997-98 | 2006-07 | 1991-92 | 1997-98 | 2006-07 | 1991-92 | 1997-98 | 2006-07 | 1991-92 | 1997-98 | 2006-07 | 1991-92 | 1997-98 | 2006-07 |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 | 10 | 11 | 12 | 13 | 14 | 15 | 16 |
| 0-0.19 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | – | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 |
| 0.20-0.39 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 6 | 4 | 0 | – | 0 | 0 | 5 | 4 | 2 |
| 0.40-0.59 | 0 | 0 | 0 | 3 | 0 | 0 | 16 | 13 | 5 | – | 3 | 0 | 11 | 16 | 4 |
| 0.60-.0.79 | 7 | 7 | 0 | 15 | 17 | 0 | 2 | 7 | 8 | – | 5 | 0 | 4 | 10 | 6 |
| 0.80-1.00 | 1 | 1 | 8 | 1 | 2 | 20 | 0 | 0 | 6 | – | 0 | 6 | 1 | 5 | 16 |
| *जिसमें से :* | | | | | | | | | | | | | | | |
| 1.0 | 0 | 0 | 3 | 0 | 0 | 2 | 0 | 0 | 0 | – | 0 | 3 | 1 | 1 | 9 |
| मेमो : औसत शीर्ष 5 | 0.74 | 0.78 | 0.98 | 0.78 | 0.8 | 0.98 | 0.63 | 0.65 | 0.89 | – | 0.64 | 0.97 | 0.71 | 0.88 | 1 |

दोनों ही प्रकार की कार्य-कुशलता में वितरित किए गए हैं। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की निर्धारक कार्य-कुशलता में हुए अभिलाभों का कारण विगत अनर्जक आस्तियों की वसूली तथा ऋण जोखिम परिवेश में सुधार हो सकता है, जिसके परिणामस्वरूप सुधारोत्तर अवधि में वृद्धिशील अनर्जक आस्तियों में तीव्र गिरावट आई। निर्धारक कार्य-कुशलता में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा प्राप्त काफी अभिलाभ भी इस बात के संकेतक हो सकते

**चार्ट IX.21: कार्य कुशलता में बैंक समूहवार प्रवृत्तियां (1992-2007)**

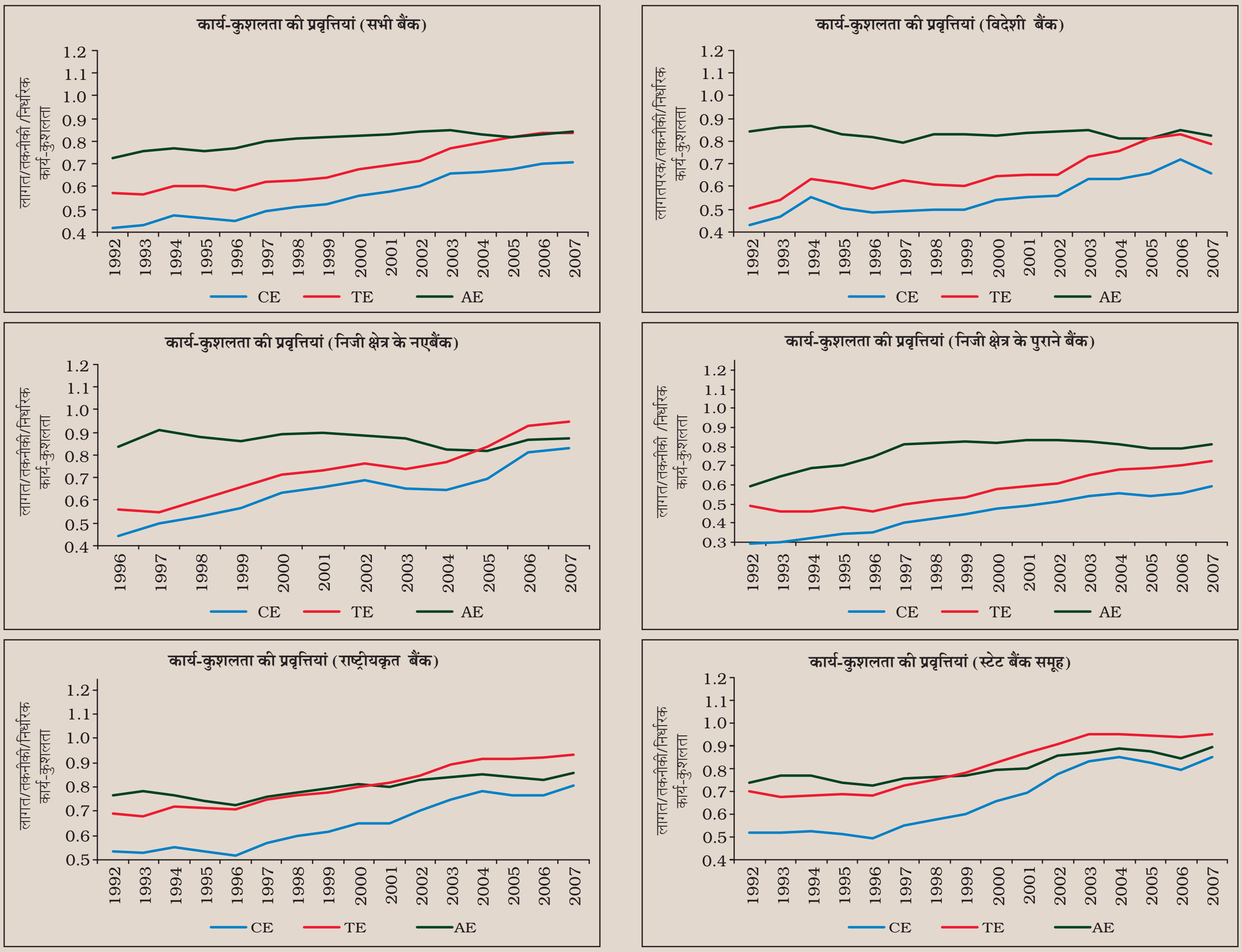


CE: लागत कार्य-कुशलता TE: तकनीकी कार्य-कुशलता AE: निर्धारक कार्य-कुशलता

हैं कि ग्रामीण और प्राथमिकता क्षेत्र उधार, जिनमें सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के कुल कारोबार के महत्त्वपूर्ण हिस्से का समावेश होता है, वाणिज्यिक रूप से सुदृढ़ और व्यवहार्य कारोबार का अंश होता है।

*कार्य-कुशलता और स्वामित्व*

9.69 सामग्री से यह पता चलता है कि स्वामित्व अलग-अलग बैंकों अथवा बैंक समूहों के विभेदक कार्य-निष्पादन को समझाने का एक महत्त्वपूर्ण कारक हो सकता है। भिन्न-भिन्न स्वामित्व के रूपों का सहारा लेकर निर्मित बैंकों के अलग-अलग कार्य-कुशलता स्तरों को प्रधान-एजेंट वाले ढांचे में तलाशा जा सकता है। निजी संस्थाओं में प्रबंधक पूंजी बाज़ार के अनुशासन द्वारा अधिक प्रतिबंधित होते हैं। इसके विपरीत स्वामी के नियंत्रण के अभाव में प्रबंधन अपनी कार्य-सूची को आगे बढ़ाने की दृष्टि से और स्वतंत्र हो जाता है तथा उसे कुशल होने के लिए कुछ प्रोत्साहन भी प्राप्त होते हैं। इस तर्क के आधार पर निजी क्षेत्र के बैंकों से सार्वजनिक क्षेत्र की बैंकिंग संस्थाओं की तुलना में अधिक कार्य-कुशल होने की आशा की जा सकेगी।

9.70 हालांकि, भारत के मामले में साक्ष्य से यह पता चलता है कि कार्य-कुशलता के साथ स्वामित्व का कोई निश्चित संबंध नहीं होता। वर्ष 2006-07 के दौरान सार्वजनिक क्षेत्र के तहत स्टेट बैंक समूह सर्वाधिक कार्य-कुशल था, उसके बाद निजी क्षेत्र के नए बैंक, राष्ट्रीयकृत बैंक (सार्वजनिक क्षेत्र के तहत), विदेशी बैंक और निजी क्षेत्र के पुराने बैंक थे (सारणी 9.22 देखें)। हालांकि, कभी-कभी समेकित सूचना समूह का गठन करने वाले किसी एक बैंक के स्तर पर भारी अंतर होने के कारण भ्रामक हो सकती है। विशेष रूप से, जैसाकि इसके पहले उल्लेख किया गया है, विदेशी बैंक समूह अत्यंत विषम जातीय है। अतः स्वामित्व और कार्य-कुशलता के बीच संबंध का किसी एक बैंक के स्तर पर अधिक सुस्पष्ट ढंग से मूल्यांकन किया जा सकता है। आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण की कार्य-कुशलता के विश्लेषण से यह पता चलता है कि सर्वाधिक कार्य-कुशल बैंक सार्वजनिक और निजी क्षेत्र, दोनों ही में पाए जा सकते हैं। कुल मिलाकर सत्रह सर्वाधिक कुशल बैंक हैं जो सार्वजनिक, निजी और विदेशी बैंक समूहों से सबधित हैं। वास्तव में, समस्त 28 सबसे कम कार्य-कुशल बैंक निजी क्षेत्र में (पुराने निजी अथवा विदेशी) हैं (चार्ट IX.22 और सारणी 9.26)। इससे यह पता चलता है कि भारतीय संदर्भ में, स्वामित्व और आकार के बीच संबंध महत्त्वपूर्ण नहीं है।

*भारत में बैंकों की कार्य -कुशलता में अंतर का पता कैसे चलता है?*

9.71 पिछले खण्ड में हमने बैंकिंग क्षेत्र के साथ ही विविध बैंक समूहों की कार्य-कुशलता का मूल्यांकन किया है। जैसा कि कई एक अन्य देशों में होता है, विविध बैंक समूहों और अलग-अलग बैंकों की कार्य-कुशलता के स्तरों में भिन्नता पाई गई थी। अंतरराष्ट्रीय संदर्भ में, सामग्री का एक ऐसा विपुल भंडार मौजूद होता है, जो इस बात का स्पष्टीकरण उपलब्ध कराता है कि देश के भीतर और विभिन्न देशों में कार्य- कुशलता के स्तर भिन्न-भिन्न क्यों हो सकते हैं (बॉक्स IX.7)।

**चार्ट IX.22: कार्य -कुशलता और स्वामित्व**

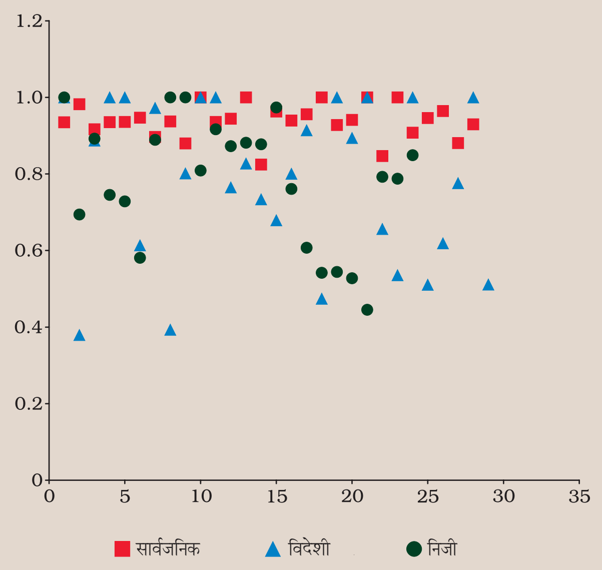


9.72 जबकि उन कारकों के बारे में कोई आम राय नहीं हैं, जो कार्य कुशलता में अंतर्निहित अंतर को स्पष्ट करें, तथापि दो विशिष्ट कारकों पर प्रायः बहस की जाती रही है, ये कारक हैं आकार और विविधीकरण अर्थात क्या बड़े और विविधीकृत बैंक अपेक्षाकृत छोटे और विशिष्टीकृत बैंकों की तुलना में अधिक कार्य-कुशल होते हैं (बॉक्स IX.7)। ये दो पहलू इस समेकन प्रक्रिया की दृष्टि से और भी महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं, जिसे कई देशों में कार्यान्वित किया जा रहा है। वास्तव में संपूर्ण विश्व में कार्यान्वित की जा रही समेकन की प्रक्रिया के पीछे निहित एक कारण है बड़े पैमाने की किफायतें लाना। इसी प्रकार बैंक गैर-परंपरागत क्रियाकलापों में विविधीकरण कर रहे हैं, ताकि वे अर्थव्यवस्था के बड़े पैमाने पर प्रसार का लाभ उठा सकें। अनुसंधानकर्ताओं ने लागतपरक कार्य-कुशलता के अभिलाभों को बहुविध उत्पाद लाइनों के संयोजन से जुड़ा पाया है। एक, इस प्रकार की सामान्य सूचना प्रणाली वाला एक विविधीकृत बैंक, जिसका उपयोग सभी उत्पाद लाइनों में किया जा सके, सूचना एकत्रित करने की लागत केवल एक बार ही वहन करता है। दो, सुपुर्दगी, विपणन और भौतिक निविष्टियों को सेवाओं के अपेक्षाकृत बड़े सेट का निर्माण करने हेतु उत्पादन में संयोजित किया जा सकता है। अंतिम बात जब विभिन्न सेवाओं में निहित जोखिम अपूर्ण रूप से सह-संबद्ध हो, तो उस स्थिति में विविधीकृत जोखिम संविभाग के माध्यम से जोखिम प्रबंधन में किफायत की संभाव्यता होती है। विविधीकृत संगठन का लाभ भी इस दृष्टि से कम अस्थिर हो सकता है कि वे अपनी जोखिम और राजस्व लाभों को कुशलतापूर्वक विशाखित कर सकते हैं। हालांकि, बड़े पैमाने पर किफायत और अर्थव्यवस्था के बड़े पैमाने पर प्रसार, दोनों ही का अनुभवजन्य साक्ष्य मिश्रित होता है।

9.73 भारत में भी, बैंक भिन्न-भिन्न आकारों वाले हैं। उनके आकार चाहे जैसे भी क्यों न हों, बैंकों ने व्यापारी बैंकिंग, बीमा और कतिपय अन्य

## सारणी 9.26 : बैंकों की कार्य-कुशलता श्रेणी

| क्रम सं. | कार्य-कुशलता श्रेणी | कार्य-कुशलता अंक (1- सर्वाधिक कुशल) (0- सबसे कम कुशल) | बैंक समूह | क्रम सं. | कार्य-कुशलता श्रेणी | कार्य-कुशलता अंक (1- सर्वाधिक कुशल) (0- सबसे कम कुशल) | बैंक समूह |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 |
| 1 | 1 | 1.000 | सार्वजनिक क्षेत्र | 41 | 25 | 0.894 | विदेशी बैंक |
| 2 | 1 | 1.000 | सार्वजनिक क्षेत्र | 42 | 26 | 0.892 | निजी क्षेत्र |
| 3 | 1 | 1.000 | सार्वजनिक क्षेत्र | 43 | 27 | 0.889 | निजी क्षेत्र |
| 4 | 1 | 1.000 | सार्वजनिक क्षेत्र | 44 | 28 | 0.888 | विदेशी बैंक |
| 5 | 1 | 1.000 | सार्वजनिक क्षेत्र | 45 | 29 | 0.882 | निजी क्षेत्र |
| 6 | 1 | 1.000 | निजी क्षेत्र | 46 | 30 | 0.881 | सार्वजनिक क्षेत्र |
| 7 | 1 | 1.000 | निजी क्षेत्र | 47 | 31 | 0.880 | सार्वजनिक क्षेत्र |
| 8 | 1 | 1.000 | निजी क्षेत्र | 48 | 32 | 0.877 | निजी क्षेत्र |
| 9 | 1 | 1.000 | विदेशी बैंक | 49 | 33 | 0.873 | निजी क्षेत्र |
| 10 | 1 | 1.000 | विदेशी बैंक | 50 | 34 | 0.849 | निजी क्षेत्र |
| 11 | 1 | 1.000 | विदेशी बैंक | 51 | 35 | 0.847 | सार्वजनिक क्षेत्र |
| 12 | 1 | 1.000 | विदेशी बैंक | 52 | 36 | 0.827 | विदेशी बैंक |
| 13 | 1 | 1.000 | विदेशी बैंक | 53 | 37 | 0.825 | सार्वजनिक क्षेत्र |
| 14 | 1 | 1.000 | विदेशी बैंक | 54 | 38 | 0.809 | निजी क्षेत्र |
| 15 | 1 | 1.000 | विदेशी बैंक | 55 | 39 | 0.801 | विदेशी बैंक |
| 16 | 1 | 1.000 | विदेशी बैंक | 56 | 40 | 0.801 | विदेशी बैंक |
| 17 | 1 | 1.000 | विदेशी बैंक | 57 | 41 | 0.793 | निजी क्षेत्र |
| 18 | 2 | 0.982 | सार्वजनिक क्षेत्र | 58 | 42 | 0.788 | निजी क्षेत्र |
| 19 | 3 | 0.974 | निजी क्षेत्र | 59 | 43 | 0.776 | विदेशी बैंक |
| 20 | 4 | 0.972 | विदेशी बैंक | 60 | 44 | 0.765 | विदेशी बैंक |
| 21 | 5 | 0.965 | सार्वजनिक क्षेत्र | 61 | 45 | 0.761 | निजी क्षेत्र |
| 22 | 6 | 0.963 | सार्वजनिक क्षेत्र | 62 | 46 | 0.745 | निजी क्षेत्र |
| 23 | 7 | 0.956 | सार्वजनिक क्षेत्र | 63 | 47 | 0.734 | विदेशी बैंक |
| 24 | 8 | 0.947 | सार्वजनिक क्षेत्र | 64 | 48 | 0.729 | निजी क्षेत्र |
| 25 | 9 | 0.946 | सार्वजनिक क्षेत्र | 65 | 49 | 0.694 | निजी क्षेत्र |
| 26 | 10 | 0.944 | सार्वजनिक क्षेत्र | 66 | 50 | 0.679 | निजी क्षेत्र |
| 27 | 11 | 0.941 | सार्वजनिक क्षेत्र | 67 | 51 | 0.656 | विदेशी बैंक |
| 28 | 12 | 0.939 | सार्वजनिक क्षेत्र | 68 | 52 | 0.619 | विदेशी बैंक |
| 29 | 13 | 0.937 | सार्वजनिक क्षेत्र | 69 | 53 | 0.613 | विदेशी बैंक |
| 30 | 14 | 0.936 | सार्वजनिक क्षेत्र | 70 | 54 | 0.607 | निजी क्षेत्र |
| 31 | 15 | 0.936 | सार्वजनिक क्षेत्र | 71 | 55 | 0.581 | निजी क्षेत्र |
| 32 | 16 | 0.936 | सार्वजनिक क्षेत्र | 72 | 56 | 0.544 | निजी क्षेत्र |
| 33 | 17 | 0.935 | सार्वजनिक क्षेत्र | 73 | 57 | 0.542 | निजी क्षेत्र |
| 34 | 18 | 0.930 | सार्वजनिक क्षेत्र | 74 | 58 | 0.536 | विदेशी बैंक |
| 35 | 19 | 0.928 | सार्वजनिक क्षेत्र | 75 | 59 | 0.528 | निजी क्षेत्र |
| 36 | 20 | 0.917 | सार्वजनिक क्षेत्र | 76 | 60 | 0.511 | विदेशी बैंक |
| 37 | 21 | 0.917 | निजी क्षेत्र | 77 | 61 | 0.511 | विदेशी बैंक |
| 38 | 22 | 0.914 | विदेशी बैंक | 78 | 62 | 0.474 | विदेशी बैंक |
| 39 | 23 | 0.908 | सार्वजनिक क्षेत्र | 79 | 63 | 0.445 | निजी क्षेत्र |
| 40 | 24 | 0.897 | सार्वजनिक क्षेत्र | 80 | 64 | 0.393 | विदेशी बैंक |
| | | | | 81 | 65 | 0.379 | विदेशी बैंक |

शुल्क आधारित क्रियाकलापों[6] में विविधीकरण किया है, अतः, इस खंड में हम विशिष्ट रूप से इस बात की जांच करेंगे कि भारत में बड़े और अधिक विविधीकृत बैंक अधिक कार्य-कुशल हैं अथवा नहीं। इसके अलावा, चूंकि अनर्जक आस्तियों का स्तर बैंक के कार्य-निष्पादन में एक अवरोध होता है, इसलिए इस बात की भी जांच की गई है कि क्या बड़ी अनर्जक आस्तियों वाले बैंक कम कार्य-कुशल होते हैं। ये अन्वेषण आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण से प्राप्त तकनीकी कार्य कुशलता अंकों का उपयोग करते हुए किए गए हैं। एक ओर कार्य-कुशलता और दूसरी ओर आकार, गैर-ब्याजगत आय द्वारा मापित विविधीकरण तथा अनर्जक आस्तियों के बीच संबंध की तुलना करने हेतु प्रकीर्ण रेखाचित्र और श्रेणीगत सह-संबद्ध का उपयोग किया गया है।

*कार्य-कुशलता और बैंक का आकार*

9.74 जैसा कि सिद्धांत से पता चलता है, भारत में ऐसा लगता है कि आकार का बैंकों की कार्य-कुशलता से महत्त्वपूर्ण संबंध होता है। आकार और कार्य-कुशलता में उच्च स्तरीय सकारात्मक संबंध होते हैं (बॉक्स IX.8, चार्ट IX.23)। इसका अभिप्राय यह है कि सामान्य रूप से बड़े आकार वाले बैंक छोटे आकार वाले बैंकों की तुलना में अधिक कार्य-कुशल होते हैं। कुल आस्तियों द्वारा मापित आकार तथा कार्य-कुशलता के बीच श्रेणीगत सहसंबंध क्रमशः 1992,1998 और 2007 में 0.74,0.55 और 0.55 था ।

*कार्य-कुशलता और विविधीकरण*

9.75 आर्थिक और प्रौद्योगिक शक्तियों द्वारा उत्प्रेरित वित्तीय नवोन्मेषों ने मध्यस्थता के नये रूपों और ऋण प्रतिभूतिकरण, सहायक ऋणव्यवस्था और वित्तीय व्युत्पन्नियों जैसी परम्परागत रूप से तुलनपत्र में शामिल न की जानेवाली अन्य शुल्क-आधारित गतिविधियों का सृजन किया है। इस प्रकार तुलनपत्र में शामिल न की जाने वाली गतिविधियों को छोड़कर बैंक की कार्य-कुशलता के परंपरागत माप किसी बैंक की स्थिति का यथार्थपरक मूल्यांकन नहीं उपलब्ध करा सकते (सीम्स और क्लार्क, 1997)।[7] इन दिनों, तुलनपत्र में शामिल न किए जानेवाले एक्सपोज़रवाले भारतीय बैंकों में भी बढ़ते जा रहे हैं।

9.76 जैसा कि क्रमशः 1992, 1998 और 2007 के 0.67, 0.55 और 0.61 के श्रेणीगत सह-संबंध गुणांकों से पता चलता है, भारत में बैंकों की कार्य-कुशलता के साथ विविधीकरण में भी महत्वपूर्ण सह-संचालन होता लगता है। इस प्रकार जिन बैंकों ने विविध प्रकार की अन्य वित्तीय सेवाओं में विविधीकरण किया है और जो अधिक शुल्क-आधारित आय अर्जित करते हैं, आनुपातिक रूप से अधिक कार्य-कुशल हैं (चार्ट IX.24)।

*कार्य-कुशलता और अनर्जक आस्तियां*

9.77 निवल अनर्जक आस्तियों के कार्य-कुशलता के साथ नकारात्मक संबंध प्रदर्शित करने की आशा की जाती है। हालांकि भारतीय संदर्भ में जैसाकि प्रकीर्ण रेखाचित्र और श्रेणीगत सह-संबंध गुणांकों से पता चलता है, उनका कार्य-कुशलता के साथ कोई सुस्पष्ट संबंध नही दिखाई देता। श्रेणीगत सह-संबंध गुणांक ऋणात्मक होते हैं किंतु वे इतने अधिक महत्वपूर्ण नहीं होते कि उनसे दोनों परिवर्तियों के बीच कोई सुदृढ़ संबंध स्थापित हो सके( चार्ट IX.25)।

9.78 एक ऐसी कठोर विधि (पैनल न्यूनतम वर्ग अनुमान, जो विविध बैंक वर्गों के कई वर्षों तक के संबंधों को ध्यान में रखती है) के माध्यम से भारत में कार्य-कुशलता के तत्वों का पता लगाने का भी प्रयास किया गया है। उक्त विश्लेषण से इसके पूर्व वाले उन निष्कर्षों की पुष्टि हो जाती है कि कार्य-कुशलता को प्रभावित करने की दृष्टि से आकार और विविधीकरण महत्त्वपूर्ण कारक होते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि बड़े और सुविविधीकृत बैंक छोटे और उतनी अच्छी तरह से विविधीकृत न हुए बैंकों की तुलना में अधिक कार्य-कुशल होते हैं, जिससे भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में बड़े पैमाने की किफायतों और अर्थव्यवस्था के बड़े पैमाने पर प्रसार का पता चलता है। हालांकि, पश्चगमन विश्लेषण से भी अनर्जक आस्तियों के आकार और कार्य-कुशलता के बीच नकारात्मक संबंधों की पुष्टि हो जाती है (बॉक्स IX.9)।

**उत्पादकता की माप**

9.79 जैसा कि इसके पूर्व उल्लेख किया जा चुका है उत्पादकता इस बात की माप होती है कि बैंकिंग इकाई अपने इनपुटों को कितनी कार्य-कुशलता से आउटपुटों के रूप में बदल देती है। जब कोई फर्म किसी एकल आउटपुट का निर्माण करने हेतु किसी एकल इनपुट का उपयोग करती है, तो उसके इनपुट की तुलना में उसके आउटपुट का सहज रूप से अनुपात निकाल कर उत्पादकता के स्तर की गणना कर लेना अपेक्षाकृत सरल होता है। हालांकि, किसी ऐसे बैंक के मामले में जो कई एक इनपुटों और आउटपुटों का उपयोग करता है, इस प्रकार का अनुपात उत्पादकता की केवल एक ऐसी आंशिक माप ही उपलब्ध कराएगा, जो उपयोग में लाए गए अन्य इनपुटों में भिन्नताओं की उपेक्षा कर देगा। इस परिसीमा पर काबू पाने के लिए उत्पादकता को कुल उपादान उत्पादकता के समग्र सूचकांक का परिकलन कर के मापा जा सकता है। इस प्रकार के मामलों में उत्पादकता के सूचकांकों की गणना करने की एक पद्धति है माल्मक्विस्ट उत्पादकता सूचकांक (बॉक्स IX.10)।

9.80 बैंकिंग क्षेत्र और उसके साथ ही विविध प्रकार के बैंक समूहों के उत्पादकता अंकों से यह पता चलता है कि उत्पादकता में सभी

[6] कारोबार का विविधीकरण उसी संगठन में उस समय हो सकता है, जब वह अनुमेय गैर-बैंकिंग क्रियाकलाप शुरू करे अथवा यह समूह स्तर पर भी उस समय किया जा सकता है, जब कोई बैंक गैर-बैंकिंग क्रियाकलाप आरंभ करने हेतु अलग से सहायक कम्पनियां गठित करे। इस खण्ड में विविधीकरण से आशय है, संगठन के भीतर ही ऐसे गैर-परंपरागत क्रियाकलाप आरंभ करना, जो कार्य-कुशलता के दृष्टिकोण से अधिक प्रासंगिक हों।

[7] यह देखने में आया है कि तुलन पत्र में शामिल की जानेवाली मदों को हिसाब में लिए जाने के बाद कुल आस्तियों में 25 मिलियन अमरीकी डालर से अधिक वाले आकार-वर्ग के बैंको के बीच कार्य-कुशलता से सम्बंधित कोई अंतर नहीं है।

## बॉक्स IX.7
## विभिन्न बैंकों की कार्य-कुशलता में अंतर के कारण क्या हैं? एक अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य

बैंकिंग संस्थाओं की मापित कार्य-कुशलता में अंतर व्यापक रूप से निम्नलिखित कारणों से पैदा होते हैं (i) प्रयुक्त भिन्न-भिन्न कार्य-कुशलता संकल्पनाएं; (ii) कार्य-कुशलता का अनुमान लगाने के लिए प्रयुक्त भिन्न-भिन्न माप पद्धतियां; और (iii) कई प्रकार के अन्य बहिर्जात और अन्तर्जात कारक। मापित कार्य-कुशलता में अंतर का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है, उपयोग में लाई जाने वाली कार्य कुशलता की भिन्न-भिन्न संकल्पनाएं तथा कार्य-कुशलता की जांच करने हेतु प्रयोग में लाई जाने वाली माप की पद्धतियां। सभी प्रकार के अध्ययनों में कार्य-कुशलता के अनुमानों को आंकड़ों के स्रोत तथा अध्ययनों में प्रयुक्त कार्य-कुशलता की संकल्पनाओं और माप की पद्धतियों के आधार पर पर्याप्त पाया गया है। बर्जर और हम्फ्री (1997) ने 21 देशों के बहुविध समयावधियों वाले और बैंकों, बैंक शाखाओं, बचतों और ऋणों, साख संघों तथा बीमा कंपनियों सहित विविध प्रकार की संस्थाओं के आंकड़ों का उपयोग करते हुए वित्तीय संस्थाओं की कार्य-कुशलता के संबंध में 130 अध्ययनों को प्रलेखित किया है । वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि आंकड़ों के समूहों से कार्य-कुशलता को मापा जाता है, उनमें विद्यमान अंतर इस बात के निर्धारण को लगभग असंभव बना देते हैं कि इन अध्ययनों के परिणामों की दृष्टि से कार्य-कुशलता की विभिन्न संकल्पनाएं, माप की तकनीकें और अन्य कारक कितने महत्त्वपूर्ण होते हैं। हालांकि, एक अन्य अध्ययन, जिसमें तीन भिन्न-भिन्न कार्य-कुशलता संकल्पनाओं (लागत, लाभ और वैकल्पिक लाभ की कार्य-कुशलता) पर कई प्रकार की अलग-अलग कार्य-कुशलता माप पद्धतियों के प्रभाव का पता लगाया गया था, का निष्कर्ष यह था कि माप तकनीकों, विभिन्न कार्यपरक रूपों और अन्य परिवर्तियों के संबंध में अपनाए गए विकल्पों का कार्य-कुशलता पर बहुत कम प्रभाव होता है (बर्नर और मेस्टर, 1997)।

संकल्पनात्मक और माप पद्धतियों के अलावा, ये अंतर कतिपय अन्य, बहिर्जात और अंतर्जात, दोनों ही प्रकार के कारकों के कारण पैदा होते हैं। विनियामक परिवेश में अंतर विभिन्न देशों के बैंकों के कार्य-निष्पादन में महत्त्वपूर्ण कारक सिद्ध हो सकते हैं। अपेक्षाकृत कम प्रतिबंधों वाले देशों में स्थित बैंकों से अधिक प्रतिबंध वाले देशों के बैंकों की अपेक्षा अधिक कार्य-कुशल होने की आशा की जाती है। जिस बाज़ार में बैंक परिचालन करते हैं, उसकी प्रतिस्पर्धात्मक स्थितियां भी इसमें भूमिका निभाती हैं। यह आशा की जाती है कि बाज़ार की शक्ति लागतपरक कार्य-कुशलता से नकारात्मकरूप से जुड़ी होती है, किंतु वह लाभ-परक कार्य-कुशलता से सकारात्मक रूप से संबद्ध होती है। कम प्रतिस्पर्धा करके बाज़ारों में बैंक उनकी सेवाओं के लिए अपेक्षाकृत अधिक प्रभार वसूल कर सकते हैं, किंतु उन्हें लागत को कम रखने में दबाव का सामना करना पड़ सकता है। अनुभव के आधार पर यह देखने में आया है कि बैंकिंग प्रणाली जितनी ही अधिक प्रतिस्पर्धात्मक होती है, वह उतनी ही अधिक कार्य-कुशल होती है। इस प्रकार, संकल्पनात्मक और मापन पद्धति के अलावा, विनियामक परिवेश और प्रतिस्पर्धात्मक स्थितियां विश्व भर की बैंकिंग संस्थाओं की कार्य-कुशलता में अंतर का महत्त्वपूर्ण स्रोत होती लगती हैं।

सभी घरेलू बैंकों के मामले में बहिर्जात स्थितियां एक जैसी ही होंगी। अतः एक ही देश में भिन्न-भिन्न बैंकों की कार्य-कुशलता में अंतर का कारण अंतर्जात कारक हो सकते हैं। कार्य-कुशलता को प्रभावित करने वाले कुछेक महत्त्वपूर्ण कारक होते हैं वित्तीय पूंजी, आकार, प्रदान की जाने वाली सेवा की गुणवत्ता, देयताओं का विन्यास और अनर्जक ऋण। किसी बैंक के दिवालियेपन की जोखिम हानियों को अवशोषित करने हेतु उपलब्ध वित्तीय पूंजी पर आश्रित होती है । दिवालियेपन की जोखिम उस जोखिम प्रीमियम के माध्यम से बैंकों की लागत और लाभ को प्रभावित करती है, जो बैंक को गैर-बीमित ऋण हेतु भुगतान करना होता है। जोखिम के अलावा, किसी बैंक की पूंजी का स्तर ऋणों के निधीयन के स्रोत के रूप में जमाराशियों का एक विकल्प उपलब्ध कराते हुए प्रत्यक्ष रूप से लागतों को प्रभावित करता है। ऋणों पर प्रदत्त ब्याज की गणना लागत के रूप में की जाती है, किंतु प्रदत्त लाभांशों की नहीं। दूसरी ओर, इक्विटी जुटाने में जमाराशियां जुटाने की अपेक्षा विशिष्ट रूप से अधिक लागत आती है। पहले प्रभाव के प्रबल होने पर मापित लागतें उन बैंकों के मामले में अपेक्षाकृत अधिक होंगी, जो उनकी अधिकांश मात्रा का उपयोग ऋण वित्तीयन हेतु करते हैं। दूसरे प्रभाव के प्रबल होने पर इन बैंकों के लिए मापित लागतें अपेक्षाकृत कम होंगी। कुछ बैंकों के अधिक जोखिम विमुख होने पर भी (कार्य-कुशलता में) अंतर आ सकता है, क्योंकि वे वित्तीय पूंजी की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा को रोके रख सकते हैं, वे अन्यों की अपेक्षा लाभ को अधिकतम अथवा लागत को न्यूनतम कर सकते हैं। इस प्रकार, बैंकों के पूंजी विन्यास में जिस सीमा तक अंतर होगा, वह कार्य कुशलता में उतनी ही सीमा तक का ऊर्ध्वमुखी या अधोमुखी झुकाव ला सकता है। अमरीका में किए गए कतिपय अध्ययनों से यह पता चलता है कि सुपूंजीकृत बैंक अधिक कार्य-कुशल होते हैं। यही बात विपरीत क्रम में भी लागू हो सकती है, क्योंकि कम कार्य-कुशल संस्थाओं का लाभ अपेक्षाकृत कम होता है, उनके पास अपेक्षाकृत कम पूंजी होती है।

सामान्यतया आकार बड़े पैमाने की किफायतों के कारण अपेक्षाकृत अधिक कार्य-कुशलता से संबंधित होता है। बड़े बैंक प्रौद्योगिकी को लागू करने और लागत कम करने की दृष्टि से छोटे बैंकों की अपेक्षा बेहतर स्थिति में होते हैं। सूचना संसाधन में सुधार से अपेक्षाकृत बड़े बैंकों के मामले में छोटे व्यावसायिक ऋण प्रदान करने से सबंधित लागतों में कमी लाई जा सकती है। इसी प्रकार, उन्नत स्वचालन भी बड़े बैंकों को अधिक खर्चीली ईंट और गारे वाले शाखा कार्यालय खोलने के स्थान पर एटीएम मशीनें संस्थापित करते हुए अपेक्षाकृत त्वरित गति और न्यूनतर लागत पर विस्तार करने की सुविधा प्रदान करता है। बड़े बैंक व्युत्पन्नी संविदाओं और तुलनपत्र में शामिल न किए जाने वाले अन्य क्रियाकलापों जैसे वित्तीय इंजीनियरी के नए साधनों का लाभ उठाने की दृष्टि से बेहतर स्थिति में होते हैं। बड़ा आकार विविधीकरण के लाभ भी प्रदान करता है क्योंकि वह बैंकों को लागत को सभी उत्पादों में बाटने (बड़े पैमाने की किफायत) का लाभ प्रदान करता है। आम तौर पर बड़े बैंकों के पास बड़ी पूंजी भी होती है और जैसाकि इसके पूर्व उल्लेख किया गया है, बेहतर रूप से पूंजीकृत बैंक अधिक कार्य-कुशल होते हैं। हालांकि, अनुभवजन्य साक्ष्य से आकार और कार्य कुशलता के बीच किसी सुसंगत सबंध का पता नहीं चलता। जहां एक अध्ययन में आकार और कार्य-कुशलता के बीच महत्त्वपूर्ण सकारात्मक संबंध का पता चला (बर्जर और अन्य, 1993), वहीं कुछ अन्य अध्ययनों में आकार और कार्य-कुशलता के बीच महत्त्वपूर्ण नकारात्मक संबंध परिलक्षित हुए (हर्मेलिन और वैलस, 1994, कापराकिस और अन्य, 1994)। इसके बावजूद कुछ अन्य अध्ययनों में आकार और कार्य-कुशलता के बीच महत्वहीन सबंध देखने में आए [(सेबेनॉयन और अन्य (1993); मेस्टर(1993); और पी.एल. तिम्मे (1993)]। इसके अलावा एक अन्य अध्ययन में यह भी पता चला है कि कार्य-कुशलता संबंधी माप बड़ी फर्मों के वित्तीयन के प्रति बहुत कम संभाव्यता मान की प्रवृत्तियां दर्शाते हैं। यह पाया गया कि बैंक जैसे-जैसे बड़े होते जाते हैं, वैसे-वैसे वे लागतों को नियंत्रित करने में भी समान रूप से समर्थ होते जाते हैं, किंतु कार्य-कुशलता के साथ राजस्व निर्माण करना अपेक्षाकृत कठिन हो जाता है।

*(जारी....)*

*(...जारी)*

इस प्रकार आकार और कार्य-कुशलता संबंधी अनुभवजन्य साक्ष्य मिले जुले हैं (बॉक्स IX.9 भी देखें)।

अंतर का एक अन्य स्रोत अनर्जक ऋणों का स्तर भी हो सकता है। अनर्जक ऋण और ऋणगत हानियां नकारात्मक आर्थिक आघातों (दुर्भाग्य) अथवा अंतर्जात चाहे वह इसलिए हों कि प्रबंधन अकुशल है (खराब प्रबंधन) या इसलिए कि उसने ऋण प्रवर्तन और निगरानी (कृपणता) की लागतों में कमी करते हुए अल्पावधिक खर्चों में कटौती करने का सोचा-समझा निर्णय लिया है, द्वारा कारित होने पर बहिर्जात होती हैं। समस्या-मूलक ऋण वाले बैंकों की लागतें अधिक और लाभ कम होते हैं, जो खराब प्रबंधन की परिकल्पना से सुसंगत होते हैं। कृपणता की परिकल्पना -जिसके तहत अनर्जक ऋणों को ऋण की निगरानी और उस पर नियंत्रण रखने हेतु कम प्रयास किए जाने का विकल्प चुनते हुए कम लागतों से संबद्ध किया जा सकता है - का सामान्य रूप से आंकड़ों द्वारा समर्थन नहीं किया गया अथवा उसके परिणाम खराब प्रबंधन के प्रभावों द्वारा अभिभूत हो गए। इसका तात्पर्य यह है कि कृपणता की परिकल्पना के बारे में अधिक साक्ष्य मौजूद नहीं हैं। इस प्रकार मोटे तौर पर इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि कम अनर्जक ऋणों वाले बैंक अधिक कार्य कुशल होते हैं।

गुणवत्ता में गैर-मापित अंतर भी मौजूद होते हैं, क्योंकि बैंकिंग आंकड़ों में बैंकों के आउटपुट में विद्यमान विजातीयता पूरी तरह से शामिल नहीं होती। उदाहरण के लिए वाणिज्यिक ऋण अन्य बातों के साथ-साथ आकार, चुकौती कार्यक्रम, जोखिम, सूचना की पारदर्शिता, संपार्श्विकों के प्रकार तथा प्रवृत्त की जानेवाली प्रसंविदा की दृष्टि से अलग-अलग प्रकार के होते हैं। इन अंतरों द्वारा ऋण के प्रवर्तन, चालू निगरानी और नियंत्रण तथा वित्तीयन खर्चों के रूप में बैंक द्वारा वहन की जाने वाली लागतों को प्रभावित किए जाने की संभावना होती है। उत्पाद की गुणवत्ता में गैर-मापित अंतरों को लागत की अकुशलता में अंतरों के रूप में गलत ढंग से मापा जा सकता है। कम से कम इस स्पष्टीकरण का एक अंश सेवा की गुणवत्ता अथवा बाज़ार की शक्तियों के अलग-अलग स्तरों में निहित हो सकता है। तात्पर्य यह है कि यदि कुछ बैंक इस प्रकार की गुणवत्ता वाली सेवाएं प्रदान कर रहे हैं, जिनकी मांग अधिक है और इसलिए वे अधिक मूल्य वसूल करने में समर्थ हैं अथवा यदि कुछ बैंक बाज़ार की शक्तियों का प्रयोगकर ऋण की अपेक्षाकृत अधिक कीमतों के माध्यम से पर्याप्त रूप से लाभ बढ़ाने में समर्थ हैं, तो इससे कार्य-कुशलता में अधिक बढ़ोत्तरी होगी।

इस बात के प्रमाण सीमित ही हैं कि अधिक संकेंद्रित बाज़ारों में परिचालन करने वाले बैंक कम कार्य-कुशल होते हैं। विलयन और अभिग्रहण के प्रभाव के संबंध में अनुभवजन्य निष्कर्ष भी मिश्रित ही हैं। सभी विलयनों से कार्य-कुशलता और लाभप्रदता में असंदिग्ध रूप से सुधार नहीं हुआ है (रॉड्स, 1995)। तथापि, इस तथ्य से कि कुछ मामलों में विलयनों/समामेलनों की गतिविधियों के परिणामस्वरूप कार्य-कुशलता में सुधार आया है, यह पता चलता है कि विलयन और समामेलन गतिविधि एक ऐसा कारक है जो कार्य-कुशलता में अंतर को स्पष्ट कर सकता है। अनुभवजन्य निष्कर्षों से यह पता चलता है कि कई स्तरों वाली नियंत्रक कंपनियों के अधिक जटिल ढांचे से बैंक की कार्य-कुशलता को कोई हानि नहीं होती। उक्त साक्ष्य से यह भी पता चलता है कि सब कुछ सामान होने के बावजूद सार्वजनिक रूप से जिन बैंको में ट्रेडिंग होती है, वे अधिक कार्य-कुशल हैं। प्रबंधकीय योग्यता और कॉरपोरेट अभिशासन व्यवहारों में अंतर भी कार्य-कुशलता में विद्यमान अंतर को स्पष्ट करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होते हैं।

**संदर्भ :**


बर्जर, ए.एन..डी.हैंकॉक और डी.बी.हम्फ्री, 1993, ''बैंक एफिसिएन्सी डिराइव्ड फ्रॉम दि प्रॉफिट फंक्शन'' जर्नल आफ बैंकिंग एण्ड फाइनैन्स, 17, 317-47।

बर्जर, ए.एन., हम्फ्री, डी.बी., (1997), एफिसिएन्सी ऑफ फाइनैन्सियल इन्स्टीट्यूशन्स, इंटरनेशनल सर्वे एण्ड डाइरेक्शन्स फॉर फ्यूचर रिसर्च. यूरोपियन जर्नल ऑफ ऑपरेशनल रिसर्च 98।

बर्जर ए.एन., और एल.जे.मेस्टर, 1997, ''इनसाइड दि ब्लैक बॉक्सःव्हाट एक्सप्लेन्स डिफरेन्सेज इन दि एफिसिएन्सीज ऑफ फाइनैन्सियल इंस्टीट्यूशन्स'', जर्नल ऑफ बैंकिंग एण्ड फाइनैन्स.21:895-947।

सेबेनेयॉन, ए.एस.,कूपरमैन, ई.एस.,रजिस्टर, सी.ए.हडगिन्स, एस.सी, 1993. दि रिलेटिव एफिसिएन्सी ऑफ स्टॉक वर्सेज म्यूच्युअल एस एण्ड एल : ए, स्टॉकैस्टिक फ्रन्टियर एप्रोच, जर्नल ऑफ फाइनैन्सियल सर्विसेज रिसर्च 7।

हमैंलिन,बी.ई., वैलेस, एन.ई.,1994. दि डिटर्मिनैंट्स ऑफ एफिसिएन्सी एण्ड साल्वेन्सी इन सेविंग्स एण्ड लोन्स. आर एण्ड जर्नल ऑफ इकॉनॉमिक्स, 25।

कपराकिस, ई.आइ.,मिलर, एस.एम.,नौलस, ए.जी., 1994, शार्ट रन कॉस्ट इनएफिसिएन्सी ऑफ कॉमर्सियल बैंक्स : ए फ्लेक्सिबल स्टॉकैस्टिक फ्रन्टियर एप्रोच, जर्नल ऑफ मनी, क्रेडिट एण्ड बैंकिंग 26 ।

मेस्टर एल.जे. 1993, एफिसिएन्सी इन दि सेविंग्स एण्ड लोन इंडस्ट्री, जर्नल ऑफ बैंकिंग एण्ड फाइनैन्स 17।

पी.आइ.एल., टिम्मे, एस.जी., 1993 कॉरपोरेट कन्ट्रोल एण्ड बैंक एफिसिऐन्सी, जर्नल ऑफ बैंकिंग एण्ड फाइनैन्स.17।

रॉड्स, स्टीफेन ए. (1998) : एफिसिएन्सी इफेक्ट्स ऑफ बैंक मर्जर्स, ऐन ओवरव्यू ऑफ केस स्टडीज़ ऑफ नाइन मर्जर्स, जर्नल आफ बैंकिंग एण्ड फाइनैन्स, 22, 273-291।


स्तरों पर वृद्धि हुई है। उत्पादकता परिवर्तन, जो 1997-98 तक क्रमिक रूप में था, में 1997-98 के बाद गति आई। 1991-92 के स्तरों से तुलना करने पर भारतीय बैंकों की उत्पादकता में हुई वृद्धि 1997-98 तक की अवधि के दौरान 5.5 प्रतिशत की दर से थी, जबकि 2006-07 तक उसमें 43.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई। अलग-अलग बैंक समूहों की दृष्टि से सर्वाधिक बढ़ोत्तरी विदेशी बैंकों के मामले में (70.6 प्रतिशत) देखने में आई, उसके बाद निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों (44.7 प्रतिशत) और राष्ट्रीयकृत बैंकों (35.4 प्रतिशत) का स्थान था (सारणी 9.27)।

9.81 मामक्विस्ट उत्पादकता सूचकांक पर आधारित उत्पादकता से संबंधित अनुमानों को दो पारस्परिक रूप से अनन्य एवं विस्तृत घटकों में विभाजित किया जा सकता है : तकनीकी कार्य-कुशलता में परिवर्तन अर्थात एक निश्चित इनपुट हेतु आउटपुट में परिवर्तन और समय के साथ ही प्रौद्योगिकी में बदलाव अर्थात प्रौद्योगिकी सुधार अथवा तकनीकी प्रगति (नवोन्मेष)। तकनीकी कार्य-कुशलता तथा तकनीकी प्रगति से संबंधित प्रवृत्तियों से यह पता चलता है कि 1991-92 और 1997-98 के बीच वाली अवधि में बैंकिंग क्षेत्र और स्टेट बैंक समूह को छोड़कर सभी बैंक समूहों की तकनीकी कार्य-कुशलता में सुधार हुआ।

## बॉक्स IX.8
## क्या आकार महत्वपूर्ण होता है ? विभिन्न देशों के अनुभवजन्य साक्ष्य

उत्पादन लागत सिद्धान्त में एक सुविख्यात संकल्पना बड़े पैमाने पर किफायतें (लागत संकल्पना) अथवा किफायतों से प्रतिलाभ (उत्पादन संकल्पना) लागू किए जाने से सम्बन्धित होती है, जिसका तात्पर्य यह है कि क्या उत्पादन बढ़ने पर उत्पादन लागत में कमी (बड़े पैमाने पर किफायतें) आती है अथवा वृद्धि (बड़े पैमाने की फिजूलखर्ची) होती है अथवा वह अपरिवर्तित रहती है। पिछले वर्षों में अनुसंधानों में इस संकल्पना की बैंकिंग सेवाओं के उत्पादन पर प्रयोज्यता की संभावनाओं का पता लगाने का प्रयास किया गया है। अपेक्षाकृत बड़े बैंकों के किफायतों के प्रति अधिक कार्य-कुशल होने के पीछे निहित अभिप्रेरण को बड़े बैंकों में मौजूद संसाधनों की दृष्टि से अधिक कार्य-कुशल संगठन में तलाशा जा सकता है। उदाहरण के लिए छोटे बैंको में जहाँ कार्य की मात्रा को देखते हुए विशेषज्ञता की अनुमति नहीं दी जा सकती, उन्हीं मशीनों और कामगारों को आवश्यक रूप से प्रायः विभिन्न प्रकार के कार्यों में नियोजित किया जा सकता है, जैसे कि टेलर अंशकालिक रूप से चेकों की छंटाई अथवा लेखों की लेखा-परीक्षा का कार्य कर सकते हैं। दूसरी ओर, बड़े बैंक कार्यों का बंटवारा कर सकते हैं, ताकि कर्मचारियों और मशीनों का उपयोग उनके परिचालनों के किसी रूप में किया जा सके। इसी प्रकार, कम्प्यूटरों जैसे कुछ प्रकार के प्रौद्योगिकी नवोन्मेष आर्थिक रूप से बड़े बैंकों के लिए अधिक व्यवहार्य हो सकते हैं । कोलारी और जर्दकूही (1987) का कहना है कि बड़ी संख्याओं का महत्त्व एक निश्चित आकार वाली अर्थव्यवस्थाओं में महत्त्वपूर्ण होता है। बड़े बैंकों के लिए यह आवश्यक नहीं होता कि छोटे बैंकों के जितनी मात्रा में नकद शेष रखें और इसलिए उस सीमा तक बड़ी संख्याओं वाला कानून लेन-देन की मांग को समतल बना देता है। मर्फी ने अमरीकी बैंकिंग उद्योग में बड़े पैमाने की किफायतों के स्रोतों की जांच की और यह बताया कि चेकिंग खातों के संसाधन के मामले में बड़े पैमाने की किफायतें आंशिक रूप से विभिन्न प्रकार के उपकरणों का उपयोग किए जाने से तथा आंशिक रूप से श्रमिकों और मशीनों की विशेषज्ञता से उद्भूत होती हैं।

बड़े पैमाने की किफायतों का पहला व्यवस्थित अध्ययन अल्हाडेफ द्वारा आरंभ किया गया, जिसने 1938-50 की अवधि के आंकड़ों का उपयोग करते हुए विभिन्न आकार वाले कैलीफोर्नियाई शाखा और यूनिट बैंकों की लागतों की तुलना की। उक्तअध्ययन से यह पता चला है कि शाखा बैंकों ने यूनिट बैंकों की तुलना में प्रति डॉलर संसाधनों से अपेक्षाकृत अधिक उत्पादन किया। हालांकि, इन प्रारंभिक अध्ययनों की उत्पादन की माप के रूप में अर्जक आस्तियों जैसे अनन्य माप का उपयोग किए जाने हेतु आलाचना की गई, जिससे बड़े बैंकों की औसत इकाई लागत बढ़ जाती थी। स्कवीगर और मैकगी (1961) तथा ग्रैमली (1962) ने बैंकों के उत्पादन की माप के रूप में कुल आस्तियों का उपयोग किया और पाया कि छोटे बैंकों की अपेक्षा बड़े बैंकों को लागत-लाभ प्राप्त होता है। बेन्स्टन ने बैंकिंग में कॉब डगलास लागत फलन को नियत करते हुए बड़े पैमाने की किफायतों का पता लगाया। बेल और मर्फी (1968) ने शाखा व्यवस्था को यूनिट बैंकिंग परिचालनों की अपेक्षा अधिक महंगी पाया। ग्रीनबाम (1997) इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि बैंकों की आस्तियां 10 मिलियन यूएस डॉलर से अधिक हो जाने के बाद प्रति यूनिट अधिक उपरि लागतों, अधिक लेन-देन लागतों, पर्याप्त विशेषज्ञता के अभाव और सीमित विविधीकरण के कारण बड़े पैमाने की किफायतें सामान्यतया समाप्त हो गईं। हालांकि, 1980 वाले दशक के प्रारंभिक दिनों में अब तक उपयोग में लाए जा रहे कॉब डगलस उत्पादन फलन दृष्टिकोण के अधिक सुदृढ़/मीमांसात्मक विकल्प के रूप में ट्रांस्लॉग कार्यपरक व्यवस्था उभर कर सामने आ गई, क्योंकि इसमें यू-आकार वाले लागत वक्र को अपनाए जाने तथा संभाव्य किफायतों की गणना किए जाने की सुविधा थी। वेन्स्टन और अन्यों ने अमरीकी बैंकों के मामले में यू-आकार वाले लागत वक्रों का पता लगाया। 50 मिलियन अमरीकी डॉलर से अधिक की जमाराशियों वाले अमरीकी यूनिट बैंकों ने बड़े पैमाने की फिजूलखर्चियां दर्ज कीं। जबकि शाखा व्यवस्था के माध्यम से परिचालन करने वाले बैंकों में छोटी किफायतें हुईं। व्हाइट ने कनाडा में ऋण संघों (क्रेडिट यूनियनों) की उत्पादन प्रौद्योगिकी की जांच की और यह पाया कि बड़ी बहु-विध क्रेडिट यूनियनें छोटी एकल उत्पाद वाली क्रेडिट यूनियनों की तुलना में अधिक कार्य-कुशल थीं।

तथापि, बड़े पैमाने की किफायतों का सिद्धान्त उन बैंकों की संख्या से सम्बन्धित होता है, जो वर्तमान लागत और मांग की स्थितियों में परिचालन कर सकते हैं। तथापि, यह बैंकों के मौजूदा आकार वितरण के सम्बन्ध में बहुत कम जानकारी देता है।

**सन्दर्भः**

बेल, एफ. डब्ल्यू. और एन.बी.मर्फी, 1968, ''इकॉनॉमीज ऑफ स्केल एण्ड डिवीजन ऑफ लेबर इन कॉमर्शियल बैंकिंग'', सदर्न इकॉनॉमिक जर्नल, 131-139, अक्तूबर।

ग्रैमली, एल.ई. 1962 ए स्टडी ऑफ स्केल इकॉनॉमीज़ इन बैंकिंग, फेडरल रिजर्व बैंक ऑफ कन्सास सिटी, संयुक्त राज्य अमरीका।

ग्रीनबॉम, 1967, ''ए स्टडी ऑफ बैंक कॉस्ट'' नेशनल बैंकिंग रिव्यू, 415-434, जून ।

कोलारी और जर्दकूही, 1987, बैंक कॉस्ट, स्ट्रक्चर एण्ड पर्फार्मेन्स, लेक्सिंगटेन बुक्स, मास, संयुक्त राज्य अमरीका।

मर्फी, 1972 ''कॉस्ट ऑफ बैंकिंग ऐक्टिविटीज : इंटरैक्शन बिटवीन रिस्क ऐण्ड ऑपरेटिंग कॉस्ट : ए कमेन्ट'', जर्नल ऑफ मनी, क्रेडिट एण्ड बैंकिंग, 4 अगस्तः 14-15।

स्कवीगर और मैक गी, 1961, ''शिकागो बैंकिंग'', जर्नल ऑफ बिज़नेस, 34(3): 203-366।

हालांकि, विश्लेषण की अवधि को 2006-07 तक बढ़ा दिए जाने पर यह प्रवृत्ति उलटी हो जाती है। 1997-98 और 2006-07 के बीच उद्योग की तकनीकी कार्य-कुशलता में तीव्र वृद्धि हो जाने के फलस्वरूप सभी बैंक समूह इसे (तकनीकी कार्य-कुशलता) प्राप्त कर पाने में पीछे रह गए। कम्प्यूटरीकरण, जो मुख्यतः हार्डवेयरों की संस्थापना तक ही सीमित था, की दिशा में किए गए प्रयास व्यापक रूप से बही खातों और उनके समाधान में ही सरलीकृत थे। सूचना प्रौद्योगिकी की आधारभूत सुविधा प्रौद्योगिकी द्वारा प्रेरित थी न कि व्यवसाय अथवा ग्राहक आवश्यकताओं द्वारा । फलतः उस आधारभूत सुविधा, जिसकी स्थापना की गई थी, का उपयोग ग्राहकों द्वारा उस सीमा तक नहीं किया गया, जो 'ब्रेक-ईवन' की दृष्टि से आवश्यक होती है। इसलिए परिणामजन्य बढ़ते हुए लाभ बैंकों को नहीं मिल सके (भारतीय रिज़र्व बैंक, 2003; विश्व बैंक 2002)। हालांकि बढ़े हुए संभाव्य उत्पादन स्तरों तक अपेक्षाकृत धीमी पहुंच का निर्वचन सावधानीपूर्वक किए जाने की आवश्यकता है। इस बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि कार्य-कुशलता के स्तरों (तक पहुँच) में आई सुस्पष्ट कमी बढ़े हुए संभाव्य उत्पादन स्तरों के

चार्ट IX.23: कार्य-कुशलता और आकार

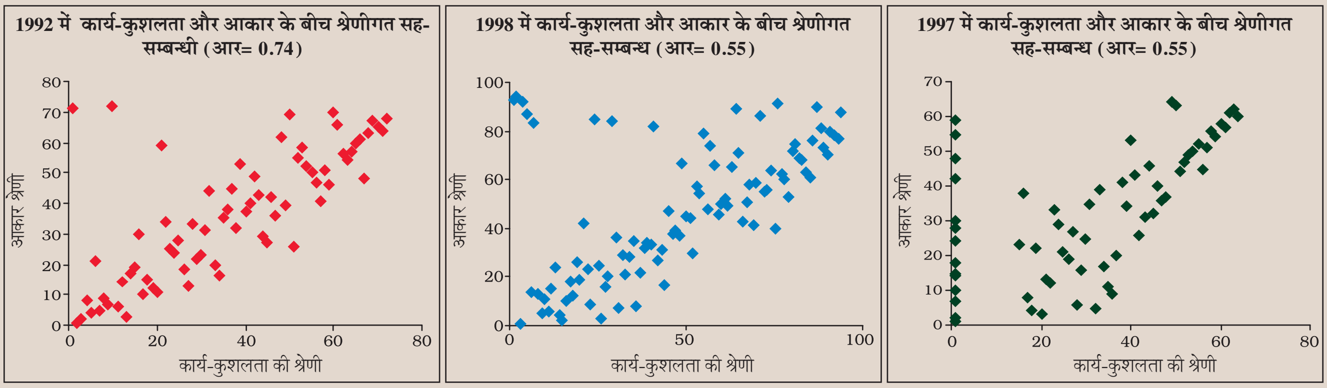


समक्ष थी। अन्यथा, जैसाकि कार्य-कुशलता से सम्बन्धित पूर्ववर्ती खण्ड में दर्शाया गया है, स्थिर बेंचमार्क अथवा सीमांत के साथ तुलना किए जाने पर कार्य-कुशलता अथवा उपयोगिता के स्तरों में महत्त्वपूर्ण सुधार हुआ (सारणी 9.25 तथा चार्ट IX.26)।

9.82 संक्षेप में कार्य-कुशलता और उत्पादकता के आर्थिक माप लेखांकन मापों के माध्यम से प्राप्त परिणामों की पुष्टि करते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि 1991-92 से लेकर 2006-07 तक की अवधि हेतु सभी बैंकों के मामले में महा सीमांत से मापे जाने पर सभी बैंकों में कार्य-कुशलता में सुधार आया है तथा कार्य-कुशलता में हुए इन अभिलाभों में से अधिकांश सुधार लागू किए जाने के कुछ वर्षों के बाद अर्थात् 1997-98 के बाद उद्भूत हुए।

9.83 1991-92 में कार्य-कुशलता के स्तरों से शुरुआत किए जाने पर निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों के मामले में कार्य-कुशलता अभिलाभों को सर्वाधिक पाया गया। हालांकि, चूँकि सुधारों की अवधि की शुरुआत में उनकी कार्य-कुशलता के स्तर बहुत ही कम थे, वे अब भी अन्य बैंक समूहों के मुकाबले काफी पीछे बने हुए हैं। आज की स्थिति के अनुसार एक समूह के रूप में निजी सेल के नए बैंक सर्वाधिक कार्य-कुशल हैं, उनके बाद स्टेट बैंक, राष्ट्रीयकृत बैंकों, विदेशी बैंकों और निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों के समूहों के स्थान हैं। विदेशी बैंक समूह में, कतिपय ऐसे बैंक मौजूद है, जिसकी कार्य-कुशलता के अंक बहुत कम हैं, जिसने एक समूह के रूप में विदेशी बैंकों के समग्र कार्य-कुशलता अंक में कमी ला दी। अन्यथा, सर्वाधिक कार्य-कुशल सत्रह बैंकों में से नौ बैंक विदेशी बैंकों की श्रेणी में से थे। महत्त्वपूर्ण रूप से विदेशी और निजी बैंकों के मामले में हुए अभिलाभ केवल तकनीकी कार्य-कुशलता तक ही सीमित थे। इन बैंकों की निर्धारक कार्य-कुशलता 1990 वाले दशक के प्रारंभिक दिनों से ही हमेशा अधिक रही है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के मामले में ये अभिलाभ तकनीकी और निर्धारक कार्य-कुशलता, दोनों ही में बंटे हुए हैं। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की निर्धारक कार्य-कुशलता में अपेक्षाकृत अधिक अभिलाभ का कारण विगत अनर्जक आस्तियों की वसूली तथा ऋण जोखिम परिवेश में हुआ सुधार हो सकता है, जिसके परिणामस्वरूप सुधारोत्तर अवधि में वृद्धिशील अनर्जक आस्तियों में तीव्र गिरावट आई है।

9.84 उक्त विश्लेषण में आकार और विविधीकरण के साथ कार्य-कुशलता में सकारात्मक और महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध भी देखने में आए हैं। इसका तात्पर्य यह है कि बड़े और विविधीकृत बैंक सामान्य रूप से अधिक कार्य-कुशल पाए गए। इन परिणामों से यह भी पता चलता है कि कार्य-कुशलता पर अनर्जक आस्तियों का ऋणात्मक प्रभाव होता है।

चार्ट IX.24: कार्य-कुशलता और अन्य आय

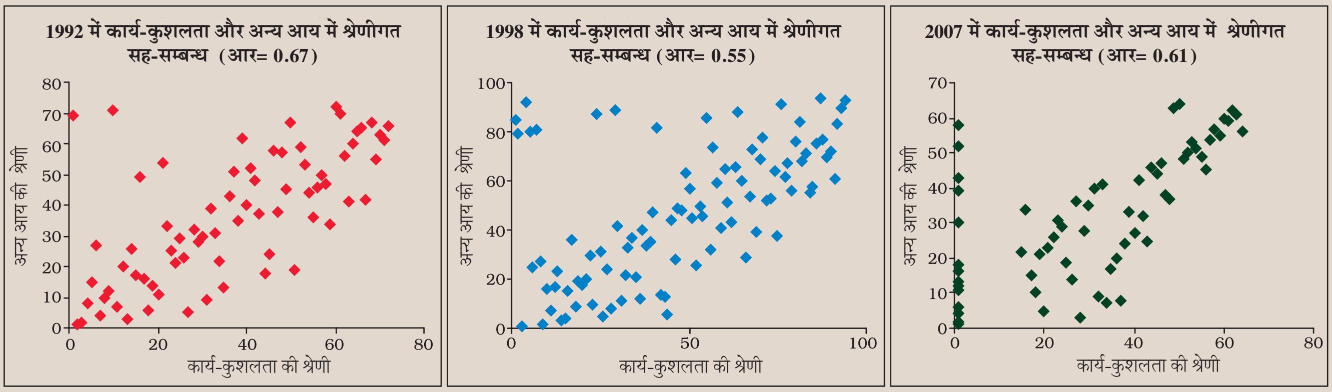

**चार्ट IX.25: कार्य-कुशलता और अनर्जक आस्तियां**

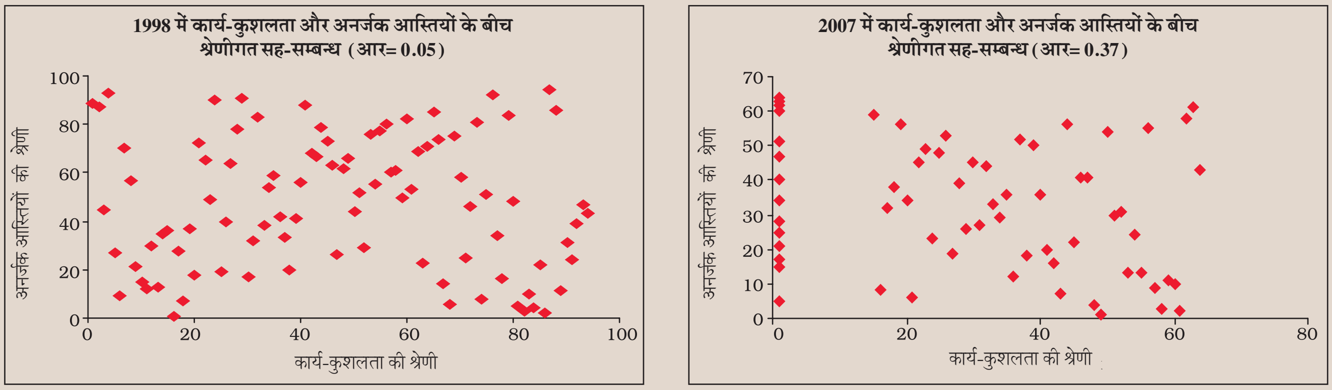


9.85 उक्त विश्लेषण से यह पता चलता है कि कार्य-कुशलता के स्तरों का बैंकों के स्वामित्व से कोई निश्चित सम्बन्ध नहीं होता, यथा-भारत में सार्वजनिक अथवा निजी क्षेत्र के बैंक। सार्वजनिक और निजी दोनों ही क्षेत्रों में सर्वाधिक कार्य-कुशल और सब से कम कार्य-कुशल बैंक मौजूद हैं।

## बॉक्स IX.9
## भारत में बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता के निर्धारक तत्त्व

समग्र स्तर पर और बैंक समूह स्तर पर बैंक की कार्य-कुशलता के निर्धारक तत्वों का पता लगाने के उद्देश्य से 1996-2006 की अवधि हेतु पैनल में अल्पतम वर्ग मॉडल का उपयोग किया गया था। महा-सीमांत से परिकलित सभी बैंकों की तकनीकी कार्य-कुशलता का उपयोग आश्रित परिवर्ती के रूप में किया गया था, जबकि कुल आस्तियों (बैंक के आकार के संकेतक के रूप में), निवल अग्रिमों की तुलना में निवल अनर्जक आस्तियों के अनुपात (प्रबंधन की गुणवत्ता के एक प्राक्सी के रूप में) तथा कुल आय की तुलना में अन्य आय के अनुपात (विविधीकरण के माप के रूप में) का उपयोग व्याख्यात्मक परिवर्तियों के रूप में किया गया था। हौसमान जांच के अनुसार, अनुमान लगाने हेतु यादृच्छिक प्रभाव मॉडल को लागू किया गया।

पिछले कई वर्षों के सम्बन्धों को ध्यान में रखने वाले पैनल में अल्पतम वर्गों के अनुमान से पता चलता है कि कुल आस्तियों में वृद्धि, जो बैंक के आकार के लिए एक प्रॉक्सी होती है, तकनीकी कार्य-कुशलता को बढ़ा देती है। कुल आस्तियों में एक यूनिट (1 करोड़ रुपए) की वृद्धि होने पर तकनीकी कार्य-कुशलता के अंक में 0.0003 की वृद्धि हो जाती है। बैंक समूहों की दृष्टि से भी आकार को विशेषतः निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों और विदेशी बैंकों के मामले में कार्य-कुशलता पर काफी सकारात्मक प्रभाव रखने वाला पाया गया (सारणी)। सामग्री से भी यह पता चलता है कि बैंकों के बीच मौजूद तकनीकी कार्य-कुशलता में अन्तरों को केवल मात्रा में मौजूद अंतरों की दृष्टि से ही नहीं स्पष्ट किया जा सकता। प्रौद्योगिकीय, प्रबन्धकीय और तुलनपत्र में शामिल न की जाने वाली मदों का भी तकनीकी कार्य-कुशलता पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव होता है। 1996-2006 की अवधि के लिए पैनल अनुमानों से यह पता चलता है कि प्रबन्ध की गुणवत्ता में गिरावट (निवल अनर्जक ऋणों में वृद्धि द्वारा निरूपित) तकनीकी कार्य-कुशलता के स्तर में कमी ला देती है। स्वाभाविक रूप से, अनर्जक आस्तियों के कम हो जाने पर बैंक मूर्त (प्रावधानों) और अमूर्त पूंजी (मानवीय पूंजी) सहित उपलब्ध संसाधनों को अनर्जक आस्तियों पर निगरानी रखने से हटाकर अधिक उत्पादक उपयोगों में पुनर्नियोजित कर सकते हैं, जिससे बैंकों की कार्य-कुशलता के स्तर में वृद्धि हो सकती है। यह व्यापक रूप से घटिया प्रबन्धन के सिद्धान्त का समर्थन करता है। हालांकि, बैंक समूहवार अनुमानों से किसी समरूप स्थिति का पता नहीं चलता। जहां अशोध्य ऋणों का सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों (स्टेट बैंक और राष्ट्रीयकृत बैंकों) के मामले में कार्य-कुशलता पर महत्त्वपूर्ण नकारात्मक प्रभाव पड़ा, वहीं निजी (पुराने और नये) बैंकों तथा विदेशी बैंकों के मामले में परिवर्ती को महत्त्वहीन पाया गया। इसका कारण इन बैंकों में मौजूद बेहतर जोखिम प्रबन्धन प्रथाएं हो सकती हैं, जो उनके तुलन-पत्रों को स्वच्छ रखने में उनकी सहायता करती हैं।

**सारणी : पैनल पश्चगमन के परिणाम (बैंक समूहवार)**

(अवधि : 1996-2000)

| आश्रित परिवर्ती | स्थिर | कुल आस्तियां | निवल अनर्जक आस्तियां | कुल आय की तुलना में अन्य आय |
|---|---|---|---|---|
| समस्त बैंक | 0.675 | 0.0003 * | -0.0046 * | 0.003 * |
| | (43.33) | (10.92) | (-5.47) | (8.87) |
| स्टेट बैंक समूह | 0.839 | 0.0005 * | -0.019 * | 0.006 * |
| | (17.46) | (2.29) | (-7.52) | (2.78) |
| राष्ट्रीयकृत बैंक | 0.719 | 0.0003 * | -0.006 * | 0.006 * |
| | (36.68) | (8.04) | (-4.75) | (6.69) |
| पुराने निजी बैंक | 0.493 | 0.004 * | -0.002 | 0.004 * |
| | (25.25) | (12.42) | (-1.296) | (4.28) |
| नये निजी बैंक | 0.628 | 0.0005 * | 0.007 | 0.001 * |
| | (16.14) | (7.39) | (0.95) | (2.58) |
| विदेशी बैंक | 0.533 | 0.002 * | -0.001 | 0.004 * |
| | (18.59) | (7.09) | (-0.913) | (6.69) |

**टिप्पणियां :** कोष्ठकों में दिए गए आंकड़े 'टीट सांख्यिकीय है।

* 1 प्रतिशत के स्तर पर महत्त्वपूर्ण

इसी प्रकार विविधीकरण को भी बैंकों की कार्य-कुशलता पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव रखने वाला पाया गया। इस प्रकार, शुल्क और उपभोक्ता आधारित क्रियाकलापों और तुलनपत्र में शामिल न की जाने वाली मदों में एक्सपोज़र को बड़े पैमाने पर लाभदायक होते पाया गया । इससे यह पता चलता है कि तुलनपत्र में शामिल न किए जाने वाले क्रियाकलापों को छोड़कर परम्परागत बैंक कार्य-कुशलता माप किसी बैंक की स्थिति का यथोचित मूल्यांकन नहीं उपलब्ध करा सकते।

## बॉक्स IX.10
## मामक्विस्ट उत्पादकता सूचकांक

सामग्री में प्रयुक्त कुल उपादान उत्पादकता के तीन प्रचलित माप हैं - टॉर्नक्विस्ट, फिशर और मामक्विस्ट सूचकांक)।

टॉर्नक्विस्ट और फिशर आउटपुट और इनपुट के सूचकांकों का निर्माण करने हेतु मात्रात्मक आंकड़ों के साथ मूल्य सूचना का उपयोग करते हैं। आउटपुट और इनपुट के मात्रात्मक सूचकांकों का अनुपात टीएफपी सूचकांक होता है। तथापि, ये दोनों ही उत्पादकता में परिवर्तन के वर्णनात्मक माप होते हैं। इन दोनों में से किसी भी माप के लिए फर्म के समक्ष उपस्थित अन्तर्निहित उत्पादन प्रौद्योगिकी की जानकारी की आवश्यकता नहीं होती।

इसके विपरीत, केव्स, क्रिस्टेन्सेन और डीवर (1982) द्वारा प्रवर्तित मामक्विस्ट उत्पादकता सूचकांक (एमपीआइ) एक ऐसा नियामक माप है, जो प्रौद्योगिकी को निरूपित करने वाले एक उत्पादन सीमांत की रचना करता है तथा उत्पादकता की तुलना के लिए भिन्न-भिन्न इनपुट-आउटपुट में मूल्यांकित समनुरूपी दूरवर्ती कार्यों का उपयोग करता है अर्थात दो समयावधियों में आउटपुट और इनपुट की मात्रा की तुलना करता है। सूचकांक इस बात का पता लगाता है कि आउटपुट को अवधि 1 के स्तर पर ही बनाए रखने हेतु अवधि 2 में इनपुट को किस सीमा तक घटाया जा सकता है। सूचकांक की गणना करने के लिए, दो में से किसी भी अवधि को सन्दर्भ बिन्दु के रूप में लिया जा सकता है। अवधि 1 में प्रौद्योगिकी को सन्दर्भ के रूप में लिए जाने तथा परिकलित मूल्य सूचकांक के अधिक होने की स्थिति में उत्पादकता में अभिलाभ (वृद्धि) होने का संकेत प्राप्त होता है। दूसरी ओर, 1 से कम सूचकांक उत्पादकता में कमी का संकेत करता है। एक इनपुट और एक आउटपुट के मामले का उपयोग करते हुए एक उदाहरण इसके नीचे प्रस्तुत चार्ट में दर्शाया गया है।

**चार्ट : मामक्विस्ट सूचकांक का परिकलन**

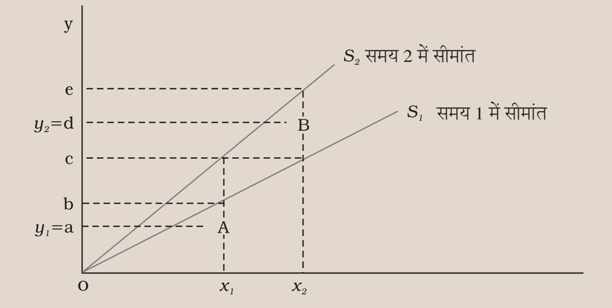


बिन्दु A और B क्रमशः 1 और 2 अवधियों में प्रेक्षणों का निरूपण करते हैं। S1 और S2 मूल केन्द्र से किरणें क्रमशः 1 और 2 अवधियों के उत्पादन सीमांतों का निरूपण करती हैं। सीमांत S1 (अवधि 1) की तुलना में A में उत्पादन की सापेक्ष कार्य-कुशलता d(y1, x1)= 0a/0b है। किन्तु S2 सीमांत (अवधि 2) के साथ तुलना किए जाने पर यह d2(y1, x1)=0a/0c होती है। सीमांत S2 की तुलना में B में उत्पादन की सापेक्ष कार्यकुशलता d2(y2, x2)=0d/0e होती है। S1 सीमांत की तुलना में सापेक्ष कार्यकुशलता d1(y2, x2)= 0d/0c होती है। कुल उपादान उत्पादकता परिवर्तन का मामक्विस्ट सूचकांक क्रमशः अवधि 1 और 2 के लिए प्रौद्योगिकी पर आधारित दोनों सूचकांकों का ज्यामितीय औसत होता है। दूसरे शब्दों में :

M = [{d1(y1,x1) d2(y1,x1)}/{d1(y2,x2) d2(y1,x1)}]1/2 ...........(1)

समतुल्य रूप से

M=[d1(y1,x1)/d2(y2,x2)] [d2(y2,x2) d2(y1,x1)/d1(y2,x2) d1(y1,x1)]1/2 ...........(2)

जिसमें, यह दूरवर्ती फलन और मालक्विस्ट उत्पादकता सूचकांक में m का मूल्य है। एक से अधिक मूल्य (अर्थात M>(1) उत्पादकता वृद्धि का संकेत करता है, एक से कम मूल्य (अर्थात M<1) उत्पादकता में गिरावट का संकेत करता है और M=1 उत्पादकता में किसी प्रकार के परिवर्तन नहीं होने का द्योतन करता है। M में परिवर्तन दो तत्वों का निरूपण करता है, यथा -

M = ET

जिसमें

M = मालक्विस्ट उत्पादकता सूचकांक

E = तकनीकी कार्यकुशलता में परिवर्तन अर्थात t और t+1 (वर्गावार कोष्ठक के बाहर वाला शब्द) अवधि के बीच और एक निश्चित इनपुट के लिए आउटपुट में परिवर्तन।

T = (उत्पादन प्रौद्योगिकी में दोनों अवधियों (दोनों अनुपातों) के बीच उत्पादन प्रौद्योगिकी में प्रौद्योगिकीय परिवर्तन (प्रौद्योगिकीय सुधारों) का एक माप।

**संदर्भः**

मैथ्यूज, के. और एम.इस्माइल, 2006 ''एफिसिएन्सी एण्ड प्रोडक्टिविटी ग्रोथ ऑफ डोमिस्टिक एण्ड फॉरेन कॉमर्शियल बैंक्स इन मलेशिया'', क्रेडिट बिजनेस स्कूल वर्किंग पेपर श्रृंखला ।

9.86 बैंकिंग क्षेत्र और विविध बैंक समूहों की उत्पादकता में 1991-92 और 2006-07 के बीच सुधार आया। हालांकि, अधिकांश अभिलाभ 1997-98 से लेकर उसके बाद वाली अवधियों में फलीभूत हुए। उत्पादकता के वृद्धि मूलतः तकनीकी प्रगति (नवोन्मेषों) से उद्भूत हुई, जबकि, विशेषतः सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक प्रणाली में बढ़ी हुई प्रौद्योगिकीय सक्षमता को आत्मसात/अवशोषित करने में पीछे रह गए।

### V. भारत में बैंकिंग क्षेत्र की सुदृढ़ता

9.87 किसी देश के वित्तीय विनियामक की मुख्य भूमिका प्रणालीगत जोखिम को अर्थात् उस जोखिम को सीमित रखने की होती है, जो कुछ संस्थाओं से सम्बन्धित समस्याओं के उन अन्य संस्थाओं तक फैल जाने से पैदा होता है, जो अन्यथा शोधक्षम और अर्थ-सुलभ होती हैं। विनियामक इस कार्य को यह सुनिश्चित करते हुए पूरा करता है कि संस्थाएं स्वयं

## सारणी 9.27 : कुल उपादान उत्पादकता परिवर्तन

(आधार : 1991-92=100)

| समूह | टीएफपी में परिवर्तन का सूचकांक | | तकनीकी कार्यकुशलता में परिवर्तन का सूचकांक | | प्रौद्योगिकीय परिवर्तन सूचकांक | |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | 1997-1998 | 2006-2007 | 1997- 1998 | 2006-2007 | 1997-1998 | 2006-2007 |
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| स्टेट बैंक समूह | 97.60 | 112.32 | 98.34 | 58.45 | 99.21 | 191.86 |
| राष्ट्रीयकृत बैंक | 103.50 | 135.43 | 122.73 | 67.77 | 84.35 | 199.88 |
| निजी क्षेत्र के पुराने बैंक | 104.34 | 144.72 | 130.52 | 75.34 | 79.97 | 192.14 |
| निजी क्षेत्र के नए बैंक* | 115.12 | 116.14 | 123.64 | 68.51 | 93.10 | 169.47 |
| विदेशी बैंक | 112.05 | 170.56 | 113.67 | 94.81 | 98.58 | 179.86 |
| समस्त | 105.46 | 143.52 | 118.25 | 76.77 | 89.19 | 186.93 |

*** निजी क्षेत्र के नए बैंकों के मामले में आधार वर्ष 1995-96 था, अन्य सभी समूहों के मामले में यह 1991-92 था।**

उनके परिचालनों अथवा बाज़ार में होने वाले किसी प्रकार के अवरोधक उतार-चढ़ावों, दोनों ही से उद्भूत होने वाली अप्रत्याशित जोखिमों का सामना करने हेतु सुदृढ़ हों अथवा पर्याप्त रूप से पूंजीकृत हों। तथापि, वित्तीय क्षेत्र के बढ़ते वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप वित्तीय सुदृढ़ता की संकल्पना व्यापक हो गई है। शोध-क्षमता के अलावा, आज सुदृढ़ प्रबन्धन के लिए यह आवश्यक हो गया है कि बैंकों में इस प्रकार की प्रणालियां और

**चार्ट IX.26: उत्पादकता में बैंक-समूहवार प्रवृत्तियां : 1991-92 - 2006-07**

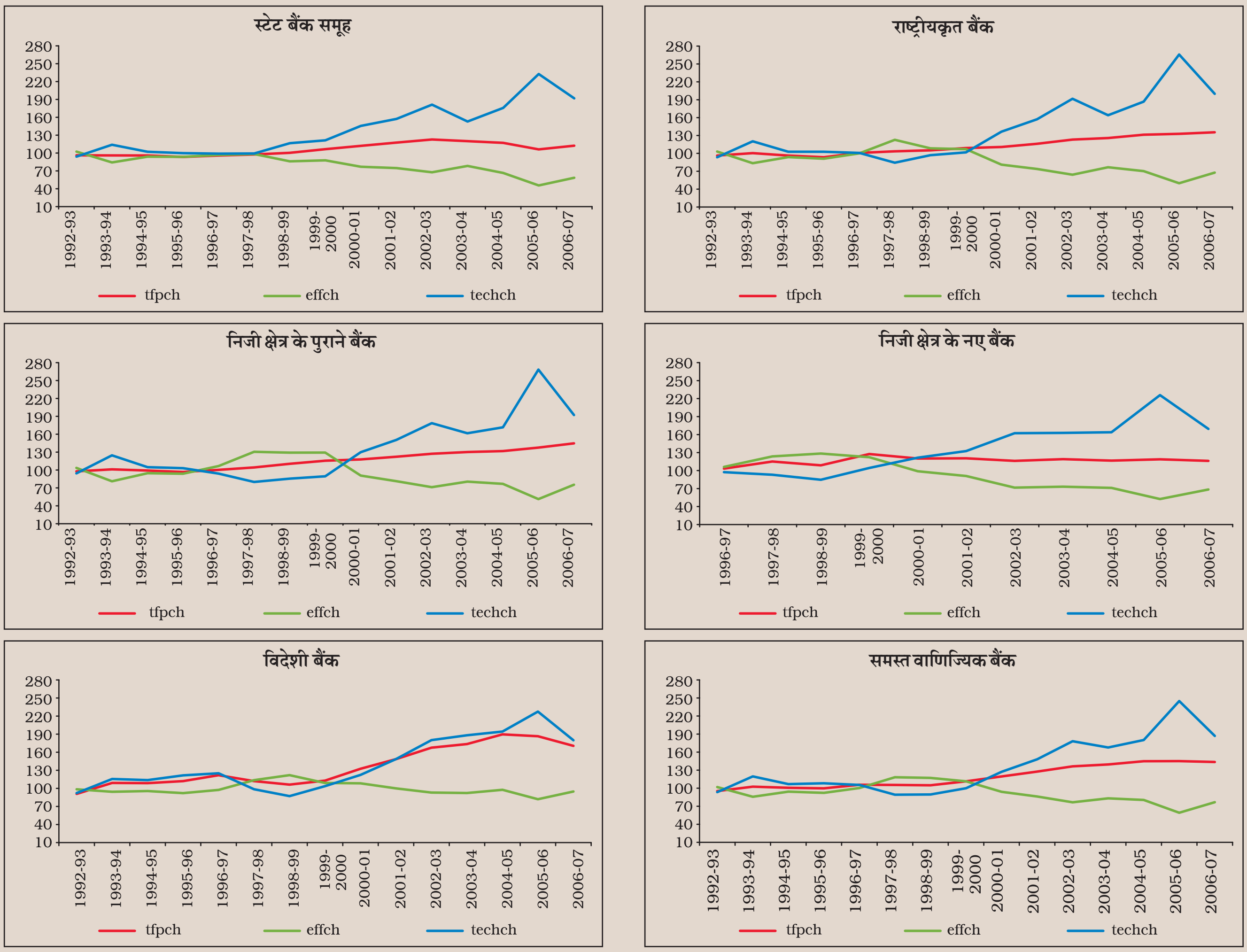


tfpch: टीएफपी में परिवर्तन    effch: तकनीकी कार्यकुशलता में परिवर्तन    techch: प्रौद्योगिकीय परिवर्तन

कार्यविधियां लागू हों जिनमें बाज़ार और मूल्य में होने वाले परिवर्तनों के प्रति बढ़ी हुई गति से प्रतिक्रिया होने तथा उन संकटों से त्वरित गति से उबरने की सुविधा प्राप्त हो, जो प्रणाली अथवा अलग-अलग बैंकों को प्रभावित करते हैं। इसके लिए पुनः यह आवश्यक हो जाता है कि प्रत्येक बैंक विभिन्न प्रकार के परिचालनों से पैदा होने वाली जोखिमों का मूल्यांकन करें तथा उन्हें विश्लेषणों, मान्यताओं और मानदंडों के मॉडलों के रूप में विभाजित करने में समर्थ हो, जिनके आधार पर जोखिम एक्सपोज़र का अनुमान लगाया जाता है। उदाहरण के लिए तुलनपत्र में शामिल न किए जाने वाले लेन-देन में उन प्रतिपक्षियों की वित्तीय सुदृढ़ता से अवगत होना महत्त्वपूर्ण होता है जिनके साथ बैंक लेन-देन करता है।

9.88 नए वित्तीय लिखतों के प्रचुरोद्भवन और वित्तीय मध्यवर्तियों के सीमापार क्रियाकलापों के परिणामस्वरूप विनियामकों को बैंकिंग प्रणाली की वित्तीय सुदृढ़ता से सम्बन्धित पहलुओं पर अधिक से अधिक ध्यान देना पड़ रहा है। अविनियमन, बाज़ार में होने वाले उतार-चढ़ावों, विदेशी मुद्रा की दर और ब्याज दर की अस्थिरता ने अदला-बदली (स्वैप), ऑप्शंस फ्यूचर्स और विदेशी मुद्रा के वायदा सौदों के साथ ही साथ समर्थक प्रतिबद्धताओं और साख पत्रों की मंजूरी, जिन्हें सामूहिक रूप से तुलनपत्र में शामिल न की जाने वाली मदों के रूप में जाना जाता है, जैसे नए वित्तीय लिखतों के लिए उर्वर भूमि उपलब्ध करा दी है। इस प्रकार की लिखतों से संस्था को लेखांकन हानि तों से, जो वित्तीय स्थिति के विवरण में मान्य रकम से बढ़ जाती है, की जोखिम का सामना करना पड़ता है। वह तुलनपत्रेतर प्रक्रियाओं में निहित कई प्रकार के अज्ञात तत्वों के कारण जोखिम को विभिन्न संदर्भ स्तरों को अंतरित कर देती है और फलतः नयी किस्म की जोखिम प्रबन्धन प्रथाओं की मांग सृजित कर देती है। इसी प्रकार, आज बैंक परिचालन अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर विस्तारित हो गए हैं, जिससे उनके जोखिम एक्सपोजर की परिधि अधिक परंपरागत परिचालन जोखिम के अलावा प्रतिस्पर्धा के नए नियमों, ग्राहकों के व्यवहारपरक जोखिम, तक विस्तृत हो गई है। विभिन्न बाजारों और अर्थव्यवस्थाओं के वित्तीय परिचालनों के बढ़ते एकीकरण को ध्यान में रखते हुए, किसी एक बाज़ार अथवा अर्थव्यवस्था में होने वाली किसी घटना का घरेलू वित्तीय प्रणालियों पर संभाव्य डॉमिनो प्रभाव हो सकता है। इस प्रकार वित्तीय रूप से सुदृढ़ संस्थाओं के महत्त्व को इस समय के जितना अधिक कभी नहीं महसूस किया गया था। अतएव इस खंड में हम देश की बैंकिंग संस्थाओं की वित्तीय सुदृढ़ता का जोखिम-भारित आस्ति की तुलना में पूंजी के अनुपात की दृष्टि से मूल्यांकन करते हैं। चूंकि आस्ति की घटिया गुणवत्ता में बैंक की पूंजी की स्थिति में कमी लाने की संभाव्यता निहित होती है, इसलिए बैंकिंग संस्थाओं की आस्ति की गुणवत्ता का भी मूल्यांकन किया गया है।

*जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूंजी की अनुपात*

9.89 पूंजी पर्याप्तता अनुपात किसी बैंक के जोखिम भारित ऋण एक्सपोजरों के अनुपात में उसकी पूंजी की रकम को मापता है तथा वह बैंकों की वित्तीय सुदृढ़ता को मापने का सर्वाधिक व्यापक रूप में प्रयुक्त होने वाला माप होता है। यह किसी बैंक के परिचालनों से पैदा होने वाली अप्रत्याशित हानियों का सामना करने में उसकी सक्षमता का निर्धारण करता है। जोखिम भारांकन प्रक्रिया में बैंकों द्वारा धारित विविध प्रकार के ऋण एक्सपोजरों की जोखिमपूर्णता को सुरुचिपूर्ण ढंग से ध्यान में रखा जाता है और उसमें ऋण जोखिम तुलनपत्रेतर संविदाओं के प्रभाव को शामिल किया जाता है। किसी बैंक का पूंजी पर्याप्तता अनुपात जितना ही अधिक होता है, दिवालिया होने के पहले अप्रत्याशित हानियों को अवशोषित करने की उसकी सक्षमता भी उतनी ही अधिक होती है। इस प्रकार, वह संभाव्य हानियों के लिए एक ''कुशन'' उपलब्ध कराती है, जो बैंक के जमाकर्ताओं अथवा अन्य उधारदाताओं को संरक्षित रखता है।

9.90 भारत में सभी बैंक समूहों की जोखिम भारित आस्तियों की तुलना में पूंजी अनुपात में पिछले वर्षों में बढ़ोत्तरी हुई है (सारणी 9.28)। राष्ट्रीयकृत बैंकों और निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों का जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूंजी का अनुपात, जो मार्च, 1996 के अंत में बहुत कम था, क्रमिक रूप से बढ़कर मार्च 2007 के अंत तक 12 प्रतिशत से अधिक हो

**सारणी 9.28 : भारत में वाणिज्य बैंकों का जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूँजी का अनुपात**

(प्रतिशत)

| मार्च के अंत में समूह | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | निजी क्षेत्र के पुरानेबैंक | निजी क्षेत्र के नये बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| 1996 | 11.33 | 5.73 | 6.20 | 22.01 | 12.98 | 6.71 |
| 1997 | 11.64 | 7.45 | 8.07 | 14.39 | 14.67 | 8.70 |
| 1998 | 14.63 | 9.99 | 9.52 | 13.38 | 15.14 | 5.90 |
| 1999 | 12.72 | 10.43 | 9.55 | 11.67 | 16.10 | 12.92 |
| 2000 | 12.29 | 10.35 | 12.99 | 13.04 | 16.16 | 13.12 |
| 2001 | 12.94 | 10.32 | 14.21 | 11.94 | 16.17 | 13.07 |
| 2002 | 13.19 | 10.77 | 12.00 | 10.30 | 14.37 | 11.51 |
| 2003 | 14.01 | 12.14 | 13.19 | 8.80 | 18.53 | 12.28 |
| 2004 | 13.57 | 13.23 | 14.38 | 11.30 | 19.82 | 13.89 |
| 2005 | 12.06 | 13.10 | 12.16 | 12.46 | 17.42 | 14.07 |
| 2006 | 11.90 | 12.19 | 5.54 | 12.36 | 15.75 | 12.61 |
| 2007 | 12.42 | 12.01 | 13.66 | 12.17 | 13.80 | 12.88 |

**स्रोत :** भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियों (भारिबैंक) से परिकलित।

गया। दूसरी ओर, स्टेट बैंक समूह, निजी क्षेत्र के नये बैंकों और विदेशी बैंकों का जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूंजी का अनुपात 8 से 9 तक (31 मार्च 2000 से 9 प्रतिशत) के निर्धारित स्तर से हमेशा ही अधिक था। निजी क्षेत्र के नये बैंकों के मामले में एक बैंक ने महत्त्वपूर्ण रूप से कम जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूंजी के अनुपात की रिपोर्टिंग की थी, जिसने उक्त समूह के औसत को मार्च 2003 के अंत में घटा दिया था। हालांकि, आगे चलकर उक्त बैंक अपेक्षाकृत सुदृढ़ बैंक में विलयित हो गया, जिससे कुल मिलाकर प्रणाली की शक्ति बढ़ गई।

9.91 विभिन्न देशों के साथ तुलना किए जाने पर यह पता चलता है कि 2006 के अंत में विभिन्न देशों के बीच आस्तियों की तुलना में पूंजी के अनुपात में 5 प्रतिशत से 16 प्रतिशत[8] के बीच काफी भिन्नता मौजूद थी (सारणी 9.29)। 2006 के अंत में अधिकांश देशों की बैंकिंग प्रणाली में कुल आस्तियों की तुलना में पूंजी का अनुपात 8 प्रतिशत से अधिक था। अधिकांश विकसित देशों के बैंकों का कुल आस्तियों की तुलना में पूंजी का अनुपात 5 और 9 प्रतिशत के बीच था। दूसरी ओर मैक्सिकों, चिली, ब्राजील और रूसी महासंघ जैसे विकासशील देशों के बैंकों का कुल आस्तियों की तुलना में पूंजी का अनुपात पर्याप्त रूप से अधिक स्तर पर था। 8.29 प्रतिशत के स्तर पर भारत का कुल आस्तियों की तुलना में पूंजी अनुपात कतिपय उन्नत और उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के साथ अनुकूल रूप से तुलनीय था।

*आस्ति की गुणवत्ता*

9.92 किसी बैंक की आस्ति की गुणवत्ता के घटिया होने पर उसकी वित्तीय सुदृढ़ता गंभीर रूप से क्षत हो सकती है। अनर्जक आस्तियों के लिए प्रावधानीकरण/बट्टे खाते डालना आवश्यक हो जाता है, जिससे बैंकों की लाभप्रदता तथा उनकी पूंजी स्थिति को सुदृढ़ बनाने की उनकी योग्यता प्रभावित हो जाती है। प्रावधानीकरण/बट्टे खाते डाले जाने के परिणामस्वरूप निवल हानि होने की स्थिति में, बैंक की पूंजीगत स्थिति में भी ह्रास आ सकता है। अतएव, सुदृढ़ पूंजीगत स्थिति के अलावा, यह आवश्यक होता है कि बैंक आस्ति की गुणवत्ता को उच्चस्तरीय बनाए रखें। भारत में वाणिज्यिक बैंकों की अनर्जक आस्तियां पिछले वर्षों में क्रमिक रूप से कम हुई हैं (सकल अनर्जक आस्तियां मार्च 1997 के अंत के 15.7 प्रतिशत के स्तर से घटकर मार्च 2007 के अंत में 2.5 प्रतिशत और निवल अनर्जक आस्तियां मार्च 1997 के 8.1 प्रतिशत से घटकर मार्च 2007 के अंत में 1.0 प्रतिशत)। आस्ति की गुणवत्ता के मामले में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सुधार राष्ट्रीयकृत बैंकों के मामले में देखने में आया, जिनके बाद निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों और स्टेट

**सारणी 9.29 : चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों की कुल आस्तियों की तुलना में पूंजी का अनुपात**

(प्रतिशत)

| देश | 1999 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| यू एस ए | 8.63 | 9.01 | 12.58 | 10.17 | 9.82 | 9.03 | 9.63 | 8.9 |
| कनाडा | * | 7.27 | 7.02 | 6.86 | 6.62 | 6.39 | 6.3 | 6.49 |
| यू.के. | * | 7.66 | 8.46 | 9.03 | 4.82 | 6.6 | 6.04 | 5.8 |
| इटली | 6.96 | 7.03 | 6.49 | 6.72 | 7.95 | 9.16 | 8.29 | 8.67 |
| फ्रांस | 5.2 | 6.45 | 5.45 | 5.65 | 5.97 | 4.96 | 4.9 | 5.04 |
| जर्मनी | 5.31 | 6.17 | 6.25 | 5.78 | 5.88 | 5.37 | 5.63 | 5.22 |
| जापान | * | * | * | * | * | * | * | * |
| **उभरती अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| मैक्सिको | 11.07 | 10.77 | 11.35 | 12.05 | 12.27 | 11.68 | 13.36 | 14.41 |
| चिली | 10.16 | 9.93 | 10.03 | 11.33 | 11.56 | 11.22 | 10.9 | 11.36 |
| कोरिया | 6.6 | 6.63 | 7.49 | 7.07 | 7.03 | 7.32 | 7.43 | 7.77 |
| थाईलैंड | 10.67 | 10.2 | 9.56 | 9.62 | 10.52 | 9.67 | 10.26 | 10.74 |
| फिलीपीन्स | 17.37 | 25.73 | 17.46 | 17.48 | 17.21 | 14.39 | 11.86 | 13.14 |
| मलेशिया | * | 8.54 | 8.63 | 10.1 | 10.08 | 9.65 | 9.56 | 9.45 |
| इंडोनेशिया | 0.22 | 7.93 | 8.17 | 9.16 | 10.51 | 12.07 | 11.03 | 12.12 |
| ब्राजील | 10.3 | 9.33 | 10.38 | 10.81 | 11.64 | 11.75 | 11.92 | 12.38 |
| रूसी महासंघ | 11.76 | 12.86 | 14.5 | 15.33 | 15.6 | 16.72 | 15.95 | 15.91 |
| चीन | 6.13 | 5.98 | 4.98 | 3.12 | 3.1 | 5.22 | 5.68 | 6.84 |
| **मेमो:** | | | | | | | | |
| **श्रेणी** | **0.22-17.37** | **5.98-25.73** | **4.98-17.46** | **3.12-17.48** | **3.1-17.21** | **4.96-16.72** | **4.90-15.95** | **5.04-15.91** |
| **भारत** | **6.94** | **6.77** | **6.86** | **6.9** | **7.24** | **7.51** | **8.21** | **8.29** |

*: आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं, अथवा यदि वे उपलब्ध भी हैं, तो उनके नमूने बहुत छोटे हैं और इसलिए उनके विश्लेषण पर विचार नहीं किया गया।

**स्रोत :** बैंक स्कोप

8 जबकि जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूंजी का अनुपात बैंक की वित्तीय सुदृढ़ता का बेहतर संकेतक होता है, विभिन्न देशों में जोखिम-भारित आस्ति की तुलना में पूंजी को अनुपात से सम्बधित समय-श्रृंखला के आधार पर आंकड़े सहजता से उपलब्ध नहीं थे। इसे ध्यान में रखते हुए अंतरराष्ट्रीय तुलना के लिए कुल आस्तियों की तुलना में पूंजी के अनुपात पर विचार किया गया।

**चार्ट IX.27: विविध बैंक समूहों की निवल अनर्जक आस्तियां**

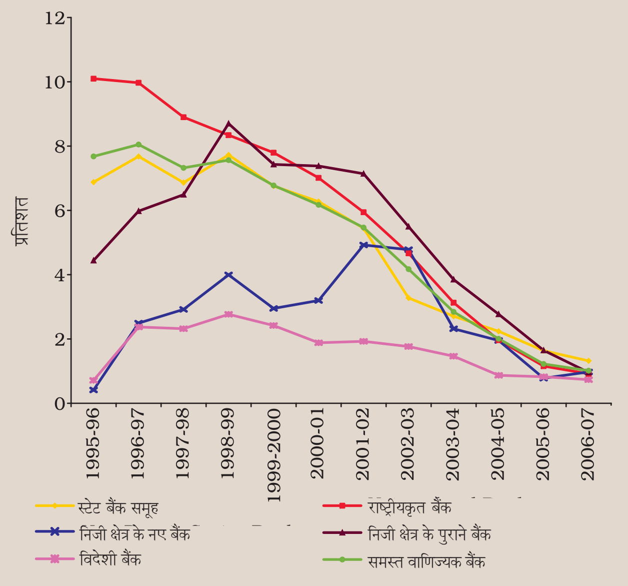


बैंक समूह का स्थान रहा। इसके फलस्वरूप, समस्त बैंक समूहों की निवल अनर्जक आस्तियों का अनुपात घटकर लगभग 1 प्रतिशत पर अभिसरित हो गया (चार्ट IX.27 और सारणी 9.30)। आस्ति की गुणवत्ता में आया सुधार सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि आय निर्धारण, आस्ति वर्गीकरण तथा प्रावधानीकरण से सम्बन्धित मानदंडों को समय-समय पर सख्त बनाया गया। आस्ति की गुणवत्ता में यह सुधार दीर्घकालिक अनर्जक आस्तियों के बारे में समझौता समाधान पर पहुंचने, कॉरपोरेट ऋणों के पुनर्विन्यास, ऋण वसूली न्यायाधिकरणों को स्थापित करने तथा न्यायपालिका की संलिप्तता के बिना ही प्राप्य राशियों की वसूली करने हेतु प्रतिभूति हित के प्रवर्तन जैसे कतिपय संस्थागत उपायों को लागू करके लाया गया।

9.93 1999-2006 की अवधि के दौरान अध्ययन किए गए लगभग सभी चुनिंदा देशों में सकल ऋणों की तुलना में क्षत ऋणों के अनुपात अर्थात कुल अग्रिमों की तुलना में अनर्जक आस्तियों के अनुपात में गिरावट आई। भारत में सकल ऋणों की तुलना में क्षत ऋणों का अनुपात इस समय फ्रांस, जर्मनी और जापान जैसे अधिकांश विकसित देशों के साथ तुलनीय है तथा वह ब्राज़ील, थाईलैंड, फिलीपीन्स, मलेशिया और इंडोनेशिया जैसी कतिपय उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में बेहतर है (सारणी 9.31)।

*दक्षता और सुदृढ़ता के बीच संबंध*

9.94 अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर किसी बैंक की विफलता, यदि, कोई हो, के लक्षणों का घटना-पूर्व पता लगाने में लागतपरक कुशलता के अध्ययन सहायक सिद्ध होते रहे हैं। इससे 'बेल आउट' और विनियामक हस्तक्षेप की लागतों में बचत होती रही है। बैंक विफलता के विविध पूर्वानुमान मॉडलों की रचना कैमेल्स के इर्दगिर्द की गई है, क्योंकि यह एक प्रभावी समय-पूर्व चेतावनी प्रणाली का कार्य करती है, जो कठिनाई में फंसी उन संस्थाओं की पहचान करते हुए, जिनकी शीघ्र जांच अथवा जिनमें संभाव्य हस्तक्षेप आवश्यक होता है, प्रत्यक्ष जांच प्रक्रिया की अनुपूरक बन सकती है। अध्ययनों से यह पता चला है कि विफलता की कगार पर खड़े बैंकों में कम कार्यकुशलता वाले मानदंडों के पूर्ववृत्त मौजूद होते हैं, जैसे कि अन्य बातों के साथ ही प्रति कर्मचारी कम निवल लाभ, प्रति कर्मचारी कम कारोबार, अधिक अनर्जक आस्तियां। यह किसी विफल बैंक के वृत्त अध्ययन से भी स्पष्ट हो जाता है (बॉक्स IX.11)।

9.95 आस्ति की गुणवत्ता और कार्य-कुशलता के बीच संबंध का पता लगाने वाला विशाल अनुसंधान साहित्य इसके पूर्व यथावर्णित चार वैकल्पिक सिद्धांतों का सुझाव देता है, यथा - घटिया प्रबंधन, दुर्भाग्य, कृपणता और

**सारणी 9.30 : भारत में वाणिज्य बैंकों के कुल अग्रिमों के प्रतिशत के रूप में निवल अनर्जक आस्तियां**

| मार्च के अंत में | स्टेट बैंक समूह | राष्ट्रीयकृत बैंक | निजी क्षेत्र के पुराने बैंक | निजी क्षेत्र के नए बैंक | विदेशी बैंक | समस्त वाणिज्य बैंक |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| 1996 | 6.88 | 10.10 | 4.44 | 0.41 | 0.71 | 7.68 |
| 1997 | 7.68 | 9.97 | 5.98 | 2.49 | 2.37 | 8.05 |
| 1998 | 6.86 | 8.90 | 6.49 | 2.92 | 2.32 | 7.32 |
| 1999 | 7.73 | 8.34 | 8.70 | 3.99 | 2.77 | 7.56 |
| 2000 | 6.76 | 7.80 | 7.43 | 2.95 | 2.42 | 6.78 |
| 2001 | 6.27 | 7.01 | 7.38 | 3.20 | 1.88 | 6.17 |
| 2002 | 5.44 | 5.94 | 7.14 | 4.92 | 1.93 | 5.47 |
| 2003 | 3.28 | 4.66 | 5.50 | 4.78 | 1.77 | 4.17 |
| 2004 | 2.71 | 3.13 | 3.85 | 2.32 | 1.46 | 2.84 |
| 2005 | 2.24 | 1.97 | 2.77 | 1.95 | 0.87 | 2.01 |
| 2006 | 1.64 | 1.16 | 1.65 | 0.78 | 0.83 | 1.22 |
| 2007 | 1.32 | 0.92 | 0.96 | 0.98 | 0.73 | 1.02 |

**स्रोत :** भारत में बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियों (भारिबैंक) से परिकलित।

## सारणी 9.31: चुनिंदा देशों में वाणिज्य बैंकों के सकल ऋणों की तुलना में क्षतिग्रस्त ऋणों का अनुपात

(प्रतिशत)

| देश | 1999 | 2000 | 2001 | 2002 | 2003 | 2004 | 2005 | 2006 |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 | 9 |
| **उन्नत अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| यू एस ए | 1.30 | 1.39 | 1.50 | 1.53 | 1.12 | 1.21 | 0.61 | 0.68 |
| कनाडा | * | 1.37 | 1.68 | 1.75 | 1.30 | 0.84 | 0.58 | 0.51 |
| यू.के. | * | 1.41 | 2.32 | 3.27 | 2.83 | 0.82 | 1.48 | 1.38 |
| इटली | 7.71 | 4.88 | 4.19 | 4.86 | 4.54 | 4.79 | 6.57 | 5.47 |
| फ्रांस | 6.47 | 6.71 | 5.60 | 5.25 | 4.48 | 4.63 | 3.31 | 2.62 |
| जर्मनी | 2.27 | 3.18 | 3.53 | 5.12 | 5.11 | 6.19 | 4.28 | 3.83 |
| जापान | 5.92 | 6.34 | 9.96 | 8.31 | 6.71 | 4.46 | 3.20 | 2.84 |
| **उभरती अर्थव्यवस्थाएं** | | | | | | | | |
| मैक्सिको | 12.33 | 9.42 | 4.90 | 4.89 | 3.27 | 2.62 | 1.84 | 2.00 |
| चिली | 2.07 | 1.91 | 1.74 | 2.00 | 1.81 | 1.30 | 0.99 | 0.81 |
| कोरिया | 26.68 | 11.33 | 3.23 | 2.87 | 2.79 | 2.10 | 1.37 | 0.97 |
| थाईलैंड | 40.84 | 26.11 | 18.60 | 21.05 | 16.46 | 13.73 | 10.39 | 9.28 |
| फिलीपीन्स | 16.12 | 14.90 | 20.60 | 6.95 | 7.36 | 12.29 | 9.55 | 8.03 |
| मलेशिया | * | 10.76 | 13.88 | 12.89 | 11.66 | 9.66 | 7.68 | 6.52 |
| इंडोनेशिया | 42.02 | 21.28 | 12.69 | 6.94 | 6.04 | 4.39 | 8.29 | 6.79 |
| ब्राज़ील | 0.09 | 10.34 | 9.31 | 9.39 | 9.44 | 8.10 | 8.48 | 8.97 |
| रूसी महासंघ | 3.70 | 1.58 | 1.17 | 1.69 | 2.00 | 1.40 | 1.82 | 1.84 |
| चीन | 20.24 | 17.29 | 12.29 | 13.98 | 5.07 | 4.33 | 3.12 | 2.76 |
| **मेमो:** | | | | | | | | |
| **श्रेणी** | **0.09-42.02** | **1.37-26.11** | **1.17-20.60** | **1.53-21.05** | **1.12-16.46** | **0.82-13.73** | **0.58-10.39** | **0.51-9.28** |
| **भारत** | **12.80** | **11.40** | **10.40** | **8.80** | **7.20** | **5.20** | **3.32** | **2.55** |

*: आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं, अथवा यदि व उपलब्ध भी हैं, तो उनके नमूने बहुत छोटे हैं और इसलिए उनके विश्लेषण पर विचार नहीं किया गया।

**स्रोत :** बैंक स्कोप

नैतिक संकट। दुर्भाग्य वाले सिद्धांत के अनुसार, बहिर्जात घटनाओं के कारण समस्यामूलक ऋणों में बैंक के लिए कठिनाइयां बढ़ सकती हैं, जिनसे पुनः अन्य बातों के साथ ही चूककर्ता उधारकर्ताओं पर अतिरिक्त निगरानी रखने, जब्ती की लागतों, चूक की स्थिति में संपार्श्विकों का रखरखाव करने और अंततः उन्हें बेचने तथा बैंक के पर्यवेक्षकों के समक्ष उसकी सुरक्षा और वित्तीय सुदृढ़ता के रिकार्ड का बचाव करने के

### बॉक्स IX.11
### कार्य-कुशलता का महत्व - एक बैंक का वृत्त अध्ययन

कार्य-कुशलता के अध्ययन के महत्व का पता एक विफल बैंक के वृत्त अध्ययन से लगाया जा सकता है। वर्तमान दशक के प्रारंभिक दिनों में एक बैंक दिवालिया हो गया। तथापि, बढ़ती कमजोरियों के संकेत उसकी विफलता वाले वर्ष से अधिक अनर्जक आस्तियों, प्रति कर्मचारी कम कारोबार, निरंतर आधार पर घटते प्रति कर्मचारी लाभ और प्रति शाखा कारोबार के रूप में चार वर्ष पहले की अवधि में ही सुस्पष्ट रूप से दिखाई देने लगे थे। उसके अंततः विफल होने के पहले डीईए मॉडल से अनुमानित लागत कार्य-कुशलता मानदंडों से भी लागतपरक कार्य-कुशलता अंक में तीव्र गिरावट का पता चला।

#### सारणी : बैंक की कार्य-कुशलता के मानदंड

| | लाभ प्रति कर्मचारी (मिलियन अमरीकी डालर) | कारोबार प्रति कर्मचारी (मिलियन अमरीकी डालर) | कारोबार प्रति शाखा (मिलियन अमरीकी डालर) | प्रति शाखा कुल आकस्मिक देयताएं (मिलियन अमरीकी डालर) | प्रति शाखा कुल आस्तियां (मिलियन अमरीकी डालर) | कुल आस्तियों की तुलना में निवल अनर्जक आस्तियां (प्रतिशत) | डीईए के अनुसार लागतपरक कार्य-कुशलता |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 | 8 |
| वर्ष 1 | 9.47 | 830.91 | 12684.16 | 9453.84 | 10612.92 | 2.15 | 0.69 |
| वर्ष 2 | -14.52 | 1258.00 | 15683.10 | 11697.00 | 97675.27 | 0.87 | 0.93 |
| वर्ष 3 | 6.85 | 1008.86 | 17930.18 | 9192.73 | 14351.45 | 3.75 | 0.49 |
| वर्ष 4 | 3.51 | 826.13 | 11994.56 | 3264.75 | 9250.03 | 9.23 | 0.42 |
| वर्ष 5 | -20.75 | 776.03 | 10733.72 | 3766.66 | 8069.46 | 19.77 | 0.38 |
| वर्ष 6 | -61.82 | 657.88 | 8820.96 | 2298.51 | 7350.16 | 27.99 | 0.37 |

संबंध में अतिरिक्त लागतों के कारण परिचालन लागतें बढ़ जाती हैं। इस प्रकार, इस परिकल्पना में यह आशा की जाती है कि अनर्जक ऋणों में वृद्धि के कारण लागतपरक कार्य-कुशलता में गिरावट आएगी। घटिया प्रबंधन प्रथाओं के फलस्वरूप परिकलन व्यय में वृद्धि होगी, जिसका तात्कालिक प्रभाव कम मापित लागतपरक कार्य-कुशलता के रूप में सामने आएगा। प्रबंधकीय कमियों के परिणामस्वरूप अपर्याप्त ऋण हामीदारी, निगरानी और नियंत्रण, घटिया ऋण अंकन तथा कम अथवा ऋणात्मक वर्तमान मूल्य वाले अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में ऋणों के चयन की स्थिति निर्मित हो सकती है। यह घटिया प्रबंधन परिकल्पना है और इसके तहत अल्प लागतपरक कार्य-कुशलता के कारण अपेक्षाकृत अधिक अनर्जक ऋण बनने की आशा की जाती है।

9.96 कृपणता की परिकल्पना के अनुसार कोई बैंक ऋणों की हामीदारी और उन पर निगरानी रखने हेतु समर्पित संसाधनों में बचत के कारण अल्पकालिक तौर पर लागत कुशल हो सकता है, किंतु यह भावी ऋण कार्य-निष्पादन समस्याओं की लागत पर ही संभव हो सकता है। इसलिए इस परिकल्पना के तहत अल्प लागतपरक कार्य-कुशलता ऋण की गुणवत्ता से सकारात्मक रूप से संबंधित हो सकती है। जैसाकि नाम से ही पता चलता है, नैतिक संकट की परिकल्पना, कम पूंजीवाले बैंकों की अपेक्षाकृत अधिक जोखिम वहन करने की प्रवृत्ति का संकेत करती है, जिसके परिणामस्वरूप अनर्जक ऋण अधिक हो जाते हैं। इसलिए इस परिकल्पना के अधीन कम वित्तीय पूंजी के फलस्वरूप अनर्जक ऋण अधिक हो सकते हैं।

9.97 अनुभवजन्य जांचों से यह पता चलता है कि दुर्भाग्य और घटिया प्रबंधन, दोनों ही परिकल्पनाएं भारतीय बैंकों के मामले में महत्त्वपूर्ण रूप से वैध हैं। इसका अभिप्राय यह है कि घटिया स्थूल आर्थिक कार्य-निष्पादन के परिणामस्वरूप अनर्जक आस्तियों में वृद्धि होती है तथा उसका असर कार्य-कुशलता पर पड़ता है। प्रबंधन की घटिया गुणवत्ता के परिणामस्वरूप अनर्जक ऋणों में भी बढ़ोत्तरी होती है (बॉक्स IX.12)।

9.98 संक्षेप में, सुदृढ़ता के संकेतकों के विश्लेषण से यह पता चलता है कि विविध बैंक समूहों की जोखिम भारित आस्तियों की तुलना में पूंजी के अनुपात (सीआरएआर) में सुधारोत्तर अवधि में महत्त्वपूर्ण रूप से सुधार आया है। मार्च 2007 के अंत में बैंकिंग उद्योग का 13 प्रतिशत और विविध बैंक समूहों के मामले में 12-14 प्रतिशत के दायरे में अनुपात 9 प्रतिशत के निर्धारित स्तर की तुलना में महत्त्वपूर्ण रूप से अधिक था। सुदृढ़ होती पूंजी की स्थिति के साथ ही आस्ति की गुणवत्ता में भी महत्त्वपूर्ण बढ़ोत्तरी हुई। भारतीय बैंकिंग क्षेत्र की निवल अनर्जक आस्तियां अब वैश्विक स्तर पर हैं। अनुभवजन्य विश्लेषण से यह पता चला कि स्थूल आर्थिक विकास और प्रबंधन की गुणवत्ता दोनों ही बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता को प्रभावित करते हैं। इसका अभिप्राय यह हुआ कि घटिया स्थूल आर्थिक कार्य-निष्पादन और प्रबंधन की घटिया गुणवत्ता के फलस्वरूप कार्य-कुशलता में कमी आ जाती है।

## VI. कार्य-कुशलता और उत्पादकता में सुधार के पीछे निहित कारक

9.99 सुधारोत्तर अवधि में भारतीय बैंकिंग क्षेत्र की बढ़ी हुई कार्य-कुशलता और उत्पादकता के कारक कतिपय ढांचागत परिवर्तन थे। निजी क्षेत्र के बैंकों के प्रादुर्भाव तथा समग्र ढांचे में उनके बढ़ते महत्त्व ने इसमें एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अपने प्रारंभ से ही निजी क्षेत्र के नये बैंक कई एक सार्वजनिक क्षेत्र, पुराने निजी क्षेत्र और विदेशी बैंकों की तुलना में अधिक कार्य-कुशल रहे हैं। उद्योग में निजी क्षेत्र के बैंकों का

### बॉक्स IX.12
### भारत में कार्य-कुशलता और अनर्जक आस्तियों के संबंध

आस्ति की गुणवत्ता और कार्य-कुशलता के बीच संबंधों को स्पष्ट करने वाले चार विकल्पों वाले सिद्धांत, यथा दुर्भाग्य, घटिया प्रबंधन, कृपणता और नैतिक संकट की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति की जांच करने के उद्देश्य से तकनीकी कार्य-कुशलता (टीई) वाले जोखिम मूल्य (वीएआर) पैनल तथा परिवर्तियों के रूप में निवल अनर्जक आस्तियों (एनएनपीए) के आधार पर ग्रैंगर आकस्मिकता परीक्षण किए गए। उक्त अध्ययन की अवधि 1996-2006 थी। ग्रैंगर हेतुकता परिणामों से यह पता चलता है कि अनर्जक आस्तियों का ग्रैंगर कार्य-कुशलता का कारण बनता है तथा विपरीत स्थिति में विपरीत प्रभाव होता है, जिससे यह संकेत प्राप्त होता है कि समीक्षाधीन अवधि (1996-2006) के लिए भारतीय बैंकों के मामले में दुर्भाग्य और घटिया प्रबंधन, दोनों ही परिकल्पनाएं सत्य थीं।

**सारणी: वेक्टर ऑटो पश्चगमन (Regression) के परिणाम**

| आश्रित परिवर्ती | तकनीकी कार्य-कुशलता | निवल अनर्जक आस्तियां |
|---|---|---|
| अंतररोध | **0.0659*** (5.544) | **1.661*** (4.29) |
| तकनीकी कार्य-कुशलता (-1) | **0.951*** (20.528) | **0.033** (0.022) |
| तकनीकी कार्य-कुशलता (-2) | **0.027** (0.409) | **-5.469*** (-2.569) |
| तकनीकी कार्य-कुशलता (-3) | **-0.027** (-0.5) | **3.745*** (-2.172) |
| निवल अनर्जक आस्ति (-1) | **0.002** (-1.37) | **0.599*** (-14.62) |
| निवल अनर्जक आस्ति (-2) | **-0.004*** (-2.843) | **0.132*** (-2.98) |
| निवल अनर्जक आस्ति(-3) | **0.008** (-0.652) | **-0.0184** (-0.483) |

* : 1 प्रतिशत के स्तर पर महत्त्वपूर्ण

**टिप्पणी** : कोष्ठक में दर्शाए गए आंकड़े 'टी' सांख्यिकियों के हैं।

**जोड़ी-वार ग्रैंजर हेतुकता जांच**

**नमूना : 1996-2006**

| शून्य परिकल्पना | एफ-सांख्यिकी | पी-मूल्य |
|---|---|---|
| निवल आस्ति तकनीकी कार्य-कुशलता का ग्रैंजर निमित्त नहीं होती | 3.04 | 0.028 |
| तकनीकी कार्य-कुशलता अनर्जक आस्ति का ग्रैंजर निमित्त नहीं होती | 5.73 | 0.001 |

अंश मार्च 1996 के अंत के 1.5 प्रतिशत से क्रमिक रूप से बढ़कर मार्च 2007 के अंत तक 16.9 प्रतिशत हो गया। अतः निजी क्षेत्र के बैंकों का अंश बढ़ जाने के कारण बैंकिंग क्षेत्र की समग्र कार्य-कुशलता भी बढ़ गई। इसके अलावा, बढ़ी हुई प्रतिस्पर्धा ने भी अन्य बैंकों पर उनके कार्य-निष्पादन को सुधारने का दबाव डाला, जिसके परिणामस्वरूप बैंकिंग क्षेत्र की समग्र कार्य-कुशलता में सुधार आ गया। बढ़ी हुई प्रतिस्पर्धा के कारण, विशेषतः हाल के वर्षों में बैंकों के मार्जिनों पर दबाव पड़ने लगा है। बैंकों ने परिमाणों में बढ़ोत्तरी करने, आय के गैर-ब्याजगत स्रोतों की तलाश करने और परिचालनात्मक कार्य-कुशलता में सुधार लाने के उपायों द्वारा इनका सामना करने के प्रयास किए हैं। भारत उच्चतर वृद्धि के प्रक्षेप-पथ की ओर अग्रसर हो चुका है। शक्तिशाली आर्थिक वृद्धि ने बैंकों को न केवल ऋण का परिमाण बढ़ाने में समर्थ बनाया है, अपितु इसका परिणाम उन्नत ऋण जोखिम परिवेश के रूप में सामने आया है, जिसके फलस्वरूप वृद्धिशील अनर्जक आस्तियों में तेज़ी से गिरावट आई है। बैंक ज़ोरदार स्थूल आर्थिक परिवेश तथा केंद्रीय सरकार और रिज़र्व बैंक द्वारा लागू किए गए विविध प्रकार के संस्थागत उपायों से प्रोत्साहित होकर अपनी अतिदेय राशियों की वसूली करने में भी समर्थ हुए हैं। इन कारकों ने बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता और उत्पादकता बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

9.100 ऐसा लगता है कि बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता और उत्पादकता को बढ़ाने में प्रौद्योगिकी के अधिकाधिक प्रयोग ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। 1997-98 के बाद हुई प्रगति का प्रत्यक्ष पता कतिपय उन प्रौद्योगिक परिवर्तनों से लग जाता है, जो निरंतर आधार पर हुए हैं। इनमें भुगतान और निपटान प्रणालियों, ग्राहक सेवा, आंतरिक नियंत्रण और लेखा-परीक्षा का समावेश है। माइकर चेक समाशोधन प्रणाली से शुरुआत करते हुए भारतीय खुदरा भुगतान प्रणाली को सुधारों की अवधि के दौरान इलेक्ट्रॉनिक निधि अंतरण, इलेक्ट्रॉनिक समाशोधन प्रणाली, विशेष इलेक्ट्रॉनिक निधि अंतरण तथा उन कार्ड-आधारित प्रणालियों की शुरुआत, जिसने बैंकिंग परिचालनों में कार्य-कुशलता के स्तरों को अत्यधिक प्रभावी रूप से बढ़ा दिया है, जैसी प्रौद्योगिकीय रूप से समुन्नत और सुरक्षित प्रणालियों के प्रवर्तन के फलस्वरूप महत्त्वपूर्ण प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है। तत्काल सकल भुगतान प्रणाली के प्रवर्तन ने बैंकों द्वारा किए जानेवाले नकदी प्रबंधन में सुधार लाने में सहायता की है। प्रौद्योगिकी द्वारा प्रेरित एक अन्य किफायती पहलकदमी थी - एटीएम, साझा एटीएम नेटवर्कों, स्मार्ट कार्डों, भण्डारित मूल्य कार्डों,फोन बैंकिंग और अंततः इंटरनेट और इंटरनेट बैंकिंग के माध्यम से आभासी बैंकिंग की शुरुआत। इन सेवाओं ने स्टाफ़ और शाखा की आधारभूत सुविधा पर होनेवाले खर्चों में कमी ला दी और प्रयुक्त प्रति इकाई निविष्टि पर लेन-देनों के परिमाण को भी बढ़ा दिया। रिज़र्व बैंक ने वित्तीय क्षेत्र को एक विश्वसनीय संचार आधार-स्तंभ उपलब्ध कराने हेतु वेरी स्माल अपर्चर टर्मिनल (वीसैट) नेटवर्क को भी प्रवर्तित कर दिया है। बैंकिंग क्षेत्र के भीतर कनेक्टिविटी को सुगम बनाने के लिए रिज़र्व बैंक, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों और बैंकिंग प्रौद्योगिकी में विकास और अनुसंधान संस्थान(आइडीआरबीटी) ने सामूहिक रूप से संचार उपग्रह के आधार पर भारतीय वित्तीय नेटवर्क (INFINET) की स्थापना की। इस समय इनफिनेट को उस बहु-संलेख परत स्विचिंग प्रौद्योगिकी को स्थानांतरित किया जा रहा है, जो परिचालन में सुविधा के अलावा बड़े पैमाने वाली किफायत उपलब्ध कराती है। इस प्रकार के प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों के परिणामस्वरूप बैंकों के उत्पादन सीमांत में बहिर्मुखी बदलाव आ गया।

9.101 जहां तक बैंक समूहों का संबंध है, स्टेट बैंक समूह और राष्ट्रीयकृत बैंकों में प्रौद्योगिकी को विदेशी और निजी क्षेत्र के नए बैंकों की तुलना में काफी समय बाद अंगीकृत किया गया । इसलिए, जहां विदेशी बैंक अधिकांशतः भारतीय बैंकिंग प्रणाली के महान प्रौद्योगिकीय सीमांत को परिभाषित कर रहे थे, वहीं सार्वजनिक क्षेत्र के और राष्ट्रीयकृत बैंकों ने प्रतिस्पर्धात्मक बने रहने के लिए उक्त सीमांत का गहनतापूर्वक अनुसरण किया। कई एक सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने उनकी शाखाओं को भी कंप्यूटरीकृत कर दिया तथा कोर बैंकिंग सॉल्यूशन लागू कर दिया। यद्यपि, प्रारंभिक वर्षों में इसने लागत को बढ़ा दिया, हालांकि आगे चलकर इसके परिणामस्वरूप यह लगने लगा कि इससे परिचालन लागत में कमी हो गई है और उत्तरवर्ती वर्षों में कार्य-कुशलता में भी सुधार होने लगा। आइसीआइसीआइ बैंक और एचडीएफसी बैंक जैसे निजी क्षेत्र के नये बैंक विदेशी प्रत्यक्ष निवेश सहायता पाकर उनकी पहुंच प्रौद्योगिकी के सीमांतों तक बना लेने के कारण अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति में थे।

9.102 भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में सुधारोत्तर अवधि के दौरान कतिपय विलयन और अभिग्रहण भी परिलक्षित हुए। इसके परिणामस्वरूप, विलयित संस्थाएं आकार की दृष्टि से बड़ी तथा बड़े पैमाने पर किफायतों का लाभ उठाने में समर्थ हो गई हैं। बैंकिंग व्यवसाय का विविधीकरण एक ऐसा अन्य कारक रहा है, जिसने वर्धित कार्य-कुशलता में योगदान किया है। आय के विविधीकरण में निहित एक महत्त्वपूर्ण तत्व था - 2001-02 से लेकर 2003-04 के दौरान खजाना परिचालनों से अर्जित व्यापारिक लाभ।

9.103 बचत जमाराशियों, 2 लाख रुपए तक के ऋणों और निर्यात ऋण को छोड़कर सभी प्रकार की ब्याज दरों को अविनियमित कर दिया गया है। ब्याज दरों के अविनियमन ने बैंकों को उत्पादों का मूल्य-निर्धारण उनमें निहित जोखिम एवं प्रतिलाभ के अवबोध को ध्यान में रखते हुए करने में समर्थ बना दिया है। इसने बैंकों को नवोन्मेषी जमा उत्पादों का शुभारंभ करने में भी समर्थ बना दिया है। 1990 वाले दशक के उत्तरार्ध और वर्तमान दशक के प्रारंभिक भाग में आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सीआरआर) और आरक्षित चलनिधि अनुपात (एसएलआर) के रूप में सांविधिक पूर्व-क्रयों में की गई महत्त्वपूर्ण कटौतियों ने बैंकों के संसाधनों को बाज़ार में अभिनियोजित[9] किए जाने हेतु मुक्त कर दिया। इसके अलावा, सरकारी प्रतिभूतियों के मामले में नीलामी प्रणाली की शुरुआत ने भी बैंकों को उनके सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) निवेशों पर बाज़ार से संबद्ध ब्याज दरें अर्जित करने में समर्थ बना दिया। इन छूटों ने

[9] आरक्षित नकदी निधि अनुपात सितंबर 2004 से आरंभ कर के क्रमिक रूप से चरणों में बढ़ाया गया। इनका बैंकों के मार्जिन पर कुछ-न-कुछ प्रभाव पड़ा होगा।

बैंकों को व्यवसाय के अधिक लाभदायक अवसरों की तलाश करने की सुविधा प्रदान की। तीव्र आर्थिक वृद्धि तथा ऋण बाज़ार के अविनियमन के फलस्वरूप आवास ऋणों, वाहन (ऑटो) ऋणों, शैक्षणिक ऋणों जैसे ऋण के नए स्रोतों का बड़े पैमाने पर विकास हुआ है तथा बैंक अपने खुदरा ऋण संविभाग को महत्त्वपूर्ण रूप से विस्तारित करने में समर्थ हुए हैं। चूंकि खुदरा ऋणों पर परंपरागत ऋणों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक ब्याज दर प्राप्त होती है, बैंक अपनी निवल ब्याजगत आय को बढ़ाने और अपने लाभों को सहारा देने में भी समर्थ हुए हैं।

9.104 बैंकों की कार्य-कुशलता पर आस्तियों और देयताओं के ढांचे का भी प्रभाव पड़ता है। बैंकों की सभी देयताओं की लागत एक ही नहीं होती। मध्यावधिक और दीर्घावधिक देयताओं की अपेक्षा अल्पावधिक देयताएं कम खर्चीली होती हैं। अल्पावधिक देयताओं की तुलना में मध्यावधिक से दीर्घावधिक देयताएं ब्याज दर के प्रति अधिक संवेदनशील होती हैं। जैसी कि अध्याय IV में चर्चा की गई है, कुल जमाराशियों में अल्पावधिक जमाराशियां (1 वर्ष से कम की परिपक्वता अवधि वाली) 1990 के 13 प्रतिशत के स्तर से क्रमिक रूप से बढ़कर 2006 तक 40 प्रतिशत हो गईं। आस्ति पक्ष में, बैंक अब न केवल कार्यशील पूंजी वित्त हेतु ही, अपितु मध्यम और दीर्घ अवधि के उद्देश्यों के लिए भी ऋण प्रदान करते हैं, कुल ऋणों में मध्यम और दीर्घ अवधि वाले ऋणों का अंश मार्च 1995 के अंत में 17.4 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2007 के अंत में 53.9 प्रतिशत हो गया। बैंक जिस सीमा तक मध्यम और दीर्घ अवधि वाले ऋण प्रदान करते हैं, उन्हें उस सीमा तक नकदी प्रबंधन का दायित्व नहीं वहन करना होता, जिससे वित्तीय और प्रशासनिक, दोनों ही प्रकार की लागतें अपरिहार्य होती हैं। मध्यम और दीर्घ अवधि वाले ऋण अल्पावधिक कार्यशील पूंजी वित्त की तुलना में अधिक खर्चीले होते हैं अर्थात वे बैंकों के लिए अधिक लाभदायक होते हैं। इस प्रकार एक ओर देयताओं की परिपक्वता पर होनेवाले लाभों में कमी कर दिए जाने और दूसरी ओर आस्तियों की प्रोफाइल को बढ़ा दिए जाने के कारण बैंक अपनी लाभप्रदता में सुधार लाने में समर्थ हुए हैं। इसका आस्ति देयता प्रबंधन की दृष्टि से निहितार्थ हो सकता है और बैंकों को जोखिम और प्रतिलाभ के बीच तालमेल बिठाना पड़ सकता है। हालांकि, अंतरराष्ट्रीय संदर्भ में यह देखने में आया है कि वे बैंक जिनका परिचालन अच्छा होता है, वे जोखिम प्रबंधन में भी अच्छे होते हैं। अतएव, यह माना जाता है कि बढ़ी हुई कार्य कुशलता जोखिम प्रबंधन की कीमत पर नहीं है।

9.105 विशेष रूप से सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के कार्य-निष्पादन में आया सुधार बैंकिंग क्षेत्र को आए समग्र सुधार में एक महत्त्वपूर्ण कारक रहा है। जुलाई 1994 में बैंककारी कंपनी (उपक्रमों का अभिग्रहण और अंतरण) अधिनियम, 1970/1980 को संशोधित किए जाने के बाद सार्वजनिक क्षेत्र के प्रायः सभी बैंक सार्वजनिक हो गए हैं और उन्होंने बाज़ार से पूंजी जुटाई है। इसके पूर्व, आंशिक निजी शेयरधारिता के लिए प्रावधान के विषय-क्षेत्र को बढ़ाने हेतु अक्तूबर 1993 में एक अध्यादेश प्रख्यापित करते हुए भारतीय स्टेट बैंक (एसबीआइ) अधिनियम, 1955 को संशोधित किया गया था। इससे न केवल उनका पूंजीगत ढांचा सुदृढ़ हुआ[10], अपितु उन्हें बाज़ार अनुशासन के अधीन ला दिया गया, जिसने उन्हें उनकी कार्य-कुशलता में सुधार लाने हेतु प्रोत्साहित किया। जैसाकि इसके पूर्व उल्लेख किया गया है, अच्छी तरह पूंजीकृत और सार्वजनिक रूप से क्रय-विक्रय करने वाले बैंक अधिक कार्य-कुशल होते हैं। 1990 वाले दशक के प्रारंभिक दिनों में विवेकसम्मत मानदंडों को लागू किए जाने के बाद, सार्वजनिक क्षेत्र के बारह बैंकों (कुल मिलाकर 14) ने हानि दर्ज करने की रिपोर्टिंग की। हालांकि, 1999-2000 तक, सभी हानि वहन करने वाले सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक लाभार्जन की स्थिति में वापस आने में समर्थ हो गए। इससे एक समूह के रूप में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की समग्र कार्य-कुशलता में सुधार लाने में सहायता प्राप्त हुई। 15 नवंबर 2000 और 31 मार्च 2001 के बीच की अवधि में कॉरपोरेशन बैंक को छोड़कर सार्वजनिक क्षेत्र के सभी बैंकों ने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना लागू की। मार्च 2001 के पहले लगभग 12 प्रतिशत कर्मचारियों ने उक्त प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। इसने बैंकों को श्रम बल को युक्तियुक्त बनाने में समर्थ बनाया। जिसका सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की उत्पादकता पर महत्त्वपूर्ण नकारात्मक प्रभाव हुआ।

9.106 पिछले वर्षों में कॉरपोरेट आय कर दरें भी महत्त्वपूर्ण रूप से कम कर दी गई हैं, जिसके परिणामस्वरूप बैंकिंग क्षेत्र की समग्र लाभप्रदता में सुधार हुआ।

9.107 कुल मिलाकर, कतिपय सुव्यक्त और कुछ आकस्मिक कारकों के संगम ने बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता और उत्पादकता बढ़ाने में योगदान किया।

## VII. भावी दिशा

9.108 पिछले खंडों में किए गए विश्लेषण से यह पता चलता है कि पिछले वर्षों में समग्र रूप से बैंकिंग क्षेत्र और विविध बैंक समूहों की कार्य-कुशलता/उत्पादकता में महत्त्वपूर्ण रूप से सुधार आया है। हालांकि, और अधिक सुधार लाए जाने की पर्याप्त गुंजाइश मौजूद है। कुछ ऐसे क्षेत्र, जिन पर बैंकों द्वारा ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है, इसके नीचे वर्णित किए गए हैं।

*मध्यस्थता लागत में कमी लाए जाने की आवश्यकता*

9.109 भारत में बैंकिंग क्षेत्र की मध्यस्थता लागत में महत्त्वपूर्ण से कमी आई है, जिससे बढ़ते प्रतिस्पर्धात्मक दबाव का पता चलता है। हालांकि, भारत में सामान्य रूप से बैंकों की मध्यस्थता अन्य देशों की बैंकिंग प्रणालियों की तुलना में अब भी अधिक है। जहां सभी बैंक समूहों की मध्यस्थता लागत अधिक थी, वहीं विदेशी बैंक[11] समूह के मामले में यह विशेष रूप

10 सुधारों के प्रारंभिक चरण में सरकार द्वारा कुछ बैंकों को पुनः पूंजीकृत किया गया था।

11 विदेशी बैंकों के मामले में अपेक्षाकृत अधिक निवल ब्याज मार्जिन उनके चालू खातों के विशाल अनुपात का परिणाम था, जिसने इन बैंकों को अल्प लागत वाली जमाराशियां जुटाने में समर्थ बनाया।

से अधिक थी। अधिक मध्यस्थता लागत निवेश के स्तर को प्रभावित कर सकती है तथा वृद्धि को अवरुद्ध कर सकती है। अधिक मध्यस्थता लागत के परिणामस्वरूप संसाधनों का गलत आबंटन भी हो सकता है, क्योंकि बढ़ी हुई लागत की भरपाई करने के लिए उधारकर्ता अधिक जोखिमपूर्ण परियोजनाओं का चयन कर सकता है, जिनकी परिणति अंततः बैंकिंग क्षेत्र के लिए अनर्जक आस्तियों में हो सकती है। इस प्रकार, अधिक मध्यस्थता लागत बैंकिंग क्षेत्र और अर्थव्यवस्था, दोनों ही को प्रभावित करती है। अतएव बैंकों द्वारा मध्यस्थता लागत को और घटाकर वैश्विक स्तरों पर लाने हेतु निरंतर प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

*परिचालन लागत में कमी किए जाने की आवश्यकता*

9.110 अधिक मध्यस्थता लागत का एक महत्त्वपूर्ण कारण है अधिक परिचालन लागत। यद्यपि बैंक परिचालन लागत को कम करने में समर्थ हुए हैं, तथापि सभी बैंक समूहों के मामले में आय के अनुपात की तुलना में परिचालन लागत अब भी अंतरराष्ट्रीय उत्तम प्रथा के अनुरूप नहीं है। सभी बैंक समूहों की आय के अनुपात की तुलना में लागत 40 प्रतिशत की सर्वोत्तम प्रथा मानदंड की तुलना में अधिक थी (घोष सी.आर, 2004)। विदेशी बैंक समूह के मामले में आय की तुलना में लागत का सबसे कम अनुपात 45 प्रतिशत था, जबकि अन्य सभी बैंक समूहों का अनुपात 50 प्रतिशत से अधिक था। मध्यस्थता लागत में कमी लाने और तब भी लाभप्रदता को बनाए रखने के उद्देश्य से यह आवश्यक है कि बैंक परिचालन लागतों में कमी लाएं। प्रौद्योगिकी न केवल परिचालन लागत में कमी लाने में, अपितु उत्पादकता बढ़ाने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। अतः, बैंकों द्वारा प्रौद्योगिकी को श्रमिक उत्पादकता बढ़ाने और आगे चलकर परिचालन लागत में कमी लाने, दोनों ही दृष्टिकोणों के साथ देखे जाने की आवश्यकता है। स्टेट बैंक समूह की लगभग 15 प्रतिशत शाखाओं और राष्ट्रीयकृत बैंकों की 20 प्रतिशत को कंप्यूटरीकृत किया जाना अब भी शेष है। इसे जोरदार ढंग से आगे बढ़ाए जाने की आवश्यकता है। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा शेष शाखाओं के कंप्यूटरीकरण का कार्य पूरा कर लिए जाने तथा कोर बैंकिंग सोल्यूशनों को कार्यान्वित कर दिए जाने पर गैर-श्रमिक लागतों में प्रारंभिक तौर पर वृद्धि होने की संभावना है। हालांकि, आगे चल कर इसे परिचालन लागत में कमी लाने में सहायक होना चाहिए।

*सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में श्रमिक उत्पादकता में सुधार की आवश्यकता*

9.111 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के मामले में परिचालन लागत के अधिक होने का एक महत्त्वपूर्ण कारण है कम श्रमिक उत्पादकता। यद्यपि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में श्रमिक उत्पादकता में वृद्धि हुई है, तथापि वह विदेशी बैंकों और निजी क्षेत्र के नए बैंकों की तुलना में निरंतर कम बनी हुई है। अतः सरकारी क्षेत्र के बैंकों द्वारा श्रमिक उत्पादकता के विविध पहलुओं पर विचार किए जाने तथा इसमें और अधिक वृद्धि किए जाने के लिए आवश्यक उपाय किए जाने की आवश्यकता है। बैंकिंग अब एक अत्यंत जटिल कारोबार बन गया है और प्रतिस्पर्धा में अपना अस्तित्व बचाए रखने के उद्देश्य से बैंकों के लिए यह आवश्यक हो गया है कि वे नए उत्पादों की शुरुआत करें। जोखिम प्रबंधन भी अधिकाधिक रूप से जटिल होता जा रहा है। इस प्रकार मानव संसाधन कौशलों का विकास महत्त्वपूर्ण हो जाता है और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा उनके कर्मचारियों की प्रशिक्षण संबंधी आवश्यकताओं पर अधिक से अधिक ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। एक अन्य, कारक, जिस पर तुरंत ध्यान दिया जाना आवश्यक है, वह है सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में वेतन ढांचा। वर्तमान में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में वेतन ढांचा उद्योग स्तर पर निर्धारित किया जाता है, किसी बैंक की भुगतान करने की क्षमता और उसकी कार्य-कुशलता का स्तर चाहे जैसा भी क्यों न हो। इस पर विचार किए जाने की आवश्यकता है।

*आय के गैर-ब्याजगत स्रोतों को बढ़ाए जाने की आवश्यकता*

9.112 बैंकों की आय का मुख्य स्रोत निवल ब्याजगत आय होती है, जो अर्जन को स्थिरता प्रदान करती है। हालांकि, आय के गैर-ब्याजगत स्रोत अर्जन को स्थिर रखने में सहायता कर सकते हैं। यह स्थिति विशेष रूप से तब निर्मित हो जाती है, जब आय के गैर-ब्याजगत स्रोत के क्रियाकलाप और मुख्य क्रियाकलाप नकारात्मक रूप से सह-संबद्ध होते हैं। इस समय, बैंकों की आय के गैर-ब्याजगत स्रोतों में उनकी कुल आय का एक बहुत ही छोटा सा भाग शामिल होता है। यह स्थिति विशेष रूप से सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में दिखाई देती है, क्योंकि 2006-07 में उनकी गैर-ब्याजगत आय कमोबेश 1991-92 वाले स्तर के जितनी ही थी, यद्यपि, ऐसी अवधियां (2001-02 से लेकर 2003-04 तक) भी थीं, जिनमें गैर-ब्याजगत आय का अनुपात मुख्यतः सरकारी प्रतिभूतियों के क्रय-विक्रय से हुए लाभों के कारण महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ गया था। चूंकि भविष्य में निवल ब्याजगत आय मार्जिनों पर और अधिक दबाव पड़ने की आशा है, बैंकों द्वारा उनकी लाभप्रदता को बनाए रखे जाने के लिए अपेक्षाकृत नए गैर-ब्याजगत आय के स्रोत तलाशे जाने की आवश्यकता है।

*समग्र कार्य-कुशलता और उत्पादकता में और अधिक सुधार लाए जाने की आवश्यकता*

9.113 आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (डीईए) अनुमानों से कार्य-कुशलता अंक के 1992 के 0.42 से बढ़कर 2007 में 0.71 हो जाने के (अधिकतम प्राप्य कार्य-कुशलता स्तर 1.0 होने पर) के फलस्वरूप बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता के स्तर में पर्याप्त सुधार होने का पता चलता हैं। इस बात के भी प्रमाण मौजूद हैं कि सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के बैंक क्रमिक रूप से अपने अधिक कार्य-कुशल सहवर्तियों (बैंकों) के स्तर तक पहुंच रहे हैं। हालांकि, बैंकिंग क्षेत्र अब भी कार्य-कुशलता के सीमांत से पीछे हैं तथा आउटपुट के वर्तमान स्तर तक का निर्माण करने हेतु इनपुट में 29 प्रतिशत तक की बचत लाने की गुंजाइश मौजूद है। अलग-अलग बैंक के स्तर पर कार्य-कुशलता के अंकों/स्तरों में पर्याप्त भिन्नता हैं, जो 0.38 के न्यूनतम स्तर से लेकर 1.0 के अधिकतम स्तर की श्रेणी में हैं। 81 बैंकों में से केवल 17 बैंक ही कार्य-कुशलता के सीमांत पर थे, जबकि

अन्य सभी बैंक कार्य-कुशलता के सीमांत से कम स्तर पर थे। इनमें से 22 बैंकों ने उनके व्यवहार्य कार्य-कुशलता स्तर के दो-तिहाई से परिचालन किया, जबकि चार बैंकों ने उद्योग के सर्वाधिक कार्य-कुशल बैंकों के स्तर के आधे से भी कम स्तर से परिचालन किया। ये बैंक निजी और विदेशी बैंक खंड में हैं। आवश्यकता है उनकी कम कार्य-कुशलता के अंतर्निहित कारणों की पहचान करते हुए उन सभी बैंकों की कार्य-कुशलता में सुधार लाने की, जो कार्य-कुशलता सीमांत से बहुत दूर है।

9.114 कार्य-कुशलता के बढ़ते स्तर के साथ ही उत्पादकता में प्रभावशाली वृद्धि भी दर्ज हुई। बैंकिंग क्षेत्र की उत्पादकता में 1991-92 से लेकर 2006-07 तक की अवधि के बीच में 40 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई, जिसमें से निजी क्षेत्र के बैंकों के मामलों में यह वृद्धि अधिक मुखरित थी। हालांकि, सामान्य रूप से उत्पादकता में हुई वृद्धि व्यापक तौर पर नवोन्मेष अथवा प्रौद्योगिकीय उन्नत्ति का परिणाम थी, तथापि इस बढ़ी हुई प्रौद्योगिकीय प्रगति को आत्मसात किए जाने में अधिकांश बैंक पीछे थे। इस बात को ध्यान में रखते हुए, वह प्रश्न जिसका पूछा जाना आवश्यक है, यह है कि क्या मात्र प्रौद्योगिकी की शक्ति पर सृजित उत्पादकता में वृद्धियां स्थिर स्वरूप वाली हैं। इसके लिए प्रक्रियाओं में उपयुक्त परिवर्तन लाए जाने तथा मानव संसाधन कौशलों पर ध्यान केंद्रित किये जाने की आवश्यकता है।

## VIII. सारांश

9.115 बढ़ते वैश्वीकरण और प्रतिस्पर्धा की दुनिया में, यह आवश्यक है कि वित्तीय संस्थाएं न केवल वैश्विक परंपराओं का पालन करें, अपितु यह भी कि वे वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धात्मक, कार्य-कुशल और वित्तीय रूप से सुदृढ़ हों। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए भारत ने वित्तीय क्षेत्र के सुधारों की शुरुआत की, जिसका एक महत्त्वपूर्ण घटक बैंकिंग क्षेत्र था। ये सुधार अब डेढ़ दशक पुराने हो चुके हैं और जो प्रश्न पूछा जाना आवश्यक है वह यह है कि बैंकिंग क्षेत्र ने परिवर्तित परिचालनात्मक परिवेश के प्रति किस प्रकार का रवैया अपनाया है। इस बात को ध्यान में रखते हुए इस अध्याय में भारत में बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता, उत्पादकता और वित्तीय सुदृढ़ता का विस्तृत विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। सुधारोत्तर अवधि में समग्र बैंकिंग क्षेत्र के साथ-साथ विविध बैंक समूहों की कार्य-कुशलता, उत्पादकता और वित्तीय सुदृढ़ता के मानदंडों का मूल्यांकन करने पर बल दिया गया था। इसके अलावा, उक्त विश्लेषण में तीन विशिष्ट प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास किया गया हैः (i) क्या निजी क्षेत्र के बैंक सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों से अधिक कार्य-कुशल है? (ii) क्या बड़े आकार वाले बैंक छोटे बैंकों की अपेक्षा अधिक कार्य-कुशल हैं? (iii) क्या विविधीकृत संस्थाएं उन संस्थाओं से अधिक कार्य-कुशल हैं, जो अपने कार्य-क्षेत्रों में विशेषज्ञ हैं? उक्त विश्लेषण परंपरागत लेखांकन मापों (अनुपात विश्लेषण) और आर्थिक मापों का उपयोग करते हुए किया गया था।

9.116 लेखांकन मापों से यह पता चला कि सुधारोत्तर अवधि में बैंकिंग क्षेत्र की उत्पादकता/कार्य-कुशलता में चतुर्दिक सुधार हुआ। वित्तीय क्षेत्र के सुधारों की शुरुआत के समय अधिकांश कार्य-कुशलता अनुपातों की अत्यधिक उन्नत देशों और उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के बैंकों के साथ अच्छे ढंग से तुलना नहीं हो पाती थी। सुधारों के प्रारंभिक वर्षों में बैंकिंग क्षेत्र, विशेषकर राष्ट्रीयकृत बैंकों, के कार्य-निष्पादन में गिरावट आ गई थी क्योंकि नए परिवेश के साथ सामंजस्य बिठाने में उन्हें समय लगा। हालांकि उसके बाद, विशेषतः 2001-02 की शुरुआत से सुस्पष्ट सुधार परिलक्षित होने लगे थे। फलतः कार्य-कुशलता/उत्पादकता और वित्तीय सुदृढ़ता से संबंधित विविध प्रकार के मानदंड बढ़कर वैश्विक स्तरों के निकट पहुंच गए। सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सुधार सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में दर्ज हुआ, जिसके फलस्वरूप विविध बैंक समूहों का अधिकांश मानदंडों के संबंध में कार्य-निष्पादन अब विदेशी बैंकों और निजी क्षेत्र के नए बैंकों के साथ अभिसरित हो गया।

9.117 सभी बैंक समूहों की मध्यस्थता लागत और उसके साथ ही निवल ब्याज मार्जिन में गिरावट आ गई। हालांकि इसके बावजूद बैंकिंग क्षेत्र की लाभप्रदता में सुधार आया। इस प्रकार, वह केवल अपेक्षाकृत अधिक ब्याज दर ही नहीं, अपितु अपेक्षाकृत वर्धित कार्य-कुशलता थी, जिसके फलस्वरूप लाभप्रदता में बढ़ोत्तरी हुई। जहां प्रतिस्पर्धात्मक दबावों ने बैंकों को उनके उत्पादों का बढ़िया मूल्य निर्धारण करने के लिए प्रेरित किया, वहीं जोरदार आर्थिक वृद्धि के फलस्वरूप वर्धित परिमाणों और 2002-03 से 2004-05 की अवधि में खजाना परिचालनों से हुए भारी व्यापारिक लाभों ने भी बैंकों को उनकी लाभप्रदता को बनाए रखने में समर्थ बनाया। प्रति कर्मचारी और प्रति शाखा कारोबार में सभी बैंक समूहों में महत्त्वपूर्ण रूप से वृद्धि हुई। इन सभी कारकों के परिणामस्वरूप सुधारोत्तर अवधि में आस्ति पर प्रतिलाभ और इक्विटी पर प्रतिलाभ बढ़ गया।

9.118 हालांकि, विविध प्रकार के लेखांकन मापों में सुधार में अलग-अलग बैंक समूहों में भिन्नता रही। लागत अनुपातों (आय की तुलना में परिचालन लागत) की दृष्टि से देशी बैंकों की तुलना में विदेशी बैंक अधिक कार्य-कुशल पाए गए। इसी प्रकार, श्रमिक उत्पादकता की दृष्टि से भी विदेशी और निजी क्षेत्र के नए बैंक अपने समकक्ष समूहों से आगे थे। सरकारी क्षेत्र के बैंकों में प्रति कर्मचारी कारोबार द्वारा प्रतिबिंबित श्रमिक उत्पादकता उद्योग के सर्वश्रेष्ठ कार्य-निष्पादकों, यथा विदेशी बैंकों और निजी क्षेत्र के नए बैंकों की लगभग आधी थी। इसके प्रत्यक्ष कारणों को लेन-देन के उस आकार में तलाशा जा सकता है, जो विदेशी और निजी क्षेत्र के बैंकों में महत्त्वपूर्ण रूप से बड़ा है, क्योंकि वे व्यापक तौर पर श्रेष्ठ (प्रीमियम) कंपनियों और अधिक निवल हैसियत वाले व्यक्तियों से व्यवहार करते हैं।

9.119 निवल ब्याज मार्जिनों और मध्यस्थता लागत की दृष्टि से क्रमशः निजी क्षेत्र के नए बैंक और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक अन्य बैंक समूहों की अपेक्षा अधिक कार्य-कुशल थे। उद्योग में विदेशी बैंकों की जमा लागत सबसे कम थी। हालांकि, इसका लाभ उधारकर्ताओं को नहीं दिया गया, जिसके फलस्वरूप निवल ब्याज अंतर अधिक था। अनुभवजन्य प्रयोग से यह पता चलता है कि निवल ब्याज मार्जिन को प्रभावित करने वाला मुख्य कारक परिचालन लागत थी। गैर-ब्याजगत आय और आस्ति की गुणवत्ता निवल ब्याज मार्जिन के अन्य निर्धारक कारक थे।

9.120 आर्थिक मापों के आधार पर कार्य-कुशलता और उत्पादकता ने लेखांकन मापों अथवा वित्तीय अनुपातों की पुष्टि की। इसका तात्पर्य यह है कि 1991-92 से लेकर 2006-07 तक की अवधि हेतु बड़े सीमांत से मापे जाने पर सभी बैंक समूहों में कार्य-कुशलता में सुधार हुआ और कार्य-कुशलता में इन अभिलाभों में से अधिकांश सुधारों के कुछ वर्ष बाद अर्थात 1997-98 और उसके बाद उद्भूत हुए। उक्त विश्लेषण से यह पता चलता है कि भारतीय संदर्भ में स्वामित्व और कार्य-कुशलता के बीच कोई संबंध नहीं है। इसका अर्थ यह हुआ कि अधिकांश कार्य-कुशल बैंक सभी तीनों खंडों, यथा सरकारी, निजी और विदेशी समूहों से थे। कार्य-कुशलता की दृष्टि से सबसे निचले स्तर पर रहने वाले 30 बैंकों में से अधिकांश निजी क्षेत्र से संबंधित हैं। हालांकि, इस साक्ष्य से यह पता चलता है कि आकार का कार्य-कुशलता से महत्त्वपूर्ण संबंध होता है। अर्थात बड़े बैंकों को अधिक कार्य-कुशल रूप में पाया गया। इसी प्रकार, विविधीकृत बैंक भी उतने अधिक विविधीकृत न हुए बैंकों की तुलना में अधिक कार्य-कुशल पाए गए। उक्त विश्लेषण से यह भी पता चलता है कि अनर्जक आस्तियों की कार्य-कुशलता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा। बैंकों में उत्पादकता में कई गुना बढ़ोत्तरी हुई, जो व्यापक तौर पर प्रौद्योगिकीय नवोन्मेषों और समर्थक नीतिगत परिवेश से प्रेरित थी। हालांकि, जहां कुछ देशी बैंक, विशेषतः सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र के नए बैंक, वर्धित आउटपुट संभाव्यता प्राप्त करने में समर्थ हुए, वहीं कुछ देशी बैंक प्रौद्यागिकीय नवोन्मेषों से उद्भूत वर्धित आउटपुट संभाव्यता प्राप्त करने या उसका उपयोग करने में सफल नहीं हो पाए। कई एक ऐसे अंतर-संबद्ध कारक मौजूद हैं, जिन्होंने समर्थक नीतिगत परिवेश की पृष्ठभूमि में कार्य-कुशलता/उत्पादकता में वृद्धि को सुगम बनाया।

9.121 जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूंजी केअनुपात की दृष्टि से बैंकिंग क्षेत्र और उसके साथ ही सभी बैंकिंग समूहों की वित्तीय सुदृढ़ता में पिछले वर्षों में सुधार हुआ है। बैंकों की आस्ति गुणवत्ता में भी महत्त्वपूर्ण सुधार हुआ है, जो अब वैश्विक स्तरों के करीब पहुंच गई है। दुर्भाग्य और घटिया प्रबंधन परिकल्पना, दोनों के साक्ष्य उपलब्ध कराते हुए उक्त विश्लेषण में यह दर्शाया गया है कि भारत में स्थूल आर्थिक कारकों के साथ-साथ प्रबंधन कौशल आस्ति की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं।

9.122 महत्त्वपूर्ण सुधारों के बावजूद, कुछ ऐसे क्षेत्र भी मौजूद हैं, जिन पर बैंकों द्वारा ध्यान दिया जाना आवश्यक है। भारत में मध्यस्थता लागत अब भी कई अन्य देशों के बैंकों की तुलना में अधिक है तथा बैंकों को इसे घटाकर वैश्विक स्तर पर लाने के प्रयास करने चाहिए। विशेष रूप से विदेशी बैंकों का निवल ब्याज मार्जिन अत्यधिक था। उनकी निधि लागत अन्य बैंक समूहों की अपेक्षा महत्त्वपूर्ण रूप से कम है। हालांकि, अल्प लागत का लाभ उधारकर्ताओं को नहीं प्रदान किया जा रहा है। भारत में बैंकों की अधिक मध्यस्थता लागत, काफी हद तक, अधिक परिचालन लागत के कारण थी। अतः, आवश्यकता इस बात की है कि अधिक परिचालन लागत में कमी लाई जाए। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिए चिंता का एक क्षेत्र है प्रति कर्मचारी कारोबार, जो निजी क्षेत्र के नए बैंकों का लगभग आधा ही है। अतः, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को श्रमिक उत्पादकता में सुधार लाने तथा उसे निजी क्षेत्र के नए बैंकों के समकक्ष लाने हेतु प्रयास करने चाहिए। आय के गैर-ब्याजगत स्रोतों में भारत में बैंकों की कुल आय के एक बहुत ही छोटे अंश का समावेश होता है। भविष्य में, निवल ब्याज मार्जिनों के दबाव में आने की संभावना है। अतः, बैंकों द्वारा अपनी लाभप्रदता को टिकाए रखने के लिए आय के नए गैर-ब्याजगत स्रोतों की तलाश किए जाने की आवश्यकता है। यद्यपि कुल मिलाकर कार्य-कुशलता और उत्पादकता में सुधार हुआ है, तथापि यह कहने का साक्ष्य मौजूद है कि संसाधनों का उपयोग सर्वाधिक कुशल विधि से नहीं किया जा रहा है। इसका अभिप्राय यह है कि बैंक इनपुट के स्तर में महत्त्वपूर्ण रूप से कटौती करते हुए आउटपुट बढ़ा सकते हैं। कतिपय बैंकों ने सर्वाधिक कार्य-कुशल बैंकों के कार्य-कुशलता स्तर के तीन-चौथाई अंश पर ही परिचालन किया। अतः, सबसे कम कार्य-कुशल बैंकों की कार्य-कुशलता बढ़ाने के लिए अंतर्निहित कारणों की पहचान किए जाने पर विशेष रूप से ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। इसी प्रकार, कतिपय बैंकों द्वारा बैंकिंग क्षेत्र की उत्पादकता में और अधिक वृद्धि लाने के लिए वर्धित प्रौद्योगिकीय क्षमता (नवोन्मेष) का अधिक से अधिक उपयोग किए जाने की आवश्यकता है। इसके लिए प्रक्रियाओं में परिवर्तन और मानव संसाधन कौशलों में सुधार लाए जाने की आवश्यकता होगी।

9.123 भारत में बैंकिंग क्षेत्र के समक्ष भविष्य में उपस्थित होनेवाली चुनौती है मध्यस्थता लागत में कमी लाना और उसके साथ ही उच्च लाभप्रदता को बनाए रखना। इस लक्ष्य की प्राप्ति केवल कार्य-कुशलता में सुधार लाकर और आय के गैर-ब्याजगत स्रोतों का दोहन कर के ही हो सकती है। बैंकिंग क्षेत्र की अपेक्षाकृत अधिक कार्य-कुशलता और उत्पादकता के परिणामस्वरूप संसाधनों के आबंटन और वास्तविक अर्थव्यवस्था की वृद्धि की संभाव्यता को प्रचुर लाभ प्राप्त हो सकते हैं।

## परिशिष्ट IX.1

## कार्य-कुशलता की लेखांकन बनाम आर्थिक माप

*कार्य-कुशलता की लेखांकन माप*

व्यावसायिक इकाइयों के कार्य-निष्पादन का मूल्यांकन करने हेतु वित्तीय प्रबंधक बारंबार अनुपात विश्लेषण का सहारा लेते हैं। बार-बार प्रयुक्त होने वाले कुछ अनुपात हैंः चलनिधि अनुपात, आस्तियों पर प्रतिलाभ (आरओए), इक्विटी पर प्रतिलाभ (आरओई)। इन अनुपातों का परिकलन तुलन पत्र और लाभ एवं हानि विवरण/आय-व्यय विवरण की विविध मदों से किया जाता हैं। जहाँ वित्तीय प्रबंधन में इन अनुपातों को लेखांकन माप नहीं कहा जाता, वहीं उत्पादकता और कार्य-कुशलता का अनुमान लगाने से सम्बन्धित आर्थिक सामग्री में उन्हें लेखांकन माप ही कहा जाता है, क्योंकि ये अनुपात अनिवार्य रूप से वित्तीय विवरणों की कुछ लेखांकन प्रविष्टियों से परिकलित किए जाते हैं। ये अनुपात मुख्यतःआसानी से समझे जाने के कारण वित्तीय विश्लेषण, यहाँ तक कि आर्थिक साहित्य में भी काफी लोकप्रिय हैं, तथापि, यह स्वीकार किया जाना आवश्यक है कि ये अनुपात उत्पादकता के केवल सापेक्ष माप होते हैं तथा वे अधिक से अधिक व्यावसायिक इकाइयों की कार्य-कुशलता का केवल आंशिक रूप में ही संकेत दे सकते हैं। इसके अलावा, इन अनुपातों से लेखांकन संख्याओं पर आर्थिक महत्त्व को आरोपित करने के खतरे का सामना करना पड़ सकता है। इसके अलावा, उनमें लेखांकन पूर्वग्रहों का भी खतरा रहता है। इसका तात्पर्य यह है कि विभिन्न आर्थिक परिवेशों में मौजूद लेखांकन प्रथाएं और मानदंड महत्त्वपूर्ण रूप से भिन्न हो सकते हैं और इसलिए भिन्न-भिन्न आर्थिक परिवेशों में परिचालनरत दो व्यावसायिक इकाइयों से परिकलित अनुपातों के बीच तुलना आर्थिक निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए उपयुक्त नहीं हो सकती। तथापि, अनुपात विश्लेषण की लोकप्रियता तीन आधारों पर उद्भूत होती है। एक, जब तक लेखांकन सम्बन्धी पूर्वाग्रह वर्षों तक कमोबेश वही रहते हैं, अपरिष्कृत आंकड़ों और वित्तीय अनुपातों में विद्यमान प्रवृत्तियों की जांच करके सार्थक संदर्भ निकाले जा सकते हैं। दो, चूंकि उसी उद्योग की विविध फर्मों में एक जैसे ही पूर्वाग्रह मौजूद रहते हैं, अन्तर-फर्म तुलना उपयोगी होती है। तीन, अनुभव यह सुझाते हैं कि वित्तीय विश्लेषण केवल तभी 'उपयोगी' होता है, जब हम लेखांकन पूर्वाग्रहों से अवगत होते हैं और उसके लिए समायोजन करते हैं (चन्द्रा 2004)। इसके अलावा, उनकी लोकप्रियता इस तथ्य से भी उद्भूत होती है कि सम्पूर्ण विश्व की अधिकांश पर्यवेक्षी प्रणालियों में इन अनुपातों के आधार विनियामक ढांचे लागू किए गए हैं (जैसे कि कैमेल्स श्रेणी-निर्धारण)। इसके अलावा, कॉक्स आंशिक संकट मॉडल के बैंकों तक विस्तार जैसे कुछ मानदंडीय और अर्ध-मानदंडीय अस्तित्व मॉडलों में भी पश्चगमन आउटपुट का अनुमान लगाने हेतु इन वित्तीय अनुपातों का उपयोग किया जाता है। चूंकि लेखांकन मापों से बैंकों की उत्पादकता और कार्य-कुशलता को स्पष्ट रूप से मापना कठिन होता है, पिछले वर्षों में इस प्रकार की वैकल्पिक तकनीकें विकसित हो गई हैं, जो किसी बैंकिंग इकाई की कुल उपादान उत्पादकता को परिकलित कर लेती हैं।

*कार्य-कुशलता की आर्थिक माप*

कार्य-कुशलता का आधुनिक माप फैरेल (1957) से आरंभ होता है, जिसने किसी फर्म की कार्य-कुशलता की उस सामान्य माप को परिभाषित करने के लिए डेब्रू (1951) और कूपमैन (1951) के कार्य को आगे बढ़ाया, जो बहुविध इनपुटों का हिसाब रख सकता है। फैरेल ने यह प्रस्तावित किया कि किसी फर्म की कार्य-कुशलता में दो संघटक शामिल होते हैं, यथा - तकनीकी कार्य-कुशलता, जो किसी फर्म की इनपुट की एक निश्चित मात्रा से अधिकतम आउटपुट प्राप्त करने की योग्यता को घोषित करती है और निर्धारक कार्य-कुशलता, जो किसी फर्म की इनपुटों को उनके सम्बन्धित मूल्यों को ध्यान में रखते हुए इष्टतम अनुपात में उपयोग करने की योग्यता को द्योतित करती है। इसके बाद इन दोनों मापों को आर्थिक कार्य-कुशलता का एक माप उपलब्ध कराने हेतु मिला दिया जाता है। पुनः आर्थिक कार्य-कुशलता में दो परिवर्तियों का समावेश होता है यथा - लागतपरक कार्य-कुशलता और राजस्वगत कार्य-कुशलता। लागतपरक कार्य-कुशलता का अनुमान 'इनपुट उन्मुख दृष्टिकोण' के माध्यम से लगाया जाता है, जिसमें लागत को न्यूनतम कर दिया जाता है, जबकि राजस्वगत कार्यकुशलता 'आउटपुट उन्मुख दृष्टिकोण' का अनुसरण करती है और उसका उद्देश्य राजस्व को अधिकतम करना होता है।

**आउटपुट-उन्मुख तकनीकी कार्य-कुशलता:** इनपुट समूह को ध्यान में रखते हुए उसी इनपुट समूह से निर्माण किया जाने वाला अधिकतम आउटपुट आउटपुट-उन्मुख तकनीकी कार्य-कुशलता की माप करता है। मान लें कि $\varphi^*$ इस रू प में $\varphi$ कम अधिकतम मूल्य है कि $(xt, \varphi yt)$प्रौद्योगिकी सेट में निहित है। तो $y^* = \varphi^* yt$ और फर्म t की आउटपुट उन्मुख तकनीकी कार्य-कुशलता $TEt = TE\ (xt, yt) = 1/\varphi^*$है। तकनीकी कार्य-कुशलता का आउटपुट उन्मुख माप निम्नानुसार प्राप्त किया जाता हैः

$$\varphi^* = \max \varphi$$

$$\text{s.t} \quad \Sigma\lambda j\ yj \geq \varphi y;\ \Sigma \lambda jxj \leq x; \Sigma \lambda j = 1;\ \lambda j \geq 0; (j = 1,2, \ldots\ldots\ldots\ldots N)$$

***इनुपुट-उन्मुख तकनीकी कार्य-कुशलता:*** इसके तहत फर्म के आउटपुट के समूह को कोई सौंपा गया कार्य माना जा सकता है तथा फर्म की कार्य-कुशलता का निर्धारण आउटपुट में कमी किए बिना उसके समस्त इनपुटों में अधिकतम समानुपातिक कटौती करते हुए किया जाता है। इसे निम्नानुसार मापा जाता हैः

$$\text{s.t} \quad \Sigma\lambda j\ yj \geq y;\ \Sigma \lambda jxj \leq \theta x; \Sigma \lambda j = 1;\ \lambda j \geq 0; (j = 1,2, \ldots\ldots\ldots\ldots N)$$

**लागतपरक कार्य-कुशलता:** इनपुट उन्मुख तकनीकी कार्य-कुशलता को मापने में सभी इनपुटों को समान माना जाता है और उद्देश्य सभी इनपुटों में उतनी ही मात्रा में कटौती करना होता है। यदि कुछ इनपुट एक बिन्दु से अधिक की सीमा तक गैर-प्रतिस्थापनीय हो जाते हैं अर्थात् वह इनपुट बाध्यकर हो जाता है तो किसी अन्य इनपुट में और कमी व्यवहार्य नहीं होती। किन्तु जब इनपुट के मूल्य उपलब्ध होते हैं, तो अधिक मंहगे इनपुट को कम करने के कार्य को कम महंगे इनपुटों को कम करने की अपेक्षा अधिक प्राथमिकता प्राप्त हो जाती है। दूसरे शब्दों में, लागतपरक कार्य-कुशलता किसी बैंकिंग फर्म के लागतपरक कार्य-निष्पादन को उस बैंक की सर्वोत्तम प्रथा (अल्पतम लागत) के अनुपात में मापती है, जो उतने ही आउटपुट का निर्माण बहिर्जात स्थितियों में करता है। इसलिए इस मामले में वस्तुपरक कार्य लक्ष्यांकित आउटपुट समूह की लागत को न्यूनतम रखना हो जाता है।

$$C^* = \min w'x$$

$$\text{s.t} \quad \Sigma\lambda j\ yj \geq y;\ \Sigma \lambda jxj \leq x; \Sigma \lambda j = 1;\ \lambda j \geq 0; (j = 1,2, \ldots\ldots\ldots\ldots N)$$

***राजस्वगत कार्य-कुशलता:*** आउटपुट उन्मुख कार्य-कुशलता की माप में उद्देश्य वृद्धि की उस अधिकतम दर को ज्ञात करना होता है, जो सभी आउटपुटों के लिए व्यवहार्य हो। किन्तु जैसा कि इनपुटों के मामले में होता है, आउटपुट के मूल्य उपलब्ध होने पर कुछ आउटपुट अन्यों की अपेक्षा अधिक मूल्यवान होते हैं।

विविध प्रकार के कार्य-कुशलता मापों का मोटे तौर पर दो प्रकार के दृष्टिकोणों से अनुमान लगाया जा सकता है - ये हैं मानदंडीय और गैर-मानदंडीय दृष्टिकोण।

**मानदंडीय:** सर्वोत्तम प्रथा सीमांत का अनुमान लगाने के लिए इसके नीचे यथावर्णित तीन मुख्य मानदंडीय दृष्टिकोण होते हैंः

**I) अनुमान पर आधारित (स्टॉकॅस्टिक) सीमांत दृष्टिकोण:** इस दृष्टिकोण में सर्वाधिक कार्य-कुशल उत्पादकों के लागत, लाभ अथवा उत्पादन कार्यों का अनुमान लगाया जाता है और सीमांत से किसी संस्था के विचलन में दो

घटकों का समावेश होता है - एक यादृच्छिक चूक और एक अकुशलता शर्त। चूक वाली शर्त का अंश, जो सीमांत से विचलनों का निरुपण करता है, दुतरफा वितरण से लिया गया माना जाता है, जबकि अकुशलता एकतरफा वितरण से ली गई मानी जाती है, क्योंकि अकुशलता लागत को बढ़ा देती है। अतः अनुमान पर आधारित (स्टॅकैस्टिक) सीमांत दृष्टिकोण का अनुमान विभिन्न खंडों के आंकड़ों का उपयोग करते हुए लगाया जा सकता है।

**II)** ***वितरण रहित दृष्टिकोण:*** इस दृष्टिकोण में कार्य-कुशलता में अंतरों को कुछ समय से स्थिर माना जाता है, किन्तु इसके लिए किसी विशिष्ट वितरणपरक मान्यता की आवश्यकता नहीं होती (गोड्डार्ड, मौलीन्यूक्स और विजन; विली 2001)। प्रत्येक फर्म की अकुशलता का अनुमान उसके औसत अवशिष्ट और सीमांत पर कार्यरत फर्म के औसत अवशिष्ट के बीच का अंतर होता है, जिसमें यादृच्छिक घटक शून्य का औसत न होने का हिसाब रखने हेतु कुछ काट-छाँट की जाती है।

iii) ***स्थूल सीमांत दृष्टिकोण:*** स्थूल सीमांत दृष्टिकोण (TFA) की मान्यता यह होती है कि एक आकार वर्ग वाले बैंकों की अल्पतम औसत-लागत चतुर्थक के भीतर पूर्वानुमानित लागतों से विचलन यादृच्छिक त्रुटि का निरूपण करते हैं। सर्वाधिक और सबसे कम चतुर्थक के बीच पूर्वानुमानित लागतों में विचलन उत्पादक अकुशलताओं का निरूपण करते हैं (गोड्डार्ड, मॉलिन्यूक्स और विजन; विली, 2001)। यह दृष्टिकोण न तो अकुशलताओं और न ही यादृच्छिक त्रुटि पर किसी प्रकार की वितरणपरक धारणा थोपता हैं। स्थूल सीमांत दृष्टिकोण (TFA) स्वयं अलग-अलग फर्मों की कार्य-कुशलता के सटीक बिन्दु वाले अनुमान नहीं उपलब्ध कराता, किन्तु वह कार्य-कुशलता के समग्र स्तर का अनुमान अवश्य उपलब्ध कराता है।

***गैर-मानदंडीय:*** मुख्य गैर-मानदंडीय दृष्टिकोण हैं-आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (DEA) और मुक्त निपटान आवरण (FDH)। आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण में प्रेक्षित डाटा से एक सर्वोत्तम प्रथा सीमांत निर्मित करने हेतु तथा उस निर्मित सीमांत से सम्बन्धित कार्य-कुशलता को मापने के लिए गणितीय योजना का उपयोग किया जाता है। आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (DEA) को सर्वोत्तम प्रथा उत्पादन सीमांत की पहचान करने हेतु आउटपुट अथवा उसके मूल्यों की आवश्यकता नहीं होती। सर्वोत्तम प्रथा सीमांत की पहचान इस नग-वार रैखिक संयोजन के रूप में की गई है, जो इनपुटों और आउटपुटों के विनिर्देशनों को ध्यान में रखते हुए सर्वोत्तम प्रथा प्रेक्षणों के सेट को जोड़ता है। इसका परिणाम आउटपुट उन्मुख आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (DEA) हेतु एक उत्तल उत्पादन सीमांत निर्मित करने और इनपुट उन्मुख आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (DEA) हेतु अवतल उत्पादन सीमांत उत्पन्न करने के रूप में सामने आता है (बर्जर और हम्फ्री, 1997)। फलतः किसी निर्णयकर्ता इकाई (DMU) के लिए आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (DEA) के कार्य-कुशलता अंक को किसी निरपेक्ष मानक द्वारा परिभाषित नहीं किया जाता, अपितु वह अन्य रूपों द्वारा परिभाषित होता है (बॉक्स IX.6 देखें)। आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (DEA) 0 और 1 के बीच एक अंतरिक नमूना कार्य-कुशलता अंक सृजित करता है, जिसमें 1 सर्वाधिक कार्य-कुशल होता है।

मुक्त निपटान आवरण (FDH) दृष्टिकोण में उत्तलता की धारणा को त्याग दिया जाता है और प्रेक्षित आंकड़ों का बेहतर सन्निकरण की अनुमती देने की तथा आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (DEA) की अपेक्षा बड़े कार्य-कुशलता अनुमान लगाए जाने की अपेक्षा की जाती है। हालांकि, आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (DEA) से होने वाला एक महत्वपूर्ण लाभ यह है कि यह सर्वाधिक कुशल निर्णयकर्ता इकाइयों का निर्धारण करने में आंकड़ों के सम्बन्ध में कोई विशिष्ट कार्यपरक रूप को अधिरोपित नहीं करता और इसलिए भिन्न-भिन्न आयामों वाले इनपुटों और आउटपुटों के बीच अन्योन्य-क्रिया को ग्रहण कर लेता है। दूसरी ओर, आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (DEA) की प्रमुख कमी यह है कि वह आंकड़ों को माप सम्बन्धी चूक से मुक्त मानता है और इसलिए आंकड़ों की अखंडता का आश्वासन न होने की स्थिति में अपरिशुद्ध परिणाम दे सकता है (अवकिरन, 1998)।

**सन्दर्भ :**

गोमेज - गो-जालेज, जोस ई., निकोलस एम. कीफर (2006): बैंक फेल्योरः एविडेंस फ्रॉम दि कोलम्बियन फाइनैन्सियल क्राइसिस, कार्नेल युनिवर्सिटी, इथाका, न्यूयार्क।

इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ बैंकिंग एण्ड फाइनैन्स (2005): फाइनैन्सियल मैनेजमेंट, मैकमिलन, मुंबई।

प्रसन्ना चन्द्रा (2004): फाइनैन्सियल मैनेजमेंटः थियरी एण्ड प्रैक्टिस, टाटा मैक्ग्रा हिल, नई दिल्ली।

रिज़र्व बैंक आफ न्यूजीलैंडः कैपिटल एडिक्वेसी रेशियोज फॉर बैंक्स - सिम्प्लीफाइड एक्सप्लनेशन एण्ड एक्जाम्पल ऑफ कल्कुलेशन।

# X

# बैंकिंग में विनियामक एवं पर्यवेक्षी चुनौतियां

10.1 वैश्वीकरण की शक्तियों और प्रौद्योगिकी के प्रादुर्भाव द्वारा संचालित बैंकिंग क्षेत्र में विश्वभर में तीव्र रूपांतरण हुआ है। बैंकिंग विनियमन का व्यापक ढांचा, जिसे कई एक देशों में 1930 वाले दशक में लागू किया गया था और 1950 वाले दशक तक जारी रहा, जो ब्याज दरों, पूंजी के आवागमन, पोर्टफोलियो के विन्यास तथा वित्तीय संस्थाओं के खण्डीकरण पर नियंत्रणों से संबंधित था, उसे 1980 वाले दशक में इस आधार पर पर्याप्त रूप से सुगम बना दिया गया कि इससे वित्तीय प्रणाली में अधिक कार्य-कुशलता आएगी। इसके साथ ही यह महसूस किया गया कि अविनियमन के फलस्वरूप वित्तीय संस्थाओं को दी गई अधिक से अधिक स्तर की स्वतंत्रता के साथ ही पर्यवेक्षी प्राधिकारियों को अपेक्षाकृत व्यापक और सुदृढ़ अधिकार (शक्तियां) प्रदान किए जाने की आवश्यकता थी। बैंकिंग एक्सपोज़रों के स्वरूप में परिवर्तन, लेन-देनों की बढ़ती जटिलता तथा तुलनपत्र में शामिल नहीं किए जाने वाले कारोबार, विशेषकर व्युत्पन्नियों के विस्तार, ने भी विद्यमान पूंजी आवश्यकताओं के साथ-साथ बैंकों की आंतरिक जोखिम प्रबंधन प्रणालियों के सुदृढ़ीकरण को और भी आवश्यक बना दिया। बैंक जिस ढंग से विनियमित किए जा रहे थे, उसका पुनरावलोकन 1980 वाले दशक और 1990 वाले दशक के प्रारंभिक दिनों में बैंकों की विफलताओं की संख्या और उनके विस्तार, जो कई एक प्रेक्षकों के अनुसार नैतिक बाधा से संबंधित समस्याओं और विकृत प्रोत्साहन योजनाओं के फलस्वरूप थीं, द्वारा अभिप्रेरित था (अल्बर्ट और भट्टाचार्य, 1998)।

10.2 बैंकों के अवास्तविक अनूठेपन और उनके अधिक विनियमन के कतिपय कारण हैं। बैंक जनता को बचतों को संगृहीत करने तथा बचतकर्ताओं को सुरक्षा एवं प्रतिलाभ उपलब्ध कराने हेतु उन्हें अभिनियोजित करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होते हैं। बैंकों की लीवरेजिंग की क्षमता (एक की तुलना में 10 से अधिक) सार्वजनिक निधियों के एक अत्यधिक बड़े परिमाण को नियंत्रित करने का अवसर प्रदान करती है। अत: एक अर्थ में वे न्यासियों के रूप में काम करते हैं और इस प्रकार उन्हें सौंपी गई निधियों के अभिनियोजन के लिए वे आवश्यक रूप से 'अनुकूल एवं उपयुक्त' होने चाहिए। बैंक भुगतान प्रणाली का भी प्रबंधन करते हैं। इस प्रकार किसी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था के लिए अलग-अलग बैंकों और बैंकिंग प्रणाली में जनता का विश्वास महत्त्वपूर्ण होता है। भारी मात्रा में आकस्मिक रूप से धन के आहरण का सामना करने वाला बैंक जिस गति से विफल होता है, उसकी किसी अन्य संगठन से तुलना नहीं की जा सकती। भारत जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था के मामले में जमाकर्ताओं में अधोमुखी जोखिम के प्रति वैसे भी बहुत कम सहनशीलता होती है, जिनमें से कई एक अपने जीवन भर की बचतें बैंकों में जमा रखते हैं इसलिए नैतिक, सामाजिक, राजनीतिक और मानवीय दृष्टिकोण से विनियामक का दायित्व अपेक्षाकृत और अधिक दुरूह हो जाता है (मोहन, 2004)। बैंकिंग प्रणाली में जनता के विश्वास को बनाए रखने के उद्देश्य से उन्हें प्रभावी ढंग से विनियमित और पर्यवेक्षित किया जाना अपेक्षित होगा तथा जमाकर्ताओं को बैंकों द्वारा अतिरिक्त रूप से जोखिम उठाए जाने, विशेषकर सूचना असममिति, से संरक्षित रखा जाना अपेक्षित होगा (मोहन, 2007)।

10.3 विनियामक प्राधिकारियों के दृष्टिकोण से बैंकों का अनूठापन अपेक्षाकृत अतरल वैयक्तिक आस्तियों तथा उनके तुलन पत्रों के दोनों पक्षों में चलनिधि जोखिमों की तुलना में तरल देयताएं निर्मित करने में मध्यवर्तियों के रूप में उनकी भूमिका से निर्मित होता है। 1980 वाले दशक के प्रारंभिक काल से बैंकिंग विनियामकों ने जिन चुनौतियों का सामना किया है, उनमें से कुछ निम्नलिखित से उद्भूत हुई थीं- (i) आर्थिक प्रणालियों के अविनियमन, जिनसे आंशिक रूप में वित्तीय संस्थाओं के बीच अधिकाधिक प्रतिस्पर्धा के फलस्वरूप अपेक्षाकृत जोखिमपूर्ण प्रणालियों का निर्माण हुआ, (ii) विशेषतः व्युत्पन्नियों के क्षेत्र में वित्तीय नवोन्मेष की लहर (iii) वित्तीय प्रवाहों का अत्यधिक घोषित अन्तरराष्ट्रीयकरण तथा वित्तीय बाजारों का अधिकाधिक एकीकरण। इन चुनौतियों से बैंकों की जोखिम प्रबंधन कार्यविधियों की पर्याप्तता के संबंध में कतिपय संदेह उठे तथा उन्होंने समय-समय पर विनियामक ढांचे में कतिपय परिवर्तन लाने में योगदान किया।

10.4 पर्यवेक्षकों को उस वित्तीय उद्योग के लिए उपयुक्त विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचा विकसित करने की निरंतर बढ़ रही चुनौती का सामना करना पड़ रहा है, जो परिवर्तन की स्थायी स्थिति से गुजर रहा है। बैंकिंग प्रणाली में हुई घटनाओं के अनुरूप विश्वभर के विनियामकों ने बैंकों के विनियमन के मूलभूत उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए नयी पद्धतियों और दृष्टिकोणों को अपनाया है। बैंकिंग विनियमन के संबंध में कतिपय मोर्चों पर नयी सोच उभरी है। महत्त्वपूर्ण प्रवृत्तियों में निम्नलिखित का समावेश रहा है और वह अब भी उसी रूप में जारी है - (i) विनियमन से हटकर पर्यवेक्षण की दिशा में प्रस्थान और (ii) विशिष्ट पोर्टफोलियो बाधाओं से हटकर उस मूल्यांकन की ओर प्रस्थान करना जिससे यह सुनिश्चित हो कि वित्तीय फर्म के कारोबार का समग्र प्रबंधन विवेकसम्मत ढंग से संचालित हो रहा है। इसके साथ ही, बाजारों, काउन्टरपार्टियों को अतिरिक्त जोखिम उठाने की प्रवृत्ति को बेहतर ढंग से नियंत्रित करने में समर्थ बनाने हेतु प्रकटनों पर अधिकाधिक ध्यान दिया जा रहा है। बाजार-स्थल की नयी वास्तविकताओं के संदर्भ में विनियमन की पुरानी शैली क्यों अपनाई जा रही है, इसके कतिपय कारण हैं। प्रथमतः नए लिखतों तथा जोखिम प्रबंधन की पद्धतियों का द्रुत विकास तुलनपत्र के अनुपातों की यांत्रिक प्रयोज्यता को अनुपयुक्त बना देता है। दूसरे, विनियमन वित्तीय इंजीनियरों के लिए नियमों के आस-पास मार्ग ढूंढ निकालने हेतु प्रोत्साहन के अवसरों

का सृजन करता है। और अधिक सामान्य रूप से विनियमन किसी जटिल वित्तीय संगठन में जोखिम को नियंत्रित करने हेतु आवश्यक सूक्ष्मताओं और कृत्रिमता का पता लगाने की दृष्टि से एक अत्यधिक कुंद हथियार है। पर्यवेक्षकों को किसी वित्तीय फर्म के व्यवसाय के सभी पहलुओं को समझना होगा तथा उसे उसके समक्ष उपस्थित होने वाली जोखिम के बहुविध स्रोतों का ज्ञान रखना होगा।

10.5 एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन उस भूमिका की पहचान है जो वित्तीय क्षेत्र के सरकार अथवा विनियामकों द्वारा किए जाने वाले पर्यवेक्षण को बढ़ाने अथवा कुछ अंश तक प्रतिस्थापित करने में बाज़ार अनुशासन द्वारा निभाई जा सकती है। बाज़ार अनुशासन की आवश्यकता क्यों होती है, इसका कारण यह है कि बैंक इस प्रकार का व्यवहार करने के प्रति तत्पर रहते हैं, जिससे नैतिक संकट का प्रदर्शन हो। इसके परिणामस्वरूप बैंक अतिरिक्त जोखिम उठाने लग सकते हैं। बैंक जमाराशियां संगृहीत करते हैं और इन निधियों का जोखिमपूर्ण आस्तियों में निवेश कर देते हैं। बाज़ार अनुशासन एक ऐसी व्यवस्था होती है, जो बैंकों के लिए जोखिम उठाने के कार्य को और महंगा बनाकर अतिरिक्त जोखिम उठाने की प्रवृत्ति पर संभवतया रोक लगा सकती है। हाल के वर्षों में पर्याप्त रूप से ध्यान आकर्षित करने वाली एक और प्रवृत्ति है कि क्या वित्तीय पर्यवेक्षण के दायित्व को केन्द्रीय बैंक से वापस लिया जा सकता है और उसे एक अलग पर्यवेक्षक को सौंपा जा सकता है । अमरीका और यूरोप में, जहां विनियामक संगठनों के प्रतियोगी मॉडलों की व्यवस्था विद्यमान है, बाज़ार और विनियामक की गंभीर विफलताओं वाली हाल की घटना दोनों ही मॉडलों में सुधार की आवश्यकता को रेखांकित करती है। जबकि, यू.के. के एकल विनियामक मॉडल को संपूर्ण विश्व में निरंतर रूप से व्यापक स्वीकार्यता प्राप्त हो रही थी, वहीं नार्दन रॉक के संकट ने यह दिखा दिया है कि केन्द्रीय बैंक अर्थात् अंतिम ऋणदाता और वित्तीय स्थिरता के प्रबंधक तथा समन्वित वित्तीय विनियामक के बीच सूचना की असममिति और संप्रेषण अंतर इस प्रकार के वित्तीय पर्यवेक्षण की अन्तर्निहित कमजोरियों का कैसा परिणाम हो सकता है।

10.6 भारत में बैंकों के विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचे में पिछले डेढ़ दशकों के दौरान बैंकों के विनियमन एवं पर्यवेक्षण से संबंधित परिचालनात्मक परिवेश और अंतरराष्ट्रीय मानदंडों/परम्पराओं में हुए परिवर्तनों के अनुरूप पर्याप्त रूपान्तरण हुआ है। विनियमन का संकेन्द्रण बैंकिंग क्षेत्र को सुदृढ़ बनाने तथा उसे अधिकाधिक परिचालनात्मक लोच उपलब्ध कराने की दृष्टि से सूक्ष्म से हटकर स्थूल और विवेकसम्मत तत्त्वों की ओर चला गया है। वित्तीय मध्यवर्तियों, वित्तीय नवोन्मेषों और प्रौद्योगिकीय उन्नतियों, विविध प्रकार की वित्तीय सेवाओं के प्रदाताओं के बीच कार्यकलापों के अभिसरण के फलस्वरूप घरेलू और सीमा-पार से पैदा होने वाली चुनौतियों से निपटने के लिए उपयुक्त व्यवस्थाएं लागू कर दी गई हैं। विश्वभर में बैंकों के पर्यवेक्षण की अद्यतन प्रवृत्तियों पर भारत के संदर्भ में उनकी प्रासंगिकता का पता लगाने के उद्देश्य से गहन रूप से नज़र रखी जा रही है।

10.7 इस अध्याय में वैश्विक संदर्भ में बैंकों से संबंधित विविध प्रकार के विनियामक एवं पर्यवेक्षी मुद्दों पर हाल के चिंतन की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है तथा रिज़र्व बैंक के समक्ष उपस्थित विविध प्रकार की विनियामक एवं पर्यवेक्षी चुनौतियों को निरूपित किया गया है। उक्त अध्याय को सात खण्डों में विभाजित किया गया है। प्रस्तावना के उपरान्त खण्ड II में बैंकिंग क्षेत्र के विनियमन के पीछे निहित सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया गया है। खण्ड III में वैश्विक संदर्भ में पर्यवेक्षी परंपराओं में हाल की घटनाओं का ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है। भारत के वर्तमान विनियामक एवं पर्यवेक्षी ढांचे पर खण्ड IV में चर्चा की गई है। खण्ड V में उन विनियामक एवं पर्यवेक्षी मुद्दों/चुनौतियों की गहनतापूर्वक तलाश की गई है, जो भारतीय संदर्भ में पैदा हुए हैं। वैश्विक और घरेलू घटनाओं के प्रकाश में खण्ड VI में भारत में विनियमन एवं पर्यवेक्षण को और अधिक सुदृढ़ बनाए जाने की दृष्टि से सुझाव दिए गए हैं। इस अध्याय का समापन खण्ड VII में उपसंहारात्मक टिप्पणी के साथ होता है।

## II. बैंकिंग विनियमन का सिद्धांत

10.8 बैंक विनियमन के मूल औचित्य को किसी आर्थिक प्रणाली में बैंकों द्वारा निभाई जाने वाली भूमिका अर्थात् चलनिधि के सर्जक के रूप में ढूंढा जा सकता है। बैंक किसी अर्थव्यवस्था में सामान्य रूप से और वित्तीय प्रणाली में विशेष रूप से एक अनूठी और मुख्य भूमिका निभाते हैं। बैंक जनता की धनराशि के निक्षेपागार होते हैं, जो बाद में उन्हीं के द्वारा उधार देने और निवेश संबंधी गतिविधियों में जोखिम उठाकर प्रतिलाभ प्राप्त करने हेतु उपयोग में लाई जाती है। चूंकि वे अत्यधिक लीवरेज्ड होते हैं, जमाकर्ताओं के हितों को विवेकसम्मत विनियम के माध्यम से संरक्षित किया जाना होता है। प्रभावी तौर पर, बैंकों की स्थिति विशिष्ट होती है, क्योंकि वे उनके पास रखी जनता की धनराशि के न्यासी होते हैं। अपने उधार देने और जमा स्वीकार करने के कार्यों के माध्यम से बैंकिंग प्रणाली समग्र मुद्रा आपूर्ति को प्रभावित करती है और इस प्रकार वह मौद्रिक प्रेषण व्यवस्था की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी होती है। मौद्रिक प्रबंधन के दृष्टिकोण से बैंकों के विनियमन के अलावा, परंपरागत रूप से बैंकों के विनियमन को जमाकर्ताओं के संरक्षण, सूचना की असममिति में कमी लाने और बैंकिंग के सुदृढ़ विकास को सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक माना गया था। बैंकों के अपरिष्कृत जमाकर्ता सूचना की विषमता के कारण बैंकों पर प्रभावी ढंग से निगरानी नहीं रख पाएंगे। यह तर्क दिया जाता है कि जमाकर्ताओं द्वारा बैंकों की स्थिति के बारे में कुछ निर्णय लिए जाने पर भी यह कार्य कठिन और महंगा सिद्ध होगा। किसी जमाकर्ता द्वारा एक बैंक की देयता की तुलना में उसकी आस्ति के चालू मूल्य का निर्धारण किए जाने के बावजूद स्थिति बदल सकती है, क्योंकि बैंकिंग का कारोबार बैंकों द्वारा उनकी आस्ति धारिता में निरंतर आधार पर परिवर्तन किए जाने और नये जमाकर्ताओं तथा लेनदारों को स्वीकार किए जाने के कारण गतिशील होता है। वास्तव में बैंकिंग विनियमन में मौद्रिक स्थिरता के उद्देश्य को भी सामान्य रूप से जमाकर्ता के संरक्षण के ध्येय के साथ जोड़ रखा गया है । यह तर्क दिया जाता है कि बैंकिंग विनियमन में व्यक्तियों और व्यवसायों

के लिए मौद्रिक लेन-देन निर्धारित किए जाने के बारे में एक स्थिर ढांचे का भी प्रावधान किया जाना चाहिए।

10.9 बैंक समय-समय पर उनसे भारी मात्रा में आकस्मिक आहरणों और विफलताएँ (बंद हो जाने) जैसी समस्याओं से प्रभावित हुए हैं। इन समस्याओं के मुख्य कारण रहे हैं, घटिया ऋण नियंत्रण, संबद्ध उधार, अपर्याप्त चलनिधि और पूंजी, जो पुनः घटिया आंतरिक अभिशासन के कारण उद्भूत हुई हैं (गुडहर्ट एवं अन्य, 1998)। कालान्तर में, जब बैंक संकट व्यापक रूप से व्याप्त हो गए, तो प्रणालीगत जोखिम को रोकने और वित्तीय संकटों से बचने के लिए प्राधिकारियों द्वारा वित्तीय विनियमन को महत्त्वपूर्ण माना गया - क्योंकि लगभग सभी अर्थव्यवस्थाओं में बैंक भुगतान और निपटान प्रणालियों के संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। इस प्रकार, बैंकों का विनियमन किए जाने के दो मुख्य औचित्य हैं बैंकों पर निगरानी रखने में जमाकर्ताओं की असमर्थता और प्रणालीगत संकट का जोखिम (संतोष, 2000)।

10.10 समकालीन बैंकिंग सिद्धांत का तर्क यह है कि बैंकों जैसे वित्तीय मध्यवर्तियों को विविध प्रकार विषम सूचनात्मक समस्याओं से पैदा होने वाली वित्तीय बाज़ार की त्रुटियों को हल करने हेतु अन्तर्जात रूप से आगे आना होगा। ये संस्थाएं इस प्रकार के बाज़ार से संबंधित सूचना की अपूर्णता का उपयोग आर्थिक लाभ उठाने हेतु करने के लिए ही निर्मित होती हैं । इस प्रकार बैंक संभाव्य उधारकर्ताओं की छानबीन करने, ग्राहकों के कार्यों और प्रयासों पर निगरानी रखने, चलनिधि जोखिम बीमा उपलब्ध कराने और सुरक्षित आस्तियों का सृजन करने जैसी सेवाएं प्रदान करने हेतु आगे आते हैं। हालांकि, इष्टतम रूप में यह अपेक्षित होता है कि बाज़ार बैंकों को उपर्युक्त कार्य करने हेतु उपयुक्त प्रोत्साहन उपलब्ध कराएं। यह तर्क दिया जाता है कि गलत प्रोत्साहनों के फलस्वरूप अलग-अलग बैंकों, और कुल मिलाकर बैंकिंग प्रणाली के विनियमन के अभाव में बाज़ारों के विफल हो जाने की घटनाएं होंगी। बाज़ारों की विफलताओं की नयी घटनाओं ने बैंकिंग विनियमन को न्यायोचित सिद्ध कर दिया है (फ्रीक्सास और सैन्टोमेरा, 2002)।

10.11 बैंकिंग विनियमन का अभीष्ट कार्य पूरा न हो पाने के कतिपय पहलू इस प्रकार हैं, पहला, अलग-अलग बैंकों की विफलता को रोकना बैंकिंग विनियमन का मूलभूत संकेन्द्रण नहीं है बशर्ते जमाकर्ता संरक्षित हों तथा यथेष्ट रूप से बैंकिंग सेवाएं जारी रखी जाएं। दूसरा, बैंक विनियमन को बैंक को सरकारी निर्णयों द्वारा परिचालित करने के बैंकरों के निर्णय का स्थान नहीं लेना चाहिए। अंतिम, बैंकिंग विनियमन को अन्यों की तुलना में किसी समूह के पक्ष में नहीं झुकना चाहिए। बैंकों को अन्य संस्थाओं के साथ प्रतिस्पर्धा करने से भी संरक्षित नहीं किया जाना चाहिए।

10.12 विविध प्रकार की विशेषताओं के व्यापक रूप से समावेश वाले बैंकिंग विनियमन के ढांचे की व्याख्या करने हेतु विविध प्रकार के सैद्धांतिक मॉडलों का निर्माण किया गया हैः एक सरकारी सुरक्षा पाश की विद्यमानता बैंक आस्ति धारिता पर प्रतिबंध, पूंजी आवश्यकताएं, जोखिम प्रबंधन ढांचे का मूल्यांकन, प्रकटन आवश्यकताएं, उपभोक्ता संरक्षण और विवेकसम्मत पर्यवेक्षण। आर्थिक सिद्धांत, बैंकिंग कारोबार में प्रवेश संबंधी विनियमन की आवश्यकता और उसके प्रभाव के बारे में परस्पर विरोधी विचार उपलब्ध कराते हैं। कुछ का तर्क है कि बैंक के प्रवेश की प्रभावी छानबीन से स्थिरता को बढ़ावा देना होगा। अन्य इस बात पर बल देते हैं कि एकाधिकारवादी शक्तियों से संपन्न बैंकों के पास अधिक मताधिकार मूल्य मौजूद हैं, जिससे विवेकसम्मत जोखिम-वहन व्यवहार बढ़ जाता है (कीले, 1990)। हालांकि प्रवेश पर प्रतिबंध के विरोधी प्रतिस्पर्धा के लाभदायक प्रभावों और प्रवेश को प्रतिबंधित करने के हानिकारक प्रभावों पर बल देते हैं (श्लीफर और विश्नी, 1998)।

10.13 विविध देशों में उन गतिविधियों को विनियमित किया जाता है, जो बैंक संचालित करते हैं। हालांकि, इस सिद्धांत पर कोई आम राय नहीं बनी है कि किसी बैंक द्वारा निष्पादित की जा सकने वाली गतिविधियों का सही स्वरूप क्या होना चाहिए। बैंक गतिविधियों और बैंकिंग-वाणिज्य संपर्कों को प्रतिबंधित रखने के पांच मुख्य सैद्धांतिक कारण हैं। पहला, बैंकों की प्रतिभूतियों की हामीदारी करने, बीमा हामीदारी करने और स्थावर संपदा में निवेश करने जैसी विभिन्न प्रकार की गतिविधियों में संलग्न होने पर हितों के टकराव की स्थिति पैदा हो सकती है। उदाहरण के लिए इस प्रकार के बकाया ऋणों वाली फर्मों की सहायता करने हेतु बैंक प्रतिभूतियों को अविज्ञ (गैर-जानकार) निवेशकों को 'डंप' कर देंगे (जॉन आदि, 1994 : मेरिक और सॉंडर्स, 1985)। दूसरा, बैंकों को अपेक्षाकृत व्यापक गतिविधियों में संलग्न होने की अनुमति दिए जाने पर उन्हें जोखिम को उस सीमा तक बढ़ा लेने के अवसर प्राप्त होंगे, जहां तक नैतिक संकट अपेक्षाकृत अधिक जोखिमपूर्ण व्यवहार को प्रोत्साहित करता है (ब्वॉयड और अन्य, 1998)। तीसरा, जटिल बैंकों पर निगरानी रखना कठिन होता है। चौथा, इस प्रकार के बैंक राजनीतिक और आर्थिक रूप से इतने शक्तिशाली हो सकते हैं कि उन्हें 'अनुशासित रखना कठिन' हो जाएगा। अंतिम, विशाल वित्तीय संगुट प्रतिस्पर्धा और कार्य-कुशलता में कमी ला सकते हैं। इन तर्कों के अनुसार सरकारें बैंक गतिविधियों को प्रतिबंधित करके बैंकिंग में सुधार ला सकती हैं। इसके अलावा, नैतिक संकट से संबंधित समस्याओं को बढ़ाने वाले उदार निक्षेप बीमा वाले देश में व्यापक बैंकिंग अधिकारों से जोखिम उठाने के अत्यधिक अवसर उपलब्ध होते हैं (बॉयड और अन्य, 1998)। इस प्रकार, यह तर्क दिया जाता है कि बैंक गतिविधियों पर प्रतिबंध से उदार जमा निक्षेप बीमा वाले देशों में समाज कल्याण में वृद्धि होती है।

10.14 हालांकि, बैंकों को गतिविधियों की व्यापक श्रेणियों में संलग्न होने की अनुमति दिए जाने के वैकल्पिक सैद्धांतिक कारण भी मौजूद हैं। पहला, अपेक्षाकृत कम विनियामक प्रतिबंधों से बड़े पैमाने की किफायतों और संभावनाओं के दोहन की अनुमति प्राप्त होती है (क्लैसेन्स और क्लिंगबील, 2000)। दूसरा, अपेक्षाकृत कम विनियामक प्रतिबंधों से बैंकों के अधिकार मूल्य में वृद्धि हो सकती है और उससे अधिक सतर्क व्यवहार के प्रति प्रोत्साहनों में वृद्धि हो सकती है। अंतिम, अपेक्षाकृत व्यापक क्रियाकलापों से बैंक आय की धाराओं में विविधीकरण लाने में समर्थ हो सकते हैं, जिससे और अधिक स्थिर बैंकों की रचना हो सकती है।

10.15 जमाकर्ताओं के हितों को संरक्षित करने के उद्देश्य से कई एक देशों में सुनिश्चित निक्षेप बीमा योजनाओं की व्यवस्था है। हालांकि, निक्षेप बीमा योजनाओं की व्यवस्था पर लागत आती है। उनसे अतिशय जोखिम-वहन व्यवहार को प्रोत्साहन मिल सकता है, जिससे, कुछ की मान्यता के अनुसार स्थिरीकरण से प्राप्त होने वाले लाभ निष्प्रभावित हो जाते हैं। तथापि, कइयों का तर्क है कि विनियमन एवं पर्यवेक्षण से एक ऐसी बीमा योजना तैयार करके नैतिक संकट की समस्या को नियंत्रित किया जा सकता है, जिसमें उपयुक्त व्याप्ति सीमाओं, व्याप्ति की संभाव्यता, सहबीमा, निधीयन, प्रीमियम ढांचे, प्रबंधन और सदस्यता संबंधी आवश्यकता का समावेश हो। हालांकि, निक्षेप बीमा का प्रभाव उस संस्थागत परिवेश के फलस्वरूप भिन्न-भिन्न हो सकता है, जो देश में विद्यमान होता है। यदि कानून का राज, बैंक विनियमन एवं पर्यवेक्षण अथवा सूचना परिवेश पर्याप्त रूप से कमज़ोर है, तो निक्षेप बीमा, जिससे बाजार अनुशासन में कमी आती है, बैंकों पर रखी जाने वाली निगरानी को इतना कमजोर बना सकता है कि उससे बैंकिंग क्षेत्र संकटों के प्रति अधिक असुरक्षित हो जाए (डेमिर्गक-कंट एवं केन, 2002)।

10.16 कुछ सैद्धान्तिक मॉडलों में कतिपय कारणों से पर्यवेक्षकों को व्यापक अधिकार प्रदान किए जाने पर बल दिया जाता है। पहला, बैंक जमाकर्ताओं/निवेशकों द्वारा निगरानी रखी जाने की दृष्टि से महंगे और कठिन होते हैं। इसके फलस्वरूप बैंकों पर अत्यल्प निगरानी रखी जाती है, जिसमें इष्टतम से कम कार्य-निष्पादन एवं अस्थिरता अन्तर्निहित होती है। आधिकारिक पर्यवेक्षण से बाजार की इस विफलता में सुधार लाया जा सकता है। दूसरा, अन्तरराष्ट्रीय विषमताओं के कारण बैंक संक्रामक और सामाजिक रूप से मंहगे भारी मात्रा में आकस्मिक आहरणों के प्रति प्रवण होते हैं। ऐसी स्थिति में पर्यवेक्षण सामाजिक रूप से एक कुशल भूमिका निभाता है। तीसरा, कई देश निक्षेप बीमा योजनाएं अपनाने का विकल्प चुनते हैं। इस स्थिति में (i) बैंकों द्वारा अतिशय जोखिम-वहन की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलता है; और (ii) बैंकों पर निगरानी रखने हेतु जमाकर्ताओं के प्रोत्साहनों में कमी आ जाती है। ऐसी परिस्थितियों में सुदृढ़ आधिकारिक पर्यवेक्षण से बैंकों को अतिशय जोखिम उठाने वाले व्यवहार में संलग्न होने से रोकने में सहायता प्राप्त हो सकती है और इस प्रकार बैंक के विकास, कार्य-निष्पादन और स्थिरता में वृद्धि लाई जा सकती है।

10.17 विनियमन का एक अन्य उद्देश्य एक ऐसे ढांचे की रचना करना होता है, जो बैंकों के बीच कार्य कुशलता और प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करता है। प्रतिस्पर्धा और कार्यकुशलता, अन्य बातों के साथ-साथ, किसी बाजार में परिचालनरत बैंकों की संख्या, अन्य बैंकों को प्रवेश एवं प्रतिस्पर्धा करने की स्वतंत्रता तथा बैंकों की अपने ग्राहकों की सेवा करने हेतु एक उपयुक्त आकार ग्रहण करने की योग्यता पर आश्रित होती हैं । ग्राहक संरक्षण के उद्देश्य को सामान्यतया अच्छे बैंकिंग सिद्धांतों से सुसंगत माना जाता है। यह तर्क दिया जाता है कि प्रकटन और सुविज्ञ ग्राहक प्रतिस्पर्धात्मक सेवाएं प्रदान करने वाले बैंकरों के लिए लाभकर सिद्ध होंगे।

10.18 इसके विपरीत, शक्तिशाली पर्यवेक्षक बैंक के कार्य-निष्पादन पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं। शक्तिशाली पर्यवेक्षक अपने अधिकारों का प्रयोग अनुकूल संघटकों को लाभ पहुंचाने, अभियान संबंधी दान आकर्षित करने तथा रिश्वत लेने के लिए कर सकते हैं (श्लीफर एवं विश्नी, 1998, द्जानकोव आदि, 2002 तथा क्विंटिन एवं टेलर, 2004)। इन परिस्थितियों में शक्तिशाली पर्यवेक्षण सकारात्मक रूप से भ्रष्टाचार से संबंधित होगा तथा उससे बैंक के विकास, कार्य-निष्पादन और स्थिरता में सुधार नहीं आएगा। काणे (1990) और बूट तथा ठाकोर (1993) एक अलग परिप्रेक्ष्य में कर-दाताओं और बैंक पर्यवेक्षकों के बीच एजेन्सी समस्या पर ध्यान संकेन्द्रित करते हैं। राजनीतिक प्रभाव पर ध्यान संकेन्द्रित करने की अपेक्षा विशेष रूप से बूट और ठाकोर (1993) बैंकों पर निगरानी रखने में पर्यवेक्षकों की योग्यता के बारे में अनिश्चितता होने पर स्वार्थी बैंक पर्यवेक्षकों के व्यवहार का स्वरूप तैयार करते हैं। इन स्थितियों में वे यह दर्शाते हैं कि पर्यवेक्षक सामाजिक रूप से इष्टतम से कम कार्रवाइयां कर सकते हैं। इस प्रकार, बैंक पर्यवेक्षकों के समक्ष उपस्थित प्रोत्साहनों तथा पर्यवेक्षण पर निगरानी रखने में कर-दाताओं की योग्यता के आधार पर, अपेक्षा से अधिक पर्यवेक्षी अधिकारों से बैंक परिचालन अवरुद्ध हो सकता है।

10.19 यह बात ध्यान में रखना महत्त्वपूर्ण है कि जहां, एक उपयुक्त विनियामक प्रणाली से वित्तीय संस्थाओं को निश्चित रूप से लाभ पहुंचता है, इस बात के पर्याप्त साक्ष्य मौजूद नहीं हैं कि विनियामक अधिकार क्षेत्र के अस्तित्व में होने से संस्थाएं अपेक्षाकृत अधिक सुदृढ़ और आघातों के प्रति कम प्रवण होती हैं (फीबिग, 2001)। कुछ अर्थशास्त्रियों का दावा यह है कि इस बात का कोई साक्ष्य मौजूद नहीं है कि पर्यवेक्षण सफल होता है (बार्थ और अन्य, 2004)। इसके बजाय, वे यह तर्क देते हैं कि बाज़ार की निगरानी को बढ़ावा देने वाले विनियमन अपेक्षाकृत गहन वित्तीय प्रणाली से जुड़े होते हैं तथा उनमें संकटों की संभावना कम होती है।

10.20 कुछ लोग बैंकों के आधिकारिक पर्यवेक्षण के बारे में संदेह व्यक्त करते हुए निजी क्षेत्र द्वारा पर्यवेक्षण पर अधिक निर्भरता की वकालत करते हैं । वे यह तर्क देते हैं कि बाजार अनुशासन की अपेक्षाकृत अधिक भूमिका बैंकिंग उत्पादों के प्रबंधकों और उपभोक्ताओं, दोनों ही की ओर से अविवेकपूर्ण व्यवहार के प्रति अवरोधक कारक का काम करेगी। तथापि, इस मॉडेल को व्यापक रूप से नहीं अपनाया जाता। बैंकिंग क्षेत्र को अब भी सामाजिक और राजनीतिक रूप से इतना महत्वपूर्ण माना जाता है कि उसे पूर्णतः बाज़ार की व्यवस्था के अनुरूप कार्य करने के लिए नहीं छोड़ा जा सकता। हालांकि, बाज़ार अनुशासन पर अपेक्षाकृत रूप से अधिक बल दिया जाता है, तथापि विशेषतः उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में निजी निगरानी की अपनी सीमाएं होती हैं। पर्यवेक्षी एजेन्सियों को भी निजी निगरानी को प्रोत्साहित करना चाहिए। कुछ पर्यवेक्षी एजेन्सियां बैंकों के लिए उनकी गतिविधियों की पूरी श्रेणी और जोखिम प्रबंधन कार्यविधियों के संबंध में यथार्थपरक, व्यापक और समेकित सूचना प्रस्तुत करना

आवश्यक कर देती हैं। कुछ देश तो सूचना के त्रुटिपूर्ण एवं भ्रांतिजनक होने पर बैंक के निदेशकों को कानूनी तौर पर ज़िम्मेदार बना देते हैं। इसके अलावा, कुछ देश निजी निगरानी को प्रेरित करने के लिए विश्वसनीय रूप से ''कोई निक्षेप बीमा नहीं'' नीति लागू करते हैं। अपर्याप्त रूप से विकसित पूंजी बाज़ारों, लेखांकन मानदंडों और कानूनी प्रणालियों वाले देश निजी निगरानी पर प्रभावी रूप से निर्भर रहने में समर्थ नहीं हो सकते। इससे भी आगे बढ़कर बैंकों की जटिलता और अपारदर्शिता अत्यधिक विकसित अर्थव्यवस्थाओं में भी निजी क्षेत्र की निगरानी को कठिन बना सकती है। अतएव इस परिप्रेक्ष्य से निजी निगरानी पर अत्यधिक निर्भरता का परिणाम जमाकर्ताओं के शोषण तथा बैंकों के खराब कार्य-निष्पादन के रूप में सामने आ सकता है।

10.21 अमरीकी सब-प्राइम संकट के दुष्परिणामों के कारण वैश्विक वित्तीय बाज़ारों में हुई हाल की घटनाओं ने बैंकिंग उद्योग के कतिपय विनियामक और पर्यवेक्षी पहलुओं पर पुनर्चिंतन को जन्म दिया है। उदाहरण के लिए, यू.के. के लिए यह महत्त्वपूर्ण हो गया है कि वह बैंकों की विफलता की प्रवृत्ति को रोकने और उसकी निक्षेप बीमा योजना को पुनर्व्यवस्थित करने हेतु एक प्रभावी प्रणाली पर विचार करे। अमरीका में उभर कर सामने आने वाला एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा है खण्डित विनियामक प्राधिकरण के कारण होने वाली असुविधाओं पर काबू पाने हेतु पर्यवेक्षी प्रणाली को युक्तिसंगत बनाना और गैर-बैंकिंग वित्तीय मध्यवर्तियों के प्रभावी विनियमन को विस्तारित करना। निक्षेप बीमा और केन्द्रीय बैंक निधीयन जैसी किसी भी आकस्मिकता का प्रबंधन करने हेतु इस समय लागू नीतियों की प्रभावशीलता पर अत्यधिक ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है। बहस का एक अन्य क्षेत्र इस मुद्दे पर केन्द्रित है कि क्या विनियामक प्रणालियां नियमों और सिद्धांतों पर आधारित होनी चाहिए। अधिक सूत्रीकृत दृष्टिकोण के समर्थकों की मान्यता यह है कि सिद्धांतों पर आधारित प्रणाली से बैंकों को उनके दायित्वों को पूरा करने हेतु पर्याप्त अवसर प्राप्त होता है। दूसरी ओर, सिद्धांतों पर आधारित विनियमन के समर्थकों का तर्क यह होता है कि सुस्पष्ट नियम अनम्य है तथा उनका सरलता से प्रवंचन किया जा सकता है। संभवतः दोनों दृष्टिकोणों के मिश्रित रूप की आवश्यकता है। कुछ प्रेक्षक यह भी प्रश्न उठा रहे हैं कि क्या ग्लास स्टीगल अधिनियम, जो वाणिज्यिक और निवेश बैंकिंग को अलग-अलग करता था, को निरस्त करना उचित था, यद्यपि यह अस्पष्ट है कि यह बंटवारा संकट को कैसे रोक सकता था (दि इकॉनॉमिस्ट, 2008)।

## III. विनियामक और पर्यवेक्षी परंपराएं - हाल की घटनाएं

10.22 बैंकिंग परिचालनों के बदलते स्वरूप के कारण बैंकिंग विनियमन और पर्यवेक्षण के कुछ पहलुओं पर नयी सोच विकसित हुई है। बैंकिंग क्षेत्र के आकार को प्रभावित करने वाली सर्वाधिक मूलभूत शक्तियां वही हैं, जो शेष अर्थव्यवस्था को प्रभावित कर रही हैं। पहली, प्रौद्योगिकीय नवोन्मेष, विशेषतः डेटा संसाधन और संचार, की उत्तेजक गति का वित्तीय क्षेत्र पर विशेष रूप से अत्यधिक प्रभाव पड़ा है। वित्तीय क्षेत्र सूचना-प्रधान क्षेत्र है और हाल के अधिकांश नवोन्मेष सूचना के संसाधन और प्रेषण के क्षेत्र में हुए हैं। दूसरी, संसाधन आवंटन का मूलभूत निर्धारक शक्ति के रूप में बाज़ार की प्रक्रियाओं की बढ़ती स्वीकार्यता के परिणामस्वरूप वित्तीय क्षेत्र का अविनियमन हो गया है। दो दशक पहले तक अधिकांश देशों में मूल्यों, उद्योग में प्रवेश, प्रतिस्पर्धात्मक परम्पराओं तथा पोर्टफोलियो विन्यास पर व्यापक नियंत्रण रखे जाने के फलस्वरूप वित्तीय क्षेत्र सर्वाधिक गंभीर रूप से विनियमित क्षेत्रों में से एक था। बैंकिंग और शेष वित्तीय क्षेत्र पर अविनियमन एवं नवोन्मेष का प्रभाव गहन रहा है। उत्पादों और सेवाओं की श्रेणियों में उल्लेखनीय रूप से व्यापकता आई है, मध्यस्थीकरण की लागतों में प्रचुर रूप से कमी आई है। सकल देशी उत्पाद के अनुपात में वित्तीय लेन-देनों में द्रुत गति से वृद्धि हुई है। इन सभी ने मिलकर अन्य बातों के साथ-साथ पूंजी के और अधिक कुशल उत्पादन एवं आवंटन, निवेश के लिए पूंजी की अपेक्षाकृत अधिक उपलब्धता तथा जोखिमों के प्रबंधन में अधिकाधिक कुशलता के माध्यम से पर्याप्त लाभों का सृजन किया है।

10.23 चूंकि परिवर्तन के इन मूलभूत प्रेरक तत्वों ने जिस विधि से बैंकों का संचालन किया जाता है, जिस विधि से उन्हें निर्मित किया जाता है उनमें तथा उनके द्वारा प्रदान किए जाने वाले उत्पादों की श्रेणी में महत्त्वपूर्ण रूपान्तरण ला दिया है, उनका पर्यवेक्षी और विनियामक प्राधिकारियों के लिए महत्त्वपूर्ण निहितार्थ है। हाल की कुछ प्रवृत्तियों में बैंकिंग परिचालनों के वैश्वीकरण और बाजारों के एकीकरण, गतिविधियों की मात्रा में विस्तार तथा वित्तीय संगुटों का प्रचुरोद्भवन और वित्तीय उत्पादों की वित्तीय नवोन्मेषों के अनुरूप बढ़ती जटिलता का समावेश है।

10.24 पहली, बैंकिंग उद्योग में वैश्वीकरण एक महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति है। पिछले दो दशकों में द्रुत गति से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में बाज़ारों के उदारीकरण और व्यावसायिक अवसरों के संयोजन के फलस्वरूप विदेशों में वैश्विक बैंक गतिविधियों की मात्रा में बढ़ोत्तरी हुई है। यह स्थिति विशेष रूप से प्रतिभूति बाज़ार में विद्यमान है, यद्यपि इसमें खुदरा क्षेत्र जैसे अन्य क्षेत्रों का भी समावेश है, जिसमें स्थानीय बाज़ारों में वैश्विक बैंकों की उपस्थिति निरंतर बढ़ती जा रही है। वित्तीय क्षेत्र के मामले में, वैश्वीकरण से आशय है विभिन्न वित्तीय बाजारों के बीच विद्यमान अवरोधों में कमी। पूंजी उन स्थानों पर सहजता से प्रवाहित हो सकती है, जहां उसे सर्वोत्तम प्रतिफल प्राप्त होते हों; संस्थाओं की विदेशी बाज़ारों तक पहुंच अपेक्षाकृत आसान हो गई है तथा विभिन्न प्रकार की वित्तीय गतिविधियों के बीच विद्यमान सीमा-रेखाएं समाप्त होती जा रही हैं। कुछ हद तक ऐसा इसलिए हो रहा है, क्योंकि वित्तीय इंजीनियरी ने पिछले प्रशासनिक नियंत्रणों को अप्रचलित बना दिया है और कुछ हद तक यह अधिक मुक्त बाजार के दर्शन के प्रति सहर्ष स्वीकृति को निरूपित करता है। बैंकिंग गतिविधियों का बढ़ता अंतरराष्ट्रीय स्वरूप निम्न प्रकार के संकेतकों से सुस्पष्ट रूप से समझने योग्य है : (i) कुल बैंक उधारों के एक अनुपात के रूप में सीमा-

पार बैंक उधारों में वृद्धि; (ii) विश्व भर में धारित बैंकिंग आस्तियों की मात्रा में वृद्धि; (iii) बैंकों के कुल लाभ में अंतरराष्ट्रीय लाभ का बढ़ता अंश। सामान्य रूप से उभरते बाज़ारों में परिचालनरत विदेशी बैंक इस प्रकार की विशेषज्ञता और वित्तीय संसाधन लाते हैं, जो अन्यथा उपलब्ध नहीं हो सकता। वे इस प्रकार के परिष्कृत जोखिम प्रबंधन साधनों को भी लागू कर सकते हैं, जो अपेक्षाकृत बड़े वित्तीय समूह के लिए विकसित किया गया होगा। एक ओर जहां ये लाभ महत्त्वपूर्ण होते हैं, वहीं विदेशी बैंकों की उपस्थिति की मात्रा के मेजबान देशों के लिए निहितार्थ हो सकते हैं। चूंकि वित्त अधिकाधिक रूप से वैश्विक और एकीकृत होता जा रहा है, अतः विवेकसम्मत पर्यवेक्षण को इस वास्तविकता को स्वीकार करना होगा।

10.25 दूसरी, क्षेत्रवार भेद समाप्त होते जा रहे हैं। कुछ दशक पहले, अधिकांश वित्तीय मध्यस्थीकरण बैंकों के माध्यम से संचालित होता था, जिसमें बीमा कंपनियों और निवेश साधनों की सुपरिभाषित भूमिकाएं हुआ करती थीं। हालांकि, अब थोक और खुदरा, दोनों ही प्रकार के बाजारों में गैर-वित्तीय फर्मों सहित कई एक विभिन्न प्रकार की संस्थाएं शामिल हैं। महत्त्वपूर्ण रूप से जोखिमों को अरचित और पुनर्योजित करने की योग्यता ने वित्तीय मध्यवर्तियों को अपना विस्तार करने तथा स्वयं उनके क्षेत्रों से बाहर वाले क्षेत्रों में भी प्रभावी रूप से प्रतिस्पर्धा करने में समर्थ बना दिया है। जहां यह प्रवृत्ति उस विनियामक छत्र या ढांचे के तहत उभरी है, जो सर्वाधिक लाभ और लोच उपलब्ध कराता है, वहीं पर्यवेक्षकों को नए क्षेत्रों में विस्तार से उद्भूत होने वाली पूंजी पर्याप्तता अथवा अनुचित जोखिम संकेन्द्रण में संभाव्य प्रणाली-व्यापी कमी के प्रति पहरेदारी करनी होगी।

10.26 तीसरी, बैंक और उनके साथ ही प्रतिभूति फर्में ऋण एक्सपोजरों की उत्पत्ति, प्रतिभूतिकरण और सक्रिय प्रबंधन में सक्रियता से शामिल होती हैं। सूचना संसाधन में हुई प्रगति ने उन जोखिम कारकों के स्वतंत्र मूल्य-निर्धारण को संभव बना दिया है, जो पहले उसी लिखत में एक साथ लिपटे रहते थे। पूंजी बाज़ार-आधारित जोखिम वितरण की ओर झुकाव के साथ ही उन नयी प्रौद्योगिकियों की सहायता से, जो अधिकाधिक स्वचालन और मानकीकरण का अवसर प्रदान करती हैं, मध्यस्थीकरण में अधिक वेग आ गया है। मध्यस्थीकरण में पूंजी बाजारों की अपेक्षाकृत अधिक भूमिका से यह भी संकेत प्राप्त होता है कि इसके पहले बैंकों द्वारा वहन की जाने वाली कई एक जोखिमें अब अन्य प्रकार के बाज़ार सहभागियों द्वारा वहन की जाती हैं। ऋण के प्रवर्तन एवं वितरण में पूंजी बाजारों पर अपेक्षाकृत अधिक निर्भरता ने बाज़ार के सहभागियों की रचनात्मक संभाव्यता को भी उजागर कर दिया है। इसके साथ ही वित्तीय मध्यस्थीकरण में गहनता के कारण हेजिंग (और स्थिति लेनेवाली) लिखतों की मांग बढ़ गई है। इसके बावजूद नए वित्तीय लिखतों ने जोखिम प्रबंधन की प्रौद्योगिकी में विपुल रूप से सुधार ला दिया है। इसका कमज़ोर पहलू यह है कि यही लिखत उपयुक्त रूप से समझे न जाने और प्रयुक्त न किए जाने पर हानि की संभाव्यता बढ़ा देते हैं, चाहे वह अपर्याप्त समझ के फलस्वरूप हो या फिर जान-बूझ कर लगाए गए लीवरेज्ड दांवों के कारण।

10.27 चौथी, ऐसा लगता है कि वित्तीय प्रणालियां पहले की अपेक्षा अधिक प्रति-चक्रीय, ऋण वृद्धि को प्रवर्धित करने तथा बाज़ार की स्थितियों का अधिक गहनता से लाभ उठाने में सक्षम हो गई हैं। वस्तुतः ''सीमांत''जोखिम, जो वित्तीय संस्थाएं स्वेच्छया उठाती हैं, पहले से अधिक हो गयी है। कुछ हद तक यह प्रतिभूतिकरण की प्रक्रिया सहित वित्तीय प्रौद्योगिकी में नवोन्मेषों का परिणाम है, जो जोखिमों को बेहतर ढंग से वितरित एवं प्रबंधित किए जाने की सुविधा प्रदान करता है। संपार्श्विक प्रतिभूतियों का अधिक व्यापक उपयोग और लेनदेन भी एक कारक है। यह प्रतिस्पर्धा की गहनता और संभवतः फर्मों के बीच विद्यमान उस विचारधारा को भी निरूपित करता है कि वे उन जोखिमों के विपरीत फलदायी होने के पहले ही उनमें अपनी संलग्नता से मुक्ति पा लेंगे। निस्सन्देह प्रति चक्रीयता दोनों ही दिशाओं में कार्यशील रहती है। मंदी की स्थिति आरंभ हो जाने पर वित्तीय प्रणाली दबाव की पिछली घटनाओं की तुलना में चलनिधि के क्षरण और घटी हुई ऋण आपूर्ति के प्रति अधिक सुभेद्य लगती है।

10.28 अंत में, वित्तीय क्षेत्र में घटनाओं की अत्यधिक बढ़ी हुई गति। वित्तीय क्षेत्र में समाचार के प्रेषण की गति अन्य क्षेत्रों की तुलना में हमेशा ही अधिक रही है। इन दिनों बाज़ार संप्रेषण और निष्पादन लगभग तात्क्षणिक हो सकते हैं। नयी और अपेक्षाकृत सस्ती प्रौद्योगिकी एवं अविनियमन के कारण बाज़ार में कार्यरत संस्थाओं के उनके परिवेश में रणनीतिक अवसरों के निर्धारण और उससे लाभ उठाने की उनकी कार्रवाइयों की गति भी तीव्र हो गई है। व्यवसाय मॉडल शीघ्रतापूर्वक अपनाए और छोड़े जाते हैं। यह विनियामकों और पर्यवेक्षकों के लिए परीक्षा होगी, जिनके समक्ष इस खेल के ऐसे नियम बनाने की चुनौती उपस्थित होगी, जो प्रभावी सिद्ध हों।

10.29 वित्तीय क्षेत्र में विद्यमान इन प्रवृत्तियों का विनियमन और पर्यवेक्षण के संकेंद्रण और उस तरीके पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा, जिनमें विनियामक एवं पर्यवेक्षी उत्तरदायित्व आबंटित किए जाते हैं। इनमें से कुछ मुद्दे हैं - पर्यवेक्षण के लिए संस्थागत उत्तरदायित्व की अवस्थिति, उपयुक्त विनियामक ढांचा, बाज़ार अनुशासन पर बढ़ती हुई निर्भरता तथा नियम आधारित दृष्टिकोण की तुलना में सिद्धांत आधारित दृष्टिकोण।

## केन्द्रीय बैंक से पर्यवेक्षण अलग करना

10.30 बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं के पर्यवेक्षण का प्राधिकार किसके पास रहना चाहिए, यह प्रश्न गंभीर बहस का मुद्दा बन गया है। कई एक देशों में बैंकिंग पर्यवेक्षण का दायित्व केंद्रीय बैंकों में निहित होता है, जबकि अन्य वित्तीय संस्थाओं के पर्यवेक्षण का दायित्व विशिष्ट रूप से अन्य एजेंसियों में निहित होता है। हालांकि, हाल के वर्षों में कतिपय ऐसे देशों के मामले प्रकाश में आए हैं, जिन्होंने इस मॉडल को त्याग दिया है।

10.31 यद्यपि, इसके पहले केंद्रीय बैंकों की स्थापना मूलतः वाणिज्य के वित्तीयन, वित्तीय प्रणालियों के विकास को बढ़ावा देने तथा नोटों के निर्गम में एकरूपता लाने के लिए की गई थी, बीसवीं सदी में कतिपय देशों, उल्लेखनीय रूप से अमरीका में केंद्रीय बैंकों की स्थापना बैंकों की

बारंबार की विफलता के बाद बैंकिंग प्रणालियों में विश्वास को बनाए रखने के लिए की गई। चूंकि बैंकिंग संकटों की घटनाएं बढ़नी शुरू हो गईं, जमाकर्ताओं के संरक्षण, सूचना की विषमता में कमी लाने तथा बैंकिंग के स्वस्थ विकास के लिए बैंकों के सांविधिक विनियमन को आवश्यक समझा गया। 19वीं सदी में केंद्रीय बैंकों ने अपना ध्यान वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने पर केंद्रित करना आरंभ कर दिया था तथा उनकी भूमिका अधिकाधिक रूप से वित्तीय संकटों को समाप्त करनेवाली हो गई थी। बैंक ऑफ इंग्लैंड संकट के प्रभाव से बचने के लिए बट्टा दर को समायोजित किया करता था तथा इस तकनीक का उपयोग अन्य यूरोपीय केंद्रीय बैंकों द्वारा भी किया जाने लगा। अमरीका में 1836 और 1914 के बीच की अवधि में बैंकिंग संकटों की श्रृंखलाओं के परिणामस्वरूप फेडरल रिज़र्व प्रणाली की स्थापना की गई। भयंकर मंदी के अनुभव का कतिपय देशों के बैंकिंग विनियमन पर प्रचुर प्रभाव हुआ तथा वाणिज्यिक बैंकों को क्रमिक रूप से केंद्रीय बैंकों के विनियमन के तहत ला दिया गया। इस प्रकार, संकटों द्वारा प्रकटीकृत प्रणालीगत जोखिम का निवारण वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण में केंद्रीय बैंकों की संलिप्तता का मूलभूत कारण बन गया।

10.32 बैंक विनियमन के उत्तरदायित्वों को प्रत्यायोजित करने के संबंध में कुछ देशों का अनुभव पूर्णतया अलग था। बैंकिंग संकटों के उत्पन्न होने और संकटों को दूर करने में केंद्रीय बैंक के हस्तक्षेप के बावजूद, कुछ देशों ने बैंकिंग प्रणाली का पर्यवेक्षण करने हेतु केंद्रीय बैंक के अतिरिक्त अलग से विनियामक प्राधिकरण की स्थापना की, जो प्रायः केंद्रीय बैंकों के सृजन के कतिपय वर्ष पहले या उसके बाद की कार्रवाई थी। कनाडाई सरकार ने होम बैंक की विफलता के बाद 1925 में बैंकों के महानिरीक्षक कार्यालय की स्थापना की। बैंक ऑफ कनाडा का सृजन नौ वर्ष बाद किया गया (जार्ज्स, 2003)। कनाडा का अनुभव अनूठा नहीं था। चिली, मैक्सिको, पेरू और स्कैंडिनेवियाई देशों ने केंद्रीय बैंकों और बैंक विनियामकों का विकास पूर्णतया अलग ढंग से किया। इस प्रकार एक उपयुक्त ढांचा निर्मित करने और बैंक विनियमन तथा पर्यवेक्षण का उत्तरदायित्व सौंपने के संबंध में देशों के अनुभवों में पर्याप्त रूप से अंतर पाया जाता है, यद्यपि मूल उद्देश्य प्रणालीगत स्थिरता को बनाए रखना ही था।

10.33 केंद्रीय बैंक के बैंक पर्यवेक्षक होने के सापेक्षिक लाभों और हानियों के बारे में साहित्य विभाजित है (बॉक्स X.1)। पर्यवेक्षी उत्तरदायित्व केंद्रीय बैंक को सौंपे जाने के पक्ष में सर्वाधिक सुदृढ़ ढंग से प्रबलीकृत तर्क यह है कि बैंक पर्यवेक्षक के रूप में केंद्रीय बैंक को बैंकों की स्थिति और उनके कार्य-निष्पादन की प्रारंभिक जानकारी रहेगी। केंद्रीय बैंक की पर्यवेक्षी भूमिका बैंकों से अग्रिम सूचना प्राप्ति के कार्य को आसान बना देती है। इससे आगे चल कर उसे किसी प्रणालीगत समस्या की उत्पत्ति की पहचान करने तथा उस पर उपयुक्त समय पर अनुक्रिया करने में सहायता प्राप्त होती है। इसके भी अलावा, जिस सीमा तक केंद्रीय बैंक अंतिम ऋणदाता के रूप में कार्य करता है, उस संदर्भ में यह वांछनीय होगा कि कुछ विनियामक और पर्यवेक्षी कार्य केंद्रीय बैंक के पास ही रखे जाएं, ताकि नैतिक संकट संबंधी प्रोत्साहनों को सीमित रखा जा सके और बैंकों की स्थिति की प्रगाढ़ जानकारी रखी जा सके, जो केवल उसके पर्यवेक्षी प्रक्रिया में सहभागिता के माध्यम से ही प्राप्त की जा सकती है। इस तर्क की मान्यता यह है कि बैंक पर्यवेक्षण के लिए उत्तरदायी किसी अन्य पक्ष के लिए यह संभव नहीं होगा कि वह इस सूचना को प्रभावी ढंग से अंतिम आश्रय वाले ऋणदाता को, विशेष रूप से वित्तीय अस्थिरता के दौरान, हस्तांतरित करे। इसके अलावा, इस सामान्य विचारधारा के ठीक विपरीत कि मौद्रिक नीति और वित्तीय स्थिरता से संबंधित नीतियों को अलग-अलग रूप से देखा जाना चाहिए, वे अभिन्न होती हैं। कम से कम, मौद्रिक नीति और वित्तीय स्थिरता से संबंधित नीतियों के बीच बेहतर समन्वय का सुदृढ़ मामला तो मौजूद ही है। सब-प्राइम संकट से प्राप्त एक महत्त्वपूर्ण शिक्षा यह है कि मध्यवर्तियों की स्थितियों का सारांश प्रस्तुत करने के लिए केवल आस्तियों के मूल्य ही पर्याप्त नहीं होते। तुलनपत्र की गतिशीलताएं सकल देशी उत्पाद के महत्त्वपूर्ण संघटकों और वित्तीय प्रणाली के लचीलेपन के संबंध में सूचना उपलब्ध कराती हैं (अड्रिअन एवं शिन, 2008)। बैंक पर्यवेक्षण का दायित्व केंद्रीय बैंक को सौंपे जाने से होने वाली हानियों का संकेत करने वाले पर्यवेक्षी उत्तरदायित्वों और मौद्रिक नीति से संबंधित उत्तरदायित्वों के बीच संभाव्य हितों के टकराव पर बल देते हैं। हालांकि, हितों के बीच इस प्रकार का टकराव केंद्रीय बैंक के बैंकों के विनियामक एवं पर्यवेक्षक न होने पर भी मौजूद हो सकते हैं, क्योंकि केंद्रीय बैंक हमेशा वित्तीय प्रणाली की स्थिरता को बनाए रखने का प्रयास करेगा। यह संघर्ष आर्थिक मंदी की स्थिति के दौरान विशेष रूप से अत्यधिक हो सकता है, जिसमें केंद्रीय बैंक बैंकों के अर्जन और ऋण की गुणवत्ता पर होनेवाले प्रतिकूल प्रभावों से बचने के लिए अत्यधिक शिथिल मौद्रिक नीति लागू करने की ओर प्रवृत्त हो सकता है और / अथवा विस्तारवादी मौद्रिक नीति को बढ़ावा देने के लिए बैंकों को ऋण की गुणवत्ता की स्थितियों के आधार पर और अधिक उदारतापूर्वक ऋण उपलब्ध कराने के लिए प्रोत्सहित कर सकता है।

10.34 हाल के वर्षों में, बैंकिंग विनियमन के दायित्व को केंद्रीय बैंक के स्थान पर अन्य एजेंसियों को अंतरित करने की प्रवृत्ति देखने में आती है। इस व्यवस्था में केंद्रीय बैंकों को मौद्रिक नीति को लागू करने तथा अंतिम ऋणदाता बने रहने का कार्य सौंपा जाता है। यह प्रवृत्ति कुछ देशों, विशेष रूप से, इंग्लैंड, जापान और दक्षिण कोरिया में परिलक्षित हुई है। यूरोपीय मौद्रिक संघ (ईएमओ) से संबंधित देशों ने वस्तुतः इसी प्रणाली को अपनाया है, क्योंकि अब मौद्रिक नीति का कार्यान्वयन संघीय (यूरोपीय केंद्रीय बैंक) के स्तर पर किया जाता है, जबकि बैंकिंग पर्यवेक्षण का कार्य राष्ट्रीय स्तर पर किया जाता है।

10.35 इंग्लैंड में, 1974-75 में पैदा हुए अनुषंगी बैंकिंग संकट के पहले तक, बैंक ऑफ इंग्लैंड ने उसके प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण को एक छोटी संख्यावाले व्यापारी बैंकों (स्वीकृति गृहों) और बैंकों के स्वयं अपने ऋण एक्सपोज़रों से उद्भूत मितिकाटा (बट्टा) बाजारों तक ही सीमित रखा। बैंकिंग अधिनियम, 1976 ने बैंकिंग प्रणाली के पर्यवेक्षण और विनियमन

## बॉक्स X.1
## बैंकिंग पर्यवेक्षण और केंद्रीय बैंक

मौद्रिक एवं पर्यवेक्षी कार्यों को संयोजित रूप में रखने का सर्वप्रमुख कारण वित्तीय प्रणाली की 'प्रणालीगत स्थिरता' और भुगतान प्रणाली के संरक्षण के प्रति केंद्रीय बैंकों की चिंता रही है। नैतिक संकट के आधार पर 'अंतिम ऋणदाता' की सुविधा केवल तभी उपलब्ध कराना उपयुक्त होता है, जब किसी बैंक के पास नकदी की कमी हो जाए, किंतु वह दिवालिया न हुआ हो (यथा बेजहाट, 1873)। इसलिए, यदि केंद्रीय बैंक किसी संस्था का पर्यवेक्षण करता है, तो उसे इस बात का अधिक सुस्पष्ट रूप से पता चल सकता है कि ऋण की मांग करने वाली संस्था दिवालिया हो गई है अथवा उसके पास नकदी की कमी हो गई है। हालांकि, समस्याओं के स्रोत चाहे जो भी क्यों न हों, केन्द्रीय बैंक प्रणालीगत 'अप्रत्यक्ष' प्रभाव से बचने के लिए विफल हो रहे सहभागी की सहायता करने हेतु विवशता का अनुभव कर सकता है। इसलिए केंद्रीय बैंक भुगतान प्रणाली का जिस सीमा तक परिचालन जारी रखता है तथा अंतिम ऋणदाता के रूप में कार्य करता है, संभावना इस बात की होती है कि वह नैतिक संकट संबंधी प्रोत्साहनों को सीमित रखने तथा बैंकों की स्थिति के बारे में प्रगाढ़ जानकारी रखने के उद्देश्य से कुछ ऐसे विनियामक एवं पर्यवेक्षी कार्यों को बनाए रखना चाहेगा, जिन्हें पर्यवेक्षी प्रक्रिया में उसकी सहभागिता के माध्यम से ही प्राप्त किया जा सकता है। इस तर्क की मान्यता यह है कि बैंकों के पर्यवेक्षण के लिए उत्तरदायी किसी अन्य पक्ष के लिए यह संभव नहीं होगा कि वह सूचना को अंतिम ऋणदाता को प्रभावी रूप में हस्तांतरित कर सके। हालांकि, वित्तीय अस्थिरता के दौर में यह अधिक युक्तिसंगत लगता है, क्योंकि किसी संस्था की स्थिति जिस गति और स्तर से बिगड़ती है, वह वित्तीय अस्थिरता की अवधियों में महत्त्वपूर्ण रूप से अधिक होती है। इसके अलावा, 'बुरे' समय में बहियों में 'हेरफेर' करने और उनकी वास्तविक स्थिति को छिपाए जाने की संभावना अधिक रहती है। इसलिए, इन परिस्थितियों में, प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण सही समय पर आवश्यक सूचनाएं उपलब्ध कराने में सहायक हो सकता है। संपूर्ण देश में सूक्ष्म डेटासेट का उपयोग किए जाने से यह पता चला है कि उन देशों में, जहां पर्यवेक्षण के कार्य में केंद्रीय बैंक शामिल थे, बैंकों के विफल होने की घटनाएं औसतन कम हुईं (गुडहार्ट और स्कोयेनमेकर,1995)। यह भी तर्क दिया जाता है कि बैंकिंग पर्यवेक्षी सूचना (गैर निष्पादक ऋणों अथवा बैंकों के उधार देने के मानदंडों में परिवर्तन से सबंधित समस्याओं की आरंभिक चेतावनी) से स्थूल आर्थिक पूर्वानुमानों की यथार्थता में सुधार आ सकता है और इस प्रकार वह केंद्रीय बैंकों की मौद्रिक नीति का और अधिक प्रभावी ढंग से संचालन करने में सहायता कर सकती है (बनकि और गेर्टलर,1995)। पर्यवेक्षण में केंद्रीय बैंकों की सहभागिता से मौद्रिक नीति के बारे में उसके रुख में आवश्यक रूप से कमजोरी नहीं आती, क्योंकि मुद्रास्फीति के बारे में केंद्रीय बैंक के कार्य-निष्पादन तथा पर्यवेक्षण में उसकी भूमिका, कमोबेश दो अलग-अलग मुद्दे होते हैं।

दूसरी ओर मौद्रिक नीति के नियंत्रण और केंद्रीय बैंक के स्तर पर अंतिम ऋणदाता के रूप में उसकी भूमिका के संयोजन की इस आधार पर आलोचना की जाती है कि इससे मुद्रास्फीतिजन्य चिंताएं बढ़ जाती हैं। मूल्य में स्थिरता के प्रति प्रतिबद्ध कोई भी केंद्रीय बैंक संकट के समय में प्रणाली की स्थिरता के लिए आवश्यक चलनिधि के अंतःक्षेपण को निष्फल करेगा, ताकि मुद्रा-आपूर्ति में किसी प्रकार की अवांछित वृद्धि न होने पाए। यदि अंतिम ऋणदाता के कार्यों और पर्यवेक्षण को सम्मिलित रखा जाता है, तो उसमें अंतिम ऋणदाता के रूप में हस्तक्षेप से केंद्रीय बैंक के मौद्रिक नीति संबंधी रुख के बारे में निजी क्षेत्र की प्रत्यक्षा में संभ्रम पैदा हो सकता है। इस बात के प्रति भी चिंताएं व्यक्त की गई हैं कि मुद्रा तथा वित्तीय स्थिरता के गारंटीदाता के रूप में केंद्रीय बैंक की प्रतिष्ठा के बीच हितों में टकराव पैदा हो सकता है। उदाहरण के लिए एक पर्यवेक्षक के रूप में केंद्रीय बैंक की प्रतिष्ठा के प्रति चिंता अंतिम ऋणदाता की सुविधा के अतिशय उपयोग को प्रोत्साहित कर सकती है, ताकि बैंक संकट उसकी पर्यवेक्षी क्षमता के संदर्भ में प्रश्नचिह्न न लगा सके। यह तर्क दिया गया है कि बैंक पर्यवेक्षण से केंद्रीय बैंक की प्रतिष्ठा को लाभ पहुंचने के बजाय अधिक हानि पहुंचने की संभावना रहती है।

एक और सामान्य मुद्दा यह है कि सूक्ष्म (विनियामक) और स्थूल (मौद्रिक) नीति के चक्रीय प्रभाव में परस्पर विरोधी प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। आम तौर पर मौद्रिक नीति प्रतिचक्रीय होती है, जबकि विनियमन और पर्यवेक्षण के प्रभाव प्रचक्रीय लगते हैं, जो कुछ हद तक मौद्रिक नीति के उद्देश्यों को प्रतितुलित कर देते हैं। विशेष रूप से आर्थिक मंदी की अवधियों के दौरान बैंकों की वित्तीय स्थिति सामान्यतया बिगड़ती है, ऐसी स्थिति में बैंक के पर्यवेक्षक का पदार्पण होता है और वह संस्था पर उसकी स्थिति में सुधार लाने पर दबाव डालता है। हालांकि, बैंकों की पर्यवेक्षी अपेक्षाओं के कार्यान्वयन का परिणाम आर्थिक मंदी के दौरान और भी कठिन ऋण के रूप में सामने आता है। तर्क के इस आधार का अनुगमन करते हुए कोई केंद्रीय बैंक से यह आशा कर सकता है कि वह मौद्रिक नीति के अनुपूरक की अपनी पर्यवेक्षी भूमिका का, अर्थात मौद्रिक नीति के विस्तारवादी होने पर पर्यवेक्षण में कम सख्ती बरतने और विपरीत स्थिति में उसके विपरीत आचरण करने का, उपयोग करे (गुडहार्ट और स्कोएनमेकर, 1993)।

**संदर्भ :**

1. अयादी, रिम और पुजल्स, ज्यार्जेस, 2004 ''यूरोपीय संघ में बैंकिंग समेकन : विहगावलोकन एवं संभावनाएं'', वित्त तथा बैंकिंग में अनुसंधान रिपोर्ट, सेन्टर फॉर यूरोपियन पॉलिसी स्टडीज़ (सीईपीएस), सं.34, अप्रैल।
2. बगेहाट, डब्ल्यू, 1873, लोम्बार्ड स्ट्रीट: ए डिस्क्रिप्शन ऑफ दि मनी मार्केट, लंदन।
3. बनकि, बी.एस.और गर्टलर, एम.एल. 1995. ''इनसाइड दि ब्लैक बॉक्सः दि क्रेडिट चैनल ऑफ मॉनेटरी पॉलिसी ट्रान्समिशन'', जर्नल ऑफ इकॉनॉमिक पर्सपेक्टिव्ज, वाल्यूम 9 (फाल), 27-481
4. डि नोइया, सी और डी ज्यार्जिओ, जी, 1999 ''शुड बैंक सुपरविज़न एण्ड मॉनिटरी पॉलिसी टास्क्स बी गिवेन टू डिफरेंट एजेन्सीज़'' इंटरनेशनल फाइनैन्स, खंड 2, अंक 3, 361-378, नवंबर।
5. गुडहार्ट सी.ए.ई और डी. स्कोएनमेकर, 1993 ''इन्स्टीट्यूशनल सेपरेशन बिटवीन सुपरवाइज़री एण्ड मॉनिटरी एजेन्सीज़'', एलएसई फाइनैन्सियल मार्केट ग्रुप स्पेशल पेपर सं.52।
6. गुडहार्ट, सीएई और डी. स्कोएनमेकर, 1995, ''शुड दि फंक्शन्स ऑफ मॉनिटरी पॉलिसी एण्ड बैंकिंग सुपरविज़न बी सेपरटेड?'' ऑक्सफोर्ड इकॉनॉमिक पेपर्स, 47. 539-560।
7. गुडहार्ट, ए.ई चार्ल्स, 2000 ''दि आर्गनाइजेशनल स्ट्रक्चर ऑफ बैंकिंग सुपरविजन'' ऑकेजनल पेपर, नं.1, बासेल स्विटज़रलैंड, फाइनैन्सियल स्टेबिलिटी इंस्टीट्यूट (एफएसआइ), नवंबर।
8. लोन्नीडावू, वासू पी, 2003 ''डज मॉनेटरी पॉलिसी अफेक्ट दि सेंट्रल बैंक्स रोल इन बैंक सुपरविज़न?'' जर्नल ऑफ फाइनैन्सियल इंटरमीडिएशन, 14 : 58:85, सितंबर।

में बैंक ऑफ इंग्लैंड की औपचारिक भूमिका को बढ़ा दिया। पर्यवेक्षी कार्य चंद स्टाफ़ सदस्यों के साथ एक एकल वरिष्ठ अधिकारी, मितिकाटा (बट्टा) कार्यालय के प्रधान द्वारा संपन्न किया जाता था। इसलिए ऐतिहासिक रूप से, व्यवहार में बैंकिंग पर्यवेक्षण के संचालन की केंद्रीय बैंक के कार्यकलापों में वास्तविक रूप से कोई विशाल या केंद्रीय भूमिका नहीं हुआ करती थी, क्योंकि उक्त ढांचे ने इस प्रकार के कार्य की आवश्यकता में कमी लाने तथा इसे व्यापक तौर पर आत्म विनियमन के माध्यम से प्राप्त किए जाने का अवसर दिए जाने, दोनों ही प्रकार का काम किया (यद्यपि, यह प्रवृत्ति विशेष रूप से इंग्लैंड के मामले में अधिक मुखर रही होगी तथा अन्य देशों के बारे में यह अपेक्षाकृत कम निरूपक सिद्ध हो सकती है) (गुडहार्ट,2000बी)।

10.36 1997 में इंग्लैंड में नवनिर्वाचित मज़दूर (लेबर) सरकार ने वाणिज्यिक बैंकों के विवेकसम्मत पर्यवेक्षण का दायित्व बैंक ऑफ इंग्लैंड से एक नव स्थापित निकाय (संस्था) वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफएसए) को हस्तांतरित कर दिया। वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफएसए) को वास्तविक रूप से सभी वित्तीय संस्थाओं (सभी प्रकार के बैंकों, वित्त गृहों, पारस्परिक बचत संस्थाओं, बीमा कंपनियों आदि) और वित्तीय बाज़ारों दोनों ही के विवेकसम्मत एवं कारोबार के संचालन के पर्यवेक्षण का दायित्व संभालना और उनका संयोजन करना था।

10.37 पर्यवेक्षण के पृथक्करण की मुख्य प्रेरक शक्तियां अधिकाधिक रूप से समाप्तप्राय वित्तीय प्रणाली के ढांचे में हुए परिवर्तन तथा हितों के टकराव के प्रति जारी चिंताएं थीं। जैसे-जैसे विभिन्न प्रकार की वित्तीय संस्थाओं के बीच विद्यमान विभाजक रेखाएं अधिकाधिक रूप से अस्पष्ट होती गईं (यथा सर्वव्यापी बैंक) केंद्रीय बैंक द्वारा जारी बैंकिंग पर्यवेक्षण का परिणाम पर्यवेक्षी संस्थाओं के बीच अकुशल अति-व्यापन और केंद्रीय बैंक के सुरक्षा पाश एवं अन्य उत्तरदायित्वों की अन्य निरंतर व्यापक होते क्षेत्रों की ओर संभाव्य सरकन दोनों ही रूपों में सामने आया। यह विश्वास था कि उसके साथ ही जुड़ी मौद्रिक नीति में केंद्रीय बैंक को प्राप्त परिचालनगत स्वतंत्रता तथा केंद्रीय बैंक के अनवरत पर्यवेक्षी प्राधिकार की प्रवृत्ति के फलस्वरूप हितों के संभाव्य टकराव के संबंध में चिंताएं बढ़ेंगी तथा गैर-निर्वाचित संस्था को प्रत्यायोजित शक्तियों की सीमाओं से संबंधित मुद्दे उठेंगे।

10.38 अमरीकी फेडरल रिज़र्व बोर्ड बैंकिंग पर्यवेक्षण में अब भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अमरीका में, बहुविध पर्यवेक्षी प्राधिकरणों के पहले से स्थापित हो जाने के बाद केंद्रीय बैंक एक अतिरिक्त पर्यवेक्षी प्राधिकरण बन गया। बासेल समिति में प्रतिनिधित्व करने वाले तेरह देशों में से केवल तीन देशों (इटली, नीदरलैंड और स्पेन) में केंद्रीय बैंकों को बैंक पर्यवेक्षण का एकमात्र प्राधिकार सौंपा गया है। मई, 2002 में, बैंकिंग,बीमा और प्रतिभूति फर्मों का पर्यवेक्षण करने के लिए जर्मनी ने एकल पर्यवेक्षी एजेन्सी यथा - जर्मन फेडरल फाइनैन्सिअल सुपरवाइज़री अथारिटी (Ba Fin) को अंगीकृत कर लिया। हालांकि, डयूश बुन्देशबैंक, केंद्रीय बैंक, द्वारा अब भी बैंक पर्यवेक्षण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई जाती है। फ्रांस, इटली और स्पेन ने बैंकों, बीमा कंपनियों और प्रतिभूति फर्मों के लिए अलग-अलग पर्यवेक्षकों की व्यवस्था कर रखी है। फ्रांस में 'कमीशन बैंकेयर' सभी ऋणदायी संस्थाओं का पर्यवेक्षण करता है। हालांकि, कमीशन को केंद्रीय बैंक के कार्यकलापों से सहक्रिया संबंधी पर्याप्त लाभ प्राप्त होता है। इटली और स्पेन में बैंक पर्यवेक्षण का दायित्व केंद्रीय बैंक के पास है, बेल्जियम ने जनवरी 2004 में एकल पर्यवेक्षी प्रणाली अपना ली है जिसमें बैंकों, बीमा कंपनियों और प्रतिभूति फर्मों के पर्यवेक्षण का उत्तरदायित्व केंद्रीय बैंक से परे एक स्वायत्त सार्वजनिक संस्था को सौंपा गया है। चीन ने 2004 के प्रारंभ में एक नये बैंक पर्यवेक्षी प्राधिकरण की स्थापना की, किंतु केंद्रीय बैंक जो अब तक एकमात्र प्राधिकारी रहा है, ने कुछ सीमित पर्यवेक्षी उत्तरदायित्व अपने पास बनाए रखा है (बार्थ एवं अन्य, 2004)। 198 देशों के सर्वेक्षण से यह पता चलता है कि 52 देशों में बैंकिंग पर्यवेक्षण का उत्तरदायित्व केंद्रीय बैंक से अलग संस्थाओं को सौंपा गया है। इन देशों में अन्यों के साथ ही आस्ट्रेलिया, आस्ट्रिया, बेल्जियम, कनाडा, डेनमार्क, हंगरी, जापान, मैक्सिको, पनामा, तुर्की, इंग्लैंड और वेनेजुएला का समावेश है (सेन्ट्रल बैंकिंग, पब्लिकेशन, 2008)।

10.39 तथापि, अमरीकी सब-प्राइम संकट के उपरान्त जुलाई 2007 में नार्दर्न रॉक, इंग्लैंड में उद्भूत चलनिधि संकट की हाल की घटना ने अंतिम ऋणदाता के रूप में केंद्रीय बैंक, कोषागार और वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफएसए) के बीच समन्वय की प्रभावशीलता तथा केंद्रीय बैंक के अलावा पर्यवेक्षण की व्यवस्था किए जाने की वांछनीयता के बारे में भी चिंताएं पैदा कर दी हैं (बॉक्स X.2)।

10.40 इंग्लैंड ने, पर्यवेक्षी कार्यों को एक अलग प्राधिकरण को सौंप दिए जाने के बाद एचएम कोषागार, दि बैंक ऑफ इंग्लैंड और वित्तीय सेवा प्राधिकरण के बीच त्रिपक्षीय करार के समझौता ज्ञापन, जो उनके बीच वित्तीय स्थिरता के सामान्य उद्देश्य की प्राप्ति की दिशा में एक साथ मिलकर काम करने की पारस्परिक सहयोग से संबंधित ढांचे की व्यवस्था करता है, के आधार पर एक अधिक औपचारिक दृष्टिकोण अपनाया है। इसमें जबाबदेही, पारदर्शिता, दोहरेपन के अपवर्जन तथा सूचना के आदान-प्रदान पर आधारित प्रत्येक प्राधिकरण की भूमिका निश्चित कर दी गई है। उक्त करार के तहत प्रत्येक प्राधिकरण के उत्तरदायित्व सुपरिभाषित कर दिए गए हैं। उक्त करार में सूचना के नियमित आदान-प्रदान की भी अपेक्षा की गई है, जिससे प्राधिकारियों को उनके दायित्वों के यथासंभव प्रभावी एवं कार्यकुशल ढंग से निर्वहन में सहायता प्राप्त होगी। तथापि, त्रिपक्षीय समझौते में वित्तीय सेवा प्राधिकरण, बैंक ऑफ इंग्लैंड और कोषागार के बीच संवाद को नार्दर्न रॉक की विफलता के अनुसरण में एक प्रमुख कमज़ोरी के रूप में देखा गया है। इसके परिणामस्वरूप वित्तीय सेवा प्राधिकरण बैंक ऑफ इंग्लैंड के वित्तीय स्थिरता निदेशालय के साथ समन्वय बढ़ाने के लिए दृढ़-प्रतिज्ञ है।

## बॉक्स X.2
## नॉर्दर्न रॉक चलनिधि संकट

अमरीकी सब-प्राइम बंधक बाज़ार ने प्रतिफल की चाहत रखनेवाले बहुत सारे निवेशकों को आकर्षित किया। विन्यस्त ऋण, जो अधिक ऋण रेटिंग वाले अधिक प्रतिफल उपलब्ध कराता था,ने इन उत्पादों, विशेष रूप से सब-प्राइम बंधकों की भारी मांग निर्मित कर दी। यह बैंकों को अधिकाधिक रूप से परंपरागत 'उधार दो और रोक रखो' वाले मॉडल के स्थान पर 'उत्पन्न करो और वितरित करो' मॉडल की दिशा में आगे बढ़ने की सुविधा प्रदान करता था। इससे ऋण आपूर्ति में बढ़ोत्तरी हुई तथा जोखिम को कुल मिलाकर संपूर्ण प्रणाली में व्यापक रूप से बिखेरने की सुविधा प्राप्त हुई। किंतु इसमें मूल ऋणदाताओं से लेकर अंतिम रूप से निवेश करने वाले सहभागियों की एक लम्बी श्रृंखला ही शामिल थी। अंतिम जोखिम को वहन करने वाले एक श्रृंखला की अंतिम कड़ी के रूप में मौजूद निवेशकों को इन ऋणों की अंतर्निहित गुणवत्ता के बारे में, आरंभिक निवेशकों की तुलना में कम जानकारी थी, तथा वे रेटिंग एजेंसियों और उनके मॉडलों पर आश्रित हो गए थे। इसने प्रवर्तकों को ऋण जोखिम का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करने और उस पर निगरानी रखने के लिए प्रवर्तकों को मिलने वाले प्रोत्साहनों को भी घटा दिया।

अमरीकी सब-प्राइम बंधक बाज़ार में अपचार दर 2005 के प्रारंभ से ही बढ़ने लगी, किंतु जून, 2007 के मध्य तक, जब क्रेडिट स्प्रेड व्यापक होने लगा, इन घटनाओं के प्रति बाज़ार में कोई महत्त्वपूर्ण प्रतिक्रिया परिलक्षित नहीं हुई थी। कई एक फर्मों द्वारा हानियों का प्रकटीकरण तथा सब-प्राइम बंधक उत्पादों और कुछ अन्य विन्यस्त उत्पादों की रेटिंग में कमी का प्रपतन उत्प्रेरक बना। अगस्त 2007 की शुरुआत तक विन्यस्त उत्पादों के मूल्यांकन में होनेवाली कठिनाइयों के साथ ही प्रतिपक्ष जोखिम और चलनिधि जोखिम के बारे में बढ़ती चिंता के परिणामस्वरूप कई एक अन्य बाज़ार भी नकारात्मक रूप से प्रभावित होने लगे। विशेष रूप से संपार्श्विक ऋण देयताओं (सीडीओ) के बाज़ार में गिरावट आ गई, आस्ति-आधारित वाणिज्यिक पत्र बाज़ार से भारी पैमाने पर आहरण होने लगे तथा अंतर-बैंक सावधि मुद्रा बाज़ार में अचानक शुष्कता आ गई। चूंकि बड़े वैश्विक बैंकों द्वारा सम्बद्ध हानियों की निरंतर घोषणा की जाने लगी, उनके पूंजी भंडार (कुशन) की पर्याप्तता के बारे में अत्यधिक चिंता व्यक्त की जाने लगी।

ब्रिटेन के पांचवें सबसे बड़े बंधक ऋणदाता, नॉर्दर्न रॉक की जुलाई 2007 में एक सकारात्मक, मध्यावधिक संभावना थी और वह सुदृढ़ ऋण बही वाली संस्था थी। हालांकि दो माह से भी कम की अवधि में ही नार्दर्न रॉक से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण किए जाने लगे, जो इंग्लैंड के इतिहास में 100 वर्षों की अवधि में अपने ढंग की पहली घटना थी। नार्दर्न रॉक से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण अमरीका में निर्मित सब-प्राइम संकट के कारण इंग्लैंड के वित्तीय बाज़ारों को अपनी गिरफ्त में लेने वाले संक्रामक रोग का सर्वाधिक नाटकीय लक्षण था। बैंक ने इस संकट के पहले कई वर्षों में अपनी सुदृढ़ वृद्धि का निधीयन करने में नवोन्मेषी विन्यस्त उत्पादों का अच्छी तरह उपयोग किया था। बैंक ने विदेशों में उधार नहीं दिया था, किंतु इसके बावजूद वह अमरीका के बंधक बाज़ार में आए तूफान से प्रभावित हो गया था। जब सब-प्राइम संकट बढ़कर प्रतिभूति और मुद्रा बाज़ारों तक व्याप्त हो गया, तो बैंक उसके ऋण की तुलना में कम जमाराशि अनुपात के कारण, अपने अल्पावधिक वित्तीयन को नवीकृत करने में सक्षम नहीं रह गया और सहायता के लिए बैंक ऑफ इंग्लैंड की ओर मुड़ने पर विवश हो गया। जब यह समाचार प्रकट हो गया, कई एक ग्राहकों ने अपनी बचतों को शीघ्रतापूर्वक आहरित कर लिया। इंग्लैंड ने, 1866 से इस प्रकार घबराहट से प्रेरित आहरणों का अनुभव नहीं किया था। वित्तीय सेवाओं की मुआवजा योजना बैंक के ग्राहकों को शांत करने की दृष्टि से पर्याप्त नहीं थी।

11 सितंबर 2007 तक यह स्पष्ट हो गया कि प्रतिभूतिकरण सहित निजी क्षेत्र के निराकरण विकल्प नहीं रह गए थे। 14 सितंबर 2007 को वित्त मंत्री ने बैंक ऑफ इंग्लैंड के गवर्नर और वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफएसए) के अध्यक्ष की सलाह पर बैंक ऑफ इंग्लैंड को यथोचित संपार्श्विक प्रतिभूति पर और प्रीमियम ब्याज दर पर नार्दर्न रॉक को चलनिधि सहायता सुविधा उपलब्ध कराने हेतु प्राधिकृत किया, ताकि वह अपने परिचालनों का निधीयन कर सके। वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफएसए) ने यह निर्णय दिया कि नॉर्दर्न रॉक शोधक्षम था तथा उसकी ऋण बही अच्छी गुणवत्ता वाली थी। 17 सितंबर 2007 को वित्त मंत्री ने यह घोषणा की कि सरकार इस प्रकार की व्यवस्था लागू करेगी, जो नार्दर्न रॉक में रखी गई जमाराशियों को गारंटीकृत करेगी। 21 जनवरी 2008 को कोषागार ने ऋणदाताओं को लगभग 24 बिलियन पौंड स्टर्लिंग के ऋणों को चुकाने हेतु सरकार द्वारा गारंटीकृत बांडों की बिक्री के माध्यम से नार्दर्न रॉक के निजी क्षेत्र द्वारा बचाव को समर्थन दिए जाने की योजनाओं की घोषणा की। 22 फरवरी 2008 को बैंक को अधिगृहीत किए जाने से संबंधित दो असफल बोलियों के फलस्वरूप बैंक को राष्ट्रीयकृत कर दिया गया।

नार्दर्न रॉक के संकट से निपटने में एकमात्र सबसे बड़ी बाधा थी, उस व्यवस्था का अभाव, जिसके माध्यम से किसी संकटग्रस्त बैंक के मामले में पूर्वक्रयात्मक रूप से इस उद्देश्य हेतु हस्तक्षेप किया जा सके कि उसकी खुदरा जमाराशियों - बीमित जमाराशियों - को बैंक के शेष तुलनपत्र से अलग किया जा सके। नार्दर्न रॉक की घटना से जो मुख्य शिक्षा ग्रहण की जा सकती है, वह यह है कि बैंकों के विनियमन की दृष्टि से पूंजी के साथ-साथ चलनिधि एक मुख्य तत्व होनी चाहिए। नार्दर्न रॉक को अपर्याप्त पूंजी की समस्या का सामना नहीं करना पड़ा था। किंतु वह उस आघात के प्रति सुभेद्य था, जिसने प्रतिभूत बंधकों के बाज़ार में चलनिधि में कमी पैदा कर दी थी।

**संदर्भ :**


1. वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफएसए), इंग्लैंड की ओर से कोषागार समिति को ज्ञापन, 2007, यूके सरकार।
2. किंग, मर्विन, 2007, नॉर्दर्न आयरलैंड चैम्बर आफ कॉमर्स एण्ड इण्डस्ट्री, बेलफास्ट में ''मॉनेटरी पॉलिसी डेवलपमेंट्स''अक्तूबर।
3. पेन, फिलिप एच. 2007, पैसिफिक रीजनल बैंकिंग सुपरविज़न सेमिनार, एशिया, समोआ, में 'एनहान्सिंग एण्ड स्ट्रेन्दनिंग बैंकिंग सुपरवाइज़री कैपबिलिटीज इन पैसिफिक कन्ट्रीज' अक्तूबर।
4. गीव, जॉन, 2008, यूरोमनी बॉण्ड इन्वेस्टर्स कांग्रेस, लंदन में ''दि रिटर्न ऑफ़ दि क्रेडिट साइकल - ओल्ड लेसन्स इन न्यू मार्केट्स'' फरवरी।


कुछ प्रेक्षकों के अनुसार, नॉर्दर्न रॉक संकट से यह पता चला है कि दायित्वों का 'प्रोत्साहन-अनुकूल' विभाजन नहीं किया गया है तथा उक्त करार के पुनः प्रारूपण की आवश्यकता है। इस मुद्दे का निराकरण करने में कुछ लोगों द्वारा यह तर्क दिया गया है कि बैंक पर्यवेक्षण से संबंधित दायित्व को बैंक ऑफ इंग्लैंड से अलग किए जाने से संबंधित निर्णय का पुनरावलोकन किए जाने की आवश्यकता है, यही बात इस मुद्दे पर भी लागू होती है कि वित्तीय स्थिरता के लिए उत्तरदायी प्राधिकरण को बैंक पर्यवेक्षण से अलग कर दिया जाए या नहीं (यथा - मुलीनेक्स, 2008)।

10.41 अमरीका में हाल ही में उठी सब प्राइम बंधक ऋण समस्या की पृष्ठभूमि में, जिसके परिणामस्वरूप गंभीर ऋण अधिसंकुचन की स्थिति निर्मित हो गई है, अंतिम ऋणदाता का मुद्दा उठ खड़ा हुआ है। इससे विश्व भर के केंद्रीय बैंकों के समक्ष एक गंभीर चुनौती उपस्थित हो गई है और अंतिम ऋणदाता के कार्यों के संदर्भ में कई एक मुद्दे उठ खड़े हो गए हैं। ये मुद्दे मोटे तौर पर अन्य बातों के साथ-साथ लिखतों की पसंदगी, बेलआउट, संभाव्य ग्रिडलाकों से निपटने के लिए चलनिधि नियमन का आकार एवं उसकी विधि, संपार्श्विक के प्रकार, सहायता की जानेवाली संस्था के प्रकार और सहायता की अवधि से संबंधित हैं (बॉक्स X.3)।

## बॉक्स X.3
## अंतिम ऋणदाता

'अंतिम ऋणदाता', (एलओएलआर) पद से आशय है केंद्रीय बैंक का वह कार्य, जिसके द्वारा वह उस वित्तीय संस्था को सहायता प्रदान करने हेतु धनराशि उधार देता है, जो बाज़ार का अवलम्ब लेने के विकल्प का उपयोग करने के बाद भी अस्थायी चलनिधि दबाव का सामना कर रही हो तथा जिसकी विफलता के प्रणालीगत निहितार्थ होने की संभावना हो। उक्त पद का उद्‌गम बैंक ऑफ इंग्लैंड की स्थापना के संदर्भ में हुआ, जब इसका उल्लेख ''the dernier resort'' के रूप में किया गया, जिससे संकट के दौरान सभी बैंक चलनिधि प्राप्त कर सकते हों (बैरिंग 1797)। शास्त्रीय अंतिम ऋणदाता का सिद्धांत यह अभिकथन करता है कि किसी ''शोधक्षम किंतु नकदी रहित'' बैंक के सामने आयी चलनिधि संकट के दौरान, केन्द्रीय बैंक अंतिम ऋणदाता की भूमिका के तहत उसे संकटपूर्व स्तर पर मूल्यांकित अच्छी संपार्श्विक प्रतिभूति पर तथा दंडस्वरूप दर पर उधार दे कर सहायता कर सकता है (थार्नटन, 1802; बगेहाट, 1873)। बैंकिंग प्रणाली में चलनिधि सृजित करने में एकमात्र सक्षम संस्था के रूप में केंद्रीय बैंक को, विशेष रूप से चलनिधि समस्या से प्रणालीगत स्थिरता को खतरा पैदा हो जाने की स्थिति में, अंतिम ऋणदाता के रूप में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है। हालांकि, अंतिम ऋणदाता की भूमिका में महत्त्वपूर्ण नैतिक संकट शामिल होते हैं, क्योंकि केंद्रीय बैंक को बैंकिंग प्रणाली की हामीदारी लेने तथा उन बैंकों को बेल-आउट करने के लिए अति उत्सुक संस्था के रूप में देखा जा सकता है, जिन्हें अन्यों की भांति उत्तम ढंग से संचालित नहीं किया जा रहा है, जिसके माध्यम से अविवेकपूर्ण परंपराओं को अप्रत्यक्ष रूप से प्रोत्साहन प्राप्त होता है।

हाल के सब-प्राइम संकट के संदर्भ में मुद्रा अथवा ऋण बाज़ारों में निर्मित विक्षोभ के व्यापक अर्थव्यवस्था तक गहन रूप से बिखर जाने से बचने के लिए केंद्रीय बैंकों द्वारा निम्नलिखित पांच लिखतों का उपयोग किया गया है : (i) उधार लेने और उधार देने की दरों का समायोजन; (ii) बैंकों में भुगतान प्रणाली को ध्वस्त हो जाने से बचाने के उद्देश्य से विशेष चलनिधि अंतःक्षेपित करने हेतु निर्मित मुद्रा बाज़ार के परिचालन; (iii) उपलब्ध संपार्श्विकों की गुणवत्ता में आशोधन; (iv) सर्वाधिक बड़े वित्तीय मध्यवर्तियों के बीच वित्तीय लेनदेनों की व्यवस्थाएं विकसित करने में वित्तीय सहायता के बिना केंद्रीय बैंकों की संलग्नता, जो दूसरे और तीसरे स्तर के मध्यवर्तियों को स्वयमेव प्रभावित कर देती है; और (v)अन्य वित्तीय मध्यवर्तियों के वित्तीयन को प्रभावित करने के लिए बड़े वित्तीय मध्यवर्तियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराते हुए केंद्रीय बैंकों की संलग्नता।

हाल के वित्तीय विक्षोभ में अंतिम ऋणदाता परिचालनों के फलस्वरूप कुछ मुद्दे विशेष रूप से ध्यान संकेंद्रण की परिधि में आ गए हैं। पहला, केंद्रीय बैंकों के चलनिधि परिचालन परंपरागत रूप से प्रतिभूतियों की सीमित श्रेणी में रहे हैं और वे प्रायः संस्थाओं के चुनिंदा समूहों के साथ चलनिधि को आवश्यकता के अनुसार शेष प्रणाली को 'वितरित' करने हेतु उन पर आश्रित रहते हुए संचालित किए जाते रहे हैं। हालांकि, हाल के वित्तीय उथल-पुथल के दौरान केंद्रीय बैंकों ने उन प्रतिभूतियों की सीमा को विस्तारित कर दिया था, जिन्हें संपार्श्विकों के रूप में स्वीकार किया जा सकता था। विशेष रूप से अमरीकी फेडरल रिज़र्व उन बंधक समर्थित प्रतिभूतियों के भारी मूल्यों को रोक रखने पर सहमत था, जिन्हें बेचने में बाज़ारों को कठिनाई हो रही थी तथा उसने उन्हें इस प्रकार की या तो नकदी या फिर खजाना प्रतिभूतियां उपलब्ध कराई, जिन्हें तत्काल नकदी में परिवर्तित किया जा सकता था। दूसरा, अंतिम ऋणदाता सुविधा का मूलभूत उद्देश्य अन्य वित्तीय मध्यवर्तियों की तुलना में बैंकों के तुलनपत्र की विशेष विशिष्टताओं के कारण उन्हें प्रभावित करने वाले संकटों से निपटना होता है। हालांकि, हाल ही के विश्वव्यापी वित्तीय बाजारों की हलचल के दौरान, बड़े केंद्रीय बैंकों ने बैंकेतर संस्थाओं (विशेषतः निवेश बैंकों) की भी वित्तीय स्थिरता के आधार पर सहायता की है और प्रणालीगत चिंताओं के कारण प्रायः गैर-अर्थक्षम संस्थाओं को भी सहायता प्रदान की है। यह तर्क दिया जाता रहा है कि अंतिम ऋणदाता सुविधा को बैंकेतर संस्थाओं को भी प्रदान किए जाने की आवश्यकता है, विशेष रूप से बढ़ते अमध्यस्थीकरण के संदर्भ में होनेवाले प्रणालीगत परिणामों और उसके फलस्वरूप बैंकों और बैंकेतर सस्थाओं द्वारा प्रदत्त बैंकिंग एवं गैर-बैंकिंग सेवाओं के बीच मौजूद अंतर समाप्त होने के साथ-साथ प्रति एक्सपोजरों की पृष्ठभूमि में।

जबकि, वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के मामले में अंतिम ऋणदाता के रूप केंद्रीय बैंकों की भूमिका के बारे में व्यापक सहमति पाई जाती है, वहीं व्यवहार में यह निर्धारित कर पाना कठिन हो जाता है कि वित्तीय मध्यवर्ती उसके निधीयन का आवर्तन करते हुए अपने दायित्व को निभाने में सक्षम होने के गतिशील अर्थ में शोधक्षम है अथवा नहीं। अंतिम ऋणदाता के रूप में कार्य करने से पहले केंद्रीय बैंक के लिए निम्नलिखित प्रकार के मुद्दों पर कुछ सुस्पष्ट निर्णय लेना आवश्यक होता है : (i) क्या इससे कोई प्रणालीगत मुद्दा जुड़ा है;(ii) चलनिधि बाज़ार को उपलब्ध कराई जानी है अथवा संस्था को; (iii) क्या संस्था शोधक्षम किंतु नकदी रहित है; और (iv) क्या प्रदान की जा रही प्रतिभूति अच्छे मूल्यवाली है। अंतिम ऋणदाता के रूप में कार्य करते समय उठनेवाला मुख्य मुद्दा यह सुनिश्चित करने से संबंधित होता है कि केंद्रीय बैंक केवल शोधक्षम किंतु नकदी रहित बैंकों को ही उधार प्रदान करता है। हालांकि, कई बार किसी दिवालिया संस्था से नकदी रहित संस्था में भेद करना कठिन हो जाता है। यह स्थिति विशेषतः तब पैदा होती है, जब वित्तीय बाज़ार सहजता से काम नहीं कर रहे होते हैं, जिससे किसी बैंक की आस्तियों के बाज़ार मूल्य की गणना करना कठिन हो जाता है।

चूंकि आकस्मिक चलनिधि सहायता की आवश्यकता अचानक और पर्याप्त चेतावनी के बिना पड़ जाती है, इस प्रकार की सहायता उपलब्ध कराने की सामयिकता, इस तथ्य को स्वीकार करते हुए कि प्रतिसाद 'किताबी' अथवा नियम-पुस्तक - आधारित नहीं हो सकता, महत्त्वपूर्ण हो जाती है। जबकि अंतिम ऋणदाता का कार्य वित्तीय स्थिरता को परिरक्षित रखने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होता है, वहीं उसकी सक्रियता की विधि और समय अननुमेय होते हैं। तदनुसार, अंतिम ऋणदाता के कार्य के संदर्भ में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मुद्दा यह सुनिश्चित करना होता है कि केंद्रीय बैंक को इस बात के प्रति सजग रहते हुए कि अंतिम ऋणदाता के संबंध में निर्णय लेने में पर्याप्त स्तर के विवेक की ज़रूरत होती है, प्रणालीगत स्थिरता के हित में यह कार्य करने के लिए व्यापक, प्रभावी और स्वतंत्र अधिदेश सहित अधिकार प्राप्त हो।

**संदर्भ :**


1. बगेहाट, वाल्टर, 1873, लोम्बार्ड स्ट्रीट, ए डिस्क्रिप्शन ऑफ दि मनी मार्केट लंदन।
2. बेयरिंग, फ्रान्सिस, 1797. आब्जर्वेशन्स आन दि एस्टैब्लिशमेंट ऑफ दि बैंक ऑफ इंग्लैंड एण्ड ऑन पेपर सर्क्युलेशन ऑफ दि कन्ट्री, लंदनः मिनर्वा प्रेस।
3. रेड्डी वाइ. वी. 2007, ''ग्लोबल डेवलपमेंट एण्ड इंडियन पर्सपेक्टिव्जः सम रैण्डम थॉट्स'' 27 नवंबर को मुंबई में आयोजित बैंकर सम्मेलन में दीक्षांत भाषण।
4. थार्नटन, हेनरी, 1802. ऐन इन्क्वायरी इन टू दि नेचर एण्ड इफेक्ट्स ऑफ पेपर क्रेडिट ऑफ ग्रेट ब्रिटेन, हैचर्ड, लंदन. रिप्रिंट जार्ज अलेन एण्ड उनविन लिमिटेड, लंदन, 1939।

## पर्यवेक्षी ढांचा

10.42 हाल तक बैंकिंग उद्योग के ढांचे की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता थी बैंकिंग और अन्य वित्तीय सेवा उद्योगों, यथा - प्रतिभूति एवं बीमा का अलग-अलग होना। अमरीका में इस प्रकार के पृथक्करण को ग्लास-स्टीगल अधिनियम 1933 के अधीन अधिदिष्ट किया गया था। कई अन्य देशों ने भी बैंकिंग को बीमा और प्रतिभूतियों के कारोबार से जोड़े जाने पर प्रतिबंध लगा रखे हैं। हालांकि, लाभ एवं वित्तीय नवोन्मेष की तलाश ने बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं, दोनों ही को एक दूसरे के परंपरागत परिचालन क्षेत्रों को अतिक्रमित करने हेतु प्रेरित कर रखा है। कई एक देशों में बैंकिंग को बीमा और प्रतिभूति कारोबार के साथ मिलाए जाने पर लगे प्रतिबंधों को हटा लिया गया है, जिसके फलस्वरूप 'वित्तीय संगुटों' का उद्भव हुआ है (बॉक्स X.4)।

10.43 संगुट विभिन्न वित्तीय गतिविधियों को एक ही छत के नीचे लाने से होनेवाले आर्थिक लाभों द्वारा अभिप्रेरित होते हैं, ताकि बड़े पैमाने की किफायतें लाई जा सकें तथा सभी व्यवसाय क्षेत्रों का प्रसार हो सके। ये किफायतें उच्चतर परिचालन कार्य-कुशलता द्वारा तथा उत्पादों के नवोन्मेषन द्वारा सृजित की जाती हैं, जिनसे उदाहरण के लिए 'एक स्थलीय खरीदारी' हेतु उपभोक्ताओं की भुगतान करने की तत्परता का लाभ उठाने की सुविधा प्राप्त होती है। एक ऐसी साझी सूचना प्रणाली वाले वित्तीय संगुट, जिसका उपयोग सभी उत्पाद क्षेत्रों में किया जा सकता हो, पर सूचना एकत्रित करने की लागत केवल एक बार वहन करनी होती है। सुपुर्दगी, विपणन और भौतिक निविष्टियों को सेवाओं के अपेक्षाकृत एक बड़े सेट का निर्माण करने में संयोजित किया जा सकता है। अंत में, जब विभिन्न सेवाओं में निहित जोखिम अपूर्ण रूप से परस्पर संबंधित होते हैं तो उसमें एक विविधीकृत जोखिम पोर्टफोलियो के माध्यम से जोखिम प्रबंधन में किफायतों की संभाव्यता विद्यमान होती है। इसके अलावा, वित्तीय संगुट को लाभ अर्जित करने तथा विविधीकरण के माध्यम से अर्जनों को बनाए रखने का एक साधन माना जाता रहा है। जबकि सूचना प्रौद्योगिकी में हुई उन्नति के फलस्वरूप वित्तीय सेवाओं में परिष्करण तथा लागतों में पर्याप्त कमी संभव हुई है, वहीं उन्होंने वित्तीय सेवा प्रदाताओं पर निवेश संबंधी भार भी बढ़ा दिया है। निवेश संबंधी इस भार को कम करने की आवश्यकता को वित्तीयन संगुट उद्भव के लिए उत्तरदायी एक अन्य महत्त्वपूर्ण कारक माना जाता है। वित्तीय आवश्यकताओं में हुए परिवर्तनों के परिणामस्वरूप नए वित्तीय सेवा प्रदाताओं का उद्भव हुआ है तथा इसने विद्यमान वित्तीय सेवा प्रदाताओं का विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत अन्य सेवा प्रदाताओं के साथ एकीकरण करते हुए अपने संगठन को विस्तृत करने हेतु प्रेरित किया है, ताकि वे ग्राहकों की विविधीकृत हो रही आवश्यकताओं के प्रति बेहतर अनुक्रिया दिखा सकें। वित्तीय सेवा प्रदाताओं के परिचालन भी सीमापार से निधियों और सूचना की अधिकाधिक आवाजाही के परिणामस्वरूप अधिक वैश्विक होते जा रहे हैं। वित्तीय प्राधिकारियों ने भी वित्तीय सेवाओं के एकीकरण और व्यवसायों के विविधीकरण में सहायक वातावरण निर्मित करने में विनियमों को शिथिल बनाते हुए सहायता प्रदान की है।

10.44 हालांकि, वित्तीय संगुटों के परिचालन पर्यवेक्षी दृष्टिकोण से कुछ गंभीर चिंताओं को जन्म देते हैं यथा - विशाल और जटिल ढांचे द्वारा उपस्थित किया जानेवाला प्रणालीगत जोखिम, हितों का टकराव, विनियामक अंतरपणन, दोहरा और अतिशय अनुकूलन और संक्रमण। जब कोई वित्तीय संस्था अत्यधिक बड़ी हो जाती है, तो विनियामक प्रणाली व्यापक वित्तीय संकट को रोकने के लिए चलनिधि सहायता अथवा वित्तीय सुरक्षा पाश को सामान्य नीतिगत मापों से अधिक स्तर तक विस्तारित करने की आवश्यकता का अनुभव कर सकता है। इस प्रकार की अंतर्निहित बीमा प्रणाली छोटी संस्थाओं की तुलना में बड़ी संस्थाओं को इस प्रकार के लाभ प्रदान करती है, जो जोखिम को नियंत्रित रखने की उनकी सामर्थ्य से असम्बद्ध होते हैं, जिससे वित्तीय प्रणाली की सुभेद्यता में वृद्धि हो जाती है। बड़ी और जटिल वित्तीय संस्थाएं कमज़ोर आंतरिक नियंत्रणों, लचीलेपन के अभाव तथा घटिया एकीकरण की समस्या के प्रति ग्रहणशील हुआ करती हैं। वित्तीय संगुटों की गतिविधियां जैसे-जैसे अधिक जटिल और रूपांतरित होती जाती हैं, विनियामकों के लिए उन पर प्रभावी ढंग से निगरानी रखना उतना ही कठिन होता जाता है। हितों के टकराव को किसी वित्तीय संगुट की मूलभूत कमज़ोरी माना जाता है। हितों का टकराव उस समय पैदा होता है, जब वित्तीय संगुट के भीतर वाली कोई संस्था उसी समूह की किसी अन्य संस्था से ऐसी शर्तों पर लेनदेन करती है, जो बाज़ार की शर्तों से अलग होती हैं या सामान्य अनुमोदन प्रक्रिया से परे होती हैं। कई अवसरों पर इस प्रकार की कार्रवाइयां एक दूसरे के ग्राहकों को बेल-आउट करने के लिए की जा सकती हैं। वित्तीय संगुटों द्वारा उपस्थित की जाने वाली एक अन्य समस्या है, 'विनियामक अंतरपणन', जिससे आशय है किसी ऐसे संगुट की कुछ गतिविधियों या अवस्थाओं को वहाँ ले जाना जहां विनियामक अपेक्षाएं कम कठोर हैं या फिर हैं ही नहीं। इस प्रकार, कोई वित्तीय संगुट ऐसी जोखिमों को उठाते हुए जहां पूंजी संबंधी अपेक्षाएं अत्यधिक कम हों, समग्र पूंजी अपेक्षाओं को कम कर सकता है। यह समस्या 'दोहरे अनुकूलन' के कारण पैदा होती हैं, जिसके द्वारा मूल कंपनी की पूंजी आवश्यकताओं को पूरा करने तथा उसके साथ ही उसकी सहायक कंपनी की पूंजी आवश्यकता के लिए भी उसी पूंजी का साथ-साथ उपयोग किया जाता है। उसी पूंजी के इस दोहरे उपयोग के परिणामस्वरूप, समेकित पर्यवेक्षण के ढांचे द्वारा दोहरे अनुकूलन की समाप्ति सुनिश्चित न किए जाने पर संगुट न्यून पूंजीकरण की स्थिति में आ सकता है। 'अतिशय अनुकूलन' की समस्या उस समय उपस्थित होती है जब कोई मूल कंपनी ऋण जारी करती है और उसके आगमों को सहायक कंपनी/कंपनियों में इक्विटी के रूप में अनुप्रवाहित कर देती है। इससे संबंधित एक अन्य समस्या है समूहन की। वह यह कि किसी संगुट द्वारा गृहीत जोखिम उसके अंगों के योग से अधिक हो सकती है (मल्कोनेन, 2004)। तथापि, वित्तीय संगुट के परिचालनों से उद्भूत होनेवाला एक अन्य मुद्दा है संसर्ग। यह उस जोखिम को अपरिहार्य बना देता है जिसमें संगुट के भीतर वाली किसी इकाई द्वारा झेली जा रही वित्तीय कठिनाइयों का कुल मिलाकर उस संगुट की स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इस प्रतिकूल प्रभाव का अनुभव उस समूह के वित्तीय रूप से सुदृढ़ और अच्छी तरह से कार्यरत संघटकों द्वारा भी किया जा सकता है। संसर्ग व्यापक अंतः समूह एक्सपोज़रों के अस्तित्व से उद्भूत होता है।

10.45 वित्तीय संगुटों के प्रत्येक ढांचे के स्वयं अपने लाभ और अपनी हानियां होती हैं। नियंत्रक कंपनी के ढांचे को अपनाने वाला पहला देश अमरीका था और इसलिए वह 'मूल कंपनी-सहायक कंपनी ढांचा' बनाम 'नियंत्रक

## बॉक्स X.4
## वित्तीय संगुट - परिभाषा एवं ढांचा

वित्तीय संगुट की विश्वव्यापी स्तर पर स्वीकृत कोई परिभाषा नहीं है, क्योंकि वित्तीय संगुट में वास्तव में किसका समावेश होता है इसके बारे में भिन्न-भिन्न मत हैं। त्रिपक्षीय समूह (1995) किसी वित्तीय संगुट (एफसी) को ''साझे नियंत्रण के अधीन कम्पनियों के किसी ऐसे समूह, जिसकी अन्य अथवा प्रमुख गतिविधियों में कम से कम दो भिन्न-भिन्न वित्तीय क्षेत्रों (बैंकिंग,प्रतिभूति, बीमा) में महत्त्वपूर्ण सेवाएं प्रदान किए जाने का समावेश हो'' के रूप में परिभाषित करता है। यूरोपीय संघ में 'वित्तीय संगुट' माने जाने के लिए किसी समूह द्वारा निम्नलिखित तीन अपेक्षाओं का पूरा किया जाना आवश्यक होता है। एक, समूह के पास कम से कम एक ऐसी कम्पनी हो जो या तो बैंकिंग या फिर प्रतिभूतियों के कारोबार में लगी हो और कम-से-कम एक कम्पनी बीमा व्यवसाय में रत हो। दो, बैंकिंग, प्रतिभूतियों अथवा बीमा के कारोबार में संलग्न कम्पनी उक्त समूह की प्रधान कम्पनी हो अथवा समग्र समूह के प्रति उक्त समूह में शामिल वित्तीय क्षेत्र की कम्पनियों के तुलन पत्र के योग का अनुपात (बैंकिंग, प्रतिभूति और बीमा-सेवाओं के बकाये की कुल रकम) के 40 प्रतिशत से अधिक हो। तीन, प्रत्येक वित्तीय क्षेत्र के मामले में उस वित्तीय क्षेत्र के तुलनपत्र के योग के अनुपात का औसत उस समूह में शामिल वित्तीय क्षेत्र की कम्पनियों के तुलनपत्र के योग की तुलना में और उसी वित्तीय क्षेत्र की शोध क्षमता सम्बन्धी आवश्यकताओं का अनुपात उस समूह में शामिल वित्तीय क्षेत्र की कम्पनियों की शोध क्षमता सम्बन्धी आवश्यकताओं से 10 प्रतिशत अधिक हो अथवा उस समूह में शामिल सबसे छोटी वित्तीय क्षेत्र की कम्पनी के तुलनपत्र का योग 6 बिलियन यूरो अधिक हो।

अमरीकी वित्तीय कानून 'वित्तीय संगुट' पद का प्रयोग नहीं करते। 1999 का वित्तीय सेवा आधुनिकीकरण अधिनियम (जिसे ग्रैम-लीच-बेली अधिनियम अथवा जीएलबी अधिनियम के रूप में जाना जाता है) उन बैंक नियंत्रक कम्पनियों को, जो पूंजी पर्याप्तता और अन्य मापों के रूप में कुछ आवश्यकताओं को पूरा करती हों, ऐसी 'वित्तीय नियंत्रक कम्पनियों' के रूप में कार्य करने की अनुमति प्रदान करता है, जिन्हें प्रतिभूति, बीमा और पारस्परिक निधियों सहित बैंक नियंत्रक कम्पनियों की तुलना में अपेक्षाकृत व्यापक श्रेणी वाले व्यवसायों में संलग्न होने हेतु सहायक कम्पनियां स्थापित करने की अनुमति होती है। 'वित्तीय नियंत्रक कम्पनी' केवल एक ऐसी हैसियत होती है, जो उसे व्यापक श्रेणी वाली वित्तीय सेवाएं प्रदान करने वाली अन्य कम्पनियों को नियंत्रित करने की अनुमति प्रदान करती है। इसी प्रकार, जापान में वित्तीय कानून 'वित्तीय संगुट' पद का प्रयोग नहीं करते। अलग-अलग क्षेत्रवार कानून नियंत्रक कम्पनियों और उनकी सहायक कम्पनियों के लिए मुक्त व्यवसायों की व्याप्ति को अभिशासित करते हैं, जिससे जापानी कानून यूरोपीय मॉडल की अपेक्षा अमरीकी मॉडल के अधिक समरूप हो जाता है।

वित्तीय संगुट उनके प्रसार क्षेत्र, उनके व्यवसाय के ढांचे और आकार की दृष्टि से अलग-अलग देशों में अलग-अलग प्रकार के होते हैं। वित्तीय संगुट तीन अलग-अलग लाइनों पर विन्यस्त किए जा सकते हैं, यथा - (i) सर्वव्यापी बैंक, जिसमें कोई बैंक गैर-परम्परागत कार्य-कलाप हाथ में ले सकता है, जैसे अलग-अलग विभागों में बीमा और प्रतिभूतियों का आंतरिक रूप से क्रय-विक्रय, (ii) नियंत्रक कम्पनी का ढांचा, जिसमें बैंक नियंत्रक कम्पनी की एक सहायक कम्पनी होता है तथा गैर-परम्परागत कार्य-कलाप नियंत्रक कम्पनी की अन्य सहायक कम्पनियों द्वारा संचालित किए जाते हैं, और (iii) मूल-सहायक कम्पनी (परिचालनरत सहायक कम्पनी) जिसमें गैर-परम्परागत कार्य-कलाप बैंक की अलग सहायक कम्पनियों में संचालित किए जाते हैं (आकृति 1)।

एक विशुद्ध समन्वित ढांचा या सर्वव्यापी बैंक वह होता है, जो वित्तीय उत्पादों का एकल कार्पोरेट ढांचे के भीतर सृजन और वितरण करता हो। कुछ मामलों में सर्वव्यापी बैंक में वाणिज्यिक और निवेश बैंकिंग एक ही निगम में शामिल रहती है, किन्तु अन्य वित्तीय गतिविधियों को अलग-अलग सहायक कम्पनियों के माध्यम से संचालित किया जाता है। जहाँ सर्वव्यापी बैंक में बैंकिंग गतिविधि आवश्यक रूप से शामिल होती है, वहीं वित्तीय संगुट के मामले में इसकी आवश्यकता नहीं होती। इस प्रकार सभी वित्तीय संगुटों के लिए सर्वव्यापी बैंक होना आवश्यक नहीं होता, जबकि सभी सर्वव्यापी बैंकों को वित्तीय संगुट माना जा सकता है। कोई भी महत्त्वपूर्ण औद्योगिक देश किसी एकल कॉर्पोरेट कम्पनी को बैंकिंग, प्रतिभूति और बीमा तीनों ही वित्तीय क्षेत्रों में सेवाएं प्रदान करने की अनुमति नहीं प्रदान करता।

जैसा कि अमरीका में पाया जाता है, नियंत्रक कम्पनी के ढांचे में बैंक और अन्य वित्तीय कम्पनियां उसी नियंत्रक कम्पनी में सम्बद्ध कम्पनियाँ हो जाती हैं। 1999 के जीएलबी अधिनियम में उन प्रतिबन्धों को हटा दिया गया है, जो अमरीकी वित्तीय सेवा-प्रदाताओं की एक-दूसरे के साथ सम्बद्ध होने की योग्यता को सीमित कर देते थे। हालांकि इस प्रकार की सम्बद्धताएं केवल वित्तीय नियंत्रक कम्पनियों के ढांचे के भीतर ही हो सकती हैं। वित्तीय नियंत्रक कम्पनियों की अहर्ता रखने वाली बैंक नियंत्रक कम्पनियां वित्तीय रूप से सम्बन्धित गतिविधियों की व्यापक श्रृंखला में शामिल हो सकती है। वित्तीय नियंत्रक कम्पनी की अर्हता प्राप्त करने हेतु बैंक नियंत्रक कम्पनी की सहायक कम्पनी की हैसियत वाली प्रत्येक निक्षेपागार संस्था को आवश्यक रूप से (i) सुपूंजीकृत और सुप्रबन्धित होना चाहिए (ii) कम से कम एक संतोषजनक सामुदायिक पुनर्निवेश अधिनियम रेटिंग रखना चाहिए और (iii) कमलागत वाली मूल बैंकिंग सेवाएं प्रदान करने का प्रदर्शनीय रिकार्ड रखना चाहिए। किसी बैंक का अभिग्रहण करने वाली बैंकेतर वित्तीय संस्था के लिए एक बैंक नियंत्रक कम्पनी बनने हेतु फेडरल रिजर्व बोर्ड के समक्ष आवेदन करना आवश्यक होता है। अर्हता सम्बन्धी मानदंडों को पूरा करने की स्थिति में वह वित्तीय नियंत्रक कम्पनी के लिए भी आवेदन प्रस्तुत कर सकती है।

मूल कम्पनी - सहायक कम्पनी के संगुट का उदाहरण इंग्लैंड और भारत सहित कतिपय उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में भी देखने में आता है, जिसके द्वारा किसी वाणिज्यिक बैंक या अन्य वित्तीय संस्था को अन्य वित्तीय उत्पादों का लेन-देन करने हेतु सहायक कम्पनियों के गठन की अनुमति प्रदान की जाती है।

**सन्दर्भ:**


1. बैंकों, प्रतिभूति और बीमा विनियामक का त्रिपक्षीय समूह. 1995. दि सुपरविज़न ऑफ फाइनैन्सियल कांग्लोमरेट्स, जुलाई।
2. राज, जनक 2005, ''इज देयर ए केस फॉर सुपर रेग्यूलेटर इन इण्डिया? इश्यूज एण्ड ऑप्शन्स,'' इकॉनॉमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली, वॉल्यूम XLI, सं. 35, 3846-3855, अगस्त 27 - सितम्बर 2।


**आकृति 1: वित्तीय संगुटों का ढांचा**

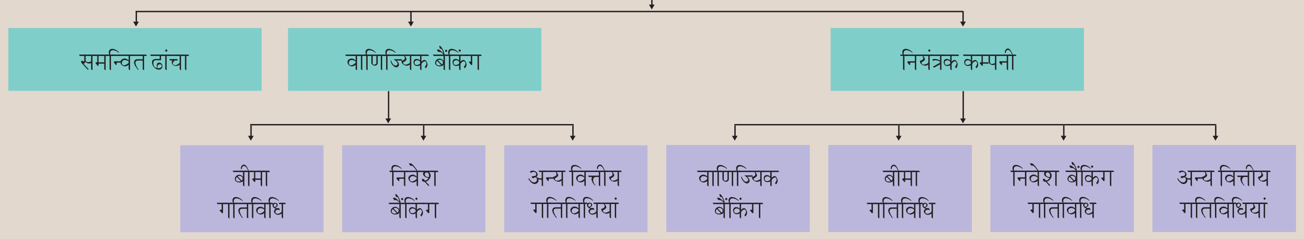

कंपनी ढांचा' पर विचार-विमर्श का प्रमुख केंद्र रहा है। अमरीका में नियंत्रक कंपनी के पक्ष में प्रस्तुत किया जानेवाला मुख्य तर्क यह है कि यह अधिक सुरक्षित एवं सुदृढ़ है तथा प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करता है। पुनः यह इस धारणा पर आधारित है कि संघीय निक्षेप बीमा, फेडरल आरक्षित निधि के बट्टा पटल और भुगतान प्रणाली तक पहुंच के समावेश वाला फेडरल सुरक्षा पाश बैंकों को बैंकेतर वित्तीय संस्थाओं की तुलना में निधीयन एवं जोखिम वहन के क्षेत्रों में कुछ वित्तीय लाभ प्रदान कर सकता है। इन्हीं कारणों से परिचालनरत सहायक कंपनी वाला ढांचा बैंकों और उनकी सहायक कंपनियों को उन प्रतिभूति और बीमा फर्मों के मुकाबले प्रतियोगी लाभ पहुंचाता है, जो बैंकों से अलग होती हैं। ऐसा माना जाता है कि नियंत्रक कंपनी वाला वह ढांचा, जिसका फेडरल रिज़र्व को समर्थन किया था, सुरक्षा पाश और उसके साथ जुड़े हुए नैतिक संकट के प्रतिभूति और बीमा उद्योगों तक फैलाव को रोक देता है और वित्तीय सेवा उद्योग के भीतर सभी को समान अवसर दिए जाने का आश्वासन देता है। फेडरल रिज़र्व ने यह अनुभव किया कि यह महत्त्वपूर्ण तथ्य था कि फेडरल सुरक्षा पाश में अंतर्निहित सरकारी सहायता केवल उन्हीं गतिविधियों तक सीमित होगी, जिन्हें कोई बैंक सीधे ही संचालित कर सकता है। उसका अभिमत यह था कि परिचालनरत सहायक कम्पनियां सम्पूर्ण ऋण सब्सिडी को बैंक से सीधे अन्य कम्पनियों की उस नयी प्रधान गतिविधि का वित्तीयन करने हेतु अंतरित किए जाने की फनल होंगी, जिसके माध्यम से इस प्रकार की कम्पनी को प्रतिस्पर्धात्मक लाभ पहुंचाया जा सकेगा। इसका परिणाम अनिवार्य रूप से यह होगा कि अमरीकी वित्तीय सेवा उद्योग की प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति में कमी आ जाएगी, क्योंकि स्वतंत्र प्रतिभूति, बीमा और अन्य वित्तीय सेवा प्रदाता बैंकों द्वारा स्वाधिकृत सेवाओं की तुलना में अलाभकर स्थिति में परिचालन करेंगे। बैंकों द्वारा सहायक कम्पनियों में निवेश की गई इक्विटी का निधीयन बीमित जमाराशियों तथा बैंकों से लिए गए उधार की उन रकमों से किया जाएगा, जो सुरक्षा-पाश की सब्सिडी से सीधे लाभान्वित होती हैं। इस प्रकार, अनिवार्य रूप से, किसी स्वतंत्र कम्पनी और यहाँ तक कि बैंक की मूल कम्पनी की सहायक कम्पनी की तुलना में बैंक की सहायक कम्पनी की पूंजी की लागत आवश्यक रूप से कम होनी चाहिए। अतएव कोई यह अपेक्षा करेगा कि कोई तर्कसंगत बैंकिंग संगठन यथासंभव उसकी बैंकेतर गतिविधि को बैंक की नियंत्रक कम्पनी ढांचे से हटाकर बैंक के सहायक कम्पनी ढांचे के तहत ले जाएगा। सम्बद्ध कम्पनियों से बैंक की सहायक कम्पनियों को किया जाने वाला इस प्रकार का बदलाव बैंकेतर प्रतिस्पर्धियों की तुलना में सब्सिडी और सम्पूर्ण बैंकिंग संगठन के प्रतिस्पर्धात्मक लाभ को बढ़ा देगा (ग्रीनस्पैन, 1997)।

10.46 फेडरल रिज़र्व के अनुसार नियंत्रक कम्पनी के ढांचे को आधुनिकीकरण के सम्पूर्ण लाभ प्राप्त होते हैं तथा उसके पास सुरक्षा और वित्तीय सुदृढ़ता को संरक्षित रखने, फेडरल सुरक्षा पाश को रोधित करने और उन कम्पनियों को प्रतिस्पर्धात्मक समानता उपलब्ध कराने का प्रमाणित पिछला कार्य-निष्पादन रिकार्ड मौजूद रहता है, जो बैंकों के साथ सम्बद्ध होने का विकल्प अपनाती हैं तथा उनको भी जो स्वतंत्र बनी रहने का विकल्प चुनती हैं। अत: यह तर्क दिया जाता है कि बैंकेतर गतिविधियों के नियंत्रक कम्पनी की अलग से पूंजीकृत सहायक कम्पनी में संपादित किए जाने की अपेक्षा करते हुए उन गतिविधियों के जोखिम वहन करने के प्रभावों को बैंक से रोधित किया जा सकता है तथा इससे फेडरल सुरक्षा-पाश अर्थात निक्षेप बीमा, बट्टाकरण पटल और भुगतान प्रणाली गारंटियों पर अतिरिक्त दावे नहीं किए जा सकेंगे। अमरीकी विनियामक यह महसूस करते थे कि बैंकिंग संगठन की पूंजी और फेडरल सुरक्षा पाश नियंत्रक कम्पनी ढांचे की तुलना में मूल कम्पनी-सहायक कम्पनी सम्बन्ध के अधीन प्रतिभूति और बीमा गतिविधियों में हानि के प्रति अधिक गंभीरता से एक्सपोज्ड रहेंगे।

10.47 हालांकि, इंग्लैंड के सहायक कंपनी-आधारित मॉडल के पक्ष में भी सुदृढ़ तर्क दिए जाते हैं। यह तर्क दिया जाता है कि यह सर्वाधिक व्यावहारिक सर्वव्यापी बैंकिंग दृष्टिकोण और एक ऐसी संगठनात्मक व्यवस्था का निरूपण करता है, जो महत्त्वपूर्ण विविधीकरण अभिलाभों को समर्थन प्रदान कर सकता है और उसके साथ ही उन विनियामक त्रुटियों का प्रबंधन करने में भी यथोचित रूप से सक्षम है, जो विशुद्ध सर्वव्यापी बैंकिंग मॉडल को अरक्षणीय और धारक कम्पनी के ढांचे को अनम्य बना देते हैं। परिचालनगत सहायक कम्पनी मॉडल में जहाँ मूल कम्पनी और सहायक कम्पनियों के बीच गतिविधियों के पृथक्करण की आवश्यकता होती है वहीं उसमें उस प्रकार के फायरवाल की आवश्यकता नहीं होती, जो नियंत्रक कम्पनी वाले ढांचे में अनूठे ढंग से देखने में आती है तथा इसके कतिपय लाभ भी होते हैं। पहला, यह अपेक्षा करते हुए कि बैंकेतर गतिविधियां अलग से पूंजीकृत बैंक की सहायक कम्पनियों में चलाई जाएं, बैंक पूंजी को आंशिक रूप से इन क्षेत्रों में होने वाली महत्त्वपूर्ण अनपेक्षित हानियों से बचा लिया जाता है। दूसरा, किसी बैंक और उसकी बैंकेतर सहायक कम्पनियों के बीच अधिकाधिक स्तर तक के एकीकरण की अनुमति देकर विविधीकरण प्रभावों के माध्यम से अर्जन के सृजन की संभाव्यता बढ़ा ली जाती है। इसके अलावा, सर्वव्यापी बैंक के मामले में लागत और राजस्व, दोनों ही पक्षों में अधिक व्यापक किफायतों की संभाव्यता बढ़ा ली जाती है। इससे बैंक की सुरक्षा और वित्तीय सुदृढ़ता में वृद्धि होती है। विविधीकरण के प्रभाव और व्यापक किफायतों के प्रभाव दोनों ही उस संभाव्यता को कम करने में सहायक होते हैं कि जिसे पूरा करने के लिए सुरक्षा पाश को सक्रिय करना पड़ता है। नयी गतिविधियों में संलग्न होने की एक पूर्व-शर्त के रूप में किसी वित्तीय सेवा कम्पनी को संसाधनों को उसके बैंक से उसकी नियंत्रक कम्पनी में अंतरित करने हेतु विवश किए जाने से बैंक के संसाधनों में कमी आ जाएगी, फलस्वरूप बैंक के अर्जन कम विविधीकृत हो पाएंगे और इस प्रकार निक्षेप बीमा निधि का जोखिम बढ़ जाएगा। तीसरा, इंग्लैंड का मॉडल सीधे वित्तीय सेवाओं के विनियमन की परंपरागत कार्यपरक डिज़ाइन में काष्ठसंधि कर लेता है। फलतः बैंकिंग प्राधिकारी सर्वव्यापी बैंक की मूल कम्पनी के प्राथमिक विनियामक बने रह सकते हैं, जबकि प्रतिभूति और बीमा विनियामक क्रमशः प्रतिभूति बाज़ार और बीमा क्षेत्र के विनियामक बने रह सकते हैं। उनकी नीतियों को अग्रणी विनियामक जैसी एक उपयुक्त व्यवस्था के माध्यम से समन्वित किया जा सकता है।

10.48 यह भी तर्क दिया जाता है कि बैंक इस प्रकार का व्यवहार नहीं करते कि जैसे वे आर्थिक सहायता प्राप्त करते हों। आर्थिक सहायता प्राप्त किए जाने के बावजूद उपयुक्त प्रत्युत्तर संगठनात्मक प्रतिबंध लागू किए जाने के बजाय उसे सावधानीपूर्वक रोकना होना चाहिए। परिचालनरत सहायक कम्पनी

ढांचे का समर्थन करने वालों का तर्क यह होता है कि परिचालनरत सहायक कम्पनी में संभाव्य हानियों को इस प्रकार ढंका जाना चाहिए जैसे कि सुरक्षा-पाश के एक्सपोजर को समाप्त कर दिया गया है। किसी बैंक द्वारा उसकी परिचालनरत सहायक कम्पनी में निवेश को बैंक की विनियामक पूंजी में से घटा दिया जाना चाहिए, जिसके बाद बैंक की विनियामक पूंजी की स्थिति को आवश्यक रूप से तब भी 'सुपूंजीकृत' माना जाना चाहिए। इसके अलावा, बैंक को विफल हो चुकी सहायक कम्पनी के किसी भी ऋण को चुकाने से निषिद्ध कर दिया जाएगा। हालांकि, इसके प्रत्युत्तर में यह तर्क दिया जाता है कि उदाहरण के लिए किसी परिचालनरत सहायक कम्पनी में किए गए प्रतिभूतियों के लेन-देन अथवा बीमे की हामीदारी में हानियां इतनी तेजी से हो सकती हैं कि वे विनियामक द्वारा कार्रवाई किए जाने के पूर्व ही मूल बैंक को दुर्दमित कर सकती हैं। इसे अलग ढंग से कहा जाए तो किसी परिचालनरत सहायक कम्पनी में होने वाली हानियां पर्यवेक्षक को इस प्रकार की कोई जानकारी होने पाए इसके काफी पहले ही बैंक के मूल इक्विटी निवेश से आसानी से बहुत अधिक हो सकती है। परिणामी बैंक सुरक्षा और सुदृढ़ता से सम्बन्धित चिंताएं उस सीमा तक गहन होती जाती हैं, जिस सीमा तक परिचालनरत सहायक कम्पनी के अतीत में प्रतिधारित अर्जनों से मूल बैंक की पूंजी सुदृढ़ हुई होती - जो परिचालनरत सहायक कम्पनी की स्थापना का प्रत्यक्ष कारण होता है। पूंजी में इस प्रकार के जमाव का उपयोग अन्य बैंक गतिविधियों को सहायता प्रदान करने में किया जा सकता है और उसके बाद उसे परिचालनरत सहायक कम्पनी में कालान्तर में होने वाली हानियों से समाप्त किया जा सकता है, जिससे बैंक को न्यून-पूंजीकृत स्थिति में लाया जा सकता है। यह मत व्यक्त किया जाता है कि, इस प्रकार, नियंत्रक कम्पनी ढांचे में समस्त बैंकेतर गतिविधियां उसी विनियामक प्रणाली के अधीन होती हैं और वे बैंकों तथा फेडरल निक्षेप बीमा प्रणाली को गैर-बैंकिंग गतिविधि में शामिल परिचालनरत सहायक कम्पनी की विफलता की जोखिम से संरक्षित रखती हैं।

10.49 हालांकि, कुछ अन्य लोग यह महसूस करते हैं कि जैसा कि दावा किया गया है, सुरक्षा-पाश सब्सिडी के अस्तित्व का कोई साक्ष्य मौजूद नहीं है। बैंकों द्वारा सुरक्षा-पाश से प्राप्त किए जाने वाले किसी भी लाभ की विनियामक लागतों द्वारा अपेक्षा से अधिक भरपाई हो जाती है। संगठनात्मक ढांचे और बैंक के सुरक्षा-पाश के बीच सहलग्नता से संबंधित एक अध्ययन से यह पता चलता है कि आस्तियों पर प्रतिलाभ में भिन्नता के मापदंड से बैंकों द्वारा स्थापित प्रतिभूतियों की सहायक कम्पनियां नियंत्रक कम्पनी की सम्बद्ध कंपनियों के रूप में गठित कम्पनियों की तुलना में कम जोखिमपूर्ण होती हैं (व्हालेन 2000)। हालांकि, बैंकों द्वारा स्थापित प्रतिभूति की सहायक कम्पनियों की पूंजी नियंत्रक कम्पनी की सहायक कम्पनियों की तुलना में कम होती है, ताकि पहले वाली की समग्र जोखिम अधिक रहे। उनकी निधीयन लागत भी अपेक्षाकृत अधिक होती है तथा यह उक्त तर्क से सुसंगत होगा कि परिचालनरत सहायक कम्पनियां उनकी नियंत्रक कम्पनी की सम्बद्ध कम्पनियों की तुलना में अधिक जोखिमपूर्ण होती हैं। हालांकि, सुरक्षा-पाश आर्थिक सहायता (सब्सिडी) के मुख्य प्रश्न संबंधी निष्कर्ष निष्कर्षरहित ही हैं।

10.50 परम्परागत रूप से वित्तीय मध्यवर्तियों का विनियमन संस्थागत आधार पर होता रहा है, जिसके द्वारा विनियमन वित्तीय संस्थाओं पर निर्देशित होता है, उनके द्वारा किए जाने वाले कारोबार का संमिश्र चाहे जैसा भी क्यों न हो। चूंकि वित्तीय संस्थाएं सामान्यतया किसी विशिष्ट व्यवसाय क्षेत्र में ही विशेषज्ञता रखती हैं, अत: संस्थागत और कार्यगत विनियमन में अन्तर अधिक प्रासंगिक नहीं होता था और वित्तीय मध्यवर्ती का विनियमन उसके मुख्य व्यवसाय के विनियमन से अधिक भिन्न नहीं हुआ करता था। हालांकि, वित्तीय सेवा प्रदाताओं के बीच गतिविधियों में विभेद के मिट जाने तथा वित्तीय संगुटों अथवा सर्वव्यापी बैंकों के उद्भव की पृष्ठभूमि में संस्थागत ढांचा कुछ देशों में नीति और सार्वजनिक बहस का मुख्य मुद्दा बन गया है। विनियमन के प्रति संस्थागत दृष्टिकोण पर मुख्यतः तीन आधार पर आपत्ति दर्ज की जा रही है। इनमें से पहला है स्पर्धात्मक उदासीनता का मुद्दा अर्थात् अलग-अलग संस्था-आधारित विनियामक उसी गतिविधि के लिए भिन्न-भिन्न कार्यपरक विनियमन प्रयोग कर सकते हैं। यह तर्क दिया जाता है कि उत्पादों और संस्थाओं के बीच विभाजन रेखाओं के मिटते जाने के फलस्वरूप यह संभव है कि इसी प्रकार की सेवाएं या उत्पाद उपलब्ध कराने वाली वित्तीय संस्थाओं का पर्यवेक्षण भिन्न-भिन्न प्राधिकारियों द्वारा किया जाए। कई प्रकार के पर्यवेक्षी प्राधिकारियों का अस्तित्व में होना भी इस प्रकार की जोखिम उपस्थित कर देता है कि वित्तीय फर्में किसी विशिष्ट वित्तीय सेवा अथवा उत्पाद को किसी विशिष्ट वित्तीय संगुट के उस भाग में रखते हुए जहाँ पर्यवेक्षी लागतें सबसे कम होती हैं अथवा जहाँ पर्यवेक्षी निगरानी अत्यल्प अतिक्रमणशील होती है, किसी न किसी प्रकार के पर्यवेक्षी अन्तर-पणन में संलग्न हो जाएंगी। दूसरा मुद्दा अपव्ययपूर्ण दोहराव से सम्बन्धित है, जिससे आशय है कि प्रत्येक विनियामक के लिए प्रत्येक कार्य के लिए उपयुक्त व्यावसायिक नियम लागू करना आवश्यक होगा, जो विनियामक संसाधनों की दृष्टि से अकुशल होगा (गुडहार्ट और अन्य, 1998)। एक अन्य महत्वपूर्ण मुद्दा संस्था की शोध-क्षमता से सम्बन्धित होता है। यह तर्क दिया जाता है कि संस्था के समक्ष उपस्थित होने वाले कई खतरों का उपयुक्त रूप से निर्धारण केवल समूह-व्यापक आधार पर ही किया जा सकता है। इसमें न केवल इस बात का आकलन ही शामिल होता है कि उक्त समूह के पास कुल मिलाकर पर्याप्त पूंजी है अथवा नहीं, अपितु उसकी प्रणाली की गुणवत्ता और जोखिम का प्रबंधन करने हेतु नियंत्रणों तथा उसके वरिष्ठ प्रबंधन की क्षमता का भी समावेश होता है (ब्रियल्ट, 1999)। कुछ लोग यह मानते हैं कि विनियामक ढांचे में कॉर्पोरेट ढांचे की छबि दिखाई देनी चाहिए। अतएव कतिपय ऐसे देशों में जहाँ विनियमन संस्थागत लाइनों पर आधारित होता है, विनियामक एजेन्सियों के पुनर्गठन हेतु दबाव डाले जा रहे हैं। विविध प्रकार की वित्तीय सेवाओं के प्रदाताओं की गतिविधियों और वित्तीय संगुटों के परिचालनों में विद्यमान अंतर के मिट जाने के कारण उपस्थित होने वाली समस्याओं को कम करने के लिए चार व्यापक दृष्टिकोण सुझाए गए हैं - यथा - कार्य-विशिष्ट विनियमन, उद्देश्य-आधारित विनियमन, सुपर रेग्यूलेटर अथवा समेकित विनियमन और अग्रणी/छत्र विनियामक (बॉक्स X.5)।

10.51 कुछ देशों ने समेकित विनियमन अथवा 'महा' (मेगा) या 'सुपर' रेग्यूलेटर श्रेणी वाला दृष्टिकोण अपनाया है, जिसमें तीनों ही गतिविधियों, यथा - बैंकिंग, बीमा और प्रतिभूति का समावेश कर लिया गया है। यह इस विश्वास के साथ किया गया है कि समेकित पर्यवेक्षक के विविध प्रकार के वित्तीय क्षेत्रों में सभी के लिए समान अवसर की व्यवस्था निर्मित करने तथा विनियामक अन्तरपणन की संभावना को

## बॉक्स X.5
## वित्तीय विनियमन के प्रति दृष्टिकोण

कार्य-विशिष्ट विनियमन के अधीन प्रत्येक गतिविधि विशेषज्ञ विनियामक द्वारा विनियमित की जाती है, अर्थात् बैंकिंग गतिविधियों का विनियमन बैंकिंग विनियामकों द्वारा किया जाता है, निवेश गतिविधियों का विनियमन प्रतिभूतियों के विनियामकों द्वारा तथा बीमा गतिविधियों का बीमा विनियामकों द्वारा विनियमन किया जाता है। कार्य-विशिष्ट दृष्टिकोण के पक्षधरों का तर्क यह है कि भविष्य में विनियमन के स्तर में चाहे जो भी परिवर्तन आए, विनियमन के आरूप में 'संस्था' से 'कार्य' का एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन अनिवार्य लगता है (मेर्टन और बॉडी, 1995)। हालांकि कार्य-विशिष्ट दृष्टिकोण की कतिपय आधारों पर आलोचना की गई है। इस तथ्य के बावजूद कि कार्य-विशिष्ट दृष्टिकोण अधिक जटिल है, इस बात का भय व्यक्त किया गया है कि वित्तीय संगुटों के कारोबार के विविध भागों का पर्यवेक्षण करने वाली विशेषज्ञ एजेन्सियों की दृष्टि से कुल मिलाकर संस्था ओझल हो सकती है। यह भी तर्क दिया जाता है कि वह कार्य नहीं अपितु संस्था है, जो विफल होती है या दिवालिया हो जाती है और इसलिए इस दृष्टि से सुरक्षा और वित्तीय सुदृढ़ता सुनिश्चित करने हेतु संस्थाओं का विनियमन किया जाना चाहिए (गुडहार्ट और अन्य, 1998) ।

टेलर (1995 और 1996) मूलतः विनियमन के उद्देश्यों पर आधारित विनियमन ढांचे की वकालत करते हैं । टेलर के मॉडल के अनुसार, जिसे 'युगल शिखर' (twin peaks) के नाम से जाना जाता है, दो अलग-अलग पर्यवेक्षी संस्थाएं होनी चाहिए - एक अधिकांश वित्तीय संस्थाओं के विवेकसम्मत पर्यवेक्षण के लिए उत्तरदायी हो और दूसरी वित्तीय संस्थाओं के कारोबार संचालन के लिए । इस मॉडल की इस आधार पर आलोचना की जाती है कि विवेकसम्मत पर्यवेक्षण और कारोबार संचालन के विनियमन के बीच अंतर व्यवहार में उतना साफ-सुथरा और सरल नहीं है, जितना कि टेलर के 'युगल शिखर' मॉडल में बताया जा सकता है। यहां तक कि वित्तीय संगुटों के अभ्युदय के बिना भी काफी बड़ी संख्या में वित्तीय सेवा-प्रदाताओं को विवेकसम्मत और कारोबार संचालन दोनों ही आधार पर विनियमन की आवश्यकता होगी । यह भी तर्क दिया जाता है कि विवेकसम्मत और कारोबार संचालन आधार पर विनियमन में संकल्पनात्मक और व्यवहारात्मक दोनों ही रूपों में पर्याप्त अति-व्यापन विद्यमान है (ब्रियाल्ट, 1999)। गुडहार्ट एवं अन्य (1998) का तर्क है कि 'युगल शिखर' मॉडल अत्यधिक सर्व-ग्राह्य है और यह टिप्पणी करते हैं कि अधिकांश वित्तीय संस्थाएं संगुट नहीं हैं तथा वे विनियमन के विभिन्न उद्देश्यों के आधार पर विनियमन का एक ढांचा प्रस्तावित करते हैं । वे छह अलग-अलग विनियामकों का सुझाव देते हैं, जिनमें प्रणालीगत जोखिम (बैंकों, भवनों की सोसाइटियों और ऋण यूनियनों); गैर-प्रणालीगत विवेकसम्मत विनियमन (बीमा कंपनियों); खुदरा कारोबार के संचालन; थोक कारोबार के संचालन; वित्तीय आदान-प्रदानों और एक प्रतिस्पर्धात्मक अधिकरण का समावेश है ।

'सुपर' अथवा 'मेगा' अथवा 'संगुट' विनियामक पद का सामान्यतया आशय है वह ढांचा, जिसमें बैंकों, प्रतिभूति फर्मों और बीमा कंपनियों से संबंधित सभी तीनों या दो पर्यवेक्षी उत्तरदायित्वों से संबंधित विनियमन शामिल होता है । यह तर्क दिया जाता है कि प्रतिस्पर्धात्मक असमानता, विसंगति, दोहराव, अतिव्यापन और अंतर की उन समस्याओं, जिनमें से सभी अलग-अलग विनियामक एजेन्सियों पर आधारित किसी विनियमन में पैदा हो सकती हैं, से बचने के लिए सैद्धान्तिक रूप से एकल एजेन्सी बेहतर स्थिति में रहती है । इसके अलावा भी यह तर्क दिया जाता है कि एकल विनियामक का उत्तरदायित्व अधिक निश्चित होता है और दूसरे विनियामकों पर दोषारोपण करना कठिन हो जाता है (अब्राम्स और टेलर, 2000)। 'एकल' विनियामक के पक्ष में दिए जाने वाले कुछ महत्त्वपूर्ण तर्क हैं - बड़े पैमाने की किफायतें तथा व्याप्ति या सहक्रियाओं की किफायतें। इसके प्रतिकूल विचारधारा यह है कि बहुत बड़ी (मेगा) विवेकसम्मत पर्यवेक्षी एजेन्सी की रचना किए जाने की अत्यधिक आवश्यकता नहीं है। यह तर्क दिया जाता है कि विविध प्रकार की गतिविधियों में संलग्न वित्तीय संस्थाओं ने जहां विविधीकरण अपनाया है, वहीं उनका प्रमुख व्यवसाय प्रधान बना हुआ है। जोखिम का स्वरूप पर्याप्त रूप से इतना भिन्न है कि वह विवेकसम्मत विनियमन के प्रति भिन्न दृष्टिकोण अपनाया जाना आवश्यक बना देता है। अतएव, कुछ लोग यह अनुभव करते हैं कि एकल विनियामक विभिन्न प्रकार की संस्थाओं तथा उनके द्वारा वहन की जाने वाली जोखिमों के बीच आवश्यक विभेदन करने में सक्षम नहीं हो सकता (गुडहार्ट एवं अन्य, 1998)। एक अन्य तर्क 'नैतिक संकट' की समस्या से संबंधित है, जो इस पूर्व-धारणा पर आधारित है कि एक ही विनियामक प्राधिकारी द्वारा पर्यवेक्षित की जाने वाली समस्त वित्तीय संस्थाओं के जमाकर्ता और अन्य लेनदार समतुल्य विधि से व्यवहार किए जाने की अपेक्षा कर सकते हैं (अब्राम्स और टेलर, 2000)। एकीकृत ढांचा प्रवर्तित किए जाने से संबंधित सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मुद्दा यह है कि इसका गठन केन्द्रीय बैंक में ही किया जाए या फिर उसके बाहर। यह मुद्दा मुख्यतः पर्यवेक्षण में केन्द्रीय बैंक की संलग्नता के कारण महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

समस्त गतिविधियों के लिए सुपर विनियामक और प्रत्येक गतिविधि के लिए अलग-अलग विनियामक के इस अन्तर्द्वन्द्व के बीच 'छत्र'/'अग्रणी' विनियामक भी खड़ा मिलता है। अग्रणी विनियामक के मामले में, अलग-अलग विनियामक एजेन्सियों का अस्तित्व बना रहता है जबकि इनमें से एक विनियामक का चयन विनियमन का समन्वय करने तथा समूह-व्यापी मूल्यांकन करने हेतु किया जाता है। 'छत्र' पर्यवेक्षक एक ऐसा प्राधिकारी होता है, जो कार्यपरक पर्यवेक्षकों से अलग और उनसे ऊपर वाले स्तर का होता है तथा जो संपूर्ण वित्तीय संगुट के पर्यवेक्षण हेतु उत्तरदायी होता है। इस प्रकार, 'अग्रणी' विनियामक और 'छत्र' विनियामक शब्द के अर्थ भिन्न-भिन्न होते हैं, यद्यपि वे एक ही कार्य करते पाए जा सकते हैं ।

**संदर्भ:**


1. अब्राम्स, के. रिचर्ड और माइकल डब्ल्यू. टेलर, 2000, ''इश्यू इन दि यूनीफिकेशन ऑफ फाइनैन्सियल सेक्टर सुपरविज़न,'' आइएमएफ वर्किंग पेपर, डब्ल्यूपी/00/213, दिसम्बर।
2. ब्रियाल्ट, क्लाइव, 1999 ''दि रैशनेल फॉर ए सिंगल नेशनल फाइनैन्सियल सर्विसेज़ रेग्यूलेटर,'' ऑकेजनल पेपर सिरीज 2, फाइनैन्सियल सर्विसेज़ अथॉरिटी, यू.के., मई।
3. गुडहार्ट, सीएई, पी हार्टमैन, डी लेवेलिन, एल रोजस, सॉरेज और एस. वीसब्रॉड, 1998, ''दि इंस्टीट्यूशनल स्ट्रक्चर ऑफ फाइनैन्सियल रेग्यूलेशन'' इन फाइनैन्सियल रेग्यूलेशन, व्हाई हाऊ एण्ड व्हेयर नाऊ? सीएई गुडहार्ट (एडीशन), लंदन, रूटलेज पब्लिकेशन।
4. मार्टिनेज, जोस डे लूना और थॉमस ए रोज, 2003, ''इंटरनेशनल सर्वे ऑफ इंटीग्रेटेड फाइनैन्सियल सेक्टर सुपरविज़न'' पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर, 3096 वर्ल्ड बैंक, जुलाई।
5. मेर्टन आर.सी. और जेड. बॉडी, 1995, ए कॉन्सेप्चुअल फ्रेमवर्क फॉर एनलाइजिंग दि फाइनैन्सियल एनवायरनमेंट, दि ग्लोबल फाइनैन्सियल सिस्टम-ए फंक्शनल पर्सपेक्टिव, हॉरवर्ड बिजनेस स्कूल प्रेस ।
6. टेलर एम., 1995 ''ट्विन पीक्स : ए रेग्यूलेटरी स्ट्रक्चर फॉर दि न्यू सेंचुरी'' वर्किंग पेपर नं. 20, सेंटर फॉर दि स्टडी ऑफ फाइनैन्सियल इनोवेशन, लंदन, दिसंबर।
7. - 1996, पीक प्रैक्टिस : हाऊ टू रिफॉर्म यू. के.ज रेग्यूलेटरी सिस्टम, सेंटर फॉर दि स्टडी ऑफ फाइनैन्सियल इनोवेशन, लंदन, अक्तूबर ।

सीमित रखने में अधिक प्रभावी होने की संभावना है। कुल मिलाकर 37 देशों में सुपर रेग्यूलेटर दृष्टिकोण अपनाया है (सारणी 10.1)। इनमें से 13 देशों में विद्यमान सुपर विनियामक ढांचा केन्द्रीय बैंक के भीतर रही है और अन्य देशों में यह केन्द्रीय बैंक के बाहर है। हालांकि, इनमें से कुछ देशों, जैसे सिंगापुर और नार्वे में, सुपर रेग्यूलेटर ढांचा, वित्तीय संगुटों की वर्तमान लहर से काफी समय पहले से अस्तित्व में है। इन देशों में पर्यवेक्षण को संयोजित करने का तर्काधार वित्तीय क्षेत्र का आकार छोटा होना और पर्यवेक्षी संसाधनों की दुर्लभता है।

**सारणी 10.1 सुपर विनियामक ढांचे वाले देश***

| क्र. सं. | देश | केन्द्रीय बैंक की परिधि में | केन्द्रीय बैंक की परिधि से बाहर |
|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 |
| 1 | आस्ट्रिया | | फाइनैन्सियल मार्केट अथॉरिटी |
| 2 | बहरीन | हाँ | |
| 3 | बेल्जियम | | कमीशन बैंकेयर, फाइनैन्सियर एट डेस एश्योरेंस (सीबीएफए) |
| 4 | बरमूडा | हाँ | |
| 5 | भूटान | हाँ | |
| 6 | ब्रिटिश वर्जिन आईलैंड्स | | दि ब्रिटिश वर्जिन आइलैंड्स फाइनैन्सियल सर्विसेज कमीशन |
| 7 | ब्रुनेई | | ब्रुनेई इंटरनेशनल फाइनैन्सियल सेन्टर, मिनिस्ट्री ऑफ फाइनैन्स |
| 8 | कैमन आईलैंड्स | हाँ | |
| 9 | कुक आईलैण्ड्स | | फाइनैन्सियल सुपरवाइजरी कमीशन |
| 10 | डेनमार्क | | दि डैनिश फाइनैन्सियल सुपरवाइजरी अथॉरिटी (डीएफएसए) |
| 11 | एस्टोनिया | | एस्टोनियन फाइनैन्सियल सुपरवाइजरी अथॉरिटी |
| 12 | जर्मनी | हाँ $ | जर्मन फेडरल फाइनैन्सियल सुपरवाइजरी अथॉरिटी (बी फिन) |
| 13 | जिब्राल्टर | | फाइनैन्सियल सर्विसेज कमीशन |
| 14 | ग्वाटेमाला | | सुपरिन्टेंडिंसिया डि बैंकोस डि ग्वाटेमाला |
| 15 | गुएर्न्सी | | गुएर्न्सी फाइनैन्सियल सर्विसेज कमीशन |
| 16 | हॉन्डुरास | | नेशनल कमीशन ऑफ बैंक्स ऐण्ड एश्योरेन्शेज |
| 17 | हंगरी | | हंगरी फाइनैन्सियल सुपरवाइजरी अथॉरिटी |
| 18 | आइसलैंड | | दि फाइनैन्सियल सुपरवाइजरी अथॉरिटी, आइसलैंड |
| 19 | आयरलैंड | हाँ | |
| 20 | जापान | | फाइनैन्सियल सर्विसेज एजेन्सी |
| 21 | जर्सी | | जर्सी फाइनैन्सियल सर्विसेज कमीशन |
| 22 | कज़ाकिस्तान | | एजेन्सी ऑफ फाइनैन्सियल सुपरविजन |
| 23 | कोरिया | | फाइनैन्सियल सुपरवाइजरी कमीशन (एक स्वतंत्र सरकारी एजेन्सी) और उसकी सब कमिटी सिक्योरिटीज एण्ड फ्यूचर्स कमीशन (एसएफसी) के साथ-साथ फाइनैन्सियल सुपरवाइजरी सर्विस (एक गैर-सरकारी एजेन्सी) |
| 24 | लातविया | | दि फाइनैन्सियल ऐण्ड कैपिटल मार्केट कमीशन |
| 25 | लीकटेंस्टीन | | फाइनैन्सियल मार्केट अथॉरिटी |
| 26 | मकाऊ, चीन | हाँ | |
| 27 | मलावी | हाँ | |
| 28 | मालदीव | हाँ | |
| 29 | माल्टा | | माल्टा फाइनैन्सियल सर्विसेज अथॉरिटी फॉर बैंकिंग, इन्वेस्टमेंट सर्विसेज, ऑफशोर एण्ड इंश्योरेंस |
| 30 | निकारागुवा | | दि सुपरिन्टेन्डेन्सी ऑफ बैंक्स एण्ड अदर फाइनैन्सियल इंस्टीट्यूशन्स फॉर बैंक्स, सिक्योरिटीज एण्ड इंश्योरेंस |
| 31 | नार्वे | | क्रेन्डिट्टिल्सिनेट (दि बैंकिंग इंश्योरेंस एण्ड सिक्योरिटीज कमीशन ऑफ नार्वे) |
| 32 | सिंगापुर | हाँ | |
| 33 | स्लोवाकिया | हाँ | |
| 34 | सूरीनाम | हाँ | |
| 35 | ताइवान | | फाइनैन्सियल सुपरवाइजरी कमीशन बैंकों, प्रतिभूति फर्मों और बीमा कंपनियों का विनियमन करता है। दि सेन्ट्रल बैंक ऑफ चाइना ने पूरी वित्तीय प्रणाली की स्थिरता का दायित्व स्वयं अपने पास ही रखा है। |
| 36 | इंग्लैंड | | फाइनैन्सियल सर्विसेज अथॉरिटी (एफएसए) |
| 37 | उरुग्वे | हाँ | |

* : बैंकिंग, बीमा और प्रतिभूति पर्यवेक्षण को शामिल करते हुए।

$: दि ड्यूश बुंदेसबैंक बैंकों का पर्यवेक्षण करता रहेगा।

**स्रोत :** केन्द्रीय बैंकिंग प्रकाशन. 2008. हाऊ कन्ट्रीज सुपरवाइज़ देयर बैंक्स, इंश्योरर्स एण्ड सिक्योरिटीज मार्केट्स 2008 : दि हू एण्ड हाऊ ऑफ फाइनैन्सियल सुपरविज़न इन मोर दैन190 जूरिस्डिक्शंस, लंदनःइन्साइसिव मीडिया हेमार्केट हाउस।

10.52 आस्ट्रेलिया ने एक उद्देश्य-आधारित विनियामक दृष्टिकोण अपना रखा है। आस्ट्रेलिया द्वारा अपनाया गया पर्यवेक्षी ढांचा इस अर्थ में अनूठा है कि यह संस्थाओं अथवा उत्पादों पर नहीं, अपितु उसके बजाय विनियामक कार्यों/उद्देश्यों पर आधारित है । आस्ट्रेलिया ने दो प्रति-क्षेत्रीय संस्थाओं, एक बैंकों, बीमा कंपनियों और पेंशन निधियों के विवेकसम्मत पर्यवेक्षण के लिए तथा एक प्रतिभूति फर्मों और कारोबार संचालन संबंधी आवश्यकताओं के पर्यवेक्षण के लिए, स्थापित करते हुए विद्यमान पर्यवेक्षी संस्थाओं को पुनर्गठित किया है, जिसमें उक्त दोनों के ऊपर एक उच्चस्तरीय परिषद की भी व्यवस्था है[1]।

10.53 तथापि, अधिकांश देशों में बहु-विनियामकों वाली प्रणाली को जारी रखा जा रहा है। जबकि प्रति व्यक्ति सकल देशी उत्पाद (आर्थिक विकास के स्तर का एक माप) और बहुविध पर्यवेक्षकों के अस्तित्व में किसी प्रकार का सह-संबंध देखने में नहीं आया, तथापि, यह देखा गया है कि बहुविध पर्यवेक्षकों का अस्तित्व सकल देशी उत्पाद की तुलना में सभी बैंकों की कुल आस्तियों (देश की बैंकिंग प्रणाली की एक माप) से सकारात्मक रूप में सह-संबद्ध था (बर्थ और अन्य, 2006)। हालांकि, बहुविधि एजेन्सियों द्वारा वित्तीय संगुटों के पर्यवेक्षण का समन्वय करने के उद्देश्य से कुछ देशों ने 'अग्रणी' विनियामक अथवा 'छत्र ' विनियामक वाला दृष्टिकोण अपना लिया है । 'अग्रणी' विनियामक मॉडल में एक विनियामक किसी विविधीकृत समूह के सभी परिचालनों की जोखिम प्रोफाइल और पूंजी पर्याप्तता का आकलन करने का दायित्व स्वीकार करता है। इस व्यवस्था में, मुख्य गतिविधि के वाणिज्यिक बैंकिंग होने पर, अग्रणी विनियामक बैंक विनियामक होता है, जिसे उस स्थिति में उसे संपूर्ण समूह के परिचालनों पर निगरानी रखने तथा प्रत्युत्तरों के समन्वय को सुनिश्चित करने का अतिरिक्त दायित्व भी सौंप दिया जाता है, किन्तु यह कार्य अन्य विनियामकों के/की अधिकारों/शक्तियों में दखलंदाजी किए बिना ही किया जाता है। अग्रणी विनियामक की मुख्य भूमिका यह सुनिश्चित करने से संबंधित होती है कि संगुट के बारे में प्रासंगिक विनियामक सूचना का वितरण शीघ्रतापूर्वक सभी संबंधित विनियामकों के बीच कर लिया जाए।

10.54 अमरीका में ग्रैम स्लीच ब्लिली (जीएलबी) अधिनियम कार्यपरक विनियम को छत्र विनियम के साथ मिला देता है । कार्यपरक विनियमन में यह कल्पना की गई है कि वित्तीय सेवाओं की नियंत्रक कंपनी की प्रत्येक सहायक कंपनी का वित्तीय विनियामक द्वारा अलग से विनियमन किया जाए । उदाहरण के लिए प्रतिभूति और विनिमय आयोग (एसईसी) प्रतिभूति फर्मों के प्राथमिक विनियामक के रूप में कार्य करता है और सरकारी बीमा विनियामक बीमा गतिविधियों में संलग्न कंपनियों के वित्तीय विनियामक होते हैं। कार्यपरक विनियामक को यह प्राधिकार होता है कि वह धारक कंपनी ढांचे में जिस विशिष्ट सहायक कंपनी पर निगरानी रखता है उसके लिए पूंजी मानक निर्धारित कर सके, उससे रिपोर्टें मंगवा सके तथा उसकी जांच कर सके। हालांकि वित्तीय विनियामक को यह प्राधिकार नहीं होता कि वह संगठन की अन्य कंपनियों के लिए पूंजी मानक निर्धारित करे, उन पर रिपोर्टिंग संबंधी अपेक्षाओं को लागू कर सके अथवा उनकी जांच कर सके ।

10.55 फेडरल रिज़र्व बोर्ड वित्तीय धारक कंपनियों और बैंक धारक कंपनियों दोनों ही के मामले में छत्र पर्यवेक्षक होता है। एक छत्र पर्यवेक्षक के रूप में फेडरल रिज़र्व बोर्ड धारक कंपनियों पर पूंजी संबंधी अपेक्षाएं लागू कर सकता है। जीएलबी अधिनियम के तथाकथित 'फेड-लाइट' प्रावधानों के तहत बोर्ड को यह भी प्राधिकार होता है कि वह कुछ सीमाओं की शर्त पर धारक कंपनियों अथवा उनकी सहायक कंपनियों से रिपोर्टें मंगवा सके और उनकी जाँच कर सके। अमरीका में छत्र पर्यवेक्षण इस तर्काधार पर आधारित है कि किसी संगठन द्वारा जोखिमों का प्रबंधन समेकित आधार पर किया जाता है तथा इस प्रकार की जोखिमों की भिन्न पर्यवेक्षकों द्वारा अलग-अलग कानूनी हैसियत के आधार पर समीक्षा नहीं की जा सकती। इसका तात्पर्य यह है कि प्रत्येक विनियामक केवल इस बात पर निगरानी रखता है कि उनके द्वारा विनियमित की जाने वाली कंपनियों में अपनाई जाने वाली जोखिम प्रबंधन की प्रक्रिया किस प्रकार पर्याप्त नहीं हो सकती। इस प्रकार के संगठनों का समेकित पर्यवेक्षण महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि वित्तीय गतिविधियों की व्यापक श्रेणियों से जुड़ी जोखिमें विधिक संस्थाओं और व्यवसाय क्षेत्रों के दूसरे छोर तक भी विस्तृत हो सकती हैं।

10.56 छत्र पर्यवेक्षण प्रणाली को लागू किए जाने के 10 वर्षों से भी कम की अवधि में अमरीका में विनियामक ढांचे पर विशेषतः बढ़ते संस्थानीकरण जैसी बाज़ार की हाल ही की उन घटनाओं के परिप्रेक्ष्य में पुनर्विचार किया जा रहा है, जो विनियामक अंतरों के साथ ही उनकी अनावश्यकताओं को अनावृत करने वाली हैं तथा बाज़ार के सहभागियों को अधिक कार्य-कुशल विनियमन वाले अधिकार क्षेत्रों में व्यवसाय करने हेतु विवश कर देती हैं और इस प्रकार अमरीकी विनियामक ढांचे पर दबाव निर्मित कर देती हैं। अब यह अनुभव किया जा रहा है कि एक उद्देश्य पर आधारित विनियामक दृष्टिकोण भविष्य के इष्टतम विनियामक ढांचे का द्योतक होगा। मार्च 2008 में जारी अपनी रिपोर्ट में कोषागार विभाग ने विविध प्रकार के विकल्पों का परीक्षण करने के बाद यह संकेत दिया कि अमरीका विनियमन के ध्येयों पर बल देने वाला उद्देश्य पर आधारित विनियामक दृष्टिकोण अपना सकता है। इस प्रकार के विनियामक ढांचे में तीन प्रमुख ध्येयों पर ध्यान केन्द्रित होगाः (i) वास्तविक अर्थव्यवस्था को प्रभावित करने में सक्षम वित्तीय बाज़ार की स्थिरता की समग्र स्थितियों को नियंत्रित करने हेतु बाज़ार स्थिरता का विनियमन; (ii) सरकारी गारंटियों से निर्मित सीमित बाज़ार अनुशासन से संबद्ध मुद्दों के निराकरण के लिए विवेकसम्मत वित्तीय विनियमन; और (iii) व्यावसायिक परंपराओं के मानकों के निर्धारण हेतु व्यवसाय संचालन विनियमन (उपभोक्ता संरक्षण विनियमन

[1] वास्तव में आस्ट्रेलिया में कई एक विनियामक संस्थाओं को केवल चार संस्थाओं में पुनर्गठित कर दिया गया था, जिनमें से प्रत्येक संस्था एक विशिष्ट विनियामक कार्य के लिए उत्तरदायी थी, यथा- (i) प्रतिस्पर्धा सुनिश्चित करने हेतु; (ii) बाज़ार के आचरण और ग्राहक संरक्षण हेतु; (iii) जमा संग्रहण, बीमा और अधिवर्धिता के विवेकसम्मत विनियमन हेतु और (iv) प्रणालीगत स्थिरता पर निगरानी रखने हेतु। यह इस विचारधारा पर आधारित है कि बाज़ार/संस्थाएं चार मुख्य कारणों के आधार पर विफल हो जाती हैं, यथा- प्रतिस्पर्धा-विरोधी व्यवहार, बाज़ार के कदाचार, सूचना की विषमता और प्रणालीगत अस्थिरता। हालांकि प्रतिस्पर्धा सुनिश्चित करने हेतु गठित संस्था का अधिकार क्षेत्र न केवल वित्तीय क्षेत्र, अपितु गैर-वित्तीय क्षेत्र तक भी विस्तृत है।

से संबद्ध)। कोषागार विभाग का दृष्टिकोण यह है कि अन्य विनियामक ढांचों की तुलना में उद्देश्य पर आधारित दृष्टिकोण वित्तीय दृश्य-भूमि में होने वाले परिवर्तनों से सामंजस्य बिठाने में बेहतर ढंग से समर्थ होता है। यह अमरीका में विद्यमान उस विनियामक प्रणाली से भी बेहतर होता है, जो उद्योग खंडों पर अधिक ध्यान केन्द्रित रखता है। फेडरल रिज़र्व को समग्र स्थूल आर्थिक स्थिरता को बढ़ावा देने की उसकी केन्द्रीय बैंक के रूप में परंपरागत भूमिका को ध्यान में रखते हुए वित्तीय बाज़ार की स्थिरता वाली भूमिका भी स्वीकार कर लेनी चाहिए। नयी विवेकसम्मत वित्तीय विनियामक एजेन्सी (पीएफआरए) द्वारा उन वित्तीय संस्थाओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाना है, जिनके व्यावसायिक परिचालनों के साथ किसी न किसी प्रकार की सुनिश्चित सरकारी गारंटियां जुड़ी होती हैं। उसने एक नई व्यवसाय संचालन विनियामक एजेन्सी (सीबीआरए) का प्रस्ताव किया। सीबीआरए को सभी प्रकार की वित्तीय फर्मों के व्यवसाय संचालन के विनियमन पर निगरानी रखनी चाहिए (कोषागार विभाग, 2008)।

## पर्यवेक्षण बनाम बाज़ार अनुशासन

10.57 पिछले पन्द्रह अथवा उसके आस-पास के वर्षों के दौरान बैंक पर्यवेक्षकों और विनियामक प्राधिकारियों द्वारा बाज़ार अनुशासन पर अधिक से अधिक ध्यान दिया जाता रहा है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के संबंध में जहां भिन्न-भिन्न मत विद्यमान हैं, वहीं अधिकांश प्रेक्षक इस बात से सहमत हैं कि बैंक पर्यवेक्षकों को उनके परंपरागत पर्यवेक्षी पद्धतियों को और आगे बढ़ाने के लिए अधिकाधिक रूप से बाज़ार की शक्तियों पर निर्भर करना चाहिए। बैंकिंग क्षेत्र में बाज़ार अनुशासन को एक ऐसी स्थिति कहा जा सकता है, जिसमें जमाकर्ताओं, लेनदारों तथा स्टॉक धारकों सहित निजी क्षेत्र के एजेंटों को उन लागतों का सामना करना पड़ता है, जो बैंकों द्वारा उठायी जाने वाली जोखिमों में निहित होती हैं तथा इन लागतों के आधार पर कार्रवाई करनी होती है। उदाहरण के लिए, गैर-बीमाकृत जमाकर्ता, जो बैंक के जोखिम उठाने के प्रति अनारक्षित होते हैं, जोखिमपूर्ण बैंकों को अपेक्षाकृत अधिक ब्याज दरों की अपेक्षा करते हुए अथवा अपनी जमाराशियों को आहरित करते हुए दंडित कर सकते हैं (मर्टिनेज पेरिया, एवं अन्य, 2001)। यहां तक कि बीमाकृत जमाकर्ता भी बैंक के विफल हो जाने की स्थिति में जमा राशियां वसूल करने में किसी प्रकार की अनिश्चितता या उसमें किसी प्रकार की लागत शामिल होने पर बैंक जोखिम के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकते हैं। इसलिए ऐसे जमाकर्ताओं, जो बैंक जोखिम के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होते हैं, के बैंक के अतिशय जोखिम उठाने से संबंधित व्यवहार का प्रतिरोध करने की संभावना होती है। बाज़ार के प्रत्यक्ष एवं परोक्ष प्रभावों में भेद किया जाना चाहिए (फेडरल रिज़र्व प्रणाली के गवर्नर बोर्ड का अध्ययन दल, 1999)। प्रत्यक्ष प्रभाव वह प्रभाव होता है, जिसका उपयोग निवेशकों द्वारा निधियों की लागत और/अथवा मात्रा को प्रभावित करते हुए बैंक के जोखिम उठाने के संबंध में किया जाता है। परोक्ष प्रभाव पर्यवेक्षकों की सूचना की बाज़ार की सूचना के साथ अंतःक्रिया होती है। किसी फर्म में जोखिम धारक बाज़ार की व्यवस्था का उपयोग करते हुए फर्म के व्यवहार पर निगरानी रख सकते हैं और उसे नियंत्रित कर सकते हैं। ऋणधारकों और स्टॉक धारकों सहित पणधारकों की फर्म को उपलब्ध निधियों की लागत एवं मात्रा को प्रभावित करने की क्षमता और उसकी आस्तियों का मूल्यांकन कॉरपोरेट अभिशासन (बाज़ार अनुशासन) को एक बाज़ार आधारित ढांचा उपलब्ध कराता है। बाज़ार अनुशासन पर बल दिए जाने के लिए दो परस्पर-निर्भर कारण होते हैं। पहला, बड़े अंतरराष्ट्रीय बैंकों की गतिविधियां अधिकाधिक रूप से जटिल हो गई हैं। इसके परिणामस्वरूप, उनके जोखिम उठाने से संबंधित व्यवहार को नियंत्रित करने का कार्य अधिकाधिक रूप से कठिन हो गया है। दूसरा, बैंकों की स्वयं अपनी आंतरिक जोखिम प्रबंधन प्रणालियों पर अपेक्षाकृत सख्त विनियामक निर्भरता की प्रवृत्ति का उद्भव हुआ है।

10.58 बैंकिंग में बाज़ार अनुशासन स्वाभाविक रूप से नहीं आता। सुरक्षा पाश प्रत्यक्ष बाज़ार अनुशासन को सीमित कर देता है, क्योंकि यह प्रकटन की मांग और जोखिम के प्रति ऋणधारकों की संवेदनशीलता में कमी ला देता है। स्पष्टतः बीमाकृत जमाकर्ताओं को बैंकों को अतिशय जोखिम उठाने हेतु दंडित करने के लिए प्रायः किसी भी प्रकार का प्रोत्साहन नहीं प्राप्त होता है। इसके अलावा, पर्यवेक्षी प्राधिकारियों द्वारा प्रदत्त वित्तीय सुदृढ़ता का अनुभूत प्रमाणन भी प्रकटन की मांग और जोखिम के प्रति ऋण धारकों की संवेदनशीलता में कमी ला सकता है। बैंकों की जोखिमों का मूल्यांकन करने हेतु निवेशकों के लिए उन अनुत्साहनों को प्रशमित करने के पीछे बैंकों का उद्देश्य यह होता है कि ये संस्थाएं विषम सूचना द्वारा अभिलक्षित वातावरण में ऋण प्रदान करती हैं। अत: बैंक सहज रूप से अपारदर्शी और मूल्यांकन की दृष्टि से कठिन होते हैं।

10.59 विश्व भर के बैंकिंग पर्यवेक्षकों ने सुदृढ़ जोखिम प्रबंधन परंपराओं को प्रोत्साहित करने तथा वित्तीय बाज़ारों की स्थिरता को बढ़ावा देने में बाज़ार अनुशासन के महत्त्व को स्वीकार किया है। प्रभावी बाज़ार अनुशासन बैंक पर्यवेक्षण और विनियमन का पूरक सिद्ध हो सकता है। किन्तु इसकी पूर्व-शर्त यह होती है कि संस्था में निहित उस जोखिम का समझने के लिए वह सूचना मौजूद हो, जो बाज़ार के देखने में आ रही है। पर्याप्त, सामयिक, यथार्थपरक और प्रासंगिक सूचना की सहायता से बाज़ार के सहभागी प्रतिपक्ष जोखिमों का बेहतर ढंग से मूल्यांकन कर सकते हैं तथा वित्तीय संसाधनों के बेहतर आवंटन को बढ़ावा देने हेतु निधियों की उपलब्धता और मूल्य-निर्धारण के साथ सामंजस्य बिठा सकते हैं। उधारदाताओं और निवेशकों का किसी फर्म के जोखिम प्रबंधन संबंधी कार्य निष्पादन, अन्तर्निहित प्रवृत्तियों, नकदी प्रवाह तथा आय-सर्जक संभाव्यताओं का सार्थक ढंग से मूल्यांकन करने में सुस्पष्ट रुचि होती है। इस संबंध में बाज़ार के सहभागियों को बाज़ार अनुशासन लागू करने हेतु आवश्यक सूचना उपलब्ध कराने में पारदर्शिता अनिवार्य होती है।

10.60 बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति ''बैंकों और वित्तीय प्रणाली में सुरक्षा एवं वित्तीय सुदृढ़ता को बढ़ावा देने में पूंजी विनियमन और अन्य पर्यवेक्षी प्रयासों को प्रबलित करने के लिए बाज़ार अनुशासन की संभाव्यता पर बल देती है।'' बासेल समिति ने यह दृष्टिकोण अपनाया है कि उस दुनिया में जहां संसाधन सीमित हों तथा बैंकिंग गतिविधियां अधिकाधिक रूप से जटिल होती जा रही हों, बाज़ार अनुशासन का बढ़ाया जाना महत्वपूर्ण होता है । इस विचारधारा का प्रतिबिंबन अध्याय V में यथावर्णित नये बासेल समझौते के स्तंभ 3 में होता है। बासेल II समझौता बैंक पर्यवेक्षण के कुछ भारों को पर्यवेक्षकों से हटाकर बाज़ार पर डाल

देता है। हालांकि, एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा यह है कि बाज़ार अनुशासन प्रभावी हो सकता है अथवा नहीं; और किन स्थितियों में यह प्रभावी नहीं हो सकता।

10.61 कुछ ऐसे महत्त्वपूर्ण मुद्दे हैं, जो बाज़ार अनुशासन की प्रभावशीलता के संबंध में उठे हैं। नैतिक संकट का अस्तित्व और बाज़ार अनुशासन की प्रभावशीलता अंतरंग रूप से संबंधित होते हैं। दिवालिएपन की लागत और बैंक के शेयरधारकों तथा बैंक के बीच कॉरपोरेट अभिशासन की समस्याओं के अभाव में बैंक की जमाराशियों के अबीमित होने तथा बैंक की जोखिम पसंदगी के जमाकर्ताओं को दिखाई देने योग्य होने पर, बैंक की जोखिम पसंदगी कुशल होगी। इसका कारण यह है कि बैंक उनकी जोखिम पसंदगी के प्रभाव को जमाकर्ताओं पर अभ्यंतरित कर देते हैं, क्योंकि वे बैंक के अपेक्षाकृत अधिक जोखिम का वहन किए जाने पर एक बार पुनः अपेक्षाकृत अधिक मुआवजे की मांग करने लगेंगे । इस प्रकार के माहौल में संपूर्ण बाज़ार अनुशासन मौजूद रहता है और किसी प्रकार का नैतिक संकट नहीं होता (ब्लम, 2002 और कोर्डेला एवं ययाति, 1998)। संक्षेप में, जमाराशियों के बीमित होने अथवा बैंकों की जोखिम पसंदगियों के जमाकर्ताओं को दिखाई न देने योग्य होने पर, बैंक जमाकर्ताओं के खर्च पर अपेक्षाकृत अधिक जोखिम प्रोफाइल का चयन करेगा। इसका कारण यह है कि बैंक की अपेक्षाकृत अधिक जोखिम पसंदगियों के प्रत्युत्तर में जमाकर्ता अधिक प्रतिलाभ की मांग नहीं करेंगे। इस प्रकार की स्थिति में किसी बाज़ार अनुशासन का अस्तित्व नहीं होता और उसकी चूक जोखिम के प्रति बैंक की पसंदगी नैतिक संकट के अधीन होती है।

10.62 सैद्धांतिक रूप से, अतिशय जोखिम उठाने की प्रवृत्ति को रोकने में बाज़ार अनुशासन की प्रभावशीलता निम्नलिखित पर आश्रित होती है (क) सरकार के सुरक्षा-पाश (बीमा) की सीमा। (ख) वह स्तर, जहां तक बैंक का अबीमित देयताओं (निधीयन) द्वारा वित्तीयन किया जाता है; और (ग) बैंक जोखिम-पसंदगियों (प्रकटन) की प्रेक्षणीयता की सीमा। बाज़ार अनुशासन के अधिक प्रभावी होने की संभावना है, बैंक की देयताओं के संबंध में सरकार की सुनिश्चित अथवा अन्तर्निहित गारंटियों का स्तर जितना ही कम होगा, बैंक के तुलनपत्र में अबीमित देयताओं की रकम उतनी ही अधिक होगी और बैंक के प्रकटन का स्तर उतना ही अधिक होगा।

10.63 अनुभवजन्य साक्ष्यों से पता चलता है कि नैतिक संकट मौजूद है और यह कि बैंक की शोधन क्षमता अनुशासन को कम करने में बाज़ार जोखिम की भूमिका होती है। यह देखने में आया है कि (क) सुनिश्चित अथवा अन्तर्निहित सरकारी गारंटियों के फलस्वरूप बैंक अपेक्षाकृत कम पूंजी 'बफर' का चयन करते हैं; (ख) अबीमित निधीयन के अधिक अंश का अनुशासनात्मक प्रभाव होता है, जिसके फलस्वरूप बैंक किसी विशिष्ट जोखिम के लिए अपेक्षाकृत अधिक पूँजी 'बफर' का चयन करते हैं; और (ग) वे बैंक, जो अधिक सूचना प्रकट करते हैं, और इस प्रकार सुदृढ़ बाज़ार अनुशासन के अधीन होते हैं, अपेक्षाकृत अधिक पूंजी 'बफर' का चयन करते हुए चूक के प्रति अपनी संभाव्यता को सीमित कर लेते हैं । बैंकों के उप-नमूने का अवलोकन किए जाने पर ये सभी प्रभाव अपेक्षाकृत कमजोर लगते हैं, जिसके लिए बाज़ार यह मानता है कि सरकारी सहायता से निवेशकों को प्रभावी रूप से बीमित करते हुए इन स्थितियों से बचा जा सकता है।

10.64 बैंक जोखिम के संबंध में एक व्यापक निक्षेप बीमा योजना का प्रभाव काफी कुछ मिलाजुला है - (क) इस धारणा को अपेक्षाकृत अधिक समर्थन प्राप्त है कि बैंक इतने बड़े हैं कि वे विफल नहीं हो सकते, से उद्भूत अन्तर्निहित सरकारी गारंटियां इन बैंकों को चूक के प्रति अपेक्षाकृत अधिक संभाव्यता का चयन करने हेतु प्रेरित करती हैं, जैसा कि एक निश्चित पूंजी अनुपात के लिए अनर्जक ऋणों के अनुपात से पता चलता है (ख) कुल मिलाकर यह स्पष्ट नहीं होता कि अबीमित निधीयन के स्रोतों के फलस्वरूप बैंकों में अपेक्षाकृत कम चूक जोखिमें होती हैं; (ग) इस परिकल्पना को अधिक समर्थन प्राप्त है कि अधिक सूचना का प्रकटन करने वाले बैंकों की परिणत जोखिमें कम होती हैं। इसके भी आगे बाज़ार अनुशासन उस स्थिति में अपेक्षाकृत अधिक सुदृढ़ होता है, जब सरकार द्वारा बैंकों को बचाए जाने की संभावना नहीं होती। प्रकटन का उस स्थिति में विशेष महत्त्व होता है, जब बैंक दिवालियेपन के करीब पहुंच जाते हैं, क्योंकि बाज़ार अनुशासन के अन्य उपाय कम प्रभावी हो जाते हैं ।

10.65 अधिक प्रकटन और/अथवा अबीमित देयताओं के माध्यम से बाज़ार अनुशासन को बढ़ाने के पक्ष में यह तर्क दिया गया है कि यह इस दृष्टि से लाभकर होता है कि उक्त दोनों ही व्यवस्थाएं फर्मों को पर्याप्त शोधक्षम मानक बनाए रखने हेतु प्रोत्साहन प्रदान करती हैं। किन्तु इन नीतिगत उपायों का लाभदायक प्रभाव उन बैंकों के लिए सुदृढ़ होने की संभावना है, जिन्हें अन्तर्निहित सरकारी गारंटियां नहीं प्राप्त होतीं । इसका नये बासेल II समझौते के स्तंभ 2 और स्तंभ 3 (विस्तृत जानकारी के लिए अध्याय V देखें) के बीच संमिश्र को किस प्रकार इष्टतम बनाया जाए, पर महत्त्वपूर्ण परिणाम होता है। यदि अन्तर्निहित सरकारी गारंटियों को विश्वसनीय ढंग से समाप्त नहीं किया जा सकता अथवा यदि प्रणालीगत बैंकिंग संकटों और उनसे जुड़ी भारी आर्थिक लागतों को रोकने के उद्देश्य से वे वास्तव में आवश्यक हैं, तो उन बैंकों के बाज़ार अनुशासन से कम प्रभावित होने की संभावना है, जो इस प्रकार की गारंटियों के अधीन हैं। अत: इन बैंकों के गहन पर्यवेक्षी पर्यवेक्षण को विनियामक ढांचे का एक महत्त्वपूर्ण अवयव बनाए रखना आवश्यक होगा। इसके अलावा, बाज़ार अनुशासन के कुछ रूप उन बैंकों की दृष्टि से कम प्रभावी हैं, जो दिवालियेपन के निकट पहुंच चुके हैं। यह तथ्य न्यूनतम पूंजी अपेक्षा के महत्त्व को बाज़ार अनुशासन की प्रभावशीलता के लिए एक पूर्व-शर्त के रूप में प्रबलित कर देता है (नये बासेल II समझौते का स्तंभ 1)।

10.66 बाज़ार अनुशासन को बढ़ाने वाला एक ऐसा होनहार दृष्टिकोण, जिसने इन दिनों पर्याप्त रूप से ध्यान आकृष्ट किया है, यह है कि एक गौण ऋण नीति अपनाई जाए। फेडरल रिज़र्व प्रणाली के केन्द्रीय बैंकरों ने एक ऐसी अधिक विशिष्ट नीति की वकालत की है जिसमें बड़े बैंकों द्वारा गौण ऋण प्रतिभूतियों के निर्गम को अनिवार्य बना दिया जाना चाहिए। 1999 वाले जीएलबी अधिनियम में फेडरल रिज़र्व बोर्ड और कोषागार सचिव का गौण ऋण प्रस्तावों की साध्यता और वांछनीयता का अध्ययन करने हेतु आह्वान किया गया था। जनवरी 2001 में जारी उक्त अध्ययन का निष्कर्ष यह था कि गौण ऋण नीति को अपनाए जाने से बैंकिंग प्रणाली की सुरक्षा और वित्तीय सुदृढ़ता में संभवतः सुधार हो सकता है (बॉक्स X.6)।

## बाक्स :6:
## बाज़ार अनुशासन के एक साधन के रूप में गौण ऋण

गौण ऋण उस उधार को निरूपित करने वाली बैंक देयता होता है, जिसका, चूक होने की स्थिति में, भुगतान केवल अन्य सभी देयताओं के उन्मोचित हो जाने के बाद ही किया जाएगा। महत्त्वपूर्ण हानि की संभाव्यता से अवगत गौण ऋण के निवेशक चूक जोखिम के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील होते हैं और जोखिम के प्रति उनकी अनुभूति अपेक्षाकृत कम बाज़ार मूल्यांकन के रूप में प्रतिबिंबित होगी और इसलिए गौण ऋण का प्रतिफल अपेक्षाकृत अधिक होता है। गौण ऋण पर विचार-विमर्श में, विनियामक अप्रत्यक्ष बाज़ार अनुशासन की उस संभाव्यता को ध्यान में रखते हैं (फेडरल रिज़र्व अध्ययन दल, 1999), जो उस समय घटित होता है जब विनियामक अथवा पणधारक बैंक के गौण ऋण पर प्रतिफल का उपयोग उसकी स्थिति के संकेत के रूप में करते हैं। यदि सभी बड़े बैंकों से उसी प्रकार के गौण ऋण जारी किए जाने की अपेक्षा की जाती हो, तो विनियामकों को बैंकों की चूक जोखिम की तुलना करने का सरल साधन उपलब्ध हो जाएगा। गौण ऋण पर सर्वाधिक प्रतिफल प्राप्त करने वाले बैंकों को त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई करने अथवा अधिक कठोर पर्यवेक्षण के लिए अलग किया जा सकेगा।

गैर-बीमित जमाराशियों की तुलना में गौण ऋण को प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों ही प्रकार के बाज़ार अनुशासन को बढ़ावा देने के कतिपय लाभ प्रदान कराने वाले साधन के रूप में देखा जाता है।

पहला, गौण ऋण के समस्त बैंक देयताओं की तुलना में सर्वाधिक कनिष्ठ होने के कारण उसके प्रतिफल को बड़े मूल्यवर्ग वाली जमाराशियों के प्रतिफल की अपेक्षा जोखिम में परिवर्तन के प्रति अधिक संवेदनशील होना चाहिए। इन बाण्डधारकों को, बैंक के विफल हो जाने की स्थिति में, बचाए जाने की सबसे कम संभावना रहती है तथा उनकी ओर से बैंक की स्थिति के प्रकटीकरण की मांग किए जाने की सर्वाधिक संभावना होती है । इस प्रकार बीमित जमाराशियों के स्थान पर जारी गौण ऋण बैंक के विफल हो जाने की स्थिति में निक्षेप बीमा निधि को अतिरिक्त ''सुरक्षा'' उपलब्ध कराता है। हालांकि, गौण ऋण का प्रतिफल गैर-बीमित जमाराशियों की तुलना में जोखिम के प्रति अधिक संवेदनशील होता है, इस परिकल्पना की पुष्टि किए जाने के कार्य को अनुभव के आधार पर कठिन माना गया है।

दूसरा, अपेक्षाकृत लंबी परिपक्वता अवधि वाला होने के कारण गौण ऋण बैंकों से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण के प्रति कम ग्रहणशील होता है। किसी भी माह के दौरान, उस गौण ऋण का मूल्य जिसे रोल-ओवर किया जाना आवश्यक होता है, कुल बकाये का छोटा-सा अंश होगा। इसलिए बैंक पर ऋण को एकाएक मोचित करने का दबाव नहीं होता तथा उसे उसकी समस्याओं का निराकरण करने का अधिक समय मिल जाता है। बैंक की (वित्तीय) स्थिति में गिरावट का सामना मूल्य का समायोजन करके किया जा सकता है, क्योंकि निवेशक उसके बकाया ऋण का मूल्यांकन अपेक्षाकृत कम मूल्य अथवा मात्रा समायोजन करते हुए करते हैं, क्योंकि निवेशक उनके उधार देने की मात्रा में कमी कर देते हैं।

तीसरा, गौण ऋण धारक जोखिम-वहनीयता से जड़े ऊर्ध्वमुखी अभिलाभों में भागीदार नहीं होते। इसलिए सैद्धांतिक रूप से गौण ऋण से संबंधित निर्गम और द्वितीयक बाज़ार स्प्रेडों को बैंकिंग संगठन की जोखिम के प्रति विशिष्ट रूप से संवेदनशील होना चाहिए। इसके विपरीत, चूंकि जोखिम-वहनीयता से जुड़े ऊर्ध्वमुखी अभिलाभों से इक्विटी धारक भी लाभान्वित हो सकते हैं, इक्विटी निर्गम से उपलब्ध होने वाला प्रत्यक्ष बाज़ार अनुशासन अपर्याप्त हो सकता है तथा गौण बाज़ार के मूल्यों से प्राप्त होने वाले बैंकिंग जोखिम संकेत लुप्त हो सकते हैं तथा उनका निर्वचन करना कठिन हो सकता है।

चौथा, गौण ऋण बाज़ार अनुशासन के परिप्रेक्ष्य से भी आकर्षक होता है, क्योंकि इस प्रकार की लिखतों के लिए एक सुस्थापित, गहन और उपयुक्त रूप से अर्थसुलभ बाज़ार मौजूद होता है। बैंकिंग संगठनों के सार्वजनिक रूप से लेन-देन किए जाने वाले गौण ऋणों का मानकीकरण भी प्रभावशाली होता है तथा बाज़ार अनुशासन के परिप्रेक्ष्य से वांछनीय होता है। आजकल जारी किए जाने वाले अधिकांश अमरीकी बैंकों अथवा (अधिक सामान्य रूप से) धारक कंपनियों के गौण ऋण लिखत स्थायी दर, गैर-प्रतिदेय, 10 वर्ष की परिपक्वता अवधि वाले बॉण्ड होते हैं। चलनिधि और मानकीकरण वाली बाज़ार की ये दोनों ही विशेषताएं बाज़ार के सहभागियों द्वारा द्वितीयक बाज़ार के गौण ऋणों के स्प्रेड की तुलना किए जाने वाले कार्य को सुगम बना देती हैं।

जबकि, गौण ऋण के माध्यम से बाज़ार अनुशासन की संकल्पना विश्वास दिलाने वाली है, वहीं कई एक व्यावहारिक चिंताएं भी पैदा हो जाती हैं। पहली, अप्रत्यक्ष बाज़ार अनुशासन के मामले में बैंक ऋण प्रतिभूतियों से प्राप्त होने वाली संकेतक सूचना की तुलना में बैंक शेयरों से संकेतक सूचना में दो लाभ निहित होते हैं । एक, गौण नोट एवं डिबेंचर और जमा प्रमाण पत्र, दोनों सहित, सार्वजनिक ऋण जारी करने वाले बैंकिंग संगठनों की संख्या सार्वजनिक रूप से क्रय-विक्रय की जाने वाली इक्विटियों की संख्या से तुलनात्मक दृष्टि से कम होती है। दो, क्योंकि बैंक इक्विटियों का बाज़ार अधिक अनिरुद्ध (लिक्विड) होता है तथा उसमें बैंक ऋणों के बाज़ार की अपेक्षा अधिक व्यावसायिक विश्लेषक शामिल होते हैं, स्टॉक की कीमतें फर्म-विशिष्ट सूचनाओं का द्योतन करने की दृष्टि से बॉण्ड की कीमतों से अधिक प्रभावशाली हुआ करती हैं। इस प्रकार, आंकड़ों की उपलब्धता और आंकड़ों की गुणवत्ता, दोनों ही दृष्टियों से परोक्ष बाज़ार अनुशासन के मामले में बैंकों के स्टॉक बैंक ऋणों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक प्रासंगिक होते हैं। दूसरा, यह संभाव्यता कि विनियामक किसी बैंक के कठिनाई में पड़ जाने पर, सरकार के पास वैसा करने का सुनिश्चित प्राधिकार न होने के बावजूद, ऋण धारकों को बचा लेंगे। यद्यपि यह एक वैध चिंता है, ऐसा माना जाता है कि संकटों के समय में यह समस्या संस्थागत प्रोत्साहनों के कारण है, स्वयं गौण ऋण के कारण नहीं। अंत में, अतिरिक्त चिंताओं में ऋण जारी किए जाने की लागतों और भेदिया लेन-देन की संभाव्यता का समावेश होता है।

कुल मिलाकर ऐसा माना जाता है कि गौण ऋण के माध्यम से बाज़ार अनुशासन बढ़ाने के लिए एक नीति का आधार तैयार करने हेतु और इस प्रकार की लिखतों के लिए एक विशिष्ट नीति की डिज़ाइन तैयार करने हेतु और अधिक अनुसंधान की आवश्यकता है। तथापि, बैंकिंग क्षेत्र में बाज़ार अनुशासन का लक्ष्य प्राप्त किए जाने की दिशा में गौण ऋण के गुण-दोषों की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

**संदर्भ :**


1. फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ सैन-फ्रान्सिस्को (एफआरबीएसएफ), आर्थिक पत्र 2002 ''दि प्रॉमिस एण्ड लिमिट्स ऑफ मार्केट डिसिप्लिन इन बैंकिंग'' सं. 36, दिसम्बर।
2. मैक्लाच्लान, फियोना सी. 2001 ''मार्केट डिसिप्लिन इन बैंक रेग्यूलेशन, पैनासिया और पैराडॉक्स?'' दि इंडिपेन्डेन्ट रिव्यू, खंड 6, सं. 2, फाल 2001, 227-234.
3. मेयर, लारेंस एच, 1999, ''मार्केट डिसिप्लिन ऐज ए कॉम्प्लिमेंट ऑफ बैंकिंग सुपरविज़न एण्ड रेग्यूलेशन'' कान्फरेंस ऑन रिफॉर्मिंग बैंक कैपिटल स्टैंडर्ड्स न्यूयार्क, में दी गई टिप्पणियां, जून।
4. रॉड्रिग्ज, एल. जैकब, 2002, ''इंटरनेशनल बैंकिंग रेग्यूलेशन - व्हेयर इज़ दि मार्केट डिसिप्लिन इन बासेल II?'' पॉलिसी एनालिसिस, सं. 455, कैटो इंस्टीट्यूट, अक्तूबर।

10.67 बाज़ार अनुशासन की प्रभावशीलता महत्त्वपूर्ण रूप से उस वित्तीय आधारभूत सुविधा की सुदृढ़ता पर निर्भर करती है, जो अन्य बातों के साथ-साथ विधिक एवं न्यायिक ढांचे, वित्तीय आस्तियों का मूल्यांकन करने में प्रयुक्त लेखांकन मानदंडों, प्रासंगिकी सांख्यिकी की उपलब्धता, भुगतान एवं निपटान प्रणाली तथा कॉरपोरेट अभिशासन के सिद्धांतों जैसे लेन-देनों को सहारा प्रदान करती है। लेखांकन परम्पराएं समस्याओं का एक अन्य महत्वपूर्ण स्रोत होती हैं, क्योंकि किसी बैंक के उधार संविभाग का अनुपयुक्त रूप से मूल्यांकन किए जाने पर पूंजी अनुपात बहुत अधिक सार्थक नहीं रह जाते। प्रकटन और पारदर्शिता पर निर्भर बाज़ार अनुशासन त्रुटिपूर्ण लेखांकनों द्वारा तुलन पत्रों की वास्तविक स्थिति को छिपा लिए जाने पर व्यापक रूप से अप्रभावी हो जाएगा। इस प्रकार, वित्तीय आधारभूत सुविधा में विद्यमान कमज़ोरियां अत्यधिक सजग पर्यवेक्षी पर्यवेक्षण को भी अप्रभावी बना सकती हैं।

### सिद्धांत पर आधारित विनियमन

10.68. एक संकल्पना के रूप में सिद्धांत पर आधारित विनियमन विस्तृत एवं आदेशात्मक नियमों और पर्यवेक्षी कार्रवाइयों से दूर रहने पर बल देता है। यह उन परिणामों पर अधिक ध्यान केन्द्रित करता है, जो विनियामक प्राप्त करना चाहते हैं, उन परिणामों पर कैसे पहुंचा जाए इस निर्णायक अपेक्षा को फर्मों के प्रबंधन हेतु छोड़ देते हैं। इंग्लैंड के वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफएसए), जो वित्तीय सेवाओं का एकीकृत विनियामक है, ने विनियमन के सिद्धांत आधारित दृष्टिकोण की दिशा में बदलाव का पथ-प्रदर्शन किया, जो जोखिम एवं साक्ष्य पर आधारित मॉडल का पूरक है । पिछले कुछ वर्षों में वित्तीय सेवा प्राधिकरण ने सिद्धांतों और परिणामों पर आधारित अपने पर्यवेक्षी और प्रवर्तन उपकरणों पर अधिकाधिक रूप से ध्यान केन्द्रित रखा है। इंगलैंड में सिद्धांत आधारित विनियमन नया नहीं है। फर्मों के मामले में वित्तीय सेवा प्राधिकरण के 11 उच्च-स्तरीय सिद्धांतों में अधिकांश, जो 2001 से लागू किए जा रहे थे, प्रतिभूति एवं निवेश बोर्ड द्वारा पर्यवेक्षित पहले वाली विनियामक प्रणाली में भी विद्यमान थे।

10.69 वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफएसए) के 11 सिद्धांत उन मुख्य विनियामक दायित्वों के सामान्य कथन है, जो प्रत्येक प्राधिकृत फर्म पर लागू होते हैं। ये सिद्धांत सामान्य शब्दों में उन उच्च स्तरीय मानकों का निर्धारण करते हैं, जिन्हें सभी फर्मों को अवश्य पूरा करना है। यदि कोई फर्म किसी एक या उससे अधिक सिद्धांत का उल्लंघन करती है, तो उसे प्रवर्तन कार्रवाई का सामना करना पड़ेगा, जिसका परिणाम उदाहरण के लिए, उसके (फर्म के) प्राधिकार को समाप्त कर दिए जाने के रूप में आ सकता है । ये सिद्धांत उन उद्देश्यों पर ध्यान केन्द्रित करते हैं, जो वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफएसए) के विनियमन प्राप्त करने हेतु प्रयास कर रहे हैं अत: उन्हें प्रक्रियाओं और कार्यविधियों के बजाय परिणामों और व्यवहारों के रूप में व्यक्त किया जाता है। वित्तीय सेवा प्राधिकरण (एफएसए) के कारोबार के 11 सिद्धांतों में निष्ठा, कौशल, अवधान एवं कर्तव्यपरायणता, प्रबंधन और नियंत्रण, वित्तीय सूझबूझ, बाजारगत आचरण, ग्राहक के हित, ग्राहकों के साथ संप्रेषण, हितों के टकराव, ग्राहकों की आस्तियां तथा विनियामकों के साथ संबंध शामिल हैं।

10.70 सिद्धांत आधारित विनियमन कार्यान्वयन हेतु उन स्पष्ट रूप से परिभाषित परिणामों की आवश्यकता होती हैं, जिन्हें विनियामक प्राप्त करना चाहते हैं तथा जिनके समक्ष उनके कार्यनिष्पादन को मापा जाएगा। वित्तीय सेवा प्राधिकरण अधिकाधिक रूप से लक्ष्यों तथा इस प्रकार के विनियामक परिणाम प्रदान के प्रति सुनिश्चित हो चुका है, जो उसके सांविधिक उद्देश्यों के अनुरूप हैं। यह तीन ऐसे रणनीतिक ध्येयों से प्रेरित हैं, जिन्होंने 2003 से वित्तीय सेवा प्राधिकरण को उसकी गतिविधियों के लिए एक सुसंगत ढांचा उपलब्ध कराया है। ये ध्येय इस प्रकार हैं :- (i) कुशल, व्यवस्थित और न्यायोचित बाज़ार को बढ़ावा देना; (ii) खुदरा उपभोक्ताओं को न्यायोचित अंश प्राप्त करने में सहायता करना; और (iii) वित्तीय सेवा प्राधिकरण को एक ऐसा अधिक प्रभावी संगठन बनाना, जिसके साथ कारोबार करना आसान हो। वित्तीय सेवा प्राधिकरण की सिद्धांत आधारित विनियमन से जुड़े रहने और उसकी प्रगति को एक विन्यस्त एवं सुसंगत विधि से जारी रखने में सहायता करने हेतु वित्तीय सेवा प्राधिकरण ने अब नौ परिणाम संकेतकों, प्रत्येक के तहत तीन ध्येयों को परिभाषित करते हुए एक अतिरिक्त कदम भी उठाया है (सारणी 10.2)।

### सारणी 10:2 सिद्धांत आधारित विनियमन के रणनीतिक ध्येय और संकेतक

| रणनीतिक ध्येय | संकेतक संख्या | परिभाषा |
|---|---|---|
| खुदरा उपभोक्ताओं की न्यायोचित अंश प्राप्त करने में सहायता करना | 1 | उपभोक्ताओं को उद्योग से और हमसे स्पष्ट, सरल और प्रासंगिक सूचना प्राप्त हो तथा उसका उनके द्वारा उपयोग किया जाए। |
| | 2 | उपभोक्ता वित्तीय सेवा उद्योग के साथ व्यवहार करते समय दायित्व का प्रयोग करने में सक्षम और विश्वस्त हों। |
| | 3 | वित्तीय सेवाओं की फर्में उनके ग्राहकों के साथ न्यायोचित व्यवहार करें और इस प्रकार उनकी आवश्यकताएं पूरी करने में उनकी सहायता करें। |
| कुशल, व्यवस्थित और न्यायोचित बाजार को बढ़ावा देना | 4 | फर्में वित्तीय रूप से सुदृढ़ और सुप्रबंधित हों। |
| | 5 | फर्में और अन्य पणधारक अपनी-अपनी जिम्मेदारियां समझें तथा वित्तीय अपराधों से संबंधित और बाज़ार के आचरण से उद्भूत जोखिमों को कम करें। |
| | 6 | वित्तीय बाजार प्रभावशाली, लचीले और अंतरराष्ट्रीय रूप से आकर्षक हों। |
| हमारी कारोबार क्षमता एवं प्रभावशीलता में वृद्धि | 7 | वित्तीय सेवा प्राधिकरण व्यावसायिक, न्यायोचित, कार्यकुशल हो तथा उसके साथ कार्य करना सरल हों। |
| | 8 | वित्तीय सेवा प्राधिकरण हमारे सांविधिक उद्देश्यों के अनुरूप जोखिमों की पहचान करने और उनका प्रबंधन करने में प्रभावी हो। |
| | 9 | विनियमन की लागतें और लाभ समानुपातिक हों। |

**स्रोत:** वित्तीय सेवा प्राधिकरण, 2007 प्रिंसिपल्स बेस्ड रेग्यूलेशन - फोकसिंग आन दि आउटकम्स दैट मैटर, यू.के., अप्रैल।

10.71 इसके समर्थकों के अनुसार वित्तीय विनियमन के सिद्धांत आधारित दृष्टिकोण के कतिपय गुण हैं। ये हैं : (i) विस्तृत नियमों के सेट तैयार करने की अपेक्षा सिद्धांतों का सेट तैयार करना आसान होता है; (ii) सभी पणधारकों को सिद्धांतों के सेट समझना आसान होता है; (iii) यह लचीला होता है इसलिए इसे इसके अपने ही बाज़ारों, विधायी पृष्ठभूमियों एवं संस्कृतियों के संदर्भ में स्वयं अपनी अनुपालन नीति विकसित करने की अनुमति देकर विशेष रूप से विषमजातीय बैंकिंग उद्योग के लिए अनुकूल बनाया जा सकता है; (iv) यह फर्म और उसके विनियामक के बीच सहयोगी और परिणामोन्मुख संबंध को प्रोत्साहित करता है तथा विनियामकों में पारस्परिक समझ को सुगम बनाता है; और (v) यह विनियामक और विनियमित के बीच मुक्त संवाद का आधार तैयार करता है तथा पर्यवेक्षण के प्रति सहयोगी एवं शैक्षणिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देता है।

10.72 दूसरी ओर, सिद्धांत-आधारित दृष्टिकोण का अर्थ विनियमित संस्थाओं के लिए अपेक्षाकृत अधिक अनिश्चितता और इस प्रकार के अत्यधिक सक्षम परीक्षकों/निरीक्षकों का दल तैयार करने की आवश्यकता भी होता है, जो विनियमित संस्थाओं के व्यवसाय मॉडलों को समझने में समर्थ हों तथा पर्यवेक्षी निष्कर्षों पर पहुँचने के लिए सिद्धांतों को लागू करने में समर्थ हों। अन्तर्निहित अनिश्चितता के कारण न्यूनतम मानकों और उत्तम परंपराओं के बीच वाले भेद मिटने आरंभ हो सकते हैं, संस्थाओं को अपने मानक स्वयं तैयार करने पर विवश किया जा सकता है । सिद्धांत आधारित दृष्टिकोण अपनाए जाने के फलस्वरूप जवाबदेही के प्रति कई प्रकार की चिंताएं पैदा हो सकती हैं। सिद्धांत आधारित दृष्टिकोण का पर्याप्त रूप से नेकनीयत रहित उन फर्मों द्वारा दुरुपयोग भी किया जा सकता है, जिनके लिए अधिक विस्तृत नियमों पर आधारित प्रवर्तन कार्रवाई अधिक उपयुक्त हो सकती है। सिद्धांत आधारित विनियमन पर्यवेक्षी एजेन्सियों के कर्मचारियों पर दुर्वह मांगे थोप देता है तथा उनके लिए पर्याप्त संरक्षण आवश्यक हो जाता है। उनसे प्रत्येक विनियमित फर्म को समझने तथा इसके बारे में विवेकपूर्ण निर्णय करने की अपेक्षा की जाती है कि उनकी कारोबार आयोजना और कार्यप्रणाली विनियामक द्वारा लागू किए गए सिद्धांतों के अनुरूप हैं या नहीं। इसके लिए पारदर्शिता और नियंत्रक एवं संतुलन की आवश्यकता होती है, ताकि दुरुपयोग को रोका जा सके।

10.73 सिद्धांत आधारित विनियमन को लागू किए जाने की समर्थक स्थितियां हैं : (i) पर्याप्त आधारभूत सुविधा का निर्माण; (ii) सिद्धांतों के उच्च-स्तरीय कथनों का उपयोग करते हुए बाज़ार की उन गतिविधियों की पहचान करना जो विनियमन की अनुगामी होती हैं; (iii) जोखिम आधारित विनियमन कार्यान्वित करने की विनियामक की क्षमता और (iv) एक ऐसे परिवेश में परिचालन करने की विनियामक कर्मचारियों की क्षमता, जो सार्वजनिक हित में विश्लेषण और विवेक के उपयोग तथा सिद्धांत आधारित विनियमन के प्रतिबद्धता पर अधिक बल देता हो। सिद्धांत आधारित विनियमन अपनाने की दिशा में आगे बढ़ने के लिए विनियामक संस्थाओं और उनके साथ ही साथ फर्मों के लिए संस्कृति में बदलाव भी आवश्यक होता है। इसका उन तौर-तरीकों पर भी महत्त्वपूर्ण प्रभाव होता है, जिनमें विनियामक फर्मों के साथ दैनंदिन आधार पर काम करते हैं। विनियामक फर्मों से उनके विनियामक दायित्वों को पूरा करने के लिए अपेक्षाकृत अधिक उत्तरदायित्व स्वीकार करने की अपेक्षा कर सकते हैं। विनियामकों के स्वयं अपने दृष्टिकोण भी विस्तृत कार्यविधिक मुद्दों से हटाकर विनियामक परिणामों की दिशा में निर्देशित किए जाने आवश्यक होंगे। विनियामकों से सकारात्मक और मुक्त रूप से जुड़ी हुई सुप्रबंधित फर्मों को सिद्धांत आधारित दृष्टिकोण से विनियामक लाभांश पाने की अपेक्षा रखनी चाहिए, उदाहरण के लिए विनियामक पूंजी के तुलनात्मक रूप से कमतर स्तर, कम आवृत्ति वाले जोखिम मूल्यांकन, फर्मों के वरिष्ठ प्रबंधन पर अपेक्षाकृत अधिक निर्भरता अथवा कम गहन जोखिम न्यूनीकरण कार्यक्रम (एफ.एस.ए. 2007)।

10.74 नियम-आधारित और सिद्धांत-आधारित पर्यवेक्षी दृष्टिकोण पारस्परिक रूप से अनन्य नहीं होते। इसके बजाय वे एक-दूसरे के पूरक होते हैं। अत: विनियामकों के लिए उन क्षेत्रों की पहचान करना आवश्यक होता है, जिनमें ये पर्यवेक्षी दृष्टिकोण प्रभावी हैं तथा इन दोनों ही दृष्टिकोणों के इष्टतम संयोजन के आधार पर इन विनियमनों की प्रभावशीलता को उनकी परिपूर्णता तक बढ़ाना होता है । वित्तीय सेवा प्राधिकरण महत्त्वपूर्ण रूप से कुछ मामलों में 8000 पृष्ठों से भी अधिक व्यापकता वाले इन विस्तृत नियमों और आदेशात्मक प्रक्रियाओं पर निर्भरता के अपने क्रम को जारी रखे हुए हैं। विस्तृत विनियामक नियम सिद्धांत आधारित विनियमन में भी जोड़े जा सकते हैं। इसलिए वित्तीय सेवा आयोग केवल सिद्धांत आधारित विनियामक ही नही हैं और कुछ क्षेत्रों में वह पर्याप्त उपभोक्ता संरक्षण अथवा विनियमित संस्थाओं के बीच पर्याप्त सुसंगति और तुलनीयता सुनिश्चित करने के लिए पूर्ववत विस्तृत नियमों और आदेशात्मक प्रक्रियाओं पर निर्भर करती है। यह अनुभव किया जाता है कि वित्तीय सेवा प्राधिकरण के लिए विस्तृत नियमों से पूरी तरह बच निकलना संभव नहीं होगा तथा नियम-आधारित दृष्टिकोण की विनियामक प्रणाली के कुछ पहलुओं में महत्त्वपूर्ण भूमिका पूर्ववत् बनी रहेगी। वास्तविक रूप से विनियामक प्रणाली में विस्तृत नियमों और सिद्धांतों का मिश्रित रूप हमेशा प्रासंगिक बना रहेगा।

10.75 यू.के. एक मात्र ऐसा देश है, जिसने वित्तीय विनियमन के लिए सिद्धांत आधारित मंच अपना रखा है। इसके अलावा उसकी निर्विवादात्मक श्रेष्ठता के बारे में किसी पुष्ट निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए एक दशक की अवधि पर्याप्त नहीं होती। नॉर्दन रॉक में चलनिधि की हाल ही की घटना ने सिद्धांत आधारित विनियमन की प्रभावशीलता के बारे में चिंताएं पैदा कर दी हैं। नियम-आधारित और सिद्धांत-आधारित दोनों ही प्रकार के विनियमनों के अपने-अपने लाभ और हानियां हैं। जहां नियम कानूनी निश्चितता उपलब्ध कराते हैं, वहीं वे गैर-लचीले होते हैं। इसके विपरीत, सिद्धांत आधारित विनियमन अधिक अनुकूलनशील होगा, किन्तु इसके सफल कार्यान्वयन के लिए प्रबंधन एवं विनियामकों की सक्रिय सहभागिता आवश्यक होगी। जब बाज़ार के खिलाड़ी एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा करने करने लगते हैं, तो सिद्धांत आधारित विनियमन अभीष्ट की अपेक्षा अलग निर्वचनों के प्रति सुभेद्य होता है। अनुभव से यह पता चलता है कि कौन-सा दृष्टिकोण बेहतर है - नियम-आधारित अथवा सिद्धांत-आधारित - इस संबंध में सैद्धांतिक दृष्टिकोण अपनाना अव्यावहारिक होगा। जब तक बैंकिंग पर्यवेक्षण और विनियमन अर्थात् वित्तीय स्थिरता को बनाए रखने, संकट और बैंक से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण को रोकने, जमाकर्ताओं के धन के संरक्षण के मूलभूत उद्देश्य पूरे होते हों, इस बात से कोई बहुत बड़ा फर्क नहीं पड़ने वाला है कि

उनकी प्राप्ति उनमें से किसी एक के द्वारा होती है या विनियामक विनियमनों के संयोजन द्वारा।

### सुरक्षा-पाश

10.76 सुरक्षा-पाश व्यवस्थाएं प्रायः सरकारों द्वारा आर्थिक वृद्धि और वित्तीय स्थिरता को बढ़ावा देने की सार्वजनिक नीति के साथ उपलब्ध कराई जाती हैं। एक उपयुक्त ''बैंक सुरक्षा पाश'' - बैंकों को प्रतिकूल आघातों से बचाने के लिए तैयार की गई नीतियों के एक सेट - का विनिर्माण एवं प्रबंधन सरकार के समक्ष चुनौतियों का अनूठा समुच्चय प्रस्तुत कर देता है। ये नीतियां बैंक की पूंजी में होने वाली क्षतियों, बैंकों और बैंक विफलताओं से होने वाले व्यापक अमध्यस्थीकरण को रोकने अथवा प्रत्यावर्तित करने हेतु तैयार की जाती हैं। सुरक्षा-पाश बैंकों को अपेक्षाकृत अधिक जोखिम पोर्टफोलियो और कम पूंजी के साथ परिचालन करने हेतु प्रोत्साहित करते हुए बैंक देयताओं पर जोखिम प्रीमियम को कम कर देता है। इस प्रकार सुरक्षा-पाश बैंकों को केवल बाज़ार की शक्तियों द्वारा प्रेरित मध्यस्थीकरण प्रक्रिया में जो संभव होगा उसकी अपेक्षा विशाल, अधिक जोखिमपूर्ण आस्ति संविभाग का संचय करने में समर्थ बनाता है। सुरक्षा-पाश के अभाव में इन अपेक्षाकृत अधिक उधार देने से संबंधित जोखिमों को अधिक जमा लागतों, अधिक अनिरुद्ध आस्ति धारिताओं अथवा अपेक्षाकृत बड़े पूंजी आधार के किसी न किसी संयोजन में दर्शाना होगा। जहां सुरक्षा-पाश व्यवस्था के स्वरूप अलग-अलग हो सकते हैं, उनमें विशिष्ट रूप से निम्नलिखित का सम्मिलित रूप शामिल होता है: (i) अंतिम उधारदाता तक बैंक की पहुंच; (ii) भुगतान प्रणाली से संबंधित लेन-देनों का अंतिम, जोखिम-रहित निपटान; (iii) बैंकों का विवेकसम्मत पर्यवेक्षण और; (iv) निक्षेप बीमा।

10.77 निक्षेप बीमा प्रणाली, जिसे सर्वप्रथम अमरीका में महा मंदी के दौरान गंभीर बैंकिंग संकट के उपरांत अपनाया गया था, कई अन्य देशों में अपना ली गई है। सुस्पष्ट निक्षेप बीमा प्रणाली के अंगीकरण की गति में पिछले दशक में बढ़ोत्तरी हुई है (बॉक्स X.7)।

**बॉक्स X.7**
**निक्षेप बीमा प्रणालियों का विकास**

विश्व की सर्वप्रथम राष्ट्रीय निक्षेप बीमा प्रणाली फेडरल निक्षेप बीमा निगम (एफडीआइसी), अमरीका, थी जिसकी स्थापना 1933 में महा मंदी के दौरान अमरीकी वित्तीय प्रणाली में जनता के विश्वास को कायम रखने और छोटे जमाकर्ताओं को संरक्षित रखने हेतु की गई थी। इसकी स्थापना के समय अमरीका अपने इतिहास में सबसे बड़े वित्तीय संकट से गुज़र रहा था। 1933 के पहले कुछ महीनों में 4,000 अमरीकी बैंकों ने उनके परिचालन निलंबित कर दिए थे और बैंकों से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण सामान्य बात हो गई थी। उस समय मुद्दा यह था कि अमरीकी बैंकिंग प्रणाली में विश्वास को किस प्रकार बनाए रखा जाए। निस्संदेह फेडरल निक्षेप बीमा निगम ने अमरीकी वित्तीय प्रणाली में जनता का विश्वास वापस लौटाने में सहायता की। 1934, अर्थात फेडरल निक्षेप बीमा निगम की स्थापना किए जाने के बाद वाले वर्ष में, उसकी स्थापना के पहले वाली नौ माह की अवधि के दौरान 4000 बैंकों के बंद हो जाने की तुलना में केवल नौ बैंक ही विफल हुए। निक्षेप बीमा ने अमरीका में बैंकों से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरणों को प्रभावी ढंग से समाप्त कर दिया। फेडरल निक्षेप बीमा निगम को उस युग की एक सर्वाधिक सफल वसीयत के रूप में देखा जाता है।

1960 वाले दशक से विश्व भर में सुस्पष्ट निक्षेप बीमा प्रणालियों को अपनाए जाने की प्रवृति में निरंतर रूप से वृद्धि हुई है। सुनिश्चित निक्षेप बीमा प्रणालियां अपनाने वाले देशों की संख्या 1970 तक बढ़कर 10, 1980 तक 18, 1990 तक 36 और 2000 तक 70 हो गई। निक्षेप बीमाकर्ताओं के अंतरराष्ट्रीय संघ (आइएडीआइ) के अनुसार, 1 मई 2008 के दिन 119 देशों में निक्षेप बीमा योजनाएं या तो मौजूद हैं अथवा फिर वे उसकी स्थापना पर विचार कर रहे हैं या योजना बना रहे हैं, अर्थात 99 परिचालनरत, 8 अनिर्णीत, 12 आयोजित अथवा गंभीर अध्ययन के अधीन हैं। विश्व भर में सुनिश्चित निक्षेप बीमा प्रणालियां अपनाए जाने की गति में हाल के वर्षों में तेजी आई है, क्योंकि कई एक देश वित्तीय संकटों का अनुभव कर लेने अथवा अन्य देशों में इन संकटों को देख लेने के बाद इस प्रणाली की स्थापना करने की दिशा में आगे बढ़े हैं। 1990 वाले दशक के प्रारंभ में मैक्सिको के पेसो संकट ने मध्य और दक्षिण अमरीका में निक्षेप बीमा प्रणालियों के अंगीकरण हेतु प्रेरणा का काम किया। 1997 में एशियाई वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप एशिया में निक्षेप बीमा प्रणालियों की स्थापना अथवा सुदृढ़ीकरण की प्रवृत्ति बढ़ी। कई एक अफ्रीकी देशों में वित्तीय स्थिरता को सुदृढ़ करने और जमाकर्ता को संरक्षण प्रदान करने हेतु निक्षेप बीमा प्रणालियों की स्थापना की। 1994 में यूरोपीय संघ ने अपने सदस्य देशों में निक्षेप गारंटी योजनाओं की स्थापना को आवश्यक बनाने वाले एक निदेश को अंगीकृत किया। सोवियत संघ के पतन के फलस्वरूप मध्य और पूर्वी यूरोप के कई देशों में उनके वित्तीय विनियामक सुधार कार्यक्रमों के एक अंग के रूप में निक्षेप बीमा प्रणालियों की स्थापना हुई। उदाहरण के लिए चीन कुछ समय से अपने बैंकिंग क्षेत्र को सुदृढ़ बनाने के एक अंग के रूप में निक्षेप बीमा प्रणाली की स्थापना की दिशा में कार्यरत है। निक्षेप बीमा प्रणालियों के संबंध में अध्ययनरत, नियोजित अथवा अनिर्णीत स्थिति से गुजरने वाले अन्य देशों में दक्षिण अफ्रीका, थाईलैंड, मिश्र, बोलीविया, कोस्टारिका और न्यूज़ीलैंड का समावेश है।

इसके अलावा, कई ऐसे देश भी हैं, जहां एक से अधिक निक्षेप बीमा प्रणाली कार्यरत है (उदाहरणार्थ - आस्ट्रिया, कनाडा, जर्मनी, इटली और संयुक्त राज्य अमरीका)। दूसरी ओर एक ही निक्षेप बीमा प्रणाली में एक से अधिक देश शामिल हो सकते हैं (उदाहरणार्थ - मार्शल आईलैंड, माइक्रोनेशिया और प्यूर्टोरिको अमरीकी फेडरल निक्षेप बीमा निगम द्वारा बीमित होते हैं और कैमरून, मध्य अफ्रीकी गणराज्य, चाड, कांगो, इक्वैटोरियल गुयाना और गैबन एक ही प्रणाली में शामिल होंगे)।

**संदर्भ :**

1. ग्रुएनवर्ग मार्टिन जे. 2007. दि इंटरनेशनल रोल ऑफ डिपॉजिट इंश्योरेंस, दि एक्सचेकर क्लब, वाशिंगटन डी.सी., नवम्बर।
2. वेबसाइट ऑफ इंटरनेशनल एसोसिएशन ऑफ डिपॉजिट इंश्योरर्स (आइएडीआइ) www. iadi.org.

10.78 हालांकि, हाल के वर्षों में निक्षेप बीमा की डिज़ाइन की गहन छानबीन की जाने लगी है। निक्षेप बीमा प्रणालियों का निर्माण उस जोखिम को न्यूनतम अथवा समाप्त कर देने हेतु किया गया है, जो किसी बैंक में निधियां जमा करने वाले जमाकर्ताओं को वहन करने होंगे। निक्षेप बीमा बैंक से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरणों को रोकते हुए स्थिरता बढ़ा सकता है। बैंकों से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण दो कारकों के संयोग से उद्भूत होते हैं। पहला - ऋण, बैंकों की मूलभूत आस्तियां, इस अर्थ में अतरल आस्तियां हैं कि उन्हें मूल्य में क्षति के बिना शीघ्रतापूर्वक बेचा नहीं जा सकता। दूसरा - अधिकांश जमाकर्ताओं की उनकी जमाराशियों को या तो मांग पर या फिर अल्प सूचना पर आहरित कर लेने की योग्यता। जमाराशियों की सुरक्षा के बारे में जनता की चिंता - चाहे वह तथ्यों पर आधारित हो अथवा केवल अफवाहों पर ही क्यों न आधारित हो - के फलस्वरूप बैंकों से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरणों की स्थिति निर्मित हो सकती है। इसी प्रकार कई बार किसी एक बैंक के बारे में चिंता के फलस्वरूप अन्य बैंकों के बारे में भी चिंताएं पैदा हो जाती हैं, जिनके फलस्वरूप तथाकथित 'संसर्गजन्य बैंक से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण की स्थिति' निर्मित हो जाती है। कितनी भी अधिक मात्रा में विवेकसम्मत पर्यवेक्षण क्यों न हों, वे उन आकस्मिक आहरणों के समक्ष वैसा संरक्षण नहीं प्रदान कर सकते, जो निक्षेप बीमा के समकक्ष हो। किसी औपचारिक निक्षेप बीमा कार्यक्रम के तहत, व्याप्ति संबंधी नियमों और निक्षेप बीमा कार्यक्रम के सुनिश्चित नियमों द्वारा विनिर्दिष्ट मात्रा में जमाकर्ता संरक्षण तक सभी संस्थाओं की पहुंच विफल बैंकों की निराकरण प्रक्रिया के संबंध में अतिरिक्त निश्चितता उपलब्ध कराते हैं। यह किसी बैंकिंग संकट का खतरा उपस्थित होने पर स्थिरता को बनाए रखने की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हो सकता है। इसका सकारात्मक पहलू यह है कि इस आशय की गारंटी उपलब्ध कराते हुए कि जमाकर्ताओं को हानि नहीं उठानी पड़ेगी, निक्षेप बीमा किसी बैंक से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण में भाग लेने हेतु प्रोत्साहन को समाप्त कर देता है। हालांकि, इसका नकारात्मक पक्ष यह है कि यह बैंकों द्वारा जोखिम-वहन पर जमाकर्ताओं की ओर से रखी जाने वाली निगरानी की आवश्यकता को समाप्त कर देता है (बॉक्स X. 8)।

10.79 हर देश में निक्षेप बीमा प्रणाली की डिज़ाइन अलग-अलग होती है (बॉक्स X.9)। जब विविध देश सुस्पष्ट निक्षेप बीमा को न लागू किए जाने का निर्णय लेते हैं, तो बीमा अन्तर्निहित हो जाता है। दोनों में से किसी भी एक स्थिति में, बैंकों को प्राप्त होने वाले लाभ इस बात पर निर्भर करते हैं कि बैंक जोखिम-अंतरण का प्रबंधन करने में सरकार कितनी प्रभावी है। सुस्पष्ट निक्षेप बीमा योजनाएं नीति-निर्माताओं को मुख्यतः दो कारकों के आधार पर अधिकाधिक रूप से प्रभावित करती हैं। पहला, कोई सुस्पष्ट योजना तथाकथित रूप से व्याप्ति, सहभागियों और निधीयन से संबंधित प्रक्रियागत नियम निर्धारित कर लेती है। दूसरा, कोई सुस्पष्ट योजना राजनीतिक अर्थव्यवस्था में प्रभावी होती है, क्योंकि यह सरकारी बजट पर किसी प्रकार का तात्कालिक प्रभाव डाले बिना छोटे जमाकर्ताओं को संरक्षित रखती है।

10.80 अंतरराष्ट्रीय रूप से निक्षेप बीमा प्रणालियों में भिन्नताओं के बावजूद, अनुभव से यह पता चलता है कि कुछ ऐसे सामान्य सिद्धांत मौजूद होते हैं, जो स्थिर बैंकिंग प्रणालियों को बढ़ावा देने में निक्षेप बीमा की प्रभावशीलता को अधिकतम कर सकते हैं। सर्वोत्तम ढंग से काम करने वाली डिज़ाइन संबंधी विशेषता हर देश में अलग-अलग हो सकती है, किन्तु महत्त्वपूर्ण चुनौतियों से हमेशा ही निपटना पड़ता है। पहला, निक्षेप बीमा प्रणाली को उपयुक्त लेखांकन नियमों, विवेकसम्मत बैंक पर्यवेक्षण और उपभोक्ता संरक्षण सहित एक उपयुक्त कानूनी ढांचे के भीतर कार्य करना चाहिए। दूसरा, निक्षेप बीमा प्रणाली को जनता द्वारा अच्छी तरह समझी जानी चाहिए। तीसरा, प्रणाली द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली निक्षेप बीमा व्याप्ति अधिकांश जमाकर्ताओं को आश्वासन प्रदान करने हेतु आवश्यक रूप से पर्याप्त होनी चाहिए। चौथा, बैंकों को बंद करने और जमाकर्ताओं तथा अन्य दावेदारों को शीघ्रतापूर्वक भुगतान करने की प्रक्रिया भी आवश्यक रूप से कुशल तथा स्पष्ट रूप से समझ में आने वाली होनी चाहिए। पांचवां, निक्षेप बीमाकर्ता की जोखिम एक्सपोज़र पर निगरानी रखने हेतु बीमित संस्थाओं से संबंधित यथा आवश्यक सूचना तक पहुँच भी अवश्य होनी चाहिए। छठा, अत्यधिक सफल निक्षेप बीमा कार्यक्रमों में बैंक के विफल हो जाने की स्थिति में समय पर कार्रवाई के लिए विश्वसनीय निधीयन स्रोतों का समावेश अवश्य होना चाहिए। सातवां, निक्षेप बीमा प्रणाली को संस्थाओं के लिए बीमा का पात्र बनने के लिए पूंजी, आंतरिक नियंत्रण और सुदृढ़ जोखिम प्रबंधन जैसे मानक भी नियत करने चाहिए। अंत में निक्षेप बीमा प्रणाली के पास सुदृढ़ कॉरपोरेट अभिशासन की व्यवस्था होनी चाहिए।

10.81 नॉर्दर्न रॉक संकट के संदर्भ में निक्षेप बीमा योजना की व्याप्ति के साथ ही दावों के निपटारे की गति को भी महत्त्व प्राप्त हो गया है । पहला, इंग्लैंड के जमाकर्ता केवल 2000 पौंड तक और उसके बाद अगले 33,000 पौंड के 90 प्रतिशत तक ही पूर्णतः रक्षित थे। इसके फलस्वरूप, यदि अधिकांश नहीं, तो कई एक जमाकर्ताओं को यू.के. में किसी बैंक के विफल होने पर कुछ न कुछ धनराशि से हाथ धोना पड़ता था। दूसरा, जमाकर्ता स्पष्ट रूप से इस बात के प्रति चिंतित थे कि इंग्लैंड की निक्षेप बीमा निधीयन योजना के कारण उनकी बीमित जमाराशियों का भुगतान किए जाने में छह माह तक का समय लग सकता था। फलतः इंग्लैंड को नॉर्दर्न रॉक के सभी जमाकर्ताओं को पूर्णतः निर्बंध व्याप्ति प्रदान करनी पड़ी थी। बाद में इंग्लैंड ने राष्ट्रीय स्तर पर सभी बैंकों के मामले में पूरी निक्षेप बीमा व्याप्ति को बढ़ाकर 35,000 पौंड कर दिया। इस प्रकार, ग्राहकों की घबराहट को कम करने के लिए नॉर्दर्न रॉक के ग्राहकों की निक्षेप बीमा व्याप्ति को सरकार द्वारा पहले से उपलब्ध व्याप्ति के अलावा सभी जमाराशियों को गारंटी प्रदान करने हेतु अलग कर दिया गया। नॉर्दर्न रॉक के संकट से निपटने में सबसे बड़ी समस्या थी खुदरा जमा-बही - बीमित जमाराशियों - को बैंक के शेष तुलनपत्र से अलग करने हेतु संकटग्रस्त बैंक के मामले में पूर्व-क्रयात्मक रूप से हस्तक्षेप करने की व्यवस्था का अभाव। इस कार्य को कर पाने की योग्यता उस तौर-तरीके में

## बॉक्स X.8
## निक्षेप बीमा - लाभ और हानियां

एक सुनिर्मित, सुस्पष्ट निक्षेप बीमा प्रणाली, जो जनता की समझ में आने वाली हो, के बैंकों से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण को रोकने, वित्तीय संकटों की गंभीरता तथा बैंक विफलताओं के पुनः समाधान की लागतों को सीमित रखने और समग्र वित्तीय स्थिरता में योगदान करने में सहायता करने की दृष्टि से सर्वाधिक प्रभावी होने की संभावना होती है। निक्षेप बीमा से होने वाला लाभ यह है कि जब तक गारंटियां विश्वसनीय बनी रहती हैं, तब तक के लिए बैंकों से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरणों का खतरा समाप्त हो जाता है।

सुरक्षा-पाश के पीछे निहित सार्वजनिक नीति के अभिप्रेरणों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। पहली, बैंक उधार में गिरावट के कारण बैंक उधारकर्ताओं द्वारा वहन की जाने वाली सामाजिक लागतों के कारण प्रभावित बैंकों की सहायता करना वांछनीय हो सकता है। इस तर्क के पीछे की मान्यता यह है कि प्रतिकूल आघातों के फलस्वरूप लुप्त हो चुके बैंकों और उनकी पूंजी को संभवतः प्रतिकूल आघातों के बाद पूंजी जुटाने की लागत अधिक होने के कारण अन्य बैंकों के विस्तार द्वारा सरलता से प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता (कैलोमिरिस एवं विल्सन, 1998)। इस परिप्रेक्ष्य में सुरक्षा-पाश का उद्देश्य पूर्व-व्यापी बेलआउट के लिए अवांछित आघातों (चाहे वे बहिर्जात हों या फिर अन्तर्जात भारी मात्रा में आकस्मिक आहरणों के परिणाम हों) को प्रत्यावर्तित करना होता है। दूसरी, सुरक्षा-पाश का निर्माण बैंकिंग क्षेत्र में आंतरिक गिरावटों (परिहार्य अमध्यस्थीकरण और बैंक विफलताओं, जो विषम सूचनाओं और बैंकों से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण के कारण हो सकती हैं) को सीमित रखते हुए बैंकिंग प्रणाली की कार्यकुशलता को बढ़ावा देने हेतु किया गया है । बैंक सुरक्षा-पाश नीति के इन हेतुकों को ''बैंक ऋण'' हेतुक और ''भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण-निवारण'' हेतुक नाम दिया गया है (कैलोमिरिस-1999)।

बैंक सुरक्षा-पाश को अभिप्रेरित करने के लिए कभी-कभी दिया जाने वाला एक और तर्क है निजी बचतों का संरक्षण। इस तर्क के एक रूपांतरण में लघु बचतकर्ताओं में दुनियादारी के अभाव पर बल दिया जाता है और इसलिए एक सुस्पष्ट रूप से जोखिम-रहित डिपॉजिटरी खाते की रचना की वांछनीयता स्पष्ट हो जाती है। लघु बचतकर्ता वाले तर्क का संभवतः सर्वोत्तम निर्वचन बैंकों को सुरक्षा-पाश के माध्यम से प्राप्त होने वाली आर्थिक सहायता हेतु राजनीतिक कवर प्रदान करने के एक साधन के रूप में किया जाता है।

जहां निक्षेप बीमा प्रणालियां और उसके साथ-साथ वित्तीय सुरक्षा-पाश व्यवस्था के अन्य तत्व स्थिरता में योगदान करते हैं, वहीं उनके विकृत प्रभाव भी हो सकते हैं। बाजार के सहभागियों को संरक्षण प्रदान करने से जोखिमपूर्ण रणनीतियां अपनाए जाने की लागत में कमी आ जाती है तथा अतिशय जोखिम वहन की प्रवृत्ति से नैतिक संकट की समस्या को प्रोत्साहन प्राप्त हो सकता है। क्षति के विरुद्ध उनकी जमाराशियों के संरक्षित हो जाने के फलस्वरूप बीमित जमाकर्ता बैंक की ऋण-वहन प्रवृत्ति पर निगरानी रखने के लिए कम प्रेरित होता है और वह उसकी जमाराशियों पर सर्वाधिक संभाव्य प्रतिलाभ प्राप्त करने का इच्छुक हो सकता है। इस प्रकार, जमाराशि रूढ़िवादी ढंग से प्रबंधित संस्था से खिसककर उन संस्थाओं की ओर प्रवाहित हो जाएगी, जो अधिक जोखिम उठाकर अपेक्षाकृत अधिक प्रतिलाभ का भुगतान करने की इच्छुक होंगी। इस प्रकार जमा बीमा बैंकों के लिए सामान्य जोखिम-प्रतिलाभ समझौताकारी समन्वय को परिवर्तित करते हुए, अधिक जोखिमपूर्ण निवेश रणनीतियों से जुड़ी लागत को कम करते हुए नैतिक संकट को उत्तेजित कर सकता है। ये प्रोत्साहन कुछ स्तर तक सभी प्रकार के बीमों के स्वरूप में अन्तर्निहित होते हैं और यहां तक कि निक्षेप बीमा प्रणालियों की सर्वोत्तम ढांचागत डिजाइनों से भी नैतिक संकटों को समाप्त करने की अपेक्षा नहीं की जा सकती। अत: सुरक्षा और वित्तीय सुदृढ़ता को बनाए रखने के उद्देश्य से नैतिक संकटों को नियंत्रित रखने के लिए बीमित संस्थाओं के पर्यवेक्षण और विनियमन के साथ-साथ कुछ स्तर तक बाजार पर्यवेक्षण आवश्यक होते हैं।

उस सुरक्षा-पाश, जो सभी विफलताओं को रोकने हेतु विन्यस्त होता है, से नवोन्मेष का गला घोंट देने तथा बदलती ग्राहक आवश्यकताओं और बाजार में होने वाली अन्य घटनाओं के प्रति बैंकिंग उद्योग की प्रत्युत्तरदायिता को कम कर देने की संभावना होती है। इस प्रकार की कठोरता से बचने के लिए एक बाहर निकलने की व्यवस्था किए जाने और उसे प्रणाली में शामिल किए जाने की आवश्यकता है। उपयुक्त रूप से संतुलित निक्षेप बीमा कार्यक्रम विफल होने वाली संस्था कार्यकलापों के समापन में व्यवस्था ला सकता है और इस प्रकार वह एक निर्गमन व्यवस्था को लागू किए जाने के कार्य को सुगम बना सकता है।

**संदर्भ :**

1. केटजा जूनियर, निकोलस जे. 1999 ''डिपॉजिट इंश्योरेंस सिस्टम एंड कंसीडरेशन्स'' बीआइएस पॉलिसी पेपर, नं. 7, नवम्बर ।
2. कैलोमिरिस, चार्ल्स डब्ल्यू 1999, ''बिल्डिंग ऐन इन्सेटिव-कंपैटिबल सेफ्टी नेट'' जर्नल ऑफ बैंकिंग एण्ड फाइनैन्स, 23, 1499-1519 ।
3. कैलोमिरिस, चार्ल्स डब्ल्यू तथा बिल्सन, बेरी, 1998, ''बैंक कैपिटल पोर्टफोलियो मैनेजमेंट : दि 1930 कैपिटल क्रंच एण्ड स्क्रैम्बल टु शेड रिस्क'' एनबीईआर वर्किंग पेपर, नं. 6649, जुलाई ।

महत्त्वपूर्ण होती है, जिसमें अमरीकी और अन्य प्रणालियां परिचालन करती हैं, जिसमें जमाकर्ताओं को संरक्षित रखने हेतु प्राधिकारी शीघ्र ही आगे बढ़ने - ''त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई करने''- हेतु बाध्य होते हैं। उनके अधिकार के अधीन उपलब्ध एक उपकरण, जो इस समय यू.के. के प्राधिकारियों को अनुपलब्ध है, बैंकों के लिए एक विशेष दिवालियेपन का कानून है। यू.के. की सरकार ने उनकी विद्यमान निक्षेप बीमा प्रणाली की समीक्षा किए जाने की दिशा में पहले ही उपाय आरंभ कर दिए हैं।

10.82 निक्षेप बीमा प्रीमियमों को किसी बैंकिंग संस्था द्वारा उपस्थित जोखिम से संबद्ध करना निक्षेप बीमा प्रणालियों के मूल्य-निर्धारण के संबंध में एक महत्त्वपूर्ण घटना रही है। निक्षेप बीमा क्षतियों में सरकार के एक्सपोजर को नियंत्रित रखने तथा सुरक्षा-पाश आर्थिक सहायता से बचने का एक तरीका यह होता है कि बैंकों के लिए उनकी विफलता की जोखिम में बढ़ोत्तरी होने पर अपेक्षाकृत अधिक निक्षेप बीमा प्रीमियम का भुगतान करना आवश्यक कर दिया जाए। जोखिम आधारित प्रीमियम इस दृष्टि से बाजार अनुशासन जैसे ही होते हैं कि दोनों ही में बैंकों के लिए उनकी देयताओं पर चूक जोखिम प्रीमियम का भुगतान करना आवश्यक होता है, जिससे अतिशय जोखिम वहन की प्रवृत्ति हेतु प्रोत्साहन में कमी आ जाती है। इसके अलावा, जोखिम आधारित बीमा बाजार अनुशासन

## बॉक्स X.9
## निक्षेप बीमा की डिज़ाइन

1990 वाले दशक के उत्कर्ष एवं गिरावट वाले बैंकिंग संकट के अनुभव तथा राष्ट्रीय बैंकिंग प्रणाली में पैदा हुई समस्याओं की गंभीरता से यह ध्वनित होता है कि समस्याओं का समाधान करने हेतु करदाताओं को भारी मूल्य चुकाना पड़ा था। यही कारण है कि नीति निर्माता उनकी राष्ट्रीय निक्षेप बीमा प्रणालियों के लिए इष्टतम डिज़ाइन का पता लगाने के लिए अत्यधिक चिंतित हो उठे हैं। बंद हो गए बैंकों में लुप्त जमाराशियों की प्रतिपूर्ति करने का मूल कार्य करने हेतु निक्षेप बीमा को इस प्रयोजन हेतु वित्तीय संसाधन जुटाने के लिए एक तंत्र की आवश्यकता होती है। निक्षेप बीमा प्रणाली की निधीयन व्यवस्था को, यह सुनिश्चित करते हुए कि किसी बंद हो गए बैंक की समस्त बीमित जमाराशियों की समय पर और पूर्णतः क्षतिपूर्ति करने हेतु पर्याप्त वित्तीय संसाधन उपलब्ध हों, निक्षेप बीमा में जनता के विश्वास को बनाए रखना चाहिए। यह शर्त अनिवार्य होती है, क्योंकि निक्षेप बीमा में जनता का विश्वास ही वह प्रेरक शक्ति होती है, जिसके सहारे प्रणाली काम करती है।

विश्व भर में सुस्पष्ट निक्षेप बीमा प्रणाली की निधीयन व्यवस्था की अभिकल्पना कई एक आयामों की दृष्टि से भिन्न-भिन्न होती है। पहला, प्रीमियम अंशदानों के स्रोत की दृष्टि से ऐसी प्रणालियां (विश्व भर की विशाल अधिसंख्यक निक्षेप बीमा प्रणालियां) मौजूद हैं, जिनके खर्च केवल निजी स्रोतों से पूरे होते हैं और कुछ ऐसी भी प्रणालियां हैं, जिनके खर्च सरकारी अथवा मिश्रित वित्तीयन से चलते हैं (चिली, लेबनान, ओमान और पैरागुवे में)। इसके अलावा, किसी निक्षेप बीमा प्रणाली को प्राप्त होने वाले निजी-स्रोत अंशदान की गणना विशिष्ट रूप से या तो बीमित जमाराशियों (42 प्रणालियां) या फिर कुल जमाराशियों (41 प्रणालियां) के एक अंश के रूप में होती है। उन राष्ट्रों का, जिन्होंने बीमित जमाराशि आधार को अपनाए रखा है, मानना है कि केवल उन बीमित जमाकर्ताओं को ही भुगतान करना चाहिए जिन्हें निक्षेप बीमा के अधिकांश लाभ प्राप्त होते हैं। हालांकि जो राष्ट्र कुल जमाराशि आधार का उपयोग करते हैं, उन्हें यह परिचालन के तौर पर अपेक्षाकृत आसान लगता है तथा वे उसे बैंकों द्वारा बीमित और गैर-बीमित जमाराशियों के बीच सट्टा अंतरणों के निवारक उपाय मानते हैं।

दूसरा, किसी निक्षेप बीमा प्रणाली एजेन्सी को उसके अपने संसाधनों के समाप्त हो जाने की स्थिति में जिस प्रकार अतिरिक्त चलनिधि उपलब्ध कराई जाती है, उसके संबंध में अंतर हैं। कुछ देशों, उदाहरण के लिए चेक गणराज्य, अल सल्वाडोर, लताविया, पेरू, स्वीडन आदि में निक्षेप बीमा प्रणाली सरकार (बजटीय खाते अथवा केन्द्रीय बैंक) से उधार ले सकती है। अन्य देशों, उदाहरण के लिए आस्ट्रिया, कोलंबिया, फिनलैंड, हंगरी, लिथुआनिया, मैक्सिको आदि में निक्षेप बीमा प्रणाली बाजार से (सदस्य बैंकों से अथवा बॉण्ड निर्गमों के माध्यम से) उधार लेने की पात्र होती है, किन्तु इन उधारों पर सरकारी गारंटी का उपयोग कर सकती है। कुछ अन्य राष्ट्रों, यथा, अर्जेन्टीना, साइप्रस, फ्रान्स, जिब्राल्टर, ग्रीस, आइसलैंड, नीदरलैंड, स्विटजरलैंड आदि में निक्षेप बीमा कानून के अनुसार आकस्मिक चलनिधि को निजी स्रोतों से जुटाना अपेक्षित होता है। हालांकि, केवल अर्जेन्टीना के मामले में कानूनों में निक्षेप बीमा प्रणाली को सरकारी सहायता से स्पष्ट रूप से वर्जित किया गया है। अन्य मामलों में, या तो सबसे बड़ी, मुख्य राष्ट्रीय बैंकिंग संस्थाओं के लिए अव्यक्त सरकारी सहायता की व्यवस्था है, उदाहरण के लिए फ्रान्स, ग्रीस आदि या फिर निक्षेप बीमा प्रणाली, इसके पास निधियों की कमी हो जाने की स्थिति में चुकौती राशि में, समानुपातिक रूप से कमी करने का पात्र होती है, यथा - कोस्टा रिका और मोरक्को। अतः सामान्य रूप से विश्व भर की निक्षेप बीमा प्रणाली डिज़ाइन में प्रणाली के साधारण (निजी) चलनिधि स्रोतों को समर्थन देने हेतु सरकारी चलनिधि सहायता के प्रावधान की प्रवृत्ति देखी जा सकती है।

तीसरा, किसी निक्षेप बीमा प्रणाली की निधीयन योजना की डिज़ाइन में आरक्षित निधियों के संचय की रणनीति के आधार पर अंतर हो सकते हैं। जहां कुछ देश (जैसे - आस्ट्रिया, बहरीन, साइप्रस, लक्ज़मबर्ग और स्विटजरलैंड, जो तथाकथित पूर्व-व्यापी निधीयन व्यवस्था को अपनाते हैं) समग्र अंशदान की दर को सुस्पष्ट रूप से प्रणाली की वर्तमान निधीयन आवश्यकतों से जोड़ देते हैं, वहीं अन्य देश आरक्षित निधियों के संचय के स्तर के आधार पर अंशदान दर को बदलते रहते हैं (जैसे कि बुल्गारिया, चेक गणराज्य, आइसलैंड, कज़ाकिस्तान, मैक्सिको, उक्रेन, बेल्जियम, फिनलैंड, मैकेडोनिया, स्पेन, संयुक्त राज्य अमरीका आदि)। हालांकि, कुछ निक्षेप बीमा प्रणालियां समग्र अंशदान दर और निधीयन आवश्यकताओं के बीच कोई सुस्पष्ट संबंध नहीं निर्धारित करतीं तथा स्थिर दर वाली प्रत्याशित निधीयन योजना (अथवा तदर्थ समायोजन) पर निर्भर करती हैं।

अंत में, निक्षेप बीमा प्रणालियों में, जिस विधि से संचित आरक्षित निधि का प्रबंधन किया जाता है, उसके संबंध में कुछ अंतर दिखाई देते हैं। जबकि, समग्र प्रवृत्ति यह है कि प्रीमियम से प्राप्त राजस्व का निवेश चल और सुरक्षित आस्तियों में किया जाए, वहीं चलनिधि और सुरक्षा के संबंध में देशों की समझ में मतभेद हैं। सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश से संबंधित सर्वव्यापी प्रयुक्त निधि के बावजूद कम से कम 12 प्रणालियां धनराशि को केन्द्रीय बैंकों की ब्याज-वाहक दायित्वों में रोक रखती हैं। अन्य तेरह प्रणालियां (अन्यों के साथ-साथ बुल्गारिया, जिब्राल्टर, ग्रीस, हंगरी, स्लोवाक गणराज्य, ताइवान, तंजानिया की) आरक्षित निधियों का आंशिक निवेश सदस्य बैंकों के दायित्वों में किए जाने की अनुमति देती हैं, किन्तु दो प्रणालियां (पोलैंड और पुर्तगाल की) इससे भी आगे निकल जाती हैं और सदस्य बैंकों को यह अनुमति देती हैं कि वे उनके अपेक्षित अंशदानों के एक भाग को सुरक्षित प्रतिभूति संपार्श्विक की शर्त के तहत बहियों में रखें। इसके साथ ही एस्टोनिया, फिनलैंड और ग्वाटेमाला की प्रणालियों में सदस्य बैंक के दायित्वों में किसी भी प्रकार का निवेश निषिद्ध है।

संक्षेप में, निक्षेप बीमा प्रणाली की निधीयन व व्यवस्था से संबंधित अनुभव से निजी तौर पर निधिकृत उस प्रणाली की ओर झुकाव की सामान्य प्रवृत्ति का पता चलता है, जिसमें सरकार से आकस्मिक चलनिधि सहायता तथा सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश का प्रावधान हो।

**संदर्भ :**


1. फ्रोलोव मिखाइल, 2004 ''फंडिंग डिपॉजिट इंश्योरेंस : डिज़ाइनिंग ऑप्शन्स एण्ड प्रैक्टिकल च्वाइसेज'' केयूएम-क्यूआरपी डिस्कशन पेपर सिरीज, डीपी 2003-21, कीयो यूनिवर्सिटी, मार्केट क्वालिटी रिसर्च प्रोजेक्ट, फरवरी।
2. लैवेन, लक 2002. ''प्राइसिंग ऑफ डिपॉजिट इंश्योरेंस'' पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर, नं. 2871, वर्ल्ड बैंक, जुलाई।
3. चान, युक-शी. ग्रीनबाम, स्टुअर्ट I एवं ठाकोर, अंजन वी. 1992, ''इज फेयरली प्राइस्ड डिपॉजिट इंश्योरेंस पॉसिबल'' दि जर्नल ऑफ फाइनैन्स, वॉल्यूम 47, नं. 1 मार्च।

को पुनर्जीवित करता है, क्योंकि यह उसकी जोखिम बढ़ जाने पर किसी बैंक के गैर बीमित ऋण को बीमित जमाराशियों से प्रतिस्थापित किए जाने संबंधित प्रोत्साहनों को कम कर देता है।

10.83 निक्षेप बीमा के मूल्य निर्धारण से बैंकिंग उद्योग की पूंजी प्रभावित हो सकती है और मूल्य निर्धारण का उपयोग वित्तीय स्थितियों में आने वाले कठोर उतार-चढ़ावों में सहजता लाने के एक उपकरण के रूप में आकर्षक लग सकता है। इस प्रकार स्थिर दर दृष्टिकोण के पक्षधर (यथा-ब्लिंडर एवं वेस्कॉट, 2001; और शेफर, 1997) इस बात पर बल देते हैं कि अंशदान दर में भिन्नता चक्रीयता के अनुरूप - यथा बैंकिंग स्थितियां सुदृढ़ होने पर कम हो जाना और स्थितियों के कमज़ोर हो जाने पर बढ़ जाना - हो सकती है। किन्तु भिन्नताओं में कमी लाने (अथवा उन्हें प्रति-चक्रीय बना देने से) आर्थिक मंदी के कारण अधिक ऋणगत हानियों का सामना करने वाले बैंकों को अतिरिक्त राहत मिल जाएगी। इस प्रकार स्थिर दर नीति से बैंक विफलताओं की संभाव्यता में कमी आ सकती है (बशर्ते कि बैंक दिवालियेपन के सुदृढ़ संक्रमण और अन्य बाहरी प्रभाव मौजूद हों) तथा जमा बीमाकर्ता की समग्र लागतों को कम करने में सहायता प्राप्त हो सकती है। परिवर्ती सकल दरों के संबंध में एक अन्य चिंता यह होती है कि आवश्यक प्रीमियमों में तीव्र वृद्धि के परिणामस्वरूप कुछ बैंक ग्राहकों और विशेष रूप से छोटे कारोबार करने वाले उधारकर्ताओं, जिनके पास बैंक ऋणों के अलावा अन्य कोई विकल्प नहीं होते, पर अनुचित भार बढ़ जाएगा। हालांकि, कुछ लोगों का तर्क यह है कि जोखिम आधारित निक्षेप बीमा प्रणाली जोखिम आधारित विवेकसम्मत पूँजी अपेक्षाओं को कम कर देती है। नए बासेल समझौते में व्यवसाय चक्र में मंदी के दौरान पूंजी विनियमन से संभाव्य क्षतियों के बारे में चिंता व्यक्त की गई है। क्योंकि वित्तीय स्थिति में गिरावट आने पर नयी इक्विटी जारी किए जाने की एजेन्सी लागतें अधिक होती हैं, बैंक अपेक्षित अधिक पूंजी अनुपातों के प्रत्युत्तर में उनकी जोखिम के प्रति संवेदनशील आस्तियों में कमी लाने लगते हैं, जो एक ऐसी प्रतिक्रिया है जिससे बैंक पर आश्रित उधारकर्ताओं को ऋण की उपलब्धता को रोकते हुए मंदी की प्रवृत्ति तीव्र हो सकती है। यह दर्शाया गया है कि यथोचित निक्षेप बीमा प्रीमियम निर्धारित करना उचित पूंजी मानक नियत करने की अपेक्षा कम प्रचक्रीय होता है (पेन्नाच्छी 2005)। इसलिए, बढ़ी हुई बैंक जोखिम को विनियमन द्वारा केवल अधिक पूंजी अपेक्षा में ही नहीं, अपितु अधिक निक्षेप बीमा प्रीमियमों में प्रतिबिंबित किए जाने की अनुमति होने पर प्रचक्रीयता में कमी लाई जा सकती है।

10.84 नैतिक संकट से संबंधित समस्या को ध्यान में रखते हुए पिछले कुछ वर्षों में कतिपय देशों ने जोखिम आधारित निक्षेप बीमा प्रणाली अपना ली है। 1995 में, केवल अमरीका ने ही जोखिम-आधारित निक्षेप बीमा प्रणाली अपना रखी थी। हालांकि, अब 29 देशों ने जोखिम आधारित निक्षेप बीमा प्रणाली अपना रखी है। तथापि, प्रीमियमों, जो आस्ति की गुणवत्ता/पूंजी पर्याप्तता, आस्ति गुणवत्ता, प्रबंधन, अर्जन, चल-निधि, प्रणाली एवं नियंत्रण रेटिंग जैसे विभिन्न मानदंडों से संबद्ध हैं, को समायोजित करने के लिए कोई समरूप आधार नहीं है (सारणी 10.3)।

10.85 संक्षेप में, पिछले कुछ वर्षों में विनियमन और पर्यवेक्षण के क्षेत्र में कतिपय महत्त्वपूर्ण घटनाएं हुई हैं। पहली, इंग्लैंड जैसे कुछ देशों में आंशिक रूप से उन वित्तीय संगुटों के उद्भव के कारण, जिनके लिए एकीकृत विनियमन एवं पर्यवेक्षण को आवश्यक समझा जाता है, तथा आंशिक रूप से मौद्रिक नीति और बैंकों के विनियमन एवं पर्यवेक्षण के बीच अनुभूत हितों के टकराव के कारण पर्यवेक्षण को केन्द्रीय बैंक से अलग कर दिया गया है। हालांकि, नॉर्दर्न रॉक की विफलता ने पर्यवेक्षी प्राधिकरण और अंतिम ऋणदाता के बीच समन्वय की व्यवस्था और केन्द्रीय बैंक से पर्यवेक्षण के विलगाव की वांछनीयता के संबंध में कुछ गंभीर मुद्दे उठा दिए हैं। दोनों ही पक्षों के विचार अलग-अलग हैं तथा इस संबंध में कोई आम राय नहीं बन पाई है कि कौन-सी व्यवस्था बेहतर ढंग से कार्य करने में सक्षम होगी। दूसरी, विविध प्रकार की वित्तीय फर्मों के लिए एकल अथवा बहुविध विनियामक/कों के मुद्दे पर इस बात का सुस्पष्ट और निर्णायक साक्ष्य मौजूद नहीं है कि एक व्यवस्था दूसरी से बेहतर है। अनुभव से यह पता चलता है कि सभी प्रकार के मॉडल प्रचलन में हैं। उदाहरण के तौर पर, कुछ देशों में बैंकिंग और बीमा का विनियमन एक ही एजेन्सी से जुड़ा है, जबकि प्रतिभूति बाज़ार का विनियमन किसी अन्य एजेन्सी के पास है। कुछ देशों में, बैंकिंग और प्रतिभूति बाजारों का विनियमन एक ही एजेंसी के पास है, जबकि बीमाक्षेत्र का विनियमन किसी और एजेंसी के पास है। इस समय कम से कम 37 देशों में बैंकिंग, बीमा और प्रतिभूति बाज़ार के लिए संयुक्त विनियामकों की व्यवस्था है। अमरीका ने छत्र पर्यवेक्षण की प्रणाली अपना रखी है, जबकि कुछ अन्य देशों में अग्रणी विनियमन की व्यवस्था मौजूद है। आस्ट्रेलिया ने उद्देश्य आधारित विनियमन प्रणाली अपना रखी है। तीसरी, इंग्लैंड में वित्तीय सेवा प्राधिकरण द्वारा सिद्धांत आधारित पर्यवेक्षण प्रणाली अपनाई गई है। संभवतः यह विश्व का एकमात्र ऐसा देश है, जिसने सिद्धांत आधारित दृष्टिकोण अपना रखा है। हालांकि, वित्तीय सेवा प्राधिकरण के लिए विस्तृत नियमों से बच पाना संभव नहीं हुआ तथा ऐसा कहा जाता है कि उसके पास 8000 पृष्ठों से भी अधिक वाली एक नियम पुस्तक है। चौथी, अब पर्यवेक्षण के अनुपूरक के रूप में बाज़ार अनुशासन पर अधिक से अधिक बल दिया जा रहा है, यद्यपि इसकी प्रभावशीलता उस वित्तीय आधारभूत सुविधा की सुदृढ़ता पर निर्भर करती है, जो वित्तीय लेन-देनों को आधार बनाती है। अंतिम, हाल के वर्षों में निक्षेप बीमा प्रणाली अपनाने वाले देशों की संख्या में महत्त्वपूर्ण रूप से विस्तार हुआ है। इसके अलावा भी पिछले कुछ वर्षों में कतिपय देशों ने जोखिम आधारित निक्षेप बीमा प्रणाली को अपना लिया है । हालांकि, इनमें से अधिकांश पहलुओं के संबंध में कम से कम दो कारणों से कोरा सिद्धांतवादी दृष्टिकोण अपनाना कठिन होता है। पहला, किसी एक दृष्टिकोण/ढांचे की दूसरे की तुलना में श्रेष्ठता को निर्णायक तौर पर सिद्ध कर पाना संभव नहीं हो पाया है। दूसरा, समय के साथ ही विभिन्न देशों में वित्तीय प्रणाली के आकार और स्वरूप तथा विद्यमान स्थितियों के आधार पर भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण/ढांचे विकसित हो गए हैं।

**सारणी : 10.3 सुस्पष्ट निक्षेप बीमा प्रणाली के तहत जोखिम आधारित प्रीमियम वाले देश**

| देश | निर्धारण का आधार | वार्षिक प्रीमियम (निर्धारण आधार का %) | प्रीमियमों को समायोजित करने का आधार |
|---|---|---|---|
| अर्जेन्टीना | बीमित जमाराशियां | 0.3 जोड़ें 0.36-0.72 | कैमेल जैसे अनुपात एवं जोखिम आस्तियां |
| बेलारूस | घरेलू जमाराशियां | जोखिम आधारित : दो सरकारी बैंकों के लिए 0। पूंजी अनुपात की तुलना में बैंकों की घरेलू जमाराशियों के आधार पर अन्य बैंकों के लिए घरेलू जमाराशियों के 0.1% से लेकर 0.3% तक | – |
| बोलीविया | जमाराशियां | – | – |
| बुल्गारिया | बीमित जमाराशियां | 0.5 प्रतिशत तक जोखिम आधारित | – |
| कनाडा | बीमित जमाराशियां | 0.04 से 0.33 तक | कैमेल जैसे अनुपात, आस्ति संकेन्द्रण, विनियामक श्रेणी और मानकों का अनुपालन |
| कोलंबिया | बीमित जमाराशियां | जोखिम समायोजित | स्वतंत्र श्रेणी-निर्धारण (लंबित है) |
| इक्वेडोर | जमाराशियां | 0.65 +जोखिम समायोजित | जोखिम श्रेणी निर्धारण |
| अल सल्वाडोर | जमाराशियां | 0.1 (0.3 तक बढ़ाया जा सकता है) + जोखिम आधारित मूल्य वृद्धि | अवमानक प्रतिभूतियां |
| फिनलैंड | बीमित जमाराशियां | 0.05 से 0.3 | शोध क्षमता अनुपात |
| फ्रांस | जमाराशियां जोड़ें 1/3 ऋण | जोखिम समायोजित | कैमेल की भांति अनुपात |
| जर्मनी | बीमित जमाराशियां | 0.008 (सांविधिक योजना); 0-0.1 (निजी क्षेत्र) | जोखिम की श्रेणी और सदस्यता की अवधि |
| हंगरी | बीमित जमाराशियां | 0.16-0.19 (आकार द्वारा कमी) + जोखिम समायोजन | पूंजी पर्याप्तता |
| इटली | बीमित जमाराशियां | पूर्व-व्यापी, आकार एवं जोखिम हेतु समयोजित | कैमेल और परिपक्वता रूपांतरण |
| कज़ाकिस्तान | बीमित जमाराशियां | 0.125-0.375 | कैमेल जैसे अनुपात |
| मैकडोनिया | बीमित जमाराशियां | 0.01-0.025 | कैमेल जैसे अनुपात |
| मार्शल आईलैंड | जमाराशियां | जोखिम आधारित, 0 से लेकर 0.27 प्रतिशत तक | – |
| मैक्सिको | जमाराशियां एवं अन्य देयताए | 0.4-0.8 | वित्त मंत्रालय द्वारा निर्धारित |
| माइक्रोनेशिया | जमाराशियां | जोखिम आधारित, 0 से लेकर 0.27 प्रतिशत तक | – |
| नार्वे | जोखिम भारित आस्तियां और जमाराशियां | जोखिम भारित आस्तियों का 0.5 और जमाराशियों का 0.15 | जोखिम भारित आस्तियां |
| पेरू | बीमित जमाराशियां | 0.65 जोड़ें जोखिम समायोजन | पर्यवेक्षक द्वारा निर्धारित |
| पोलैंड | जोखिम भारित आस्तियां और जमाराशियां | 0.4 तक | जोखिम भारित आस्तियां |
| पुर्तगाल | बीमित जमाराशियां | 0.08 से लेकर 0.12 | कैमेल जैसे अनुपात |
| रोमानिया | बीमित जमाराशियां | 0.3 से लेकर 0.6 | कैमेल जैसे अनुपात |
| स्वीडन | बीमित जमाराशियां | 0.5 (अधिकतम) | पूंजी पर्याप्तता |
| स्विटजरलैंड | सकल अर्जन एवं तुलनपत्र में शामिल मदें | पूर्वव्यापी, मांग पर अंतर होता है | अर्जन और कुछ विवेक |
| ताइवान | बीमित जमाराशियां | 0.05-0.06 | पूंजी पर्याप्तता अनुपात और आरंभिक चेतावनी प्रणाली |
| तुर्की | बीमित बचत जमाराशियां | 1.0-1.2 | पूंजी पर्याप्तता |
| संयुक्त राज्य अमरीका | देशी जमाराशियां | 0.00-0.27 | कैमेल जैसे अनुपात |
| उरुग्वे | – | – | – |

**स्रोत :** 1. लैवेन लुक, 2002, ''प्राइसिंग ऑफ डिपॉजिट इंश्योरेंस,'' पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर नं. 2871, वर्ल्ड बैंक, जुलाई ।
2. डेमिर्गक-कंट, असली, कराकोवली तथा लुक लैवेन, 2005 ''डिपॉजिट इंश्योरेंस एराउण्ड दि वर्ल्ड : ए कम्प्रिहेंसिव डेटाबेस'' पॉलिसी रिसर्च पेपर नं. 3628, वर्ल्ड बैंक, जून।

## IV. भारत में वर्तमान विनियामक एवं पर्यवेक्षी ढांचा

### अनुसूचित वाणिज्य बैंकों हेतु विनियामक ढांचा

10.86 भारत में वाणिज्यिक बैंकों के विनियमन एवं पर्यवेक्षण का कार्य बैंककारी विनियमन अधिनियम 1949 और भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 में यथा-अधिदेशित विधि से रिज़र्व बैंक द्वारा संपादित किया जाता है। समय-समय पर विकसित किए जाने वाले विनियामक ढांचे के मुख्य तत्वों में शाखा प्राधिकरण नीति, विवेकसम्मत मानदंड, कॉरपोरेट अभिशासन, विदेशी निवेश मानदंड, प्राथमिकता क्षेत्र मानदंड तथा सांविधिक अपेक्षाएं, यथा, आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सीआरआर) और सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर), शामिल हैं।

10.87 भारत में नए बैंकों के गठन के लिए न्यूनतम सांविधिक अपेक्षाएं बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 में विनिर्दिष्ट की गई हैं। रिज़र्व बैंक संभाव्य प्रवेशकर्ताओं से नए आवेदन आमंत्रित किए जाने पर नए बैंकों के प्रवेश से संबंधित पात्रता मानदंडों का निरूपण करता है।

10.88 शाखा प्राधिकरण नीति को उदारीकृत और युक्तियुक्त बनाने के उद्देश्य से सितम्बर 2005 में एक संशोधित नीतिगत ढांचा लागू किया गया था, जो बैंकों की मध्यावधिक कॉरपोरेट रणनीति तथा सार्वजनिक हित के अनुरूप था। इस नीति के अनुसार समय-समय पर अलग-अलग शाखाएं खोलने हेतु प्राधिकार प्रदान किए जाने से संबंधित वर्तमान प्रणाली को एक परामर्शदात्री और परस्पर अन्तःक्रियाशील प्रक्रिया के माध्यम से वार्षिक आधार पर समुचित अनुमोदन प्रदान करने वाली प्रणाली द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया। इसके अलावा, संशोधित नीति के अनुसार बैंकों के लिए शाखाएं खोलने हेतु तथा दूरवर्ती स्वचालित टेलर मशीनें (एटीएम) स्थापित करने हेतु रिज़र्व बैंक के क्षेत्रीय कार्यालयों से संपर्क करने की आवश्यकता नहीं रह गई है। बैंकों द्वारा शाखा विस्तार से संबंधित वार्षिक योजनाओं की प्रस्तुति संबंधी उपर्युक्त प्रणाली के होते हुए भी वे वार्षिक योजना के तहत दिए जाने वाले अनुमोदनों के अलावा भी विशेषतः ग्रामीण/बैंक-रहित क्षेत्रों (जिलों) में शाखाएं खोलने के संबंध में किसी अत्यावश्यक प्रस्ताव के मामले में रिज़र्व बैंक से वर्ष के दौरान किसी भी समय संपर्क करने हेतु स्वतंत्र होते हैं। इसके अलावा, बैंकों के लिए प्राधिकृत शाखाओं/विस्तार काउंटरों पर स्थापित किए जाने वाले (आन-साइट) एटीएम हेतु पूर्वानुमति प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं है। हालांकि, दूरवर्ती एटीएम की स्थापना किए जाने हेतु रिज़र्व बैंक से पूर्वानुमोदन प्राप्त किया जाना आवश्यक होता है। भारतीय बैंकों के लिए शाखा प्राधिकरण की नीति विदेशी बैंकों के लिए भी कुछ शर्तों के अधीन लागू होती है।

10.89 बैंकों पर आय निर्धारण, आस्ति वर्गीकरण और प्रावधानीकरण के संबंध में भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा निर्धारित विवेकसम्मत मानदंड लागू होते हैं। इन मानदंडों को समय के साथ ही अंतरराष्ट्रीय मानदंडों के समकक्ष बनाने हेतु सुदृढ़ किया गया है। बैंकों से यह अपेक्षित है कि वे अपनी आस्तियों को चार व्यापक श्रेणियों, यथा (i) मानक आस्ति (ii) अवमानक आस्ति (iii) संदिग्ध आस्ति, और (iv) हानि आस्ति में वर्गीकृत करें। मानक आस्तियों को छोड़कर, शेष बची तीनों ही श्रेणियां अनर्जक आस्तियाँ होती हैं। किसी आस्ति को अनर्जक आस्ति के रूप में तब वर्गीकृत किया जाता है, जब मूलधन की किस्त या ब्याज 90 दिन से अधिक की अवधि से अतिदेय हो । अवमानक आस्ति वह होती है, जो 12 माह से कम अथवा उसके समकक्ष अवधि से अनर्जक आस्ति हो। किसी आस्ति को संदिग्ध आस्ति तब माना जाता है, जब वह 12 माह से अधिक अवधि से अवमानक श्रेणी में पड़ी हो। हानि आस्ति को उस आस्ति के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसमें हानि की बैंक द्वारा अथवा आंतरिक या बाहरी लेखा-परीक्षकों द्वारा या रिज़र्व बैंक के निरीक्षण दल द्वारा पहचान कर ली गई हो, किन्तु रकम को पूरी तरह से बट्टे खाते न डाला गया हो। बैंकों के लिए यह आवश्यक है कि वे अवमानक आस्तियों के लिए कुल बकाये पर 10 प्रतिशत का प्रावधान करें। हालांकि, अवमानक एक्सपोज़रों के 'अप्रतिभूत' होने की स्थिति में, उन पर 20 प्रतिशत का प्रावधान लागू होगा । 'संदिग्ध' रूप में वर्गीकृत अग्रिमों के प्रतिभूत अंश पर प्रावधानीकरण संबंधी अपेक्षा कोई आस्ति कितनी अवधि से 'संदिग्ध' रही है, इस आधार पर 20 से लेकर 100 प्रतिशत पर अलग-अलग, संदिग्ध आस्ति के अप्रतिभूत अंश पर 100 प्रतिशत तथा हानि आस्ति पर 100 प्रतिशत होती है। अनर्जक आस्तियों के लिए विशिष्ट प्रावधानीकरण के अलावा, बैंकों के लिए मानक आस्तियों के मामले में वैश्विक ऋण पोर्टफोलियो के आधार पर निधिक बकाये के लिए 0.25 प्रतिशत से लेकर 2 प्रतिशत की दर से प्रावधान करने की अपेक्षा होती है। मानक आस्ति पर प्रावधानीकरण कृषि और लघु एवं मध्यम उद्यम क्षेत्र को प्रत्यक्ष अग्रिमों के मामले में 0.25 प्रतिशत की दर से, 20 लाख रुपये से अधिक रिहाइशी आवास ऋणों के मामले में 1 प्रतिशत की दर से; वैयक्तिक ऋणों (क्रेडिट कार्ड की प्राप्य राशियों सहित) जैसे विशिष्ट क्षेत्रों को अग्रिमों, पूंजी बाज़ार एक्सपोज़र के रूप में अर्हता प्राप्त ऋणों एवं अग्रिमों, वाणिज्यिक स्थावर संपदा ऋणों, जमाराशि न स्वीकार करने वाली प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को ऋणों एवं अग्रिमों के मामले में 2 प्रतिशत की दर से और अन्य सभी अग्रिमों के मामले में 0.40 प्रतिशत की दर से निर्धारित किया जाता है।

10.90 अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उपस्थिति रखने वाले भारतीय बैंकों तथा भारत में परिचालनरत विदेशी बैंकों द्वारा इस समय बासेल II पूंजी पर्याप्तता मानदंडों का पालन किया जाता है, जो मार्च 2008 के अंत से प्रभावी हो गया है। उनसे ऋण जोखिम के मामले में मानकीकृत दृष्टिकोण तथा परिचालन जोखिम के मामले में मूल संकेतक दृष्टिकोण अपनाए जाने की अपेक्षा की जाती है (विवरण के लिए अध्याय V का अवलोकन करें)। बासेल I से संबंधित अन्य सभी बैंकों के लिए मार्च 2009 के अंत तक बासेल II ढांचे में अंतरित हो जाना अपेक्षित है। 8 प्रतिशत के जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूंजी अनुपात के अंतरराष्ट्रीय मानदंडों के समक्ष बासेल I और बासेल II दोनों ही के अधीन भारत में परिचालनरत बैंकों के लिए 9 प्रतिशत का जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूंजी का अनुपात निर्धारित किया गया है।

10.91 बेहतर जोखिम प्रबंधन के उद्देश्य से भारत में परिचालनरत बैंकों से यह अपेक्षित है कि वे विभिन्न उद्योग क्षेत्रों, गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों, वैयक्तिक उधारकर्ताओं, सामूहिक उधारकर्ताओं तथा पूंजी बाज़ार के प्रति अपने एक्सपोज़र को सीमित रखें। वर्तमान मानदंडों के अनुसार किसी एकल उधारकर्ता को दिया जाने वाला ऋण पूंजीगत निधियों के 15 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। सामूहिक उधारकर्ताओं के मामले में यह सीमा कुल पूंजीगत निधियों का 40 प्रतिशत निर्धारित की गई है। इसके अलावा असाधारण परिस्थितियों में बैंक उनके निदेशक मंडल के अनुमोदन से किसी उधारकर्ता/उधारकर्ताओं के समूह को एक्सपोज़र में पूंजीगत निधियों के 5 प्रतिशत की वृद्धि करने पर विचार कर सकते हैं।

बैंक किसी एकल उधारकर्ता और उधारकर्ताओं के समूह को, अतिरिक्त रकम के आधारभूत सुविधा के वित्तीयन हेतु होने पर, क्रमशः 5 प्रतिशत और 10 प्रतिशत का अतिरिक्त ऋण दे सकते हैं। साथ ही, अन्य क्षेत्रों में, कपड़ा, जूट, चाय जैसे विशिष्ट क्षेत्रों के प्रति एक्सपोजर को इस विधि से सीमित रखने की सलाह बैंकों को दी गई है ताकि जोखिम इन क्षेत्रों में समान रूप से फैल जाए। इसी प्रकार, किसी एकल गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनी/गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनी - आस्ति वित्तीयन कंपनी के प्रति बैंक एक्सपोजर क्रमशः 10 प्रतिशत/15 प्रतिशत पर निर्धारित है। इस मामले में भी अतिरिक्त रकम से आधारभूत सुविधा का वित्तीयन होने की स्थिति में 5 प्रतिशत की अतिरिक्त रकम अनुमेय होती है। पूंजी बाजार के प्रति बैंकों के सभी रूपों में एक्सपोजर की सीमा पिछले वर्ष के 31 मार्च के दिन उसकी निवल मालियत के 40 प्रतिशत पर निर्धारित की गई है । हालांकि, इस समय अधिकतम सीमा के भीतर शेयरों, परिवर्तनीय बॉण्डों/डिबेंचरों, इक्विटी उन्मुख पारस्परिक निधियों की यूनिटों में बैंक का प्रत्यक्ष निवेश तथा उद्यम पूंजी निधियों में एक्सपोजर उसकी निवल मालियत के 20 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चहिए।

10.92 बैंक अन्यों के साथ-साथ विभिन्न प्रकार के निवेशों, यथा सरकारी प्रतिभूतियों, अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों, शेयरों, डिबेंचरों और बॉण्डों, सहायक कंपनियों/संयुक्त उद्यमों तथा वाणिज्यिक पत्र और पारस्परिक निधि की यूनिटों जैसी अन्य लिखतों में निवेश कर सकते हैं। बैंकों से यह अपेक्षित है कि वे उनके संपूर्ण निवेश संविभाग (पोर्टफोलियो) को 'परिपक्वता तक धारित', 'बिक्री हेतु उपलब्ध' और 'लेन-देन हेतु धारित' श्रेणियों में वर्गीकृत करें। बैंकों से यह भी अपेक्षित है कि वे निवेश संविभागों के वर्गीकरण, मूल्यांकन और परिचालन हेतु रिज़र्व बैंक द्वारा समय-समय पर यथा निर्धारित विवेकसम्मत मानदंडों का पालन करें। वर्तमान मार्गदर्शी सिद्धांतों के अनुसार बैंकों को स्वयं उनकी ओर से और ग्राहकों की ओर से लेन-देन करते समय अपनाए जाने वाले व्यापक निवेशगत उद्देश्यों, विविध पदाधिकारियों द्वारा पालन की जाने वाली कार्यविधियों, विवेकसम्मत सीमाओं तथा रिपोर्टिंग प्रणाली का स्पष्ट रूप से उल्लेख करते हुए स्वयं अपनी निवेश नीतियां तैयार करने की अनुमति है।

10.93 एक सुविविधीकृत स्वामित्व ढांचे की प्राप्ति के उद्देश्य से कोई एकल कंपनी अथवा संबंधित कंपनियों का कोई समूह किसी निजी क्षेत्र के बैंक की चुकता पूंजी के 10 प्रतिशत से अधिक के प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से शेयर धारण अथवा नियंत्रण नहीं प्राप्त कर सकती। कोई बैंक भारत में स्थित किसी अन्य बैंक के 5 प्रतिशत से अधिक के शेयर नहीं रख सकता। निजी क्षेत्र के बैंकों से अपेक्षित है कि वे योग्यता, विशेषज्ञता, पिछले कार्य-निष्पादन रिकार्ड, ईमानदारी और अन्य 'योग्य एवं उपयुक्त' मानदंडों के आधार पर निदेशक मंडल में एक निदेशक के रूप में नियुक्ति/पुनर्नियुक्ति हेतु व्यक्ति की उपयुक्तता का निर्धारण करने हेतु यथोचित छानबीन की प्रक्रिया अपनाएं तथा इस उद्देश्य के लिए निदेशकों से आवश्यक सूचना एवं घोषणा पत्र भी प्राप्त करें। योग्य एवं उपयुक्त वाले मानदंड बैंकिंग कंपनी (उपक्रमों का अर्जन एवं अंतरण) अधिनियम 1970/1980 के तहत राष्ट्रीयकृत बैंकों तथा भारतीय स्टेट बैंक (समनुषंगी बैंक) अधिनियम 1959 के तहत भारतीय स्टेट बैंक के सहयोगी बैंकों के निदेशक मंडलों में निर्वाचित निदेशकों पर भी लागू होते हैं। निजी बैंकों में सभी स्रोतों से विदेशी निवेश की सीमा 74 प्रतिशत से अधिक नहीं हो सकती। विदेशी बैंकों को भारत में तीन में से एक चैनल यथा - (i) शाखा/ओं (ii) पूर्णतः स्वामित्वाधीन सहायक कंपनी, अथवा (iii) किसी निजी बैंक में अधिकतम 74 प्रतिशत तक के समग्र विदेशी निवेश वाली सहायक कंपनी के माध्यम से परिचालन करने की अनुमति होती है।

10.94 बैंककारी विनियमन अधिनियम में भारत में बैंकिंग कंपनियों के विलयन और समामेलन हेतु कानूनी ढांचे की व्यवस्था की गई है । समामेलन दो प्रकार के होते हैं, यथा - स्वैच्छिक एवं अनिवार्य। स्वैच्छिक समामेलन के तहत समामेलन नीति का दोनों ही बैंकिंग कंपनियों के दो-तिहाई शेयर-धारकों द्वारा अनुमोदित किया जाना तथा रिज़र्व बैंक द्वारा अनुमोदित होना आवश्यक होता है। अनिवार्य समामेलन के तहत केन्द्रीय सरकार भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा किए गए आवेदन के आधार पर किसी बैंकिंग कंपनी पर एक निश्चित अवधि हेतु अधिस्थगन की घोषणा कर सकती है। अधिस्थगन की अवधि के दौरान रिज़र्व बैंक के लिए एक समामेलन/पुनर्निर्माण योजना तैयार करना आवश्यक होता है। उक्त योजना भारत सरकार को प्रस्तुत की जाती है और सरकार द्वारा उसे अनुमोदित कर दिए जाने पर समामेलन प्रवृत्त हो जाता है (विवरण हेतु अध्याय VIII देखें)।

10.95 भारत में परिचालनरत बैंकों के लिए प्राथमिकता क्षेत्र को उधार हेतु निर्धारित लक्ष्यों को पूरा करना अपेक्षित होता है। प्राथमिकता क्षेत्र को उधार से संबंधित समग्र अधिकतम सीमा देशी बैंकों और विदेशी बैंकों के लिए क्रमशः 40 प्रतिशत और 32 प्रतिशत निर्धारित की गई है। इन लक्ष्यों की गणना समायोजित निवल बैंक ऋण अथवा तुलनपत्र में शामिल न किए जाने वाले एक्सपोजरों में ऋण की समतुल्य रकम, इनमें से जो भी अधिक हो, के रूप में की जाती है।

10.96 भारत में कार्यरत विदेशी बैंकों की शाखाओं सहित समस्त वाणिज्य बैंकों, स्थानीय क्षेत्र बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को निक्षेप बीमा योजना में शामिल किया गया है। निक्षेप बीमा और प्रत्यय गारंटी निगम अधिनियम की धारा 2 (जीजी) के तहत यथापरिभाषित सभी पात्र सहकारी बैंक निक्षेप बीमा योजना में शामिल हैं। निक्षेप बीमा और प्रत्यय गारंटी निगम अधिनियम की धारा 16(1) के प्रावधानों के तहत, बीमा रक्षा बैंक की सभी शाखाओं को एक साथ मिलाकर 'उसी हैसियत और उसी अधिकार' के तहत रखी गई जमाराशियों के मामले में प्रति जमाकर्ता केवल 1,00,000/- रुपये तक सीमित है। निक्षेप बीमा और प्रत्यय गारंटी निगम (i) विदेशी सरकारों; (ii) केन्द्र/राज्य सरकारों; (iii) राज्य सहकारी बैंकों के पास राज्य भूमि विकास बैंकों की जमाराशियों; (iv) अंतर बैंक जमाराशियों; (v) भारत से बाहर प्राप्त जमाराशियों और; (vi) निक्षेप बीमा और प्रत्यय गारंटी निगम द्वारा रिज़र्व बैंक के पूर्व-

अनुमोदन से विशिष्ट रूप से छूट प्राप्त जमाराशियों को छोड़कर बचत, मीयादी, चालू, आवर्ती जैसी सभी जमाराशियों को बीमित करता है। निक्षेप बीमा और प्रत्यय गारंटी निगम निक्षेप बीमा प्रणाली के संचालन हेतु बीमित बैंकों से प्रीमियम वसूल करता है। बीमित बैंकों द्वारा भुगतान किए जाने वाले प्रीमियम की गणना उनकी निर्धारणयोग्य जमाराशियों के आधार पर बीमित प्रति 100 रुपये पर 10 पैसे की सपाट दर पर की जाती है। बीमित बैंकों द्वारा निक्षेप बीमा और प्रत्यय गारंटी निगम को भुगतान किया जाने वाला प्रीमियम स्वयं बैंकों द्वारा ही वहन किया जाना अपेक्षित होता है और उसे जमाकर्ताओं पर नहीं डाला जाता।

10.97 आस्ति देयता असंतुलन से बचने के लिए आस्ति-देयता प्रबंधन ढांचे की व्यवस्था है। ऋण जोखिम, बाज़ार जोखिम और परिचालन जोखिम से निपटने के लिए एक व्यापक जोखिम प्रबंधन प्रणाली की भी व्यवस्था मौजूद है। उन बैंकों के मामले में, जो तीन मानदंडों यथा - (क) जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूंजी का अनुपात, (ख) निवल अग्रिमों की तुलना में निवल अनर्जक आस्तियों का अनुपात, और (ग) आस्ति पर प्रतिलाभ की दृष्टि से सतर्कता बिन्दुओं पर पहुंच गए हों, कुछ विन्यस्त कार्रवाइयां आरंभ किए जाने से संबंध में त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई की एक प्रणाली मौजूद है।

10.98 बैंकों के लिए आरक्षित नकदी निधि अनुपात जो इस समय उनकी निवल मांग और सावधि देयताओं का 9.0 प्रतिशत तथा सांविधिक चलनिधि अनुपात, जो इस समय उनकी मांग और सावधि देयताओं का 25 प्रतिशत है, बनाए रखना अपेक्षित होता है। बैंकों को बचत बैंक जमा ब्याज दर को छोड़कर, जो 3.5 प्रतिशत पर निर्धारित है, उनकी जमा ब्याज दरें निर्धारित करने की स्वतंत्रता प्राप्त है। बैंक निर्यात, 2 लाख रुपये तक के लघु ऋणों और विभेदक ब्याज दर योजना से संबंधित उधार दरों को छोड़कर अपनी उधार दरें निर्धारित करने हेतु भी स्वतंत्र हैं।

## अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के लिए पर्यवेक्षी ढांचा

10.99 बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 में निर्धारित वाणिज्य बैंकों के पर्यवेक्षी अधिकार क्षेत्र में रिज़र्व बैंक से यह अपेक्षित है कि वह भारत के भीतर और भारत के बाहर बैंकिंग कंपनियों[2] का निरीक्षण करे। हालांकि, इस प्रकार की शक्तियों का प्रयोग उस वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड द्वारा किया जाता है, जिसका गठन 1994 में रिज़र्व बैंक के केन्द्रीय निदेशक बोर्ड की एक समिति के रूप में किया गया है (बॉक्स X.10)।

10.100 31 मार्च 2007 के दिन वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड को 82 अनुसूचित वाणिज्य बैंकों (52,036 शाखाओं), 1,813 शहरी सहकारी बैंकों (7,453 शाखाओं), 12,968 गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों, 7 वित्तीय संस्थाओं और 6 प्राथमिक व्यापारियों पर पर्यवेक्षी अधिकार क्षेत्र प्राप्त था। वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड को 3,326 अधिकारियों (बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग - 1,037, गैर-बैंकिंग पर्यवक्षेण विभाग - 456, आंतरिक ऋण प्रबंधन विभाग - 44, बैंकिंग परिचालन और विकास विभाग - 330, ग्रामीण आयोजना और ऋण विभाग - 751 तथा शहरी बैंक विभाग - 738) द्वारा सहायता प्रदान की गई।

10.101 वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के तत्वावधान में कार्यरत पर्यवेक्षी ढांचे के उद्देश्य जटिल और बहुविध होते हैं। पहला, वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड की मूलभूत रणनीति वित्तीय प्रणाली पर समन्वित पर्यवेक्षी बल प्रदान किए जाने की होती है। अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग बैंकों/वित्तीय संस्थाओं/गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों का पर्यवेक्षण प्राथमिक लक्ष्य होता है, वहीं वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड का समान रूप से महत्त्वपूर्ण उद्देश्य अंतःक्षेत्रीय समन्वित पर्यवेक्षण भी होता है।

10.102 इस समय वाणिज्य बैंकों के संबंध में रिज़र्व बैंक का पर्यवेक्षी दृष्टिकोण दो मार्गों - औपचारिक और अनौपचारिक - के माध्यम से पर्यवेक्षण करना है। जहां औपचारिक मार्ग में स्थल पर जाकर निरीक्षण और परोक्ष निगरानी शामिल रहती है, वहीं अनौपचारिक/अविन्यस्त दृष्टिकोण में अन्य बातों के साथ-साथ बैंकों के वरिष्ठ एवं शीर्ष स्तर के कार्यपालकों के साथ संवाद, बैंकों के मुख्य कार्यपालकों के साथ तिमाही आधार पर अनौपचारिक विचार-विमर्शों सहित, बाज़ार आसूचना और सूचना के तदर्थ एकत्रीकरण का समावेश होता है ।

10.103 बैंकों के पर्यवेक्षण का मूल उद्देश्य बैंकों की शोध-क्षमता, चलनिधि और परिचालनात्मक सुदृढ़ता का आकलन करना होता है । बैंकों का स्थल पर जाकर निरीक्षण, जिसे वार्षिक वित्तीय निरीक्षण कहा जाता है, वार्षिक आधार पर (भारतीय स्टेट बैंक को छोड़कर जिसका निरीक्षण दो वर्ष में एक बार किया जाता है) किया जाता है। प्रधान निरीक्षण अधिकारी के नेतृत्व वाला रिज़र्व बैंक के निरीक्षणकर्ता अधिकारियों का एक दल बैंक का दौरा करता है तथा भारतीय बैंकिंग प्रणाली की आवशयकताओं के अनुरूप अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनाए गए 'कैमेल' मॉडल के आशोधित संस्करण 'कैमेल्स' के आधार पर निरीक्षण करता है। हाल के वर्षों में वार्षिक वित्तीय निरीक्षण का फ़ोकस प्रतिभूतिकरण, कारोबार निरंतरता आयोजना, प्रकटन संबंधी अपेक्षाओं तथा अन्य विद्यमान दिशा-निर्देशों के अनुपालन पर रहा है। समग्र परिप्रेक्ष्य से परिचित होने के उद्देश्य से शाखाओं जैसी परिचालन इकाइयों, खज़ाना इकाइयों, सौदा (डीलिंग) कक्षों तथा देश भर में स्थित बैंक के नियंत्रण कार्यालयों जैसे अन्य कार्यालयों का भी सामान्यतया अतिरिक्त निरीक्षण दलों द्वारा निरीक्षण किया जाता है। परिचालन इकाइयों और अन्य कार्यालयों का चयन बैंकों के ऋण संविभाग के अधिकांश हिस्से को शामिल करने हेतु नमूना

[2] इस धारा के प्रयोजन हेतु ''बैंकिंग कंपनी'' अभिव्यक्ति में निम्नलिखित का समावेश होगा :-
(i) भारत से बाहर निगमित किसी बैंकिंग कंपनी के मामले में भारत में कार्यरत उसकी समस्त शाखाएं, और
(ii) भारत में निगमित किसी बैंकिंग कंपनी के मामले में (क) अनन्य रूप से भारत से बाहर बैंकिंग कारोबार करने के प्रयोजन हेतु गठित उसकी समस्त सहायक कंपनियां और (ख) उसकी समस्त शाखाएं, चाहे वे भारत में स्थित हों या फिर भारत से बाहर ।

## बॉक्स X.10
## वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड और उसकी महत्वपूर्ण पहलकदमियां

वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड का गठन नवम्बर 1994 में रिजर्व बैंक के केन्द्रीय निदेशक बोर्ड की एक समिति के रूप में किया गया था। उक्त बोर्ड में रिजर्व बैंक के केन्द्रीय बोर्ड के सदस्यों का समावेश होता है, जिसमें गवर्नर का समावेश उसके अध्यक्ष के रूप में तथा एक उप गवर्नर का पूर्णकालिक उपाध्यक्ष के रूप में समावेश होता है। रिजर्व बैंक के अन्य उप गवर्नर इसके पदेन सदस्य होते हैं तथा रिजर्व बैंक के केन्द्रीय निदेशक बोर्ड के चार अशासकीय निदेशकों को सदस्यों के रूप में अंगीकृत किया जाता है।

वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड, भारतीय रिजर्व बैंक (वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड) विनियमावली, 1994 के तहत कार्य करता है। इन विनियमों के प्रावधान भारतीय रिजर्व बैंक सामान्य विनियमावली, 1949 के अतिरिक्त होते हैं, और उसके अपकर्ष के रूप में नहीं। उक्त बोर्ड वित्तीय प्रणाली के विभिन्न क्षेत्रों के संबंध में पर्यवेक्षण और निरीक्षण की शक्तियों का प्रयोग भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियमन, 1934 तथा बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 के तहत करता है। यह अन्य कार्य भी करता है तथा केन्द्रीय निदेशक बोर्ड द्वारा समय-समय पर यथा विनिर्दिष्ट शक्तियों का प्रयोग करता है। बोर्ड के कार्यों को संचालित करने हेतु तीन सदस्यों, जिनमें से एक का अध्यक्ष अथवा उपाध्यक्ष होना आवश्यक है, द्वारा गणपूर्ति (कोरम) बनता है। उक्त बोर्ड प्रत्येक छमाही में केन्द्रीय बोर्ड को एक रिपोर्ट प्रस्तुत करता है। साधारणतया उक्त बोर्ड की बैठकें प्रत्येक माह में एक बार होती हैं। 30 जून 2008 के दिन तक उक्त बोर्ड की 161 बैठकें संपन्न हो चुकी थीं।

प्रारंभ में वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड को वाणिज्य बैंकों, वित्तीय संस्थाओं और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के पर्यवेक्षण का अधिदेश दिया गया था। कालान्तर में शहरी सहकारी बैंकों और प्राथमिक व्यापारियों को भी वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के विषय-क्षेत्र में ला दिया गया। वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड पर्यवेक्षी और विनियामक विभागों द्वारा उसके समक्ष प्रस्तुत की जाने वाली निरीक्षण रिपोर्टों और अन्य पर्यवेक्षी मुद्दों पर विचार करता है। भारतीय रिज़र्व बैंक (वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड) विनियमावली, 1994 के प्रावधानों के अधीन वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड को सलाह देने हेतु विधि, लेखाशास्त्र, बैंकिंग, वित्त और प्रबंधन के क्षेत्रों में ख्यातिप्राप्त पांच सदस्यों के समावेश वाली एक परामर्शदात्री परिषद का गठन किया गया। मार्च 1998 में उक्त परिषद की अवधि समाप्त हो जाने पर उक्त परामर्शदात्री परिषद को जारी रखे जाने की आवश्यकता की समीक्षा की गई और परामार्शदात्री परिषद के रूप में उक्त संस्थागत व्यवस्था को समाप्त कर देने का निर्णय किया गया।

उक्त बोर्ड को उसके कार्यों में सहायता प्रदान करने हेतु वह जैसी आवश्यक समझे उस विधि से समितियां गठित करने की शक्तियां प्राप्त हैं। तदनुसार, वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड ने जनवरी 1995 में एक लेखा-परीक्षा उप-समिति का गठन किया, जिसमें वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के उपाध्यक्ष को उक्त उप-समिति का अध्यक्ष और वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के दो अशासकीय सदस्यों को अन्य सदस्यों के रूप में शामिल किया गया। उक्त उप-समिति समय-समय पर पुनर्गठित की जाती रही है। लेखा-परीक्षा उप-समिति का मुख्य फ़ोकस बैंकों, गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं और वित्तीय संस्थाओं में सांविधिक लेखा-परीक्षा की तथा संगामी लेखा-परीक्षा/आंतरिक लेखा-परीक्षा कार्यों की गुणवत्ता में उन्नयन लाने, पारिश्रमिक निर्धारित करने, सांविधिक लेखा-परीक्षकों तथा शाखा लेखा-परीक्षकों के पैनल को अनुमोदन प्रदान करने के साथ-साथ लेखांकन एवं प्रकटन मानकों पर होता है। लेखा-परीक्षा उप-समिति की बैठकें उस समय आयोजित की जाती हैं जब कभी इन मुद्दों पर विस्तृत जांच किए जाने की आवश्यकता पड़ती है। वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड की लेखा-परीक्षा उप-समिति ने संगामी लेखा-परीक्षा की प्रणाली, सांविधिक लेखा-परीक्षकों की सूचीबद्धता एवं नियुक्ति के मानदंडों तथा पर्यवेक्षित संस्थाओं के प्रकाशित लेखों में अधिकाधिक पारदर्शिता एवं प्रकटन के महत्त्वपूर्ण मुद्दे की समीक्षा की है।

वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के गठन के पूर्व, वाणिज्य बैंकों का पर्यवेक्षण मुख्यतः आवधिक अंतरालों पर किए जाने वाले स्थल पर जाकर निरीक्षणों के माध्यम से हुआ करता था। वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड ने उसकी पहली बैठक में पर्यवेक्षण की एक नयी रणनीति अनुमोदित की, जिसके मुख्य तत्वों में निम्नलिखित का समावेश थाः (i) बैंकों और अन्य ऋणदात्री संस्थाओं पर आंतरिक निगरानी के आधार पर अप्रत्यक्ष निगरानी कार्य की स्थापना (ii) समस्त पर्यवेक्षित संस्थाओं पर एक ''स्मृति'' का निर्माण तथा एक बाज़ार आसूचना एवं चौकशी इकाई की स्थापना (iii) फ़ोकस, प्रक्रिया, रिपोर्टिंग और अनुवर्तन के अनुसार बैंक निरीक्षणों की प्रणाली का पुनर्गठन करना (iv) बैंकों में सांविधिक लेखा-परीक्षा को सुदृढ़ बनाना तथा पर्यवेक्षी प्रक्रिया में लेखा-परीक्षकों की भूमिका को, उनका एजेन्टों के रूप में उपयोग किए जाने सहित, व्यापक बनाना और (v) पर्यवेक्षित संस्थाओं के भीतर कॉरपोरेट अभिशासन, आंतरिक नियंत्रण और लेखा-परीक्षा कार्यों और प्रबंधन सूचना तथा जोखिम नियंत्रण प्रणालियों जैसे आंतरिक बचाव के उपायों को पर्यवेक्षण कार्य के विस्तार के रूप में सुदृढ़ करना। वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड ने पर्यवेक्षी ढांचे को सुदृढ़ बनाने हेतु कई अन्य पहलें भी की हैं (अनुबंध X.I)।

चयन तकनीकों के माध्यम से किया जाता है। इस प्रकार के स्थल पर निरीक्षणों में अधिकांशतया परिचालन प्रक्रियाओं और लेन-देनों का समावेश होता है। नमूना चयन के उद्देश्य से अन्य क्षेत्रों के साथ-साथ धोखाधड़ी की रिपोर्ट की गई घटनाओं, अनर्जक आस्तियों के स्तर तथा संवेदनशील क्षेत्रों को एक्सपोजर का भी विवेचन किया जाता है। इन निरीक्षणों के महत्त्वपूर्ण निष्कर्षों को अलग से प्रलेखित किया जाता है तथा आवश्यक सुधार हेतु उन्हें बैंकों को सूचित किया जाता है। इसके साथ ही, इन निष्कर्षों को बैंक के निरीक्षण दल द्वारा समग्र बैंक के निरीक्षण के लिए महत्त्वपूर्ण निविष्टि माना जाता है। बैंक के कॉरपोरेट प्रधान कार्यालय का निरीक्षण करने की समयावधि सामान्यतया दो से तीन माह के बीच की होती है। निरीक्षण रिपोर्ट को सामान्य रूप से चार माह में अंतिम रूप दे दिया जाता है।

10.104 निरीक्षण कार्य पूरा हो जाने पर निरीक्षण रिपोर्ट बैंक को उसके अवलोकन, सुधारात्मक कार्रवाई और अनुपालन हेतु जारी की जाती है। इसके अलावा, निरीक्षण के निष्कर्षों पर बैंक के मुख्य कार्यपालक अधिकारी/अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक तथा अन्य वरिष्ठ पदाधिकारियों के साथ विस्तृत चर्चा करके रिज़र्व बैंक द्वारा आगे का मार्ग निर्धारित किया जाता है और एक निगरानी योग्य कार्य-योजना नियत की जाती है और/अथवा जहां कहीं भी आवश्यकता होती है, पर्यवेक्षी कार्रवाई की जाती है। निरीक्षण रिपोर्ट में रिकार्ड किए गए महत्त्वपूर्ण निष्कर्षों को बैंक के मुख्य कार्यपालक अधिकारी/अध्यक्ष व प्रबंध निदेशक के प्रत्युत्तरों के साथ वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। निरीक्षण के निष्कर्षों और अन्य निविष्टियों के आधार पर बैंक को पर्यवेक्षी श्रेणी निर्धारण (रेटिंग) प्रदान किया जाता है।

10.105 बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के निरीक्षणों के सभी निष्कर्षों को पुनरीक्षा और निर्देश हेतु बैंक/वित्तीय संस्था-वार ज्ञापनों के रूप में वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के समक्ष रखा जाता है। निरीक्षण-टिप्पणियों के आधार पर वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड कमजोर बैंकों/संकटपूर्ण स्थितियों वाले कुछ बैंकों को अधिक संकेन्द्रित और निरंतर निगरानी एवं अनुवर्तन हेतु मासिक निगरानी व्यवस्था के अंतर्गत रखे जाने का निदेश दे सकता है। इन बैंकों को उत्पीड़ित करने वाले मुद्दों के अनुपालन में हुई प्रगति की वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड द्वारा बैंक/बैंकों के मासिक निगरानी व्यवस्था से बाहर कर दिए जाने तक मासिक आधार पर समीक्षा की जाती है। वर्ष 2002 में वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के तत्वावधान में एक 'त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई' ढांचा भी लागू किया गया था, ताकि उन बैंकों के संबंध में कमजोरी का संकेत मिलते ही यथासंभव शीघ्रतापूर्वक सुधारात्मक कार्रवाई आरंभ की जा सके और बैंक के कार्य निष्पादन में किसी प्रकार की महत्त्वपूर्ण गिरावट को रोका जा सके।

10.106 अप्रत्यक्ष निगरानी में वित्तीय स्थिति का तिमाही अंतरालों पर और कुछ मामलों में मासिक आधार पर मूल्यांकन शामिल होता है। अप्रत्यक्ष चौकसी और निगरानी प्रणाली, जिसकी स्थापना 1995 में शीघ्र चेतावनी प्रणाली हेतु संकट प्रबंधन ढांचे के एक अंग तथा सुभेद्य संस्थाओं के स्थल पर जाकर निरीक्षण के संकेत के रूप में की गई थी, विवेकसम्मत पर्यवेक्षी रिपोर्टिंग ढांचे पर आधारित है जिसमें पूंजी पर्याप्तता, आस्ति की गुणवत्ता, ऋण संकेन्द्रण, परिचालनात्मक परिणामों, संबद्ध उधार, स्वामित्व के प्रोफाइल, नियंत्रण, प्रबंधन, चलनिधि और ब्याज दर जोखिमों का समावेश है। अप्रत्यक्ष विवरणियों का मूलभूत उद्देश्य बैंकों के स्थल पर जाकर परीक्षण किए जाने के बीच की अवधि में वित्तीय स्थिति का अनुमान लगाना तथा दुर्लभ पर्यवेक्षी संसाधनों के आवंटन हेतु प्राथमिकताएं तय करना होता है।

10.107 वाणिज्य बैंकों के संबंध में रिज़र्व बैंक की वर्तमान पर्यवेक्षी रणनीति स्थल पर पर्यवेक्षण के 'कैमेल्स' मॉडल, जो बैंकों की वित्तीय स्थिति के वार्षिक मूल्यांकन की एक वार्षिक कार्यविधि है, को जारी रखते हुए भी पर्यवेक्षी प्रक्रिया को यथासंभव एक निरंतर आधार वाली प्रक्रिया बनाना है। इस प्रक्रिया को एक निरंतर आधार वाली प्रक्रिया का रूप देने के लिए बैंकों से यह अपेक्षित है कि वे जोखिम भारित आस्तियों, चलनिधि की स्थिति, बड़े एक्सपोजरों और अनर्जक आस्तियों की तुलना में उनकी पूंजी पर्याप्तता की स्थिति के संबंध में एक विन्यस्त आरूप में तिमाही तथा कुछ मामलों में मासिक विवरणियां प्रस्तुत करें। इन विवरणियों को विश्लेषित किया जाता है और पर्यवेक्षी मुद्दों को उन पर यथा-उपयुक्त कार्रवाई करने हेतु बैंकों को सूचित किया जाता है। इन आंकड़ों और विश्लेषण से उद्भूत टिप्पणियों का उपयोग निरीक्षण दल द्वारा बैंकों के प्रधान कार्यालय अथवा कॉरपोरेट कार्यालय का निरीक्षण करते समय निविष्टि के रूप में किया जाता है।

## क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के लिए विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचा

10.108 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अधिनियम, 1976 के तहत भारत सरकार की अधिसूचना द्वारा की गई है। इस प्रकार इन बैंकों के लिए बैंकिंग कारोबार करने हेतु रिज़र्व बैंक से किसी प्रकार के लाइसेंस की आवश्यकता नहीं होती। इन बैंकों की पूंजी का अंशदान केन्द्र सरकार, राज्य सरकार और प्रायोजक बैंक द्वारा 50:15:35 के अनुपात में किया जाता है। जबकि स्वयं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक के लिए किसी लाइसेंस की आवश्यकता नहीं होती, तथापि शाखाएं खोलने के लिए रिज़र्व बैंक से लाइसेंस की आवश्यकता पड़ती है। इन बैंकों के विनियमन का अधिकार बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 और भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 के अधीन रिज़र्व बैंक में निहित शक्तियों की हैसियत से रिज़र्व बैंक में ही निहित है। इन बैंकों के पर्यवेक्षण का दायित्व रिज़र्व बैंक को प्राप्त इसी प्रकार की शक्तियों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 35(6) के तहत राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) को सौंपा गया है।

10.109 जबकि आय के निर्धारण और आस्ति के वर्गीकरण से संबंधित मानदंड क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों पर ठीक उसी प्रकार लागू होते हैं, जैसे कि वाणिज्य बैंकों पर, वहीं अब तक पूंजी पर्याप्तता से संबंधित मानदंडों को उन पर नहीं लागू किया गया है। हालांकि, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के लिए 31 मार्च 2008 को समाप्त वर्ष से उनकी पूंजी पर्याप्तता को उनके तुलनपत्रों में प्रकट करना आवश्यक है। देशी वाणिज्य बैंकों द्वारा प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र को दिए जाने वाले ऋणों के 40 प्रतिशत की तुलना में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा उनके अग्रिमों का 60 प्रतिशत प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र को दिया जाना अपेक्षित है। हालांकि, इन मानदंडों को पूरा न कर पाने के लिए किसी प्रकार के दंड का प्रावधान नहीं है।

## शहरी सहकारी बैंकों के लिए विनियामक एवं पर्यवेक्षी ढांचा

10.110 1 मार्च 1966 से बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 के प्रावधानों को विस्तारित करते हुए अन्य सहकारी बैंकों के साथ ही शहरी सहकारी बैंकों को रिज़र्व बैंक को विनियामक परिधि में ला दिया है। सांविधिक प्रावधानों के अनुसार, जबकि नए बैंक/शाखाएं आरंभ करने हेतु लाइसेंस जारी किए जाने, ब्याज दरों से संबंधित मामलों, ऋण नीतियों, निवेशों, विवेकसम्मत एक्सपोजर मानदंडों आदि जैसी बैंकिंग से संबंधित गतिविधियों को रिज़र्व बैंक द्वारा विनियमित एवं पर्यवेक्षित किया जाना है, वहीं निगमन, पंजीकरण, प्रबंधन, समामेलन, पुनर्गठन अथवा परिसमापन जैसे मुद्दों से संबंधित शक्तियों का प्रयोग संबंधित राज्य के सहकारी सोसाइटी अधिनियम के अनुसार संबंधित राज्य की सहकारी सोसाइटी के रजिस्ट्रार तथा बहु-राज्यीय बैंकों के मामले में केन्द्रीय रजिस्ट्रार द्वारा किया जाएगा।

10.111 शहरी सहकारी बैंकों के लिए वर्तमान विनियामक प्रणाली मार्च 2005 में जारी 'विज़न प्रलेख' पर आधारित है, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ जमा-स्तर और परिचालन क्षेत्र के आधार पर टियर I और टियर II के रूप में श्रेणीकृत शहरी सहकारी बैंकों के एक दुतरफा विभेदीकृत विनियामक ढांचे का प्रावधान है। शहरी सहकारी बैंकों के विनियामक एवं पर्यवेक्षी ढांचे को युक्तिपरक बनाने के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उन्हें

टियर I बैंकों (यूनिट बैंकों, यथा-एक ही जिले के भीतर शाखा/शाखाएं रखने वाले 100 करोड़ रुपये तक जमाराशियों वाले बैंकों) और टियर II बैंकों (अर्थात अन्य सभी शहरी सहकारी बैंकों) के रूप में वर्गीकृत किया गया था। जबकि टियर I और टियर II, दोनों ही प्रकार के बैंकों पर एक जैसी ही पूंजी पर्याप्तता अपेक्षा तथा एक्सपोजर मानदंडों से संबंधित विवेकसम्मत दिशानिर्देश लागू होते हैं, वहीं टियर I वाले शहरी सहकारी बैंकों पर अपेक्षाकृत कठोर ऋणगत क्षति मानदंड, मानक अग्रिमों पर प्रावधानीकरण संबंधी अपेक्षाएं, वाणिज्यिक स्थावर संपदा अग्रिमों पर बढ़े हुए जोखिम भार तथा उनके तुलन पत्रों में प्रकटन संबंधी अपेक्षाएं लागू होती हैं।

10.112 'विजन प्रलेख' में रिज़र्व बैंक और अन्य विनियामकों, अर्थात राज्य सरकारों और सहकारी सोसाइटियों के केन्द्रीय रजिस्ट्रार के बीच 'सहमति ज्ञापन' (एमओयू) का प्रावधान भी है। उक्त सहमति ज्ञापन रिज़र्व बैंक और राज्य सरकार/सहकारी सोसाइटियों के केन्द्रीय रजिस्ट्रार के बीच यह सुनिश्चित करने के लिए एक कार्यपरक व्यवस्था होती है कि शहरी सहकारी बैंकों पर नियंत्रण में दोहरेपन से उद्भूत होने वाली कठिनाइयों से यथोचित रूप से निपटा जाए और उनका हल/निराकरण निकाल लिया जाए। उक्त सहमति ज्ञापन के अनुसार, संभाव्य रूप से व्यवहारक्षम शहरी सहकारी बैंकों के पुनः प्रवर्तन तथा गैर-व्यवहारक्षम शहरी सहकारी बैंकों के रुकावटरहित निष्कासन हेतु एक समयबद्ध कार्य-योजना की पहचान करने तथा उसे तैयार करने हेतु रिज़र्व बैंक शहरी सहकारी बैंकों के लिए राज्यस्तरीय कार्य बल का गठन करता है, जिसमें रिज़र्व बैंक, राज्य सरकार और शहरी सहकारी बैंकिंग क्षेत्र से प्रतिनिधियों का समावेश होता है। उक्त सहमति ज्ञापन में शहरी सहकारी बैंकों में मानव संसाधन विकास और सूचना प्रौद्योगिकी से संबंधित पहलों को प्रोत्साहित करने और सुगम बनाने के भी प्रयास किए जाते हैं। अब तक 1,597 शहरी सहकारी बैंकों के समावेश वाली उन्नीस राज्य सरकारों ने रिज़र्व बैंक के साथ सहमति ज्ञापन हस्ताक्षरित किए हैं, जिसके माध्यम से शहरी सहकारी बैंकों की कुल संख्या के 90.0 प्रतिशत का समावेश हो जाता है जो उस क्षेत्र की 95 प्रतिशत जमाराशियों का धारण करते हैं।

10.113 बैंकों की वित्तीय स्थितियों के आधार पर उपयुक्त पर्यवेक्षी उपाय करने के उद्देश्य से बैंकों को पूंजी पर्याप्तता, अनर्जक आस्तियों के स्तर, लाभ/हानि के इतिवृत्त और रिज़र्व बैंक[3] द्वारा शहरी सहकारी बैंकों की लेखा बहियों के सांविधिक निरीक्षणों अथवा छानबीन के आधार पर चार श्रेणियों में यथा - श्रेणी I, II, III, और IV में वर्गीकृत किया गया है। जहां तक श्रेणी II, III और IV वाले बैंकों के बारे में रिज़र्व बैंक द्वारा किए जाने वाले उपायों का सम्बन्ध है, उन्हें मोटे तौर पर दो श्रेणियों में समूहित किया जा सकता है; (क) वे उपाय जिनका लक्ष्य बैंकों की वित्तीय स्थिति को सुदृढ़ बनाना होता है, और (ख) वे उपाय जिनका लक्ष्य आस्तियों एवं देयताओं की वृद्धि को सीमित रखना होता है। शहरी सहकारी बैंकों के स्थल पर निरीक्षणों की आवधिकता निम्नानुसार होती है ; अनुसूचित शहरी सहकारी बैंकों के मामले में वर्ष में एक बार; श्रेणी III/IV के गैर-अनुसूचित शहरी सहकारी बैंकों के मामले में वर्ष में एक बार; श्रेणी II वाले बैंकों के मामले में 18 माह में एक बार और अन्य बैंकों के मामले में 2 वर्ष में एक बार। सहमति ज्ञापन हस्ताक्षरित न करने वाले राज्यों में स्थित श्रेणी III और IV वाले बैंकों के बारे में पर्यवेक्षी कार्रवाई करते समय श्रेणीकृत पर्यवेक्षी दृष्टिकोण वाली प्रणाली अपनाई जाती है। रिज़र्व बैंक ने समग्र शहरी सहकारी बैंकिंग प्रणाली की समग्र शक्तियों और सुदृढ़ता का मूल्यांकन करने हेतु कैमेल्स कार्यप्रणाली के आधार पर एक पर्यवेक्षी श्रेणी निर्धारण प्रणाली का भी विकास कर रखा है।

## V. विनियामक एवं पर्यवेक्षी चुनौतियां

10.114 बैंकों के विनियमन और पर्यवेक्षण के पीछे निहित मूलभूत उद्देश्य वित्तीय प्रणाली की सुरक्षा एवं सुदृढ़ता को बढ़ावा देना रहा है। भारत में बैंकिंग क्षेत्र में कारोबार की मात्रा और उसके विस्तार की दृष्टि से तीव्र वृद्धि परिलक्षित हुई है। बैंक जिन उत्पादों का लेन-देन किया करते हैं, उनकी श्रेणी में भी महत्त्वपूर्ण रूप से विस्तार हुआ है। देशी बैंकिंग प्रणाली अधिकाधिक रूप से वैश्विक बैंकिंग प्रणाली से एकीकृत होती जा रही है। बैंकों और अन्य वित्तीय सेवा प्रदाताओं के बीच भेद भी अधिकाधिक रूप से मिटते जा रहे हैं। ये सब भारत में बैंकिंग विनियामक के समक्ष नयी चुनौतियां प्रस्तुत कर रहे हैं।

### विस्तारशील बैंकिंग क्षेत्र द्वारा प्रस्तुत पर्यवेक्षी चुनौतियां

10.115 पिछले वर्षों में हुए क्रमिक अविनियमन, सीमा-पार के लेन-देनों और वैश्वीकरण, उत्पादों एवं सेवाओं की अपेक्षाकृत व्यापक श्रेणियों तथा प्रौद्योगिकी एवं संचार में सुधारों ने बैंकों के तुलनपत्र और तुलनपत्रेतर, दोनों ही प्रकार के परिचालनों में कतिपय परिवर्तन ला दिए हैं। भारत में बैंकों के तुलनपत्र का आकार, विशेषतः पिछले कुछ वर्षों से महत्त्वपूर्ण रूप से विस्तृत हो गया है (चार्ट X.1)।

[3] पर्यवेक्षी चिंताओं से मुक्त सुदृढ़ बैंकों को श्रेणी I वाले बैंकों के रूप में वर्गीकृत किया जाता है । निम्नलिखित में से किसी भी एक मानदंड को पूरा करने वाले बैंकों को श्रेणी II (समस्यापूर्ण बैंकों) के तहत वर्गीकृत किया जाता हैः निर्धारित मानदंडों से 1 प्रतिशत कम का सीआरएआर, अथवा (ii) 10 प्रतिशत या उससे अधिक किन्तु 15 प्रतिशत से कम की निवल अनर्जक आस्तियां, अथवा (iii) पिछले वित्तीय वर्ष में निवल हानि वहन की हो अथवा (iv) पिछले वित्तीय वर्ष में सीआरआर/एसएलआर के रख-रखाव में चूक और/अथवा चालू वर्ष के दौरान सीआरआर/सीएलआर के रख-रखाव में कमोबेश निरंतर चूक हुई हो । निम्नलिखित में किन्हीं भी दो शर्तों को पूरा करने वाले बैंकों को श्रेणी III के तहत वर्गीकृत किया जाता है : (i) न्यूनतम निर्धारित स्तर की तुलना में 75 प्रतिशत से कम किन्तु अपेक्षित स्तर के 50 प्रतिशत या उससे अधिक का सीआरएआर, अथवा (ii) 10 प्रतिशत या उससे अधिक किन्तु 15 प्रतिशत से कम की निवल अनर्जक आस्तियां; अथवा (iii) पिछले तीन वर्षों में से दो वर्षों में निवल हानि उठायी हो। निम्नलिखित शर्तें पूरी करने वाले बैंकों को श्रेणी IV के तहत वर्गीकृत किया जाता है : (i) निर्धारित स्तर के 50 प्रतिशत से कम सीआरएआर, तथा (ii) निवल अनर्जक आस्तियां 15 प्रतिशत या अधिक हों अथवा पिछले तीन वर्षों में लगातार निवल हानि उठायी हो।

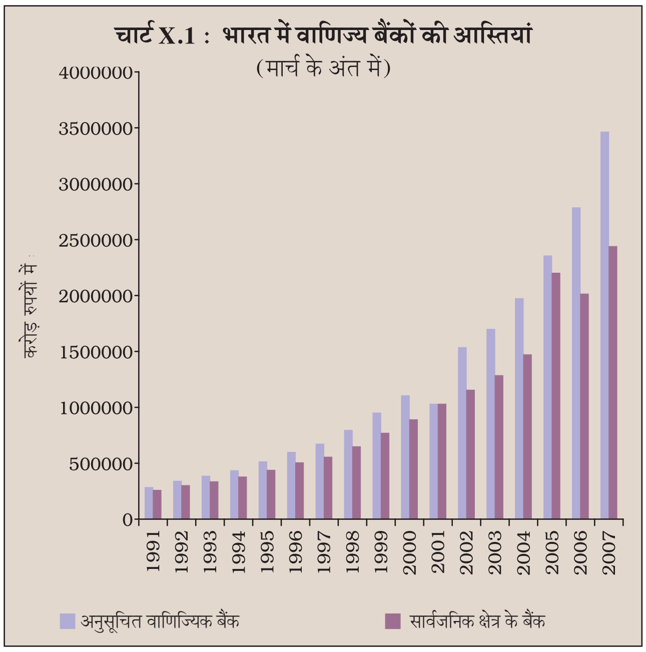


10.116 आस्तियों के साथ ही अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के तुलनपत्रेतर एक्सपोज़र में भी पिछले वर्षों में तीव्र वृद्धि हुई है (चार्ट X.2)।

10.117 बैंकों के समक्ष उपस्थित होने वाली जोखिमें भी कई गुना बढ़ गयी हैं। बैंकों ने कायिक रूप से शाखा नेटवर्क की दृष्टि से और गैर-कायिक रूप से अन्य पक्ष सेवा-प्रदाताओं के रूप में अपनी उपस्थित भौगोलिक रूप से विस्तृत कर ली है। प्रौद्योगिकी और दूरसंचार की सहायता पाकर बैंक इंटरनेट, मोबाइल कनेक्टिविटी और एटीएम के माध्यम से ऐसे स्थानों पर भी लाखों ग्राहकों तक पहुंचने में समर्थ हो गए हैं, जहां उनकी वास्तविक उपस्थिति संभव नहीं हो सकती थी। एटीएम की संख्या में 53.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई है और वह मार्च 2005 के अंत के 17,642 से बढ़कर मार्च 2007 के अंत में 27,088 हो गई है। बैंकों की बहियों में जुड़ने वाले प्रत्येक नये ग्राहक के साथ, चाहे वह देयता पक्ष में हो या फिर आस्ति पक्ष में अथवा किसी न किसी प्रकार की वित्तीय सेवा हेतु संविदाओं के माध्यम से तुलनपत्रेतर क्रिया-कलाप में ही क्यों न हो, बैंकों के कारोबार का विस्तार हुआ है। बैंकों द्वारा अन्य बातों के साथ-साथ लेन-देनों के संसाधन, डेटा संसाधन, प्रलेखों के संसाधन एवं भंडारण, ऋण आवेदनों के संसाधन तथा आंतरिक लेखा-परीक्षा हेतु तीसरे पक्षकार के रूप में सेवा-प्रदाताओं की सेवाओं का अधिक से अधिक उपयोग किया जाने लगा है। भारतीय बैंक विदेशों में भी उद्यमशील हो रहे हैं तथा वे अधिक से अधिक देशों में अपने कार्यालय/शाखाएं खोल रहे हैं। बैंकों ने विदेशों में शाखाएं खोलने हेतु राष्ट्रीय सीमाओं के उस पार भी अपना विस्तार किया है। कतिपय विदेशी बैंक भारत में कार्यालय स्थापित करने की इच्छा प्रदर्शित कर रहे हैं। भौगोलिक विस्तार के अलावा, बैंकों ने उत्पाद नवोन्मेषों, उत्पादों की प्रति-बिक्री और वित्तीय संगुट के माध्यम से वित्तीय प्रणाली के सभी खण्डों में अपना विस्तार किया है। अधिक से अधिक बैंकों द्वारा अपेक्षाकृत नये क्षेत्रों में विस्तार किए जाने के फलस्वरूप बैंकों के कारोबार और जोखिम प्रोफाइलों में भी परिवर्तन आ रहा है। बैंकों द्वारा स्थापित की गई सहायक कम्पनियों की संख्या, जो मार्च 1998 के अंत में 37 थी, तेज़ी से बढ़कर मार्च 2008 के अंत में 131 तक पहुंच गई है। इन दिनों बैंक नये उत्पादों / नवोन्मेषी वित्तीय-लिखतों की भी शुरुआत करने लगे हैं। समस्त भौगोलिक स्थानों और उत्पादों में हुए बैंकों के विस्तार के कारण न केवल उनके परिचालनों में जटिलता आई है, अपितु उनके परिचालन कुछ हद तक दुर्बोध होते दिखने लगे हैं।

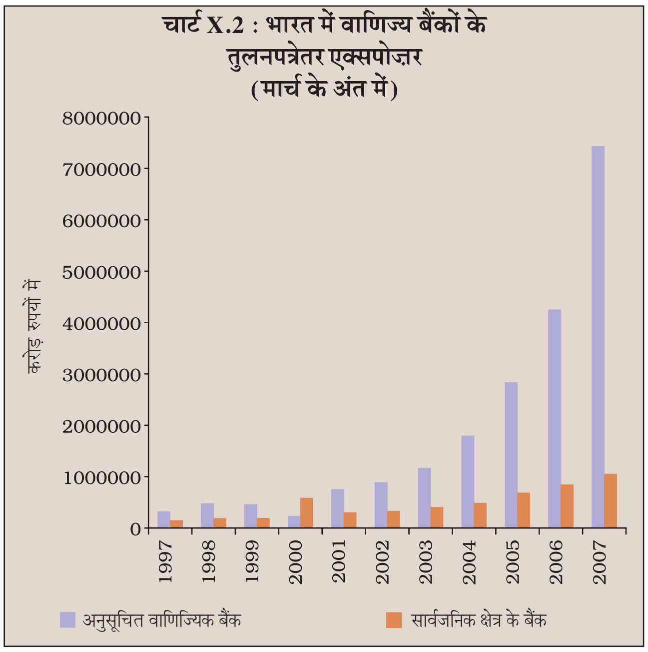


10.118 बैंकिंग क्षेत्र में हुए द्रुत विस्तार से रिज़र्व बैंक/ वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के समक्ष चुनौती उपस्थित हो गई है। सीमित पर्यवेक्षी संसाधनों को ध्यान में रखते हुए विस्तारशील बैंकिंग क्षेत्र पर पर्यवेक्षण रखा पाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य बन गया है। यह विशेषतः इसलिए है कि रिज़र्व बैंक सभी बैंकों का 'कैमेल्स' मॉडल के तहत निरीक्षण करता है तथा यह प्रत्येक बैंक की प्रत्येक निरीक्षण चक्र में पर्याप्त संख्या में शाखाओं, नियंत्रक कार्यालयों एवं अन्य परिचालन इकाइयों का अत्यधिक व्यापक विधि से यथासंभव सीमा तक 'कैमेल्स' मॉडल की पुनरावृत्ति करते हुए निरीक्षण करता है।

10.119 विस्तारशील आकार के अलावा, परिचालनों में बढ़ती जटिलता भी चुनौती खड़ी कर देती है। परम्परागत कौशलों के अतिरिक्त, पर्यवेक्षक के लिए वित्तीय जोखिम प्रबन्धन के सम्बन्ध में विशिष्टीकृत कौशल भी रखना आवश्यक हो जाता है। बढ़ती जटिलता के कारण पर्यवेक्षकों से यह अपेक्षित है कि वे बैंकों द्वारा विकसित/अपनाए गए विविध प्रकार के जोखिम मॉडलों का परीक्षण/ वैधीकरण करने के मात्रात्मक कौशल रखें। पर्यवेक्षी संसाधनों, जो पहले से ही दुर्लभ है, की मांग बासेल II के पूर्णतया लागू हो जाने के बाद और भी बढ़ने की आशा है। रिज़र्व बैंक और बैंकों, दोनों ही के द्वारा परिष्कृत कौशलों की आवश्यकता के कारण पर्यवेक्षक और

उद्योग के बीच कुशल व्यक्तियों की प्राप्ति के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ जाने की आशा है। अतएव कुशल कर्मचारियों को आकर्षित करना और उन्हें टिकाए रखना एक ऐसी महत्त्वपूर्ण चुनौती बन जाएगी, जिससे रिज़र्व बैंक को निपटना आवश्यक हो जाएगा।

10.120 बढ़ी हुई प्रतिस्पर्धा को ध्यान में रखते हुए पर्यवेक्षक को इस दृष्टि से कठिन विकल्प अपनाने की आवश्यकता होगी कि वर्धित कौशल वाले पर्यवेक्षकों को खो बैठने की बढ़ती हुई संभाव्यता को ध्यान में रखते हुए उसे किस प्रकार के कर्मचारी हेतु और किस कौशल विशेष में कितना निवेश करना चाहिए। कुछ पर्यवेक्षी एजेंसियों ने अत्यधिक कुशल लोगों को न नियुक्त करके कौशल विकास की संभाव्यता रखने वाले लोगों को नियुक्त करने की रणनीति विकसित कर रखी है। जैसे योजना का परिचालन आरंभ होता है, वे साधारण स्नातकों को भर्ती कर लेते हैं, किन्तु बाद में उन्हें गठजोड़ों के माध्यम से विश्वविद्यालयों से व्यावसायिक योग्यता प्राप्त करने हेतु प्रोत्साहित एवं वित्तपोषित करते हैं। जहाँ इस व्यवस्था से वे अड़चनें समाप्त हो जाती हैं, जिनका पर्यवेक्षकों को खुले बाज़ार से कौशलों की भर्ती में अन्यथा सामना करना पड़ सकता है, वहीं आगे चलकर अर्हताप्राप्त कार्मिकों को बाज़ार में खो बैठने की जोखिम तब भी वस्तुत: बनी रहती है।

10.121 हालांकि ये हल अपनाए जाने की दृष्टि से आसान नहीं होते, क्योंकि सार्वजनिक नीति के तौर पर एजेन्सियों को इस प्रकार की व्यवस्था करने हेतु कानूनी और राजनीतिक अधिदेश की आवश्यकता होती है। इसके अलावा, बाहर से लाए जाने वाले कर्मचारियों को विनियामक की कार्य-संस्कृति अपनानी होती है तथा उनके द्वारा विनियामक उद्देश्यों को समझे जाने और आवश्यकता के अनुरूप विनियामक कार्य-निष्पादन प्रस्तुत करने से पहले उन्हें विनियामक के अधिकार-क्षेत्र की जानकारी प्राप्त करनी होती है। इसके अलावा, भले ही वह अल्प-काल हेतु क्यों न हो, बाहरी संसाधनों को प्रवेश कराना अपने आप में एक महंगी प्रक्रिया होती है। उपर्युक्त के अतिरिक्त, जहाँ तक पर्यवेक्षी उद्देश्यों का सम्बन्ध है, इस व्यवस्था के परिणामों की वास्तविक उपादेयता का सिद्ध होना अब भी बाकी ही है।

10.122 विश्व भर में कई एक अधिकार क्षेत्रों ने बढ़ते हुए पर्यवेक्षी उत्तरदायित्वों की तुलना में संसाधनों के अभाव को दूर करने हेतु पर्यवेक्षी प्रक्रियाओं को युक्तिपरक बनाने के प्रयास किए हैं । अक्तूबर 2006 में जारी किए गए बैंक पर्यवेक्षण के मूलभूत सिद्धान्तों में सिद्धान्त 24 के तहत यह सुस्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया है कि पर्यवेक्षी संसाधनों का आबंटन पर्यवेक्षित संस्थाओं की जोखिम प्रोफाइल के अनुसार किया जाना चाहिए। पर्यवेक्षण के जोखिम-आधारित दृष्टिकोण का लक्ष्य बैंकों के बीच उनकी जोखिम प्रोफाइल के अनुसार विभेद करना तथा पर्यवेक्षी ध्यान दिए जाने तथा पर्यवेक्षी साधनों को लागू किए जाने की मात्रा निर्धारित करने हेतु प्रेरित करना होता है। विशिष्ट रूप से कहा जाए तो जोखिम आधारित पर्यवेक्षण (आरबीएस) व्यापक, समरूप, वार्षिक लेन-देनों के सत्यापन एवं आस्ति के मूल्यांकन पर संकेंद्रित स्थल पर निरीक्षण से हटकर पर्यवेक्षक की जोखिम अनुभूतियों द्वारा अभिज्ञात परिचालन के लक्ष्यांकित क्षेत्रों पर संकेंद्रित पर्यवेक्षण के भेदमूलक चक्र पर आधारित होता है। इस पर्यवेक्षी प्रक्रिया की एक अन्य विशेषता यह होती है कि यह अधिकांशतया पर्यवेक्षित संस्था की वित्तीय स्थिति अथवा सुदृढ़ता के मूल्यांकन को तब तक अपना लक्ष्य नहीं बनाता, जब तक कि इस आशय की सुस्पष्ट परिस्थितियां एवं सूचनाएं न मौजूद हों, जो संस्था की स्थिति में महत्त्वपूर्ण खराबी का संकेत देती हों। अत: सामान्यतया, पर्यवेक्षण अधिकांशतः परीक्षण किए जा रहे क्षेत्र के आधार पर अलग-अलग श्रेणियों के लेन-देन परीक्षण के कुछ नमूनों के साथ प्रबंधन एवं नियंत्रण प्रक्रियाओं तक ही सीमित होता है। कई एक क्षेत्राधिकारों में संसाधनों का इष्टतम आबंटन प्राप्त करने के लिए जोखिम आधारित पर्यवेक्षण (आरबीएस) मॉडल अपनाया गया है।

10.123 भारत में, जहाँ परंपरागत कैमेल्स प्रक्रिया अब भी उपयोग में लाई जा रही है, वहीं जोखिम-उन्मुख दृष्टिकोण के माध्यम से पर्यवेक्षी संसाधनों के अधिक युक्तिसंगत आबंटन की दिशा में निश्चित झुकाव भी आया है। वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के मार्गदर्शन में रिज़र्व बैंक जोखिम आधारित पर्यवेक्षण (आरबीएस) को अपनाने का प्रयास कर रहा है। इस प्रक्रिया में उसकी जोखिमपूर्णता का मूल्यांकन करने के उद्देश्य से पर्यवेक्षित संस्था में जोखिम प्रबंधन प्रणाली की उसकी व्यावसायिक रणनीति और एक्सपोज़रों की तुलना में उपयुक्तता की निरंतर निगरानी और मूल्यांकन शामिल होते हैं। पर्यवेक्षण के कैमेल्स मॉडल के साथ जोखिम आधारित पर्यवेक्षण का समानांतर प्रायोगिक प्रचलन भी जारी है। बैंकों की तैयारी का पता लगा लिए जाने के बाद अब तक जोखिम आधारित पर्यवेक्षण को 27 बैंकों के मामलों में लागू कर दिया गया है। जोखिम आधारित पर्यवेक्षण के प्रायोगिक प्रचलन के माध्यम से प्राप्त अनुभव के आधार पर उस मॉडल की समीक्षा करने का निर्णय लिया गया है, जिसका पर्यवेक्षी प्रक्रिया को जोखिम आधारित बनाने के लिए भारत में उपयोग किए जाने का प्रयास किया गया था। तदनुसार, अन्य देशों में कार्यरत प्रणालियों का अध्ययन करने तथा जोखिम आधारित पर्यवेक्षी प्रक्रिया हेतु भारतीय संदर्भ में एक उपयुक्त ढांचे की सिफारिश करने के लिए एक आंतरिक कार्यदल गठित किया गया है। परिपक्व बाज़ारों की वित्तीय प्रणालियों में हुई इंग्लैंड के नॉर्दर्न रॉक संकट सहित हाल ही की घटनाओं ने उन देशों में अपनाई गई पर्यवेक्षी प्रक्रियाओं की प्रभावोत्पादकता के बारे में मुख्य प्रश्न उठा दिया है। इसके अलावा, एक अधिक मूलभूत प्रश्न जो उभर कर सामने आया है और जिसने पर्याप्त वाद-विवाद को जन्म दिया है, वह यह है कि क्या बैंकिंग पर्यवेक्षण के लिए जोखिम-आधारित दृष्टिकोण का 'एक ही आकार सभी के लिए अनुकूल' मॉडल सभी देशों के लिए उचित होगा। वास्तव में, संशोधित मूलभूत सिद्धान्तों में इस मुद्दे का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है तथा जोखिम आधारित पर्यवेक्षण का उल्लेख मात्र एक सिद्धांत के रूप में इस टिप्पणी के साथ किया गया है कि पर्यवेक्षण के जोखिम आधारित दृष्टिकोण के लिए कोई सर्व स्वीकार्य मॉडल नहीं है। वर्तमान समय में, रिज़र्व बैंक स्वयं अपनी उन पर्यवेक्षी प्रक्रियाओं का पुनरावलोकन कर रहा है जो पिछले कई वर्षों में विकसित हुई हैं। एक प्रारंभिक मूल्यांकन से पता चलता है कि भारत को जोखिम-उन्मुख पर्यवेक्षी प्रक्रिया के लिए उसकी सामाजिक सांस्कृतिक और आर्थिक स्थितियों के अनुकूल स्वयं अपना दृष्टिकोण विकसित करना होगा।

10.124 बैंकिंग प्रणाली में जोखिम प्रबन्धन मानकों, पर्यवेक्षी ढांचे सहित जोखिम अभिविन्यास के विकास की स्थिति को ध्यान में रखते हुए इस दृष्टिकोण को अत्यधिक क्रमिक रूप से लागू करना होगा। उन्नत देशों के मॉडलों की कुछ विशेषताओं को स्वीकार कर पाना भी कठिन है। उदाहरण के लिए उन्नत देशों के मॉडल में संसाधनों के इष्टतम उपयोग के लिए कुछ कम जोखिम वाले बैंकों के स्थल पर पर्यवेक्षण न किए जाने अथवा स्थल पर जांच के बजाय स्थल पर दौरों की परिकल्पना की गई है। इस प्रकार के विभेदन इस आधार पर किए जाते हैं कि कुछ बैंकों की वित्तीय स्थिति का पता लगाने के लिए उनका नेमी तौर पर बार-बार मूल्यांकन किए जाने की आवश्यकता नहीं है। यह रणनीति भारत में दो कारणों से इष्टतम समाधान नहीं हो सकती। एक, पूर्ववर्ती घटनाओं ने यह सिद्ध कर दिया है कि किसी बैंक की वित्तीय स्थिति में पर्यवेक्षी मूल्यांकन में यह पता लगने के कुछ ही दिन बाद तेज़ी से गिरावट आ सकती है कि बैंक की वित्तीय स्थिति अत्यधिक अच्छी है। जटिल उत्पादों, लीवरेज्ड एक्सपोज़रों तथा उन जटिल अंतर-सहलग्नताओं, जिन्हें बैंकों ने गैर-बैंकिंग क्षेत्र तथा वित्तीय क्षेत्र की अन्य संस्थाओं के साथ स्थापित कर रखे हैं, के कारण किसी बैंक को एकाएक भारी जोखिम उठानी पड़ सकती है तथा वे नकदी-रहित स्थिति में पहुंच सकते हैं, जो पुनः उन्हें शीघ्र ही दिवालिएपन की स्थिति में पहुंचा सकते हैं। इसलिए कम जोखिम वाले बैंकों अथवा अच्छी जोखिम प्रबंधन प्रक्रियाओं वाले अधिक जोखिम वाले बैंकों के सम्बन्ध में परिकल्पित सामान्य प्रक्रिया वाला मूल्यांकन भारत के लिए अनुकूल नहीं हो सकता। भारत में विकसित पर्यवेक्षी नीति (प्रत्यायोजित विधान) के साथ ही कानून रिज़र्व बैंक के लिए यह आवश्यक बना देते हैं कि वह सभी बैंकों की शोध क्षमता का मूल्यांकन उसी आवृत्ति / आवधिकता और गहनता से करे। दो, उन्नत देशों के मॉडल में उस राजनीतिक रूप से अधिदेशित पर्यवेक्षी प्रणाली की परिकल्पना की गई है जो शून्य विफलता वाली बैंकिंग प्रणाली की गारंटी नहीं देती। भारतीय स्थितियों में यह स्वीकार्य नहीं हो सकती।

10.125 यद्यपि, संसाधनों का जोखिम-आधारित आवंटन एक समाधान होता है, तथापि वह एकमात्र समाधान नहीं हो सकता। स्वचालित साधनों के माध्यम से तथा सूचना प्रौद्योगिकी संबंधी समाधानों का उपयोग करते हुए पर्यवेक्षण करना कई एक पर्यवेक्षकों को अभिनियोजित किए बिना ही अधिक प्रभावी और कम समय-साध्य हो सकता है। वास्तव में, जोखिम-आधारित पर्यवेक्षण के स्थलपरक (प्रत्यक्ष) अंश को अप्रत्यक्ष पर्यवेक्षण के माध्यम से प्रबलित किया जाता है। यह इस बात का एक विशिष्ट उदाहरण है कि प्रत्येक प्रक्रिया से जो परिणाम प्राप्त हो सकते हैं, उनकी अपेक्षा अधिक अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए पर्यवेक्षी प्रक्रियाओं को किस प्रकार आंतरिक रूप से एकीकृत किया जा सकता है (बॉक्स X.11)।

## वित्तीय संगुटों और पर्यवेक्षी ढांचे से संबंधित मुद्दे

10.126 भारत में बैंकों द्वारा विविधीकरण की प्रक्रिया की शुरुआत 1980 के दशक में उस समय सहायक/संबद्ध कंपनियों की स्थापना करते हुए की गई थी, जब बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 को बैंकों को गैर-परम्परागत कारोबार करने की अनुमति देने हेतु संशोधित किया गया। अन्य क्षेत्रों में भी इसी प्रकार के परिवर्तन हुए। पारस्परिक निधियों को प्रारंभ में 1980 वाले दशक के उत्तरार्ध में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा गठित किए जाने की अनुमति दी गई थी और उसके बाद 1990 वाले दशक के पूर्वार्ध में निजी क्षेत्रों को भी इसकी अनुमति दे दी गई। बीमा क्षेत्र को भी 1990 वाले दशक में निजी क्षेत्र के लिए मुक्त कर दिया गया। फलतः पिछले वर्षों में कई एक समूहों/वित्तीय संगुटों का आविर्भाव हो गया। चूंकि किसी समूह के गैर-बैंक सदस्य से किसी बैंक की स्थिरता को खतरा पैदा हो सकता है, रिज़र्व बैंक ने 2000 में यह अनिवार्य कर दिया कि मूल बैंक को उन सहायक कंपनियों को छोड़कर, जिन्हें लेखांकन मानक 21 के अंतर्गत अलग रखे जाने की अनुमति दी गई है, सभी सहायक कंपनियों को समेकित करना चाहिए। 2006 में, भारत में परिचालनरत विदेशी बैंक के मूल बैंक/समूह द्वारा प्रवर्तित गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों, जो विदेशी बैंक के मूल बैंक/समूह की सहायक कंपनी है, अथवा जिसमें मूल बैंक/समूह को प्रबंधन पर नियंत्रण प्राप्त हो, को समेकित पर्यवेक्षण की परिधि में ला दिया गया। इसके फलस्वरूप, संबंधित विदेशी बैंकों द्वारा समेकित विवेकसम्मत विवरणियां प्रस्तुत किया जाना तथा भारत में इस बैंक के समेकित परिचालनों हेतु निर्धारित विवेकसम्मत विनियमनों/मानदंडों का पालन किया जाना अपेक्षित है। भारत में परिचालनरत इन विदेशी बैंकों के लिए लेखांकन मानदंड 21 के तहत 'समेकित वित्तीय विवरण' तैयार करना आवश्यक नहीं है । वे सहायक कंपनियों के समेकन को लागू होने वाले लेखांकन मानक 21 के सिद्धांतों को अपनाते हुए समेकित विवेकसम्मत विनियमनों के उद्देश्यों के लिए गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को बैंक के भारतीय परिचालनों के साथ सिलसिलेवार आधार पर समेकित कर सकते हैं। समेकित पर्यवेक्षण बैंकिंग पर्यवेक्षण के प्रति व्यापक महत्त्व वाला होता है, जो उन सभी जोखिमों को ध्यान में रखते हुए जो बैंक को प्रभावित कर सकते हैं, इस बात का परवाह किए बिना कि इन जोखिमों को बैंक की बहियों में अथवा संबंधित संस्थाओं की बहियों में दर्शाया जाता है या नहीं, संपूर्ण समूह की शक्ति का मूल्यांकन करने का प्रयास करता है।

10.127 अन्तः समूह लेनदेनों और एक्सपोज़रों तथा विनियामक अंतरों से लाभ उठा लेने के उनके सामर्थ्य को ध्यान में रखते हुए वित्तीय संगुटों के विनियमन हेतु खंडित दृष्टिकोण में गंभीर परिसीमाएं थीं। अतएव, इन व्यापक पर्यवेक्षी मुद्दों का समाधान खोजने के उद्देश्य से भारत के तीन प्रमुख वित्तीय पर्यवेक्षकों, यथा - रिज़र्व बैंक, भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड और बीमा विनियामक एवं विकास प्राधिकरण ने व्यवस्थापरक रूप से महत्त्वपूर्ण वित्तीय मध्यवर्तियों के लिए एक विशेष निगरानी प्रणाली स्थापित करने का निर्णय किया। वित्तीय संगुटों के निगरानी ढांचे को भारत में जून 2004 में लागू किया गया। भारत में वित्तीय संगुटों के पर्यवेक्षण के दौरान हुए अनुभवों के आधार पर 2006-07 के दौरान वित्तीय संगुट निगरानी ढांचे को और भी परिष्कृत कर दिया गया। वित्तीय संगुटों की परिभाषा को भी संशोधित कर दिया। संशोधित परिभाषा के

## बॉक्स X.11
## पर्यवेक्षी कार्य-प्रणालियों का एकीकरण

पर्यवेक्षी साधनों में स्थूल और सूक्ष्म दोनों ही परिप्रेक्ष्यों से प्रत्यक्ष जाँच और परोक्ष निगरानी शामिल होते हैं। प्रत्यक्ष जांच विशेष रूप से विकासशील देशों में महत्त्वपूर्ण होती है, क्योंकि विकासशील देशों में वित्तीय संस्थाओं का दिवाला सामान्यतः ऋणगत हानियों के कारण निकलता है। ऋणगत हानियों की सामान्य रूप से उपयुक्त समझ और अनर्जक आस्तियों के लिए अतिरिक्त प्रावधानीकरण की पर्यवेक्षी मांग को आवश्यक बना देने वाले आस्ति की गुणवत्ता के मूल्यांकन का लक्ष्य प्रत्यक्ष जांच और सत्यापन के माध्यम से उत्तम रीति से प्राप्त किया जाता है। आस्ति की गुणवत्ता तथा किसी संस्था की स्थिति का निर्धारण करके बैंक पर्यवेक्षक नीति-निर्माताओं को वित्तीय प्रणाली की सुदृढ़ता के संबंध में महत्त्वपूर्ण सूचना उपलब्ध कराते हैं।

परंपरागत प्रत्यक्ष जाँच के साधन, जिन्हें सामान्यतया कई एक देशों में उपयोग में लाया जाता है, बैंकिंग विनियमनों और निदेशों पर ध्यान केन्द्रित रखते हैं। इसके फलस्वरूप, पर्यवेक्षी प्रलेखों में सुरक्षा और सुदृढ़ता के प्रति विवेकसम्मत चिंताओं को प्राय: कम करके बताया जाता है। ऐसे मामलों में भी, जहां पर्यवेक्षक सुरक्षा और सुदृढ़ता से संबंधित चिंताओं का समाधान करने का प्रयास करते हैं, जाँच प्रक्रिया में संभाव्य जोखिमों और बैंक द्वारा एक गतिशील परिवेश में जोखिमों को नियंत्रित किए जाने हेतु आंतरिक रूप से आवश्यक प्रबंधन प्रणाली का समाधान किए बिना किसी विशिष्ट तारीख को संस्था की स्थिति की सिर्फ एक झलक प्रस्तुत किए जाने की व्यवस्था है। उदाहरण के लिए परीक्षक किसी बैंक के ऋण संविभाग की स्थिति का निर्धारण कर सकते हैं, किन्तु उधार देने की उन नीतियों और परंपराओं का मूल्यांकन नहीं कर सकते, जिनके कारण ऋण से संबंधित समस्याएं पैदा होती हैं अथवा जिनके कारण भावी ऋण समस्याएं पैदा हो सकती हैं।

प्रत्यक्ष जाँच से संबंधित गतिविधियों की प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए पर्यवेक्षकों के लिए यह आवश्यक होगा कि वे कानूनों के पालन की जाँच करने के बजाय जोखिमों का मूल्यांकन करें। यह कार्य पूरा करने हेतु बैंक पर्यवेक्षकों के लिए एक ऊपर-से नीचे वाला ऐसा दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक होगा, जो निदेशक मंडल और कार्यपालक प्रबंधन द्वारा तैयार किए गए निदेशों और नीतियों पर बल देता है। अलग-अलग बैंकों की कारोबारी एवं रणनीतिक योजनाओं की समीक्षा करना तथा उद्देश्यों को पूरा करने की प्रबंधन की क्षमताओं का मूल्यांकन करना भी महत्त्वपूर्ण होता है। बैंकों को कमजोर, असुरक्षित अथवा अवैधानिक बैंकिंग परम्पराओं के विरुद्ध प्रथम रक्षा पंक्ति के रूप में स्वयं अपनी आंतरिक प्रबंधन प्रणालियां स्थापित और सुदृढ़ करने हेतु प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता है। प्रबंधन प्रणालियों में लिखित नीतियों और कार्यविधियों, सुव्यवस्थित आयोजना एवं बजटिंग, आंतरिक ऋण समीक्षा, अनुपालन प्रणालियों, आंतरिक और बाह्य लेखा-परीक्षा कार्यकलापों तथा आंतरिक नियंत्रणों का आवश्यक रूप से समावेश होना चाहिए।

चूंकि बैंक पर्यवेक्षकों का कार्य अलग-अलग बैंकों के प्रतिकूल वित्तीय प्रणाली की सुरक्षा और सुदृढ़ता सुनिश्चित करना तथा बैंकों के शेयरधारकों के विपरीत जमाकर्ताओं का संरक्षण करना होता है, पर्यवेक्षी गतिविधियों में प्रणाली के प्रति सर्वाधिक जोखिम वाले क्षेत्रों पर बल दिया जाना चाहिए, उदाहरण के लिए बड़ी वित्तीय संस्थाएं अथवा बैंक, जिनकी गतिविधियां संक्रामक सिद्ध हो सकती हैं। अलग-अलग बैंकों में दुर्लभ पर्यवेक्षी संसाधनों का कुशल उपयोग जांचपरक प्रयासों को सर्वाधिक जोखिम वाले क्षेत्रों पर लक्ष्यांकित कर के किया जाना चाहिए, उदाहरण के लिए आस्ति की गुणवत्ता, ब्याज दर जोखिम, विदेशी मुद्रा संबंधी कार्यकलाप आदि। जाँच में समेकित संस्था की स्थिति पर फोकस करना चाहिए, जिसे उन शाखाओं की जाँच कर के पूरा किया जाना चाहिए, जिनका संस्था की समग्र स्थिति पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता हो, जबकि शेष शाखाओं का मूल्यांकन नमूना आधार पर किया जा सकता है।

अधिकांश विकासशील देशों में लिखित परीक्षा की कार्यविधियां अपर्याप्त अथवा पूर्णतः न्यून होती हैं, ताकि जाँचकर्ता आवश्यक रूप से उसके अनुभव, जानकारी और कौशल पर निर्भर रहे। इसके फलस्वरूप, एक जांचकर्ता से दूसरे वाले में प्रत्यक्ष जांचों के संचालन में एकरूपता और सुसंगति का अभाव हो जाता है। लिखित परीक्षा कार्यविधि का अभाव नये कर्मचारियों को एक अनिवार्य प्रशिक्षण उपकरण से भी वंचित कर देता है। लिखित परीक्षा कार्यविधि का एक पूरक पहलू है किए गए कार्यों का प्रलेखीकरण। प्रलेखीकरण पर्यवेक्षकों द्वारा प्रस्तावित कानूनी प्रवर्तन कार्रवाइयों को समर्थन प्रदान करने की दृष्टि से भी आवश्यक हो सकता है।

परोक्ष निगरानी वास्तविक अथवा संभाव्य समस्याओं की समय-पूर्व चेतावनी देते हुए प्रत्यक्ष जाँच का पूरक तथा वित्तीय कार्य-निष्पादन पर निगरानी रखने तथा उसकी तुलना करने का एक साधन होती है। हालांकि, परोक्ष निगरानी को किसी विकासशील देश में पर्यवेक्षण के प्राथमिक साधन के रूप में प्रत्यक्ष जाँच के प्रतिस्थानी के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। सभी देशों में बैंकों द्वारा उपलब्ध कराई सूचना की गुणवत्ता और आंकड़ों की अखंडता का सत्यापन अवश्य कर लिया जाना चाहिए। विकासशील देशों में सूचना प्रायः अधूरी और अपर्याप्त होती है। प्रायः बैंकों के पास सूचना को समय पर और यथार्थपरक तरीके से तैयार करना सुनिश्चित करने के लिए आंतरिक लेखांकन एवं नियंत्रण प्रणालियां नहीं होतीं। अधिकांश विकासशील देशों में विवेकसम्मत रिपोर्टें, जो अधिकांश परोक्ष निगरानी कार्यकलापों का आधार बनती हैं, केवल चलनिधि, आरक्षित निधि की अपेक्षा के परिकलन और ऋण संबंधी दिशा-निर्देशों तक ही सीमित होती हैं। विश्लेषण में प्रायः केवल तुलनपत्र के कुछ अनुपातों के अनुपालन की जाँच का समावेश होता है। जोखिम का निर्धारण करने हेतु सूचना बहुत ही कम संगृहीत की जाती है। अत: अधिकांश मामलों में परोक्ष निगरानी पर प्रत्यक्ष जांच की पूरक व्यवस्था से अधिक के लिए निर्भर करना अनुपयुक्त होगा।

अनुसार वित्तीय संगुटों को किसी ऐसे समूह [4] से संबंधित कंपनियों के गुच्छ के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसकी कम से कम दो वित्तीय बाज़ार खंडों में महत्त्वपूर्ण उपस्थिति हो। बैंकिंग, बीमा, पारस्परिक निधि, जमाराशि स्वीकार करने वाली और जमाराशि न स्वीकार करने वाली गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनी को वित्तीय बाज़ार खंड माना जाता है। वित्तीय संगुट निगरानी ढांचे में एक ''निर्दिष्ट संस्था'' (अक्सर समूह की मूल

[4] समूह एक ऐसी व्यवस्था होती है, जिसमें दो या उससे अधिक एक-दूसरे से निम्नलिखित में से किसी प्रकार के संबंधों के माध्यम से शामिल होती है : सहायक कंपनियां - मूल (लेखांकन मानदंड 21 के अनुसार परिभाषित), संयुक्त उद्यम (लेखांकन मानदंड 23 के अनुसार परिभाषित), प्रवर्तक-प्रवर्तिती - संबंधित पक्ष (लेखांकन मानदंड 18 के अनुसार परिभाषित), सामान्य ब्राण्ड नाम तथा ईक्विटी शेयरों में 20 प्रतिशत का निवेश । समूह कंपनी - उपर्युक्त व्यवस्था में शामिल कोई भी कंपनी होती है ।

अथवा सर्वप्रमुख संस्था) की व्यवस्था है, जिसे समूह के प्रधान विनियामक को निर्धारित आरूप में आंकड़ों/सूचना के संग्रहण और प्रस्तुति का दायित्व सौंपा जाता है। इस समय बैंकिंग, प्रतिभूतियों और बीमा बाज़ार खंडों के तीन प्रधान विनियामक क्रमशः रिजर्व बैंक, भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड और विनियामक एवं विकास प्राधिकरण हैं। हालांकि आगे चलकर एक अन्य प्रधान विनियामक के रूप में पेंशन निधि विनियामक एवं विकास प्राधिकरण को भी सहयोजित किए जाने का प्रावधान है। वित्तीय संगुट निगरानी ढांचे में तीन संघटक शामिल होते हैं : (i) तिमाही वित्तीय संगुट विवरणी के माध्यम से अप्रत्यक्ष निगरानी (ii) प्रधान विनियामकों के कब्जे के अधीन वित्तीय संगुट के इस प्रकार के आंकड़ों और अन्य महत्त्वपूर्ण सूचनाओं, जिनसे कुल मिलाकर समूह के प्रभावित होने की संभावना हो, के विश्लेषण से उठने वाले मुद्दों की रिजर्व बैंक, भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड तथा बीमा विनियामक एवं विकास प्राधिकरण के सदस्यों के समावेश वाली तकनीकी समिति द्वारा आवधिक समीक्षा, और (iii) प्रधान विनियामक द्वारा अन्य विनियामकों के साथ बकाया मुद्दों/पर्यवेक्षी कार्यों पर वित्तीय संगुट के मुख्य कार्यपालक अधिकारी के साथ अर्ध-वार्षिक विचार-विमर्श करना।

10.128 जबकि समेकित पर्यवेक्षण ढांचा बैंकिंग समूह की समेकित वित्तीय स्थिति पर ध्यान संकेन्द्रित करता है, वहां संगुट निगरानी व्यवस्था दायरे और व्याप्ति की दृष्टि से अपेक्षाकृत व्यापक होती है। संगुट पर्यवेक्षण अन्य बातों के साथ-साथ अंतःसमूह लेन-देनों और एक्सपोजरों, समूह की कंपनियों के बीच वित्तीय और गैर-वित्तीय सहलग्नता और निदेशकों की सामान्यता का पता लगाता है। हालांकि, इस समय वित्तीय संगुटों के पर्यवेक्षण का कार्य आरंभ करने हेतु कोई विवेकसम्मत विनियमन मौजूद नहीं है । बैंक में ही एक आंतरिक दल वित्तीय संगुटों के विनियमन एवं पर्यवेक्षण हेतु विविध देशों में विद्यमान पर्यवेक्षी परंपराओं का अध्ययन कर रहा है। उनकी सिफारिशों की भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड तथा बीमा विनियामक एवं विकास प्राधिकरण के परामर्श से जाँच की जाएगी और संगुट निगरानी व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए उपयुक्त कार्रवाई आरंभ की जाएगी।

10.129 वित्तीय संगुटों के परिचालनों और उनके लिए विकसित की गई निगरानी व्यवस्था के संबंध में कतिपय मुद्दे उठे हैं। पहला, खण्डवार पर्यवेक्षण प्रणाली विनियामक/पर्यवेक्षी अंतरपणन का अवसर उपलब्ध कराती है। मुद्दा यह है कि खंडवार विनियामकों द्वारा अपनाए जाने वाले विवेकसम्मत विनियमनों/मानदंडों के प्रति दृष्टिकोण में भिन्नताओं का समाधान कैसे किया जाय। दूसरा, जहां समेकित पर्यवेक्षण संबंधी दिशा-निर्देश बैंकिंग समूहों पर उस स्थिति में लागू होते हैं जब बैंक मूल/नियंत्रक कंपनी हो, यह अपने विवेकसम्मत विनियमन से बीमा कंपनी को अलग कर देता है। समेकित पर्यवेक्षण भी पर्यवेक्षण के उद्देश्य से अंतःसमूह लेन-देनों और एक्सपोजरों पर ध्यान नहीं देता। इसके विपरीत संगुट निगरानी व्यवस्था अंतःसमूह लेन-देनों और एक्सपोजरों पर ध्यान देती है, किन्तु समूह-व्यापक विवेकसम्मत विनियमन की व्यवस्था नहीं की गई है।

10.130 तीसरा, संगुट पर्यवेक्षण के साथ सीमा-पार वाले महत्त्वपूर्ण पर्यवेक्षण मुद्दे भी जुड़े हुए हैं। प्रभावी पर्यवेक्षण हेतु बासेल के मुख्य सिद्धांतों के 23 से लेकर 25 तक सिद्धांतों में अन्य बातों के साथ-साथ इस बात पर बल दिया गया है कि समेकित बैंकिंग पर्यवेक्षण के एक अंग के रूप में बैंकिंग पर्यवेक्षकों को यह सुनिश्चित करने के उद्देश्य से कि ये कार्यकलाप सुरक्षित और युक्तियुक्त विधि से किए जाएं, उनकी विदेशों में स्थित शाखाओं, संयुक्त उद्यमों और सहयोगी कंपनियों सहित विश्वभर में उनके बैंकिंग संगठनों द्वारा संचालित कारोबार के सभी पहलुओं पर आवश्यक रूप से निगरानी रखनी चाहिए तथा उन पर उपयुक्त विवेकसम्मत मानदंड लागू करना चाहिए। यह मेजबान देश के पर्यवेक्षी प्राधिकारियों सहित इस प्रक्रिया से जुड़े विविध अन्य पर्यवेक्षकों के साथ संपर्क स्थापित करने और सूचना के आदान-प्रदान को अपरिहार्य कर देता है। कई एक अधिकार क्षेत्रों में आदान-प्रदान की जाने वाली सूचना के दायरे तथा उन स्थितियों को परिभाषित करने हेतु, जिनमें इस प्रकार की सूचनाओं का सामान्यतया आदान-प्रदान किया जाएगा, पर्यवेक्षकों के बीच द्विपक्षीय व्यवस्था की गई है।

10.131 हाल ही में उठा एक और मूलभूत मुद्दा है भारतीय स्थितियों में वित्तीय संगुटों का उपयुक्त ढांचा। वित्तीय संगुटों के परिचालनों से उठने वाले कई मुद्दे स्वयं वित्तीय संगुटों की मूलभूत विशेषता से उद्भूत होते हैं, क्योंकि वे बैंकिंग, बीमा और अन्य वित्तीय उत्पादों का उसी समूह के भीतर किन्तु भिन्न-भिन्न कॉरपोरेट ढांचों में लेन-देन करते हैं। इन कारोबारों को ध्यान में रखते हुए सितम्बर 2007 में रिजर्व बैंक ने 'बैंकिंग समूहों में नियंत्रक कंपनियां' विषय पर एक चर्चा आलेख जारी किया, जिसमें इस बात का उल्लेख था कि बैंक नियंत्रक कंपनी/वित्तीय नियंत्रक कंपनी मॉडल अपनाए जाने की संभावनाओं का पता लगाना उपयोगी होगा।

10.132 जैसा कि इसके पूर्व संकेत किया गया है, वित्तीय संगुटों की नियंत्रक कंपनी के ढांचे में सबसे कम जोखिम होती है तथा वह सहायक कंपनियों को दी जा रही सुरक्षा-पाश आर्थिक सहायता के लाभों से बचता है। विशुद्ध रूप से सुरक्षा और सुदृढ़ता तथा बैंकों और गैर-बैंकों को समान अवसर दिए जाने के दृष्टिकोण से नियंत्रक ढांचा अधिक आकर्षक होता है। हालांकि, संगठनात्मक लोच के दृष्टिकोण से मूल कंपनी-सहायक कंपनी ढांचा विविध प्रकार की वित्तीय सेवाएं प्रदान करने का एक अधिक कुशल तरीका सिद्ध हुआ है।

10.133 वर्तमान मूल कंपनी-सहायक कंपनी ढांचे के तहत, मूल कंपनी के लिए न केवल स्वयं उसके विस्तार अपितु सहायक कंपनियों में निवेश के लिए भी संसाधन जुटाना आवश्यक होता है। नियंत्रक कंपनी ढांचा बैंक की पूंजी को मुक्त कर देता है, क्योंकि वह (नियंत्रक कंपनी) विविध सहायक कंपनियों में सीधे ही निवेश करेगी। नियंत्रक कंपनी ढांचे में, जोखिम एक-दूसरे से उनकी हानियों एवं देयताओं के अनुपात में अलग कर लिए जाते हैं तथा समूह को विविध प्रकार के कार्यकलाप आरंभ करने की अनुमति होती है। अत: इससे वित्तीय सेवाओं का अपेक्षाकृत तीव्र विस्तार

सुविधाजनक हो जाता है। हालांकि, इसके साथ ही नियंत्रक कंपनी ढांचे की अपेक्षा विशेषतः छोटे प्रतिस्पर्धियों को विविधीकरण करने से हतोत्साहित कर सकती है। मूल कंपनी-सहायक कंपनी ढांचा अपने आप ही कुछ लागतों और प्रयासों के दोहराव अपरिहार्य बना देता है (उदाहरण के लिए कई एक निदेशक बोर्ड, कई एक स्थापनाएं और कई एक विज्ञापन)। अनुभवजन्य निष्कर्षों से यह भी पता चलता है कि शाखा बैंकिंग वाले संगठन (समन्वित ढांचा) महत्त्वपूर्ण रूप से अपेक्षाकृत अधिक समग्र कार्य-कुशलता प्रदर्शित करते हैं, जिससे यह भी पता लगता है कि पूर्णतः समन्वित ढांचे लागतों को नियंत्रित करने में नियंत्रक कंपनियों की तुलना में बेहतर ढंग से समर्थ होते हैं (बर्जर एवं अन्य, 1993)। हालांकि, पूर्णतः समन्वित ढांचे में उपस्थित होने वाली गंभीर जोखिमों को देखते हुए सहायक कंपनियों वाले ढांचे को लागू करने में लगने वाली अतिरिक्त लागत पूर्णतः न्यायोचित लगती है। संक्षेप में पूर्णतः समन्वित ढांचे की कार्य-कुशलता से होने वाले अभिलाभों को स्थिरता के लिए छोड़ दिया जाता है। हालांकि, मूल कंपनी-सहायक कंपनी ढांचे तथा नियंत्रक कंपनी ढांचे के बारे में यही बात कहना कठिन है। अतएव इस स्तर पर यह स्पष्ट नहीं है कि नियंत्रक कंपनी वाले ढांचे की अपेक्षा का वित्तीय क्षेत्र के विस्तार पर प्रभाव कैसा होगा।

10.134 भारत में वित्तीय संगुट वाला ढांचा भी जटिल है। बैंक-निर्देशित और गैर-बैंक निर्देशित, दोनों ही प्रकार के वित्तीय संगुट होते हैं। इनके अलावा, जहां कुछ बैंकों / गैर-बैंकों ने गैर-परंपरागत गतिविधियां आरंभ करने हेतु पूर्णतः स्वाधिकृत सहायक कंपनियां स्थापित कर रखी हैं, वहीं अन्यों ने प्रवर्तित सहायक कंपनियों में बहुसंख्यक हित धारित कर रखे हैं। कुछ वित्तीय संगुटों के मामले में प्रवर्तकों के पास प्रवर्तित संस्थाओं में केवल अल्पसंख्यक हित ही होते हैं, किन्तु वे सामान्य ब्राण्ड में हिस्सेदारी करते हैं। उदाहरण के लिए, एचडीएफसी, जो आवासीय कंपनी है, ने बैंकिंग और बीमा गतिविधियों के संचालन हेतु संबद्ध कंपनियां स्थापित कर रखी हैं। हालांकि, एचडीएफसी दो पूर्णतः स्वाधिकृत सहायक कंपनियों के साथ मिलकर अपने प्रवर्तित बैंक की 23.7 प्रतिशत इक्विटी धारण कर रखी है, किन्तु वह उसके साथ तथा उसकी सहायक बीमा कंपनी, जिसमें वह 79 प्रतिशत इक्विटी रखती है, के साथ भी सामान्य ब्राण्ड नाम में हिस्सेदारी करती है।

10.135 नियंत्रक कंपनी वाला ढांचा कतिपय अन्य मुद्दों को भी जन्म देता है । इस समय बैंकों और बीमा कंपनियों में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की सीमाएं लागू हैं। ये सीमाएं निजी बैंकों में 74 प्रतिशत और बीमा कंपनियों में 26 प्रतिशत हैं। यह स्पष्ट नहीं है कि नियंत्रक कंपनी में इस प्रकार के विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की सीमाएं किस प्रकार निर्धारित की जानी हैं। नियंत्रक कंपनी वाला ढांचा कराधान से संबंधित कुछ मुद्दों को भी खड़ा कर सकता है। उदाहरण के लिए कर सहायक कंपनी के स्तर पर देय होगा अथवा नियंत्रक कंपनी के स्तर पर। नियंत्रक कंपनी के स्तर पर कराधान से एक सहायक कंपनी में हुई हानि को दूसरी सहायक कंपनी के लाभों के समक्ष समायोजित किए जाने की सुविधा प्राप्त होगी। हालांकि, यदि इस प्रकार के कर का भुगतान सहायक कंपनी के स्तर पर किया जाना हो, तो इस प्रकार की कोई भी सुविधा उपलब्ध नहीं होगी। इसी प्रकार, एक मुद्दा यह भी उठेगा कि लाभांश वितरण कर केवल सहायक कंपनी के स्तर पर देय होगा अथवा यह नियंत्रक कंपनी द्वारा देय होगा। यह भी स्पष्ट नहीं है कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक नियंत्रक कंपनी का गठन किस प्रकार करेंगे।

10.136 नियंत्रक कंपनी वाले ढांचे को अपनाए जाने हेतु, नियंत्रक कंपनी के समूह-व्यापक परिप्रेक्ष्य से तथा नियंत्रक कंपनी के लिए पूंजी अपेक्षाएं निर्धारित किए जाने हेतु पर्यवेक्षण की अपेक्षित होगी। इसके लिए एक बार पुनः यह अपेक्षित होगा कि किसी एक पर्यवेक्षक को छत्र पर्यवेक्षक के रूप में नामित कर दिया जाए। इसके लिए वैधानिक संशोधन की आवश्यकता होगी। संक्षेप में, जहां मूल कंपनी-सहायक कंपनी ढांचा बहुविध विनियामक ढांचे से सुसंगत होता है, वहीं नियंत्रक कंपनी वाले ढांचे को लागू करने के लिए उपयुक्त विधायी संशोधन अपेक्षित होगा।

10.137 वित्तीय संगुटों के उद्भव के प्रत्युत्तर में कुछ देशों ने सुपर विनियामक संस्था को अपना रखा है। इस आशय के कुछ सुझाव प्राप्त हुए हैं कि भारत को भी सुपर विनियामक प्रणाली अपना लेनी चाहिए (मोर और नित्सुरे, 2002)। विविध प्रकार की वित्तीय सेवाओं के प्रदाताओं के बीच भेदों की अस्पष्टता और जटिलता ही वह आधार है, जिसके फलस्वरूप कुछ देशों में एकीकृत विनियामक संस्था अस्तित्व में आई। यद्यपि भारत में भी विविध प्रकार की वित्तीय सेवाओं के प्रदाताओं के बीच भेदों की अस्पष्टता और वित्तीय संगुटों का आविर्भाव मौजूद है, किन्तु यह अस्पष्टता उस सीमा तक नहीं आई है कि सुपर विनियामक की प्रणाली लागू की जाए (राज, 2005)। भारत में वित्तीय ढांचा अभी तक उतना जटिल नहीं हुआ है जितना कि विकसित देशों में है तथा यहां विकसित अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में मानक वाणिज्यिक बैंकिंग पर निर्भरता काफी अधिक रही है। एकीकृत वित्तीय पर्यवेक्षी प्राधिकरण की कार्य-कुशलता की दृष्टि से ये तर्क भारत जैसे विकासशील देश के मामले में इतने ठोस नहीं हैं जैसे कि अन्य देशों के मामले में हैं। एकीकृत वित्तीय पर्यवेक्षी ढांचे की रचना करते समय निराकरण किए जाने योग्य एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा यह उठता है कि इसकी रचना केन्द्रीय बैंक के भीतर ही ली जानी चाहिए या फिर उसके बाहर। यदि एकीकृत ढांचे की स्थापना केन्द्रीय बैंक के भीतर ही की जाती है, तो इससे एक गंभीर नैतिक संकट की समस्या पैदा हो जाएगी। दूसरी ओर यदि एकीकृत पर्यवेक्षी ढांचे की स्थापना केन्द्रीय बैंक से बाहर की जाती है, तो उससे बैंकिंग क्षेत्र के संबंध में रिज़र्व बैंक की पर्यवेक्षी क्षमता और संकट की स्थितियों का प्रभावी रूप से प्रबंधन करने की उसकी योग्यता प्रतिकूल रूप से प्रभावित होगी। इस प्रकार, एकीकृत पर्यवेक्षी ढांचे की स्थापना केन्द्रीय बैंक के भीतर ही या उसके बाहर की जानी चाहिए, इस प्रश्न का उत्तर देना आसान नहीं है तथा वह वित्तीय प्रणाली की स्थिरता के लिए गंभीर जटिलताओं वाले दो अत्यधिक कठिन विकल्प प्रस्तुत कर देता है। इंग्लैंड में, जहां बैंकिंग पर्यवेक्षण को केन्द्रीय बैंक से अलग कर दिया गया है, संकट की स्थितियों का प्रबंधन करने हेतु केन्द्रीय बैंक को शामिल करते हुए एक व्यवस्था की गई है। हालांकि, इंग्लैंड में नार्दर्न रॉक की विफलता ने इस प्रकार की व्यवस्था की गंभीर सीमाओं को उजागर कर

दिया है। नीति-निर्माताओं के समक्ष विभिन्न पर्यवेक्षी एजेन्सियों को एकीकृत करने से संबंधित कुछ गंभीर समस्याएं भी उपस्थिति हो गई हैं। एक सर्वेक्षण से यह पता चलता है कि कानूनी अड़चनें, अनुभवी कार्मिकों का प्रस्थान, उनके अस्तित्व में आने के प्रारंभिक दिनों में दूरदृष्टि और स्पष्टता के अभाव के साथ-साथ कुशलतापूर्वक परिचालन करने की क्षमता को प्रभावित करने वाली गंभीर बजटीय समस्याएं कुछ ऐसी महत्त्वपूर्ण समस्याएं थीं, जो एकीकृत ढांचे की स्थापना के समय उपस्थित हुईं (मार्टिनेज और रोज, 2003)। यह संभव है कि वह एकल विनियामक जिसे सभी प्रकार के मध्यवर्तियों का पर्यवेक्षण करना है, बैंकिंग क्षेत्र पर, जो प्रणालीगत दृष्टिकोण से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होता है और जो भारतीय वित्तीय क्षेत्र पर प्रभुत्व रखता है, ध्यान न दे पाए। एकल विनियामक व्यवस्था ने अभी तक किसी गंभीर संकट का सामना नहीं किया है। एकल विनियामक से यह भी तात्पर्य है कि मौद्रिक स्थिरता और वित्तीय स्थिरता का उत्तरदायित्व दो अलग-अलग प्राधिकरणों में निहित हो । वे कभी-कभार एक दूसरे के विपरीत भी कार्य कर सकते हैं।

10.138 जहां सुपर अथवा समन्वित पर्यवेक्षक के पक्ष और विपक्ष में कतिपय तर्क दिए हैं, वहीं समन्वित पर्यवेक्षक मॉडल का मूल्यांकन करने की दृष्टि से निम्नलिखित मुद्दे महत्त्वपूर्ण होते हैं। पहला, स्टैंड अलोन (एकल) एजेन्सियों के किसी समन्वित पर्यवेक्षी ढांचे में विलयन में कार्यों की महत्त्वपूर्ण पुनर्व्यवस्था शामिल होती है तथा इसमें गंभीर जोखिमें निहित होती हैं। दूसरा, समन्वित विनियामक एजेन्सी का कोई उत्तम रूप उपलब्ध नहीं है। एकीकृत पर्यवेक्षी ढांचे को कई देशों में अलग विधि से अपनाया गया है, इसकी प्रयोज्यता में भिन्न-भिन्न देशों में अंतर मौजूद है तथा वित्तीय सेवाओं के पर्यवेक्षण के एकीकृत्त मॉडल को प्रवर्तित एवं कार्यान्वित करने का कोई एक भी सही तरीका मौजूद नहीं है। भिन्नताओं के लिए उत्तरदायी कारकों में प्रारंभिक बिन्दुओं में भिन्नताओं, उद्योग के ढांचों में भिन्नताओं तथा उद्देश्यों में भिन्नताओं का समावेश है। उदाहरण के लिए, आस्ट्रेलिया ने एक अनूठा पर्यवेक्षी ढांचा अपना रखा है, जो संस्थाओं अथवा उत्पादों पर आधारित नहीं है, अपितु इनके बजाय वह विनियामक उद्देश्यों पर आधारित है। इसी प्रकार, सिंगापुर जैसे कुछ देशों ने केन्द्रीय बैंक के भीतर ही एकीकृत ढांचे का निर्माण कर रखा है, इंग्लैंड जैसे अन्य देशों ने इसकी स्थापना केन्द्रीय बैंक से बाहर कर रखी है। तीसरा, कुछ देशों में समन्वित पर्यवेक्षी ढांचों की रचना किए जाने के बावजूद, निरंतर रूप से यह माना जाता रहा है कि जहां केन्द्रीय बैंक के भीतर ही पर्यवेक्षी ढांचे की रचना से गंभीर नैतिक संकट की समस्या पैदा हो जाती है (जो इस पूर्वधारणा पर आधारित है कि जनता यह मानने लगेगी कि केन्द्रीय बैंक द्वारा पर्यवेक्षित संस्थाओं के सभी लेनदारों को एक ही प्रकार का संरक्षण प्राप्त होगा), वहीं केन्द्रीय बैंक से बाहर समन्वित पर्यवेक्षी ढांचे की रचना से बैंकिंग पर्यवेक्षण और मौद्रिक नीति के बीच सहक्रियाशीलता में कमी आ जाएगी। अंतिम, समन्वित पर्यवेक्षी ढांचे के विरुद्ध एक अत्यंत सुदृढ़ तर्क यह है कि जोखिमों का स्वरूप पर्याप्त रूप से इतना भिन्न होता है कि विवेकसम्मत विनियमन के प्रति विभेदीकृत दृष्टिकोण आवश्यक हो जाता है। संक्षेप में, जहां बैंकिंग संस्थाओं का विवेकसम्मत कारणों से पर्यवेक्षण किया जाना होगा, वहीं पारस्परिक निधियों और प्रतिभूति फर्मों जैसी अन्य संस्थाओं का पर्यवेक्षण निवेशकों को पर्याप्त प्रकटन उपलब्ध कराने हेतु किया जाना अपेक्षित होगा। अतएव, बहुत से विशेषज्ञों द्वारा दृढ़तापूर्वक यह महसूस किया जाता है कि एकल विनियामक विभिन्न प्रकार की संस्थाओं और उनके द्वारा वहन की गई जोखिमों के बीच आवश्यक विभेद करने में समर्थ नहीं हो सकता जो वित्तीय प्रणाली की समग्र स्थिरता के लिए घातक सिद्ध हो सकता है।

## इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग की चुनौतियां

10.139 इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग (अथवा ई-बैंकिंग) की क्रान्ति ने बैंकिंग कारोबार के संपूर्ण वर्णक्रम को मूलभूत रूप से परिवर्तित कर दिया है। इस प्रणाली में बैंकिंग कारोबार ग्राहक और बैंक के बीच वास्तविक संपर्क के बिना भी तथा विश्व में कहीं से भी किया जा सकता है। ई-बैंकिंग में इंटरनेट बैंकिंग, एटीएम, क्रेडिट/डेबिट कार्डों, इलेक्ट्रॉनिक निधि अंतरण आदि जैसी गतिविधियों की व्यापक श्रेणी का समावेश होता है। इन दिनों बैंकिंग की एक लोकप्रिय विधि के रूप में मोबाइल बैंकिंग का भी विकास हो गया है। ई-बैंकिंग बैंकों और ग्राहकों दोनों ही को कई प्रकार की सुविधाएं उपलब्ध कराती है। जहां बैंक, बैंकिंग परिचालन की कम लागत (अथवा संक्षेप में बड़े पैमाने की किफायतें) तथा ग्राहकों तक अधिकाधिक पहुंच जैसी सुविधाओं का लाभ उठाते हैं, वहीं ग्राहक अन्य बातों के साथ ही बैंकों तक आसान पहुँच, समय की बचत तथा बैंकों से अपेक्षाकृत त्वरित प्रत्युत्तर जैसी सुविधाओं का लाभ उठाते हैं।

10.140 विभिन्न बैंकों के अनुभवों से यह स्पष्ट हो जाता है कि ई-बैंकिंग में उपर्युक्त सुविधाओं के साथ ही कई जोखिमें में भी निहित होती हैं। विशेष रूप से, ई-बैंकिंग रणनीतिक जोखिम, परिचालन जोखिम और प्रतिष्ठा जोखिम जैसी बैंकिंग से जुड़ी कुछ परंपरागत जोखिमों को बढ़ा देती है और उन्हें आशोधित भी कर देती है। ई-बैंकिंग सेवाओं द्वारा निर्मित/वर्धित कुछ बैंकिंग जोखिमें हैं - परिचालन जोखिम, सुरक्षा जोखिम, विधिक जोखिम और सीमा-पार जोखिम। प्रौद्योगिकीय विफलता (खराबी) से उद्भूत होने वाले परिचालन जोखिम अन्य बातों के साथ-साथ लेन-देनों के अपरिशुद्ध संसाधन, संविदाओं की अप्रवर्तनीयता, आंकड़ों की अखंडता के बारे में समझौते, आंकड़ों की निजता और गोपनीयता तथा बैंकों की प्रणालियों और लेन-देनों में अनधिकृत पहुँच/घुसपैठ का रूप ले सकती है।

10.141 गोपनीयता, अखंडता और अधिप्रमाणन बैंकिंग क्षेत्र की अत्यधिक महत्त्वपूर्ण विशेषताएं होती हैं तथा इनका परंपरागत बैंकिंग में सफलतापूर्वक प्रबंधन किया जाता था (नित्सुरे, 2003)। ई-बैंकिंग प्रणाली में उपभोक्ता इन विशेषताओं के कुशल प्रबंधन की अपेक्षा करता है। अन्तर्निहित प्रौद्योगिकी की विफलता बैंकिंग क्षेत्र की इन विशेषताओं के प्रबंधन में गंभीर चुनौतियां उपस्थित कर सकती है, जिनसे बैंकों के समक्ष गंभीर सुरक्षात्मक मुद्दे उपस्थित हो सकते हैं। यह स्थिति लेखांकन प्रणाली,

जोखिम प्रबंधन प्रणाली, पोर्टफोलियो प्रबंधन प्रणाली, जैसे बैंक के महत्त्वपूर्ण सूचना भंडारणों तक अनधिकृत पहुँच के कारण निर्मित हो सकती है। ई-बैंकिंग सेवाओं की आउटसोर्सिंग भी ई-बैंकिंग कारोबार में शामिल सुरक्षा जोखिमों को बढ़ा सकती है। आउटसोर्सिंग में निहित जोखिम उन बैंकों के लिए अधिक हो सकती हैं, जिनकी आंतरिक तकनीकी विशेषज्ञता घटिया श्रेणी की है। आंतरिक तकनीकी विशेषज्ञता लेन-देन में शामिल तीसरे पक्ष के कार्य-निष्पादन के संदर्भ में हमेशा एक पर्यवेक्षक का काम कर सकती है।

10.142 महत्त्वपूर्ण रूप से बैंकिंग जोखिमों को आशोधित करने के अलावा ई-बैंकिंग सेवाएं कुछ स्थूल आर्थिक चुनौतियां भी प्रस्तुत करती हैं। पहली, परिवारों और फर्मों के वित्तीय परिचालन की विधि ई-बैंकिंग प्रणाली में विविध प्रकार के अलग-अलग रूप ले सकती है। यह परिवारों और फर्मों के वित्तीय परिचालनों को विशुद्ध रूप से केन्द्रीय बैंक के परिचालनों से विश्रृंखलित कर सकती है, जिससे केन्द्रीय बैंक की मौद्रिक नीति में कमजोरी आ सकती है। दूसरी ई-बैंकिंग में वित्तीय लेन-देनों की लागत परंपरागत बैंकिंग की तुलना में बहुत कम होती है। इसके अलावा, ई-बैंकिंग परिचालनों में सीमा-पार के लेन-देन भी काफी सस्ते और आसान हो सकते हैं। इस प्रकार अंतरराष्ट्रीय पूंजी प्रवाहों की आवाजाही काफी अधिक सहज और तीव्र हो सकती है, जिससे मौद्रिक नीति कम प्रभावी हो जाती है। तीसरी, ई-बैंकिंग सेवाएं मुख्यतः समाज के शिक्षित संभ्रान्त व्यक्तियों तक ही सीमित होती है। इस प्रकार, जहां समाज के शिक्षित संभ्रान्त व्यक्तियों के समूह को वित्तीय परिचालनों की कम लेन-देन लागत वाली सुविधाएं प्राप्त होती है, वहीं गरीब वर्गों को वित्तीय लेन-देनों की लागत के बड़े अंश को वहन करना पड़ सकता है (नित्सुरे, 2003)।

10.143 विकासशील देशों के संदर्भ में ई-बैंकिंग सामान्य प्रौद्योगिकीय पिछड़ेपन और आबादी को उसकी जानकारी के अभाव के कारण कुछ अतिरिक्त चुनौतियां भी प्रस्तुत कर सकती है। जब तक किसी देश में वैश्विक प्रौद्योगिकी को स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप स्वीकार करने की क्षमता नहीं होती, तब तक वह देश ई-बैंकिंग से होने वाले लाभों का उपयोग कर पाने की स्थिति में नहीं होगा। वैश्विक प्रौद्योगिकी को स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप अपनाए जाने के लिए उपयुक्त स्तर की आधारभूत सुविधाओं और मानवीय क्षमता निर्माण की आवश्यकता होगी। यह देखने में आता है कि कुछ विकासशील देशों में कई एक कंपनियां और उपभोक्ता ई-भुगतानों का संसाधन करने में या तो विश्वास ही नहीं करते या फिर उसमें समर्थ होने के लिए आवश्यक आधारभूत सुविधा तक उनकी पहुँच ही नहीं है। ई-बैंकिंग सेवाओं के प्रति लोगों में विश्वास पैदा करने के लिए ई-वित्त के प्रति जन-समर्थन को सुदृढ़ करने की क्षमता भी महत्त्वपूर्ण होती है। विकासशील देशों को ई-बैंकिंग द्वारा उपस्थित की गई चुनौतियों से निपटने के लिए आवश्यक स्तर के विनियामक और संस्थागत ढांचे का विकास करना भी आवश्यक होगा। इसके अलावा, चूंकि विकासशील देशों के आर्थिक विकास में श्रम प्रधान लघु एवं मध्यम उद्योगों को रोज़गार सृजन के माध्यम से अपेक्षाकृत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है, उन्हें लघु एवं मध्य उद्योगों को ई-बैंकिंग की मुख्य धारा में लाने हेतु अतिरिक्त उपाय करने चाहिए (संयुक्त राष्ट्र व्यापार और विकास सम्मेलन, 2002)।

10.144 ई-बैंकिंग के संबंध में कानूनी अधिकारों और दायित्वों को लेकर पर्याप्त संदेह और अनिश्चितता मौजूद है, क्योंकि यह अपेक्षाकृत एक नयी घटना है। विधिक जोखिमों के संभाव्य स्रोत उपभोक्ता की निजता, सूचना के प्रकटन, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के माध्यम से हुए कुछ करारों की वैधता तथा डिजिटल हस्ताक्षर द्वारा प्रणाली के अधिप्रमाणन हैं। ई-बैंकिंग में निहित एक अन्य जोखिम है इंटरनेट पर किसी सेवा अथवा बैंकिंग लेन-देन के लिए अनुरोध करने वाले व्यक्ति की पहचान। यह सूचना किसी लेन-देन की कानूनी वैधता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होती है और इस प्रकार इसका न होना, बैंक के लिए जोखिम का स्रोत होता है, अप्रत्याख्यान जोखिम का एक अन्य स्रोत होता है, जिसमें दोनों पक्षों के बीच हुए संप्रेषण का ऐसा प्रमाण निर्मित करना शामिल होता है, जिससे बाद में इनकार न किया जा सके। कोई भी व्यक्ति बैंक और उसके ग्राहक के बीच हुए इस प्रकार के संप्रेषण (पत्राचार) का प्रमाण तैयार कर सकता है, जिससे बैंक के समक्ष कई प्रकार के सुरक्षात्मक मुद्दे उपस्थित हो सकते हैं। इस प्रकार बैंक की प्रणाली को इन पहलुओं से निपटने के लिए प्रौद्योगिकीय रूप से सुसज्जित होना आवश्यक होता है।

10.145 विभिन्न राष्ट्रीय प्राधिकरणों के उत्तरदायित्वों के बारे में क्षेत्राधिकार संबंधी संदिग्धताओं तथा विभिन्न देशों की कानूनी अपेक्षाओं के बारे में अनिश्चितता के कारण सीमा-पार वाली ई-बैंकिंग भी कुछ कानूनी मुद्दे उठा सकती है। उपभोक्ता संरक्षण कानूनों, रिकार्ड रखने और रिपोर्टिंग संबंधी अपेक्षाओं, निजता के नियमों तथा काले धन को वैध बनाने संबंधी कानूनों सहित विभिन्न राष्ट्रीय कानूनों और विनियमों के अननुपालन के फलस्वरूप सीमा-पार वाले ई-बैंकिंग लेन-देनों से जुड़ी विधिक जोखिम भी पैदा हो सकती है। सीमा पार वाली ई-बैंकिंग ऋण जोखिम को भी बढ़ा सकती है, क्योंकि एक परिचित ग्राहक आधार से संबंधित किसी ग्राहक की तुलना में किसी अन्य देश के ग्राहक से प्राप्त किसी ऋण आवेदन का मूल्यांकन करना कठिन होता है।

10.146 इंटरनेट से पूर्व वाले युग में बैंकिंग में नवोन्मेष पर्याप्त परीक्षण और जाँच कर लिए जाने के बाद काफी लंबी समयावधि के बाद कार्यान्वित किए जाते थे। हालांकि, ई-बैंकिंग युग में बैंकों को उनके ग्राहकों को नवोन्मेषी सेवाएं उपलब्ध कराने हेतु अत्यधिक प्रतिस्पर्धात्मक दबावों का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार, अधिकांश मामलों में अत्यधिक प्रतिस्पर्धी परिवेश में नयी प्रौद्योगिकी की गहन-जाँच के साथ समझौता करना पड़ सकता है। ऊपर वर्णित समस्याओं में से कोई भी एक किसी बैंक की प्रतिष्ठा को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकती है। बैंक द्वारा प्रदान की जाने वाली ऑनलाइन सेवाओं के संबंध में ग्राहक असंतुष्टि, सुरक्षा के उल्लंघन, धोखाधड़ी, पहचान के मिथ्या-निरूपण आदि के फलस्वरूप ग्राहकों में बैंक के बारे में नकारात्मक राय बन सकती है (स्कैयेक्टर, 2002)।

10.147 यह स्पष्ट है कि बैंकों के साथ-साथ विनियामकों को भी अपने आप को ई-बैंकिंग कारोबार में उतरने से पहले उसके लिए सुसज्जित करना होगा। इस तथ्य को स्वीकार करते हुए बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति के इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग समूह ने वर्ष 2003 में ई-बैंकिंग हेतु जोखिम प्रबंधन सिद्धांतों की एक रिपोर्ट जारी की थी (बॉक्स X.12)। इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग समूह ने ई-बैंकिंग हेतु जोखिम प्रबंधन सिद्धांतों को प्रस्तुत करते हुए बोर्ड और प्रबंधन पर्यवेक्षण, सुरक्षात्मक नियंत्रणों तथा विधिक एवं प्रतिष्ठा जोखिम के प्रबंधन पर बल दिया है। उक्त रिपोर्ट में अन्य बातों के साथ ही बैंक की समग्र जोखिम अभिरुचि, ई-बैंकिंग जोखिमों का बैंक की समग्र जोखिम प्रोफाइल के साथ एकीकरण, आंतरिक तकनीकी विशेषज्ञता और सुरक्षात्मक नियंत्रण कार्यविधियों जैसे ई-बैंकिंग के विनियमन एवं पर्यवेक्षण के महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर निदेशक बोर्ड द्वारा अतिरिक्त रूप से ध्यान दिए जाने का आह्वान किया गया है। ई-बैंकिंग लेन-देनों की सुरक्षा को सुनिश्चित करने हेतु बैंकों को ग्राहक की पहचान, इलेक्ट्रॉनिक लेन-देन के अधिप्रमाणन, कर्त्तव्यों के पृथक्करण और डेटा की अखंडता पर बल देना चाहिए। उक्त रिपोर्ट में बैंक की विधिक और प्रतिष्ठा जोखिमों

**बॉक्स X.12**
**बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति के इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग समूह की ''इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग हेतु जोखिम प्रबंधन सिद्धांत'' पर रिपोर्ट**

बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति के इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग समूह द्वारा प्रस्तुत सिद्धांतों को तीन समूहों में श्रेणीकृत किया जा सकता है : (1) बोर्ड और प्रबंधन पर्यवेक्षण (2) सुरक्षात्मक नियंत्रण और (3) विधिक एवं प्रतिष्ठा जोखिम का प्रबंधन।

इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग समूह के अनुसार ई-बैंकिंग द्वारा प्रस्तुत चुनौतियों से निपटने में निदेशक बोर्ड का सतर्क प्रबंधन पर्यवेक्षण अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होता है। चूंकि ई-बैंकिंग बैंकिंग परिचालनों द्वारा उपस्थित कुछ जोखिमों को आशोधित और उन्नत कर देती है, निदेशक बोर्ड को ई-बैंकिंग कारोबार आरंभ करने के पहले बैंक की जोखिम अभिरुचि की समीक्षा कर लेनी चाहिए। इसके अलावा, ई-बैंकिंग परिचालन के जोखिम प्रबंधन की अतिरिक्त अपेक्षाओं को बैंक की समग्र जोखिम प्रबंधन रणनीति के साथ संलग्न कर दिया जाना चाहिए। विदेशों में यह कारोबार चलाने के पहले सीमा-पार वाली ई-बैंकिंग सेवाओं से जुड़ी जोखिमों का पता लगाने हेतु अतिरिक्त सावधानी बरती जानी चाहिए। इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग समूह ने इस बात पर बल दिया है कि कर्मचारियों और प्रबंधन की विशेषज्ञता ई-बैंकिंग सेवाओं के तकनीकी स्वरूप और उसकी जटिलताओं के समनुरूप होनी चाहिए। प्रणाली की परिचालन क्षमता, ग्राहक संतुष्टि तथा बोर्ड को घटना की यथोचित रिपोर्टिंग व्यवस्था की सतर्क निगरानी बैंक की प्रतिष्ठा को बनाए रखने की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होती है। निदेशक बोर्ड को आंतरिक और बाहरी दोनों ही प्रकार के खतरों से बैंक के इलेक्ट्रॉनिक डेटाबेस और ई-बैंकिंग परिचालनों को सुरक्षित रखने हेतु अद्यतन उपलब्ध प्रौद्योगिकीय नवोन्मेषों के साथ सुरक्षात्मक नियंत्रण की आधारभूत सुविधा को बनाए रखने में पर्याप्त रुचि लेनी चाहिए। इसके अलावा, निदेशक बोर्ड को कुछ ई-बैंकिंग सेवाओं की अन्य पक्षों से आउटसोर्सिंग कराने से संबंधित जोखिमों का प्रबंधन करने हेतु एक ''व्यापक और निरंतर आधार वाली यथोचित अध्यवसाय एवं पर्यवेक्षण प्रक्रिया'' की भी स्थापना करनी चाहिए।

ई-बैंकिंग सेवाओं द्वारा उपस्थित सुरक्षात्मक जोखिमों का प्रबंधन करने हेतु पहले उपाय के रूप में इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग समूह ने यह सुझाव दिया है कि बैंकों के पास ग्राहक की पहचान को अधिप्रमाणित किए जाने के उपाय मौजूद होने चाहिए। सीमा-पार वाले ई-बैंकिंग परिचालनों के मामले में, जिनमें अनधिकृत व्यक्तियों के बैंक की प्रणाली तक पहुंच प्राप्त कर लेने की संभाव्यता अत्यधिक होती है, यह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होता है। इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग समूह ने यह सुझाव दिया है कि बैंक ग्राहक की पहचान को सुनिश्चित करने के लिए वैयक्तिक पहचान संख्याओं (पिन), पासवर्डों, स्मार्टकार्डों, बायोमेट्रिक्स, डिजिटल हस्ताक्षर, आदि जैसी कई प्रकार की पद्धतियों का उपयोग कर सकते हैं। लेन-देन का अभिप्रमाणन, यथा- उद्‌गम प्रमाण और इलेक्ट्रॉनिक लेन-देन की सुपुर्दगी, भी समान रूप से महत्त्वपूर्ण होते हैं। विशेषतः स्थैतिक आंकड़ों की शुरुआत करने वालों तथा ई-बैंकिंग परिचालनों के भीतर उसकी अखंडता का सत्यापन करने के लिए उत्तरदायी कार्मिकों के बीच कर्त्तव्यों का पृथक्करण धोखाधड़ी का निर्मूलन करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होता है। इस प्रकार, बैंकों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कर्त्तव्यों के पर्याप्त पृथक्करण को बढ़ावा देने के लिए उपयुक्त उपाय लागू किए जाएं। इसके अलावा बैंकों को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि ई-बैंकिंग प्रणालियों, डेटाबेसों और अनुप्रयोगों के लिए यथोचित प्राधिकरण नियंत्रण और अभिगम विशेषाधिकार की व्यवस्था लागू की जाए। इसे सुनिश्चित करने में विफलता अनधिकृत व्यक्तियों को उनके प्राधिकार को परिवर्तित कर लेने, पृथक्करण को प्रवंचित करने तथा ई-बैंकिंग प्रणाली तक पहुँच प्राप्त कर लेने में समर्थ बना सकती है। बैंकों को ई-बैंकिंग परिचालनों, रिकार्डों और सूचनाओं से संबंधित आंकड़ों की अखंडता को बनाए रखने पर भी उपयुक्त ध्यान देना चाहिए। महत्त्वपूर्ण बैंकिंग सूचनाओं की गोपनीयता को परिरक्षित रखने हेतु समस्त ई-बैंकिंग लेन-देनों के लिए उपयुक्त लेखा-परीक्षा ट्रायलों और उपायों को लागू किया जाना चाहिए।

बैंक के विधिक एवं प्रतिष्ठा जोखिमों के संरक्षण के लिए बैंकों को उसकी पहचान तथा विनियामक स्थिति के बारे में वेबसाइट में पर्याप्त सूचना उपलब्ध करानी चाहिए, ताकि ग्राहकों को इस आशय का सुविज्ञ निर्णय लेने का अवसर प्राप्त हो सके कि वे बैंक की ई-बैंकिंग सेवाओं का लाभ उठाएं अथवा नहीं। इसके अलावा, बैंक जहां-कहीं भी ई-बैंकिंग सेवाएं प्रदान कर रहा हो, वहां उसे प्रत्येक अधिकार क्षेत्र की ग्राहक की निजता संबंधी अपेक्षाओं का पालन भी करना चाहिए। बैंक की प्रतिष्ठा को बनाए रखने में एक और महत्त्वपूर्ण कारक ग्राहक को ई-बैंकिंग सेवाएं सुसंगत रूप में तथा समय पर उपलब्ध कराना है। इस प्रकार, बैंकों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उनके पास ग्राहक की अपेक्षाओं के अनुसार सामयिक और सुसंगत विधि से ई-बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराने की क्षमता मौजूद हो। इसके अलावा बैंकों के पास किसी भी प्रकार की ऐसी आकस्मिकता, जो ई-बैंकिंग परिचालनों की कार्यपरकता को अवरुद्ध कर सकती हो, से निपटने के लिए पर्याप्त आधारभूत सुविधा उपलब्ध हो।

**संदर्भ :**

बासेल कमिटी ऑन बैंकिंग सुपरविजन, 2003. रिस्क मैनेजमेंट प्रिंसिपल्स फॉर इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग, बीआइएस, जुलाई ।

से उपयुक्त रूप से निपटने के लिए अतिरिक्त उपाय किए जाने की आवश्यकता पर भी बल दिया गया है। ई-बैंकिंग सेवाओं द्वारा निर्मित जोखिमों के इन नए आयामों से निपटने हेतु व्यापक साधनों को अंगीकरण, विधि-निर्माण, समरूपण और एकीकरण में श्रेणीकृत किया जाना चाहिए (न्सौली और स्कैयेक्टर, 2002)।

10.148 भारत में सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 एक ऐसा अधिनियम है, जिसके उद्देश्य इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य को कानूनी मान्यता प्रदान करना है, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ लेन-देन की इलेक्ट्रॉनिक विधि, सूचना का इलेक्ट्रॉनिक भंडारण तथा प्रलेखों की इलेक्ट्रॉनिक फाइलिंग का भी समावेश है। चूंकि इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य का बैंकिंग कारोबार में व्यापक रूप से उपयोग होता है, इस अधिनियम के प्रावधान देश में ई-बैंकिंग की प्रभावी कार्यप्रणाली हेतु प्रासंगिक हो जाते हैं। उक्त अधिनियम में भारत में ई-वाणिज्य के लिए सहायक कानूनी ढांचे की मूलभूत रूपरेखा निर्धारित कर दी गई है। चूंकि उक्त अधिनियम में देश में ई-वाणिज्य के लिए केवल एक मूलभूत कानूनी ढांचे की व्यवस्था है, यह ई-बैंकिंग प्रणाली के समक्ष उपस्थित समस्त विशिष्ट चुनौतियों से निपटने में उपयोगी नहीं हो सकता।

10.149 रिज़र्व बैंक ने इंटरनेट बैंकिंग द्वारा प्रस्तुत चुनौतियों से निपटने हेतु दिशा-निर्देश जारी किए हैं। विशेष रूप से इन दिशा-निर्देशों में प्रौद्योगिकी और सुरक्षा से संबंधित मुद्दों, कानूनी मुद्दों तथा विनियामक और पर्यवेक्षी मुद्दों पर ध्यान संकेन्द्रित रखा गया है। रिज़र्व बैंक के दृष्टिकोण के अनुसार भारत में केवल उन्हीं बैंकों को भारतीय निवासियों को इंटरनेट बैंकिंग उत्पाद उपलब्ध कराने की अनुमति दी जाएगी, जो भारत में लाइसेंसीकृत हों तथा पर्यवेक्षित किए जाते हों तथा जिनकी भारत में वास्तविक उपस्थिति हो। ये उत्पाद केवल खाताधारकों तक ही सीमित होने चाहिए तथा उन्हें अन्य अधिकार क्षेत्रों में उपलब्ध नहीं कराया जाना चाहिए। सेवाओं में केवल स्थानीय मुद्रा वाले उत्पाद शामिल होने चाहिए। 'इन-आउट परिदृश्य' जिसमें सीमा-पार के अधिकार क्षेत्र वाले ग्राहकों को भारतीय बैंकों द्वारा बैंकिंग सेवाएं प्रदान की जाती हैं तथा 'आउट-इन परिदृश्य' जिसमें भारतीय निवासियों को बैंकिंग सेवाएं सीमा-पार वाले अधिकार क्षेत्रों में परिचालनरत बैंकों द्वारा प्रदान की जाती है, की सामान्यतया अनुमति नहीं होती तथा यही दृष्टिकोण इंटरनेट बैंकिंग पर भी लागू होगा। भारतीय बैंकों की विदेशों में स्थित शाखाओं को उनके विदेशी ग्राहकों को इंटरनेट बैंकिंग सेवाएं प्रदान करने की अनुमति मेजबान पर्यवेक्षक को संतुष्ट किए जाने के अलावा स्वदेशी पर्यवेक्षक को भी संतुष्ट किए जाने की शर्त पर होगी।

10.150 बैंकों के लिए ग्राहकों को ई-बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराने हेतु रिज़र्व बैंक से अनुमति प्राप्त करना आवश्यक नहीं है। हालांकि, बैंकों की इंटरनेट नीति निम्नलिखित व्यापक तत्वों के साथ उसके निदेशक बोर्ड द्वारा अनुमोदित होनी चाहिएः (i) नीति को बैंक की समग्र सूचना प्रौद्योगिकी और सूचना सुरक्षा नीति के अनुकूल होना चाहिए तथा रिकार्डों और सुरक्षा प्रणालियों की गोपनीयता सुनिश्चित करनी चाहिए; (ii) नीति द्वारा से परिचालन जोखिम का भी ध्यान रखा जाना चाहिए; (iii) नीति में 'अपने ग्राहक को जानिए' संबंधी अपेक्षाओं के संबंध में अपनाई जाने वाली कार्यविधियां सुस्पष्ट रूप से निर्धारित कर दी जानी चाहिए; और (iv) उसे रिज़र्व बैंक द्वारा निर्धारित अन्य मापदंडों को भी पूरा करना चाहिए।

10.151 भारत में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक अपने विशाल ग्राहक आधार को इलेक्ट्रॉनिक आरूप में रूपांतरित करने की प्रक्रिया से गुजर रहे हैं, जो ग्राहकों को ई-बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराने की एक आवश्यक शर्त होती है। हालांकि, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को उनके भारी आकार के कारण 'प्रणाली के लंबा खिंच जाने' की समस्या का सामना करना पड़ रहा है। तथापि, निजी क्षेत्र के बैंक और विदेशी बैंक उनके ग्राहकों को इलेक्ट्रॉनिक विधि से सेवाएं उपलब्ध कराने में बहुत आगे निकल गए हैं।

10.152 ई-बैंकिंग सेवाओं द्वारा बैंकों और रिज़र्व बैंक के लिए कतिपय चुनौतियां उपस्थित करने का यह सिलसिला, विशेषतः इसलिए जारी रहने वाला है कि अन्तर्निहित प्रौद्योगिकी स्वयं ही अविरत परिवर्तन की स्थिति में है। प्रत्येक बैंक द्वारा स्वयं ही पैदा होने वाली स्थितियों से सफलतापूर्वक निपटने के उद्देश्य से जोखिम प्रोफाइल के नये आयामों को ध्यान में रखने हेतु बदलती प्रौद्योगिकी, नई प्रौद्योगिकी के बैंक की जोखिम प्रोफाइल पर संभाव्य प्रभाव तथा उपकरण के अनुकूल व्यवस्थाओं को समझे जाने की आवश्यकता है। प्रौद्योगिकी के नये आयामों को समझने में विफलता के फलस्वरूप बैंक द्वारा ई-बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराए जाने में निहित जोखिमें बढ़ सकती हैं। ई-बैंकिंग सेवाओं के साथ जुड़ी सीमा-पार जोखिमों के कारण ई-बैंकिंग विनियमन का अंतरराष्ट्रीय अनुरूपण आवश्यक हो जाता है। इस लक्ष्य की प्राप्ति विभिन्न देशों के विनियामकों के बीच सहयोग बढ़ाकर हो सकती है। ई-बैंकिंग सेवाओं के विनियमन एवं पर्यवेक्षण के संबंध में अंतरराष्ट्रीय उत्तम परंपराओं के विकास से भी विभिन्न देशों के बीच ई-बैंकिंग सेवाओं के विनियमन को अनुरूपित करने में सहायता प्राप्त हो सकती है। ई-बैंकिंग सेवाओं द्वारा प्रस्तुत जोखिमों को बैंक की समग्र जोखिम प्रोफाइल के साथ एकीकृत किया जाना आवश्यक होता है। बैंकों के प्रबंधन के पास ई-बैंकिंग सेवाओं की कारोबार आयोजना के संबंध में रणनीतिक विचार होने चाहिए। बैंक की समग्र जोखिम प्रबंधन रणनीतियों की आयोजना तैयार किए जाते समय गतिविधियों की आउटसोर्सिंग से जुड़ी जोखिमों पर भी विचार किया जाना चाहिए। यद्यपि मोबाइल बैंकिंग के प्रचुरोद्भवन से ई-बैंकिंग जैसी ही जोखिमें उपस्थित होती हैं, तथापि ये जोखिमें मोबाइल फोनों के संदर्भ में इसके बृहत्तर प्रसार के कारण अपेक्षाकृत अधिक हैं।

### स्वदेश बनाम मेजबान देश का मुद्दा

10.153 सीमा-पार के समस्त देशों में वित्तीय बाज़ारों के द्रुत एकीकरण को ध्यान में रखते हुए इन दिनों सीमा-पार पर्यवेक्षण महत्त्वपूर्ण हो गया है। जबकि, विभिन्न देशों के पर्यवेक्षक पारस्परिक सहयोग के लिए परंपराओं और प्रक्रियाओं का विकास करने में लगे हैं, वहीं सहयोग के लिए एक

औपचारिक एवं विन्यस्त ढांचे को लागू किए जाने की आवश्यकता विश्व भर के पर्यवेक्षकों द्वारा अधिकाधिक रूप से महसूस की जा रही है।

10.154 वित्तीय परिचालनों के अंतरराष्ट्रीयकरण से कतिपय चुनौतियां उपस्थित होती हैं। एक, विभिन्न देशों के बीच परस्पर-निर्भरता जैसे-जैसे बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे किसी एक देश की बैंकिंग प्रणाली में मौजूद समस्याओं के उन अन्य देशों में भी छलक जाने की अधिक संभावना होती है, जिनमें वह बैंक अथवा समूह सक्रिय होता है। सीमा-पार के संक्रामक प्रभावों के और भी अधिक विस्तृत हो जाने की संभावना होती है, क्योंकि बैंक कतिपय देशों में सक्रिय रूप से मौजूद रहते हैं। दूसरा, राष्ट्रीय प्राधिकारियों द्वारा किए गए निर्णयों और की गई कार्रवाइयों के विदेशी अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय स्थिरता के लिए पर्याप्त निहितार्थ रखने की संभावना होती है। यह निस्संदेह विशेष रूप से उन मामलों में सच होता है, जिनमें विदेशी परिचालन शाखाओं के माध्यम से किए जाते हैं, जिसका अभिप्राय यह है कि वे विदेशी पर्यवेक्षण के अधीन होते हैं। तीसरा, प्रासंगिक प्राधिकारियों की संख्या बढ़ जाने पर पर्यवेक्षण और संकट प्रबंधन की व्यावहारिकताएं जटिल हो जाती है। सामान्य स्थितियों में इसका आशय यह होता है कि वित्तीय फर्मों का विनियामक भार बढ़ जाता है। इसके अलावा, पर्यवेक्षी सहयोग की आवश्यकता भी बढ़ जाती है, जो नयी पर्यवेक्षी कार्यविधियों तथा सामान्य पर्यवेक्षी संस्कृति के निर्माण की मांग करती है। वित्तीय संकट के समय पर सूचना में हिस्सेदारी करना तथा कार्रवाइयों का समन्वय करना एक कठिन प्राथमिकता बन जाती है। चौथा, बैंकों के वास्तविक रूप से सीमा-पार वाले बन जाने पर परस्पर विरोधी राष्ट्रीय हित उभर कर सामने आ जाते हैं। राष्ट्रीय प्राधिकारियों के अन्य देशों में की गई उनकी कार्रवाइयों के समस्त विदेशी प्रभावों को ध्यान में रखने की संभावना नहीं होती। विभिन्न देशों की पर्यवेक्षण और संकट प्रबंधन हेतु संसाधनों की दृष्टि से अथवा उनके विनियामक ढांचों की दृष्टि से प्राथमिकताएं अलग-अलग हो सकती हैं। एक कारण यह हो सकता है कि विभिन्न देशों के बीच वित्तीय प्रणालियां अत्यधिक महत्त्वपूर्ण रूप से अलग-अलग होती हैं। इनके अतिरिक्त, संकट प्रबंधन में सार्वजनिक निधियों के उपयोग से कभी पूर्णत: इनकार नहीं किया जा सकता। सीमा-पार वाले संदर्भ में उस समय हितों में गंभीर टकराव की स्थिति निर्मित हो सकती है जब इस प्रकार के संभाव्य भार को वहन करने में हिस्सेदारी करने का प्रश्न उठता है।

10.155 इन सभी चुनौतियों के पीछे एक सामान्य सिद्धांत काम करता है - घरेलू वित्तीय स्थिरता अधिकाधिक रूप से बैंकों और विदेशों के प्राधिकारियों पर निर्भर होती जा रही है। इसके अलावा, इन प्राधिकारियों की भूमिकाओं और उत्तरदायित्वों को देखते हुए, हितों के टकराव की स्थिति पैदा होने की भी संभावना रहती है। इस समस्या का विशिष्ट उदाहरण है, किसी बैंक का अपने देश में तो सीमित आकार वाला होना, जबकि विदेशों में व्यवस्थित रूप से महत्त्वपूर्ण शाखा रखना। जहां उक्त बैंक की संभाव्य विफलता से उसके अपने देश में कोई पर्याप्त रुकावट की स्थिति निर्मित नहीं होगी, वहीं मेजबान देश के लिए इसके परिणाम गंभीर हो सकते हैं। बैंक विफल हो जाने की स्थिति में मेजबान देश को संकट को सुलझाने का अधिकांश दायित्व वहन करना पड़ सकता है तथा उस बैंक का गहन पर्यवेक्षण करने हेतु प्रोत्साहन पर्याप्त होंगे। दूसरी ओर उसके अपने देश के लिए उसी प्रकार के प्रोत्साहन मौजूद नहीं हो सकते।

10.156 इन चुनौतियों का विविध प्रकार के साधनों के माध्यम से समाधान किया जा रहा है। इसका एक विकल्प है विदेशी शाखाओं को देशी स्तर पर कारोबार करने से निषिद्ध कर देना अथवा उन पर स्वदेश के उत्तरदायित्व लागू कर देना। एक अन्य विकल्प होगा पर्याप्त सीमा-पार कार्य-कलापों वाले बैंकों का पर्यवेक्षण करने के अधिदेश के साथ एक सामान्य अंतरराष्ट्रीय संस्था के निर्माण की दिशा में क्रमिक रूप से आगे बढ़ना। इसका सहज औचित्य यह है कि राष्ट्रीय हितों के टकराव की स्थिति का पूर्ण रूप से प्रबंधन करने हेतु इस प्रकार की संस्था का निर्माण ही एकमात्र मार्ग रह गया है। इसके अलावा, सीमा-पार वाले बैंकिंग समूहों का पर्यवेक्षण करने वाले एकल प्राधिकरण से अत्यंत निश्चित रूप से पर्यवेक्षण की व्यापकता और प्रभावशीलता बढ़ जाएगी। पर्यवेक्षण के अधीन फर्मों के मामले में इसका आशय यह हो सकता है कि विनियामक भार में अंततः पर्याप्त रूप से कमी आ जाएगी।

10.157 अविरत वित्तीय संकट सीमा-पार सहयोग, विशेषतः संकट के समय, की भूमिका का एक उदाहरण उपलब्ध कराता है। वर्ष 2007 के मध्य में जब अमरीकी सब-प्राइम बंधक बाज़ार से हुई हानि के आकार और उसके वितरण के बारे में व्याप्त अनिश्चितताओं के कारण अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में अस्थिरता छा गई थी, तो अमरीकी सब प्राइम बंधक बाज़ार में व्याप्त तनावों के फलस्वरूप विन्यस्त ऋण उत्पादों के प्रतिफलों और अन्य अधिक जोखिम वाले ऋण बाज़ारों में विशेषतः अमरीकी और यूरो क्षेत्र में उछाल आ गया था। प्रतिपक्ष जोखिमों के प्रति बढ़ती चिंताओं के फलस्वरूप वित्तीय बाज़ार के विविध खंडों में चलनिधि का अभाव हो गया, जिसने महत्त्वपूर्ण केन्द्रीय बैंकों को अस्थिरता पर नियंत्रण पाने हेतु चलनिधि की व्यवस्था करने के लिए हस्तक्षेप करने पर विवश कर दिया । अमरीका और अन्य प्रभावित अर्थव्यवस्थाओं के केद्रीय बैंकों ने चलनिधि उपलब्ध कराते हुए अंतर-बैंक बाज़ारों में स्थिरता लाने के लिए उपाय किए। बैंक ऑफ इंग्लैंड, यूरोपीय केन्द्रीय बैंकों और अमरीकी फेडरल रिज़र्व प्रणाली द्वारा वर्धित आकार और परिपक्वता वाले खुले बाज़ार के कार्यकलाप भी आरंभ कर दिए गए। हालांकि, अलग-अलग केन्द्रीय बैंकों द्वारा की गई कार्रवाइयां बाज़ारों को शांत करने में विफल हो गईं। बढ़े हुए तनावों और मुद्रा बाज़ारों की कार्यप्रणाली के गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त हो जाने की स्थिति में पाँच केन्द्रीय बैंकों, यथा-बैंक ऑफ कनाडा, बैंक ऑफ इंग्लैंड, यूरोपियन सेन्ट्रल बैंक, अमरीकी फेडरल रिज़र्व प्रणाली तथा स्विस नेशनल बैंक ने 12 दिसम्बर 2007 को बढ़े हुए दबाव से निपटने के लिए सहयोगपरक विधि से उपायों की घोषणा की। यूरोपीय केन्द्रीय बैंक, फेडरल रिज़र्व और स्विस नेशनल बैंक ने कुछ सावधि-निधीयन बाज़ारों में निरंतर चलनिधि दबावों को ध्यान में रखते हुए मई 2008 में उनके चलनिधि संबंधी उपायों के विस्तार की घोषणा की।

10.158 1997 में प्रभावी बैंक पर्यवेक्षण हेतु बासेल के प्रमुख सिद्धांतों में सिद्धांत 23-25 के माध्यम से सीमा-पार वाले पर्यवेक्षण के महत्त्व को रेखांकित किया गया है। उसमें बैंकिंग पर्यवेक्षकों को यह सलाह दी गई है कि वे मूलतः मेज़बान देश के पर्यवेक्षी प्राधिकारियों, पर्यवेक्षण प्रक्रिया में शामिल विविध प्रकार के अन्य पर्यवेक्षकों के साथ संपर्क स्थापित करते और सूचना का आदान-प्रदान करते हुए विश्व भर के इन बैंकिंग संगठनों द्वारा संचालित कारोबार के सभी पहलुओं पर, प्राथमिक तौर पर उनकी विदेशी शाखाओं, संयुक्त उद्यमों और सहायक कंपनियों पर, पर्याप्त निगरानी रखते हुए और उपयुक्त विवेकसम्मत मानदंडों को लागू करते हुए उनके अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय बैंकिंग संगठनों पर वैश्विक स्तर पर समेकित पर्यवेक्षण को लागू करें। इसी प्रकार, उसमें यह सिफारिश की गई है कि बैंकिंग पर्यवेक्षकों से यह अपेक्षित है कि विदेशी बैंकों के स्थानीय परिचालनों का पर्यवेक्षण भी उसी प्रकार के उच्च मानकों के आधार पर करें, जैसा कि घरेलू संस्थाओं में अपेक्षित है तथा उन्हें उन बैंकों के स्वदेशी पर्यवेक्षकों द्वारा समेकित पर्यवेक्षण किए जाने के उद्देश्य से आवश्यक सूचना में हिस्सेदारी करने हेतु अधिकार (शक्ति) प्राप्त होने/होनी चाहिए।

10.159 यह मानते हुए कि बासेल II समझौते के अनुसार स्वदेश और मेज़बान देश के पर्यवेक्षकों के बीच विशेषकर जटिल बैंकिंग समूहों के मामले में और अधिक सहयोग एवं समन्वय की आवश्यकता होगी, बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति ने 2003 में जारी ''नये समझौते के सीमा-पार कार्यान्वयन हेतु उच्च-स्तरीय सिद्धांत'' पर अपने प्रलेख में इस प्रकार के सहयोग की आवश्यकता को बढ़ा दिया है। उक्त समिति की मान्यता यह थी कि नये समझौते को यथासंभव विधि से प्रभावी एवं कुशलतापूर्वक कार्यान्वित करने के लिए पर्यवेक्षकों के बीच गहनतर व्यावहारिक सहयोग को बढ़ावा देना अनिवार्य था। जून 2006 में जारी ''बासेल II के प्रभावी कार्यान्वयन हेतु स्वदेश-मेज़बान देश के बीच सूचना में हिस्सेदारी'' पर अपने आलेख में बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति ने यह टिप्पणी की है कि अन्तरराष्ट्रीय बैंकिंग समूहों के लिए पूंजीगत मानकों को लागू किए जाने के संबंध में सीमा-पार समझ विकसित किए जाने की आवश्यकता को बासेल II के सफल कार्यान्वयन के एक अनिवार्य तत्व के रूप में स्वीकार किया गया है।

10.160 वर्ष 2006 में प्रभावी बैंकिंग पर्यवेक्षण हेतु संशोधित मुख्य सिद्धांतों में सीमा-पार पर्यवेक्षण पर संकेन्द्रण को बनाए रखा गया है। स्वदेश-मेजबान देश संबंधों से संबंधित उसके सिद्धांत 25 में यह उल्लेख है कि सीमा-पार समेकित पर्यवेक्षण के लिए स्वदेशी पर्यवेक्षकों और उससे जुड़े विविध प्रकार के अन्य पर्यवेक्षकों, मूलतः मेज़बान बैंकिंग पर्यवेक्षकों, के बीच सहयोग और सूचना के आदान-प्रदान की आवश्यकता होती है। इसमें 1999 वाले मुख्य सिद्धांतों की उस विषयवस्तु को दुहराया गया है कि बैंकिंग पर्यवेक्षकों को यह अपेक्षा करनी चाहिए कि विदेशी बैंकों के स्थानीय परिचालन उन्हीं मानकों के आधार पर किए जाएं, जो देशी संस्थाओं के लिए अपेक्षित होते हैं।

10.161 बासेल II के स्तंभ 2 के तहत बैंकों की आंतरिक पूंजी पर्याप्तता मूल्यांकन प्रक्रिया का पर्यवेक्षी मूल्यांकन किए जाने के लिए आत्मनिष्ठ और गुणात्मक मूल्यांकन किए जाने के उद्देश्य से स्वदेशी और मेजबान देश के पर्यवेक्षकों के बीच औपचारिक वार्तालाप की आवश्यकता होगी। संभाव्य रूप से उसमें नियमों/विनियमों के साथ-साथ स्वदेशी/मेजबान देश के पर्यवेक्षकों के मूल्यांकनों के बीच महत्त्वपूर्ण अन्तर्द्वंद्व हो सकते हैं। इस प्रकार के अन्तर्द्वंद्व का शीघ्रतापूर्वक निराकरण/समाधान किया जाना आवश्यक होगा। इन मुद्दों को ध्यान में रखते हुए रिज़र्व बैंक ने अक्तूबर 2007 की अपनी वार्षिक नीति की मध्यावधिक समीक्षा में सीमा-पार पर्यवेक्षण और विदेशी पर्यवेक्षकों के साथ बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति द्वारा परिकल्पित ढांचे के अनुरूप पर्यवेक्षणात्मक सहयोग के लिए एक यथोचित ढांचा अपनाए जाने हेतु रूपरेखा निर्धारित करने के प्रयोजन से एक कार्यकारी दल के गठन की घोषणा की।

## सपाट दर और जोखिम-आधारित प्रीमियम निक्षेप बीमा प्रणाली

10.162 भारत में, डीआइसीजीसी बीमाकृत बैंकों से सपाट दर के आधार पर प्रीमियम वसूल करता है। सपाट दर प्रीमियम प्रणाली का मुख्य लाभ उसके संचालन में होने वाली अपेक्षाकृत सरलता है। इस प्रणाली की मुख्य असुविधा यह है कि इसमें कम जोखिम वाले बैंकों द्वारा अधिक जोखिम वाले बैंकों को प्रति-सहायता देना शामिल होता है, जिससे बाद वाले बैंकों द्वारा अधिक जोखिम लेने को बढ़ावा मिलता है। तथापि, यह भी तर्क दिया जाता है कि सपाट दर प्रणाली के कारण प्रीमियम की प्रति-सहायता वह मूल्य है जिसकी अदायगी कम जोखिम वाले बैंक अधिक स्थिर और समतापूर्ण बैंकिंग प्रणाली सुनिश्चित करने के लिए करते हैं। शायद यह उस माहौल में अधिक सुसंगत है जहां अलग-अलग गैर प्रतिस्पर्धी श्रेणियों वाले बैंक साथ-साथ मौजूद होते हैं और उनके विनियमन तथा पर्यवेक्षण के लिए एक ही प्रकार के विवेकपूर्ण मानदंड लगाना संभव न हो।

10.163 अमरीका के संघीय निक्षेप बीमा निगम सहित कतिपय निक्षेप बीमा प्रणालियों ने अलग-अलग बैंकों की जोखिम प्रोफाइल के आधार पर प्रीमियम वाली प्रणाली अपना ली है। जोखिम प्रबंधन और बैंकिंग पर्यवेक्षण की तकनीकों में परिष्करण के फलस्वरूप अधिक से अधिक देश जोखिम आधारित प्रीमियम की प्रणाली अपनाते जा रहे हैं। वर्तमान समय में संघीय निक्षेप बीमा निगम द्वारा नियंत्रित विभेदक प्रीमियम प्रणाली में एक मैट्रिक्स होता है, जिसमें मुख्यत: पूंजी पर्याप्तता तथा प्रीमियम निर्धारित करने हेतु पर्यवेक्षी श्रेणी-निर्धारण शामिल रहते हैं। उन संस्थाओं के मामले में जिन्होंने आस्तियों में कम से कम 10 बिलियन अमरीकी डॉलर निवेश कर रखा है तथा जिनके पास एक या उससे अधिक वर्तमान दीर्घकालिक ऋण निर्गमकर्ता रेटिंग निर्धारण होते हैं, प्रीमियम की दरें इन श्रेणी-निर्धारणों तथा भारित औसत कैमेल्स संघटक श्रेणी-निर्धारणों पर आधारित होती हैं। इस समय कनाडा में प्रचलित विभेदक प्रीमियम प्रणाली कनाडा निक्षेप बीमा निगम सदस्य संस्थाओं को चार में से एक प्रीमियम श्रेणी में श्रेणीकृत करता है। असाधारण स्थितियों को छोड़कर यह वर्गीकरण उस प्रणाली पर

आधारित होता है, जो किसी सदस्य संस्था को पूंजी पर्याप्तता, लाभप्रदता, आस्ति की गुणवत्ता और संकेन्द्रण सहित कई प्रकार के कारकों के अनुसार अंक प्रदान करता है। फ्रांस के मामले में विभेदक प्रीमियम का निर्धारण विवेकसम्मत और वित्तीय जोखिम विश्लेषण के अनुपातों के मिश्रण के आधार पर किया जाता है, जिनका उपयोग प्रत्येक सदस्य बैंक के पास जमा रकम में किया जाता है। अर्जेन्टीना में, सभी संस्थाएं सम्मिलित गुणात्मक/मात्रात्मक विभेदक प्रीमियम प्रणाली द्वारा निर्धारित अतिरिक्त प्रीमियम के साथ निक्षेप बीमाकर्ता को मूल प्रीमियम का अंशदान करती हैं। यद्यपि विश्व भर में कतिपय निक्षेप बीमा प्रणालियों में जोखिम आधारित प्रीमियम प्रणाली को अपना लिया गया है, तथापि भारी संख्या में देशों द्वारा सपाट दर प्रणाली का ही अनुसरण करना जारी रखा गया है।

10.164 बैंकों की जोखिम प्रोफाइल के आधार पर विभेदक प्रीमियम प्रणाली विकसित करने का सर्वाधिक कठिन कार्य किसी एक बैंक द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली जोखिम की मात्रा का निर्धारण करने की उपयुक्त प्रणाली का पता लगाने से संबंधित होता है। इसके अलावा इस प्रकार की प्रणाली को संचालित करना भी आसान नहीं होता, क्योंकि यह अत्यधिक सूचना-प्रधान होती है। तथापि, विश्व भर में जोखिम आधारित प्रीमियम प्रणाली अपनाए जाने की बढ़ती प्रवृत्ति के फलस्वरूप इस उद्देश्य के लिए कार्यप्रणालियां विकसित किए जाने की दिशा में पर्याप्त काम किया जा चुका है।

## VI. भावी दिशा

10.165 हाल के वर्षों में विश्व के विविध भागों में बैंकिंग संकट की कतिपय घटनाएं हुई है। इस प्रकार की घटनाओं ने विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचों में विद्यमान उन कमियों को सामने ला दिया है, जिसके कारण आंशिक रूप से इस प्रकार की घटनाएं संभव हुईं। कभी-कभी विनियामकों की विलंबित अनुक्रियाएं बैंकिंग संकटों को वित्तीय प्रणाली के अन्य खंडों तथा शेष अर्थव्यवस्था में फैलने से रोकने में विफल रहीं। वित्तीय उत्पादों और बाज़ारों की वर्धित जटिलता विनियामकों और पर्यवेक्षकों के समक्ष कतिपय चुनौतियाँ उपस्थित कर देती है। जैसा कि वित्तीय स्थिरता मंच[5] की रिपोर्ट में सूचित किया गया है, पर्यवेक्षकों और विनियामकों के लिए यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि वित्तीय संस्थाओं के भीतर जोखिम प्रबंधन एवं नियंत्रण का ढांचा लिखतों, बाज़ारों और कारोबार मॉडलों में हो रहे बदलाव के अनुरूप हो तथा यह कि फर्में पर्याप्त नियंत्रण व्यवस्था किए बिना इन गतिविधियों में न लगें।

10.166 2007 के मध्य से अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में जारी हलचल ने वित्तीय स्थिरता और वित्तीय विनियमन के संबंध में कतिपय चिंताएं पैदा कर दी हैं। संकट के सामने आ जाने पर परंपरागत प्रतिपक्षियों के बीच विश्वास के सहसा लुप्त हो जाने से प्रतिष्ठित एजेन्सियों और उन जैसी संस्थाओं द्वारा जोखिम विसरण की जटिल परतबंदी तथा अधिक लिवरेजिंग और जोखिम निर्धारण विधि में खराबी से उद्भूत सूचना की अत्यधिक विषमता का प्रतिबिंबन हुआ है। वह गति जिसके साथ यह संकट व्याप्त हुआ तथा उसमें विशाल, प्रतिष्ठित एवं विनियमित वित्तीय संस्थाओं की संलिप्तता से विनियामक कमियां प्रकाश में आ गईं, जिनके फलस्वरूप केन्द्रीय बैंकों से गैर-परंपरागत प्रत्युत्तर आवश्यक हो गए । इन घटनाओं ने राष्ट्रीय वित्तीय प्रणालियों की इस प्रकार असामान्य घटनाओं से निर्मित होने वाले आघातों का सामना करने की योग्यता और लोच के संबंध में गंभीर चिंताएं पैदा कर दी हैं। इन्होंने वित्तीय विनियमन के कुछ पहलुओं पर पुनर्चिंतन को प्रेरित किया है, विशेषकर इसलिए प्रेरित किया कि वे वित्तीय स्थिरता को बनाए रखने से संबंधित हैं (मोहन, 2007)।

10.167 वर्तमान वित्तीय संकट ने बाज़ार की विफलता के विविध स्रोतों को अनावृत करने के अलावा कतिपय विनियामक कमियों को भी प्रकाश में ला दिया है। पहली, विनियामक वित्तीय क्षेत्र में कुछ अन्तर्निहित असुरक्षितताओं से परिचित थे, किन्तु वे प्रभावी कार्रवाई करने में, आंशिक रूप से इसलिए विफल रहे कि उन्होंने वित्तीय प्रणाली की शक्ति और आघात-सहनीयता के बारे में अधिक अनुमान लगा रखा था अथवा उन्होंने यह मान लिया था कि जोखिम बैंकिंग प्रणाली के बाहर वाली संस्थाओं में सुवितरित थी। कई एक विश्लेषकों और नीति-निर्माताओं ने अतिशय जोखिम वहन किए जाने, शिथिल हामीदारी मानकों और आस्ति के अधिक मूल्यांकन के प्रति चिंता व्यक्त की थी, जिन सब ने मिलकर, समय पर प्रभावी कार्रवाई के अभाव में संकट के बीच बो दिए। दूसरी, पूंजी पर्याप्तता ढांचे सहित विनियामक व्यवस्थाओं की सीमा ने अविनियंत्रित एक्सपोज़रों, अतिशय जोखिम-वहन तथा कमज़ोर चलनिधि जोखिम प्रबंधन की वृद्धि में योगदान किया। तीसरी, लेखांकन मानदंडों को लागू किए जाने में मौजूद कमजोरियों तथा विन्यस्त उत्पादों के मूल्यन एवं उनकी वित्तीय रिपोर्टिंग से जुड़ी कमियों ने वर्तमान विक्षोभ में प्रति-चक्रीय मूल्यांकन के माध्यम से तथा उक्त चक्र के माध्यम से बैंकों की सही जोखिम रूपरेखा के पूर्ण प्रकटीकरण के अभाव के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। चौथी, इस संकट ने बैंकों के सीमा-पार परिचालनों के प्रकाश में प्रणाली की चलनिधि को नियंत्रित रखने हेतु केन्द्रीय बैंकों के कुछ साधनों और परंपराओं को अपनाए जाने की आवश्यकता को उजागर कर दिया। हाल के अनुभवों ने केन्द्रीय बैंकों के आकस्मिक चलनिधि ढांचे में संपार्श्विकों की सीमा, पात्र प्रतिपक्षियों की सीमा जैसे पहलुओं में विद्यमान अंतरों तथा केन्द्रीय बैंक की परंपराओं में मौजूद अंतरों को रेखांकित कर दिया है। पांचवीं, पर्यवेक्षकों ने विनियमित संस्थाओं में जोखिम प्रबंधन मानकों में आई गिरावट तथा समेकित पर्यवेक्षण में रह गई कमियों का पर्याप्त रूप से निराकरण नहीं

[5] बाज़ार एवं संस्थागत आघात-सहनीयता बढ़ाने पर वित्तीय स्थिरता मंच की रिपोर्ट, अप्रैल 2008।

किया। छठी, संकट प्रबंधन तथा निक्षेप बीमा सहित बैंक के समाधान ढांचों में कमियां, विशेषतः जहां केन्द्रीय बैंकों की कोई केन्द्रीय पर्यवेक्षी भूमिका नहीं होती, देखने में आई हैं। अंतिम, विनियमन, अनुपयुक्त लेखांकन परंपराओं के बीच विद्यमान जटिल अंतरसंबंध और विनियामकों की बाहरी श्रेणी-निर्धारण पर अत्यधिक निर्भरता ने बाज़ार की अशांति को भड़का दिया होगा (रेड्डी, 2008)।

10.168 वर्तमान वित्तीय संकट द्वारा कतिपय महत्त्वपूर्ण मुद्दे उठा दिए गए हैं, जिन पर इस समय बहस की जा रही है। पहला, एक अनसुलझा मुद्दा यह है कि असामान्य स्थितियों में चलनिधि संबंधी दबावों से कैसे निपटा जाए। विनियामकों के लिए निक्षेप बीमा और केन्द्रीय बैंक के निधीयन जैसी आकस्मिक नीतियों की प्रभावशीलता का पता लगाना आवश्यक होता है। विनियामकों के लिए बैंकों की आस्तियों और देयताओं के बीच परिपक्वता संबंधी असंतुलनों के बारे में और अधिक सतर्क रहना तथा तुलनपत्रेतर और तुलनपत्र में शामिल देयताओं में नकदी प्रवाहों पर ध्यान देना आवश्यक होगा। बैंक आंतरिक रूप से चलनिधि का प्रबंधन कैसे करते हैं, इस पर भी विनियामकों द्वारा गहन रूप से ध्यान दिया जाना अपेक्षित हो सकता है। दूसरा, इस बात पर भी बहस की जा रही है कि उत्कर्ष एवं गिरावट के प्रभावों की अन्तर्निहित प्रवृत्ति के पीछे कहीं पूंजी अपेक्षाओं की प्र-चक्रीयता एक कारक तो नहीं होती। यह तर्क दिया जाता है कि प्रतिरक्षा के उपाय घटना हो जाने के बाद किए जाने की बजाय उनके उपयोग की आवश्यकता पड़ने से पहले ही कर लिए जाने चाहिए। इसी से संबंधित एक मुद्दा है किसी बाज़ार के कार्यरत न होने की स्थिति में आस्तियों के बाज़ार मूल्य को बही में अंकित करने वाला लेखांकन। गंभीर गिरावट वाले परिदृश्य में मूल्य घटाने से गंभीर चिंताएं पैदा हो सकती हैं, जिनके फलस्वरूप मूल्य को और अधिक, संभाव्य रूप से आस्ति के वास्तविक मूल्य से भी अधिक, घटाना पड़ सकता है। तीसरा, वित्तीय क्षेत्र में गैर-बैंकों की भूमिका की भी विनियामक परिप्रेक्ष्य में जाँच की जा रही है। जहां परंपरागत रूप से बैंकों का गहन पैमाने पर विनियमन किया जाता रहा है, वहीं गैर-बैंकों के वित्तीय प्रणाली में काफी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाने के बावजूद उन पर या तो किसी प्रकार का विनियामक नियंत्रण नहीं लागू होता अथवा अपेक्षाकृत बहुत कम विनियामक या पर्यवेक्षी नियंत्रण लागू होता था। इस आशय के प्रश्न उठते हैं कि क्या केन्द्रीय बैंकों और सरकारों द्वारा गैर-बैंकों की भी जमानत दी जानी चाहिए, जिससे गंभीर नैतिक संकट संबंधी चिंता उत्पन्न हो जाती है (वोल्कर, 2008)। चौथा, इस बात पर बहस चल रही है कि क्या संस्थाओं को इतनी बड़ी और इतनी जटिल बनने देना चाहिए कि उनकी समस्याओं का प्रणाली-व्यापी असर हो सके। इसलिए अपेक्षाकृत छोटे बैंकों, यद्यपि बड़ी संख्या वाले, से होने वाले लाभों पर पुनर्चिंतन की प्रक्रिया चल रही है। अंतिम, साख निर्धारण एजेन्सियों की भूमिका का महत्त्वपूर्ण पुनर्मूल्यांकन किया जा रहा है। विन्यस्त उत्पादों के श्रेणी-निर्धारण में सुस्पष्ट रूप से विभेदन करने, उनकी श्रेणी निर्धारण की कार्य प्रणालियों के प्रकटन में सुधार लाने तथा विन्यस्त उत्पादों के प्रवर्तकों, व्यवस्थापकों और जारीकर्ताओं द्वारा दी जाने वाली सूचना की गुणवत्ता का निर्धारण करने की दृष्टि से साख-निर्धारण एजेन्सियों की आवश्यकता पर सक्रिय विचार-विमर्श चल रहा है।

10.169 संकट का प्रत्युत्तर देने के उद्देश्य से विभिन्न पणधारकों द्वारा समाधानों और निर्धारणों की व्यापक सूची का प्रस्ताव किया गया। पहला, बैंकों और वित्तीय संस्थाओं में अभिशासन व्यवस्था सहित जोखिम प्रबंधन ढाचों की प्रबंधन द्वारा हाल के अनुभवों के परिप्रेक्ष्य में समीक्षा किए जाने की आवश्यकता है। दूसरा, पर्यवेक्षकों द्वारा तनाव परीक्षण तथा अभिशासन व्यवस्थाओं, तुलनपत्र-बाह्य संस्थाओं और विन्यस्त उत्पादों सहित जोखिम प्रबंधन परंपराओं की छानबीन करने में और अधिक सक्रिय भूमिका निभाए जाने की आवश्यकता है। उसके साथ ही, यह स्वीकार कर लेना महत्त्वपूर्ण है कि एकमात्र विनियमन द्वारा ही जोखिम प्रबंधन के लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो सकती। वित्तीय संस्थाओं से जुड़ी तुलनपत्र में शामिल न की गई संस्थाओं और अन्तर्निहित अथवा सुस्पष्ट अवलम्ब लेकर बेचे गए ऋणों पर समेकित पर्यवेक्षण और विवेकसम्मत रिपोर्टिंग का लागू किया जाना आवश्यक है। साख निर्धारण एजेन्सियों द्वारा प्रदत्त बाह्य श्रेणी-निर्धारणों से संबद्ध विवेकसम्मत मानदंडों की समीक्षा किए जाने की आवश्यकता है। तीसरा, पर्यवेक्षकों को संस्थाओं को इस प्रकार के और अधिक सुदृढ़ मॉडल विकसित करने हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए जो अधिक विवेकसम्मत एवं विश्वसनीय मान्यताओं और तनाव परीक्षण कार्यप्रणालियों का उपयोग करती हों तथा जोखिमों का प्रबंधन करने के लिए आंतरिक प्रक्रियाओं और नियंत्रणों पर अधिक गहन रूप से निगरानी रखती हों। चौथा, अंतरपणन की गुंजाइश को कम करने की दृष्टि से विनियामक और पर्यवेक्षणात्मक निर्धारणों को युक्तिसंगत बनाए जाने की आवश्यकता है। इसके लिए संबंधित पर्यवेक्षकों/पर्यवेक्षी सहायकों के बीच गहनतम समन्वय की भी आवश्यकता होती है। पांचवां, विविध स्तरों पर मौजूद प्रोत्साहन व्यवस्थाओं में असंतुलन को मिटाने की आवश्यकता भी है। छठा, बाज़ारों को और अधिक कार्यकुशल बनाने के लिए तथा पूंजी के आवंटन को इष्टतम करने के लिए अधिकाधिक पारदर्शिता न केवल आवश्यक होती है, अपितु उसे तनाव के समय अविवेकपूर्ण पशुवत व्यवहार और अन्यायपूर्ण संक्रमण के समक्ष सर्वोत्तम बीमा पॉलिसी माना जाता है। सातवां, विवेकसम्मत विनियमन, लेखांकन नियमों तथा इन्हें लागू करने वाले प्राधिकारियों की अभिवृत्ति में प्र-चक्रीयता वाले तत्वों की सामूहिक रूप से समीक्षा किए जाने तथा उनका निराकरण किए जाने की भी आवश्यकता है। आठवां, साख-निर्धारण एजेन्सियों के लिए यह आवश्यक है कि वे अपने अभिशासन और श्रेणी निर्धारण की कार्य प्रणालियों में सुधार लाएं। नौवां, तर्कसाध्य रूप से सुसंगत लेखांकन मानकों वाले लेखांकन पर पुनर्विचार करने तथा उचित मूल्य लेखांकन को लागू करने की संभावना का पता लगाना उपयोगी होता है, ताकि प्र-चक्रीयता को कम किया जा सके। दसवां, पर्यवेक्षकों के पास कमज़ोरी का पहला संकेत मिलते ही, अधिमान्यतः संस्था की निवल मालियत के नकारात्मक होने से काफी पहले, हस्तक्षेप करने का प्राधिकार होना चाहिए। अंतिम, निक्षेप बीमा प्रणालियों का लक्ष्य पर्याप्त रक्षा के माध्यम से खुदरा जमाकर्ता द्वारा कठिनाई में फंसे बैंक से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण की संभावना

को सीमित करना तथा जमाकर्ताओं को तुरंत भुगतान कर देने की क्षमता रखना होना चाहिए (रेड्डी, 2008)। इस बात की भी मांग की जा रही है कि वित्तीय आस्तियों के बाज़ार में उठने वाले बुलबुलों और ऋण उत्कर्ष से निपटने के लिए विनियामक उपकरणों का उपयोग किया जाना चाहिए। यह सुझाव दिया गया है कि अन्यों के साथ-साथ सभी व्यवस्थापरक रूप से महत्त्वपूर्ण अत्यधिक लीवरेज्ड संस्थाओं - अन्य संस्थाओं के बीच वाणिज्य बैंकों, निवेश बैंकों, बचाव निधियों, निजी इक्विटी निधियों - पर अनुपूरक पूंजी अपेक्षाएं तथा चलनिधि अपेक्षाएं लागू की जानी चाहिए। इन अनुपूरक पूंजी और चलनिधि अपेक्षाओं का प्रबंधन या तो केन्द्रीय बैंक द्वारा प्रति-चक्रीय रूप में किया जा सकता है अथवा उनका विन्यास स्वचालित वित्तीय स्थिरक के रूप में किया जा सकता है (बुइटर, 2008)।

10.170 भारत में बैंकिंग प्रणाली को सुदृढ़ बनाने के लिए हाल ही में कई उपाय आरंभ किए गए हैं । एक, बैंकों से विदेशी मुद्रा के भारी एक्सपोज़रों की समीक्षा करने तथा इस प्रकार के अप्रतिरक्षित एक्सपोज़रों पर नियमित आधार पर निगरानी रखने हेतु एक प्रणाली लागू करने का आह्वान किया गया है, ताकि अत्यधिक अनिश्चित स्थितियों में अस्थिरता की जोखिमों को कम से कम किया जा सके। बैंकों से यह भी अनुरोध किया गया है कि वे खजाना/व्यापार गतिविधि की दृष्टि से कारपोरेट गतिविधि पर तथा आय के उन अन्य स्रोतों पर इस सीमा तक सावधानीपूर्वक निगरानी रखें जहाँ तक अन्तर्निहित ऋण/बाज़ार जोखिम से बैंकों की आस्तियों की गुणवत्ता की क्षति की संभावना हो। दो, सभी प्रकार की व्युत्पन्नियों के लेन-देन करने, जोखिमों के प्रबंधन तथा सुदृढ़ कॉरपोरेट अभिशासन संबंधी अपेक्षाओं और अनुकूलता एवं उपयुक्तता नीति के अंगीकरण से संबंधित व्यापक सामान्य सिद्धांत निर्धारित करने हुए व्युत्पन्नियों के बारे में व्यापक दिशा-निर्देश लागू किए गए।

10.171 वैश्विक वित्तीय बाज़ारों में व्याप्त अशांति की पृष्ठभूमि में, वित्तीय स्थिरता मंच ने अप्रैल 2008 में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाज़ारों में अन्तर्निहित कारणों और कमजोरियों की पहचान करते हुए एक रिपोर्ट प्रकाशित की है। उक्त रिपोर्ट में अन्य बातों के साथ-साथ पूंजी, चलनिधि और जोखिम प्रबंधन के विवेकसम्मत पर्यवेक्षण को सुदृढ़ बनाए जाने, पारदर्शिता और मूल्यांकन को बढ़ाए जाने, साख-निर्धारण की भूमिका और उसके उपयोग को परिवर्तित किए जाने, जोखिम के प्रति प्राधिकारियों की प्रत्युत्तरदायिता को सुदृढ़ किए जाने और वित्तीय प्रणाली में तनावों से निपटने हेतु सुदृढ़ व्यवस्थाओं को कार्यान्वित किए जाने के संबंध में वित्तीय स्थिरता मंच के उन प्रस्तावों का समावेश था, जिन्हें 2008 के अंत तक कार्यान्वित किया जाना अपेक्षित था। रिज़र्व बैंक ने विनियामक दिशा-निर्देश लागू कर दिए हैं, जिनमें इनमें से कई एक पहलुओं का समावेश है, जबकि जहां तक अन्य मुदों का संबंध है, उन पर कार्रवाई आरंभ की जा रही है। कई मामलों में इन कार्रवाइयों को कार्य प्रगति पर है के रूप में माना जाएगा। बहरहाल, ये दिशा-निर्देश वैश्विक उत्तम परंपराओं से संबद्ध हैं, जबकि संस्थागत विकास के वर्तमान स्तर पर उन्हें देश-विशिष्ट की अपेक्षाओं को पूरा करने हेतु तैयार किया गया है।

10.172 भारत में समय-समय पर यथा-विकसित विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचे ने देश की अच्छी तरह सेवा की है। हालांकि, आगे बढ़ते समय कतिपय ऐसे मुद्दे सामने आएंगे, जिनका बैंकिंग क्षेत्र की स्थिरता और दीर्घकालिक विकास सुनिश्चित करने हेतु निराकरण करना आवश्यक होगा।

**पर्यवेक्षण का दायित्व रिज़र्व बैंक के पास बने रहना आवश्यक है**

10.173 कुछ देशों ने पर्यवेक्षण को केन्द्रीय बैंक से अलग कर लिया है तथा उसे मुख्यतः विनियामक कार्यों और मौद्रिक नीति के उद्देश्यों के बीच टकराव को टालने के लिए एक स्वतंत्र प्राधिकरण को सौंप दिया है। बैंकिंग पर्यवेक्षण को केन्द्रीय बैंक से अलग कर दिए जाने से उसका सूचना प्रवाह प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकता है। चूंकि सामान्यतया सरकारें यह चाहती हैं कि केन्द्रीय बैंक उनकी ओर से कार्य करें, विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में पर्यवेक्षी कार्यों के साथ केन्द्रीय बैंकों के पास बेहतर निधि की व्यवस्था, वित्तीय पर्यवेक्षण और विनियमन के क्षेत्र में अधिक विश्वसनीय और बेहतर विशेषज्ञता होने की संभावना रहती है। यहां इस बात को ध्यान में रखा जाना आवश्यक हो जाता है कि हाल के वर्षों में कम से कम दो देशों में (1993 में फिनलैंड और हांगकांग में) बैंक पर्यवेक्षण संतोषजनक तरीके से कार्य नहीं कर रहा था, अत: इसे केन्द्रीय बैंक या केन्द्रीय बैंक की सहायक संस्था को सौंपा गया। फ़िनलैंड और हांगकांग दोनों में बैंकिंग पर्यवेक्षण के संस्थागत उत्तरदायित्व में बदलाव आया है। इन देशों में केन्द्रीय बैंकिंग से बाहर की व्यवस्था के तहत बैंकिंग पर्यवेक्षण संतोषजनक तरीके से कार्य नहीं कर रहा था, अतः इसे केंद्रीय बैंक या केंद्रीय बैंक की सहायक संस्था को सौंपा गया। फिनलैंड और हांगकांग दोनों में बैकिंग पर्यवेक्षण के दायित्व को केन्द्रीय बैंक के पास ले जाने के निर्णय से इस इस विचार का प्रतिबिंबन होता है कि पूर्ववर्ती पर्यवेक्षण व्यवस्था के कार्य-निष्पादन से असंतोष के अलावा, बैंक पर्यवेक्षण और मौद्रिक नीति के उत्तरदायित्वों के बीच महत्त्वपूर्ण सहवर्तिता मौजूद थी।

10.174 उदीयमान देश, विशेषकर बैंकिंग प्रणाली के प्रारंभिक उदारीकरण के बाद में व्यवस्थापरक अवरोधों के प्रति अधिक असुरक्षित हो गए हैं। अतएव, इस प्रकार के देशों में बैंकिंग पर्यवेक्षण का मुख्य बल ग्राहक संरक्षण और कारोबार संचालन के मुद्दों के बजाय मजबूरन व्यवस्थापरक स्थिरता पर रहा है। इस प्रकार पर्यवेक्षण और अंतिम ऋणदाता परिचालनों सहित मौद्रिक नीति के बीच संबंध विकसित देशों की तुलना में अधिक आवृत्ति वाले और सुस्पष्ट होते हैं। अल्प विकसित देशों के मामले में, पर्यवेक्षी कर्मचारियों की गुणवत्ता अर्थात् व्यावसायिक कौशल, बाहरी दबावों से स्वतंत्रता और पर्याप्त निधीयन सुनिश्चित करने को अधिक वरीयता दिए जाने की आवश्यकता होती है। ये आधार उदीयमान देशों में बैंकिंग पर्यवेक्षण को केन्द्रीय बैंक के पास ही बनाए रखने की ओर दृढ़तापूर्वक संकेत करते हैं (गुडहार्ट, 2000ए)।

10.175 रिज़र्व बैंक की पर्यवेक्षी गतिविधियों को उसके मूल्य स्थिरता वाले उद्देश्यों से लाभ प्राप्त हुआ है तथा यह माना जाता है कि बैंकों की सुरक्षा और सुदृढ़ता का मूल्यांकन आवश्यक रूप से उसके अर्थव्यवस्था में स्थिरता और वृद्धि सुनिश्चित करने के उसके उत्तरदायित्व के साथ किया जाए। मौद्रिक नीति और पर्यवेक्षण के संयुक्त उत्तरदायित्व के साथ रिज़र्व बैंक के पास उन तकनीकों का उपयोग करने से संबंधित अंतर्दृष्टि और प्राधिकार दोनों ही मौजूद हैं, जो वर्तमान समस्याओं से निपटने की दृष्टि से कम भोथरे और निश्चित रूप से अधिक क्षमतावान हैं। इस प्रकार के उपकरण संकटों से निपटने की और अधिक महत्त्वपूर्ण रूप से उनसे बच निकलने में उसकी योग्यता बढ़ाते हैं। इस पृष्ठभूमि में, बैंकिंग क्षेत्र के विनियमन को मौद्रिक नीति के संचालन से अलग करने हेतु कुछ प्रेक्षकों के सुझावों पर इतिहास, वसीयत और भारत में वर्तमान विनियामक प्रणाली की कार्यकुशलता के प्रकाश में निर्णय लिए जाने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में इस बात को ध्यान में रखना प्रासंगिक होगा कि नार्दर्न रॉक वाले मामले में विनियामकों के बीच समन्वय की विफलता के लिए अब इंग्लैंड को भी गंभीर आलोचना का सामना करना पड़ रहा है (मोहन 2007)।

10.176 चूंकि रिज़र्व बैंक के पास मौद्रिक नीति और पर्यवेक्षण का संयुक्त उत्तरदायित्व है, वह मौद्रिक नीति के उपकरणों के सहयोग से वित्तीय प्रणाली को सुदृढ़ बनाने के लक्ष्य को पूरा करने हेतु विवेकसम्मत उपायों के भी अपनाने की स्थिति में है। उदाहरण के लिए, विशिष्ट क्षेत्रों में मानक अग्रिमों के संबंध में बैंकों के एक्सपोज़रों के लिए प्रावधानीकरण संबंधी अपेक्षाओं को रिपो दर और आरक्षित नकदी निधि अनुपात के साथ बढ़ा दिया गया था। जब केन्द्रीय बैंक की बाज़ारों और बैंकों के साथ निकटता होती है, तो मौद्रिक नीति के निर्धारण हेतु महत्त्वपूर्ण सहवर्तिता होती है, क्योंकि केन्द्रीय बैंक वित्तीय क्षेत्र की महत्त्वपूर्ण घटनाओं के प्रति संवेदनशील होगा। इसके अलावा, केन्द्रीय बैंक की पर्यवेक्षी भूमिका भी बैंकों से मौद्रिक नीति हेतु उपयोगी सूचना की प्राप्ति को आसान बना देती है। बैंकिंग विनियामक और पर्यवेक्षक के रूप में रिज़र्व बैंक को बैंकिंग गतिविधियों की निरंतर आधार पर सूचना प्राप्त होती रहती है। वह हलचल के समय में अग्रणी व्यवस्थापरक रूप से महत्त्वपूर्ण संस्थाओं से प्रसंगोचित एक्सपोज़रों के संबंध में सूचनाएं शीघ्रतापूर्वक भी प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई की अच्छी गुंजाइश है (मोहन, 2007)।

## वित्तीय संगुट

10.177 बैंकों और गैर-बैंक वित्तीय संस्थाओं के बीच सीमा रेखाएं मिट गई हैं, क्योंकि बैंकों ने विभिन्न प्रकार की गैर-बैंकिंग वित्तीय सेवाओं के क्षेत्र में प्रवेश किया है। इसी प्रकार गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएं बैंकिंग उत्पादों जैसे ही दिखने वाले विविध उत्पादों का लेन-देन कर रही हैं। कई वित्तीय संगुटों का भी उद्भव हो गया है। वित्तीय गतिविधियों के इस प्रकार के 'संगुटीकरण' को ध्यान में रखते हुए विनियामकों के बीच समन्वय अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। इस चुनौती से निपटने के लिए कुछ देशों ने एक 'सुपर विनियामक' प्रणाली की स्थापना की है। संयुक्त राज्य अमरीका जैसे कुछ देशों ने छत्र पर्यवेक्षण प्रणाली की स्थापना कर रखी है। आस्ट्रेलिया ने एक उद्देश्य-आधारित विनियमन प्रणाली अपना रखी है। यद्यपि भारत में विविध प्रकार की वित्तीय सेवाओं के प्रदाताओं के बीच विभेदों का समापन हो रहा है, तथापि यह उस सीमा तक नहीं हो पाया है कि विद्यमान बहुविध विनियामकों के स्थान पर एकल विनियामक अथवा किसी अन्य विनियामक ढांचे को लाया जा सके। सुपर विनियामक अथवा इसके पूर्व यथावर्णित किसी अन्य ढांचे को स्थापित करने से कई मुद्दे जुड़े हैं, जिसके लिए संस्था-आधारित विनियमन की वर्तमान प्रणाली को बनाए रखना वांछनीय समझा जाता है। हालांकि, इसके साथ ही भविष्य में यह सुनिश्चित करना एक महत्त्वपूर्ण चुनौती होगी कि वित्तीय संगुटों का विनियमन पर्याप्त रूप से हो। वित्तीय संगुटों की निगरानी की वर्तमान व्यवस्था की कुछ सीमाएं हैं, यद्यपि अन्तर-विनियामक विचार-विमर्शों और सहयोग के माध्यम से समूह-व्यापक परिप्रेक्ष्य अपनाने के प्रयास किए जा रहे हैं।

## समेकित पर्यवेक्षण

10.178 बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति द्वारा जारी प्रभावी बैंकिंग पर्यवेक्षण के मुख्य सिद्धांतों में समेकित पर्यवेक्षण को एक स्वतंत्र सिद्धांत के रूप में शामिल किया गया है। पर्यवेक्षकों को बैंक समूहों का समेकित पर्यवेक्षण करने हेतु अधिकार प्रदान किए जाने पर वर्धित बल को ध्यान में रखते हुए रिज़र्व बैंक ने एक प्रारंभिक उपाय के रूप में बैंकिंग समूहों के संकेन्द्रण जोखिम (अलग-अलग उधारकर्ताओं तथा व्यावसायिक समूहों से संबंधित उधारकर्ताओं के लिए विवेकसम्मत उच्चतम सीमाओं) और संवेदनशील क्षेत्रों के प्रति एक्सपोज़र जोखिम जैसे समुचित जोखिमों हेतु सामूहिक पूंजी पर्याप्तता और अन्य विवेकसम्मत उच्चतम सीमाओं (मात्रात्मक पद्धति) सहित समेकित पर्यवेक्षण, समेकित लेखांकन और विवेकसम्मत उपायों को लागू किया था। समेकित पर्यवेक्षण को बैंक समूहों के मामले में क्षेत्रपरक और भौगोलिक संकेन्द्रणों के लिए विवेकपूर्ण उच्चतम सीमा जैसी और विवेकसम्मत उपाय निर्धारित करते हुए बढ़ाए जाने की आवश्यकता है।

10.179 बैंक की अगुवाई वाले संगुटों हेतु पर्यवेक्षी प्रणाली की प्रभावशीलता भी समेकित पर्यवेक्षण की प्रक्रिया को वित्तीय संगुट निगरानी व्यवस्था के साथ एकीकृत करते हुए बढ़ाए जाने की आवश्यकता है। जहां बैंकिंग समूह समेकित पर्यवेक्षण में शामिल होते हैं, रिज़र्व बैंक ने अन्य क्षेत्रपरक विनियामकों के परामर्श से वित्तीय संगुटों के लिए एक अप्रत्यक्ष निगरानी व्यवस्था लागू की है। इसमें उन वित्तीय संगुटों की निगरानी भी शामिल है जो बैंक की अगुवाई वाले हैं।

## सिद्धांत-आधारित विनियमन

10.180 इंग्लैंड ने परंपरागत ''नियम-आधारित विनियमन'' के स्थान पर ''सिद्धांत-आधारित'' विनियमन की प्रवृत्ति का प्रवर्तन किया है ।

सिद्धांत-आधारित विनियमन का अनुभूत गुण यह है कि यह अधिक लचीलापन प्रदान करता है तथा इसे समझना और कार्यान्वित करना आसान है। हालांकि, यह व्यापक सिद्धांतों का निर्वचन करने में पर्यवेक्षकों और विनियामकों के विवेक और निर्णय पर अधिक से अधिक निर्भरता की पूर्व-धारणा लेकर चलता है। अत: यह पर्यवेक्षी एजेन्सियों के कर्मचारियों पर दुर्वह मांगें थोपता है, जिन्हें पर्यवेक्षित संस्थाओं के कारोबारी मॉडलों को समझने तथा पर्यवेक्षी निष्कर्षों पर पहुंचने के लिए सिद्धांतों को लागू करने हेतु तकनीकी कौशल की आवश्यकता पड़ती है।

10.181 इसके अनुभूत लाभों के बावजूद, इंग्लैंड ही एकमात्र ऐसा देश है, जिसने सिद्धांत आधारित विनियमन को कार्यान्वित किया है और वह भी केवल लगभग एक दशक पहले। सिद्धांत आधारित विनियमन की प्रभावशीलता की नार्दन रॉक संकट के बाद गंभीर आलोचना हुई है। सिद्धांत आधारित दृष्टिकोण नियमों के प्रयोग का संपूरक हो सकता है - जो आवश्यक स्पष्टता ला सकते हैं। स्वयं वित्तीय सेवा प्राधिकरण ने विस्तृत नियमों को पूर्ण रूप से नहीं छोड़ा है। अन्य सभी बैंकिंग विनियामकों की भांति भारत ने नियम-आधारित विनियामक दृष्टिकोण अपनाए हैं, यद्यपि कुछ क्षेत्रों में यह तर्क दिया गया है कि भारतीय विनियामक ढांचे को सिद्धांत आधारित विनियमन अपना लेना चाहिए। पूर्णतः सिद्धांत आधारित विनियामक प्रणाली की दिशा में अंतरण, इसकी व्यावहारिकता के बारे में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उपलब्ध होने वाले अत्यधिक सीमित और वह भी केवल इंग्लैंड में अनुभव को ध्यान में रखते हुए, न तो वांछनीय और न ही व्यावहारिक हो सकता है । हालांकि, नियम आधारित और सिद्धांत आधारित विनियमन प्रणालियों के एक उपयुक्त मिश्रण को आजमाए जाने की आवश्यकता है।

## निक्षेप बीमा

10.182 निक्षेप बीमा से दो अलग-अलग किन्तु अभिन्न उद्देश्य पूरे होते हैं (i) छोटे और अपरिपक्व बैंक जमाकर्ताओं को उनके धन के संभाव्य रूप से एक महत्त्वपूर्ण अंश को खो जाने से बचाना, और (ii) बैंक जमाकर्ताओं द्वारा बैंकों से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण की स्थिति को टालना। जबकि इस बात में कोई संदेह नहीं है कि निक्षेप बीमा विनियामक ढांचे का एक आवश्यक तत्व होता है, यह अधिकाधिक महसूस किया जा रहा है कि निक्षेप बीमा योजना के गंभीर प्रतिकूल प्रभाव हो सकते हैं। निक्षेप बीमा की प्रणाली को इस प्रकार तैयार किया जाना चाहिए कि वह उसके साथ जुड़ी नैतिक संकट की समस्या में कमी लाए।

10.183 भारत में इस समय जिस निक्षेप बीमा प्रणाली को अपनाया जा रहा है, वह निक्षेप बीमा और प्रत्यक्ष गारंटी निगम से बीमा कराने वाले सभी बैंकों पर लागू होने वाली सपाट प्रीमियम दर पर आधारित है। इस प्रणाली में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों, शहरी सहकारी बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का समावेश है। बैंकिंग क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा गहन होती जा रही है तथा वह बैंकों को अपेक्षाकृत अधिक जोखिमपूर्ण कार्यकलाप आरंभ करने हेतु प्रोत्साहित कर सकती है। अत: यह महसूस किया जाता है कि निक्षेप बीमा की जोखिम आधारित प्रणाली की ओर बढ़ना वांछनीय होगा। प्रारंभ में इस प्रकार की प्रणाली को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के लिए लागू किया जा सकता है। बाद में इसे शहरी सहकारी बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों पर लागू करने पर विचार किया जा सकता है।

10.184 जोखिम आधारित निक्षेप बीमा के जोखिम आधारित पूंजी मानकों के साथ एकीकरण से इसके पूर्व यथावर्णित प्रचक्रीयता में कमी आ जाती है। इस पूर्व-धारणा को ध्यान में रखते हुए कि निक्षेप-बीमा को आर्थिक सहायता रहित अथवा 'न्यायोचित' होना चाहिए, बैंकों पर जोखिम आधारित निक्षेप बीमा प्रीमियम के नियतन की प्रचक्रीयता का प्रभाव जोखिम आधारित पूंजी अपेक्षाओं के नियतन से उद्‌भूत प्रचक्रीय प्रभाव की तुलना में कम होता है। इसका निहितार्थ यह है कि प्रचक्रीयता के दृष्टिकोण से बीमा प्रीमियमों और पूंजी अपेक्षाओं, दोनों ही को, बीमा प्रीमियम निर्धारित किए जाने और केवल पूंजी अपेक्षाओं को बदलने के बजाय, व्यवसाय चक्र के आधार पर बदलने देना बेहतर होगा ।

10.185 जोखिम आधारित प्रीमियम अपनाए जाने की साध्यता की भी निक्षेप बीमा निधि की पर्याप्तता के प्रकाश में जाँच की जानी होगी। उल्लेखनीय है कि निक्षेप बीमा प्रीमियम को अधिकांश देशों में आय कर से छूट प्राप्त है। हालांकि, भारत सहित कुछ देशों में इसे निक्षेप बीमाकर्ता की आय माना जाता है, जिसके फलस्वरूप प्रीमियम प्राप्तियों का बड़ा अंश आय कर का भुगतान करने में खर्च हो जाता है, जिससे निक्षेप बीमा निधि की वांछित स्तर तक वृद्धि अवरुद्ध हो जाती है।

## स्वदेश-मेजबान देश के बीच समन्वय के मुद्दे

10.186 बैंकिंग क्षेत्र के अंतरराष्ट्रीयकरण के लिए बैंकों के पर्यवेक्षण में अधिक से अधिक सीमा-पार समन्वय की आवश्यकता होती है। जहां वित्तीय गतिविधि के वैश्वीकरण के कार्यकुशलता से संबंधित लाभ होते हैं, इससे संक्रामक जोखिम में बढ़ोत्तरी भी होती है। अत: वित्तीय प्रणाली के निर्विघ्न परिचालन के लिए स्वदेश और मेजबान देशों के बीच निर्णय किए जाने में सूचना के आदान-प्रदान और समन्वय की आवश्यकता होती है। संकट में, यह आवश्यक हो जाता है कि विभिन्न देशों के प्राधिकारी एक-दूसरे के द्वारा किए गए स्थिति के मूल्यांकनों को समझें और, यदि संभव हो, तो एक सामान्य धारणा बनाएं। वैश्विक स्तर पर, यह महसूस किया जा रहा है कि वर्तमान पर्यवेक्षी व्यवस्थाएं सीमा-पार की उन बहिर्मुखताओं को रोकने के लिए नहीं तैयार की गई हैं जो वित्तीय संकटों से उद्‌भूत हो सकती है। इसके अलावा, इस आशय की कमियां भी मौजूद हैं कि अंतरराष्ट्रीय रूप से सक्रिय बैंकों के पर्यवेक्षण का कार्य व्यावहारिक रूप से किस प्रकार संपन्न किया जाए, जिसका पता आंशिक रूप से विधि-निर्माण की सीमाओं और आंशिक रूप से पर्यवेक्षकों के बीच पर्याप्त समन्वय के अभाव से चलता है।

10.187 भारतीय संदर्भ में, यद्यपि रिज़र्व बैंक और कुछ अन्य विदेशी बैंकिंग पर्यवेक्षकों के बीच विशिष्ट मुद्दों पर पर्यवेक्षी आदान-प्रदान होते रहते हैं, तथापि अभी तक सीमा-पार वाले पर्यवेक्षी सहयोग के लिए रिज़र्व

बैंक और बाहरी पर्यवेक्षी प्राधिकारियों के बीच किसी प्रकार की औपचारिक व्यवस्था/समझौता-ज्ञापन नहीं हो पाया है। यह स्थिति ऋण संबंधी सूचनाओं में हिस्सेदारी करने तथा भारत में रिजर्व बैंक के अलावा किसी अन्य एजेन्सी को किसी बैंक का निरीक्षण करने की अनुमति देने संबंधी विधिक अड़चनों के कारण है।

10.188 भारतीय बैंकों द्वारा उनके शाखा नेटवर्क के माध्यम से अथवा उनकी सहायक कंपनियों के माध्यम से उनके कार्य-क्षेत्र और परिचालन स्तरों में विस्तार किए जाने के परिणामस्वरूप, इस प्रकार के परिचालनों का व्यापक स्तर पर प्रत्यक्ष निरीक्षण किए जाने की आवश्यकता है, ताकि समेकित पर्यवेक्षण की मांगों को पूरा किया जा सके। यह आवश्यकता उन बैंकिंग संगुटों के बारे में भी और अधिक महसूस होती है, जिन्होंने विदेशों में अपने कार्यालय, अनुषंगी कंपनियां, सहायक कंपनियां खोल रखे हैं। इसके अलावा, बासेल II मानदंडों को कार्यान्वित कर दिए जाने के परिणामस्वरूप, विदेशों में परिचालनरत भारतीय बैंकों/भारत में परिचालनरत विदेशी बैंकों को तीनों ही स्तंभों के मामले में दोहरे (स्वदेश और मेजबान देश) विनियामक और पर्यवेक्षी निर्धारणों का पालन करना होगा । इससे निम्नलिखित आवश्यकताएं पैदा हो जाएंगी (i) समरूपण/समाधान के लिए रिज़र्व बैंक और अन्य विदेशी विनियामकों के बीच वार्ता (ii) रिज़र्व बैंक और अन्य विदेशी विनियामकों के बीच पर्यवेक्षी सूचनाओं का आदान-प्रदान, और (iii) स्थानीय पर्यवेक्षकों द्वारा भारतीय बैंकों के विदेशों में स्थित शाखाओं/कार्यालयों का औपचारिक दौरा/सूचना में हिस्सेदारी और इसकी प्रतिलोमी कार्रवाई।

## ई-बैंकिंग

10.189 ई-बैंकिंग प्रौद्योगिकीय नवोन्मेषों के माध्यम से बैंकिंग प्रणाली के लिए कई एक अवसर उपलब्ध कराती है। हालांकि, लाभ के साथ ही इसमें कई प्रकार की जोखिमें भी निहित होती हैं। इस प्रकार, ई-बैंकिंग की सफलता उसके द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली सुविधाओं के वित्तीय परिचालनों से जुड़ी जोखिमों से सफलतापूर्वक निपटते हुए प्रभावी रूप से उपयोग किए जाने पर निर्भर करती है । मोबाइल बैंकिंग के मामले में इस प्रकार की जोखिमें अधिक होती हैं, क्योंकि इसमें काफी अधिक संख्या में लोगों और अपेक्षाकृत अधिक विस्तार का समावेश होता है। बैंक और रिज़र्व बैंक दोनों ही के लिए प्रौद्योगिकीय नवोन्मेषों द्वारा प्रस्तुत जोखिमों के प्रति सतर्क बने रहने की चुनौती होगी।

## VIII. सारांश

10.190 पिछले दो दशकों में विश्व भर में पैदा हुए बैंकिंग संकटों की शृंखलाओं से यह पता चलता है कि बैंकिंग संकटों का वित्तीय प्रणाली और उसके साथ-ही-साथ वास्तविक अर्थव्यवस्था पर भी व्यवस्थापरक और अवरोधक प्रभाव होता है। यह तथ्य कि अर्थव्यवस्थाएं वित्तीय प्रणालियों पर अधिक आश्रित हो गई हैं, यह सूचित करता है कि वित्तीय प्रणालियों के गलत कार्य करने पर होने वाले प्रतिकूल परिणामों के इसके पहले होने वाले परिणामों की अपेक्षा अधिक गंभीर होने की संभावना होती है। पिछले दशक अथवा उसके आसपास की अवधि ने वित्तीय अस्थिरता के लिए चुकाए गए मूल्यों के प्रचुर साक्ष्य उपलब्ध करा दिए हैं। बैंकिंग संकट और अर्थव्यवस्था पर होने वाले उसके नकारात्मक प्रभाव से बचने और इसे कम करने के लिए, विश्व के प्रायः सभी देशों ने पूंजी पर्याप्तता संबंधी अपेक्षाएं लागू करते हुए, उनके परिचालनों एवं प्रबंधन का पर्यवेक्षण करते हुए तथा उनके कार्यकलापों एवं प्रवेश पर प्रतिबंध लगाते हुए बैंकों का विनियमन किया है। अधिकांश देशों में सुस्पष्ट अथवा अन्तर्निहित निक्षेप बीमा की व्यवस्था के साथ ही दिवालिया बैंकों को बेल-आउट करने सहित समाधान कार्यविधियां मौजूद हैं।

10.191 संपूर्ण विश्व में बैंकिंग संस्थाओं का यथोचित रूप से गहन विनियमन और पर्यवेक्षण किए जाने का मूलभूत तर्काधार उनका 'विशेष' स्वरूप रहा है, क्योंकि वे गैर-संपाश्र्विकीकृत सार्वजनिक जमाराशियां स्वीकार करते हैं, भुगतान एवं निपटान प्रणालियों के अंग होते हैं तथा मौद्रिक नीति प्रेषण के एक महत्त्वपूर्ण चैनल होते हैं। अत: किसी प्रणालीगत संकट को पूर्वक्रमित करने हेतु बैंकिंग प्रणाली के माध्यम से संक्रामक प्रभाव के फैलाव को रोकना बैंकों के विनियमन का सुस्पष्ट उपसाध्य बन जाता है। निस्संदेह, एक सुविनियमित और कार्यकुशल बैंकिंग क्षेत्र से वित्तीय प्रणाली की आवंटनात्मक कार्यकुशलता में भी वृद्धि हो जाती है, जिससे आर्थिक वृद्धि का कार्य सुगम हो जाता है (लीलाधर, 2007)। इसलिए बैंकिंग प्रणाली की सुरक्षा और सुदृढ़ता को सुनिश्चित करना वित्तीय विनियामकों का प्राथमिक उद्देश्य बन जाता है। जबकि बैंकों के विनियमित एवं पर्यवेक्षित करने का ढांचा पिछले कुछ दशकों में बाज़ार और प्रोद्यौगिकीय घटनाओं के आगे-पीछे विकसित हुआ है, वहीं इस कार्य में अन्तर्निहित मूलभूत उद्देश्यों में शायद ही कोई परिवर्तन हुआ हो।

10.192 हाल के वर्षों में विनियमन और पर्यवेक्षण के कतिपय पहलुओं के संबंध में नयी सोच विकसित हो गई है। संपूर्ण विश्व के विनियामकों के समक्ष प्रस्तुत एक महत्त्वपूर्ण चुनौती है एक ऐसा उपयुक्त विनियामक ढांचा तैयार करना जो त्वरित गति से बदलते वित्तीय भू-दृश्य को ध्यान में रख सके। कुछ देशों ने कॉरपोरेट ढांचे में हुए परिवर्तनों का प्रतिबिंब देखने हेतु एकल विनियामक दृष्टिकोण अपनाया है। आस्ट्रेलिया ने एक अनूठा उद्देश्य आधारित विनियामक ढांचा अपना रखा है। अमरीका, जिसने कुछ वर्षों पहले एक छत्र पर्यवेक्षी दृष्टिकोण अपना रखा था, अब यह महसूस करता है कि दीर्घकालिक दृष्टि से विनियामक ढांचा उद्देश्य-परक विनियमन की दिशा में जा सकता है। इंग्लैंड जैसे कुछ देशों ने मौद्रिक नीति के साथ हितों के टकराव से बचने के लिए पर्यवेक्षण को केन्द्रीय बैंक से अलग कर दिया है। हालांकि, हाल ही की नार्दर्न रॉक की घटना ने यह सिद्ध कर दिया है कि इस प्रकार की प्रणालियों की स्वयं अपनी कमजोरियां हुआ करती हैं, क्योंकि अंतिम ऋणदाता और पर्यवेक्षी अधिकारी के बीच समन्वय के अभाव को बैंक की विफलता के पीछे निहित एक कारक माना जाता है। दुर्लभ पर्यवेक्षी संसाधनों और द्रुत

उत्पाद नवोन्मेषों को ध्यान में रखते हुए पर्यवेक्षण के पूरक तत्व के रूप में बाज़ार अनुशासन पर अधिकाधिक बल दिया जा रहा है। तीव्र गति से विकासशील वित्तीय क्षेत्र और विनियामक संस्थाओं की निरंतर विस्तारशील नियम-पुस्तिकाओं ने कुछ देशों को सिद्धांत आधारित विनियमन अपनाने पर विवश कर दिया है। एक अन्य महत्त्वपूर्ण घटना सुरक्षा-पाश से संबंधित है। हाल के वर्षों में सुस्पष्ट निक्षेप बीमा प्रणाली लागू करने वाले देशों की संख्या में तेज़ी से वृद्धि हुई है। जबकि निक्षेप बीमा प्रणाली की डिज़ाइन देश-विशिष्ट होती है, कई एक देशों ने सपाट निक्षेप बीमा प्रणाली के स्थान पर परिवर्ती दर निक्षेप बीमा प्रणाली अपना ली है ।

10.193 रिज़र्व बैंक ने विश्व की सर्वोत्तम प्रणालियों से तुलनीय बनाने की दृष्टि से एक सुरक्षित एवं सुदृढ़ बैंकिंग प्रणाली सुनिश्चित करने हेतु विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचे को क्रमिक रूप से परिष्कृत कर दिया है। हालांकि, वित्तीय क्षेत्र के विकास की तीव्र गति के अनुसरण में नयी चुनौतियां उपस्थित होती रहती हैं। आगे बढ़ने पर रिज़र्व बैंक के समक्ष कतिपय चुनौतियां उपस्थित होंगी। ये चुनौतियां निम्नानुसार होंगीः (i) वित्तीय संगुटों का विनियमन करने के लिए उपयुक्त व्यवस्था की तलाश करना; (ii) बैंकों के बढ़ते सीमा-पार परिचालनों से उठने वाले मुद्दों का समाधान करने हेतु स्वदेश-मेजबान देश सहयोग का विकास करना; और (iii) तीव्र गति से बढ़ रही ई-बैंकिंग, विशेषतः मोबाइल बैंकिंग सेवाओं से उठने वाली जोखिमों के विरुद्ध सुरक्षोपाय निर्मित करना। इन चुनौतियों का सामना उपयुक्त उपाय आरंभ करके किया जा सकता है। मौद्रिक नीति के निर्धारण और पर्यवेक्षण के बीच अपेक्षित सहवर्तिता को ध्यान में रखते हुए, यह महसूस किया जाता है कि बैंकिंग क्षेत्र के पर्यवेक्षण का दायित्व रिज़र्व बैंक के पास ही पूर्ववत बना रहना चाहिए। आगे बढ़ते हुए, यह सुनिश्चित करना होगा कि वित्तीय संगुटों का पर्याप्त विनियमन किया जाए। कई स्वदेश-मेजबान देश संबंधी मुद्दे उठेंगे, जिनके लिए विदेशों के अन्य विनियामकों के साथ वार्तालाप तथा सूचना का आदान-प्रदान करना आवश्यक होगा। आगामी वर्षों में ई-वित्त उत्पादों के उपयोग में महत्त्वपूर्ण रूप से वृद्धि होने वाली है, जो बैंकों को कुछ जोखिमों के प्रति अरक्षित कर सकता है। अत: रिज़र्व बैंक और बैंकों के लिए यह आवश्यक है कि वे इस प्रकार की जोखिमों के प्रति सतर्क रहें।

## अनुबंध X.1
## वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड द्वारा की गई महत्त्वपूर्ण पहलकदमियां

वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड (बीपीएस) ने वित्तीय क्षेत्र को सुदृढ़ बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है । वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड द्वारा उसकी स्थापना के समय से ही लिए गए कुछ निर्णय/दिए गए निदेश निम्नानुसार हैं :-

पर्यवेक्षण

- भारत में बैंकों की अप्रत्यक्ष निगरानी की व्यवस्था की गई, जिसके मुख्य संघटकों में विवेकसम्मत पर्यवेक्षी रिपोर्टिंग ढांचे के आधार पर बैंकों और अन्य ऋणदायी संस्थाओं पर निगरानी हेतु आंतरिक प्रणाली की स्थापना, समस्त पर्यवेक्षित संस्थाओं की एक 'मेमोरी' का निर्माण तथा एक बाज़ार आसूचना एवं निगरानी एकक की स्थापना शामिल हैं।
- कैमेल्स मॉडल के आधार पर संकेन्द्रण, प्रक्रिया रिपोर्टिंग और अनुवर्तन की दृष्टि से बैंक निरीक्षणों की एक प्रणाली स्थापित की गई, जो बैंकों की पूंजी पर्याप्तता, आस्ति की गुणवत्ता, प्रबंधन, अर्जन, चलनिधि और प्रणालियों तथा नियंत्रण का मूल्यांकन करती है, किन्तु पूर्ववर्ती निरीक्षण प्रणाली के तहत लेखा-परीक्षा के तत्वों को छोड़ देती है। कालान्तर में इसे वित्तीय संस्थाओं तक भी विस्तारित कर दिया गया।
- बैंकों के सांविधिक लेखा-परीक्षकों की भूमिका को उनका एजेन्टों के रूप में उपयोग करते हुए पर्यवेक्षी प्रक्रिया में विस्तारित कर दिया गया। लेखा-परीक्षा उप-समिति ने अन्य बातों के साथ-साथ बैंकों के अंतिम लेखों में और प्रकटन तथा पारदर्शिता की आवश्यकता और उसकी स्थिति की समीक्षा की और यह निर्णय किया कि वर्ष 1997-98 से बैंकों की वार्षिक रिपोर्टों में 'लेखा-टिप्पणियों' में सात अतिरिक्त वित्तीय अनुपातों को भी प्रकटित किया जाना चाहिए। सभी भारतीय निजी क्षेत्र के बैंकों को वर्ष 2001-02 और उसके बाद उनके सांविधिक लेखा-परीक्षकों के रूप में नियुक्त की जाने वाली लेखा-परीक्षा फर्मों के लिए निर्धारित न्यूनतम पात्रता मानदंडों के बारे में सूचित किया गया।
- पर्यवेक्षित संस्थाओं में कॉरपोरेट अभिशासन, आंतरिक नियंत्रण और लेखा-परीक्षा कार्य और प्रबंधन सूचना तथा जोखिम नियंत्रण प्रणालियों जैसी प्रतिरक्षात्मक व्यवस्थाओं को पर्यवेक्षण के कार्य के ही विस्तार के रूप में सुदृढ़ बनाया गया।
- सितम्बर 2001 में सूचीबद्ध अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के लिए लागू की गई अर्ध-वार्षिक समीक्षा की प्रणाली तथा उप-समिति द्वारा अनुमोदित समीक्षा रिपोर्टों के आरूप को भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (सेबी) के परामर्श से अंतिम रूप दिया गया।
- सभी बैंकों में विनियामक हस्तक्षेप प्रक्रिया में सुसंगति सुनिश्चित करने के लिए बैंकिंग पर्यवेक्षण बोर्ड ने दिसम्बर 2002 में त्वरित सुधारात्मक कार्रवाइयों हेतु एक ढांचे को अनुमोदित किया, जिसमें विभिन्न सतर्कता बिन्दुओं पर सुधारात्मक विन्यस्त कार्रवाइयों और विवेकसम्मत कार्रवाइयों का समावेश है। उभरती पर्यवेक्षी चिंताओं को ध्यान में रखते हुए बैंकिंग पर्यवेक्षण बोर्ड ने गंभीर चिंताएं दर्शाने वाले बैंकों को मासिक निगरानी के तहत रखने का निर्णय किया। इस प्रणाली के तहत जोखिम-भारित आस्ति की तुलना में पूंजी का अनुपात, संवेदनशील क्षेत्रों में एक्सपोजर, प्रबंधकीय समस्याओं और प्रवर्तकों की शेयर-पूंजी जैसे बैंकों के कुछ प्रमुख वित्तीय मापदंडों का उनके द्वारा की गई प्रगति पर निगरानी रखने हेतु प्रत्येक माह के अंत में विश्लेषण किया जाता है। प्रमुख वित्तीय मापदंडों के विश्लेषण के माध्यम से अभिज्ञात इन बैंकों से संबंधित पर्यवेक्षी चिंताओं को प्रत्येक माह में वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के विचारार्थ और मार्गदर्शन दिए जाने के निमित्त उसके समक्ष प्रस्तुत किया जाता है।
- वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड ने बैंकों में आंतरिक लेखा कार्य और व्यवस्था में सुधार लाने हेतु बहियों को संतुलित किए जाने, अंतर-शाखा और नॉस्त्रों खातों के समाधान से संबंधित विश्लेषणात्मक रिपोर्टों की समीक्षा करते हुए तथा आगे की कार्रवाई के लिए आवश्यक निर्देश देते हुए महत्त्वपूर्ण रूप से बल दिया है। धोखाधड़ियों पर निगरानी रखे जाने के एक अंग के रूप में बैंकों को बैंक धोखाधड़ियों के कानूनी पहलुओं पर समिति (अध्यक्षः डॉ. मिश्रा) की उन सिफारिशों को कार्यान्वित करने की सलाह दी गई है, जिन्हें किसी प्रकार के विधायी परिवर्तनों के बिना लागू किया जा सकता है।
- वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के मार्गदर्शन में वर्ष 2003-04 के दौरान चुनिंदा बैंकों में जोखिम-आधारित पर्यवेक्षण प्रक्रिया प्रायोगिक आधार पर प्रारंभ में कैमेल्स/पूंजी पर्याप्तता, आस्ति की गुणवत्ता, चलनिधि, अनुपालन और प्रणाली के अधीन निरीक्षण की वर्तमान प्रणाली के समानांतर लागू की गई।
- वर्ष 2006-07 में वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड ने यह निदेश दिया कि संवेदनशील क्षेत्रों में बैंकों के एक्सपोज़र के संबंध में पर्यवेक्षी समीक्षा प्रक्रिया (एसआरपी) का दूसरा दौर परोक्ष आंकड़ों के आधार पर चुनिंदा बैंकों में प्रारंभ किया जाए। इस प्रक्रिया में अलग-अलग नियंत्रक परिवेश, कार्यविधियों और आंतरिक एवं विनियामक मानदंडों के अनुपालन के संदर्भ में निर्धारण करने हेतु प्रत्यक्ष संकेन्द्रित जाँच शामिल होती है। तदनुसार, चुनिंदा बैंकों में प्रत्यक्ष छानबीन की गई, जिनसे यह पता चला कि बैंकों ने स्थावर संपदा क्षेत्र में उनके बढ़े हुए एक्सपोज़रों से जुड़ी जोखिमों को कम करने हेतु कुछ नीतियां लागू कर रखी हैं।
- बैंकिंग क्षेत्र में हो रहे विशाल एवं महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों से सामंजस्य बिठाने के लिए वार्षिक वित्तीय निरीक्षण के दौरान भारत में वाणिज्यिक बैंकों के श्रेणी निर्धारण के उद्देश्य से प्रयुक्त होने वाले कैमेल्स/कैल्क्स पर आधारित पर्यवेक्षी श्रेणी निर्धारण मॉडल को मूल्यांकन में अधिकाधिक उद्देश्यपरकता सुनिश्चित करने हेतु उद्योग के औसतों/आवृत्ति के वितरणों के आधार पर न्यूनतम मानदंड लागू करते हुए व्यापक रूप से संशोधित कर दिया गया।

- जोखिम प्रोफाइल सांचों तथा पर्यवेक्षी जोखिम रेटिंग प्रणाली को संशोधित किया गया तथा जोखिम मैपिंग और जोखिम समूहन की एक नयी कार्यप्रणाली निर्धारित की गई। बैंकों को जोखिम प्रोफाइल तैयार करने के कार्य में संशोधित आरूप का उपयोग करने की सलाह दी गई।

*विवेकसम्मत उपाय*

- पूंजी पर्याप्तता मानकों और प्रकटन संबंधी मापदंडों का निर्धारण किया गया। गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के लिए एक नयी पर्यवेक्षी व्यवस्था और बाहरी सनदी लेखाकारों के माध्यम से प्रत्यक्ष पर्यवेक्षी कार्यप्रणाली भी गठित की गई। बैंकिंग पर्यवेक्षण बोर्ड ने गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को प्रमाण पत्र जारी किए जाने हेतु तौर-तरीकों को भी अनुमोदित किया।
- वर्ष 2004 में भारी संख्या में शहरी सहकारी बैंकों के समक्ष उपस्थित शोध क्षमता और चलनिधि से संबंधित गंभीर समस्याओं को ध्यान में रखते हुए संबंधित राज्य सरकारों को यह सुनिश्चित करने के लिए कि ये बैंक जोखिम-भारित आस्तियों की तुलना में पूंजी अनुपात (सीआरएआर) का न्यूनतम स्तर प्राप्त कर लें, पूंजी निधि में बढ़ोत्तरी करने की सलाह दी गई।
- स्थावर संपदा क्षेत्र के प्रति बैंकों के एक्सपोज़रों के कारण उनके समक्ष उपस्थित जोखिमों को पहचानते हुए स्थावर संपदा एक्सपोज़रों के संबंध में प्रावधानीकरण और जोखिम भारों को कठोर बना दिया गया।
- बासेल II के तहत वर्धित पूंजीगत निधियों की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड द्वारा बैंकों के पूंजी जुटाने के विकल्पों पर विचार किया गया तथा पूंजी जुटाने के लिए नवोन्मेषी टियर 1 लिखतों तथा उच्चतर टियर 2 लिखतों जैसे अतिरिक्त लिखतों के प्रवर्तन के संबंध में बैंकों को ब्यौरेवार दिशानिर्देश जारी किए गए। अस्थायी प्रावधानों के उपयोग को युक्तिपरक बनाते हुए बैंकों को विस्तृत दिशा-निर्देश जारी किए गए और उनमें यह विनिर्दिष्ट किया गया कि अस्थायी प्रावधानों का उपयोग क्षत आस्तियों में विशिष्ट प्रावधान करने हेतु असाधारण स्थितियों में केवल आकस्मिकताओं के लिए ही निदेशक मंडल से अनुमोदन प्राप्त करने के बाद और भारतीय रिज़र्व बैंक की पूर्वानुमति से ही किया जा सकता है और यह कि बैंकों के निदेशक मंडल को असाधारण स्थितियों को परिभाषित करते हुए और जिस स्तर तक अस्थायी प्रावधान किए जाने चाहिए उसके संबंध में एक अनुमोदित नीति निर्धारित करनी चाहिए। जहां तक आरक्षित निधियों के विनियोग का संबंध है, यह निर्णय किया गया कि यह सुनिश्चित करने के लिए कि सांविधिक आरक्षित निधियों के आहरण का आश्रय विवेकसम्मत ढंग से किया जाए और उससे किसी भी विनियामक निर्धारण का उल्लंघन न हो। बैंकों को स्वयं अपने हित में सांविधिक आरक्षित निधियों से किसी प्रकार का विनियोग किए जाने से पहले रिज़र्व बैंक से पूर्वानुमोदन प्राप्त कर लेना चाहिए।
- बासेल ढांचे के तहत पूंजी की पर्याप्तता और किसी बैंक के परिचालनों से जुड़ी हानियों की संभाव्यता उसी आस्तियों की जोखिमयुक्तता से संबंधित होती हैं। इस भारित-आस्ति वाले दृष्टिकोण के तहत बैंकों के देयता पक्ष से संबंधित जोखिमों पर पर्याप्त रूप से ध्यान नहीं दिया जाता था। बैंकों के देयता पक्ष से संबंधित संकेन्द्रण जोखिम के बढ़ते महत्त्व और उसके प्रति बढ़ती जागरूकता के संदर्भ में बोर्ड ने इस मामले की विस्तृत रूप से जांच की तथा बैंकों के देयता पक्ष विशेषतः अंतर-बैंक देयताओं (आइबीएल) में संकेन्द्रण के स्तर में कमी लाने के उद्देश्य से यह निर्धारित किया गया कि किसी बैंक की अंतर-बैंक देयता पिछले वर्ष के 31 मार्च के दिन उसकी निवल मालियत के 200 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। हालांकि, अलग-अलग बैंक, उनके निदेशक मंडलों के अनुमोदन से उनके कारोबार मॉडल को ध्यान में रखते हुए उनकी अंतर-बैंक देयताओं के लिए कमतर सीमाएं निर्धारित कर सकते हैं । उन बैंकों, जिनका जोखिम-भारित आस्ति की तुलना में पूँजी का अनुपात पिछले वर्ष के 31 मार्च के दिन न्यूनतम (9 प्रतिशत) से कम से कम 25 प्रतिशत अधिक अर्थात् 11.25 प्रतिशत है, को अंतर बैंक देयताओं के मामले में उनकी निवल मालियत 300 प्रतिशत की अधिक सीमा तक रखे जाने की अनुमति है। ऊपर निर्धारित सीमा में भारत में केवल निधि-आधारित अंतर-बैंक देयता (भारत के भीतर परिचालनरत बैंकों की विदेशी मुद्रा में अंतर-बैंक देयताओं सहित) ही शामिल है। दूसरे शब्दों में, रिज़र्व बैंक द्वारा निर्धारित मांग मुद्रा उधारों से संबंधित वर्तमान सीमा उपर्युक्त सीमाओं के तहत उप-सीमा के रूप में लागू होती है।
- जहां बैंकों द्वारा आवासीय संपत्तियों के बंधक की प्रतिभूति पर व्यक्तियों को प्रदत्त आवासीय ऋणों तथा राष्ट्रीय आवास बैंक द्वारा मान्यताप्राप्त और पर्यवेक्षित आवास वित्त कंपनियों की बंधक-समर्थित प्रतिभूतियों में निवेश पर जोखिम भार को पूंजी पर्याप्तता के प्रयोजनों हेतु बढ़ाकर 75 प्रतिशत कर दिया गया था, वहीं उन्हें रिहाइशी आवासीय संपत्तियों के बंधक की प्रतिभूति पर व्यक्तियों को दिए गए 20 लाख रुपये (जिसे बाद में बढ़ा कर 30 लाख रुपये कर दिया गया) तक के आवासी ऋणों तथा बंधक समर्थित ऐसी प्रतिभूतियों, जो आवासीय ऋणों द्वारा समर्थित होती है तथा राष्ट्रीय आवास बैंक द्वारा विनियमित आवास वित्त कंपनियों द्वारा जारी की गई होती हैं, के लिए घटाकर 50 प्रतिशत कर दिया गया। वाणिज्यिक स्थावर संपदा हेतु जोखिम-भार 150 प्रतिशत नियत किया गया। इसके अलावा, 'मानक आस्तियों' के लिए प्रावधानीकरण अपेक्षा को वाणिज्यिक स्थावर संपदा ऋणों और 20 लाख रुपये से अधिक के वैयक्तिक आवासीय ऋणों के मामले में 0.40 प्रतिशत से बढ़ाकर 1 प्रतिशत कर दिया गया।

*कॉरपोरेट अभिशासन*

- कॉरपोरेट अभिशासन पर बैंकों/वित्तीय संस्थाओं के निदेशकों के परामर्शी दल (अध्यक्ष : डॉ. ए.एस. गांगुली) की रिपोर्ट में की गई सिफारिशों के आधार पर सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के बैंकों को जून 2002 में एक प्रभावी कॉरपोरेट अभिशासन ढांचे के गठन की कार्रवाई आरंभ किए जाने की सलाह दी गई।
- निजी क्षेत्र के बैंकों के स्वामित्व और उनमें अभिशासन के संबंध में एक व्यापक नीतिगत ढांचा तैयार किया गया, जिसमें विविधीकृत स्वामित्व और बैंकों द्वारा इक्विटी की परस्पर धारिता को प्रतिबंधित किए जाने की परिकल्पना की गई है।

- वर्ष 2004-05 के दौरान बैंकिंग पर्यवेक्षण बोर्ड ने अपना ध्यान बैंकों के स्वामित्व और उनमें अभिशासन; विवेकसम्मत मानदंडों में अंतरराष्ट्रीय उत्तम परंपराओं की दिशा में और अधिक प्रगति; अधिकाधिक विनियमन तथा बैंकिंग नीतियों के युक्तिकरण और अपने ग्राहक को जानिए मानदंडों के अनुपालन पर केन्द्रित किया। यह निर्णय लिया गया कि उन बैंकों पर कड़ी निगरानी रखी जाए, जिनमें प्रभुत्वपूर्ण स्वामित्व अथवा अन्य कारणों के आधार पर अभिशासन संबंधी चिंताएं मौजूद हों। अतएव, वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड ने बैंकों में विविधीकृत स्वामित्व की वांछनीयता, महत्त्वपूर्ण शेयरधारकों, निदेशकों, मुख्य कार्यपालक अधिकारी की 'योग्य और उपयुक्त' हैसियत तथा न्यूनतम पूंजी/निवल मालियत संबंधी मानदंड की आवश्यकता पर बल दिया। नवम्बर 2005 में क्रेडिट कार्डों के संबंध में दिशानिर्देश जारी किए गए, जिनमें अनधियाचित कार्डों तथा वार्षिक आधार पर प्रभारित किए जाने वाले ब्याज सहित विविध प्रकार के प्रभारों के प्रकटन जैसे मुद्दों का समावेश था। विलयनों की प्रक्रिया के निर्धारण, अदला-बदली अनुपातों के निर्धारण तथा प्रकटन के संबंध में भी दिशानिर्देश जारी किए गए । इसके अलावा बैंकों द्वारा अनर्जक वित्तीय आस्तियों की खरीद/बिक्री हेतु दिशानिर्देशों को उसके मूल्यांकन एवं कीमत-निर्धारण से संबंधित पहलुओं और विवेकसम्मत मानदंडों सहित अंतिम रूप प्रदान किया गया। बैंकों द्वारा सेवाओं की आउटसोर्सिंग कराए जाने के संबंध में भी दिशानिर्देश जारी किए गए।

*स्थानीय क्षेत्र बैंक*

- 1996 में एक समीक्षा दल की सिफारिशों के आधार पर यह निर्णय लिया गया कि जब तक वर्तमान स्थानीय क्षेत्र बैंकों का कार्य सुदृढ़ आधार पर न होने लगे, लाइसेंस जारी किए जाने के कार्य को निलंबित रखा जाए।

*सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिए स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना*

- बैंकिंग पर्यवेक्षण बोर्ड ने सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना को कार्यान्वित किए जाने हेतु उपायों की सिफारिश की। ये उपाय मोटे तौर पर विनियामक मानकों के प्रति किसी प्रकार का समझौता किए बिना एकमुश्त भार के रूप में प्रकटीकरण, व्यय के आवंटन तथा बैंकों को राहत प्रदान किए जाने से संबंधित थे।

*वित्तीय संगुट*

- वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड ने बैंकों के अंतःसमूह लेन-देनों के कारण उद्भूत होने वाली जोखिमों को भी ध्यान में रखा है। वित्तीय संगुटों के रूप में अभिज्ञात संस्थाओं/कंपनियों पर निगरानी रखने की एक व्यवस्था लागू की गई। उक्त व्यवस्था को कार्यान्वित किए जाने के एक अंग के रूप में रिजर्व बैंक अभिहित संस्थाओं/कंपनियों से उसके अधिकार क्षेत्र में आने वाले 17 वित्तीय संगुटों (इस समय 8 वित्तीय संगुट) के बारे में आंकड़े/सूचना प्राप्त करता है। वित्तीय संगुटों की संबंधित विवरणियों के विश्लेषण से लेखा-परीक्षकों की सर्वनिष्ठता, निदेशकों की सर्वनिष्ठता, कुछ निदेशकों के समूह की अन्य कंपनियों के कर्मचारी होने, ग्राहकों से संबंधित आंकड़ों की गोपनीयता, दूरवर्ती संबंध को प्रभावित करने वाली कार्यपालकों की अंतःसमूह आवाजाही, समूह की कंपनियों के बीच बैक ऑफिस व्यवस्था/सेवा व्यवस्था की सर्वनिष्ठता, समूह की पारस्परिक निधि कंपनी की यूनिटों तथा समूह की कंपनी द्वारा जारी बंधक समर्थित प्रतिभूतियों में पर्याप्त निवेश, बड़ी सहूलियत वाले लेन-देनों सहित कुछ अंतःसमूह लेन-देनों की रिपोर्ट न प्रस्तुत किया जाना आदि जैसे मुद्दे उठे हैं। अनिर्णीत मुद्दों/पर्यवेक्षी चिंताओं के निराकरण तथा वित्तीय संगुटों की निगरानी व्यवस्था को सुदृढ़ करने हेतु अन्य मुख्य विनियामकों को साथ लेकर अभिहित संस्थाओं/कंपनियों के मुख्य कार्यपालक अधिकारी के साथ किए गए अर्ध-वार्षिक विचार-विमर्श में कुछ मुद्दे उभर कर सामने आए हैं, यथा समूह-व्यापक पर्यवेक्षण व्यवस्था का अभाव, उद्यम-व्यापक जोखिम प्रबंधन व्यवस्था का अभाव, सामूहिक अनुपालन नीति का अभाव, अंतःसमूह लेन-देनों और एक्सपोजरों के संबंध में किसी नीति का अभाव, समूह-व्यापक पूंजी आकलन का अभाव, निदेशकों, मुख्य कार्यपालक अधिकारी और शेयरधारकों के लिए 'योग्य एवं उपयुक्त' मानदंड को लागू किए जाने से संबंधित मुद्दा, समूह-व्यापक चलनिधि प्रबंधन नीति, संकेन्द्रण जोखिम की पहचान और प्रबंधन, आउटसोर्सिंग/पूंजी बाजार एक्सपोजरों के बारे में रिजर्व बैंक के दिशा-निर्देशों का कार्यान्वयन, समूह की कंपनियों में धोखाधड़ियों से संबंधित मुद्दे।

*शहरी सहकारी बैंक*

- भारतीय बैंकिंग प्रणाली में शहरी सहकारी बैंकों की भूमिका और महत्व को उचित रूप से स्वीकार किया गया है। तथापि, कई यूसीबी के पास पर्याप्त पूंजी निधि न होने की प्रवृत्ति देखने में आई है। शहरी सहकारी बैंकों की पूंजी निधियों को बढ़ाने के मुद्दे पर विचार किया गया है। यह महसूस किया जाता है कि शहरी सहकारी बैंकों को चार नयी लिखत, यथा-अपरिवर्तनीय डिबेंचर/बॉण्ड, विशेष शेयर, प्रतिदेय संचयी अधिमान शेयर और दीर्घावधिक जमाराशियां जारी करने की अनुमति दी जानी चाहिए। विशेष शेयरों, जो स्वरूप की दृष्टि से मताधिकाररहित और बेमियादी (स्थायी) होते हैं, का सुझाव उन्हें साधारण शेयरों से अलग रखने हेतु दिया गया है, ताकि शहरी सहकारी बैंक प्रीमियम पर पूंजी जुटा सकें। यह भी महसूस किया गया कि रिजर्व बैंक श्रेणी-निर्धारण संबंधी आवश्यकता के बारे में अपवाद की व्यवस्था कर सकता है, ताकि वाणिज्य बैंक शहरी सहकारी बैंकों द्वारा जारी किए जाने वाले विशेष शेयरों और टियर II बॉण्डों में गैर सूचीबद्ध प्रतिभूतियों में निवेश हेतु निर्धारित अधिकतम सीमा के भीतर निवेश कर सकें और यह कि नये लिखतों के माध्यम से जुटायी गई निधियों को सीआरआर/एसएलआर से छूट प्रदान की जानी चाहिए। इन मुद्दों पर बोर्ड में और अधिक विचार-विमर्श की प्रक्रिया चल रही है।

*प्रशिक्षण नीति*

- अधिकारियों को उनकी वैयक्तिक भूमिकाएं निभाने और आजीविका संबंधी प्रत्याक्षाओं को पूरा करने के लिए आवश्यक सक्षमता का स्तर प्राप्त करने में समर्थ बनाने के लिए उनके लिए एक प्रशिक्षण नीति लागू की गई।

# XI समग्र मूल्यांकन

11.1 एक कार्य-कुशल एवं सुदृढ़ बैंकिंग प्रणाली आर्थिक संवृद्धि को बढ़ावा देने, वित्तीय प्रवाहों की मध्यस्थता करने, भुगतान प्रणाली में सहायता करने तथा मौद्रिक नीति के संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। बैंक उधार देने में सूचना की समस्याओं तथा प्रोत्साहन समस्याओं से उद्भूत उधारकर्ताओं के नैतिक अवरोधपूर्ण व्यवहार से निपटने में प्रभावी होते हैं। बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशल कार्य प्रणाली का परिणाम संसाधनों के और अधिक कारगर आवंटन की दृष्टि से प्रचुर लाभ के रूप में सामने आता है। बैंकों ने जर्मनी और जापान जैसे कुछेक देशों तथा भारत सहित अधिकांश उभरती बाज़ार-उन्मुख अर्थव्यवस्थाओं के आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। संवृद्धि का वित्तीयन करने के अलावा, बैंकिंग प्रणाली वह वाहक नली होती है जिसके माध्यम से शेष वित्तीय प्रणाली में मौद्रिक नीति के स्पंदनों को संचारित किया जाता है। बैंक भुगतान और निपटान प्रणालियों के मुख्य सहभागी भी होते हैं । एक सुरक्षित, निरापद और कार्य-कुशल भुगतान एवं संतुलन प्रणाली वित्तीय प्रणाली की स्थिरता की महत्त्वपूर्ण पूर्वापेक्षा होती है । इस प्रकार, बैंक आर्थिक संवृद्धि और मूल्य एवं वित्तीय दोनों ही प्रकार की स्थिरता के दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण होते हैं ।

11.2 उभरती बाज़ार-उन्मुख अर्थव्यवस्थाओं के आर्थिक विकास में बैंकों द्वारा निभाई जाने वाली एक महत्त्वपूर्ण भूमिका बचतकर्ताओं की आश्वस्त आय हेतु उत्सुकता; निधियों की नकद उपलब्धता और निरापदता, क्योंकि बैंकिंग संस्थाओं को सरकार की या तो अव्यक्त अथवा सुनिश्चित गारंटी प्राप्त होती है; तथा वित्तीय जोखिमों को नियंत्रित करने में बचतकर्ताओं की अपर्याप्त क्षमता जैसे कतिपय कारकों से उद्भूत होती है । बैंक उभरते बाज़ारों में विशिष्ट स्थिति रखते हैं, क्योंकि अन्य वित्तीय मध्यवर्तियों और वित्तीय बाज़ारों के विकास में वे अग्रणी भूमिका निभाते हैं। इसके अलावा, कॉरपोरेट और अन्य खण्डों को सुविकसित इक्विटी और बांड बाज़ारों के अभाव के कारण उनकी वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु अधिकाधिक रूप से बैंकिंग क्षेत्र पर ही निर्भर होना पड़ता है।

11.3 पिछले वर्षों में, विश्व भर की बैंकिंग प्रणालियों में अविनियमन, प्रौद्योगिकीय नवोन्मेषों और वैश्वीकरण जैसे विविध कारकों का सहारा पा कर महत्त्वपूर्ण रूपान्तरण हुए हैं। इन घटनाओं के परिणामस्वरूप अधिक प्रतिस्पर्धात्मक दबाव निर्मित हुए हैं। अतएव बैंक नवोन्मेषी उत्पादों की शुरुआत कर रहे हैं, आय के अपेक्षाकृत नये स्रोत तलाश रहे हैं, गैर-परंपरागत क्रियाकलापों के रूप में विविधीकरण अपना रहे हैं तथा पूंजी में बचत कर रहे हैं। इन सभी घटनाओं ने कतिपय विनियामक एवं पर्यवेक्षी चुनौतियां खड़ी कर दी हैं।

11.4 भारत में बैंकिंग प्रणाली, जैसी कि पिछले अध्यायों में चर्चा की जा चुकी है, पिछले वर्षों में विभिन्न चरणों से गुजरी है । सामाजिक नियंत्रण, बैंकों के राष्ट्रीयकरण, प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों के उधारों से संबंधित लक्ष्यों और 1960 वाले दशक के उत्तरार्ध से भारतीय रिज़र्व बैंक/सरकार द्वारा की गई विविध प्रकार की पहलकदमियों के फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में शाखा नेटवर्क और सेवाओं के विस्तार में महत्त्वपूर्ण फैलाव आया। इससे बैंकिंग की आदत डलवाने और बचतों के विशाल संग्रहण में सहायता प्राप्त हुई। इसके अलावा, भारत में बैंकिंग प्रणाली ने देश के उद्यमशीलता आधार को व्यापक बनाने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारतीय अर्थव्यवस्था में हुए विविधीकरण और विकास अन्य बातों के साथ-साथ बैंकों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में आर्थिक गतिविधियों के वित्तीयन में निभाई गई सक्रिय भूमिका के कारण ही संभव हुए। हालांकि, जैसा कि कम लाभप्रदता, भारी अनर्जक आस्तियों, अल्प पूंजीगत आधार तथा न्यून परिचालन कार्य-कुशलता से पता चलता है, 1990 वाले दशक के प्रारंभिक काल तक बैंकिंग क्षेत्र की वित्तीय स्थिति कमज़ोर हो गई। अतएव बैंकिंग क्षेत्र में व्यापक सुधार लागू किए गए। बैंकिंग सुधारों के प्रति अपनाए गए सक्षम एवं आनुक्रमिक दृष्टिकोण के फलस्वरूप पिछले वर्षों में एक सुदृढ़ एवं लचीली बैंकिंग प्रणाली का प्रादुर्भाव हुआ।

11.5 अब भारतीय बैंकिंग प्रणाली के समक्ष कतिपय नयी चुनौतियां उपस्थित हो गई हैं। बैंकों के लिए वृद्धिशील अर्थव्यवस्था की वित्तीयन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विशाल संसाधन जुटाने आवश्यक होते हैं। बैंकों को बासेल II, जो 31 मार्च 2009 से पूर्ण रूप से लागू हो जाएगा, के कार्यान्वयन की चुनौती से भी जूझना पड़ रहा है । बदले हुए परिचालनात्मक परिवेश ने जोखिम प्रबंधन परंपराओं के सुदृढ़ीकरण को भी आवश्यक बना दिया है। बैंकों के लिए यह भी आवश्यक हो गया है कि वे ऐसे समय में पर्याप्त सुरक्षोपाय लागू करें जब देश पूंजीगत खाते की अपेक्षाकृत पूर्ण परिवर्तनीयता की दिशा में क्रमिक रूप से आगे बढ़ रहा है। बैंकों और बैंकेतर संस्थाओं के बीच भेद की अस्पष्टता, वित्तीय संगुटों के उद्भव तथा कतिपय नवोन्मेषी वित्तीय उत्पादों की शुरुआत ने भी कतिपय विनियामक एवं पर्यवेक्षी चुनौतियां उपस्थित कर दी हैं। एक अन्य महत्त्वपूर्ण चुनौती है - अब तक वित्तीय रूप से वंचित लोगों को बैंकिंग के दायरे में लाना। इस अंतिम अध्याय में पिछले अध्यायों में समाविष्ट विश्लेषण के प्रमुख निष्कर्षों, जिनमें अब तक हुई प्रगति और भावी राह दोनों ही शामिल हैं, का सारांश प्रस्तुत किया गया है।

### भारत में बैंकिंग का विकास

11.6 भारत में संयुक्त स्टॉक किस्म की वाणिज्यिक बैंकिंग की शुरुआत 18वीं सदी के प्रारंभिक दिनों में पाई जा सकती है । भारत में सहकारी बैंकिंग आंदोलन के उद्भव के प्रमाण 19वीं सदी के अंतिम दशक में पाए

जा सकते हैं। बैंकों का पहला औपचारिक विनियमन था - 1850 में कंपनी अधिनियम का अधिनियमन। स्वतंत्रता के समय तक की यह अवधि भारतीय बैंकों के लिए एक कठिन समय था। अल्प-पूंजी आधार वाले काफी बड़ी संख्या में बैंकों का ताता लग गया। इस अवधि में दो विश्व युद्ध हुए और 1930 वाले दशक की भयंकर मंदी भी आई। इस अवधि में कई बैंक विफल (बंद) हो गए। इसमें वैश्विक कारकों के अलावा कतिपय अन्य कारकों की भी भूमिका रही है। बैंकों की विफलता से आंशिक रूप से निपटने के लिए 1935 में भारतीय रिज़र्व बैंक की स्थापना की गई।

11.7 स्वतंत्रता के समय संपूर्ण बैंकिंग क्षेत्र निजी क्षेत्र में था। स्वतंत्रता के प्रारंभिक दिनों वाले चरण ने बैंकिंग परिदृश्य में तीन मुख्य चिंताओं को जन्म दिया (i) बैंकों की विफलता ने बैंकिंग क्षेत्र की सुदृढ़ता और स्थिरता के बारे में चिंताएं पैदा कर दी थीं; (ii) भारी मात्रा में संसाधन कुछेक व्यावसायिक घरानों में ही संकेन्द्रित थे, और (iii) कुल बैंक ऋण में कृषि का अंश अत्यल्प था। इस अवधि की महत्त्वपूर्ण घटना थी - बैंककारी विनियमन अधिनियम का अधिनियमन। यद्यपि विफल होने वाले बैंकों की संख्या में कमी आ गई, तथापि स्वतंत्रता के बाद भी बैंकों के विफल (बंद) होने का क्रम जारी रहा। 1960 वाले दशक के प्रारंभिक काल में बैंकिंग कंपनी अधिनियम, 1949 में संशोधन किया गया, जिसमें रिज़र्व बैंक को बैंकों का अनिवार्य समामेलन कराने का अधिकार प्रदान किया गया। इसके फलस्वरूप कमज़ोर बैंक (जिनमें से अधिकांश गैर-अनुसूचित थे), समामेलनों/परिसमापनों के माध्यम से समाप्त कर दिए गए। गैर-अनुसूचित बैंकों की संख्या 1951 के 474 से तीव्रतापूर्वक घटकर 1967 में 20 रह गई। बैंकों की शाखाओं की संख्या 1952 के 4,061 से बढ़ कर 1967 में 6,985 हो गई। तथापि, ग्रामीण और अर्ध शहरी क्षेत्रों में बैंक शाखाओं का स्वरूप वैसा ही बना रहा। कुल बैंक ऋणों में कृषि का अंश 1951 और 1967 की अवधि के बीच व्यापक तौर पर उतना ही बना रहा। इस प्रकार, स्वतंत्रता के समय विद्यमान तीन महत्त्वपूर्ण मुद्दों में से दो मुद्दे स्वतंत्रता के 20 वर्ष बाद भी चिन्ता पैदा करते रहे।

11.8 भारत में बैंकिंग के अगले चरण की शुरुआत 1967 में बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण के साथ हुई, जिसके द्वारा किसी बैंक के निदेशक मंडल के 51 प्रतिशत सदस्यों में ऐसे व्यक्तियों का समावेश होना था, जिन्हें लेखा शाखा, कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था, बैंकिंग सहकारिता, अर्थशास्त्र, वित्तीय एवं लघु स्तरीय उद्योग जैसे विषयों में से किसी एक या उससे अधिक में विशेष जानकारी या विशेष अनुभव प्राप्त हो। तथापि, सामाजिक नियंत्रण के प्रयोग से वांछित परिणाम प्राप्त नहीं हुए। 1969 में 14 प्रमुख बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। कालान्तर में, 1980 में छह और बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया। इसने भारतीय बैंकिंग क्षेत्र के एक बड़े खण्ड को सरकार के प्रत्यक्ष नियंत्रण के अधीन कर दिया। 1969 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद शाखा नेटवर्क का ज़ोरदार विस्तार हुआ। फलतः प्रति बैंक कार्यालय औसत आबादी 1951 के लगभग 1,36,000 से घटकर 1969 में 65,000 हो गई और दिसम्बर 1990 के अंत में यह और घटकर 14,000 हो गई। नयी शाखाओं में से अधिकांश ग्रामीण क्षेत्रों में खोली गईं। इसके फलस्वरूप, कुल शाखाओं में ग्रामीण शाखाओं का अंश जून 1969 के लगभग 18 प्रतिशत से बढ़कर दिसम्बर 1990 के अंत में लगभग 58 प्रतिशत के स्तर पर पहुंच गया। 1969 और 1980 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के अलावा कतिपय अन्य नियंत्रणों का भी प्रयोग किया गया जैसे कि प्राथमिकता क्षेत्र के उधार और विभेदक ब्याज दर योजना। कॉरपोरेट कंपनियों के कार्यशील पूंजी वित्तीयन से संबंधित मानदंड भी लागू किए गए। बहु-विध उद्देश्यों का प्रवर्तन करते समय जमा और उधार दर ढांचा अत्यधिक जटिल हो गया। परंपरागत रूप से अधिक स्तरों पर पहुंचने के लिए आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सीआरआर) और सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) भी बारंबार बढ़ाए गए। इन सभी कारकों के परिणामस्वरूप, बैंकों की लाभप्रदता कम हो गई, उनकी आस्ति गुणवत्ता में कमी आ गई तथा उनकी पूंजीगत स्थिति कमजोर हो गई। पर्याप्त प्रतिस्पर्धा के अभाव के परिणामस्वरूप कार्य-कुशलता और लाभप्रदता में गिरावट आ गई, बैंकिंग प्रणाली के कार्य-निष्पादन पर विविध प्रकार के उपायों के प्रतिकूल प्रभाव को महसूस करते हुए 1980 वाले दशक के उत्तरार्ध में उक्त क्षेत्र को उदारीकृत बनाने के लिए कुछेक प्रयास किए गए।

11.9 अगले चरण, जो 1991-92 में आरंभ हुआ, की मुख्य चुनौती बैंकिंग क्षेत्र को सुदृढ़ बनाने की थी। इस उद्देश्य के लिए विवेकसम्मत मानदंडों को चरणबद्ध विधि से लागू किया गया। निजी क्षेत्र के नये बैंकों को प्रवेश की अनुमति देते हुए विदेशी बैंकों की बढ़ी हुई उपस्थिति तथा सरकारी क्षेत्र के बैंकों को परिचालनात्मक लोच प्रदान करते हुए स्पर्धात्मक स्थितियां निर्मित किए जाने के प्रयास भी किए गए। उदारीकृत परिवेश में, बैंकों को कतिपय जोखिमों का सामना करना पड़ रहा है। अतएव, पर्यवेक्षी प्रक्रियाओं को सुदृढ़ बनाने के भी प्रयास किए गए। पहले उप-चरण की समाप्ति (1997-98 तक) पर बैंकिंग क्षेत्र की लाभप्रदता में महत्त्वपूर्ण रूप से सुधार हुआ। बैंकों के पूंजी पर्याप्तता अनुपात और आस्ति की गुणवत्ता में भी सुधार आया। तथापि, बैंकों के अनर्जक ऋण अब भी अन्तरराष्ट्रीय मानकों की तुलना में अत्यधिक थे। यद्यपि, कुल मिलाकर बैंकिंग क्षेत्र का पूंजी पर्याप्तता अनुपात विनिर्दिष्ट मानदंड से अधिक था, पर कुछ बैंक पूंजी पर्याप्तता मानदंडों को पूरा नहीं कर सके। इस चरण में प्रतिस्पर्धा भी अनुच्चरित बनी रही। तथापि, कुछेक बैंकों ने जोखिम विरुचि की प्रवृत्ति दर्शाई, जिसके फलस्वरूप ऋण-संवृद्धि में उल्लेखनीय रूप से मंदी आ गई।

11.10 दूसरा उप-चरण 1998-99 में प्रारंभ हुआ। 1998 के प्रारंभिक दिनों में विवेकसम्मत मानदंडों को अन्तरराष्ट्रीय उत्तम परंपराओं के अनुरूप सुदृढ़ किए जाने की आवश्यकता महसूस की गई। 1990 वाले दशक के उत्तरार्ध में पूर्व एशियाई संकट ने कमज़ोर बैंकिंग क्षेत्र द्वारा वास्तविक अर्थव्यवस्था के समक्ष उपस्थित किए जाने वाले जोखिमों को रेखांकित कर दिया था। हालांकि, विवेकसम्मत मानदंडों को सुदृढ़ बनाए जाते समय आवश्यकता इस बात की थी कि यह सुनिश्चित किया जाए कि जोखिम के प्रति विरुचि की यह समस्या बढ़ने न पाए। अतः, बैंकों को उनकी विगत प्राप्य राशियों को वसूल करने में समर्थ बनाने हेतु उपयुक्त संस्थागत

व्यवस्थाएं लागू की गईं। इन उपायों का सकारात्मक प्रभाव हुआ, क्योंकि बैंक अनर्जक आस्तियों में उलझी भारी निधियां वसूल करने में सफल हुए। चूंकि आस्ति की गुणवत्ता में सुधार होने लगा, बैंकों ने उनके ऋण संविभाग को विस्तारित करना आरंभ कर दिया । इस चरण में प्रतिस्पर्धा भी गहन हो गई। हालांकि, तब भी बैंकिंग क्षेत्र की लाभप्रदता बढ़ गई, जो अन्य बातों के साथ-साथ वर्धित ऋण की मात्राओं, आस्ति की गुणवत्ता में सुधार और विविधीकरण के कारण संभव हुई। बैंकिंग क्षेत्र की पूंजी की स्थिति में भी महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ोत्तरी हुई। अतः इस चरण में बैंकों की वित्तीय स्थिति और सुदृढ़ता में उल्लेखनीय रूप से सुधार हुआ।

11.11 इस चरण में एक और महत्त्वपूर्ण चुनौती थी, कृषि और लघु एवं मध्यम उद्यम क्षेत्र को ऋण प्रवाह बढ़ाना, जिसमें 1990 वाले दशक में कमी आ गई थी। इसलिए कृषि और लघु एवं मध्यम उद्यम क्षेत्र को ऋण प्रवाह बढ़ाने हेतु सहयोजित प्रयास किए गए। यद्यपि पिछले वर्षों में बैंकिंग क्षेत्र ने महत्त्वपूर्ण प्रगति दर्ज की, तथापि, जनसंख्या के एक विशाल वर्ग की अब भी बैंकिंग एवं अन्य वित्तीय सेवाओं तक अपर्याप्त पहुँच देखने में आती है। अतएव, बैंकिंग प्रणाली की पहुँच को, ग्रामीण और शहरी दोनों ही क्षेत्रों में विस्तारित करने हेतु पहलकदमियां की जा रही हैं।

11.12 बैंकों में कॉरपोरेट अभिशासन परम्पराओं के संबंध में भारतीय संदर्भ में दो महत्त्वपूर्ण मुद्दे उभरे। ये मुद्दे स्वामित्व के संकेन्द्रण तथा बैंकों का नियंत्रण करने वाले प्रबंधन की गुणवत्ता से संबंधित थे । निजी क्षेत्र के बैंकों में स्वामित्व और अभिशासन संबंधी दिशानिर्देश 2005 में जारी किए गए थे। यह सुनिश्चित करने के लिए कि स्वामित्व सु-विविधीकृत हो और यह कि बैंकों के निदेशक और मालिक 'उपयुक्त और उचित' मानदंड का पालन करते हों, उपयुक्त उपाय आरंभ किए गए।

11.13 वर्ष 2000 के प्रारंभिक दिनों में बहु-राज्यीय सहकारी बैंक से भारी मात्रा में आकस्मिक आहरण के कारण शहरी सहकारी बैंकिंग क्षेत्र में विश्वास में कमी आ गई थी। शहरी सहकारी बैंकों में विश्वास को बहाल करने तथा दोहरे नियंत्रण की समस्या पर काबू पाने के उद्देश्य से अब रिज़र्व बैंक ने राज्य सरकारों के साथ नियमित एवं व्यवस्थित परामर्श की प्रणाली स्थापित कर दी है। उसने शहरी सहकारी बैंकों में कार्य बल (टैफकब) का गठन करने हेतु राज्य सरकारों के साथ एक समझौता ज्ञापन हस्ताक्षरित किया है, जिनसे यह अपेक्षित है कि वे उनके संबंधित राज्यों में शहरी सहकारी बैंकों में उठने वाले किसी भी मुद्दे का सक्रियता से निराकरण करेंगे। अब तक 19 राज्यों ने रिज़र्व बैंक के साथ समझौता-ज्ञापन हस्ताक्षरित किए हैं तथा शहरी सहकारी बैंकों से संबंधित कार्य बलों के गठन का मार्ग प्रशस्त कर दिया है। यह व्यवस्था शहरी सहकारी बैंकों में विश्वास को बहाल करने में सहायक सिद्ध हुई है। इस चरण में जैसा कि शाखाओं के कंप्यूटरीकरण, एटीएमों की संख्या में वृद्धि तथा निधियों के अंतरण की इलेक्ट्रॉनिक विधियों की शुरुआत (तत्काल सकल भुगतान प्रणाली और राष्ट्रीय इलेक्ट्रॉनिक निधि अंतरण) से पता चलता है, प्रौद्योगिकी के उपयोग में भी महत्त्वपूर्ण रूप से वृद्धि हो रही है।

**संसाधन संग्रहण प्रबंधन**

11.14 अर्थव्यवस्था के भारी अधिशेष वाले क्षेत्र, घरेलू क्षेत्र से जमा संग्रहण के माध्यम से बचत दरों को बढ़ाते हुए संवृद्धि की प्रक्रिया को समर्थन करने में बैंकिंग प्रणाली द्वारा निभाई जाने वाली मुख्य भूमिका को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीयकरण के बाद वाली अवधि में अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों की जमा वृद्धि को मोटे तौर पर चार चरणों में विश्लेषित किया जा सकता है। जुलाई 1969 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के तत्काल बाद से आरंभ होने वाले पहले चरण (1969-1984) में जमा-वृद्धि में तीव्रता से बढ़ोत्तरी हुई, क्योंकि राष्ट्रीयकरण के बाद हुए द्रुत शाखा विस्तार ने बैंकों को ग्रामीण क्षेत्रों से बचतों के दोहन में समर्थ बनाया। विशाल शाखा विस्तार के प्रभाव के तहत प्रति कार्यालय आबादी का स्तर 1969 के 65,000 से घटकर 1984 में 16,000 हो गया । दूसरे चरण (1985-1995) में जमा वृद्धि कम हो गई, क्योंकि बैंकों को वैकल्पिक बचत लिखतों, विशेषतः पूंजी बाज़ार के लिखतों (शेयरों, डिबेंचरों, म्यूच्युअल फंडों के यूनिटों) और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों से बढ़ी हुई प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ा। यह अमध्यस्थीकरण वाला चरण था, क्योंकि बचतों को बैंकों की जमाराशियों में अभिनियोजित किए जाने के बजाय अधिकाधिक रूप से वैकल्पिक वित्तीय लिखतों में अभिनियोजित किया जाने लगा। तीसरे चरण (1995-2005) के दौरान डाकघर जमाराशियों और अन्य अल्प बचत लिखतों, जिन पर बैंक जमाराशियों की अपेक्षा पर्याप्त रूप से अधिक कर-समायोजित प्रतिलाभ उपलब्ध होते थे, से प्रतिस्पर्धा की पृष्ठभूमि में जमा-वृद्धि में और भी कमी आ गई। हालांकि, इस गिरावट के बावजूद, बैंक जमाराशियों ने घरेलू क्षेत्र की बचतों में अपने अंश को बनाए रखा। तथापि, इस चरण के दौरान स्वामित्व के स्वरूप और परिपक्वता के स्वरूप, दोनों में ही महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आया। सरकारी और कॉरपोरेट क्षेत्रों द्वारा धारित बैंक जमाराशियों के अंश में उल्लेखनीय रूप से बढ़ोत्तरी हुई, जबकि घरेलू क्षेत्र द्वारा धारित जमाराशियों के अंश में, घरेलू क्षेत्र की वित्तीय बचतों में जमाराशियों का अंश व्यापक रूप से अपरिवर्तित रहने के बावजूद, महत्त्वपूर्ण रूप से गिरावट आई। जमाराशियों की परिपक्वता प्रोफाइल में भी परिवर्तन आ गया, क्योंकि कुल जमाराशियों में सावधि जमाराशियों का अंश महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ गया। सावधि जमाराशियों में मीयादी जमाराशियों का अंश भी बढ़ गया। इसके अलावा, मीयादी जमाराशियों में अल्पावधिक जमाराशियों के पक्ष में परिपक्वता प्रोफाइल में महत्त्वपूर्ण कमी आ गई। परिपक्वता प्रोफाइल में आया यह बदलाव व्यापक रूप से सरकारी और कॉरपोरेट क्षेत्रों के अंश में बढ़ोत्तरी तथा मीयादी जमाराशियों में घरेलू क्षेत्र के अंश में सहवर्ती कमी के कारण घटित हुआ।

11.15 अत्याधुनिक चरण (2005-2008) में बैंकों द्वारा ऋण की बढ़ी हुई मांग को पूरा करने के लिए किए गए ज़ोरदार संसाधन संग्रहण प्रयासों के प्रत्युत्तर में जमा-वृद्धि में महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ोत्तरी हुई । डाकघर की जमाराशियों को उपलब्ध कर लाभ सुविधा 5 वर्ष से अधिक परिपक्वता अवधि वाली बैंक जमाराशियों को भी प्रदान कर दिए जाने के फलस्वरूप

जमा-वृद्धि और भी सुलभ बना दी गई। बैंक जमाराशियों की यह त्वरित वृद्धि म्यूच्युअल फंडों और कंपनियों द्वारा नए पूंजी निर्गमों के माध्यम से जुटाए गए संसाधनों में हुई तीव्र वृद्धि के बावजूद संभव हुई। डाकघर जमाराशियों तथा अन्य अल्प बचतों की वृद्धि में गिरावट आई। फलस्वरूप घरेलू क्षेत्र की वित्तीय बचतों में बैंक जमाराशियों और पूंजी बाज़ार के लिखतों के अंश तेजी से बढ़ गए तथा सरकार पर दावों के अंश में महत्त्वपूर्ण रूप से कमी आ गई।

11.16 बैंकों को वृद्धिशील अर्थव्यवस्था की संसाधन आवश्यकताओं को पूरा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है। यद्यपि भारतीय अर्थव्यवस्था में बैंक जमाराशियां हमेशा से बचत प्रक्रिया का मुख्य सहारा रही हैं तथा वित्तीय बचतों की दरों को बढ़ाने में बैंकों ने अधिकाधिक रूप से महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है, तथापि भौतिक बचतों की वृद्धि वित्तीय बचतों के आगे-पीछे रही है। इस प्रकार, अनुत्पादक भौतिक बचतों को वित्तीय बचतों के रूप में रूपांतरित करना एक महत्त्वपूर्ण चुनौती है । इसके अलावा, कुल जमाराशियों में घरेलू क्षेत्र की जमाराशियों के अंश में संकुचन को ध्यान में रखते हुए बैंकों के लिए जमाकर्ताओं के आधार को विशेषतः ग्रामीण और अर्ध शहरी क्षेत्रों में ग्राहकों की ज़रूरतों के अनुरूप तथा वैयक्तिक जोखिम-प्रतिलाभ आवश्यकताओं के अनुकूल विशेषताओं वाले उत्पाद उपलब्ध कराते हुए व्यापक बनाने के तरीकों को आज़माने की आवश्यकता होगी। इसके अलावा, बदलती जनसांख्यिकीय एवं रोज़गार पद्धतियों ने भी बैंकों को यह अवसर प्रदान किया है कि वे अपेक्षाकृत युवा कार्यरत आबादी द्वारा मांगे जाने वाले नये वित्तीय उत्पाद उपलब्ध कराते हुए वित्तीय मध्यस्थों की उनकी भूमिका को निश्चेष्ट जमा संग्रहण की परम्परागत सीमाओं से बाहर पुनः अभिमुख करें।

11.17 बैंकों के लिए यह आवश्यक है कि वे उधार लेने पर अधिक निर्भरता से बचने की प्रवृत्ति को जारी रखें क्योंकि वे अपने आपको गंभीर जोखिमों के प्रति एक्सपोज कर लेंगे, जैसा कि यू.के. के नॉर्दन रॉक बैंक के मामले में देखने में आया था। अंत में, निकट अतीत में ही निधियों को बैंकों के बजाय बैंकेतर लिखतों में प्रतिस्थापन की प्रवृत्ति देखने में आई थी तथा इस प्रकार की प्रवृत्तियां भविष्य में भी घटित हो सकती हैं। इसके लिए मौद्रिक समुच्चयों के आकलन एवं निर्वचन में अधिकाधिक सावधानी अपेक्षित होगी।

## पूंजी और जोखिम का प्रबंधन

11.18 बैंकिंग कारोबार में निहित जोखिमों के अनुरूप बैंक की पूंजी बनाए रखने के महत्त्व को वित्तीय प्रणाली की सुरक्षा एवं सुदृढ़ता को बनाए रखने की आवश्यकता के परिप्रेक्ष्य में और भी अधिक महत्त्व प्राप्त हो गया है। बासेल I ढांचा 100 से अधिक देशों में अंगीकृत कर लिया गया था। तथापि, पिछले वर्षों में आंशिक रूप से उसकी अन्तर्निहित विशेषताओं तथा आंशिक रूप से त्वरित वित्तीय नवोन्मेषों के कारण बासेल I की कतिपय कमियां प्रकाश में आई हैं। बासेल I की मुख्य परिसीमा उसका ''सभी के लिए एक जैसा'' दृष्टिकोण थी। हाल ही की खलबली के बाद बासेल I की अपर्याप्तताएं सुस्पष्ट दिखाई देने लगीं क्योंकि, वह तुलन पत्र में शामिल न की जाने वाली मदों के एक्सपोज़रों का पता नहीं लगा पाई। जुलाई 2006 में अंतिम रूप दिए गए बासेल II ढांचे में विनियामक पूंजी को वर्धित जोखिम मापन तकनीकों तथा जोखिम प्रबंधन के प्रति अधिक अनुशासित दृष्टिकोण अपनाते हुए बैंकिंग में अन्तर्निहित जोखिमों के साथ और अधिक गहनता से पंक्तिबद्ध करने का प्रयास किया गया है । इसके अलावा, बासेल II में कई प्रकार के सुरक्षोपायों की व्यवस्था की गई है, जिन्हें जोखिम प्रबंधन और बाज़ार अनुशासन के सुदृढ़ीकरण से संबंधित पर्यवेक्षकों के उद्देश्यों को पुनः प्रवर्तित किए जाने की सुविधा भी प्राप्त है।

11.19 अन्तरराष्ट्रीय उत्तम परम्पराओं के अनुरूप भारत ने भी बासेल II को कार्यान्वित करने का निर्णय लिया। भारत में परिचालनरत विदेशी बैंकों तथा भारत के बाहर परिचालनात्मक उपस्थिति रखने वाले भारतीय बैंकों ने 31 मार्च 2008 से अपनी पूंजी आवश्यकताओं के परिकलन हेतु ऋण जोखिम के लिए मानकीकृत दृष्टिकोण (एसए) और परिचालन जोखिम हेतु मूल संकेतक दृष्टिकोण (बीआइए) अपना लिया है। अन्य सभी वाणिज्यिक बैंकों (स्थानीय क्षेत्र बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को छोड़कर) द्वारा अधिकतम 31 मार्च 2009 तक बासेल II को अंगीकृत कर लिए जाने की आशा है। इन बैंकों के लिए समानांतर क्रम प्रगति पर हैं। बासेल II ढांचे को अंगीकृत करने हेतु विनियामक दबाव के अधीन भारतीय बैंकों में जोखिम प्रबंधन परंपराओं, आस्ति-देयता प्रबंधन और कॉरपोरेट अभिशासन में महत्त्वपूर्ण सुधार देखने में आया है।

11.20 चूंकि बैंकों को परिचालन जोखिम हेतु पूंजी बनाए रखनी होगी, ऋण जोखिम के कारण आवश्यक पूंजी में अपेक्षित कमी आने के बावजूद समग्र पूंजी आवश्यकताओं में वृद्धि होने की आशा है। चूंकि भारत में अधिकांश बैंक इस समय निर्धारित स्तर की तुलना में अधिक पूंजी पर्याप्तता अनुपात पर परिचालन कर रहे हैं, बासेल II की अपेक्षाओं को पूरा करना निकट भविष्य में कोई मुद्दा नहीं बनेगा। हालांकि, मध्य से लेकर दीर्घ अवधि में बैंकों को उनके कारोबार विस्तार के अनुरूप, पूंजी संसाधनों को बढ़ाना आवश्यक होगा। रिपोर्ट में किए गए आकलन से पता चलता है कि यह मान लेने पर कि बैंक 12 प्रतिशत का जोखिम-भारित आस्ति की तुलना में पूंजी का अनुपात (सीआरएआर) बनाए रखेंगे, 2007-08 से 2011-12 तक की पांच वर्षों की अवधि में कुल पूंजी आवश्यकताओं में लगभग 5,70,000 करोड़ रुपये की बढ़ोत्तरी होने का अनुमान है, जबकि सरकारी क्षेत्र के बैंकों की कुल पूंजी आवश्यकता में लगभग 3,70,000 करोड़ रुपये की वृद्धि होने का अनुमान है। जहां तक बैंकों को उपलब्ध विविध प्रकार के विकल्पों का संबंध है, अतीत में 85 प्रतिशत से अधिक पूंजी आवश्यकताएं बैंकों द्वारा आंतरिक रूप से सृजित संसाधनों द्वारा पूरी की गई थीं। आंतरिक संसाधनों के अलावा, बैंकों के पास नवोन्मेषी शाश्वत ऋण लिखतों (आइपीडीआइ) और शाश्वत असंचयी अधिमान शेयरों (पीएनसीपीएस) के तहत टियर I पूंजी बढ़ाने हेतु गुंजाइश उपलब्ध है। इसके अलावा, कुछ सरकारी क्षेत्र के बैंकों को बाज़ार से पूंजी जुटाने

तथा सरकारी शेयर पूंजी को घटा कर 51 प्रतिशत करने हेतु कुछ गुंजाइश भी उपलब्ध है।

11.21 बासेल II ढांचा जहां पूंजी आवश्यकताओं को जोखिम संवेदी बनाते हुए वित्तीय प्रणाली की स्थिरता को बढ़ाएगा, वहीं इसके कार्यान्वयन से कतिपय मुद्दें /चुनौतियां भी जन्म लेती है। वाणिज्यिक बैंकों, सहकारी बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को पूंजी पर्याप्तता मानदंडों के अलग-अलग स्तरों में रखे जाने के फलस्वरूप, भारत त्रि-स्तरीय दृष्टिकोण अपनाता है। विभिन्न श्रेणियों वाले बैंकों के लिए पूंजी विनियमन में अलग-अलग स्तर की सख्ती विनियामक अंतरपणन की संभाव्यता को जन्म देती है। इसलिए गैर-बासेल संस्थाओं (क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और राज्य सहकारी बैंकों) तथा मिला मध्यवर्ती सहकारी बैंकों (डीसीसीबी) पर बासेल II के मानदंड लागू किए जाने की आवश्यकता है। कालांतर में वाणिज्यिक बैंकों के संबंध में बासेल II ढांचे को कार्यान्वित किए जाने के अनुभवों के आधार पर बासेल II मानदंडों को अन्य बैंकों पर लागू किए जाने के बारे में धारणा बनाई जा सकती है। मानकीकृत दृष्टिकोण के तहत ऋण जोखिम की माप करने हेतु ऋण एजेन्सियों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। बैंकों को बाज़ार की घटनाओं के अनुरूप बनाने के लिए उनके कौशलों, प्रौद्योगिकी तथा जोखिम प्रबंधन परंपराओं को निरंतर एवं अविरत आधार पर उन्नत करते रहना होगा। बैंकों और रिज़र्व बैंक द्वारा विकसित किए जाने वाले यथोचित कौशलों के अलावा, अन्य उपाश्रयी जोखिमों एवं अनिश्चितताओं के साथ ही इन उन्नत दृष्टिकोणों को अपनाए जाने की बढ़ी हुई लागत यह आवश्यक बना देती है कि इन दृष्टिकोणों को अपनाए जाने से पहले पर्याप्त सुरक्षोपाय लागू किए जाएं। अन्य बातों के साथ-साथ इनमें लीवरेज अनुपात के निर्धारण का समावेश हो सकता है, ताकि धारित पूंजी में महत्त्वपूर्ण रूप से कमी न आने पाए। चक्रीय उधार के अनुकूल व्यवहार से संबंधित समस्या, जो बासेल II ढांचे में अन्तर्निहित होती है, बैंकों द्वारा विनियामक पूंजी की स्थिति को इस प्रकार से नियंत्रित करते हुए हल की जा सकती है कि वे आर्थिक गिरावट (मंदी) के दौरान पर्याप्त रूप से पूंजीकृत रहें, ताकि उन्हें पूंजी जुटाने की आवश्यकता न पड़े। कारोबार चक्र के विस्तार के दौरान पर्यवेक्षक भी स्तंभ 2 के तहत अतिरिक्त पूंजी निर्धारित कर सकते हैं। बासेल II मानदंडों के कार्यान्वयन से घरेलू मोर्चे पर समन्वय के मुद्दों के संबंध में तनाव निर्मित होने की संभावना रहती है तथा इस प्रकार के तनावों को दूर करना एक चुनौती हो सकती है।

## बैंकों के उधार एवं निवेश संबंधी परिचालन

11.22 भारत में बैंक परम्परागत रूप से अर्थव्यवस्था के विविध क्षेत्रों हेतु ऋण के मुख्य स्रोत रहे हैं तथा उनके उधार देने से संबंधित परिचालन अर्थव्यवस्था की बदलती आवश्यकताओं के अनुरूप विकसित किए गए हैं। अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्रदत्त ऋणों में 1990 वाले दशक के प्रारंभिक दिनों से ही तीन सुस्पष्ट चरण परिलक्षित हुए हैं। पहले चरण (1990-91 से लेकर 1995-96 तक) में बैंक ऋणों की संवृद्धि अनियमित थी। दूसरे चरण (1996-97 से लेकर 2001-02 तक) में औद्योगिक मंदी, अनर्जक आस्तियों के अधिक स्तर और विवेकसम्मत मानदंडों को सख्त बनाए जाने, जिसने बैंकों को जोखिम के प्रति उदासीन बना दिया, के कारण ऋण संवृद्धि में तेजी से गिरावट आई और वह एक दायरे में बनी रही। तीसरे चरण (2002-03 से लेकर 2006-07 तक) में सामान्य रूप से आर्थिक विकास में सुधार, आस्ति की गुणवत्ता में तीव्र सुधार, मुद्रास्फीति और मुद्रास्फीति की अपेक्षाओं में कमी, वास्तविक ब्याज दरों में कमी, परिवारों की बढ़ती आय तथा निजी क्षेत्र के नए बैंकों के आगमन के फलस्वरूप वर्धित प्रतिस्पर्धा सहित कतिपय कारणों से ऋण में अधिक वृद्धि दर्ज हुई।

11.23 1990 वाले और वर्तमान दशक में आर्थिक सुधारों और विकासशील आर्थिक ढांचे का बैंक ऋणों पर अत्यधिक प्रभाव हुआ 1960 वाले दशक के मध्य काल से कृषि को प्रदत्त संस्थागत ऋणों में पर्याप्त प्रगति हुई। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ) द्वारा किए गए अखिल भारतीय ऋण और निवेश सर्वेक्षणों के आधार पर खेतिहर परिवारों के संस्थागत स्रोतों से ली गई उधार राशियों का अंश 1951 के 7.3 प्रतिशत से बढ़कर 1991 में 66.3 प्रतिशत हो गया, किन्तु वर्ष 2002 में वह घटकर 61.1 प्रतिशत रह गया। 1991 और 2002 के बीच वाली अवधि में खेतिहर परिवारों द्वारा विशेषकर गैर-संस्थागत स्रोतों से ली गई उधार राशियों में तीव्रता से वृद्धि हुई। घरेलू ऋणग्रस्तता में हुई यह बढ़ोत्तरी व्यापक तौर पर उपभोग और उसी प्रकार के अन्य खर्चों के कारण हुई। अतएव यह संभव है कि खेतिहर परिवारों की गैर-संस्थागत स्रोतों के प्रति ऋणग्रस्तता में वृद्धि भी आंशिक रूप से उपभोग व्ययों में हुई वृद्धि के कारण हुई हो, जिसका संस्थागत स्रोतों द्वारा सहजता से वित्तीयन नहीं किया जा सकता था। इसके फलस्वरूप, खेतिहर परिवारों की ऋणग्रस्तता में गैर-संस्थागत स्रोतों का अंश 1991 और 2002 की अवधि में इस बात के बावजूद बढ़ गया कि संस्थागत स्रोतों के प्रति खेतिहर परिवारों की ऋणग्रस्तता 1981-91 की अवधि की तुलना में 1991 और 2002 के बीच की अवधि में अधिक दर से बढ़ी थी। इसके अलावा, अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों द्वारा कृषि को दिए गए ऋणों में 2002 (राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन के अद्यतन सर्वेक्षण का संदर्भ वर्ष) के बाद तेज़ी से बढ़ोत्तरी हुई। फलतः कुल ऋणों में अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों द्वारा कृषि क्षेत्र को दिए गए ऋणों के अंश तथा कृषि क्षेत्र की ऋण गहनता में महत्त्वपूर्ण रूप से वृद्धि हुई। हालांकि, कुछेक बेचैन कर देने वाली विशेषताएं भी परिलक्षित हुईं। पहली, कृषि क्षेत्र को कुल ऋणों में दीर्घावधिक ऋणों के अंश में 1991 और 2006 के बीच की अवधि में प्रायः स्थायी तौर पर गिरावट आई - 2006 में यह अंश 1991 वाले स्तर के आधे से भी कम था । दूसरी, कृषकों को दिए गए प्रत्यक्ष वित्त में सीमान्त कृषकों के अंश में, संवितरित रकम और उनके द्वारा धारित ऋण खातों की कुल संख्या की दृष्टि से थोड़ी सी प्रत्यक्ष बढ़ोत्तरी परिलक्षित हुई। तीसरी, वर्तमान दशक में कुल कृषि उधार खातों में कृषि से संबंधित लघु उधार खातों (2 लाख रुपये तक की ऋण सीमा वाले कृषि उधार खाते) का अंश कम हो गया। हालांकि इस गिरावट का आंशिक कारण

विशेषतः 25,000 रुपये से कम की ऋण सीमा आकार वाले लघु उधार खातों के मामले में मुद्रास्फीति के कारण ऋणों के अपेक्षाकृत अधिक ऋण सीमा आकार वाले वर्गों में चला जाना हो सकता है ।

11.24 यद्यपि, कुल बैंक ऋणों में उद्योग को ऋण के अंश में कमी आई, तथापि उद्योग की ऋण गहनता में तीव्रता से वृद्धि हुई। एक देशव्यापी सर्वेक्षण से पता चलता है कि भारत में उद्योग की बैंकिंग क्षेत्र पर निर्भरता कई अन्य देशों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक है। हाल के वर्षों में आधारभूत सुविधा क्षेत्र के प्रति भारतीय बैंकों का एक्सपोजर बढ़ गया है। हालांकि, उद्योग की बढ़ी हुई ऋण गहनता का कारण केवल आधारभूत सुविधा क्षेत्र के प्रति वर्धित एक्सपोजर ही नहीं हो सकता । लघु एवं मध्यम उद्यम क्षेत्र को ऋण वृद्धि में, जिसमें 1996-97 और 2003-04 के बीच में महत्त्वपूर्ण रूप से कमी आ गई थी, 2004-05 से तेजी आई। हालांकि, कुल खाद्येतर बैंक ऋणों में लघु एवं मध्यम उद्यम क्षेत्र के अंश में प्रायः निरंतर रूप से गिरावट आई, जो 1990-91 के 15.1 प्रतिशत से घटकर 2006-07 में 6.5 प्रतिशत हो गया तथा प्राथमिकता क्षेत्र के कुल अग्रिमों में भी यही प्रवृत्ति परिलक्षित हुई जो मार्च 1998 के अंत के 43.6 प्रतिशत से घटकर मार्च 2006 के अंत में 17.9 प्रतिशत हो गया। मार्च 2007 के अंत में यह सीमांत रूप से बढ़कर 18.6 प्रतिशत हो गया । इससे यह पता चलता है कि ये बड़ी कॉरपोरेट कंपनियां ही हैं जिन्होंने बैंकिंग क्षेत्र पर अपनी निर्भरता बढ़ा ली है । पिछले दशक में जो महत्त्वपूर्ण घटना घटित हुई वह है भारत में ऋण का खुदरा ऋण की दिशा में विशाखन । कुल बैंक ऋणों में आवासीय ऋण, व्यक्तियों को दिए गए ऋणों, क्रेडिट कार्डों की प्राप्य राशियों तथा टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं को दिए गए उधारों आदि के समावेश वाले खुदरा ऋणों का अंश 1990 के 6.4 प्रतिशत से बढ़कर 2007 में 22.3 प्रतिशत हो गया । कुल मिलाकर ऋण विस्तार से कृषि, बड़ी कॉरपोरेट कंपनियां और खुदरा क्षेत्र लाभान्वित हुए, जबकि लघु एवं मध्यम उद्यम क्षेत्र की ऋण संवृद्धि हाल के दिनों तक हल्की बनी रही।

11.25 बैंकों का निवेश संविभाग (न्यूनतम सांविधिक अपेक्षाओं द्वारा अनिवार्य बना दिए गए निवेशों को छोड़कर) मुख्यतः ऋण संविभाग की आवश्यकताओं के प्रत्युत्तर में समायोजित किया जाता था। 1993-94 और 1997-98 के बीच वाली अवधि में, जब सांविधिक चलनिधि अनुपात में महत्त्वपूर्ण रूप से कमी की गई थी, एसएलआर प्रतिभूतियों में बैंकों का निवेश ऊँचे स्तर पर बना रहा। यह मुख्यतः इसलिए था कि बैंक के ऋण की मांग में कमी आ गई थी तथा उनकी आस्ति गुणवत्ता के क्षतिग्रस्त हो जाने के कारण बैंक जोखिम विमुख हो गए थे। हालांकि, 2002-03 से लेकर 2006-07 तक की अवधि के दौरान, जब ऋण की मांग में तेजी आ गई और उनकी आस्ति की गुणवत्ता में सुधार आ गया, तो बैंकों ने सरकारी प्रतिभूतियों के अधिशेष स्टॉक का परिसमापन कर दिया। बैंकों द्वारा किए गए गैर एसएलआर निवेश उनकी सांविधिक चलनिधि अनुपात संविभाग की आवश्यकता और ऋण की मांग के प्रत्युत्तर में शीघ्र ही समायोजित कर दिए जाते थे ।

11.26 हाल के वर्षों में कृषि और लघु एवं मध्यम उद्यम क्षेत्रों की ऋण संवृद्धि में आई कुछ तेजी के बावजूद, अर्थव्यवस्था में उनके महत्त्व को देखते हुए उन क्षेत्रों को ऋण प्रवाह को बढ़ाने हेतु सम्मिलित प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। ऋण अवशोषक क्षमता बढ़ाने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में समर्थक स्थितियां निर्मित किए जाने अर्थात सिंचाई सुविधाएं, ग्रामीण सड़कें और अन्य आधारभूत सुविधाएं उपलब्ध कराए जाने की आवश्यकता है। भारत में किसानों की विशिष्ट आवश्यकताओं के लिए अनुकूल उत्पाद तैयार किया जाना महत्त्वपूर्ण होता है। कृषि क्षेत्र में जोखिम प्रबंधन हेतु एक व्यापक सार्वजनिक नीति बनाए जाने की भी आवश्यकता है। कृषि क्षेत्र के ऋण प्रवाह में सहजता लाने के लिए भू-अभिलेखों के कंप्यूटरीकरण का दूरगामी प्रभाव होगा।

11.27 लघु एवं मध्यम उद्यमों को ऋण प्रवाह बढ़ाने के लिए बैंकिंग संस्थाओं को अपने ऋण निर्धारित क्षमताओं में सुधार लाए जाने की आवश्यकता है। यह आवश्यक है कि लघु स्तरीय उद्यमों का वैज्ञानिक रीति से मूल्यांकन किया जाए और केवल अनुभूति के आधार पर 'लघु उद्योगों को अधिक जोखिम वाला क्षेत्र नहीं माना जाए'। कई एक अनुभवजन्य अध्ययनों से यह पता चला है कि समूह आधारित उधार का उपयोग कई एक देशों के साथ भारत में भी बहुत अधिक प्रभावी सिद्ध हुआ है। आवश्यकता इस बात की है कि इस प्रकार के समूहों को प्रोत्साहित किया जाए । लघु एवं मध्यम उद्यमों की औपचारिक ऋण तक पहुँच को विस्तारित करने के लिए लघु व्यवसाय ऋण स्कोरिंग ने कई एक अर्थव्यवस्थाओं में अपनी उपयोगिता सिद्ध कर दी है। भारत में ऋण आसूचना कंपनियों का जैसे-जैसे विकास होता जा रहा है, लघु एवं मध्यम उद्योगों के संबंध में बेहतर और अधिक व्यवस्थित ऋण आसूचना उपलब्ध होनी चाहिए। आस्ति आधारित उधार देने की प्रणाली अमरीका और कुछ अन्य विकसित देशों में अत्यधिक सफल रही है। भारत के बैंक भी सूचनात्मक रूप से अपारदर्शी लघु एवं मध्यम उद्यमों के लिए यही पद्धति अपना सकते हैं।

11.28 आधारभूत सुविधा में बैंकों के बढ़े हुए एक्सपोजर को ध्यान में रखते हुए बैंकों के लिए आस्ति देयता असंतुलनों के समक्ष सतर्कता बरतना आवश्यक होगा । बैंकों के तुलनपत्रों से जोखिमों को वित्तीय प्रणाली की अन्य संस्थाओं को अंतरित किए जाने पर विचार किए जाने की आवश्यकता है । कई एक विकसित एवं उभरती अर्थव्यवस्थाओं में उद्योग की बैंकिंग क्षेत्र में निर्भरता में कमी आई है वहीं इसके विपरीत, औद्योगिक क्षेत्र की बैंकिंग क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भरता का क्रम अब भी जारी है । अतएव उद्योग के लिए यह आवश्यक है कि वह बैंकिंग पर अपनी निर्भरता में क्रमिक रूप से कमी लाए, ताकि वह कृषि, आधारभूत सुविधा और लघु एवं मध्यम उद्यम क्षेत्र, जो अन्य स्रोतों से निधियों का दोहन करने में असमर्थ हैं, की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके ।

## वित्तीय समावेशन

11.29 वित्तीय समावेशन को व्यापक रूप से समान संवृद्धि सुनिश्चित करने में एक महत्त्वपूर्ण तत्व के रूप में पहचाना जाता है । यद्यपि इस

विषय पर विस्तृत साहित्य मौजूद है, तथापि वित्तीय समावेशन/अपवर्जन की सार्वत्रिक रूप से स्वीकार्य कोई परिभाषा नहीं है। इसने वित्तीय समावेशन/अपवर्जन की माप को भी अवरुद्ध कर दिया है। भारतीय संदर्भ में वित्तीय समावेशन को औपचारिक वित्तीय प्रणाली द्वारा, इन सेवाओं से वंचित लोगों को वहनीय वित्तीय सेवाओं की व्यवस्था अर्थात भुगतान एवं विप्रेषण सुविधाओं, बचतों, ऋणों तथा बीमा सेवाओं तक पहुँच के रूप में वर्णित किया गया है। बहुविध दृष्टिकोण अपनाते हुए भारत में वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए समय-समय पर कतिपय नीतिगत पहलकदमियां की जाती रही हैं यद्यपि 'वित्तीय समावेशन' शब्दावली 2005 तक प्रचलन में नहीं थी। तथापि, वित्तीय समावेशन में हुई प्रगति का आकलन प्रासंगिक आंकड़ों/सूचना के अभाव में अवरुद्ध हो जाता है। तदनुसार इस रिपोर्ट में कुछेक प्रतिनिधि संकेतकों और घरेलू ऋणग्रस्तताओं के संबंध में राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन सहित विविध स्रोतों से उपलब्ध आंकड़ों/सूचनाओं के आधार पर इसके आकलन का प्रयास किया गया है। कार्य प्रणालीपरक/परिभाषात्मक अंतरों के कारण विविध आंकड़ों के समुच्चयों/स्रोतों से वित्तीय समावेशन की भिन्न-भिन्न सीमाओं का पता चलता है । अतएव, किसी एकल स्रोत के आधार पर वित्तीय समावेशन/अपवर्जन की सीमा के बारे में किसी पुष्ट निष्कर्ष पर पहुँचने के समय अत्यधिक सावधानी बरते जाने की आवश्यकता है।

11.30 उपलब्ध सूचना से यह पता चलता है कि 1960 वाले दशक के उत्तरार्ध से लेकर 1990 वाले दशक के प्रारंभिक दिनों तक की अवधि में औपचारिक वित्तीय सेवाओं के विस्तार में यथाप्रतिबिंबित वित्तीय समावेशन में पर्याप्त रूप से बढ़ोत्तरी हुई है। 1990 वाले दशक में भी यही प्रवृत्ति जारी रही। हालांकि, राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन के अखिल भारतीय ऋण एवं निवेश सर्वेक्षण के 59वें दौर के अनुसार गैर-संस्थागत स्रोतों से ऋण लेने वाले परिवारों की संख्या वाले अंश में 1991 के स्तर (पिछले सर्वेक्षण का संदर्भ वर्ष) की तुलना में 2002 में तेजी से वृद्धि हुई। यह वृद्धि मुख्यतः परिवारों की उपभोग एवं उसी प्रकार के अन्य उद्देश्यों हेतु बढ़ी हुई ऋणग्रस्तता के कारण हुई, जिसके लिए औपचारिक स्रोतों से वित्त सहजता से प्राप्त नहीं किया जा सकता था। फलतः 1991 और 2002 के बीच की अवधि में गैर-संस्थागत स्रोतों के प्रति परिवारों की ऋणग्रस्तता इस बात के बावजूद बढ़ गई कि 1991 और 2002 के बीच की अवधि में परिवारों को दिए गए संस्थागत ऋण ठीक उसी दर से व्यापक रूप से बढ़े जैसे कि 1981 और 1991 के बीच वाली अवधि में बढ़े थे। संस्थागत स्रोतों में 1991 और 2002 की अवधि में 1981 और 1991 के बीच वाली अवधि की तुलना में बैंक ऋणों में सीमान्त रूप से कमतर दर पर वृद्धि हुई, जिसे 1990 वाले दशक में विवेकसम्मत मानदंडों को लागू किए जाने/सख्त बनाए जाने के कारण बैंकों द्वारा उनके तुलनपत्रों के सुदृढ़ीकरण पर अधिक ध्यान दिए जाने के संदर्भ में देखे जाने की आवश्यकता है। 1991 और 2002 के बीच वाली अवधि में बैंकों के प्रति परिवारों की ऋणग्रस्तता में आई मामूली सी कमी समग्र बैंक ऋणों में आई कमी के ही अनुरूप थी।

11.31 बैंकों की वित्तीय स्थिति में सुधार हो जाने के बाद उन्होंने अपने ऋण संविभाग को पुनः विस्तारित करना आरंभ कर दिया। रिज़र्व बैंक और सरकार ने भी अधिक से अधिक लोगों को बैंकिंग की परिधि में लाने के लिए कतिपय उपायों की शुरुआत की। 2002 से आगे की मूल सांख्यिकी विवरणियों के आंकड़ों के विश्लेषण से यह पता चलता है कि 2002 और 2007 के बीच वाली अवधि अर्थात राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन के आंकड़े जारी किए जाने के बाद ग्रामीण और कृषि क्षेत्र को ऋण-व्यापन (प्रति 100 व्यक्तियों पर ऋण खाते) और ऋण प्रवाह में महत्त्वपूर्ण रूप से वृद्धि हुई । हाल के वर्षों में की गई पहलकदमियों के प्रत्युत्तर में समस्त संगठित वित्तीय संस्थाओं (वाणिज्यिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, शहरी सहकारी बैंकों, प्राथमिक कृषि ऋण समितियों, व्यष्टि वित्त संस्थाओं और स्व-सहायता समूहों) के पास प्रति 100 वयस्क पर खोले गए ऋण खातों की संख्या 2002 के 18 से बढ़कर 2007 में 25 हो गई। उक्त आंकड़ों से व्यष्टि वित्त आंदोलन में हुए महत्त्वपूर्ण सुदृढ़ीकरण का भी पता चलता है। ऋण-व्यापन के अलावा जमा-व्यापन में भी महत्त्वपूर्ण सुधार परिलक्षित होता है। समस्त औपचारिक संस्थाओं में खोले गए बचत खातों की संख्या 1993 में प्रति 100 व्यक्ति 51 (प्रति 100 वयस्क 80) थी, जो बढ़कर 2007 में प्रति 100 व्यक्ति 54 (प्रति 100 वयस्क 82) हो गई। देश के लगभग 22 प्रतिशत व्यक्ति, जो गरीबी रेखा के नीचे हैं, के पास बचत करने की अत्यल्प या कोई क्षमता नहीं है। गरीबी रेखा से नीचे वाले लोगों को अलग कर दिए जाने के बाद प्रति 100 वयस्क 100 बचत खातों से कुछ अधिक खाते रह जाते हैं।

11.32 जहां हाल के वर्षों में वित्तीय समावेशन में महत्त्वपूर्ण सुधार परिलक्षित हुआ है, आगे बढ़ने पर कुछ चुनौतियां शेष रह जाती हैं, जिनका निराकरण किया जाना आवश्यक है । सर्वप्रथम, वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने के लिए उपयुक्त नीतिगत अनुक्रिया आरंभ करने हेतु वित्तीय अपवर्जन की समस्या का यथोचित आकलन आवश्यक है । हालांकि, वर्तमान में इस प्रकार की सूचना का एक भी व्यापक स्रोत अस्तित्व में नहीं है । अतएव वित्तीय समावेशन/अपवर्जन से संबंधित सूचना एकत्र करने के लिए विशिष्ट सर्वेक्षण किए जाने की आवश्यकता है । वैकल्पिक रूप से, वित्तीय समावेशन/अपवर्जन से संबंधित सूचना शामिल किए जाने हेतु दशकीय जनगणना के दायरे को विस्तारित किया जा सकता है ।

11.33 वित्तीय समावेशन में एक महत्त्वपूर्ण अड़चन है उच्च परिचालन लागत, क्योंकि संस्थाओं को दूर-दराज के इलाकों तक पहुंचना होता है और छोटे-छोटे लेन-देन करने होते हैं । इस प्रकार वर्धित वित्तीय समावेशन की कुंजी लेन-देन लागतों में कमी लाने में निहित है । यहां प्रौद्योगिकी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है । संस्थागत विकास के परिप्रेक्ष्य में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और सहकारी बैंकों, जिनकी स्थापना वित्तीय सेवाओं की पहुँच को बैंकिंग सुविधा से वंचित क्षेत्रों/खण्डों तक विस्तारित करने के ही उद्देश्य से की गई थी, से भविष्य में वित्तीय समावेशन को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने की अपेक्षा की जाती है । हालांकि, इन सभी संस्थाओं और बैंकों के लिए कम आय वाले लोगों की आवश्यकताओं के

अनुकूल आवश्यकता आधारित उपयुक्त उत्पाद तैयार किए जाने की आवश्यकता होगी, ताकि वे गैर-संस्थागत स्रोतों की ओर जाने हेतु प्रवृत्त न हों। गरीब लोगों को शिक्षित करते हुए वित्तीय साक्षरता और ऋण परामर्श वित्तीय समावेशन हेतु सही स्थितियों के निर्माण में दूरगामी प्रभाव वाले सिद्ध हो सकते हैं। मूलभूत बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराते हुए वित्तीय सेवाओं की अवशोषक क्षमता को भी बढ़ाए जाने की आवश्यकता है। स्वास्थ्य, जल, सफाई एवं शिक्षा जैसे मानव विकास के कार्यों में निवेश विशेष रूप से सहायक होगा। भविष्य में ग्रामीण क्षेत्रों में आय में अपेक्षाकृत त्वरित वृद्धि और गैर-कृषि आधारित कार्य-कलापों में बढ़ोत्तरी के परिणामस्वरूप ऋण की मांग में वृद्धि होगी। अत: बैंकों को बढ़ती हुई ऋण की मांग को पूरा करने हेतु अधिकाधिक रूप से अपेक्षाकृत बड़े संसाधन जुटाने होंगे। इसके साथ ही बैंकों के लिए ऋण की गुणवत्ता बनाए रखने तथा ऋण संवृद्धि को स्थिर रखने के उद्देश्य से जोखिम-निर्धारण और जोखिम प्रबंधन क्षमताओं को भी बढ़ाने की आवश्यकता होगी।

## प्रतिस्पर्धा एवं समेकन

11.34 1990 वाले दशक के प्रारंभ से ही मुख्यतः प्रतिस्पर्धात्मक दबावों द्वारा संचालित विश्व भर में विलयन और अभिग्रहण की घटनाएं त्वरित गति से हुई हैं। इसके फलस्वरूप, सम्पूर्ण विश्व में परिचालनरत बैंकों की कुल संख्या में कमी आ गई। देश-वार साक्ष्य से पता चलता है कि कुछेक देशों में समेकन की प्रक्रिया बाजार की शक्तियों का परिणाम रही है, जबकि कुछेक अन्य मामलों में यह सरकार के नेतृत्व में संपन्न हुआ है। सुधारोत्तर अवधि में भारत में बैंक समामेलनों की संख्या में महत्त्वपूर्ण वृद्धि दर्ज हुई है। जहां 1999 से पूर्व वाली अवधि में बैंकों के समामेलन प्राथमिक तौर पर विलयित किए जाने वाले बैंकों की कमज़ोर वित्तीय स्थिति के कारण हुआ करते थे, वहीं 1999 के बाद वाली अवधि में व्यावसायिक और वाणिज्यिक आधारों द्वारा संचालित विलयन वित्तीय रूप से सुदृढ़ बैंकों के बीच संपन्न हुए हैं।

11.35 कई एक विलयनों एवं अभिग्रहणों के बावजूद, भारतीय बैंकिंग प्रणाली सुधारोत्तर अवधि के दौरान कम संकेन्द्रित हो गई। वास्तव में भारतीय बैंकिंग प्रणाली में संकेन्द्रण का स्तर संकेन्द्रण अनुपात और हृष्कमैन-हरफिनधल सूचकांक के आधार पर वर्ष 2006 के लिए अध्ययन किए गए चुनिंदा देशों में सबसे कम था। सुधार के प्रारंभिक वर्षों में प्रतिस्पर्धा के स्तर में कुछ न कुछ कमी आई, किन्तु उसके बाद वह महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ गई। अनुभवजन्य साक्ष्य के आधार पर भारतीय बैंकिंग उद्योग की विशेषता अधिकांश अन्य विकसित देशों और उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में विद्यमान स्थिति के अनुरूप ही एकाधिकारवादी प्रतिस्पर्धात्मक ढांचे वाली रही है। एक अनुभवजन्य विश्लेषण से यह भी पता चलता है कि विलयनों एवं समामेलनों का, आस्तियों पर प्रतिलाभ में वृद्धि और लागत में कमी, दोनों ही दृष्टियों से हस्तांतरतियों के सरकारी क्षेत्र के बैंक होने पर कार्य-कुशलता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा ।

11.36 भारत में बैंक समेकन की प्रक्रिया में कई महत्त्वपूर्ण मुद्दे उभरे हैं। ये मुद्दे आगे के समेकन के स्वरूप और उसकी सीमा, सरकारी क्षेत्र के बैंकों के निरंतर सरकारी स्वामित्व, बैंकिंग क्षेत्र के विदेशी बैंकों के लिए और खोले जाने तथा बैंकिंग एवं वाणिज्य के संयोजन से संबंधित हैं। बैंकिंग क्षेत्र में समेकन, जो पहले से ही जारी है, में विदेशी बैंकों की रूपरेखा की नियोजित समीक्षा और बासेल II के कार्यान्वयन जैसी कतिपय घटनाओं को देखते हुए भविष्य में तेज़ी आ सकती है। मध्यावधि से लेकर दीर्घावधि में सरकारी क्षेत्र के बैंकों के स्वामित्व का स्वरूप भी बदल सकता है। जहां बैंकिंग क्षेत्र का कुछ समेकन आवश्यक है, यह सुनिश्चित करने के लिए एक नीति का लागू किया जाना उपयुक्त होगा कि भविष्य में किसी भी समय प्रतिस्पर्धा की अनदेखी न होने पाए।

11.37 सरकारी क्षेत्र के बैंकों में स्वामित्व के मुद्दे को बदले हुए परिचालनात्मक परिवेश में देखे जाने की आवश्यकता है। सरकारी क्षेत्र के बैंकों का स्वामित्व कार्यकुशलता के दृष्टिकोण से कोई मुद्दा नहीं है क्योंकि जैसा कि विभिन्न उपायों से पता चलता है कि भारत में सरकारी क्षेत्र के बैंक अब उतने ही कार्य कुशल दिखाई देते हैं, जितने कि निजी और विदेशी बैंक। हालांकि, बैंकों का परिचालनात्मक वातावरण तेज़ी से बदल रहा है तथा उभरती स्थितियों से निपटने के लिए बैंकों को लचीलेपन की आवश्यकता है। एक अन्य मुद्दा जिस पर विचार किया जाना आवश्यक है, वह है सरकारी क्षेत्र के बैंकों में सरकारी इक्विटी पर 51 प्रतिशत की वर्तमान न्यूनतम सीमा (फ्लोर) को देखते हुए सरकारी क्षेत्र के बैंकों की पूंजी आवश्यकता का निधीयन। मध्यावधि में उनके विस्तार के लिए सरकार के पर्याप्त पूंजी उपलब्ध कराने में समर्थ न होने पर यह सरकारी क्षेत्र के बैंकों के विकास को अवरुद्ध करने वाला मुद्दा बन सकता है।

11.38 विदेशी बैंकों की रूपरेखा की 2009 में समीक्षा करना तय है। इसमें कतिपय मुद्दे शामिल होंगे। प्रतिस्पर्धा को गहन बनाकर विदेशी बैंकों की बढ़ी हुई उपस्थिति उस समेकन प्रक्रिया को तीव्र बना सकती है, जो इस समय जारी है। तथापि, इसके साथ ही, विलयनों/समामेलनों में बड़े बैंकों को शामिल किए जाने पर इससे संकेन्द्रण जोखिम भी पैदा हो सकता है। कुछेक अन्य देशों के अनुभव से यह भी पता चलता है कि समेकन के कारण बड़े बैंकों के अभ्युदय के फलस्वरूप लघु उद्यमों को उधार दिए जाने में महत्त्वपूर्ण रूप से कमी आ गई। इन सभी मुद्दों पर समीक्षा के समय सावधानीपूर्वक विचार किए जाने की आवश्यकता होगी।

11.39 वाणिज्यिक हितों द्वारा बैंकों के स्वामित्व से संबंधित नीति में हितों के संभाव्य टकराव, संसर्ग के प्रभाव की वर्धित संभाव्यता तथा वर्धित संकेन्द्रण से संबंधित मुद्दों को देखते हुए अन्तरराष्ट्रीय परंपराओं को पूरे तौर पर ध्यान में रखा जाना अपेक्षित होगा ।

## भारत में बैंकिंग क्षेत्र की कार्य-कुशलता, उत्पादकता और सुदृढ़ता

11.40 भारत में अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों की कार्य-कुशलता का लेखांकन और आर्थिक दोनों ही मापों का उपयोग करते हुए अनुभवजन्य

आधार पर विश्लेषण किया गया था। लेखांकन मापों से यह पता चला है कि सुधारोत्तर अवधि में अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों की उत्पादकता/कार्य-कुशलता में सर्वांगीण सुधार आया है। वित्तीय क्षेत्र के सुधारों की शुरुआत करते समय, अधिकांश कार्य-कुशलता अनुपात अत्यधिक उन्नत देशों और उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं के साथ तुलना किए जाने पर बहुत कम थे। बैंकों, विशेषतः राष्ट्रीयकृत बैंकों के कार्य-निष्पादनों में सुधार प्रारंभिक वर्षों में वांछित रूप में सफल नहीं हो पाए थे, क्योंकि नए परिवेश से सामंजस्य बिठाने में उन्हें कुछ समय लगा। तथापि, विशेषतः 2001-02 की शुरुआत से सुस्पष्ट सुधार दृष्टिगोचर होने लगा। कार्य-कुशलता/उत्पादकता संबंधी मानदण्ड वैश्विक स्तरों के निकट पहुंच गए। सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सुधार सरकारी क्षेत्र के बैंकों के कार्य-निष्पादन में आया। अधिकांश मानदंडों की दृष्टि से सरकारी क्षेत्र के बैंकों का कार्य-निष्पादन विदेशी बैंकों और निजी क्षेत्र के नये बैंकों के साथ अभिसरित होता था।

11.41 सभी बैंक समूहों में मध्यस्थीकरण लागत के साथ ही निवल ब्याज मार्जिन में भी कमी आ गई। हालांकि, इसके बावजूद बैंकिंग क्षेत्र की लाभप्रदता में बढ़ोत्तरी हुई। इस प्रकार वह अपेक्षाकृत अधिक ब्याज दर अंतर नहीं, अपितु वर्धित कारोबार परिमाण तथा कार्य-कुशलता में सुधार था, जिसके फलस्वरूप लाभप्रदता अपेक्षाकृत अधिक हो गई। जहां प्रतिस्पर्धी दबावों ने बैंकों को उनके उत्पादों का मूल्य-निर्धारण भड़कीले ढंग से करने पर विवश किया, वहीं संतुलित आर्थिक वृद्धि के फलस्वरूप वर्धित परिमाण तथा 2002-03 से 2004-05 तक की अवधि के दौरान खजाना परिचालनों से विशाल व्यापारिक लाभों ने भी बैंकों को उनकी लाभप्रदता को स्थिर रखने में समर्थ बनाया। सभी बैंक-समूहों में प्रति कर्मचारी और प्रति शाखा कारोबार भी महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ा। इन सभी कारकों के परिणामस्वरूप सुधारोत्तर अवधि के दौरान आस्तियों पर प्रतिलाभ और इक्विटी पर प्रतिलाभ में भी बढ़ोत्तरी हुई।

11.42 हालांकि, विविध लेखांकन मापों में आया सुधार सभी बैंक समूहों में अलग-अलग था। लागत अनुपात (आय की तुलना में परिचालन लागत) की दृष्टि से घरेलू बैंकों की अपेक्षा विदेशी बैंक अधिक कार्यकुशल थे। इसी प्रकार, श्रमिक उत्पादकता की दृष्टि से विदेशी और नये निजी बैंक उनके समान समूहों से आगे थे। सरकारी क्षेत्र के बैंकों में प्रति कर्मचारी कारोबार द्वारा प्रतिबिंबित श्रमिक उत्पादकता उद्योग के सर्वश्रेष्ठ कार्य-निष्पादकों अर्थात् विदेशी बैंकों और नए निजी बैंकों की लगभग आधी थी। इसका कारण लेन-देन का आकार था, जो विदेशी और नए निजी बैंकों के मामले में अधिक महत्त्वपूर्ण था, क्योंकि वे प्रमुख कॉरपोरेट कंपनियों और अधिक निवल हैसियत वाले व्यक्तियों से व्यवहार करते हैं। निवल ब्याज मार्जिन और मध्यस्थीकरण लागत की दृष्टि से क्रमशः निजी क्षेत्र के नए बैंक और सरकारी क्षेत्र के बैंक अन्य बैंक समूहों की तुलना में अधिक कार्य-कुशल थे। विदेशी बैंकों की जमा लागत सबसे कम थी। हालांकि, इसका लाभ उधारकर्ताओं को नहीं प्राप्त हुआ, जिसके फलस्वरूप निवल ब्याज अंतर अपेक्षाकृत अधिक हो गया। एक अनुभवजन्य अभ्यास से यह पता चला है कि निवल ब्याज मार्जिन को प्रभावित करने वाला प्रमुख कारक परिचालन लागत थी । गैर-ब्याजगत आय और आस्ति की गुणवता निवल ब्याज मार्जिन के अन्य निर्धारक कारक थे ।

11.43 अप्राचलिक आंकड़ा पर्यावरण विश्लेषण (डीईए) पद्धति का उपयोग करते हुए मापी गई कार्य-कुशलता और उत्पादकता से लेखांकन मापों अथवा वित्तीय अनुपातों की पुष्टि हो गई। सभी बैंकों में कार्य-कुशलता बढ़ी और कार्य-कुशलता से संबंधित ये अभिलाभ सुधारों के कुछ वर्ष बाद अर्थात 1997-98 से उद्‌भूत हुए। वर्धित कार्य-कुशलता स्तरों के साथ प्रौद्योगिकीय नवोन्मेषों के फलस्वरूप बैंकों की उत्पादकता में सभी स्तरों पर वृद्धि हुई। जहां सरकारी क्षेत्र के बैंकों और निजी क्षेत्र के नए बैंकों सहित अधिकांश घरेलू बैंक वर्धित उत्पादन संभाव्यता के निकट पहुंचने में समर्थ हुए, वहीं कुछेक बैंक प्रौद्योगिकीय नवोन्मेषों की गति के अनुरूप चलने में पीछे रह गए। अनुभवजन्य विश्लेषण से यह पता चलता है कि भारतीय संदर्भ में स्वामित्व और कार्य-कुशलता के बीच किसी प्रकार का संबंध नहीं है, क्योंकि सर्वाधिक कार्य-कुशल बैंक सभी तीनों ही खण्डों अर्थात् सरकारी, निजी और विदेशी से संबंधित हैं। वास्तव में, 28 अल्पतम कार्य-कुशल बैंक निजी और विदेशी बैंक खण्ड से संबंधित थे। दूसरी ओर, आकार और कार्य-कुशलता के बीच तथा विविधीकरण और कार्य-कुशलता के बीच भी एक सकारात्मक और महत्त्वपूर्ण संबंध विद्यमान है। इससे यह संकेत प्राप्त होता है कि बड़े और विविधीकृत बैंक अधिक कार्य-कुशल हैं। बढ़ी हुई कार्य-कुशलता और उत्पादकता में विविध कारकों ने योगदान किया। इनमें प्रौद्योगिकीय उन्नतियों, सांविधिक पूर्व-कृत्यों में कटौती, अनर्जक आस्तियों में कमी, जमाराशियों की परिपक्वता प्रोफाइल में कमी, आस्ति प्रोफाइलों में बढ़ोत्तरी का समावेश था।

11.44 जैसा कि जोखिम-भारित आस्तियों की तुलना में पूंजी के अनुपात से पता चलता है कि भारतीय बैंकिंग क्षेत्र की वित्तीय सुदृढ़ता में समग्र स्तर और सभी बैंक समूहों दोनों ही दृष्टियों से सुधार आया, दुर्भाग्य और घटिया प्रबंधन, दोनों ही परिकल्पनाओं के साक्ष्य उपलब्ध कराते हुए, उक्त विश्लेषण से पता चलता है कि स्थूल आर्थिक कारकों के साथ-साथ प्रबंधन की गुणवत्ता बैंकों की आस्ति गुणवत्ता को प्रभावित कर देते हैं ।

11.45 महत्त्वपूर्ण सुधारों के बावजूद कतिपय ऐसे क्षेत्र मौजूद हैं जिनका निराकरण किया जाना ज़रूरी है । भारत में व्यापक तौर पर अधिक परिचालन लागतों से प्रभावित मध्यस्थीकरण लागत वैश्विक मानकों की तुलना में अब भी अधिक है। अतएव परिचालन लागत में कमी लाए जाने की आवश्यकता है। जैसे-जैसे प्रतिस्पर्धा गहन होती जाती है, बैंकों के निवल ब्याज मार्जिनों के भविष्य में अधिक दबाव में आने की संभावना है। इसलिए बैंकों के लिए यह आवश्यक है कि वे अपनी लाभप्रदता को टिकाए रखने के लिए आय के गैर-ब्याजगत स्रोतों की तलाश करें। यद्यपि विदेशी बैंकों के मामले में निधि की

लागत उल्लेखनीय रूप से कम है, तथापि, जैसा कि अधिक निवल ब्याज मार्जिन से पता चलता है, निधियों की कम लागत के लाभ उधारकर्ताओं को उपलब्ध नहीं कराए गए । यद्यपि, कुल मिलाकर कार्य-कुशलता और उत्पादकता में सुधार आया, तथापि इस आशय के साक्ष्य मौजूद हैं कि संसाधनों का उपयोग कुशलतम विधि से नहीं किया जा रहा है । सरकारी क्षेत्र के बैंकों के मामले में, चिंता का एक क्षेत्र है प्रति कर्मचारी कम कारोबार, जो निजी क्षेत्र के नए बैंकों के मुकाबले लगभग आधा ही है । अत: सरकारी क्षेत्र के बैंकों की श्रमिक उत्पादकता बढ़ाने तथा उसे निजी क्षेत्र के नए बैंकों के समकक्ष लाने हेतु और अधिक प्रयास करने होंगे । इसी प्रकार, कतिपय बैंकों द्वारा वर्धित प्रौद्योगिकीय क्षमता (नवोन्मेष) को अधिकाधिक आत्मसात किए जाने की जरूरत है, ताकि प्रक्रियाओं में परिवर्तन और मानव संसाधन कौशल में सुधार के माध्यम से बैंकिंग क्षेत्र की उत्पादकता में और अधिक वृद्धि की जा सके। भारत में बैंकिंग क्षेत्र के समक्ष भावी चुनौती है मध्यस्थीकरण की लागत में कमी लाना और उसके साथ ही अधिक लाभप्रदता को बनाए रखना। इसे केवल कार्य-कुशलता बढ़ाकर तथा आय के गैर-ब्याजगत स्रोतों का दोहन करके ही प्राप्त किया जा सकता है ।

## बैंकिंग में विनियामक एवं पर्यवेक्षी चुनौतियां

11.46 पिछले कुछ वर्षों में वित्तीय भू-दृश्य में महत्त्वपूर्ण रूप से परिवर्तन आया है, जिसने विनियामकों के समक्ष नयी चुनौतियां प्रस्तुत कर दी हैं। विश्व भर के बैंकिंग पर्यवेक्षक उस वित्तीय उद्योग के लिए, जो निरंतर परिवर्तित होता रहता है, उपयुक्त विनियामक एवं पर्यवेक्षी ढांचे का विकास करने की चुनौती से जूझ रहे हैं । इसलिए, विनियमन और पर्यवेक्षण के कतिपय पहलुओं पर पुनर्चिंतन की प्रक्रिया जारी है । यू.के. जैसे कुछेक देशों में मौद्रिक नीति के साथ हितों के टकराव से बचने के लिए पर्यवेक्षण का दायित्व केन्द्रीय बैंक से अलग कर दिया गया है। वित्तीय सेवा प्रदाताओं के बीच भेदों की समाप्ति तथा वित्तीय संगुटों के उद्भव के प्रत्युत्तर में कुछेक देशों में एकल विनियामक दृष्टिकोण अपना लिया गया है। कुछेक अन्य देशों (उदाहरण के लिए आस्ट्रेलिया) ने उद्देश्य - आधारित विनियमन को अंगीकृत कर लिया है। दुर्लभ पर्यवेक्षी संसाधनों में मितव्ययिता लाने हेतु बाज़ार अनुशासन पर वर्धित बल दिया जा रहा है। बाज़ारों और प्रतिपक्षियों को अनुशासनिक एजेन्टों के रूप में कार्य करते हुए अतिरिक्त जोखिम लेने पर बेहतर नियंत्रण रखने की अनुमति प्रदान करने हेतु प्रकटन पर भी अधिकाधिक ध्यान दिया जा रहा है। पर्यवेक्षक किसी वित्तीय फर्म के व्यवसाय के सभी पहलुओं का मूल्यांकन करने तथा केवल विनियामक मानदंडों का अनुपालन सुनिश्चित करने के बजाय जोखिम के बहुविध स्रोतों का पूर्वानुमान लगाने का प्रयास कर रहे हैं। तीव्र गति से विकासरत वित्तीय क्षेत्र तथा विनियामक निकायों की निरंतर विस्तृत होती नियम-पुस्तिकाओं ने यू.के. जैसे कुछ देशों को सिद्धांत-आधारित पर्यवेक्षण अंगीकृत करने पर विवश कर दिया है।

11.47 अमरीकी सब-प्राइम संकट के परिणामस्वरूप वैश्विक वित्तीय बाज़ारों में हुई हाल की घटनाओं ने बैंकिंग उद्योग के कतिपय विनियामक और पर्यवेक्षी पहलुओं पर पुनर्चिंतन का आह्वान कर दिया है। पहला, एक अनसुलझा मुद्दा है असामान्य परिस्थितियों में चलनिधि के दबावों का सामना किस प्रकार किया जाए। दूसरा, इस बात पर भी बहस की जा रही है कि कहीं पूंजी आवश्यकताओं की 'प्र-चक्रीयता' उस अन्तर्निहित प्रवृत्ति के साथ मिलकर एक ऐसा कारक तो नहीं बन गई है जो उत्कर्ष (तेजी) और निपात (गिरावट) के प्रभाव को बढ़ा देते हैं। तीसरा, जटिल उत्पादों का विनियमन और व्युत्पन्नियों पर निगरानी एक अन्य मुद्दा है। चौथा, वित्तीय प्रणाली में बैंकेतर संस्थाओं की भूमिका की भी विनियामक परिप्रेक्ष्य में जाँच की जा रही है। पाँचवाँ, इस बात पर बहस की जा रही है कि क्या संस्थाओं को इतना बड़ा और इतना जटिल होने देना चाहिए कि उनकी समस्याओं का प्रणाली-व्यापक प्रभाव हो। रिज़र्व बैंक विश्व भर के बैंकिंग पर्यवेक्षण में अद्यतन प्रवृत्तियों पर इस दृष्टि से नज़र रखे हुए है कि भारत के बारे में उनकी प्रासंगिकता क्या होगी।

11.48 अन्य बैंक पर्यवेक्षकों की भांति ही रिज़र्व बैंक भी विनियामक एवं पर्यवेक्षी ढांचे में आवश्यक परिवर्तन करते हुए पूरी सक्रियता से वित्तीय प्रणाली में होने वाले परिवर्तनों के प्रति विनियामक रेस्पांड कर रहा है। बैंकिंग क्षेत्र को सुदृढ़ बनाने और उसे अधिकाधिक परिचालनात्मक लोच प्रदान किए जाने के उद्देश्य से विवेकसम्मत तत्त्वों के आधार पर व्यष्टि विनियमन के स्थान पर समष्टि प्रबंधन के रूप में बदलाव आया है। वैश्वीकरण और उदारीकरण, वित्तीय नवोन्मेषों और प्रौद्योगिकीय उन्नतियों तथा बढ़ते वित्तीय संगुटन से पैदा होने वाली चुनौतियों से निपटने के लिए आवश्यक व्यवस्थाएं भी की गई हैं।

11.49 आने वाले वर्षों में यह सुनिश्चित करना एक महत्त्वपूर्ण चुनौती होगी कि वित्तीय संगुटों का पर्याप्त रूप में विनियमन हो। वित्तीय संगुटों की निगरानी की विद्यमान व्यवस्था की कुछ सीमाएं हैं, यद्यपि अन्तर-विनियामक विचार-विमर्शों एवं सहयोग के माध्यम से समूह-व्यापी परिप्रेक्ष्य अपनाए जाने के प्रयास किए जा रहे हैं। ई-फाइनेन्स उत्पादों के बढ़ते उपयोग से बैंकों के समक्ष कुछेक जोखिम उपस्थित हो रहे हैं, जिनके लिए उपयुक्त सुरक्षोपायों की आवश्यकता होगी।

## कुछ अंतिम अनुचिंतन

11.50 उक्त रिपोर्ट में संसाधन संग्रहण के प्रबंधन, जोखिम एवं पूंजी प्रबंधन, बैंकों के उधार देने और निवेश परिचालनों, वित्तीय समावेशन, समेकन और प्रतिस्पर्धा, कार्यकुशलता, उत्पादकता, वित्तीय सुदृढ़ता और विनियामक एवं पर्यवेक्षी चुनौतियों जैसे भारतीय बैंकिंग के विविध पहलुओं का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। इस विश्लेषण का प्रयास 18वीं शताब्दी की शुरुआत में हुए भारतीय बैंकिंग उद्भव की पृष्ठभूमि में किया गया है, जिसमें स्वातंत्र्योत्तर काल पर विशेष बल दिया गया है । उक्त विश्लेषण से यह पता चलता है कि भारतीय बैंकिंग प्रणाली समय-समय पर कतिपय ढांचागत परिवर्तनों से गुजरी है। भारत के पास अब एक सुविकसित बैंकिंग की आधारभूत सुविधा, सहायक विनियामक वातावरण

और वित्तीय रूप से सुदृढ़ पर्यवेक्षी प्रणाली उपलब्ध है। बैंक कार्य-कुशल और वित्तीय रूप से सुदृढ़ हो गए हैं, जो उन्हें विश्व के सर्वश्रेष्ठ बैंकों की तुलना में ला खड़ा कर देता है। भारत के बैंक पिछले कुछेक वर्षों में हुई भारी वृद्धि से लाभान्वित हुए हैं, जिसने उन्हें सुदृढ़ वित्तीय कार्य-निष्पादन दर्शाने में सक्षम बनाया है । बैंकों ने बढ़ी हुई प्रतिस्पर्धा का प्रत्युत्तर विद्यमान कारोबारों की असंघटित (अभिग्रहण) और संघटित वृद्धि के माध्यम से विविधीकरण और विस्तार द्वारा दिया है। जहां कुछेक परिवर्तन अन्तर्जात कारकों द्वारा प्रवर्तित थे, वहीं अन्य बहिर्जात कारकों के कारण हुए अर्थात् वे वैश्विक घटनाओं के अंग थे। प्रौद्योगिकीय विकास संभवतः एकमात्र सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बहिर्जात कारक था, जिसने बैंकिंग प्रणाली को प्रभावित किया। दूसरी ओर अन्तर्जात परिवर्तन विलयनों, अभिग्रहणों, वित्तीय सेवाओं के प्रदाताओं के बीच विभेदों की समाप्ति और वित्तीय संगुटों के आविर्भाव के रूप में हुए। जबकि बैंक परिवर्तित परिवेश से सामंजस्य बिठाने में समर्थ रहे हैं, तीव्र गति से विकसित होता भू-दृश्य भविष्य में भी कतिपय चुनौतियां उपस्थित करता रहेगा।

11.51 तीव्र गति से बदलते वित्तीय भू-दृश्य का अंतिम परिणाम बैंकिंग उद्योग के भीतर तथा बैंकेतर संस्थाओं दोनों से ही बढ़ी हुई प्रतिस्पर्धा होगा। अपेक्षाकृत अधिक स्तर वाली प्रतिस्पर्धा के कारण मार्जिनों पर दबाव पड़ सकता है, जो बैंकों की लाभप्रदता को अतिक्रमित कर देता है। अतएव बैंकों के लिए लागत पक्ष को पुनर्व्यवस्थित करने की आवश्यकता होगी। अधिक परिचालन लागत और कार्य-कलापों का विविधीकरण कुछेक ऐसे पहलू होंगे, जिन पर बैंकों के लिए आगामी वर्षों में प्रतिस्पर्धात्मक और लाभदायक बने रहने के लिए ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता होगी। बैंकों के लिए यह भी आवश्यक होगा कि वे अपनी निविष्टियों को बेहतर ढंग से संयोजित करें, ताकि उत्पादकता और कार्यकुशलता बढ़ाई जा सके। परिचालन लागत में कमी लाने और अपेक्षाकृत अधिक उत्पादकता प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रौद्योगिकी की गहनता में वृद्धि महत्त्वपूर्ण होती है। हालांकि, सूचना प्रौद्योगिकी का व्यवहार करते समय उपयुक्त सुरक्षा और प्रणाली की अखंडता, आपदा निवारण प्रबंधन तथा कारोबार सातत्य आयोजनाओं सहित कुछेक महत्त्वपूर्ण कारकों का निराकरण किए जाने की आवश्यकता होगी। सूचना प्रौद्योगिकी प्रणालियों में संसाधित एवं भंडारित डेटा की अखंडता को बैंकों द्वारा हर समय सुनिश्चित किए जाने की आवश्यकता होती है तथा तत्काल प्रतिकृति सहित पर्याप्त बैकअप की व्यवस्था की जानी आवश्यक होती है। इसकी व्यापक रूपरेखा ''वित्तीय क्षेत्र प्रौद्योगिकी विजन प्रलेख (2008-10)'' में पहले से उपलब्ध कराई जा चुकी है। यद्यपि अनर्जक देयताओं को नियंत्रित रखने की दृष्टि से भारतीय बैंकों ने अत्यधिक रूप से उत्कृष्ट कार्य किया है तथापि, आस्ति की गुणवत्ता बनाए रखने का कार्य बैंकों के समक्ष निरंतर चुनौती बना रहेगा।

11.52 बैंकों को पूंजी बाज़ार की ओर से बढ़ी हुई स्पर्धा उपस्थित होने की आशा है। जनसांख्यिकी में हो रहे परिवर्तनों से ग्राहकों की वित्तीय आवश्यकताएं बदल जाएंगी, जिसका प्रभाव उत्पादों और वितरण चैनलों पर पड़ने वाला है। भारत में निर्भरता अनुपात में आगामी कुछेक वर्षों में कमी आने की संभावना है। अधिक वित्तीय धन और युवा आबादी के अधिक अनुपात के साथ, परिवार उनकी वरीयता को अपेक्षाकृत अधिक जोखिम वाली आस्तियों की ओर बदलने हेतु प्रवृत्त होंगे और उसके फलस्वरूप बैंकों में जमाराशियां रखने के बजाय अन्य अधिक जोखिमपूर्ण, अधिक प्रतिलाभ वाले उत्पादों में निवेश करने जैसा बदलाव आएगा। इस प्रकार, भविष्य में अमध्यस्थीकरण की प्रक्रिया में और अधिक गति आएगी, जिसके द्वारा उधारकर्ता बैंकों की अनदेखी करेंगे तथा सीधे पूंजी बाज़ारों से वित्त प्राप्त करेंगे। बैंकिंग उद्योग के समक्ष यह चुनौती उपस्थित होगी कि वे प्रतिस्पर्धी उत्पाद एवं सेवाएं उपलब्ध कराएं और यदि वे वैसा करने में असफल होते हैं, तो वे अपने बाज़ार अंश अन्य खंडों को खो बैठेंगे। समग्र जमा संग्रहण प्रभावित नहीं हो सकता, क्योंकि जैसा कि निकट अतीत में देखने में आया था कि अन्ततोगत्वा यह धन कॉरपोरेट कंपनियों/पूंजी बाज़ार के मध्यवर्तियों से चालू/बचत जमा राशियों के रूप में बैंकिंग प्रणाली के पास ही वापस आएगा। इससे उधार लेने की लागत में भी कमी आ सकती है क्योंकि इस प्रकार की जमाराशियां कम जोखिम संवेदी और कम खर्चीली होती हैं। हालांकि, बैंकों को निधीयन के एक स्थिर स्रोत से वंचित होना पड़ेगा तथा जब तक कि आस्ति पक्ष भी पुनर्व्यवस्थित नहीं हो जाता अपने आप को एक गंभीर आस्ति-देयता असंतुलन के प्रति एक्सपोज करना होगा।

11.53 एटीएम, इंटरनेट और मोबाइल फोन जैसी प्रौद्योगिकी पर आधारित सेवाओं के उपयोग को और अधिक प्रधानता प्राप्त होने की संभावना है। इससे प्रतिस्पर्धा के गहन होने की भी आशा है। प्रतिस्पर्धा में आवश्यक रूप से बैंकों की भौतिक उपस्थिति अपेक्षित नहीं होती, अपितु केवल यह कि वे संपूर्ण बाज़ार का मुक्त रूप से संचालन करने में समर्थ हों। चूंकि बैंकों के आकार में वृद्धि होती है तथा वे बहुविध बाज़ारों में परिचालन करते हैं, उनकी पहुँच गैर-जमा देयताओं तक भी हो सकती है। यदि नॉर्दन रॉक का हाल का अनुभव कोई निर्देश हो सकता है, तो बैंकों के लिए गैर-जमा देयताओं पर अत्यधिक निर्भरता से बचना आवश्यक होगा। बैंकों के इस प्रकार की देयताओं का आश्रय लेने पर विवश होने की स्थिति में, वह विवेकसम्मत सीमाओं के भीतर होनी चाहिए और इस प्रकार के उधारों से उद्भूत होने वाली जोखिमों का प्रबंधन करने हेतु उपयुक्त उपाय भी किए जाने आवश्यक होंगे।

11.54 भारतीय बैंकिंग प्रणाली में विलयनों एवं अभिग्रहणों की प्रक्रिया, जिसमें 1999 से तेज़ी आ गई है, के और अधिक बढ़ने की आशा है। यह महत्त्वपूर्ण है कि भविष्य में बैंकिंग प्रणाली में विलयन एवं अभिग्रहण संभवतः उस स्थिति को छोड़कर, जहाँ प्रणालीगत संकट विद्यमान हो, सरकार या विनियामक द्वारा प्रेरित न होकर बाज़ार-प्रवर्तित तथा वाणिज्यिक कारणों पर आधारित हों (रेड्डी, 2004)। यद्यपि सरकारी क्षेत्र वाले बैंकिंग खंड, जिसका बैंकिंग प्रणाली की कुल आस्तियों में काफी बड़े अंश पर कब्जा है, में समेकन अब भी कार्य प्रगति पर वाली स्थिति में है, तथापि सरकारी क्षेत्र के बैंकों के संबंधित कानूनों में इस प्रयोजन हेतु समर्थकारी

कानूनी प्रावधान विद्यमान हैं। भविष्य में समेकन की प्रक्रिया सीमा-पार का आयाम भी ले सकती है।

11.55 हाल की प्रवृत्तियों से यह भी पता चलता है कि भविष्य में प्रौद्योगिकी विकासों और वित्तीय नवोन्मेषों के कारण समग्र जटिलता और उन जोखिमों में वृद्धि होगी, जिनके प्रति बैंकिंग प्रणाली एक्सपोज हो सकती है । अत: हाल के वर्षों की ही भांति ध्यान का केन्द्र बैंकिंग प्रणाली की सुरक्षा और वित्तीय स्थिरता के सुदृढ़ीकरण पर स्थिर रहना चाहिए, ताकि वर्धित प्रतिस्पर्धा और अधिकाधिक कार्य-कुशलता के लाभों का पूरी तरह से उपयोग किया जा सके । दूसरे शब्दों में, बैंकिंग क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा एवं कार्य-कुशलता को बढ़ाने के लिए परिवर्तनों को प्रणाली की बढ़ी हुई सुरक्षा एवं वित्तीय सुदृढ़ता द्वारा संतुलित रखे जाने की आवश्यकता है । विनियामक अथवा पर्यवेक्षक के बजाय बैंक अपने आप ही अपने कार्य-निष्पादन एवं वित्तीय स्थिति के लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार हैं । बढ़ती जटिलता को ध्यान में रखते हुए संस्थागत स्तर पर जोखिम माप और जोखिम प्रबंधन तथा बैंकों में अभिशासन की परंपराओं को कार्य-सूची में सर्वोपरि स्थान दिए जाने की आवश्यकता है । मुख्य चुनौती उन अवसरों का लाभ उठाने की होगी, जो जोखिमों का प्रबंधन करते समय पैदा होंगे ।

11.56 रिज़र्व बैंक ने भारत में बैंकों के विनियमन एवं पर्यवेक्षण को एक परामर्शी प्रक्रिया के माध्यम से देश - विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के विशेष प्रयोजन हेतु निर्देशित करते समय हमेशा यह प्रयास किया है कि उन्हें वैश्विक उत्तम परंपराओं के अनुरूप रखा जाए । इस व्यवस्था ने अच्छी तरह काम किया है और इसे भविष्य में भी जारी रखे जाने की आवश्यकता है । हालांकि, आगे बढ़ते हुए रिज़र्व बैंक को वित्तीय संगुटों का यथोचित रूप से विनियमन किए जाने जैसे कुछेक जटिल मुद्दों का निराकरण करना होगा । अंतरराष्ट्रीय बैंकों की सीमा-पार उपस्थिति से उठने वाले घरेलू मेजबान मुद्दों का भी निराकरण किया जाना होगा ।

11.57 हाल की वैश्विक वित्तीय हलचल से यह पता चला है कि अत्यधिक दबाव वाली स्थितियों में चलनिधि की कमियां निधीयन की कमियों तक विस्तारित हो सकती हैं, जिससे बैंकों और वित्तीय संस्थाओं की शोध - क्षमता प्रभावित हो सकती है । वैश्विक स्तर पर, केन्द्रीय बैंकों ने इन दोनों ही कमियों का निराकरण विविध प्रकार की पहलकदमियों के माध्यम से किया है । वैश्विक वित्तीय बाज़ारों में हुई हलचल की पृष्ठभूमि में पर्यवेक्षकों को कतिपय मुद्दों का सामना करना पड़ रहा है, जैसे कि विवेकसम्मत पर्यवेक्षण, चलनिधि एवं जोखिम प्रबंधन को सुदृढ़ करना, पारदर्शिता और मूल्य-निर्धारण को बढ़ाना, क्रेडिट रेटिंग की भूमिका और उपयोग में परिवर्तन लाना, जोखिम के प्रति प्राधिकारियों की प्रत्युत्तरदायिता को सुदृढ़ बनाना तथा वित्तीय प्रणाली में दबाव से निपटने हेतु सुदृढ़ व्यवस्था को कार्यान्वित करना। वित्तीय बाज़ार की हाल की घटनाओं ने भी कतिपय मुद्दों और चिन्ताओं को जन्म दिया है। पहला, अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के आकलन के अनुसार अतीत की घटनाओं के अनुभव विद्यमान अभूतपूर्व स्थिति के लिए अधिक मार्गदर्शन उपलब्ध नहीं करा सकते, क्योंकि वित्तीय प्रणाली के जुड़वा वाहक (इंजिन) अर्थात् बैंकिंग प्रणाली और प्रतिभूति बाज़ार, दोनों ही एक साथ लड़खड़ा रहे हैं। दूसरा जबकि, नवोन्मेषी ऋण लिखतों के बढ़े हुए उपयोग की परंपरा और जोखिम विसरण की जटिल परतबंदी ने सूचना लागत में कमी ला दी है, उन्होंने निवेशक या जोखिम वाहक को अंतिम उधारकर्ताओं, जहां वास्तविक जोखिम रहते हैं, से क्रमिक रूप से अलग रहने में समर्थ बना दिया है। इस स्थिति में पूरी शृंखला में जोखिमों की पहचान करना और उनका पता लगाना अधिकाधिक चुनौतीपूर्ण होता जा रहा है। तीसरा, रेटिंग एजेन्सियों की भूमिका की भी जाँच-पड़ताल की जा रही है। चौथा, बीमाकर्ताओं, जो बाण्डों से संबंधित भुगतानों की गारंटी देते हैं, की शक्ति और विश्वास में भी कमी आ रही है। पांचवां, वित्तीय उत्पादों और बाज़ारों की वर्धित जटिलता विनियामकों एवं पर्यवेक्षकों के समक्ष बाज़ारों और संस्थाओं के सामने उठने वाली जोखिमों के अनुरूप कार्रवाई करने की अधिकाधिक चुनौतियां प्रस्तुत कर रही है। छठा, वित्तीय बाज़ार की हाल की घटनाओं से प्राप्त होने वाली महत्त्वपूर्ण शिक्षा यह है कि फोकस इस बात पर नहीं होना चाहिए कि अशांति को किस तरह नियंत्रित किया जाए, अपितु इस बात पर होना चाहिए कि इन व्यवधानों के विशिष्ट स्रोतों की परवाह किए बिना वित्तीय प्रणाली को सुदृढ़ बनाने के लिए अपेक्षाकृत दीर्घकालिक आधार पर कौन-सी नीतियां लागू की जाएं। ये मुद्दे उन चुनौतियों की ओर संकेत करते हैं, जो वित्तीय प्रणाली की सुरक्षा और सुदृढ़ता को परिरक्षित करने की दिशा में आगे आने वाली हैं ।

11.58 निकटवर्ती अवधि में बैंकिंग और वित्तीय नीतियों में नवोन्मेष हेतु की जाने वाली पहल को रोके बिना बैंकिंग प्रणाली को और अधिक सुदृढ़ बनाने पर अधिक से अधिक बल दिया जाना आवश्यक होगा। आने वाली स्थितियों के अनुरूप विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचे में निरंतर परिष्करण और सुदृढ़ीकरण आवश्यक होगा। सभी श्रेणियों के बैंकों को और अधिक सुदृढ़ बनाने के अलावा, वर्धित ऋण सुपुर्दगी, सहायक ऋण संस्कृति, ग्राहक सेवा और वित्तीय समावेशन पर भारतीय बैंकिंग क्षेत्र की भविष्य की कार्य-सूची में प्रमुखता से ध्यान दिए जाने की आवश्यकता होगी।

# चुने हुए संदर्भ

**VI. बैंकों का ऋण तथा निवेश परिचालन**


बार्थ, जेम्स आर., गेरार्ड कैप्रिओ जूनियर., तथा रॉस लेविन. 2002 ''फाइनैंशियल रेग्युलेशन एंड परफॉर्मेंस : क्रॉस कंट्री एविडेन्स'' लिओनार्डो हेरनांडेज तथा क्लॉस शिमड्ट-हेब्बेल (सं.), *बैंकिंग, फाइनैंशियल इंटीग्रेशन, एंड इंटरनेशनल क्राइसिस.* 113-41. सेन्ट्रल बैंक ऑफ चिली. सेंटियागो।

बत्रा, गीता, डेनियल कौफमन तथा ऐंड्रयू एच.डब्ल्यू.स्टोन. 2002.वॉयसेज़ ऑफ दि फर्म्स 2002 : *इनवेस्टमेन्ट क्लाइमेट एंड दि गवर्नेन्स फाइंडिंग्ज ऑफ दि वर्ल्ड बिजनेस एनवायरनमेंट सर्वे.* दि वर्ल्ड बैंक ग्रुप।

बेक, थॉरस्टेन, अस्ली डेमिरगुक-कुंट, तथा वोजिस्लाव मक्सिमोविक. 2003. ''बैंक कंप्टीटिशन, फाइनैंसिंग ऑब्स्टैकल्स एंड ऐक्सेस टू क्रेडिट.'' *पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर,* 2996. दि वर्ल्ड बैंक।

बेक, थॉरस्टेन, अस्ली डेमिरगुक-कुंट, 2005. ''स्मॉल एंड मीडियम साइज एन्टरप्राइजेज़ : ओवरकमिंग ग्रोथ कान्स्ट्रेन्ट्स.'' दि वर्ल्ड बैंक ग्रुप. फरवरी।

बर्गर, ए.एन. तथा ग्रेगोरी एफ.उडेल. 1994.''डिड रिस्क-बेस कैपिटल अलोकेट बैंक क्रेडिट एंड कॉज ए. 'क्रेडिट क्रंच' इन दि यूनाइटेड स्टेट्स?'' *जर्नल ऑफ मनी, क्रेडिट एंड बैंकिंग,* 26:586-628।

बर्गर,ए.एन. तथा डब्ल्यू.एस.फ्रेम. 2005. ''स्मॉल बिज़नेस क्रेडिट स्कोरिंग एंड क्रेडिट अवेलेबिलिटी.'' फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ अटलांटा. *वर्किंग पेपर सिरीज* 10, मई।

बेनकि, बेन, एस. तथा कारा एस.लाउन. 1991.''दि क्रेडिट क्रंच.'' *ब्रूकिंग्ज पेपर्स ऑन इकोनॉमिक ऐक्टिविटी,* 2:205-46।

बॉइड, जे.एच. तथा एम गर्टलर. 1993. ''यूएस कमर्शियल बैंकिंग : ट्रेन्ड्स, साइकल्स एंड पॉलिसी.'' *एनबीईआर वर्किंग पेपर सिरीज सं.* 4404. जुलाई।

क्लार्क, टी.,ए.डिक, बी.हिरटल, के.जे. स्टिरोह, तथा आर.विलियम्स. 2007.''दि रोल ऑफ रिटेल बैंकिंग इन दि यू.एस.बैंकिंग इंडस्ट्री : रिस्क, रिटर्न एंड इंडस्ट्री स्ट्रक्चर.'' फेडरल रिज़र्व बोर्ड न्यू यॉर्क. *इकॉनॉमिक पॉलिसी रिव्यू.* दिसंबर।

कोलमन, डब्ल्यू.डी. तथा विन पी. ग्रांट. 1998. ''पॉलिसी कनवर्जेन्स एंड पॉलिसी फीडबैक : ऐग्रिकल्चरल फाइनैंस पॉलिसीज इन ए ग्लोबलाइजिंग एरा.'' *यूरोपियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल रिसर्च,* 34 (2):225-47।

कोट्टारेली, कार्लो, गिओवन्नी डेल अरिक्किआ, तथा इवन्ना वल्डकोवा-होल्लर 2003. ''अर्ली बर्ड्स, लेट राइजर्स, एंड स्लीपिंग ब्यूटीज़: बैंक क्रेडिट ग्रोथ टू दि प्राइवेट सेक्टर इन सेंट्रल एंड ईस्टर्न यूरोप एंड दि बालकंस.'' *आइएमएफ वर्किंग पेपर,* डब्ल्यूपी/03/213।

कल, रॉबर्ट, ई. लान्स डेविस, आर.नाओमी लामोरियॉक्स तथा जीन-लॉरेंट रॉसेन्थाल, 2005. ''हिस्टॉरिकल फाइनैंसिंग ऑफ स्मॉल एंड मीडियम-साइज्ड एन्टरप्राइजेज़.'' *एनबीईआर वर्किंग पेपर सिरीज.* अक्तूबर।

यूरोपियन कमीशन. 2003.''एसएमईज़ ऐक्सेस टू फाइनैंस'' ऑब्जरवेटरी ऑफ यूरोपियन कमीशन सं. 2।

——. 2005. ''एसएमई ऐक्सेस टू फाइनैंस.'' *फ्लैश बैरोमीटर सं.*174, अक्तूबर।

फूड एंड ऐग्रिकल्चर ऑर्गनाइजेशन.1998 ''ऐग्रिकल्चरल फाइनैंस रिविजिटेड : व्हाइ?'' ऐग्रिकल्चरल फाइनैंस रिविजिटेड, सं.1, फूड एंड ऐग्रिकल्चर ऑर्गनाइजेशन ऑफ दि यूनाइटेड नेशन्स. जून।

गौलिक, सोनिया. 2007 ''पब्लिक-प्राइवेट पार्टनरशिप्स : ए फाइनैंशियर्स परस्पेक्टिव.'' यूनाइटेड नेशन्स इकोनॉमिक एंड सोशल कमीशन फॉर एशिया एंड दि पैसिफिक (यूएनईएससीएपी). यूएनओ।

घोष, बी., तथा पी.डे. 2004 ''हाऊ डू डिफरेंट कैटिगरीज ऑफ इन्फ्रास्ट्रक्चर अफेक्ट डेवलपमेंट? एविडेंस फ्रॉम इंडियन स्टेट्स.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* अक्तूबर 16, 4645-4657।

घोष, सैबल, डी.एम.नाचणे तथा पार्थ रे. 2004 ''बिहेवियर ऑफ बैंक कैपिटल : इश्यूज एंड एविडेन्स फ्रॉम इंडिया.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली.* मार्च।

घोष, स्वाती आर., तथा अतिष आर. घोष. 1999. ''ईस्ट एशिया इन दि आफ्टरमाथः वॉज देयर ए क्रंच ?'' *आइएमएफ वर्किंग पेपर,* डब्ल्यूपी/99/38।

गोलेत, रमेश. 2007. ''करेंट इश्यूज इन ऐग्रिकल्चरल क्रेडिट इन इंडिया : ऐन असेसमेंट'' *रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया ऑकेजनल पेपर्स,* 28(1), समर।

गोपीनाथ, एस. 2005 ''खुदरा बैंकिंग : अवसर तथा चुनौतियां.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन,* जून।

भारत सरकार. 2007 *ए. दि रिपोर्ट ऑफ दि कमिटी ऑन इनफ्रास्ट्रक्चर फाइनैंसिंग,* (अध्यक्ष : श्री दीपक पारेख), भारत सरकार. मई।

——.2007 बी. *रिपोर्ट ऑफ दि एक्सपर्ट ग्रुप ऑन ऐग्रिकल्चरल इन्डेटेडनेस* (अध्यक्ष : श्री आर. राधाकृष्ण) भारत सरकार, जुलाई।

हरनान्डेज, लिओनार्डो तथा ऑस्कर लांडेरेचे. 2002. ''कैपिटल इनफ्लोज, क्रेडिट बूम एंड मैक्रोइकोनॉमिक वल्नरेबिलिटी : दि क्रास-कंट्री एक्सपीरिएन्स.'' हरनान्डेज एंड शिमड्ट-हेब्बेल(सं.), *बैंकिंग, फाइनैंशियल इंटीग्रेशन एंड इंटरनेशनल क्राइसेस.* सेन्ट्रल बैंक ऑफ चिली, 199-233।

हर्टल, बी.जे. तथा के.जे. स्टिरोह. 2007 ''दि रिटर्न टू रिटेल एंड दि परफार्मेन्स ऑफ यूएस बैंक्स'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 31(4):1101-1133।

हॉलिंगर, एफ. 2004.''ऐग्रिकल्चरल लेंडिंग प्रैक्टिसेज : मेथडोलॉजीज एंड प्रोग्राम्स फाइनैंसिंग टर्म इनवेस्टमेंट्स इन ऐग्रिकल्चर : ए रिव्यू ऑफ इंटरनेशनल एक्सपीरिएन्सेज.'' फूड एंड ऐग्रिकल्चर ऑर्गनाइजेशन ऑफ दि यूनाइटेड नेशन्स।

कीन्स, जे.एम.1930. *ट्रीटीज ऑन मनी* ।

लॉइड, डब्ल्यू. मिंट्स.1945. *ए हिस्ट्री ऑफ बैंकिंग थिअरी,* शिकागो : यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 27-29।

मिएड, जे.एस. 1934. ''दि अमाउंट ऑफ मनी एंड दि बैंकिंग सिस्टम.'' रिपोर्ट., *रीडिंग्ज इन मॉनिटरी थिअरी* सं. फ्रेडरिच ए. लुट्ज तथा लॉइड डब्ल्यू. मिंट्स, 77-83 लंदन 1951. इकोनॉमिक जर्नल, सं.44।

मेयेर, रिचर्ड एल. तथा गीता नागराजन. 2000 ''स्टडी ऑफ रूरल एशिया : वॉल्यूम 3 : *रूरल फाइनैंशियल मार्केट्स इन एशिया : पॉलिसीज पैराडाइम्स एंड परफॉर्मेन्स.* ''एशियन डेवलपमेंट बैंक, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस फॉर एडीबी।

मोहन, राकेश. 1996 ''पॉलिसी इंपरेटिव्ज फॉर ग्रोथ एंड वेलफेयर.'' *दि इंडिया इन्फ्रास्ट्रक्चर रिपोर्ट,* खंड 2. भारत सरकार के लिए एनसीएईआर।

——. 2003. ''भारतीय बैंकिंग का रूप परिवर्तन : बेहतर कल की खोज में.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन,* जनवरी।

——. 2004. ''औद्योगिक वृद्धि के लिए वित्त.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन,* मार्च।

——. 2005. ''वैश्विक वातावरण में भारतीय अर्थव्यवस्था'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन,* अक्तूबर।

——. 2006. ''भारत में कृषि ऋण : स्थिति, समस्याएं तथा भविष्य के कार्यक्रम''। *इकोनॉमिक एंड पालिटिकल वीकली.* मार्च।

——. 2008.''नवोन्मेष तथा वृद्धि : वित्तीय क्षेत्र की भूमिका'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन.* अप्रैल।

मोहंती, एम.एस., गेर्ट श्नाबेल तथा पबलो गार्सिया-लूना. 2006. ''बैंक तथा सकल ऋणः नया क्या है?'' *बीआइएस पेपर्स* सं. 28।

मोंटिएल, पीटर जे. 2000. ''व्हॉट ड्राइव्ज़ कंजम्पशन बूम्स?'' *वर्ल्ड बैंक इकोनॉमिक रिव्यू* , 14(3) : 457-80. सितंबर।

मॉरिस, सेबास्टियन. 2001 ''इश्यूज इन इन्फ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट टुडे : दि इंटरलिंकेजेज़.'' अध्याय 2, *इंडिया इन्फ्रास्ट्रक्चर रिपोर्ट,* 3आइ नेटवर्क।

मॉल्टन, एच.जी. 1918. ''कमर्शियल बैंकिंग कैपिटल फॉर्मेशन.'' *जर्नल ऑफ पॉलिटिकल इकोनॉमी,* 26(7)।

नाचणे, डी.एम., आदित्य नारायण, सैबल घोष, तथा एस.साहू. 2001 ''बैंक रेस्पॉन्स टू कैपिटल रिक्वायरमेंट्स : थिअरी एंड इंडियन एविडेन्स.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* 329-35।

राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक. 2007. ''ग्रामीण मूलभूत संरचना विकास निधि.'' http://www.nabard.org/ridf/genesisofridf.asp

नेशनल कमीशन फॉर दि एन्टरप्राइजेज़ इन दि अनऑर्गनाइज्ड सेक्टर.2007. फाइनैंसिंग ऑफ एन्टरप्राइजेज़ इन दि अनऑर्गनाइज्ड सेक्टर एंड क्रिएशन ऑफ ए नेशनल फंड फॉर दि अनऑर्गनाइज्ड सेक्टर (एनएयूएफएस) (अध्यक्ष : अर्जुन के. सेनगुप्ता)।

पासमोर, डब्ल्यू तथा एस. शारपे. 1994 ''ऑप्टिमल बैंक पोर्टफोलियोज एंड दि क्रेडिट क्रंच.'' *फाइनैंस एंड इकोनॉमिक्स डिस्कशन सिरीज़,* 94-19, फेडरल रिज़र्व बोर्ड ऑफ गवर्नर्स।

पेसेक, बी.पी. तथा टी.आर. सेविंग. 1967. मनी, *वेल्थ एंड इकोनॉमिक थिअरी,* न्यूयॉर्क : मैकमिलन।

प्रोचनाऊ, हरबर्ट वी. 1949. *टर्म लोन एंड थिअरीज ऑफ बैंक लिक्विडिटी.* न्यूयॉर्क : प्रेंटिस हॉल।

राजन, रघुराम, तथा लुइगी जिंगेल्स. 1998. ''फाइनैंशियल डिपेंडेन्स एंड ग्रोथ.'' *अमरीकन इकोनॉमिक रिव्यू,* 88(3): 559-86।

राव, के.एस. रामचंद्र, अभिमान दास, तथा अरविंद कुमार सिंह. 2006. ''कमर्शियल बैंक लेंडिंग टू स्मॉल स्केल इंडस्ट्री.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली.* मार्च।

रेड्डी, वाइ.वी. 2005. ''भारत में बैंकिंग क्षेत्र के सुधार : विहगावलोकन.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन.* जून।

——. 2006. ''भारतीय वित्तीय क्षेत्र के सुधार : बदलते आयाम एवं उभरते मुद्दे''. *भा.रि.बैंक बुलेटिन.* जून।

भारतीय रिज़र्व बैंक. 2004. *बैंकिंग प्रणाली से कृषि तथा संबंधित कार्यकलापों के लिए ऋण प्रवाह पर गठित सलाहकार समिति की रिपोर्ट.* जून।

——. 2005. *रिपोर्ट ऑफ दि इंटरनल ग्रुप टू रिव्यू गाइडलाइन्स ऑन क्रेडिट फ्लो टू एसएमई सेक्टर* (अध्यक्ष : श्री. सी.एस. मूर्ति)।

——. 2007ए. ''वित्तीय बाजारों का विकास तथा केंद्रीय बैंक की भूमिका.'' *मुद्रा तथा वित्त पर रिपोर्ट।*

——. 2007 बी. *भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति तथा प्रगति संबंधी रिपोर्ट।*

रॉस्किस, एन. इमैन्यूएल. 1997. *कमर्शियल बैंकिंग इन ऐन एरा ऑफ डिरेग्युलेशन,* प्राएगेर, पब्लिकेशन वेस्टपोर्ट. कनेक्टिकट।

सेन, सुनंदा, सौम्या कांति घोष. 2005. ''बासेल नॉर्म्स, इंडियन बैंकिंग सेक्टर एंड इम्पैक्ट ऑन क्रेडिट टू एसएमई एंड दि पुअर'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* मार्च।

ठाकोर, अंजन वी. 1996. '' कैपिटल रिक्वायरमेंट्स, मॉनिटरी पॉलिसी एंड एग्रीगेट बैंक लेंडिंग : थिअरी एंड एंपायरिकल एविडेन्स.'' *दि जर्नल ऑफ फाइनैंस,* 51 : 279-324।

थॉमस, रोलिन जी. 1937. *मॉडर्न बैंकिंग,* न्यूयॉर्क : प्रेस्टिज हॉल 161-169।

टिमोथी, सी.डी. आस्ट्रिड, एच. बेवेर्ली, के.जे. स्टिरोह, तथा आर. विलियम्स. 2007 ''दि रोल ऑफ रिटेल बैंकिंग इन दि यू. एस. बैंकिंग इंडस्ट्री : रिस्क, रिटर्न एंड इंडस्ट्री स्ट्रक्चर.'' *एफआरबीएनवाइ इकोनॉमिक पॉलिसी रिव्यू,* दिसंबर।

वॉल, एल.डी.तथा डेविड आर. पीटरसन.1995. ''बैंक होल्डिंग कंपनी कैपिटल टारगेट्स इन दि अर्ली 1990ज़ : दि रेग्युलेशन्स वेनसस दि मार्केट्स'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस* 19 : 563- 574।

यारोन, जेकब. 1992. ''रूरल फाइनैंस इन डेवलपिंग कंट्रीज.'' *वर्ल्ड बैंक पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर,* ऐग्रिकल्चरल पॉलिसीज डिविजन, ऐग्रिकल्चर एंड रूरल डेवलपमेंट डिपार्टमेंट, वर्ल्ड बैंक, मार्च।

वर्ल्ड बैंक 2008. फाइनैंस फॉर ऑल ? पॉलिसीज एंड पिटफॉल्स इन एक्स्पैंडिंग ऐक्सेस. *ए वर्ल्ड बैंक पॉलिसी रिसर्च रिपोर्ट।*

**VII. वित्तीय समावेशन**


अग्रवाल, गौरव. 2007 ''फिनैंशियल इन्क्लूजन थ्रू मोबाइल फोन बैंकिंग : इश्यूज एंड चैलेंजेज.'' *सीएबी कॉलिंग,* जुलाई-सितंबर, 2007।

एपीएमएएस तथा ईडीए रूरल सिस्टम्स. 2006. ''सेल्फ-हेल्प ग्रुप्स इन इंडियाः ए स्टडी ऑफ दि लाइट्स एंड शेड्स.'' आंध्रप्रदेश *महिला अभिवृद्धि* सोसाइटी (एपीएमएएस) तथा ईडीए रूरल सिस्टम्स प्राइवेट लिमि. द्वारा किया गया अध्ययन. www.apmas.org.

आर्यावर्त ग्रामीण बैंक, http://aryavart-rrb.com.

एशियन डेवलपमेंट बैंक. 2000. *फाइनैंस फॉर दि पूअर : माइक्रो-फाइनैंस डेवलपमेंट स्ट्रैटेजी।*

——. 2007 ''लो इनकम हाउसहोल्ड्स ऐक्सेस टू फिनैंशियल सर्विसेज - इंटरनेशनल एक्सपीरिएन्स, मेज़र्स फॉर इम्प्रूवमेंट, एंड दि फ्यूचर.'' *ईएआरडी स्पेशल स्टडीज,* अक्तूबर।

बैंक ऑफ स्कॉटलैंड. 2007. *डिलिवरिंग अवर फिनैंशियल इन्क्लूजन अजेंडा इन स्कॉटलैंड.* मार्च।

ब्रिजमैन, जे. एस. 1999. *वल्नरेबल कंज्यूमर्स एंड फिनैंशियल सर्विसेज.* दि रिपोर्ट ऑफ दि डाइरेक्टर जनरलस इन्क्वायरी, ऑफिस ऑफ फेअर ट्रेडिंग, जनवरी।

सीएबी. 2007. *रिपोर्ट ऑन कॉस्ट्स एंड मार्जिन्स ऑफ माइक्रो फाइनैंस इन्स्टिट्यूशन्स.* कृषि बैंकिंग महाविद्यालय. भारतीय रिजर्व बैंक।

चांट लिंक एंड एसोसिएट्स. 2004. *ए रिपोर्ट ऑन फिनैंशियल एक्सक्लूजन इन ऑस्ट्रेलिया.* नवंबर।

कोन्नोल्ली, सी. तथा के. हजाज. 2001. ''फिनैंशियल सर्विसेज एंड सोशल एक्सक्लूजन.'' फिनैंशियल सर्विसेज कंज्यूमर पॉलिसी सेंटर, यूनिवर्सिटी ऑफ न्यू साउथ वेल्स।

क्रिएडो, जे. तथा आर. कोशी. 2008 ''क्रिएटिंग लीडर्स ऐट दि बॉटम ऑफ दि पिरामिड.'' माइक्रोफाइनैंस इनसाइट्स, मार्च।

फोर्ड, जे. तथा के. राउलिंगसन. 1996 ''लो-इनकम हाउसहोल्ड्स एंड क्रेडिट : एक्सक्लूजन, प्रिफरेन्स एंड इनक्लूजन.'' *एनवायरनमेंट एंड प्लानिंग,* 28:1345-60।

भारत सरकार.2007. *रिपोर्ट ऑफ दि वर्किंग ग्रुप ऑन कॉम्पिटिटिव माइक्रो-क्रेडिट मार्केट इन इंडिया.* ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग।

——. सूचना पुस्तिका. डाक विभाग।

——. केंद्रीय बिजली प्राधिकरण. www.cea.nic.in.

——. सड़क परिवहन और राजमार्ग विभाग. www.morth.nic.in.

——. एनएसएसओ, सर्वेक्षण के विभिन्न दौर।

——. 2008 ''चैलेंजेज़, पॉलिसी रिफार्म्स एंड मीडियम टर्म प्रॉस्पेक्ट्स'' *आर्थिक सर्वेक्षण* 2007-08, अध्याय 2।

——. 2008. *भारत में वित्तीय समावेशन संबंधी समिति की रिपोर्ट* (अध्यक्ष डॉ. सी. रंगराजन). जनवरी.

ग्रामीण बैंक. www.grameen-info.org.

एच.एम.ट्रेजरी,2004. *प्रोमोटिंग फिनैंशियल इन्क्लूजन.* एचएमएसओ.सेंट क्लेमेन्ट्स हाउस, 2-16 कोलगेट, नॉरविच, दिसंबर।

——. 2006. *फिनैंशियल इनक्लूजनः क्रेडिट, सेविंग्ज, एडवाइस एंड इन्शुरेन्स.* ट्वेल्थ रिपोर्ट ऑफ सेशन 2005-06, खंड I. हाउस ऑफ कॉमन्स ट्रेजरी कमिटी, यूके।

——. 2007. *फिनैंशियल इनक्जूजन : दि वे फॉरवर्ड.* एच.एम.ट्रेजरी. लंदन, मार्च।

आइआइएमएस. 2007. *इनवेस्ट इंडिया इनकम्स एंड सेविंग्ज सर्वे.* इनवेस्ट इंडिया मार्केट सोल्यूशन्स (आइआइएमएस डेटावर्क्स). www.iimsdataworks.com.

आइआरडीए.2008. ''गेटिंग बेटर एंड बेटर.'' *आइआरडीए जर्नल.* इन्शुरेन्स रेग्युलेटरी एंड डेवलपमेंट अथॉरिटी, जनवरी. www.irdaindia.org.

इंडियन बैंक. www.indianbank.in.

कामथ, राघव 2007. ''ब्रांचलेस बैंकिंग : कार्प बैंक्स ऐन्सर फॉर फिनैंशियल इनक्लूजन'' *सीएबी कॉलिंग,* जुलाई-सितंबर, खंड 31, सं.3।

केम्पसन, ई.2006. ''पॉलिसी लेवेल रेस्पॉन्स टू फिनैंशियल एक्सक्लूजन इन डेवलप्ड इकोनॉमीज : लेसन्स फॉर डेवलपिंग कंट्रीज.'' पेपर फॉर ऐक्सेस टू फाइनैंस : बिल्डिंग इनक्लूजिव फाइनैंशियल सिस्टम्स, मई 30-31, विश्व बैंक, वाशिंगटन, डीसी।

केम्पसन, ई.तथा सी.व्हाइले.1978. *ऐक्सेस टू करेंट अकाउंट्स.* लंदन : ब्रिटिश बैंकर्स असोसिएशन।

——. 1999. *केप्ट आउट ऑर ऑप्टेड आउट?* ब्रिस्टोल:पॉलिसी प्रेस।

——. 2000. *इन ऑर आउट? फिनैंशियल एक्सक्लूजन : ए लिटरेचर एंड रिसर्च रिव्यू.* फाइनैंशियल सर्विसेज अथॉरिटी, लंदन।

केम्पसन ई, ए. अटकिन्सन तथा ओ. पिल्ले. 2004. ''पॉलिसी लेवेल रेस्पॉन्स टू फिनैंशियल एक्सक्लूजन इन डेवलप्ड इकोनॉमीज : लेसन्स फॉर डेवलपिंग कंट्रीज.'' यूनिवर्सिटी ऑफ ब्रिस्टाल।

लीलाधर, वी.2006. ''आम आदमी तक बैंकिंग सेवाएं पहुंचाना - वित्तीय समावेशन.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन,* जनवरी।

लेशोन, ए. तथा एन.थ्रिफ्ट. 1993. ''दि रिस्ट्रक्चरिंग ऑफ दि यूके फिनैंशियल सर्विसेज इंडस्ट्री इन दि 1990ज : ए रिवर्सल ऑफ फॉरच्यून?'' *जर्नल ऑफ रूरल स्टडीज,* 9 : 223-41।

——. 1995. ''जिओग्रैफीज ऑफ फिनैंशियल एक्सक्लूजनः फिनैंशियल अबंडनमेंट इन ब्रिटेन एंड दि यूनाइटेड स्टेट्स.'' *ट्रान्जैक्शन्स ऑफ दि इन्स्टिट्यूट ऑफ ब्रिटिश जिओग्रैफर्स,* न्यू सिरीज, 20: 312-41।

मीडोज, पी.,पी. आर्मेरोड तथा डब्ल्यू.कुक. 2004. ''सोशल नेटवर्क्स : देअर रोल इन ऐक्सेस टू फिनैंशियल सर्विसेज इन ब्रिटेन.'' *नेशनल इन्स्टिट्यूट इकोनॉमिक रिव्यू* (189): 99-109।

मोहन, राकेश. 2006. ''आर्थिक वृद्धि, वित्तीय गहनता तथा वित्तीय समावेशन.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन,* नवंबर।

एनएएफएससीओबी *परफॉर्मैंस ऑफ प्राइमरी ऐग्रिकल्चरल क्रेडिट सोसाइटीज.* विभिन्न अंक।

एनसीएईआर. 2008. *''हाऊ इंडिया अर्न्स, स्पेंड्स, एंड सेव्ज.''* रिजल्ट्स फ्रॉम दि मैक्स न्यू यॉर्क लाइफ - एनसीएईआर इंडिया फिनैंशियल प्रोटेक्शन सर्वे. www.ncaer.org.

एनएचबी. 2006. *रिपोर्ट ऑन ट्रेन्ड एंड प्रोग्रेस ऑन हाउसिंग इन इंडिया* 2005. नेशनल हाउसिंग बैंक, नवंबर।

एनएसएसओ. *ऑल इंडिया डेट एंड इनवेस्टमेंट सर्वे (एआइडीआइएस).* विभिन्न अंक।

पुहाझेंडी, वी. तथा के.जे.एस. सत्यसाइ. 2000. ''माइक्रोफाइनैंस फॉर रूरल पीपलः ऐन इम्पैक्ट इवैल्यूएशन.'' नाबार्ड।

पुहाझेंडी, वी. तथा के.सी. बडत्या. 2002. ''एसएचजी-बैंक लिंकेज प्रोग्राम फॉर रूरल पूअर - ऐन इम्पैक्ट असेसमेंट.'' www.microfinancegateway.org.

राजन, एम.एस.एस. 2007. ''रेप्लीकेशन ऑफ फिनैंशियल इनक्लूजनः अपॉरच्युनिटीज एंड चैलेंजेज - इंडियन बैंक एक्सपीरिएन्स.'' *सीएबी कॉलिंग,* जुलाई-सितंबर, खंड 31, सं.3।

राव, एम.बी.एन. 2007. ''सस्टेनेबल इनक्लूजन - कॉस्ट ऑफ इनक्लूजन'' स्कोच फिनैंशियल टेक्नॉलॉजीज सम्मिट।

रेड्डी, वाइ.वी. 2007. ''वृद्धि और रोजगार के लिए वित्तीय क्षेत्र की नीतियां.'' भारतीय *रिज़र्व बैंक बुलेटिन,* दिसंबर।

भारतीय रिज़र्व बैंक. *भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की मूलभूत सांख्यिकीय विवरणियां.* विभिन्न अंक।

——. भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति संबंधी रिपोर्ट. विभिन्न अंक।

——. *छोटे उधारकर्ता खातों का सर्वेक्षण, भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन,* विभिन्न अंक।

——. 2007. *भारतीय अर्थव्यवस्था पर सांख्यिकीय पुस्तिका 2006-07।*

——. 2007. *रिपोर्ट फॉर दि टेक्निकल ग्रुप टू रिव्यू लेजिस्लेशन्स ऑन मनी लेंडिंग।*

रॉगली, बी.,टी. फिशर तथा ई.मायो. 1999. *पॉवर्टी, सोशल एक्सक्लूजन एंड माइक्रोफाइनैंस इन ब्रिटेन.* लंदनः ओक्सफाम जीबी।

सिनक्लेअर, स्टीफन, पी.2001.''फिनैंशियल एक्सक्लूजन : ऐन इंट्रोडक्टरी सर्वे''. सेंटर फॉर रिसर्च इनटू सोशली इनक्लूजिव सर्विसेज (सीआरएसआइएस) एडिनबर्ग कॉलेज ऑफ आर्ट, हेरिअट वॉट यूनिवर्सिटी।

स्पीक, एस. तथा एस. ग्राहम. 1999. ''सर्विसेज नॉट इनक्लूडेडः प्राइवेट सर्विसेज रिस्ट्रक्चरिंग, नेबरहुड्स एंड सोशल मार्जिनलाइजेशन.'' *एनवायरनमेंट एंड प्लानिंग*, ए-31।

टंखा, ए.2002. ''सेल्फ-हेल्प ग्रुप्स ऐज फिनैंशियल इंटरमीडियरीज इन इंडिया : कॉस्ट ऑफ प्रोमोशन, सस्टेनेबिलिटी एंड इंम्पैक्ट.'' ए स्टडी प्रिपेअर्ड फॉर आइसीसीओ एंड कोरडेड, दि नीदरलैंड्स. www.microfinancegateway.org.

थोरात, उषा 2006ए. ''वित्तीय समावेशन तथा सहस्राब्दी विकास लक्ष्य.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन*, फरवरी।

——. 2006बी. ''निरंतर विकास के लिए वित्तीय समावेशन : सूचना प्रौद्योगिकी तथा मध्यस्थों की भूमिका.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन*, दिसंबर।

——. 2008. ''समावेशी वृद्धि - उभरती अर्थव्यवस्थाओं में बैंकों की भूमिका'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन*, मार्च।

यूनाइटेड नेशन्स. 2006 ए. एडवाइजर्स ग्रुप ऑन इनक्लूजिव फिनैंशियल सेक्टर्स, यूनाइटेड नेशन्स. www.uncdf.org.

——. 2006 बी. *बिल्डिंग इनक्लूजिव फिनैंशियल सेक्टर्स फॉर डेवलपमेंट*, न्यूयॉर्क.

वॉलेस, जेम्स ई. 1995.''फाइनैंसिंग अफोर्डेबल हाउसिंग इन दि यूनाइटेड स्टेट्स.'' *हाउसिंग पॉलिसी डिबेट*, 6(4):785-814।

वर्ल्ड बैंक. 2008. *फाइनैंस फॉर ऑल - पॉलिसी एंड पिटफॉल्स इन एक्सपैंडिंग ऐक्सेस.* दि वर्ल्ड बैंक, वॉशिंगटन डी. सी.

### VIII. प्रतियोगिता एवं समेकन

अग्विरे, ई. तथा नॉर्टन, जे.जे. 2000. ''रिफॉर्म ऑफ लैटिन अमेरिकन बैंकिंग सिस्टम्स : नेशनल एंड इंटरनेशनल परस्पेक्टिव्ज.'' क्लुवेर लॉ इंटरनेशनल, लंदन, इंग्लैंड।

अलेन, एल. तथा राय ए. 1996. ''ऑपरेशनल एफिशिएन्सी इन बैंकिंग : ऐन इंटरनेशनल कंपेरिज़न.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस*, खंड. 20:655-72।

ऐन्ड्रयूज, माइकेल ए. 2005. ''स्टेट-ओन्ड बैंक्स, स्टेबिलिटी, प्राइवेटाइज़ेशन, एंड ग्रोथ : प्रैक्टिकल पॉलिसी डिसिजन्स इन ए वर्ल्ड विदाउट इंपायरिकल प्रूफ''. *आइएमएफ वर्किंग पेपर* डब्ल्यूपी/05/10, इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड।

बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट्स.2001. *रिपोर्ट ऑन कनसॉलिडेशन इन दि फिनैंशियल सेक्टर*, ग्रुप टेन, स्विटज़रलैंड।

——. 2004 ''फॉरेन डाइरेक्ट इनवेस्टमेंट इन दि फिनैंशियल सेक्टर ऑफ इमर्जिंग मार्केट इकोनॉमी'' *सीजीएफएस*, पब्लिकेशन सं.22. मार्च।

——. 2001. ''दि बैंकिंग इंडस्ट्री इन दि इमर्जिंग मार्केट इकोनॉमीज : कॉम्पिटिशन, कनसॉलिडेशन एंड सिस्टेमैटिक स्टेबिलिटी.'' *बीआइएस पेपर्स* नं.4।

बार्थ, जे.आर., जी. कैप्रिओ, तथा आर. लेवाइन. 2000. ''बैंकिंग सिस्टम्स अराउंड दि ग्लोब : डू रेग्युलेशन एंड ओनरशिप अफेक्ट परफार्मेन्स एंड स्टेबिलिटी''? 2325, वर्ल्ड बैंक।

बार्थ, जे.आर., जी. कैप्रिओ जूनियर, तथा आर. लेवाइन. 2001. ''बैंकिंग सिस्टम्स अराउंड दि ग्लोब : डू रेग्युलेशन्स एंड ओनरशिप अफेक्ट परफार्मेन्स एंड स्टेबिलिटी''? *प्रुडेन्शियल सुपरविजन : व्हॉट वर्क्स एंड व्हॉट डज़न्ट* सं. मिश्किन, एफ.एस., 2001. में, यूनि. ऑफ शिकागो प्रेस, 31-88।

बार्थ, जे.आर. कैप्रियो, जूनियर., गेरार्ड तथा नोल्ले, डेनियल ई. 2004 ''कंपेरेटिव इंटरनेशनल कॅरॅक्टरिस्टिक्स ऑफ बैंकिंग.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिसी एनालिसिस वर्किंग पेपर नं.1।*

बर्गर, अलेन, एन. तथा लोरेट्टा जे. मेस्टर. 1997.''इनसाइड दि ब्लैक बॉक्सः व्हॉट एक्सप्लेन्स डिफरन्सेज़ इन दि इफिशिएन्सीज ऑफ फिनैंशियल इन्स्टिट्यूशन्स,'' *सेन्टर फॉर फिनैंशियल इन्स्टिट्यूशन्स वर्किंग पेपर्स 97(04)*, व्हॉर्टन स्कूल सेंटर फॉर फिनैंशियल इन्स्टिट्यूशन्स. यूनिवर्सिटी ऑफ पेन्सिल्वेनिया।

बर्गर, अलेन एन. तथा हंम्फ्रे, डेविड बी. 1997. ''इफिशिएन्सी ऑफ फिनैंशियल इन्स्टिट्यूशन्स : इंटरनेशनल सर्वे एंड डाइरेक्शन्स फॉर फ्यूचर रिसर्च.'' *यूरोपियन जर्नल ऑफ ऑपरेशनल रिसर्च,* एल्सेवियर, खंड 98, सं.2 : 175-212।

बर्गर, ॲलेन, एन. तथा टिमोथी एच. हन्नान. 1998 ''दि इफिशिएन्सी कॉस्ट ऑफ मार्केट पॉवर इन दि बैंकिंग इंडस्ट्री : ए टेस्ट ऑफ दि ''क्वॉयट लाइफ'' एंड रिलेटेड हाइपोथेसेस.'' दि रिव्यू ऑफ इकोनॉमिक्स एंड स्टैटिस्टिक्स, खंड 80ए सं. 3 : 454-465।

बर्गर, ॲलेन एन., रेबेका एस. डेमसेट्ज तथा फिलिप ई. स्ट्राहन. 1999. ''दि कंसोलिडेशन ऑफ दि फिनैंशियल सर्विसेज इंडस्ट्री : कॉजेज, कॉनसिक्वेन्सेज, एंड इंप्लीकेशन्स फॉर दि फ्यूचर.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* खंड 23 : 135-194।

बिक्केर, जैकब ए., तथा हाफ कथारिना. 2002. ''कॉम्पिटिशन, कॉन्सेनट्रेशन एंड देअर रिलेशनशिप : ऐन एंपिरिकल अनालिसिस ऑफ दि बैंकिंग इंडस्ट्री.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस.* खंड 26 : 2191-2214।

बिकेर, जैकब ए. 2004. ''कॉम्पिटिशन एंड इफिशिएंसी इन ए यूनिफाइड यूरोपियन बैंकिंग मार्केट.'' एडवर्ड एल्गार पब्लिशिंग।

कार्डेनस, जे., जे.पी.ग्राफ, तथा पी.ओ. डॉघर्टी. 2003. ''फॉरेन बैंक एन्ट्री इन इमर्जिंग मार्केट इकोनॉमीज : ए होस्ट कंट्री परस्पेक्टिव.'' *सीजीएफएस वर्किंग ग्रुप ऑन एफडीआइ इन दि फिनैंशियल सेक्टर।*

कासू, बार्बरा., तथा क्लाडिया गिरार्डन.2007.''डज़ कॉम्पिटिशन लीड टू इफिशिएंसी? दि केस ऑफ ईयू कमर्शियल बैंक्स.'' *यूनिवर्सिटी ऑफ एसेक्स डिस्कशन पेपर* नं.07-0, यूनिवर्सिटी ऑफ एसेक्स।

क्लेसेन्स, स्टिज्न तथा लेवेन, लुक.2003.''व्हॉट ड्राइव्ज़ बैंक कॉम्पिटिशन? सम इंटरनेशनल एविडेन्स.'' *पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर सिरीज* 3113, वर्ल्ड बैंक।

डेलोइट्टे. 2005. *दि चैंजिंग बैंकिंग लैंडस्केप इन एशिया पैसिफिक : ए रिपोर्ट ऑन बैंक कनसॉलिडेशन.* डेलोइट्टे टच टोहमत्सु।

डोमान्स्की, डी.2005. ''फॉरेन बैंक्स इन इमर्जिंग मार्केट इकोनॉमीज : चैंजिंग प्लेयर्स. चैंजिंग इश्यूज.'' *बीआइएस तिमाही समीक्षा।*

एडवर्ड्स, जे. तथा फिशर, के. 1994. ''बैंक, फाइनैंस, एंड इनवेस्टमेंट इन जर्मनी.'' कैंब्रिज : कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

इग्ली, डी.तथा बी. रिमे.1999. ''दि यूबीएस-एसबीसी मर्जर एंड कॉम्पिटिशन इन दि स्विस रिटेल बैंकिंग सेक्टर.'' *स्टडिएनजेंट्रम गेरझेन्सी वर्किंग पेपर* नं.00/02. दिसंबर।

इसेनबिस, आर.ए. तथा कौफमैन, जी.2005.''बैंक क्राइसेस रिजोल्यूशन एंड फॉरेन ओन्ड बैंक्स.'' *इकोनॉमिक रिव्यू,* खंड.90 सं.4. फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ अटलांटा।

इचेनग्रीन, बैरी, तथा माइकेल मूस्सा. 1998.''कैपिटल अकाउंट लिबरलाइजेशन- थिअरॉटिकल एंड प्रैक्टिकल आस्पेक्ट्स.''*आइएमएफ ऑकेजनल पेपर* नं.172. इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड, वॉशिंगटन।

इचेनग्रीन, बैरी तथा माइकेल मूस्सा. 1998. ''कैपिटल अकाउंट लिबरलाइजेशन एंड दि आइएमएफ.'' *फाइनैंस एंड डेवेलपमेंट,* खंड 35, सं.4।

यूरोपियन सेन्ट्रल बैंक.2005. ''बैंकिंग स्ट्रक्चर्स इन दि न्यू ईयू मेंबर स्टेट्स.'' फ्रैंकफर्ट. जनवरी।

फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ सैन फ्रान्सिस्को. 2004. ''बैंकिंग कनसॉलिडेशन'' *एफआरबीएसएफ इकोनॉमिक लेटर,* सं.2004-15।

गैस्टॉन, आर.गेलोस तथा जॉर्ज रोल्डोस.2002. ''कनसॉलिडेशन एंड मार्केट स्ट्रक्चर इन इमर्जिंग मार्केट बैंकिंग सिस्टम्स.'' *आइएमएफ वर्किंग पेपर सं.02/186.* इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड।

जॉर्ज, क्लार्क तथा अन्य, 2002 ''दि इफेक्ट्स ऑफ फॉरेन एन्ट्री ऑन अर्जेंटिनाज डोमेस्टिक बैंकिंग सेक्टर''. वर्ल्ड बैंक, वॉशिंगटन।

गेरश्चेनक्रोन, तथा ए. गेरश्चेनक्रोन. 1962.''इकोनॉमिक बैकवर्डनेस इन हिस्टोरिकल परस्पेक्टिव : ए बुक ऑफ एसेज.'' कैंब्रिज : हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

गोल्डबर्ग, एल.एस., क्रिस्टल, जे तथा डागेज, बी. जी. 2002. ''हैज फॉरेन बैंक एन्ट्री लेड टू साउंडर बैंक्स इन लैटिन अमेरिका?'' *करेंट इश्यूज इन इकोनॉमिक्स एंड फाइनैंस,* खंड.8 सं.1।

गौरले, अड्रियन, रविशंकर गीता तथा वेमन-जोन्स टॉम.2006 ''नॉन-पैरामेट्रिक अनालेसिस ऑफ इफिशिएन्सी गेन्स फ्रॉम बैंक मर्जर्स इन इंडिया.'' *डिस्कशन पेपर सिरीज,* डब्ल्यूपी-17. लोबरो यूनिवर्सिटी. यूके।

भारत सरकार. 1998, *बैंकिंग क्षेत्र सुधार पर समिति* (अध्यक्ष : एम. नरसिंहम)।

गुटिरेज़, दि रोजस, लूइस. 2007. ''टेस्टिंग फॉर कॉम्पिटिशन इन दि स्पैनिश बैंकिंग इंडस्ट्री : दि पेनज़र-रोस्से अप्रोच रिविजिटेड.'' *बान्को दि इस्पाना रिसर्च पेपर* सं.डब्ल्यूपी-0726. अगस्त।

हल्पेरिन, एम. तथा बेल, एस.जे.1992.''रिसर्च गाइड टू कारपोरेट अक्विजिशन्स, मर्जर्स, एंड अदर रिस्ट्रक्चरिंग.'' न्यूयॉर्क : ग्रीनवुड प्रेस।

हन्नान, टिमोथी एच. 1997. ''मार्केट शेअर इनइक्वलिटी, दि नंबर ऑफ कॉम्पिटिटर्स, एंड दि एचएचआइ.'' *रिव्यू ऑफ इंडस्ट्रियल ऑर्गनाइजेशन,* खंड.12 : 23-35।

हॉकिन्स, जॉन तथा डुब्रावको मिहाल्जेक.2001. ''दि बैंकिंग इंडस्ट्री इन दि इमर्जिंग मार्केट इकोनॉमीज : कॉम्पिटिशन, कनसोलिडेशन एंड सिस्टेमिक स्टेबिलिटी - ऐन ओवरव्यू.'' *बीआइएस पेपर्स* सं.4।

होनोहन, पैट्रिक तथा क्लिंगेबिएल, डनिएला, 2000. ''कंट्रोलिंग दि फिस्कल कॉस्ट्स ऑफ बैंकिंग क्राइसेस.'' *पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर सिरीज 2441.* दि वर्ल्ड बैंक।

हुआंग, एक्स., तथा अन्य. 2008 ''असेसिंग दि इम्पैक्ट ऑफ फॉरेन बैंक्स एन्ट्री इन टू चाइनाज बैंकिंग.'' *चाइना इनसाइट्स टुडे,* खंड 1, सं.1।

हुइजिंगा, एच.पी., जे.एच.एम.नेलिसन तथा आर. वंडेर वेन्नेत.2001. ''इफिशिएन्सी इफेक्ट्स ऑफ बैंक मर्जर्स एंड अक्विजिशन्स इन यूरोप.'' *डिस्कशन पेपर नं.088/03.* टिंबर्जन इन्स्टिट्यूट, एम्सटरडम।

इग्नासियो, फ्यून्टेस तथा सास्ट्रे टेरेसा. 1998. ''इम्प्लीकेशन्स ऑफ रिस्ट्रक्चरिंग इन दि बैंकिंग इंडस्ट्री : दि केस ऑफ स्पेन.'' *बीआइएम कान्फरेन्स पेपर्स,* 7 : 98-120।

भारतीय बैंक संघ. 2003. *बैंकिंग इंडस्ट्री : विजन 2010 ऑफ दि इंडियन बैंक्स.* रिपोर्ट।

जालान, बिमल. 2002. ''इंडियाज इकोनॉमी इन दि न्यू मिलेनियम : सेलेक्टेड एसेज.'' यूबीएस पब्लिशर्सट डिस्ट्रीब्यूटर्स प्राइ. लिमि.।

जोन्स, केनेथ डी. तथा टिम क्रिचफील्ड.2005. ''कनसोलिडेशन इन दि यू.एस.बैंकिंग इंडस्ट्री : इज दि ञ्लांग, स्ट्रेंज ट्रिपट अबाउट टु एंड?'' *फेडरल डिपॉजिट इन्शूरेन्स कारपोरेशन बैंकिंग रिव्यू,* खंड 17, सं.4।

जोशी, विजय तथा आइ.एम.डी. लिटल. 1996. *इंडियाज इकोनॉमिक रिफॉर्म्स. 1991-2001.* दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

कांग, जुन-कू तथा स्टल्ज़, रेने एम. 2000. ''डू बैंकिंग सॉक्स अफेक्ट बॉरोइंग फर्म परफॉर्मेन्स ? ऐन अनालिसिस ऑफ दि जापानीज इक्सपीरिएन्स.'' *जर्नल ऑफ बिजनेस,* खंड 73 सं.1।

क्रेनर, जे.2000. ''दि सेपरेशन ऑफ बैंकिंग एंड कॉमर्स.'' एफआरबीएसएफ इकोनॉमिक रिव्यू 2000, फेडरल रिजर्व बैंक ऑफ सैनफ्रान्सिस्को : 15-25।

ला पोर्टा, आर., एफ. लोपेज-डि-सिलानेस, तथा ए. श्लेफर. 2002 ''गवर्नमेंट ओनरशिप ऑफ बैंक्स.'' *जर्नल ऑफ फाइनान्स,* खंड 57:265-301।

लहुसेन, रिनहार्ड.2004. ''बैंक परफॉर्मेन्स इन यूरोप : ग्रेट प्रोग्रेस थ्रू कनसोलिडेशन - एक्सेप्ट इन जर्मनी.'' *ईयू मॉनिटर* सं.13, फिनैंशियल मार्केट स्पेशल.ड्यूश बैंक रिसर्च, जून।

लीलाधर, वी. 2008. ''कनसोलिडेशन इन दि इंडियन फिनैंशियल सेक्टर.'' इंडियन मर्चेंट्स चेंबर, मुंबई द्वारा आयोजित इंटरनेशनल बैंकिंग एंड फाइनैंस कॉनफरेन्स 2008 में दिया गया भाषण।

——. 2004. *रिपोर्ट ऑन कनसोलिडेशन इन इंडियन बैंकिंग सिस्टम।*

महेश, एच.पी. तथा मीनाक्षी राजीव. 2006. ''लिबरलाइजेशन एंड प्रोडक्टिव इफिशिएंसी ऑफ इंडियन कामर्शियल बैंक्सः ए स्टकैस्टिक फ्रंटियर अनालिसिस.'' *एमपीआरए पेपर* 827. यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी ऑफ मूनिच. जर्मनी।

मैथिसन, डी.जे. तथा रोल्डोस, जे. 2001. ''दि रोल ऑफ फॉरेन बैंक्स इन इमर्जिंग मार्केट्स.'' तीसरे वार्षिक वित्तीय बाजार तथा विकास सम्मेलन, विश्व बैंक, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, तथा ब्रूकिंग्ज इन्स्टिट्यूशन के लिए तैयार किया गया।

मेग्गिन्सन, विलियम एल. 2005 ''दि इकोनॉमिक्स ऑफ बैंक प्राइवेटाइजेशन.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस*, खंड 29ः 1931-1980.

मिहालजेक, डुब्रावको. 2006. ''प्राइवेटाइजेशन, कनसोलिडेशन एंड दि इनक्रीज्ड रोल ऑफ फॉरेन बैंक्स''. *बीआइएस पेपर* 28. अगस्त।

मोहन राकेश. 2004ए ''वैश्वीकरण : वित्तीय क्षेत्र में संस्था निर्माण की भूमिका : भारतीय मामला.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन*. फरवरी।

——.2004बी. ''भारत के निजी क्षेत्र के बैकों में स्वामित्व तथा अभिशासन.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन*, अक्तूबर।

——. 2006. ''बैंकिंग में सुधार, उत्पादकता और कार्यकुशलताः भारतीय अनुभव'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन*, मार्च।

नित्सुरे, रूपा रेगे. 2008.''बैंकों का समेकन : कुछ विचार'' वित्तीय क्षेत्र सेमिनार सिरीज में आइसीआरआइईआर में 8 अप्रैल का प्रस्तुतीकरण।

नॉर्थकॉट, सी.ए. 2004. ''कॉम्पिटिशन इन बैंकिंग : ए रिव्यू ऑफ दि लिटरेचर.'' *बैंक ऑफ कनाडा वर्किंग पेपर* नं.24।

पनजर, जे. तथा जे. रोस. 1987.''टेस्टिंग फॉर मोनापोली इक्विलिब्रियम.'' *जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल इकोनॉमिक्स*, खंड 35ः 443-56।

पीटरसन, एम.ए तथा आर.जी. राजन. 1995. ''दि इफेक्ट ऑफ क्रेडिट मार्केट कॉम्पिटिशन ऑन लेंडिंग रिलेशनशिप्स.'' *क्वार्टर्ली जर्नल ऑफ इकोनॉमिक्स*, खंड 110ः 407-443।

प्रागेर, तथा हन्नान.1998.''दि रिलैक्सेशन ऑफ एन्ट्री बैरियर्स इन दि बैंकिंग इंडस्ट्री : ऐन एंपायरिकल इनवेस्टिगेशन.'' जर्नल ऑफ फिनैंशियल सर्विसेस रिसर्च, खंड 14,सं.3ः171-188।

प्रागेर, रॉबिन ए. तथा हन्नान, टिमोथी एच. 1998.''डू सबस्टैंशियल हॉरिजंटल मर्जर्स जनरेट सिग्निफिकेंट प्राइस इफेक्ट्स? एविडेन्स फ्रॉम दि बैंकिंग इंडस्ट्री''. *जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल इकोनॉमिक्स*, खंड. 46, सं.4 : 433-52, दिसंबर।

प्रसाद, ए. तथा सैबल घोष.2005.''कॉम्पिटिशन इन इंडियन बैंकिंग.'' *आइएमएफ वर्किंग पेपर* सं. डब्ल्यूपी/05/141।

राडेकी, एल.जे.,जे. वेन्निगर तथा डी.के. ओरलो. 1997.''इंडस्ट्री स्टक्चर : इलेक्ट्रॉनिक डेलिवरीज पोटेंशियल इफेक्ट्स ऑन रिटेल बैंकिंग.'' *जर्नल ऑफ रिटेल बैंकिंग सर्विसेज*, खंड.19, सं.4 : 57-63।

राडेकी, एल. जे.1998.''दि एक्सपैंडिंग जिओग्रैफिक रीच ऑफ रिटेल बैंकिंग मार्केट्स.'' *इकोनॉमिक पॉलिसी रिव्यू*, खंड.4, सं.2, फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ न्यूयॉर्क।

राजन, आर.जी.तथा जिंगेल्स, एल.1998.''फिनैंशियल डिपेंडेंस एंड ग्रोथ.'' *अमरीकन इकोनॉमिक रिव्यू*, खंड 88, सं.3।

राम मोहन, टी.टी.2002. ''डिरेग्युलेशन एंड परफार्मेन्स ऑफ पब्लिक सेक्टर बैंक्स.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली*, खंड.37, सं.5ः393-397।

——. 2004. ''कनसोलिडेशन ऑफ बैंक्स : ए केस ऑफ मिसप्लेस्ड प्राइऑरिटीज.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली*, खंड.39, सं.50ः5283-87।

——. 2005. ''बैंक कनसोलिडेशन : इश्यूज एंड एविडेन्स.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* खंड.40., सं.2 : 1151-1159।

राम मोहन, टी.टी. तथा एस.रे. 2004. ''प्रोडक्टिविटी ग्रोथ एंड इफिशिएंसी इन इंडियन बैंकिंग : ए कंपेरिजन ऑफ पब्लिक, प्राइवेट एंड फॉरेन बैंक्स.'' *डिपार्टमेंट ऑफ इकोनॉमिक्स वर्किंग पेपर* सं.2004-27, यूनिवर्सिटी ऑफ कनेक्टिकट।

राम मोहन, टी.टी. तथा एस.रे. 2004. ''कम्पेअरिंग परफार्मेन्स ऑफ पब्लिक एंड प्राइवेट सेक्टर बैंक्सः ए रेवेन्यू मैक्सिमाइजेशन अप्रोच.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* खंड 39, सं.12ः 1271-75।

रंगराजन, सी. 2007. ''दि इंडियन बैंकिंग सिस्टम - चैलेंजेज अहेड.'' इंडियन इन्स्टिट्यूट ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस में 31 जुलाई 2007 को आयोजित प्रथम आर.के. तलवार स्मरणार्थ भाषण।

भारतीय रिज़र्व बैंक. 1991. *वित्तीय प्रणाली पर समिति* (अध्यक्ष : एम.नरसिंहम)।

रेड्डी, वाइ.वी.1992. ''प्राइवेटाइजेशन एंड फिनैंशियल सेक्टर : ओनरशिप, कॉम्पिटिशन एंड इफिशिएंसी.'' बैंक इकोनॉमिस्ट्स कांफरेंस में प्रस्तुत किया गया पेपर।

——. 2000 ''बैंकिंग इन फ्यूचर : फ्लेक्सिबिलिटी, ऑटोनॉमी एंड रेग्युलेटरी रिफोकस.'' एनआइबीएम, पुणे में बैंकों के अध्यक्षों के सम्मेलन में दिया गया समापन भाषण।

——. 2002. ''पब्लिक सेक्टर बैंक्स एंड दि गवर्नेन्स चैलेंज : इंडियन एक्सपीरिएंस.'' फिनैंशियल सेक्टर गवर्नेन्स : दि रोल ऑफ दि पब्लिक एंड प्राइवेट सेक्टर्स पर 18 अप्रैल 2002 को न्यूयॉर्क में वर्ल्ड बैंक, इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड, तथा ब्रूकिंग्ज इन्स्टिट्यूशन में प्रस्तुत पेपर।

——. 2004. ''भारत का वित्तीय क्षेत्र वैश्वीकरण की दिशा में.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन,* जनवरी।

भारतीय रिज़र्व बैंक, 1999. *सार्वजनिक क्षेत्र के कमजोर बैंकों की पुनर्संरचना पर गठित कार्यकारी दल* (अध्यक्ष : एम.एस. वर्मा)।

——. 2004. *कृषि तथा संबंधित कार्यकलापों के लिए ऋण का प्रवाह :* परामर्शी समिति रिपोर्ट।

——. 2005. *आरआरबी पर गठित आंतरिक कार्यकारी दल की रिपोर्ट।*

——. 2007. *भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति तथा प्रगति संबंधी रिपोर्ट, 2006-07।*

रॉस, एस.ए. वेस्टरफील्ड, आर.डब्ल्यू तथा जॉर्डन, बी.डी. 1995. *फंडामेंटल्स ऑफ कारपोरेट फाइनैंस. शिकागो* ः इर्विन।

सरकार, जयती, सुब्रत सरकार तथा सुमन भौमिक. 1998. ''डज ओनरशिप आल्वेज मैटर? - एविडेन्स फ्रॉम दि इंडियन बैंकिंग इंडस्ट्री.'' *जर्नल ऑफ कंपरेटिव इकोनॉमिक्स,* खंड - 26,सं.2ः 262-81।

सपिएंजा, पी. 1998. ''दि इफेक्ट्स ऑफ बैंकिंग मर्जर्स ऑन लोन कॉन्ट्रैक्ट्स.'' *नॉर्थ वेस्टर्न यूनिवर्सिटी वर्किंग पेपर।*

शार्पे, एस.ए. 1990. ''असिम्मेट्रिक इनफॉर्मेशन, बैंक लेंडिंग एंड इंप्लिसिट कॉन्ट्रैक्ट्स ए स्टाइल्ड मॉडेल ऑफ कस्टमर रिलेशनशिप्स''. *जर्नल ऑफ फाइनैंस, खंड.*45 : 1069-1087।

शल, बेर्नार्ड तथा हनवेक, गेराल्ड ए. 2001. *बैंक मर्जर्स इन ए डिरेग्युलेटेड एनवाइरनमेंट : प्रॉमिस एंड पेरिल,* कोरम बुक्स. यूएसए।

साइमंस, के. तथा जे. स्टाविन्स. 1998. ''हैज ऐन्टिट्रस्ट पॉलिसी इन बैंकिंग बिकम ऑबसोलीट?'' फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ बोस्टन, न्यू इंग्लैंड इकोनॉमिक रिव्यू (मार्च-अप्रैल), 13-26।

तलवार, एस.पी.2001. ''काम्पिटिशन, कनसोलिडेशन एंड सिस्टेमिक स्टेबिलिटी इन दि इंडियन बैंकिंग इंडस्ट्री.'' *बीआइएस पेपर्स,* अगस्त।

टिमोथी, एच. हन्नान तथा जे. नेल्ली लिआंग. 1991. ''इनफरिंग मार्केट पॉवर फ्रॉम टाइम-सिरीज डेटा : दि केस ऑफ दि बैंकिंग फर्म.'' *फाइनैंस एंड इकोनॉमिक्स डिस्कशन सिरीज 147,* बोर्ड ऑफ गवर्नर्स ऑफ दि फेडरल रिज़र्व सिस्टम. (यू.एस.)।

उदेशी, किशोरी जे. 2004. ''इश्यूज इन बैंक रेग्युलेशन एंड सुपरविजन.'' *बीआइएस रिव्यू* 50/2004।

वंडेर, वेन्नेत आर. 2002. ''कॉस्ट एंड प्रॉफिट इफिशिएंसी ऑफ फिनैंशियल कांग्लोमरेट्स एंड यूनिवर्सल बैंक्स इन यूरोप.'' *जर्नल ऑफ मनी, क्रेडिट एंड बैंकिंग,* खंड 34, सं.1 : 254-282।

व्यास, वी.एस. 2004. *रिपोर्ट ऑन दि फ्लो ऑफ क्रेडिट टू ऐग्रिकल्चर एंड रिलेटेड ऐक्टिविटीज.* जून।

विलमार्थ, जूनियर आर्थर ई. 2007. ''वाल-मार्ट एंड दि सेपरेशन ऑफ बैंकिंग एंड कॉमर्स.'' *कनेक्टिकट लॉ रिव्यू,* खंड 39. मई।

वर्ल्ड बैंक. 2005. वर्ल्ड डेवलपमेंट रिपोर्ट : *ए बेटर इनवेस्टमेंट क्लाइमेट फॉर एवरीवन.* वर्ल्ड बैंक, वॉशिंगटन, डी.सी.।

येयाति, इडूआर्डो लेवी तथा मिक्को, अलेजान्ड्रो. 2007. ''कॉनसेंट्रेशन एंड फारेन पेनेट्रेशन इन लैटिन अमेरिकन बैंकिंग सेक्टर्स : इम्पैक्ट ऑन कंपीटिशन एंड रिस्क.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* खंड. 31, सं.6 : 1633-1647।

यिल्डिरिम, एच.सेमिह तथा फिलिप्पटोज, जॉर्ज सी. 2007. ''रिस्ट्रक्चरिंग, कनसोलिडेशन एंड कंपीटिशन इन लैटिन अमेरिकन बैंकिंग मार्केट्स.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* खंड 31, सं.3:629-639. मार्च।

युआन, वाइ.2006. ''दि स्टेट ऑफ कंपीटिशन ऑफ दि चाइनीज बैंकिंग इंडस्ट्री.'' *जर्नल ऑफ एशियन इकॉनॉमीज,* खंड 17 :519-534।

**IX. भारत के बैंकिंग क्षेत्र की उत्पादन क्षमता तथा सुदृढ़ता**

अली, एच.वाइ.,आर. ग्राबोव्स्की, सी. पसुरका, तथा एन. रंगन. 1990.''टेक्निकल, स्केल एंड अलोकेटिव इफिशिएंसीज इन यू.एस. बैंकिंग : ऐन इंपायरिकल इनवेस्टिगेशन.'' *रिव्यू ऑफ इकॉनॉमिक्स एंड स्टैटिस्टिक्स,* 72(2): 211-218।

बैंकर, आर.डी., ए. चार्नेस तथा डब्ल्यू.डब्ल्यू. कूपर. 1984. ''सम मॉडेल्स फॉर एस्टिमेटिंग टेक्निकल एंड स्केल इनएफिशिएंसीज इन डेटा एनवेलपमेंट अनालिसिस.'' *मैनेजमेंट साइंस,* 30(9):1078-1092।

बर, आर., तथा टी. सिएम्स.1996. ''बैंक फेल्यूर प्रिडिक्शन यूजिंग डीईए टू मेजर मैनेजमेंट क्वालिटी.'' *फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ डल्लास वर्किंग पेपर।*

बेल, एफ.डब्ल्यू. तथा एन.बी.मरफी, 1968. ''इकोनामिक्स ऑफ स्केल एंड डिविजन ऑफ लेबर इन कामर्शियल बैंकिंग.'' *सदर्न इकॉनॉमिक जर्नल,* 131-139. अक्तूबर।

बर्गर, ए.एन., डी. हनकॉक, तथा डी.बी. हंफरे. 1993. ''बैंक इफिशिएंसी डिराइव्ड फ्राम दि प्रॉफिट फंक्शन.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 17:317-47।

बर्गर, ए.एन., तथा डी.बी.हंफरे. 1997. ''इफिशिएंसी ऑफ फाइनैंशियल इंस्टीट्यूशंस : इंटरनेशनल सर्वे एंड डाइरेक्शंस फॉर फ्यूचर रिसर्च.'' *यूरोपियन जर्नल ऑफ ऑपरेशनल रिसर्च,* 98:175-212।

बर्गर, ए.एन., तथा आर. डे. यंग. 1997. ''प्रॉब्लेम लोन्स एंड कॉस्ट इफिशिएंसी इन कामर्शियल बैंक्स.'' *फेडरल रिज़र्व बोर्ड फाइनैंस एंड इकॉनॉमिक्स डिस्कशन सिरीज 8।*

बर्गर, ए.एन. तथा एल. जे. मेस्टर. 1997. ''इनसाइड दि ब्लैक बॉक्स : व्हॉट एक्सप्लेन्स डिफरेन्सेज इन दि इफिशिएंसीज ऑफ फिनैंशियल इन्स्टिट्यूशन्स.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फइनैंस,* 21(7):895-947।

भट्टाचार्य, अंजना, अरुणव भट्टाचार्य तथा सुबल सी. कुंभकार. 1997. ''चैंजेज इन इकॉनॉमिक रिजीम एंड प्रोडक्टिविटी ग्रोथ : ए स्टडी ऑफ इंडियन पब्लिक सेक्टर बैंक्स.'' *जर्नल ऑफ कंपरेटिव इकॉनॉमिक्स,* 25(2):196-219।

भिडे, एम.जी., ए.प्रसाद तथा एस.घोष.2002. ''बैंकिंग सेक्टर रिफॉर्म्स : ए क्रिटिकल ओवरव्यू.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* 37(5):399-408।

बिक्केर, जे.ए.2002. *इफिशिएंसी एंड कॉस्ट डिफरेन्सेज एक्रॉस कंट्रीज इन ए यूनिफाइड यूरोपियन बैंकिंग मार्केट.* डि नेदरलैंड बैंक।

कासोलरो, एल. तथा जी गोब्बी. 2004 ''इनफॉर्मेशन टेक्नोलॉजी एंड प्रोडक्टिविटी चेंजेज इन दि इटालियन बैंकिंग इंडस्ट्री.'' बैंक डिटइटालिया, मार्च।

कासू, बार्बरा, क्लाडिया गिरार्डन, तथा फिलिप मोलिनेक्स. 2002. ''प्रोडक्टिविटी चेंज इन यूरोपियन बैंकिंग : ए कंपरिजन ऑफ पैरामेट्रिक एण्ड नॉन-पैरामेट्रिक अप्रोचेज.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 25(2):196-219।

चंद्रा, प्रसन्ना. 2004. *फाइनैंशियल मैनेजमेंट : थिअरी एंड प्रैक्टिस,* टाटा मैकग्रा हिल, नई दिल्ली।

चार्नेस, ए., डब्ल्यू.डब्ल्यू.कूपर, तथा ई. रोड्स. 1978. ''मेजरिंग दि इफिशिएंसी ऑफ डेसिज़न मेकिंग यूनिट्स.'' *यूरोपियन जर्नल ऑफ ऑपरेशनल रिसर्च,* 2(4):429-444।

कुएर्टा, आर.,तथा एल. ओरिया. 2002. ''मर्जर्स एंड टेक्निकल इफिशिएंसी इन स्पैनिश सेविंग्ज बैंक्स : ए स्टॉकैस्टिक डिस्टैन्स फंक्शन अप्रोच.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 26(12):2231.2247।

दास, ए.,ए. नाग तथा एस.सी.रे.2005. ''लिबरलाइजेशन, ओनरशिप एंड इफिशिएंसी इन इंडियन बैंकिंग : ए नॉनपैरामेट्रिक अनालिसिस.'' *इकॉनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* 40(12):1190-1197।

दास,ए.,तथा एस. घोष. 2006. ''फिनैंशियल डिरेग्युलेशन एंड इफिशिएंसी : ऐन एंपिरिकल अनालिसिस ऑफ इंडियन बैंक्स ड्यूरिंग दि पोस्ट रिफॉर्म पीरियड.'' *रिव्यू ऑफ फिनैंशियल इकॉनॉमिक्स,* 15 : 193-221।

डेब्रू, जी.1951. ''दि कोइफिशिएंट ऑफ रिसोर्स यूटिलाइजेशन.'' *इकॉनॉमेट्रिका,* 19 : 273-92।

डिसूज़ा, ई. 2002.''हाऊ वेल हैव पब्लिक सेक्टर बैंक्स डन? ए नोट.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* 37(9):867-870।

फारेल, एम.जे.1957. ''दि मेजरमेंट ऑफ प्रोडक्टिव इफिशिएंसी.'' *जर्नल ऑफ रॉयल स्टटिस्टिकल सोसाइटी,* 120(ए): 253-81।

घोष, सी.आर.तथा अन्य. 2004. *''स्ट्रटेजिक मॉडल्स फॉर रिपोजिशनिंग ऑफ पब्लिक सेक्टर बैंक्स - क्रिएटिंग ग्लोबल विनर.''* बैनकॉन।

गोड्डार्ड, जे.ए., पी. मॉलिनेक्स, तथा जे.ओ.एस. विल्सन. 2001. *यूरोपियन बैंकिंग - इफिशिएंसी, टेक्नोलॉजी एंड ग्रोथ.* विले फाइनैंस, यूके।

गोमेज-गोन्ज़ालेज, जोस ई., निकोलस एम कैफर. 2006. *बैंक फेल्यूर : एविडेंस फ्रॉम दि कोलंबियन फिनैंशियल क्राइसिस.* कोरनेल यूनिवर्सिटी, इथाका, न्यू यॉर्क, यूएसए।

ग्रामले एल.ई. 1962. *ए स्टडी ऑफ स्केल इकोनॉमीज इन बैंकिंग.* फेडरल रिजर्व बैंक ऑफ केन्सास सिटी, यूएसए।

ग्रीनबौम, एस.आइ.1967. ''ए स्टडी ऑफ बैंक कॉस्ट.'' *नेशनल बैंकिंग रिव्यू,* 4 (जून):415-434।

इंडियन इन्स्टिट्यूट ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस. 2005. *फिनैंशियल मैनेजमेंट. मैकमिलन,* मुंबई।

इसिक, आइ., तथा एम. हसन. 2003. ''फिनैंशियल डिरेग्युलेशन एंड टोटल फैक्टर प्रोडक्टिविटी चेंज : ऐन एंपीरिकल स्टडी ऑफ तुर्किश कामर्शियल बैंक्स.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 27(8):1455-1485।

कपरकिस, ई.आइ., एस.एम.मिलर तथा ए.जी.नौलस.1994. ''शॉर्ट-रन कॉस्ट इनइफिशिएंसी ऑफ कामर्शियल बैंक्स : ए फ्लेक्सिबल स्टॉकैस्टिक फ्रंटियर अप्रोच.'' *जर्नल ऑफ मनी, क्रेडिट एंड बैंकिंग,* 26 : 875-93।

कोलारी, जे. तथा ए. जर्दकूही. 1987. *बैंक कॉस्ट, स्ट्रक्चर एंड परफार्मेन्स. लेक्सिंगटन बुक्स, लेक्सिंगटन,* यूएसए।

मैथ्यूज, के., तथा एम. इस्माइल. 2006.''इफिशिएंसी एंड प्रोडक्टिविटी ग्रोथ ऑफ डोमेस्टिक एंड फॉरेन कामर्शियल बैंक्स इन मलेशिया.'' *कार्डिफ बिज़नेस स्कूल वर्किंग पेपर सिरीज।*

माथुर, के.बी.एल. 2005. ''मार्केट ओरिएंटेशन ऑफ फिनैंशियल सेक्टर.'' *इकोनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली,* मार्च 19 : 1136-1140।

मोहन, राकेश. 2005. ''फिनैंशियल सेक्टर इन इंडिया.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* मार्च 19।

——. 2006ए.''बैंकिंग में सुधार, उत्पादकता एवं दक्षता : भारतीय अनुभव.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन,* फरवरी।

——. 2006बी . ''बैंकिंग में सुधार, उत्पादकता एवं दक्षता : भारतीय अनुभव.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन,* मार्च:279-293।

मॉलिनेक्स, पी.,वाइ. अल्टनबस, तथा ई.गार्डनर.1996. *इफिशिएंसी इन यूरोपियन बैंकिंग.* जॉन विले एंड सन्स।

मरफी, 1972. कॉस्ट ऑफ बैंकिंग एक्टिविटीज : इंटरैक्शन बिट्वीन रिस्क एंड आपरेटिंग कॉस्टः ए कमेंट, *जर्नल ऑफ मनी, क्रेडिट एंड बैंकिंग,* 4, अगस्त : 14-15।

ओस्टर, ए. तथा एल. ऐंटिओच. 1995. ''मेजरिंग प्रोडक्टिविटी इन दि ऑस्ट्रेलियन बैंकिंग सेक्टर.'' रिज़र्व बैंक ऑफ ऑस्ट्रेलिया।

पोडपिएरा, ए., तथा जे. पोडपिएरा. 2005. ''डिटिरिओरेटिंग कॉस्ट इफिशिएंसी इन कामर्शियल बैंक्स सिग्नल्स ऐन इनक्रीजिंग रिस्क ऑफ फेल्यूर.'' *सीएनबी वर्किंग पेपर सिरीज,* दिसंबर।

रे, एस., 2004. *डेटा एनवेलपमेंट अनालिसिस : थिअरी एंड टेकनिक्स फॉर ऑपरेशन्स रिसर्च एंड इकोनॉमिक्स.* कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैंब्रिज, यूके।

रेड्डी, वाइ.वी. 2002. ''मॉनिटरी एंड फिनैंशियल सेक्टर रिफॉर्म्स इन इंडिया : ए प्रैक्टिशनर्स परस्पेक्टिव.'' इंडियन इकोनॉमी कॉनफरेन्स, कॉरनेल यूनिवर्सिटी, यूएसए में किया गया प्रस्तुतीकरण।

——. 2006 ''भारत में उत्पादकता का महत्व.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन,* जनवरी।

भारतीय रिजर्व बैंक. 2003. *भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति एवं प्रगति संबंधी रिपोर्ट,* मुंबई।

रिज़र्व बैंक ऑफ न्यूजीलैंड. कैपिटल अडिक्वैसी रेशियोज फॉर बैंक्स - सिंप्लीफाइड एक्सप्लेनेशन एंड एक्जाम्पल ऑफ कलक्यूलेशन।

रॉस्सी, एस.पी.एस., एम. श्च्वाइगर, तथा जी. विंकलर. 2005. ''मैनेजीरियल बिहेविअर एंड कॉस्ट / प्रॉफिट इफिशिएंसी इन दि बैंकिंग सेक्टर्स ऑफ सेंट्रल एंड ईस्टर्न यूरोपियन कंट्रीज.'' *वर्किंग पेपर* 96।

श्च्वाइगर, आइ. तथा जे. एस. मैकगी. 1961. ''शिकागो बैंकिंग.'' *जर्नल ऑफ बिजनेस,* 34(3) : 203-366।

सौज़ा, सोब्रीन्हो तथा एफ.नेल्सन. 2007. ''दि मैक्रोइकोनॉमिक्स ऑफ बैंक इंटरेस्ट स्प्रेड्स : एविडेन्स फ्रॉम ब्राज़ील.'' *यूसीएलए वर्किंग पेपर।*

### X. बैंकिंग में विनियामक एवं पर्यवेक्षी चुनौतियां

अब्राम्स, के. रिचर्ड तथा माइकेल डब्ल्यू.टेलर. 2000. ''इश्यूज इन दि यूनिफिकेशन ऑफ फिनैंशियल सेक्टर सुपरविजन.'' *आइएमएफ वर्किंग पेपर,* डब्ल्यूपी/00/213. दिसंबर।

अड्रियन, टोबिआस तथा ह्युन सांग शिन, 2008. ''फिनैंशियल इंटरमीडिअरीज, फिनैंशियल स्टेबिलिटी एंड मॉनिटरी पॉलिसी.'' ''मेनटेनिंग स्टेबिलिटी इन ए चेंजिंग फिनैंशियल सिस्टम'' पर फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ केन्सास सिटी सिंपोजियम के लिए पेपर, अगस्त 21-23।

अलवर्थ, जे.एस. तथा एस. भट्टाचार्य. 1998. *''दि इमर्जिंग फ्रेमवर्क ऑफ बैंक रेग्युलेशन* एंड कैपिटल कंट्रोल.'' इमर्जिंग फ्रेमवर्क ऑफ फिनैंशियल रेग्युलेशन (इडी)में, सी.ए.ई. गुडहार्ट. सेन्ट्रल बैंकिंग पब्लिकेशन्स।

अयाडि, रिम तथा पुजल्स, जॉर्ज्स. 2004. ''बैंकिंग कनसोलिडेशन इन दि यूरोपियन यूनियन, ओवरव्यू एंड प्रॉस्पेक्ट्स.'' *रिसर्च रिपोर्ट इन फाइनैंस एंड बैंकिंग.* सेंटर फॉर यूरोपियन पॉलिसी स्टडीज (सीईपीएस), सं.34, अप्रैल।

बगेहाट, वॉल्टर 1873. *लोंबार्ड स्ट्रीट. ए डिस्क्रिप्शन ऑफ दि मनी मार्केट.* लंदन।

बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट्स.1988. *इंटरनेशनल कन्वर्जेन्स ऑफ कैपिटल मेजरमेंट एंड बैंकिंग स्टैंडर्ड्स.* बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति।

——. 1997 *कोर प्रिन्सिपल्स फॉर इफेक्टिव बैंकिंग सुपरविजन.* बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति, पब्लिकेशन 30।

——. 1998. *एनहांसिंग बैंक ट्रान्सपरेन्सी.* बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति, पब्लिकेशन 41।

——. 2002. *ओवरव्यू पेपर फॉर दि इम्पैक्ट स्टडी.* बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति।

——. 2003ए. *मैनेजमेंट एंड सुपरविजन ऑफ क्रॉस-बार्डर इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग ऐक्टिविटीज।*

——. 2003 बी. *रिस्क मैनेजमेंट प्रिंसिपल्स फॉर इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग.* जुलाई।

बेरिंग, फ्रांसिस. 1797. *ऑब्जर्वेशन्स ऑन दि एस्टैब्लिशमेंट ऑफ दि बैंक ऑफ इंग्लैंड एंड ऑन पेपर सर्कुलेशन ऑफ दि कंट्री.* लंदन : मिनेर्वा प्रेस।

बार्थ, जेम्स आर., कैप्रियो जूनि., जी., तथा रॉस लेवाइन. 2001. ''बैंकिग सिस्टम्स अराउंड दि ग्लोब : रेग्युलेशन्स एंड ओनरशिप अफेक्ट परफार्मेन्स एंड स्टेबिलिटी?'' प्रूडेन्शियल सुपरविजन : व्हॉट वर्क्स एंड व्हॉट अजन्ट में 31-88. (सं.) एफ.एस. मिश्किन, यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस।

——. 2006. रीथिंकिंग बैंक रेग्युलेशन : *टिल ऐंजेल्स गवर्न.* न्यूयॉर्क : कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

बार्थ, जेम्स आर., रोब कोएप्प तथा झोंगफेई झोउ. 2004. ''इन्स्टिट्यूट व्यू : डिसिप्लिनिंग चाइनाज बैंक्स.'' मिल्केन इन्स्टिट्यूट रिव्यू : *जर्नल ऑफ इकोनॉमिक पॉलिसी,* दूसरी तिमाही, 83-92।

बेनस्टोन, जी.जे. 2000. ''इज गवर्नमेंट रेग्युलेशन ऑफ बैंक्स नेसेसरी?'' जर्नल ऑफ फिनैंशियल सर्विसेज रिसर्च, 18(2-3)।

बेनस्टोन, जी.जे. तथा कौफमान, जी.जी. 1988. ''रिस्क एंड सोल्वेन्सी रेग्युलेशन ऑफ डिपॉजिटरी इन्स्टिट्यूशन्स : पास्ट पॉलिसीज एंड करेंट ऑप्शन्स.'' *मोनोग्राफ,* सालोमन ब्रदर्स सेंटर, ग्रेज्यूएट स्कूल ऑफ बिज़नेस, न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी।

——. 1996. ''दि अप्रोप्रिएट रोल ऑफ बैंक रेग्युलेशन.'' *दि इकोनॉमिक जर्नल* 106(436) : 688-697।

बर्गर, ए.एन., हेनकॉक, डी. तथा हंफ्रे, डी.बी. 1993. ''बैंक इफिशिएंसी डिराइब्ड फ्रॉम दि प्रॉफिट फंक्शन.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 17 : 317-47।

बर्गर, ए.एन., विलियम हंटर, तथा स्टीफेन टिम्मे. 1993. ''दि इफिशिएंसी ऑफ फिनैंशियल इन्स्टिट्यूशन्स : ए रिव्यू एंड प्रिव्यू ऑफ रिसर्च पास्ट, प्रजेंट, एंड फ्यूचर.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 17:221-249।

बर्गर, ए.एन., तथा ग्रेगोरी उडेल.1996. ''यूनिवर्सल बैंकिंग एंड दि फ्यूचर ऑफ स्माल बिजनेस लेंडिंग. यूनिवर्सल बैंकिंग : फिनैंशियल सिस्टम डिजाइन रिकनसिडर्ड (सं.)1 में. वाल्टर तथा ए. साउंडर्स, 559-627, शिकागो।

बर्गर, ए.एन., रिचर्ड जे. हेरिंग, तथा गिओर्गिओ पी स्जेगो. 1995. ''दि रोल ऑफ कैपिटल इन फिनैंशियल इन्स्टिट्यूशन्स.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 19 : 257-276।

बेनंकि बी.एस. तथा एम.एल. गर्टलर. 1995. ''इनसाइड दि ब्लैक बॉक्स : दि क्रेडिट चैनल ऑफ मॉनिटरी पॉलिसी ट्रान्समिशन.'' *जर्नल ऑफ इकोनॉमिक परस्पेक्टिव्ज़,* 9 (फॉल) : 27-48।

ब्लाइंडर, अलन एस., तथा रॉबर्ट एफ, वेस्कॉट. 2001. *रिफॉर्म ऑफ डिपॉजिट इन्शूरेन्स : ए रिपोर्ट टू दि एफडीआइसी.* मार्च।

ब्लम, जे.एम. 2002 ''सब-आर्डिनेटेड डेट, मार्केट डिसिप्लिन, एंड बैंक्स रिस्क टेकिंग.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 26 (7) : 1427-1441।

बोर्ड ऑफ गवर्नर्स ऑफ दि फेडरल रिजर्व सिस्टम. 1999. *यूजिंग सबऑर्डिनेटेड डेट ऐज ऐन इन्स्ट्रूमेंट ऑफ मार्केट डिसिप्लिन.* स्टडी ग्रुप ऑन सबऑर्डिनेटेड नोट्स एंड डिबेंचर्स, दिसंबर।

बूट, अरनौड डब्ल्यू.ए. तथा अंजन वी.ठाकोर. 1993. ''सेल्फ-इंटरेस्टेड बैंक रेग्युलेशन.'' *दि अमेरिकन इकोनॉमिक रिव्यू,* 83(2): 206-212।

बॉइड, जे.एच.,चांग, सी., तथा बी.डी.स्मिथ. 1998. ''मॉरल हजार्ड अंडर कामर्शियल एंड यूनिवर्सल बैंकिंग.'' *जर्नल ऑफ मनी, क्रेडिट एंड बैंकिंग,* 30(3.2):426-468।

बूइटर, विलेम एच. 2008. ''सेंट्रल बैंक्स एंड फिनैंशियल क्राइसेस.'' ''मेनटेनिंग स्टेबिलिटी इन ए चेंजिंग फिनैंशियल सिस्टम'' पर दि फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ केन्सास सिटी सिपोजियम के लिए पेपर, अगस्त 21-23।

ब्रिआल्ट क्लाइव. 1999. ''दि राशनेल फॉर ए सिंगल नेशनल फिनैंशियल सर्विसेज रेग्युलेटर.'' *ऑकेजनल पेपर सिरीज* 2, फिनैंशियल सर्विसेज अथॉरिटी, यूके, मई।

कालोमिरिस, चार्ल्स डब्ल्यू. ''फिनैंशियल फैक्टर्स इन दि ग्रेट डिप्रेशन.'' *दि जर्नल ऑफ इकोनॉमिक परस्पेक्टिव्ज,* 7(2) (स्प्रिंग) :61-85।

——. 1999. ''बिल्डिंग ऐन इनसेंटिव-कंपैटिबल सेफ्टी नेट.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 23 : 1499-1519।

कालोमिरिस, चार्ल्स डब्ल्यू., तथा बेरी विल्सन. 1998. ''बैंक कैपिटल एंड पोर्टफोलियो मैनेजमेंट : दि 1930ज कैपिटल क्रंच एंड स्क्रैम्बल टु शेड रिस्क.'' *एनबीईआर वर्किंग पेपर* स.6649, जुलाई।

कामा, जेड.जे.2002. *रिपोर्ट ऑफ दि वर्किंग ग्रुप ऑन इलेक्ट्रानिक मनी.* जुलाई।

कैप्रियो, लेवाइन तथा बार्थ. 2004. ''बैंक रेग्युलेशन एंड सुपरविजन : व्हॉट वर्क्स बेस्ट.'' *जर्नल ऑफ फिनैंशियल इंटरमीडिएशन,* 12:205-248।

सेन्ट्रल बैंकिंग पब्लिकेशन्स. 2008. *हाऊ कंट्रीज सुपरवाइज देयर बैंक्स, इंश्यूरर्स एंड सिक्यूरिटीज मार्केट्स 2008: दि हू एंड हाऊ ऑफ फिनैंशियल सुपरविजन इन मोअर दैन 190 जूरिस्डिक्शन्स.* लंदन : इनसिजिव मीडिया हेमार्केट हाउस।

चान, यूक-शी; ग्रीनबौम, स्टुआर्ट I तथा ठाकोर, अंजन वी.1992 ''इज फेअर्ली प्राइस्ड डिपोजिट इंश्यूरेन्स पॉसिबल?'' *दि जर्नल ऑफ फाइनैंस,* 47(1), मार्च।

क्लसेन्स तथा क्लिंगेबिएल.2000. ''अल्टरनेटिव फ्रेमवर्क्स फॉर प्रोवाइडिंग फिनैंशियल सर्विसेज.'' *वर्ल्ड बैंक पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर* 2189, नवंबर।

कोरडेला, टी. तथा ई.एल. येयाति. 1998. ''पब्लिक डिसक्लोजर एंड बैंक फेल्यूर्स.'' *आइएमएफ स्टाफ पेपर्स,* 45।

कूरी,ई.,जे. डेथिएर तथा ई.टोगो.2003.''इन्स्टिट्यूशनल अरेंजमेंट्स फॉर पब्लिक डेट मैनेजमेंट.'' *पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर* 3021, विश्व बैंक।

डेमिरगुक-कुंट, असली, तथा एडवर्ड काणे. 2002. ''डिपॉजिट इंश्यूरेंस अराउंड दि ग्लोब : व्हेयर डज इट वर्क?.'' *जर्नल ऑफ इकोनॉमिक पर्स्पेक्टिव्ज,* 16(2): 175-195।

डेमिरगुक-कुंट, असली, कराकाओवल्ली तथा लुक लीवेन.2005. ''डिपॉजिट इंश्यूरेंस अराउंड दि वर्ल्ड : ए कॉम्प्रिहेंसिव डेटाबेस.'' *पॉलिसी रिसर्च पेपर सं.3628,* विश्व बैंक, जून।

डिपार्टमेंट ऑफ ट्रेजरी. 2008. *ब्ल्यू प्रिंट फॉर ए मॉडनइज्ड फिनैंशियल रेग्युलेटरी स्ट्रक्चर.*यूएसए, मार्च।

डेवेट्रिपांट, मथियास, तथा जीन तिरोले. 1994. *दि प्रूडेन्शियल रेग्युलेशन ऑफ बैंक्स.* कैंब्रिज : कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

दि नोइया, सी तथा डि गिओर्गिओ, जी.1999. ''शुड बैंक सुपरविजन एंड मॉनिटरी पॉलिसी टास्क्स बी गिवेन टू डिफरेंट एजेन्सीज?'' *इंटरनेशनल फाइनैंस,* 2(3): 361-378, नवंबर।

द्जान्कोन, सीमेओन, राफेल ला पोर्टा, एफ.लोपेज-डि-सिलानेस, तथा ए. श्लेफर. 2002. ''दि रेग्युलेशन ऑफ एन्ट्री.'' *क्वार्टर्ली जर्नल ऑफ इकोनॉमिक्स,* 117(1):1-37।

डाउ, एस.सी., तथा जे. स्मिदिन.1993. ''चेंज इन फिनैंशियल मार्केट्स एंड दि फर्स्ट प्रिंसिपल्स ऑफ मॉनिटरी इकोनॉमिक्स.'' *मिमेओ,* यूनिवर्सिटी ऑफ स्टर्लिंग तथा यार्क यूनिवर्सिटी, ओंटारिओ।

डाउड, केविन. 1993. *लैसेज-फैअर बैंकिंग. लंदन* : राउटलेज।

——. 1996 ''दि केस फॉर फिनैंशियल लैसेज-फैअर.'' *दि इकोनॉमिक जर्नल,* 106(436):679-687।

इजफिंगर, एस.सी.डब्ल्यू.2001. ''शुड दि यूरोपियन सेंट्रल बैंक बी एंट्रस्टेड बिथ बैंकिंग सुरपरविजन इन यूरोप?'' यूरोपीय संसद के लिए *''दि कंडक्ट ऑफ मॉनिटरी पॉलिसी एंड ऐन इवैल्यूएशन ऑफ दि इकोनॉमिक सिचुएशन इन यूरोप - दूसरी तिमाही''* पर ब्रीफिंग पेपर, मई।

फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ सैनफ्रान्सिस्को (एफआरबीएसएफ) इकोनॉमिक लेटर. 2002. ''दि प्रॉमिस एंड लिमिट्स ऑफ मार्केट डिसिप्लिन इन बैंकिंग.'' नं.36, दिसंबर 13।

फीबिग, एम. 2001. *प्रूडेन्शियल रेग्युलेशन एंड सुपरविजन फॉर ऐग्रिकल्चरल फाइनैंस,* इटालिया. एफएओ/जीटीजेड.

फिनैंशियल सर्विसेज अथॉरिटी. 2007. *प्रिन्सिपल्स-बेस्ड रेग्युलेशन-फोकसिंग ऑन दि आउटकम्स दैट मैटर.* यूके, अप्रैल।

फिशर, के. तथा जे. गूयी. 1995. ''फिनैंशियल लिबरलाइज़ेशन एंड बैंक सॉलवेन्सी.'' *वर्किंग पेपर,* यूनिवर्सिटी ऑफ लावल, क्यूबेक।

फ्रीक्सास, एक्स. तथा ऐंटनी सैंटोमेरो.2002.''ऐन ओवरऑल परस्पेक्टिव ऑन बैंकिंग रेग्युलेशन.'' *वर्किंग पेपर,* रिसर्च डिपार्टमेंट, फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ फिलाडेल्फिया।

फ्रीडमैन, मिल्टन, तथा अन्ना जैकोबसन स्वार्ट.1963. *ए मॉनिटरी हिस्ट्री ऑफ दि यूनाइटेड स्टेट्स, 1867-1960. नेशनल ब्यूरो ऑफ इकोनॉमिक रिसर्च,* प्रिन्सटन एन जेःप्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस।

फ्रोलोव, मिखाइल. 2004. ''फंडिंग डिपॉजिट इन्शुरेन्सः डिजाइनिंग ऑप्शन्स एंड प्रैक्टिकल चॉइसेज़.'' *केयूएमक्यूआरपी डिस्कशन पेपर सिरीज,* डीपी 2003-21, कियो यूनिवर्सिटी, मार्केट क्वालिटी रिसर्च प्रोजेक्ट, फरवरी।

जॉर्जेस, डिओन्ने. 2003. ''दि फाउंडेशन्स ऑफ बैंक्सट रिस्क रेग्युलेशन : ए रिव्यू ऑफ दि लिटरेचर.'' बैंक ऑफ कनाडा के सम्मेलन में प्रस्तुत पेपर, दि इवॉल्विगं फिनैंशियल सिस्टम एंड पब्लिक पॉलिसी. ओट्टावा, दिसंबर।

गेरश्चेनक्रोन, ए. 1962. *इकोनॉमिक बैकवर्डनेस इन हिस्टोरिकल परस्पेक्टिव : ए बुक ऑफ एसेज.* कैंब्रिज : एमए : बेल्कनैप प्रेस ऑफ हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

गिव, जॉन. 2008. ''दि रिटर्न ऑफ दि क्रेडिट साइकल - ओल्ड लेसन्स इन न्यू मार्केट्स.'' यूरोमनी बांड इनवेस्टर्स कांग्रेस में, लंदन, फरवरी।

जेडरेम, स्वेइन. 2007. ''टर्ब्यूलेन्स इन क्रेडिट मार्केट्स - मॉर्टगेज फाइनैंसिंग ऐट होम एंड अब्रॉड.'' नॉर्वेजियन सेविंग्ज बैंक्स असोसिएशन की वार्षिक बैठक में, हामर, अक्तूबर।

गुडहार्ट, सी.ए.ई. 1998. ''ऐन इनसेंटिव स्ट्रक्चर फॉर फिनैंशियल रेग्युलेशन.'' *दि इमर्जिंग फ्रेमवर्क ऑफ फिनैंशियल रेग्युलेशन* (सं.) में, सी.ए.ई. गुडहार्ट, सेंट्रल बैंकिंग पब्लिकेशन्स।

——. 2000ए. ''व्हिदर सेंट्रल बैंकिंग?'' 11वां सी.डी. देशमुख स्मारक भाषण, भा.रि.बैंक, दिसंबर, मुंबई।

——. 2000बी. ''दि ऑर्गनाइजेशनल स्ट्रक्चर ऑफ बैंकिंग सुपरविजन.'' *ऑकेजनल पेपर नं.*1, बासेल, स्विटजरलैंड, एफएसआइ, नवंबर।

गुडहार्ट, सी.ए.ई. तथा डिर्क शूनमेकर. 1993. ''इन्स्टिट्यूशनल सेपरेशन बिट्वीन सुपरवाइजरी एंड मॉनिटरी एजेन्सीज.'' *एलएसई फिनैंशियल मार्केट्स ग्रुप स्पेशल पेपर नं.52।*

——. 1995. ''शुड दि फंक्शन्स ऑफ मॉनिटरी पॉलिसी एंड बैंकिंग सुपरविजन बी सेपरेटेड?'' *ऑक्सफोर्ड इकोनॉमिक पेपर्स,* 47:539-560।

गुडहार्ट, सी.ए.ई., पी.हर्टमन, डी.लेवेलिन, एल.रोजस, सुअरेज तथा एस.वीसब्रॉड. 1998. ''दि इन्स्टिट्यूशनल स्ट्रक्चर ऑफ फिनैंशियल रेग्युलेशन.'' *फिनैंशियल रेग्युलेशन, व्हाई, हाऊ एंड व्हेअर नाउ?* सी.ए.ई. गुडहर्ट (सं.) में, लंदन : राउटलेज पब्लिकेशन।

गॉर्टन, गैरी, तथा ऐंड्रयू विंटन. 2000. ''लिक्विडिटी प्रॉविजन एंड कॉस्ट ऑफ बैंक कैपिटल, एंड दि मैक्रोइकोनॉमी.'' *इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड सेमिनार सिरीज पेपर,* सं.22:1-43।

गवर्नमेंट ऑफ यूके. 2008. *नोटिफिकेशन ऑन टेंपरेरी पब्लिक ओनरशिप ऑफ नॉर्दर्न रॉक.* फरवरी 22।

ग्रीनस्पैन, अलन. 1997. *रिमार्क्स ऐट दि कॉनफरेन्स ऑन बैंक स्ट्रक्चर एंड कंपीटिशन ऑफ दि फेडरल रिजर्व बैंक ऑफ शिकागो.* शिकागो, इलिनोइस, मई।

गुएनबर्ग, मार्टिन जे. 2007. *दि इंटरनेशनल रोल ऑफ डिपॉजिट इन्शुरेन्स.* दि एक्सचेकर क्लब. वॉशिंगटन डी.सी., नवंबर।

इंगवेस, स्टेफन. 2007. '' *रेग्युलेटरी* चैलेंजेज ऑफ क्रॉस-बॉर्डर बैंकिंग - पॉसिबल वेज फॉरवर्ड.'' बीआइएस वेबसाइट, www.bis.org.

लोन्निडाऊ, वास्सो पी. 2003. ''डज मॉनिटरी पॉलिसी अफेक्ट दि सेन्ट्रल बैंक्स रोल इन बैंक सुपरविजन?'' जर्नल ऑफ फिनैंशियल इंटरमीडिएशन, 14ः 58-85, सितंबर।

जॉन, कोसे, टेरेसा ए. जॉन, तथा ऐंथोनी सौंडर्स. 1994. ''यूनिवर्सल बैंकिंग एंड फर्म रिस्क टेकिंग.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 18 (2)ः 307-323।

जॉइन्ट फोरम ऑन फिनैंशियल कांग्लोमरेट्स. 1999. *सुपरविजन ऑफ फिनैंशियल कोंग्लोमरेट्स.* फरवरी।

जॉर्डन, जॉन एस., जो पीक, तथा एरिक एस. रोसेनग्रेन. 2000. ''दि मार्केट रिऐक्शन टू दि डिसक्लोजर ऑफ सुपरवाइजरी ऐक्शन्स : इम्प्लीकेशन्स फॉर बैंक ट्रांसपरेन्सी.'' जर्नल ऑफ फिनैंशियल इंटरमीडिएशन, 9(3)ः 298-319।

काने, एडवर्ड जे. 1981. ''ऐक्सिलरेटिंग इनफ्लेशन, टेक्नॉलॉजिकल इन्नोवेशन, एंड दि डिक्रीजिंग इफेक्टिवनेस ऑफ बैंकिंग रेग्युलेशन''. *जर्नल ऑफ फाइनैंस,* 36(2).355-367।

——. 1990. *दि एस एंड एल इन्शुरेन्स मेस : हाऊ डिड इट हैपेन?* अर्बन इन्स्टिट्यूट प्रेस, वॉशिंगटन डी.सी.।

कीले, एम.सी. तथा एफ.टी. फर्लांग. 1990. ''ए रिएक्जामिनेशन ऑफ मीन-वैरिऐन्स अनालिसिस ऑफ बैंक कैपिटल रेग्युलेशन्स.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 14 :69-84।

कीले, एम.सी.1990. ''डिपॉजिट इन्शुरेन्स रिस्क एंड मार्केट पॉवर इन बैंकिंग''. *अमेरिकन इकोनॉमिक रिव्यू,* 80(5)ः 1183-1200।

केटचा जूनि., निकोलस जे. 1999. ''डिपॉजिट इन्शुरेन्स सिस्टम डिजाइन एंड कनसिडरेशन्स''. *बीआइएस पॉलिसी पेपर्स* सं.7, नवंबर।

किंग मेरविन. 2007. ''मॉनिटरी पॉलिसी डेवलपमेंट्स.'' नॉर्थन आयरलैंड चेंबर ऑफ कॉमर्स तथा इंडस्ट्री में, बेलफास्ट. अक्तूबर।

क्वान, साइमन एच. 2002. ''दि प्रॉमिस एंड लिमिट्स ऑफ मार्केट डिसिप्लिन इन बैंकिंग.'' फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ सैन फ्रान्सिस्को (एफआरबीएसएफ), *इकोनॉमिक लेटर्स,* नंबर 36, दिसंबर।

ला पोर्टा, राफेल, एफ.लोपेज-डि-सिलेन्स, तथा ए. श्लीफर. 2002. ''गवर्नमेंट ओनरशिप ऑफ कमर्शियल बैंक्स.'' *दि जर्नल ऑफ फाइनैंस,* 57 (1)ः 265-301।

लीवेन, लुक.2002 ''प्राइसिंग ऑफ डिपॉजिट इन्शुरेन्स.'' *पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर,* सं.2871, विश्व बैंक, जुलाई।

लीलाधर, वी.2007. ''भारत में बैंककारी विनियमन का विकास - कुछ पहलुओं का पूर्वावलोकन''. *भा.रि.बैंक बुलेटिन।*

लेवेलिन, डेविड टी. 2000.''सम लेसन्स फॉर रेग्युलेशन फ्रॉम रिसेंट बैंक क्राइसेस.'' *ओपेन इकोनॉमीज रिव्यू,* खंड 11, अनुपूरक 1, अगस्त।

मेकलाच्लन, फिओना सी. 2001. ''मार्केट डिसिप्लिन इन बैंक रेग्युलेशन पनासिआ ऑर पैराडॉक्स?'' *दि इंडिपेंडेंट रिव्यू,* खंड. VI, सं.2, फॉल : 227-234।

मालकोनेन, विल्ले. 2004. ''कैपिटल अडिक्वैसी रेग्युलेशन एंड फिनैंशियल कांग्लोमरेट्स.'' *बैंक ऑफ फिनलैंड रिसर्च डिस्कशन पेपर* सं.10, गवर्नमेंट ऑफ दि रिपब्लिक ऑफ फिनैंशियल - गवर्नमेंट इन्स्टिट्यूट फॉर इकोनॉमिक रिसर्च।

मलिक, वी.2001. *रिपोर्ट ऑफ दि वर्किंग ग्रुप ऑन कनसोलिडेटेड अकाउंटिंग एंड अदर क्वांटिटेटिव मेथड्स टू फेसिलिटेड कनसोलिडेटेड सुपरविजन.* दिसंबर।

मार्टिनेज, जोस डे लूना तथा थॉमस ए रोज.2003. ''इंटरनेशनल सर्वे ऑफ इंटीग्रेटेड फिनैंशियल सेक्टर सुपरविजन.'' *पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर* 3096, विश्व बैंक. जुलाई।

मार्टिनेज-पेरिया, मारिया सोलेडैड तथा सेरगियो श्मुकलेर. 2001. ''डू डिपॉजिटर्स पनिश बैंक्स फॉर बैड विहेवियर? मार्केट डिसिप्लिन, डिपॉजिट इन्शुरेन्स एंड बैंकिंग क्राइसेस.'' *दि जर्नल ऑफ फाइनैंस,* 56(3)ः1029-1051।

मेमोरैंडम फ्रॉम दि एफएसए, यूके टू दि ट्रेजरी कमिटी. 2007. गवर्नमेंट ऑफ यूके।

मेरिक, जॉन जे. जूनि. तथा ऐंथोनी, सौंडर्स.1985. ''बैंक रेग्युलेशन एंड मॉनिटरी पॉलिसी.'' *जर्नल ऑफ मनी, क्रेडिट एंड बैंकिंग,* 17(4)ः691-717।

मेरटन, आर.सी. तथा बोडी, जेड., 1993. ''डिपॉजिट इन्शुरेन्स रिफॉर्म : ए फंक्शनल अप्रोच.'' *कारनेजी रोचेस्टर कॉन्फ्रेंस सिरीज ऑन पब्लिक पॉलिसी* '' 38(जून) (सं.) में, मेल्टजर, ए. तथा सी. प्लोसर।

——. 1995. *ए कन्सेप्च्युअल फ्रेमवर्क फॉर अनलाइजिंग दि फिनैंशियल एनवायरनमेंट, दि ग्लोबल फिनैंशियल सिस्टम - ए फंक्शनल परस्पेक्टिव.* हावर्ड बिजनेस स्कूल प्रेस।

मेर्टन, रॉबर्ट सी. 1995.''फिनैंशियल इन्नोवेशन एंड दि मैनेजमेंट एंड रेग्युलेशन ऑफ फिनैंशियल इन्स्टिट्यूशन्स.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 19(3-4) : 461-481।

मेयेर, लॉरेन्स एच.1999. ''मार्केट डिसिप्लिन ऐज ए कंप्लीमेंट ऑफ बैंकिंग सुपरविजन एंड रेग्युलेशन.'' रिफॉर्मिंग बैंक कैपिटल स्टैंडर्ड्स पर आयोजित सम्मेलन में दी गई टिप्पणियां, न्यूयॉर्क, जून।

मिस्ट्री, पर्सी. 2003. *ट्रेन्ड्स इन इंटरनेशलन फिनैंशियल सिस्टम रेग्युलेशन एंड सुपरविजन.* कॉमनवेल्थ सचिवालय।

मोहन, राकेश. 2004 ''भारत के निजी क्षेत्र के बैंकों का स्वामित्व तथा अभिशासन.'' *भा.रि.बैंक बुलेटिन,* अक्तूबर।

——. 2007. ''भारत के वित्तीय क्षेत्र के सुधार : जोखिम नियंत्रण के साथ वृद्धि को प्रोत्साहन''. *भारिबैंक बुलेटिन,* दिसंबर।

मोर, नचिकेत तथा आर.आर. नित्सुरे. 2002. ''ऑर्गनाइजेशन ऑफ रेग्युलेटरी फंक्शन्स : ए सिंगल रेग्युलेटर?'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* खंड XXXVII, फरवरी।

मूलिन्यूएक्स.2008. ''ब्रिटिश बैंकिंग रेग्युलेशन एंड सुपरविजन : बिट्वीन ए रॉक एंड ए हार्ड प्लेस.'' *इंटरनेशनल इकोनॉमिक्स एंड इकोनॉमिक पॉलिसी,* 4(4), फरवरी।

नित्सुरे, आर.आर. 2003. ''ई-बैंकिंग चैलेंजेज एंड अपॉर्च्युनिटीज.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* 38(51-52)ः5377-5381।

नसौली, सालेह. एम. तथा स्वाएस्टर, ऐंड्रिया, 2002. ''चैलेंजेज ऑफ दि ई-बैंकिंग रिवैल्यूएशन.'' *फाइनैंस एंड डेवलपमेंट,* 39(3), सितंबर।

पेन्न, फिलिप एच.2007. ''एनहान्सिंग एंड स्ट्रेंदेनिंग बैंकिंग सुपरवाइजरी कैपेबिलिटीज इन पैसिफिक कंट्रीज.'' पैसिफिक रिजनल बैंकिंग सुपरविजन सेमिनार में, अपिया समोआ, अक्तूबर।

पेन्नाच्ची, जॉर्ज जी. 2005. ''रिस्क-बेस्ड कैपिटल स्टैंडर्ड्स, डिपॉजिट इन्शुरेन्स, एंड प्रोसाइक्लिकलिटी.'' *जर्नल ऑफ फिनैंशियल इंटरमीडिएशन,* 14(4) : 432-465।

क्विन्टीन, मार्क तथा टेलर, माइकेल डब्ल्यू.2004. ''शुड फिनैंशियल सेक्टर रेग्युलेटर्स बी इंडिपेंडेंट?'' *इकोनॉमिक इश्यूज,* 32, इंटरनेशनल मॉनिटरी फंड।

राज, जनक. 2005.''इज देअर ए केस फॉर ए सुपर रेग्युलेटर इन इंडिया? इश्यूज एंड ऑप्शन्स.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली,* खंड XLI, सं.35, 3846-3855, अगस्त 27 - सितंबर 2।

रमेश, एम.आर. 2002. *रिपोर्ट ऑफ दि वर्किंग ग्रुप फॉर सजेस्टिंग ऑपरेशनल एंड प्रूडेन्शियल गाइडलाइन्स स्ट्रिप्स.* जुलाई।

रेड्डी, वाइ.वी. 2007. ''वैश्विक विकास तथा भारतीय परिप्रेक्ष्य : कुछ यादृच्छिक विचार''. नवंबर 27 को बैंकर सम्मेलन, मुंबई में दिया गया समापन भाषण।

——. 2008. ''ग्लोबल फिनैंशियल टर्ब्यूलेन्स एंड फिनैंशियल सेक्टर इन इंडिया : ए प्रैक्टिशनर्स परस्पेक्टिव''. इनिशिएटिव फॉर पॉलिसी डायलॉग द्वारा मानचेस्टर, यूनाइटेड किंगडम, में 1 जुलाई को आयोजित वित्तीय बाजार विनियमन पर गठित टास्क फोर्स की बैठक में दिया गया भाषण ।

भारतीय रिजर्व बैंक. 1999. *इंटरनेट बैंकिंग पर रिपोर्ट.* जून।

——. 2002. *त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई पर चर्चा पत्र.* जुलाई।

——. 2001. *भारत में इंटरनेट बैंकिंग - दिशा-निर्देश.* जून।

——. 2004. *वित्तीय संगुटों की निगरानी पर रिपोर्ट.* जून।

——. 2005 *क. विदेशी बैंकों के लिए रोडमैप तथा स्वामित्व संबंधी दिशा-निर्देश,* फरवरी।

——. 2005 *ख. भारत में इंटरनेट बैंकिंग - दिशा-निर्देश.* जुलाई।

——. 2007. *बैंकिंग समूहों में धारक कंपनियों पर चर्चा पत्र.* अगस्त।

रोचेट, जीन-चार्ल्स तथा वाइव्ज, जेवियर.2004. ''कोऑर्डिनेशन फेल्यूर्स एंड दि लेंडर ऑफ दि लास्ट रिसॉर्ट : वॉज बगेहॉट राइट आफ्टर ऑल?'' *आइडीईआइ वर्किंग पेपर्स* 294. इन्स्टिट्यूट डि'इकोनॉमी इंडस्ट्रिएल्ले (आइडीईआइ), टोलाउज।

रॉड्रिग्ज, एल. जेकोबो. 2002.''इंटरनेशनल बैंकिंग रेग्युलेशन. व्हेअर इज दि मार्केट डिसिप्लिन इन बासेल II?'' *पॉलिसी अनालिसिस,* सं.455. कैटो इन्स्टिट्यूट, अक्तूबर।

रोसेन ग्रेन, एरिक एस.1999. ''मॉडर्नाइजिंग फिनैंशियल रेग्युलेशन : इंप्लीकेशन्स फॉर बैंक सुपरविजन.'' *जर्नल ऑफ फिनैंशियल सर्विसेज रिसर्च,* 16(2-3), दिसंबर।

स्वाएस्टर, ऐंड्रिआ. 2002. ''इश्यूज इन इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग : ऐन ओवरव्यू.'' *आइएमएफ पॉलिसी चर्चा पत्र,* पीडीपी/02/6।

सदासिवन, एन. 2004. *विकास वित्त संस्थाओं पर कार्यकारी दल की रिपोर्ट. भारतीय रिजर्व बैंक,* मई।

सांटोस, जोआओ, ए.सी. 2000 ''बैंक कैपिटल रेग्युलेशन इन कंटेपरेरी बैंकिंग थिअरी : ए रिव्यू ऑफ लिटरेचर.'' *बीआइएस वर्किंग पेपर,* सं.90, सितंबर।

सौंडर्स, ऐंथनी. 1994. ''बैंकिंग एंड कॉमर्स. ऐन ओवरव्यू ऑफ दि पब्लिक पॉलिसी इश्यूज.'' *जर्नल ऑफ बैंकिंग एंड फाइनैंस,* 18(2):231-254।

श्च्वार्ट्ज, अन्ना. 1986. ''रियल एंड श्यूडो-फिनैंशियल क्राइसेस.'' *फिनैंशियल क्राइसेस एंड दि वर्ल्ड बैंकिंग सिस्टम* (सं.) में, फॉरेस्ट कैपी तथा जॉफ्रे ई. वुड, लंदन : मैकमिलन, 11-31।

शाफेर, शेरिल.1997. ''डिपॉजिट इन्शुरेन्स प्राइसिंग : दि हिडेन बर्डेन ऑफ प्रीमियम रेट वोलेटिलिटी''. कैटो जर्नल, 17(1), *कैटो इन्स्टिट्यूट* ।

श्लेइफर, ऐंड्रेइ, तथा रॉबर्ट डब्ल्यू. विश्नी.1998. *दि ग्रैबिंग हैंड : गवर्नमेंट पैथोलॉजीज एंड देअर क्योर्स. कैंब्रिज,* एमए : हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

टेलर, एम.1995. ''ट्विन पीक्सः ए रेग्युलेटरी स्ट्रक्चर फॉर दि न्यू सेंचुरी.'' *वर्किंग पेपर सं.20,* सेंटर फॉर दि स्टडी ऑफ फिनैंशियल इन्नोवेशन, लंदन, दिसंबर।

——. 1996. पीक प्रैक्टिस : *हाऊ टू रिफॉर्म दि यूकेटज रेग्युलेटरी सिस्टम.* सेंटर फॉर दि स्टडी ऑफ फिनैंशियल इन्नोवेशन, लंदन, अक्तूबर।

ठाकोर, अंजन वी. 1996 ''कैपिटल रिक्वायरमेंट्स, मॉनिटरी पॉलिसी, एंड ऐग्रिगेट बैंक लेंडिंग : थिअरी एंड एंपिरिकल एविडेन्स.'' *दि जर्नल ऑफ फाइनैंस,* 51(1): 279-324।

दि इकोनॉमिस्ट. 2007. ''ए जनरेशन हैज प्रॉस्पर्ड फ्रॉम दि होलसेल ट्रान्सफर ऑफ रिस्क थ्रू सिक्युरिटाइजेशन. नाऊ इट इज पेइंग दि प्राइस.'' सितंबर।

——. 2008. *अंतरराष्ट्रीय बैंकिंग पर एक विशेष रिपोर्ट.* मई।

थॉर्नटन. हेनरी. 1802. *ऐन इनक्वायरी इन टू दि नेचर एंड इफेक्ट्स ऑफ पेपर क्रेडिट ऑफ ग्रेट ब्रिटेन.* हैच्चार्ड,लंदन, रिप्रिंट, जॉर्ज अल्लेन तथा अनविन लिमि. लंदन 1939।

ट्राइपार्टाइट अथॉरिटीज स्टेटमेंट. 2007. यूके, सितंबर।

ट्राइपार्टाइट ग्रुप ऑफ बैंक, सिक्युरिटीज एंड इन्शुरेन्स रेग्युलेटर्स. 1995. *दि सुपरविजन ऑफ फिनैंशियल कांग्लोमरेट्स. जुलाई।*

यूएनसीटीएडी. 2002. ई-कॉमर्स तथा विकास रिपोर्ट. http//ro.unctad.org/ecommerce/docs/.

वाइव्ज, एक्स. 2000.''बैंकिंग सुपरविजन इन दि यूरोपियन मॉनिटरी यूनियन.'' फिस्कल पॉलिसी इमबैलेन्सेज, दि मॉनिटरी ट्रान्समिशन मेकानिज्म एंड प्रूडेन्शियल सुपरविजनः इश्यूज फेसिंग यूरोपटस सेंट्रल बैंकर्स में. एस.सी.डब्ल्यू. ईजफिंगर, के., कोइडिज्क तथा एस. येओ (सं.), *सेंटर फॉर इकोनॉमिक पॉलिसी रिसर्च।* यूरोपियन समर इन्स्टिट्यूट, लंदन।

वोल्केर, पॉल. 2008. ''दि सबप्राइम क्राइसिस एंड इट्स इंटरनेशलन कॉन्सिक्वेंसेज : व्हॉट हैपेन्ड एंड हाऊ टू अवॉइड ए सिमिलर क्राइसिस.'' पर अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में दिया गया प्रमुख भाषण, ब्रुकिंग्ज, इन्स्टिट्यूट मोन्टेग्ने तथा इन्स्टिट्यूट डे एलटएंटरप्राइज, अप्रैल।

वेबसाइट ऑफ इंटरनेशनल असोसिएशन ऑफ डिपॉजिट इन्शुरर्स (आइएडीआइ), डिपॉजिट इन्शुरेन्स सिस्टम के पास मौजूद देशों की सूची, www.iadi.org.

व्हेलन, गैरी. 2000. ''इंटर-स्टेट बैंकिंग, ब्रांचिंग, ऑर्गनाइजेशन एंड मार्केट राइवल्री.'' *इकोनॉमिक एंड पॉलिसी अनालिसिस,* वर्किंग पेपर 7, जुलाई।